प्रकाशक: मर्कज़ी मक्तबा इस्लामी दिल्ली-110006

नाम किताब . हदीस सौरभ

अनुवादक मौलाना मुहम्मद फारूक खां

पहली बार	1970	2000
दूसरी बार	1980	2000
तीसरी बार	1884	2000
चौथी बार	1994	1000

मूल्य : Rs 90/-

मुद्रक : रूबी प्रिंटिंग प्रेस दिल्ली- 110006

بسم الله الرحمن الرحيم

प्राक्कथन

इस्लाम में कुरआन करीम के बाद जिस चीज को मौलिक महत्व प्राप्त है वह अल्लाह के रसूल सल्ल० की 'सुन्नत' और आपकी 'हदीस' है। अरबी के अतिरिक्त उर्दू मे भी 'हदीस' के कई सग्रह प्रकाशित हो चुके हैं जिनका अपने स्थान पर विशेष महत्व है लेकिन हिन्दी भाषा में अभी तक हदीस का कोई उल्लेखनीय सग्रह प्रकाशित नही हो सका था। हिन्दी मे 'हदीस' के एक सग्रह की आवश्यकता बहुत पहले से महसूस की जा रही थी जिस मे इस्लाम एक पूर्ण जीवन-दर्शन और जीवन-व्यवस्था के रूप मे उभर कर सामने आ सके जैसा कि वह वास्तव में है भी। 'हदीस' का वह सग्रह जिसे हम 'हदीस सौरभ' के नाम से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने का सौभाग्य प्राप्त कर रहे है इसी आवश्यकता को देखते हुए संकलित किया गया है।

इस संग्रह में प्रत्येक अध्याय के आरम्भ में अध्याय से सम्बन्धित एक परिचयात्मक लेख भी सम्मिलित है। इस से हदीसों के समझने में सुविधा होगी। आवश्यकतानुसार 'हदीसों' की व्याख्या भी कर दी गई है। हदीसों की व्याख्या में हमारी कोशिश यह रही है कि हदीसों के सम्बन्ध में केवल यही नही कि पाठकों को उन के अपने मन में उभरने वाले प्रश्नों के उत्तर मिल जाये बल्कि इसी के साथ उनमे हदीस की समझ और धर्म-ज्ञान की यथार्थ अभिरुचि भी पैदा हो सके और वास्तविक रूप से वह धर्म और उसके रूप एव गुण से परिचित हो सके।

ग्रन्थ की भूमिका में 'हदीस' के महत्व, उस के संकलन-इतिहास आदि विषयो पर प्रकाश डाला गया है और हदीस' के सम्बन्ध में पैदा होने वाले सन्देहों और शंकाओ का समाधान किया गया है।

हदीस और धर्म से सम्बन्धित पारिभाषिक शब्दो और शास्त्रो का

उल्लेख भी इस ग्रन्थ में सम्मिलित किया जा रहा है। यह चीज़ हदीसों के समझने में भी सहायक होगी और इस से इस बात का भी भली भाँति अनुमान लगाया जा सकेगा कि हदीस के सेवकों और विद्वानो ने केवल यही नही की शोधकार्य और रिसर्च (*Research*) की नीव डाली है बल्कि उन्होने जिस चीज को भी हाथ में लिया उसे उन्नति के शिखर तक पहुँचा दिया है।

ग्रन्थ के प्रथम भाग मे मौलिक धारणाओ और 'इबादतों' से सम्बन्धित 'हदीसो' को संगृहीत किया गया है, समाज एव नैतिक विधान, शासन और राजनीति, अर्थनीति एव अर्थव्यवस्था, सत्य-आमत्रण एव सत्य-प्रचार आदि से सम्बन्धित 'हदीसें' ग्रन्थ के दूसरे भाग मे सकलित की जायेंगी।

ईश्वर से हमारी प्रार्थना है कि वह इस प्रयत्न को स्वीकार करे और जो लोग मानव-जीवन को निर्मल और सफल बनाने की अभिलापा रखते हैं उन के लिए यह ग्रन्थ उपयोगी सिद्ध हो।

विनीत

मुहम्मद फ़ारूक़ ख़ाँ

१६ अप्रैल १९६९ ई०   हिन्दी विभाग, जमाअत इस्लामी हिन्द

क्रम

नोट इस भाग मे मौलिक धारणाओ और 'इबादतो' से सम्बन्धित 'हदीसें' प्रस्तुत की गई हैं। नैतिकता, समाज, शासन एव राजनीति, अर्थनीति एव अर्थ-व्यवस्था, सत्य-आमत्रण और सत्य-प्रचार आदि से सम्बन्धित 'हदीसें' ग्रन्थ के दूसरे भाग मे प्रस्तुत की जायेंगी।

'नुबूवत' का पद

जीवन का सीधा और सच्चा मार्ग पाने के लिए मनुष्य को सदैव ईश्वरीय मार्ग-प्रदर्शन की आवश्यकता रही है। ईश्वरीय शिक्षा और ईश्वरीय मार्ग-दर्शन से अलग रहकर मनुष्य कभी भी सीधे मार्ग को पा नही सकता। मनुष्य को जीवन का सीधा और सच्चा मार्ग दिखाने के लिए 'अल्लाह' ने 'किताबे' उतारी और अपने 'रसूल' भेजे। रसूलों ने लोगो के समक्ष ईश्वरीय ग्रन्थो के अर्थ और अभिप्राय को स्पष्ट रूप से बयान किया और 'अल्लाह' के दिए हुए आदेशो के अनुसार चलकर उन्हे दिखाया। उन्होने लोगों के सामने अपना आदर्श जीवन प्रस्तुत किया ताकि वे अच्छी तरह इस बात को समझ सके कि ईश्वरीय इच्छानुसार जीवन व्यतीत करने का तरीका क्या होता है? अल्लाह की ओर से यदि कोई 'रसूल' न आता, केवल 'किताब' का अवतरण होता, तो उस किताब के समझने में लोगो के बीच विभेद होता, और यह निर्णय न हो पाता कि सत्य किसकी ओर है और किसकी ओर नही है? ईश्वरीय आदेशों के वास्तविक अभिप्राय और उद्देश्य को समझने मे लोग गलतियाँ करते और कोई न होता जो उन्हे ईश्वरीय आदेशों का वास्तविक अर्थ और उद्देश्य बता सकता। इसके अतिरिक्त मनुष्य की यह एक आवश्यकता है कि जीवन के समस्त मामलो मे कोई उसके साथ शरीक होकर अपने व्यवहार और वचन से उसको जीवन का सीधा मार्ग दिखाये। विचार और व्यवहार प्रत्येक दृष्टि से उसकी शिक्षा-दीक्षा का उपाय करे और उसमे सत्यानुसरण की भावना पैदा करे। लोगो को बताये कि जीवन के कठिन और पेचीदा मार्गो में वे किस प्रकार सत्य और न्याय के मार्ग को अपनाये, और उसी पर जीवन भर चलते रहे।

मनुष्य की यह आवश्यकता किसी 'फिरिश्ते' के द्वारा पूरी नही हो सकती थी। 'फिरिश्तों' को मानवीय आवश्यकताओ से क्या सम्पर्क? 'फिरिश्तो' की मनोवृति, और प्रकृति मानवों से सर्वथा भिन्न होती है। इस लिए वे मानवीय जीवन के लिए दृष्टान्त और नमूना नही बन सकते। यही

कारण है कि अल्लाह ने 'किताब' के साथ जो 'रसूल' भी भेजा वह मनुष्य था 'फ़िरिश्ता' न था।

'रिसालत' और नुबूवत का इतिहास भी उतना ही लम्बा है जितना कि मानव का इतिहास है। 'रिसालत' और 'नुबूवत' का सिल-सिला उसी समय से आरम्भ होता है जबकि पहले मनुष्य ने इस धरती पर क़दम रक्खा था। प्रत्येक जाति में अल्लाह के रसूल आये। उन्होंने अपनी जाति वालों को स्वय उन्ही की भाषा में सम्बोधित किया। अल्लाह के अंतिम 'रसूल' हज़रत मुहम्मद सल्ल० हैं। आप के बाद अब मनुष्य के मार्ग-दर्शन के लिए कोई नया 'रसूल' आने वाला नही है। आप पर 'नुबूवत' का सिलसिला समाप्त हो जाता है। अल्लाह के अन्तिम 'रसूल' के दायित्वों का जो विवरण कुरआन में मिलता है वह यह है "और याद करो जबकि इबराहीम और इस्माईल इस घर (काबा) की दीवारे उठा रहे थे (तो प्रार्थना करते जाते थे) ......हे हमारे 'रब'! उन लोगो के बीच उन्ही में से एक ऐसा 'रसूल' उठाना जो उन्हे तेरी 'आयतें' पढ कर सुनाये, उन्हे 'किताब' और 'हिकमत' (तत्वदर्शिता) की शिक्षा दे और उनकी आत्मा को शुद्ध (और उसके विकसित होने का अवसर प्रदान) करे। निस्सन्देह तू अपार शक्ति का मालिक और तत्वदर्शी है।"

—अल-बकरा . १२९

एक दूसरे स्थान पर कहा गया . "अल्लाह ने 'ईमान वालो' पर यह बहुत बडा एहसान किया है जबकि उनके बीच उन्ही मे से एक 'रसूल' उठाया जो उन्हे उसकी 'आयतें' सुनाता है, उनकी आत्मा को शुद्ध (और विकसित होने का अवसर प्रदान) करता है, और उन्हे 'किताब' और 'हिकमत' (तत्वदर्शिता) की शिक्षा देता है, जबकि इस से पहले वे खुली गुमराही मे पड़े हुये थे।"

—आले इमरान · १६४

इन 'आयतो' से स्पष्ट है कि 'नबी सल्ल०' की जिम्मेदारी जहाँ यह थी कि आप लोगो को 'कुरआन' की आयतें पढकर सुनाये वही आप की नुबूवत के तीन महत्वपूर्ण उद्देश्य और भी थे।

- एक, यह कि आप लोगो को 'किताब' और ईश्वरीय नियम और कानून की शिक्षा दे।
- दूसरे, आप लोगो को 'हिकमत', तत्वदर्शिता (*wisdom*) और बुद्धिमता की शिक्षा दे ताकि लोगों मे यह योग्यता उभर सके कि वे वास्तविकता को समझ सके और विचार, चिन्तन और कर्म-क्षेत्र मे सही नीति अपना सके।

● और तीसरे, आप लोगों की आत्मा को शुद्ध करें ताकि वे विकास पा सकें। उनकी ऐसी शिक्षा-दीक्षा का उपाय करे कि उनमें उत्तम-से उत्तम गुण उभर सके, और उनकी व्यक्तिगत और सामाजिक हर प्रकार की खराबियाँ दूर हो। यही वह महान् कार्य है जिसके द्वारा उत्तम जीवन-व्यवस्था और आदर्श इस्लामी-समाज का निर्माण होता है।

नबी सल्ल० अपने दायित्व की दृष्टि से शिक्षक, दीक्षक, मार्ग-दर्शक, नियामक, न्यायाधिकारी, नायक, हाकिम सब-कुछ थे। आपके जीवन को 'ईमान वालो' के लिए आदर्श जीवन निर्धारित किया गया "(हे नबी! लोगों से) कह दो : यदि तुम (सचमुच) अल्लाह से प्रेम करते हो, तो मेरा अनुसरण करो, अल्लाह तुम से प्रेम करने लगेगा।"

—आले इमरान : ३१

"(हे नबी!) कहो . अल्लाह और 'रसूल' का हुक्म मानो। फिर यदि वे मुँह मोडते हैं, तो अल्लाह 'काफिरो' को पसन्द नहीं करता।"

—आले इमरान . ३२

स्वय नबी सल्ल० कहते हैं "जिसने मुहम्मद की आज्ञा का पालन किया निस्सन्देह उसने अल्लाह के आदेश का पालन किया और जिसने मुहम्मद की अवज्ञा की निश्चय ही उसने अल्लाह की अवज्ञा की और मुहम्मद लोगो के बीच सीमान्तर की हैसियत रखते हैं।" —बुखारी

कुरआन में एक जगह कहा गया "निश्चय ही तुम लोगों के लिए अल्लाह के 'रसूल' में एक उत्तम आदर्श था उस व्यक्ति के लिए जो अल्लाह और अन्तिम दिन की आशा रखता हो।" —अल-अहज़ाब २१

'रसूल' के रूप में आपको मुकद्दमो (अभियोग) के फैसला करने का अधिकार प्राप्त था "(हे नबी!) हम ने यह 'किताब' हक के साथ तुम्हारी ओर उतारी है, ताकि अल्लाह ने जो कुछ तुम्हे दिखाया है उसके अनुसार तुम लोगो के बीच फैसला करो।" —अन-निसा १०५

"तो नही, (हे नबी!) तुम्हारे 'रब' की कसम वे कदापि 'ईमान' वाले नही हो सकते जब तक कि यह बात न हो कि इनके बीच जो झगडा उठे उसमे ये तुम से फैसला करायें, फिर जो फैसला तुम कर दो उस पर ये अपने दिल में कोई खटक न पाये, और पूरे तरीके से मान ले।

—अन-निसा . ६५

नबी सल्ल० 'रसूल' होने की हैसियत से हाकिम और नायक भी थे। आपकी बात माननी सबके लिए अनिवार्य थी "और हमने जो 'रसूल'

भी भेजा इसीलिए भेजा कि अल्लाह् के हुक्म से उसके आदेशो का पालन किया जाये।" —अन-निसा : ६४

"हे 'ईमान' लाने वालो ! अल्लाह् का हुक्म मानो, और 'रसूल' का हुक्म मानो, और उनका जो तुम मे अधिकारी लोग हैं, फिर यदि तुम्हारे बीच किसी बारे मे झगडा हो जाये तो उसे अल्लाह् और 'रसूल' की ओर ले जाओ यदि तुम अल्लाह् और अन्तिम दिन पर 'ईमान' रखते हो।" —अन-निसा : ५९

नबी सल्ल० ईश्वरीय ग्रन्थ के व्याख्याकर्त्ता भी थे। आपकी यह एक ज़िम्मेदारी थी कि आप उन आदेशो को स्पष्ट रूप से बयान करे जो अल्लाह् की ओर से अवतीर्ण हो "और (हे मुहम्मद!) हमने तुम पर यादर्दिहानी (अनुस्मारक अर्थात् कुरआन) उतारी है ताकि तुम लोगो के सामने खोल-खोल कर बयान कर दो जो कुछ उनकी ओर उतारा गया है।" —अन-नह्ल ४४

अल्लाह् की ओर से आपको नियम बनाने, व्यवस्था या विधान करने के अधिकार भी प्राप्त थे। कुरआन मजीद मे नबी सल्ल० के बारे मे कहा गया है "वह उन्हे नेक बातो का हुक्म देता है और बुरी बातों से रोकता है। उनके लिए उत्तम चीज़े हलाल (वैध) और निकृष्ट चीजे हराम (अवैध) ठहराता है, और उन पर से वह बोझ और बन्धन उतार देता है जो उन पर चढ़े हुए थे।" —अल-आराफ : १५७

इस से मालूम हुआ कि हलाल व हराम (वैध व अवैध) के वे आदेश जो नबी सल्ल० के फ़ैसलो और आपके कथनो से उद्धृत होते हैं उन्हे छोड़ा नही जा सकता। स्वय नबी सल्ल० ने भी अपने विधान एव नियम सम्बन्धी अधिकार का उल्लेख किया है। मिकदाम बिन मअदीयकरब रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा "जान रक्खो! मुझे क़ुरआन दिया गया और उसके साथ वैसी ही एक और चीज़ भी। खबरदार रहो! ऐसा न हो कि कोई पेट भरा व्यक्ति अपनी मसनद पर बैठा हुआ कहने लगे कि तुम्हारे लिए बस इस कुरआन का पालन आवश्यक है, जो कुछ इसमे 'हलाल' पाओ उसे हलाल समझो और जो कुछ इसमे 'हराम' पाओ उसे हराम समझो, हालाँकि जो कुछ अल्लाह् का 'रसूल' 'हराम' निर्धारित करे वह वैसा ही हराम है जैसे अल्लाह् का हराम किया हुआ।"
—अबू दाऊद, इब्न माजा, दारमी, हाकिम

हजरत अबू राफेअ रजि० से उल्लिखित है कि आपने कहा "मै कदापि तुम मे से किसी को न पाऊँ कि वह अपनी मसनद पर तकिया

लगाए बैठा हो और उसे मेरे उन आदेशों में से, जिनका मैंने हुक्म दिया है या जिन से मैंने वर्जित किया है, कोई आदेश पहुँचे और वह (सुनकर) कहे कि हम नही जानते, हम तो जो कुछ अल्लाह की 'किताब' में पायेंगे उसका पालन करेंगे।"

—अबू दाऊद, अहमद, इब्न माजा, तिरमिज़ी, शाफई, बैहकी-दलाइलुन्नुबूवत

इरबाज़ बिन सारियह रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० 'खुतबा' (भाषण) देने के लिए खडे हुए और कहा · "क्या तुम मे से कोई व्यक्ति अपनी मसनद पर तकिया लगाये हुए यह समझता है कि अल्लाह ने कोई चीज़ हराम नही की है सिवाय उन चीजों के जो क़ुरआन में बयान की गई हैं। सावधान! अल्लाह की कसम, मैंने जिन बातों का हुक्म दिया है और जो उपदेश दिये है और जिन बातो से रोका है वे कुरआन ही की तरह हैं बल्कि कुछ ज्यादा।" —अबू दाऊद

इन 'हदीसों' से स्पष्ट है कि अल्लाह के आज्ञाकारी लोगों के लिए 'रसूल' के आदेशों का अनुपालन उसी प्रकार आवश्यक है जिस प्रकार कुरआन में वर्णित आदेशों का पालन करना उनके लिए आवश्यक है। और जिन बातो से 'रसूल' ने उन्हे रोका है उन से बचना भी उनके लिए उसी तरह जरूरी है जिस तरह उन चीज़ों से बचना ज़रूरी है जिन से कुरआन मे रोका गया है।

नबी की असाधारण योग्यता

अल्लाह ने सदैव 'नबियो' को असाधारण योग्यताये प्रदान की। वे अपनी असाधारण विशेषताओ और योग्यताओ के बिना उस महान् कार्य को कर ही नही सकते थे जो अल्लाह की ओर से उन्हे सौंपा जाता रहा है। 'नबी' वास्तव मे 'नुबूवत' ही के लिए पैदा किए गए। उन्हे अत्यन्त पवित्र स्वभाव और प्रकृति प्रदान की गई। स्वभावत वे ऐसे थे कि बिना किसी विशेष सोच-विचार के अपने अन्तर्ज्ञान (*Intuition*) से ही सही परिणाम तक पहुँच जाते थे। 'नबी' मनुष्य ही थे परन्तु उन्हे मनुष्यता का उच्चतम स्थान प्राप्त था। सत्य व असत्य मे अन्तर करना उनका स्वभाव था। वे शारीरिक और आत्मिक प्रत्येक दृष्टि से पूर्ण थे। अल्लाह ने उनकी स्वाभाविक क्षमता को उन्नति दी और उन्हे वह चीज़ प्रदान की जिसके लिए कुरआन मे 'इल्म' (ज्ञान), 'हुक्म' (निर्णय-शक्ति), हिदायत (मार्ग-दर्शन, *guidance*), 'बय्यनह' (स्पष्ट प्रमाण) आदि शब्द प्रयुक्त हुए है।

हज़रत मूसा अ० के बारे में कहा गया है . "और जब वह अपनी युवावस्था को पहुँचा और भरपूर हो गया, तो हमने उसे हुक्म (निर्णय शक्ति, तत्वदर्शिता) और ज्ञान प्रदान किया।" —अल-कसस : १४

हज़रत सालेह अ० ने अपनी जाति वालो को सम्बोधित करते हुए कहा . "हे मेरी जाति वालो ! सोचो तो सही, यदि मै अपने 'रब' की एक 'बय्यनह' (स्पष्ट प्रमाण) पर हूँ और उसने मुझे अपनी दयालुता ('नुबूवत') प्रदान की है, तो (इसके बाद) अल्लाह के मुकाबले में कौन मेरी सहायता करेगा यदि मै उसकी अवज्ञा करूँ? अत. तुम घाटे मे डालने के सिवा और मुझे कुछ नही दे सकते।" —हूद ६३

हजरत यूसुफ अ० के बारे मे कहा गया है "और जब वह अपनी प्रौढता (युवावस्था) को प्राप्त हुआ, तो हमने उसे 'हुक्म' (निर्णय-शक्ति) और 'इल्म' (ज्ञान) प्रदान किया।" —यूसुफ : २२

यह असाधारण ज्ञान और बुद्धिमत्ता हजरत मुहम्मद सल्ल० को भी प्रदान की गई "(हे नबी !) कहो : मैं अपने 'रब' की ओर से एक खुली दलील (अथवा स्पष्ट मार्ग) पर हूँ।" —अल-अनआम ५७

"(हे नबी !) कहो मेरी राह तो यह है कि मैं पूरी सूझ-बूझ के साथ अल्लाह की ओर बुलाता हूँ और जो मेरे अनुयायी है वे भी।"

—यूसुफ १०८

"और अल्लाह ने तुम पर 'किताब' और 'हिकमत' (*wisdom*) उतारी, और उसने तुम्हे वह कुछ बताया जो तुम नही जानते थे।"

—अन-निसा . ११३

कुरआन के इन शब्दो से स्पष्ट है कि अल्लाह ने 'नबी' को किताब ही प्रदान नही की बल्कि इसके साथ ऐसा प्रकाश और ज्योति भी पैदा की जिस से 'नबी' की हैसियत वास्तविकताओ के निरीक्षक की हो जाती है। इस कारण वे सत्य और असत्य मे अन्तर करते और मामलो का सही निर्णय करते और जीवन की पेचीदा राहो में सत्य की ओर मार्ग-दर्शन करते है। यह आन्तरिक सूझ-बूझ और अन्त प्रकाश उन्हे प्रत्येक समय प्राप्त रहता है। जिन बातो को दूसरे लोग गहरे सोच-विचार और चिंतन के बाद भी नही समझ पाते, 'नबी' की दृष्टि उसे क्षण भर में पा लेती है। इसके लिए पारिभाषिक शब्द 'वह्य खफी' (सूक्ष्म दैवी-प्रकाशन) प्रयुक्त करते है। 'नबी' एक दैवी ज्ञान के वातावरण मे होता है जहाँ वास्तविकता निगाहो से ओझल नही होती। उसके मुख से जो कुछ निकलता है सत्य होता है, उसके कदम सत्य मार्ग की ओर ही उठते है। उसके स्वभाव

की पवित्रता किसी असत्य चीज को पसन्द नही कर सकती । 'नबी' को इसका पूरा ज्ञान होता है कि ईश्वरीय मार्ग-दर्शन प्रत्येक समय उसके साथ है। यही वह वात है जिसे आपने अपनी जिह्वा की ओर सकेत कर के इन शब्दो में स्पष्ट किया . "उस सत्ता की कसम, जिसके हाथ मे मेरे प्राण है, इस से जो कुछ निकलता है, सत्य ही होता है।"

अल्लाह की ओर से नवी को यह योग्यता और अन्त प्रकाश इस लिए प्रदान किया जाता है कि वह 'नुवूवत' के कार्य को ठीक तौर पर निभा सके, वह अल्लाह की 'किताव' का अभिप्राय लोगो को वता सके और अल्लाह की इच्छा के अनुसार चरित्र और आदर्श-समाज का निर्माण कर सके। और लोगो को उस मार्ग पर लगा सके जो उन्हे अल्लाह से मिलाता और दुनिया और 'आखिरत' मे उन्हे सफल वनाता है।

नबी का शुद्ध और निष्कलंक जीवन

जिस प्रकार 'अल्लाह' अपने 'नवी' को असाधारण योग्यता प्रदान करता और है उसे ज्ञान, तत्वदर्शन, प्रकाश और मार्ग-प्रदर्शन से सम्मानित करता और 'वह्य' के द्वारा उसे सत्य मार्ग दिखाता है उसी प्रकार वह अपने 'नबी' की हर समय देख-भाल और रक्षा करता है। एक ओर, वह 'नवी' के पालन-पोषण और दीक्षा आदि की विशेष व्यवस्था करता है और दूसरी ओर वह उसे हर प्रकार की गुमराहियो और गलत कामो, से वचाता है। यही कारण है कि नबियो का 'नुवूवत' मिलने से पहले का जीवन भी निष्कलंक' होता है। 'नुवूवत' के उच्च पद पर नियुक्त होने के वाद 'नबियो' को असाधारण ज्ञान, सूझ-बूझ और तत्वदर्शिता प्रदान की जाती है ताकि वे सत्य-मार्ग पर स्थिर रह सके और लोगो को सत्य की ओर बुला सके। मनुष्य होने के कारण यदि कभी 'नबियो' से सोचने-समझने मे कोई गलती या सूक्ष्म 'वह्य' के सूक्ष्म सकेतो को समझने मे कोई भूल-चूक हो भी जाती है तो तुरन्त ही अल्लाह उसे सुधार देता है।

हजरत नूह अ० ने अपने वेटे को पानी में डूबते देखा तो पुकार उठे : "हे 'रब' ! मेरा बेटा मेरे घर वालो मे मे है ! और निश्चय ही तेरा वादा सच्चा है।" (सूरा हूद ४५) अल्लाह ने उसी समय बताया . "हे नूह ! वह तेरे घर वालो मे से नही, वह तो अशिष्ट कर्म है।"

—(हूद : ४६)

अल्लाह की 'वह्य' नबी सल्ल० की भी सरक्षक रही है। यदि कही आप से साधारण सी भूल-चूक हुई, तो तुरन्त अल्लाह की 'वह्य' ने

उसका सुधार कर दिया। एक मुहिम के मौके पर नबी सल्ल० ने उन लोगो को मुहिम पर न चलने की इजाजत दे दी जिन्होने आप से इसके लिए इजाजत चाही थी। इस पर अल्लाह ने इन शब्दों में सचेत किया : "(हे नबी !) अल्लाह तुम्हे क्षमा करे ! तुम ने उन्हे (पीछे रह जाने की) इजाज़त क्यो दे दी (तुम उन्हे इजाजत न देते) यहाँ तक कि वे लोग खुल कर तुम्हारे सामने आ जाते जो सच्चे है और तुम झूठो को भी जान लेते ? जो लोग अल्लाह पर, और अन्तिम दिन पर 'ईमान' रखते है वे कभी तुम से इसकी इजाज़त नही मागेगे कि अपने माल और अपने प्राणों के साथ 'जिहाद' न करें। अल्लाह उन लोगो को जानता है जो उसका डर रखते है।"

—अत-तौबा : ४३-४४

नबी सल्ल० के मुँह बोले बेटे हज़रत ज़ैद रज़ि० का हज़रत ज़ैनब रज़ि० से विवाह हुआ, परन्तु जब दोनो मे निबाह मुश्किल हो गया, तो हज़रत ज़ैद रज़ि० ने आप से कहा कि मै उन्हे तलाक देना चाहता हूं। उस समय आपने हजरत ज़ैद रज़ि० को ऐसा करने से रोका, हालाँकि आप को इशारा मिल चुका था कि हज़रत ज़ैद तलाक दे देंगे और हज़रत ज़ैनब रज़ि० आपकी धर्मपत्नियो में सम्मिलित होगी, परन्तु आपने हज़रत ज़ैद से यही कहा कि अपनी पत्नी को तलाक न दो, अल्लाह से डरो। आपको डर था कि लोग कीचड उछालेगे कि देखो इस व्यक्ति ने अपने मुँह बोले बेटे की तलाक़ पाई हुई पत्नी से विवाह कर लिया। इस सम्बन्ध मे कुरआन में कहा गया "(हे नबी !) याद करो जब तुम उस व्यक्ति से जिस पर अल्लाह ने एहसान किया और तुमने भी जिस पर एहसान किया (अर्थात् ज़ैद से) कह रहे थे अपनी पत्नी को अपने पास रहने दो (उसे तलाक न दो) और अल्लाह से डर। तुम अपने जी मे वह बात छिपाए हुए थे जिसे अल्लाह खोलने वाला था, तुम लोगो से डर रहे थे जबकि अल्लाह इसका ज्यादा हक रखता है कि तुम उस से डरो।"

—अल-अहज़ाब : ३७

नबी सल्ल० की किसी धर्मपत्नी को या आपकी कुछ पत्नियो को कोई चीज थी जो पसन्द न थी। कुछ उल्लेखो से मालूम होता है कि वह मधु था। कुछ मधु ऐसे होते है जो अपने स्वाद और गन्ध की दृष्टि से कुछ लोगो को पसन्द नही हो सकते। नबी सल्ल० को मधु बहुत प्रिय था, परन्तु जब आपको मालूम हुआ कि पत्नियो मे से कुछ को मधु पसन्द नही है तो आपने इस विचार से कि उन्हे तकलीफ न हो, मधु प्रयोग करना छोड दिया। इस पर अल्लाह ने कसम तोडने का हुक्म दिया। अल्लाह ने

इस बात को पसन्द नही किया कि एक हलाल (वैध) और उत्तम वस्तु का प्रयोग आप और आपके साथी छोड दे इसलिए कि आपका तरीका बाद मे आने वालो के लिए उदाहरण बन सकता था। कुरआन में स्पष्ट शब्दो मे कहा गया . "हे नबी ! जिस चीज को अल्लाह ने तुम्हारे लिए 'हलाल' किया है उसे अपनी पत्नियो को खुश करने के लिए क्यो 'हराम' करते हो ? और अल्लाह अत्यन्त क्षमाशील और दयावान् है। अल्लाह ने तुम पर तुम्हारी कसमो को खोलना जरूरी कर दिया है। और वह ज्ञान वाला और हिकमत' वाला है।" —अत-तहरीम . १-२

इन उदाहरणो से यह बात भली-भाँति स्पष्ट हो जाती है कि किस प्रकार अल्लाह ने अपने नबी पर खास निगाह रक्खी है और उसे किसी साधारण सी साधारण भूल-चूक पर कायम नही रहने दिया। कभी कोई साधारण सी भूल हुई भी तो तुरन्त आपको सचेत कर दिया गया।

कुरआन के अतिरिक्त दूसरे प्रकार की 'वह्य'

असाधारण सूझ-बूझ और योग्यता के अतिरिक्त 'नबी' को सदैव ईश्वरीय मार्ग-दर्शन भी प्राप्त रहता है। 'नबी' का अल्लाह से सदैव सम्पर्क और सम्बन्ध स्थापित रहता है। अल्लाह की 'वह्य' सदैव नबी की ओर प्रवृत रहती है। अल्लाह की ओर से केवल 'किताब' ही का अवतरण नही होता बल्कि किताब के अतिरिक्त दूसरी 'वह्य' भी अल्लाह की ओर से आती है। कितने ही ऐसे 'नबी' हुए है जिन पर कोई किताब नही उतरी, फिर भी 'वह्य' ने उन्हे सम्बोधित किया। 'वह्य' के द्वारा अल्लाह ने उन्हे सत्य-मार्ग दिखाया। उनकी जाति के लोगो के लिए भी आवश्यक था कि वे उनकी शिक्षाओ पर 'ईमान' लाये। हजरत मूसा अ० को 'तौरात' उस समय प्रदान की गई जब फिरऔन विनष्ट हो गया और 'बनी इसराईल' को लेकर हजरत मूसा अ० 'तूर' के दामन में पहुँचे।[1] जब तक वे मिस्र मे रहे, उन पर कोई 'किताब' नही उतरी। परन्तु इस बीच भी हर उस व्यक्ति के लिए जिसको उन्होंने सम्बोधित किया, उनकी शिक्षाओ और उनकी पेश की हुई बातो पर 'ईमान लाना' जरूरी था। 'कुरआन' मे ऐसे स्पष्ट सकेत मिलते है जिनसे पता चलता है कि 'किताब' के अतिरिक्त भी 'नबियो' के मार्ग-दर्शन के लिए अल्लाह की ओर से 'वह्य' का अवतरण होता था। हजरत मूसा अ० फिरऔन के दरबार मे जादूगरों के सापो से डर जाते है अल्लाह की ओर से 'वह्य' आती है "मत डरो, तुम्हारा ही बोल-बाला होगा" (ताहा० ६८)।

१. दे० 'सूरा' अल-आराफ १३८-१४७, 'सूरा' अल-कसस ४०-४३

हजरत मूसा अ० अल्लाह् के हुक्म से 'बनी इसराईल' को लेकर रात ही मे चल पडते है। दरिया पर पहुँचे तो 'वह्य' आई "अपनी लाठी दरिया पर मारो।" (अश-शुअरा ६३)। जाहिर है कि यह 'वह्य' वह न थी जो 'किताब' के रूप मे लोगो के मार्ग-दर्शन के लिए अवतीर्ण होती है।

कुरआन मे मालूम होता है कि उस प्रकार की 'वह्य खफी' (सूक्ष्म वह्य) स्वय नबी सल्ल० पर भी अवतीर्ण होती रहती थी। नबी सल्ल० पहले 'वैतुल मकदिस' की ओर मुँह करके 'नमाज' पढा करते थे, बाद में आपको 'वैतुल हराम' को 'किब्ला' बनाने का आदेश मिला। उस आदेश मे इस बात की पुष्टि की गई कि प्रथम किब्ला को भी अल्लाह् ही ने निश्चित किया था। कहा गया "और (अब तक) तुम जिस ('किबले') पर थे उसे तो हमने केवल इसलिए 'किब्ला' ठहराया था ताकि हम जान ले कि कौन 'रसूल' का अनुसरण करता है और कौन उलटे पाँव फिर जाता है" (अल-बकरा १४३)।

कुरआन की ऐसी कोई आयत नही पेश की जा सकती जिसमे पहले 'किबले' की ओर मुँह करके 'नमाज' पढने का आदेश दिया गया हो। इस से स्पष्ट है कि नबी सल्ल० पर कुरआन के अतिरिक्त भी 'वह्य' आती थी जिसके द्वारा आपको बहुत से ऐसे आदेश भी मिलते थे जो कुरआन मे बयान नही किए जाते थे।

नबी सल्ल० ने एक बार अपनी किसी पत्नी से गुप्त रूप से कोई बात कही, उन्होने उसे दूसरो को बता दिया। नबी सल्ल० को 'वह्य' द्वारा इसकी सूचना मिल गई "और जब 'नबी' ने अपनी पत्नियो मे से किसी से चुपके से एक बात कही फिर जब उसने उसकी खबर (दूसरो को) कर दी और अल्लाह् ने नबी पर उसको जाहिर कर दिया, तो उस ने उसका कुछ हिस्सा जता दिया और कुछ को टाल गया। तो जब 'नबी' ने उसे (पत्नी को) इसकी खबर की, तो उसने कहा . आपको इसकी सूचना किसने दी ? नबी ने कहा मुझे सूचना दी ज्ञान रखने वाले और खबर रखने वाले (अल्लाह) ने।"

—अत-तहरीम ३

कुरआन मे कही कोई ऐसी 'आयत' नही है जिसमे नबी सल्ल० को सूचित किया गया हो कि तुम्हारी पत्नी ने चुपके से कही हुई बात दूसरो से कह दी।

'उहुद' सग्राम के दूसरे दिन नबी सल्ल० ने मुसलमानो को एकत्र करके कहा कि हमें 'काफिरो' का पीछा करना चाहिए कही वे दोबारा हम पर आक्रमण न कर दे। इस अवसर पर भी जब कि मुसलमान

ज़खमों से चूर थे, 'काफिरो' का पीछा करने के लिए तैयार हो गए। कुरआन से इस बात का प्रमाण मिलता है कि 'काफिरो' का पीछा करने का आदेश अल्लाह की ओर से था जबकि कुरआन में कही भी कोई ऐसी 'आयत' नही है जिसमे मुसलमानो को 'काफिरो' का पीछा करने का हुक्म दिया गया हो। कुरआन के शब्दो को देखिए "जिन लोगो ने 'अल्लाह' और 'रसूल' की पुकार सुनी (और लडने लिए तैयार हो गए), जबकि वे (अभी-अभी लडाई में) जख्म खा चुके थे।" —आले इमरान १७२

इस से स्पष्ट है कि कुरआन के अतिरिक्त भी नबी सल्ल० पर अल्लाह की ओर से आदेश और 'वह्य' का अवतरण होता था।

'बद्र' सग्राम के समाप्त होने पर 'सूरा' अल-अनफाल का अवतरण हुआ। इस 'सूरा' में अल्लाह ने बद्र सग्राम पर पूर्ण रूप से विवेचना की है। विवेचना का आरम्भ करते हुए कहा गया है "और (याद करो) जब अल्लाह तुम से वादा कर रहा था कि दो गरोहो (अर्थात् तिजारती काफ़िला और कुरैश की सेना) में से एक तुम्हारे हाथ आ जायेगा, और तुम चाहते थे कि वैभव-हीन (निरस्त्र) गरोह तुम्हारे हाथ आए और अल्लाह चाहता था कि अपने वचनो द्वारा हक (सत्य) को हक कर दिखाये, और 'काफिरो' की जड काट कर रख दे।" —अल-अनफाल ७

यह 'आयत' बताती है कि अल्लाह ने 'नबी' के द्वारा यह वादा किया था कि 'ईमान वालो' को दो गरोहो में से एक पर अधिकार प्राप्त होगा, परन्तु कुरआन मे कही कोई ऐसी 'आयत' नही दिखाई जा सकती जिसमे मुसलमानो से युद्ध से पूर्व यह वादा किया गया हो। इस से स्पष्ट है कि यह वादा कुरआन के अतिरिक्त किसी और 'वह्य' के द्वारा किया गया था।

इस बद्र सग्राम ही के सिलसिले में कहा गया '(याद करो) जब तुम अपने 'रब' से फरियाद कर रहे थे, तो वह तुम्हारी फरियाद को पहुँचा कि मै एक हजार लगातार आने वाले 'फिरिश्तो' से तुम्हारी मदद करूँगा।" —अल-अनफाल ९

मुसलमानो की फरियाद का उत्तर कुरआन की किसी 'आयत' में नही मिलता। इस प्रकार के दूसरे और उदाहरण भी प्रस्तुत किए जा सकते है जिनमे इस बात की पुष्टि होती है कि कुरआन के अलावा भी नबी सल्ल० के पास 'वह्य' आती थी।

कुरआन से यह भी मालूम होता है कि 'वह्य' कई प्रकार की होती है। एक 'वह्य' तो वह है जिसके द्वारा कुरआन का अवतरण हुआ।

कुरआन अल्लाह के 'फ़िरिश्ते' के द्वारा नबी सल्ल० के हृदय पर अवतरित हुआ है[1]। दूसरे प्रकार की 'वह्य' वह है जिसे 'इल्का' व 'इलहाम' (दैवी प्रेरणा कहा जाता है। इसमें बात सीधे प्रत्यक्षत मन में डाल दी जाती है। तीसरे प्रकार की 'वह्य' वह है जिसमे पर्दे के पीछे से इस प्रकार 'कलाम' (वार्ता) किया जाता है कि पर्दे के पीछे से आवाज आये परन्तु सामने कोई दीख न पड़े। जैसे तूर पर्वत पर हजरत मूसा से अल्लाह ने कलाम (बात-चीत) किया था। एक वृक्ष से सहसा आवाज आने लगी परन्तु बोलने वाला निगाहों से ओझल था[2]। इसके अतिरिक्त स्वप्न द्वारा भी अल्लाह अपने 'नबी' को आदेश देता है। इसकी पुष्टि भी कुरआन से होती है। नबी सल्ल० ने मदीना मे स्वप्न देखा कि आप मक्का में दाखिल हुए हैं और 'काबा' का 'तवाफ' (परिक्रमा) कर रहे है। आपका यह स्वप्न पूरा हुआ। कुरआन ने इस बात की पुष्टि भी की यह स्वप्न आपको अल्लाह ने दिखाया था। जैसा कि कुरआन मे कहा गया "निस्सन्देह अल्लाह ने अपने रसूल को स्वप्न सच्चा दिखाया जिसमे 'हिकमत' थी। तुम 'मसजिदे हराम' (काबा) में अवश्य दाखिल होगे। —अल-फतह : २७

कुरआन व 'हदीस' दोनो का अनुपालन अनिवार्य है। हाफिज इब्न कसीर कहते है 'सुन्नत' भी आप पर (नबी सल्ल० पर) 'वह्य' द्वारा अवतरित हुई जिस प्रकार कि कुरआन उतरा। अन्तर बस इतना है कि कुरआन 'वह्य मतलू' (पाठ्य दैवी सकेत) है और 'सुन्नत' 'वह्य गैर-मतलू' (अपाठ्य दैवी प्रकाशन)।"

इमाम हाजिमी 'नासिख व मनसूख' मे कहते हैं . "हज़रत जिब्रील 'हदीस' लेकर उतरते थे और आपको सिखाते थे। अत अल्लाह के रसूल सल्ल० का हर वह आदेश जो प्रमाणित रूप मे हम तक पहुँचा हो वह भी अवतरण में सम्मिलित है।"

नबी सल्ल० से जब कोई बात पूछी जाती, तो यदि आपको मालूम होता तो उत्तर देते नही तो 'वह्य' की प्रतीक्षा करते और 'वह्य' आ जाने के पश्चात् उसका उत्तर देते। इसकी मिसाले 'हदीस' की किताबो में बहुत मिलती है। उदाहरणार्थ, इब्न मसऊद कहते है कि नबी सल्ल० से आत्मा के बारे मे पूछा गया, तो आप चुप रहे, यहाँ तक कि 'आयत' उतरी। (बुखारी)

'हज्ज' की हालत मे खुशबू लगाना वर्जित है। एक 'सहाबी' ने न

१. दे० सूरा अल-बकरा ९७-९८, अश-शुअरा : १९२-१९५।

२. सूरा अश-शूरा : ५१।

जानने के कारण 'इहराम' मेंखुशबू लगा ली और चुगा भी पहन लिया। उन्होने आप से पूछा कि उन्हे क्या करना चाहिए। आपको जवाब मालूम न था। आपके पास 'वह्य' आई तब आपने उत्तर दिया कि खुशबू धो डालो और चुगा निकाल दो।

कुरआन और सुन्नत

कुरआन मजीद की सम्पूर्ण वर्णन-शक्ति जिस चीज में व्यय होती दीख पड़ती है वह वास्तव में 'ईमान', धारणा और धर्म के मौलिक नियमो की शिक्षा है। नैतिकता, 'इबादत' (उपासना), आचार-व्यवहार आदि से सम्वन्धित आदेश के अधिकतर नियम और उनकी मौलिक बाते ही कुरआन में बयान की गई है। उन आदेशो का विस्तार और उन से सम्वन्धित आनुषंगिक एवं गौण बातों का ज्ञान हमें नबी सल्ल० के कथन और व्यवहार द्वारा होता है। नबी सल्ल० ने वास्तव मे कुरआन के आदेशों को स्पष्ट किया और उनको जीवन में व्यावहारिक रूप दिया। कानून और नियम को विस्तृत रूप देना वास्तव मे नबी का दायित्व था। कुरआन में कहा गया है "और (हे नबी!) हमने तुम पर याद-दिहानी (अनुस्मारक अर्थात् कुरआन) उतारी है ताकि तुम लोगों के लिए उसकी शिक्षा को स्पष्ट रूप से बयान कर दो जो उनकी ओर उतारी गई है" (अन-नह्ल ४४)। नबी सल्ल० का वचन और कर्म कुरआन के नियम और आदेशो से भिन्न कोई चीज नही है, बल्कि वह कुरआन ही की व्याख्या और उसका अङ्ग है। इमाम शातबी के शब्दो में "मानो 'सुन्नत' को ईश्वरीय ग्रन्थ के आदेशो के अभिप्राय और अर्थ की टीका और व्याख्या का स्थान प्राप्त है।" —अल-मुवाफिकात, भाग ४, पृष्ठ १०

तफसीर फत्हुल बयान मे है "कुरआन की तफसीर (टीका) और उसका बयान 'सुन्नत' ('हदीस') से समझा जाये। इस सक्षिप्त सार रूप के स्पष्टकर्ता स्वय अल्लाह के 'रसूल' सल्ल० है। और इसीलिए कहा गया है कि जब कभी कुरआन व 'हदीस' के बीच जाहिर में टकराव मालूम हो तो 'हदीस' को प्राथमिकता का स्थान देना चाहिए क्योंकि इस 'आयत' (सकेत है सूरा अन-नह्ल आयत ४४ की ओर) के अनुसार कुरआन संक्षिप्त सार रूप है और 'हदीस' उसकी व्याख्या और टीका है। और स्पष्टकर्ता को सदैव सक्षिप्त की अपेक्षा प्राथमिकता प्राप्त होती है।

यही बात खाजिन और मुआलिमुत्तनजील आदि कुरआन की टीकाओ मे टीकाकारो ने लिखी है। इमाम सियूती ने लिखा है: "कुछ स्थानो पर कुरआन का बयान इतना सक्षिप्त है कि 'हदीस' के बिना उस

का पालन करना कठिन है। मानो कुरआन अपने अभिप्राय को समझाने में 'हदीस' पर आश्रित है।" —मिफताहुल जन्न :

इमाम औजाई कहते है 'किताब' (कुरआन) को 'सुन्नत' की उस से कही अधिक आवश्यकता है जितनी कि 'सुन्नत' को किताब की आव-श्यकता है।" हाफिज अबू उमर इस वाक्य को स्पष्ट करते हैं कि उनका आशय यह है कि 'सुन्नत' कुरआन का अभिप्राय व्यक्त करती है। इमाम शातबी ने इमाम औजाई के शब्दो की व्याख्या करते हुए लिखा है: "कुरआन की इरादत में कभी दो बातो और कभी इससे अधिक की सम्भावना होती है। 'हदीस' उनमें से एक को निश्चित कर देती है फिर वही कुरआन का अभिप्रिय माना जाता है दूसरी सम्भावनाओं को छोड दिया जाता है। —अल-मुवाफिकात, भाग ४, पृष्ठ ८-१०

हाफिज इब्न कसीर कहते है कि तुम्हारे लिए 'सुन्नत' का अनु-पालन अनिवार्य है क्योकि वह कुरआन की व्याख्या और उसकी टीका है। इमाम शाफई कहते है अल्लाह के रसूल सल्ल० ने जो फैसला किया है वह कुरआन से समझ कर किया है। सर्वोच्च अल्लाह का कथन है: "(हे नबी !) हमने हक के साथ यह 'किताब' तुम्हारी ओर उतारी है ताकि अल्लाह ने जो कुछ तुम्हे दिखाया है उसके अनुसार तुम लोगों के बीच निर्णय करो।" अन-निसा १०५

इमाम हज्म जाहिरी रह० कहते हैं "समस्त 'फिक्ह' (नियम एव धर्म-शास्त्र) सम्बन्धी वार्ताओ और समस्याओ का मूल आधार कुरआन मे मौजूद है। 'सुन्नत' केवल उसे उजागर करती है जैसा कि अल्लाह ने कुरआन में कहा है "हमने किताब (कुरआन) मे किसी (आवश्यक) चीज को नही छोडा।" —६ ३८

यहाँ कुछ मिसाले दी जा रही है जिन से इसका भली-भाँति अनु-मान किया जा सकता है कि नबी सल्ल० ने किस प्रकार अपने कर्म और वचन द्वारा कुरआन की व्याख्या की और कुरआन के आदेशो को स्पष्ट किया और उनका वास्तविक अर्थ एव अभिप्राय बताया।

कुरआन मे हुक्म दिया गया कि "नमाज' के लिए उठो, तो अपना मुँह और कुहनियो तक हाथ धो लिया करो, और अपने सिरो का 'मस्ह' कर लो और अपने पाँव टखनो तक (धोओ या उनका मस्ह करो)" (अल-माइदा : ६)। "नबी सल्ल० से मालूम हुआ कि मुँह धोने में कुल्ली करना और नाक साफ करना भी सम्मिलित है और सिर के 'मस्ह' के साथ कान का 'मस्ह' भी करना चाहिए। कान भी सिर ही का अङ्ग

है। पाँव पर मोजे हों तो 'मस्ह' किया जाए नही तो पाँव को धोना चाहिए। साथ ही आपने यह भी बताया कि 'वजू' किन हालतों में टूट जाता है और किन हालतो मे नही टूटता।

कुरआन में 'नमाज' कायम करने का आदेश दिया गया परन्तु 'नमाज' से अभिप्राय क्या है ? और उसके कायम करने का क्या अर्थ होता है ? ये समस्त बातें हमें नबी सल्ल० के आचरण और कथनों द्वारा मालूम होती हैं। नबी सल्ल० की 'सुन्नत' (तरीका, रीति, आचरण आदि) ही से हमे 'नमाज' का समय, रूप, अङ्ग, सामूहिक रूप से नमाज पढने का ढग और नमाज से सम्बन्धित दूसरी बातो का ज्ञान होता है।

जब रोजे के बारे मे यह आयत उतरी . "(खाते-पीते रहो) यहाँ तक कि सफेद धागा तुम्हे काले धागे से स्पष्टत अलग दिखाई देने लगे।" (अल-बकरा · १८७) तो अदी बिन हातिम रजि० ने दो धागे सफेद और काले अपने पास रख लिए और जब तक उनमें अन्तर मालूम न हुआ खाते-पीते रहे। सुबह को नबी सल्ल० से कहा कि मैंने रात को काले और सफेद दो धागे अपने तकिया के नीचे रख लिए थे। आपने अदी रजि० की बात सुनकर हँसते हुए कहा कि तुम्हारा तकिया बड़ा लम्बा-चौडा है कि जिसमें रात और दिन दोनो समाविष्ट हो जाते हैं। इस से अभिप्रेत रात की कालिमा और दिन का प्रकाश है। इसके पश्चात् स्पष्टीकरण के लिए 'मिनल फज्र' (अर्थात् प्रभात की काली धारी) के शब्द भी अवतीर्ण हुए। —(बुखारी)

कुरआन से यह तो मालूम होता है कि 'हज्ज' करना अनिवार्य है (आले इमरान ९७), परन्तु कुरआन ने इसको स्पष्ट नही किया कि जीवन मे केवल एक बार 'हज्ज' करना जरूरी है या प्रत्येक वर्ष हज्ज करना होगा। नबी सल्ल० के कथन से ज्ञात हुआ कि यदि कोई जीवन में एक बार 'हज्ज' कर ले, तो अल्लाह के आदेश का अनुपालन उसने कर लिया।

कुरआन में सोने-चाँदी के एकत्र करने पर सख्त धमकी दी गई है (अत-तौबा . ३४)। इस धमकी से ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे अब इस का अवसर नही रहा कि कोई व्यक्ति खर्च से अधिक एक पैसा भी अपने पास रख सके या कोई स्त्री साधारण आभूषण भी अपने पास रक्खे; परन्तु नबी सल्ल० ने स्पष्ट किया कि चाँदी का 'निसाब' (धन की वह मात्रा जिस पर 'जकात' देनी जरूरी हो) क्या है ? और 'निसाब' के बराबर या उससे अधिक सोना-चाँदी रखने वाला व्यक्ति यदि ढाई

प्रतिशत 'जकात' अदा कर दे तो कुरआन का डरावा और धमकी उस पर चस्पाँ नही होगी।

कुरआन में खाने-पीने की कुछ चीजों को हराम (अवैध) और कुछ चीजों के हलाल (वैध) होने का उल्लेख करके शेष चीजों के विषय में एक सामान्य आदेश दिया गया है कि तुम्हारे लिए शुद्ध चीजे हलाल (वैध) और अशुद्ध वस्तुये हराम (अवैध) की गई हैं (अल-माइदा · ४)। कौन सी चीजे शुद्ध है जिनको हम खा सकते है? और कौन सी चीज़े अशुद्ध है जिनको खाना हमारे लिए वैध नही है? इन सबका विस्तृत ज्ञान हमें नबी सल्ल० के व्यवहार और आदेशों के द्वारा होता है।

कुरआन में विरासत (उत्तराधिकार, तरका) के कानून का उल्लेख करते हुए बताया गया है कि मरने वाले का कोई पुत्र न हो और एक लडकी हो, तो वह तरका के आधे की हकदार होगी (अन-निसा ११)। इस आदेश मे यह बात स्पष्ट न थी कि यदि दो लडकियाँ हो, तो उन्हे कितना हिस्सा मिलेगा। नबी सल्ल० ने बताया कि दो लडकियो का हिस्सा भी उतना ही है जितना दो से अधिक लडकियो के लिए निर्धारित किया गया है।

कुरआन मे दो ऐसी लडकियो से, जो आपस में बहिने हों, एक साथ विवाह करने से रोका गया है (अन-निसा २३)। इस हुक्म से वास्तव में उस प्रेम की रक्षा अभीष्ट है जो दो बहिनों मे स्वाभाविक रूप से पाया जाता है। नबी सल्ल० ने बताया कि उन दो स्त्रियो से एक साथ विवाह करना भी इसी आदेश के अन्तर्गत अवैध है जो आपस में फूफी-भतीजी या खाला-भानजी हो, क्योकि परिवर्जन का जो कारण वहाँ पाया जाता है वह यहाँ भी मौजूद है।

कुरआन में शराब को हराम बताया गया है। शराब के हराम होने का कारण यह है कि वह मादक और नशा लाने वाली होती है। अल्लाह के 'रसूल' सल्ल० ने बताया कि प्रत्येक नशा लाने वाली चीज हराम है। किन्तु कुछ चीजे ऐसी होती है कि यदि थोडी पी जाये तो नशा नही होता। यहाँ यह प्रश्न उठता था कि ऐसी चीजो का थोड़ी मात्रा में पीना कैसा है? 'हदीस' मे बता दिया गया "जो चीजे अधिक मात्रा में होने पर नशा लाये उनकी थोडी मात्रा भी हराम (अवैध) है।"

कुरआन में दूध के रिश्ते के कारण जिन स्त्रियो से विवाह को अवैध कहा गया है वे माँ और बहिन है (अन-निसा २३)। नबी सल्ल० ने माँ-बहिन के साथ कुछ दूसरे रिश्तो को भी सम्मिलित किया

है। जिस किसी स्त्री का भी किसी ने दूध पिया है वह माता के सदृश है और उसका पति पिता के सदृश है। इस रिश्ते से भी वे सभी रिश्ते हराम ठहरेंगे जो माता-पिता के रिश्ते से हराम होते हैं।

कुरआन मे चोरी की सजा हाथ काटना बताया गया है। परन्तु यह नही बताया गया कि यह सजा कितने माल (धन) की चोरी करने पर दी जायेगी ? इसी प्रकार कुरआन में यह बात भी नही बताई गई कि चोर का कितना हाथ काटा जायेगा ? ये सारी बाते हमें सुन्नत' से मालूम होती है।

कुरआन मे कहा गया है "तलाक पाई हुई स्त्रियाँ तीन 'क़ुरूअ' तक अपने आप को इन्तजार में रक्खे" (अल-बकरा . २२८)। 'कुरूअ' शब्द से अभिप्रेत स्त्रियों का मासिक धर्म (माहवारी) और शुद्ध अवस्था (पाकी) दोनो ही हो सकते हैं। 'सुन्नत' से यह बात स्पष्ट हुई कि यहाँ 'कुरूअ' से अभिप्रेत मासिक धर्म है। जब यह आयत उतरी · "जो लोग 'ईमान' लाये और अपने ईमान को कुछ जुल्म के साथ सम्मिश्रित नही किया, उन्ही लोगो के लिए निश्चिन्तता है, और वही राह पाये हुये लोग हैं।" —अल-अनआम · ८२

'सहाबा' घबरा गए। 'नबी सल्ल०' की सेवा मे पहुंचे, निवेदन किया . हे अल्लाह के 'रसूल' ! हम में कौन है जिस से 'ईमान लाने' के पश्चात् जुल्म या पाप का कोई कर्म न हुआ हो। आपने कहा : यहाँ ज़ुल्म से अभिप्रेत 'शिर्क' (बहुदेववाद) है। जैसा कि दूसरी 'आयत' में 'शिर्क' की अभिव्यजना जुल्म के शब्द से ही की गई है

"निस्सन्देह 'शिर्क' बहुत बड़ा जुल्म (घोर अन्याय) है" (सूरा लुकमान : १३) —बुखारी व मुस्लिम

यह उत्तर सुनकर सहाबा रजि० का सशय जाता रहा और उनकी घबराहट दूर हो गई।

एक बार नबी सल्ल० ने कहा कि 'कियामत' के दिन जिस से हिसाब लिया गया समझ लो वह विनष्ट हुआ। हज़रत आइशा रज़ि० ने कहा कि हे अल्लाह के रसूल ! कुरआन मे तो कहा गया है . "तो जिस किसी को उसका (कर्म-)पत्र उसके दाहिने हाथ मे दिया गया, उस से आसान हिसाब लिया जायेगा।" —अल-इनशिकाक : ७-८

नबी सल्ल० ने कहा : 'आसान हिसाब' का अर्थ तो बस पेश करना है। (बुखारी व मुस्लिम)। अर्थात् कर्म-फल उसके सामने रख कर उसे बता दिया जायेगा कि तूने ये-ये कर्म किए है; परन्तु उस से पूछ-ताछ न

होगी। यदि किसी से यह प्रश्न कर लिया गया कि यह कर्म क्यों किया, तो निश्चय ही उसकी खैर नही।

इन उदाहरणों से स्पष्ट हो जाता है कि 'सुन्नत' (नबी सल्ल० का कर्म व कथन) वास्तव मे कुरआन के आदेशो का ही विस्तार है। कुरआन की 'आयत' है "और (हे नबी!) हम ने तुम पर यह 'ज़िक्र' (अनुस्मारक) उतारा है ताकि तुम लोगों के सामने खोल-खोल कर (उस शिक्षा आदि को) बयान कर दो जो-कुछ उनकी ओर उतारा गया है।" (अन-नह्ल : ४४) इस आयत से स्पष्ट होता है कि 'हदीस' या 'सुन्नत' वास्तव में कुरआन (जिसे आयत मे ज़िक्र अथवा अनुस्मारक कहा गया है) का टीका या बयान है। बयान के बहुत से भेद किए जा सकते हैं, प्रत्येक पहलू से 'हदीस' या 'सुन्नत' को कुरआन का बयान कहेंगे। यहाँ हम बयान (स्पष्टीकरण) के कुछ भेदो का सक्षिप्त रूप मे संकेत करेंगे :

बयान तफ़सील (विस्तार सम्बन्धी बयान)

'आयत' के किसी सक्षिप्त सकेत को 'हदीस' खोल देती हो इसे बयान तफसील कहेगे।

बयान तअ़ईन (निश्चय सम्बन्धी बयान) :

'आयत' मे विभिन्न सम्भावनाओ मे से 'हदीस' किसी एक को निश्चित करती हो।

बयान ताकीद :

'आयत' और 'हदीस' का विषय एक ही हो। 'हदीस' से केवल आयत का समर्थन एव पुष्टि होती हो।

बयान तक़रीर (निर्धारण सम्बन्धी बयान) :

'हदीस' कुरआन को किसी 'आयत' के प्रति होने वाले अर्थ सम्बन्धी सन्देह को दूर करके उसके अर्थ को स्पष्टत व्यक्त करती हो।

बयान इलहाक (संहिता सम्बन्धी बयान) :

किसी 'आयत' के छोड़े हुए मजमून या विषय के साथ मिलकर 'हदीस' उसे पूरा करती या उसे कुछ विस्तृत कर देती हो।

बयान तख़सीस (विशेषत्व सम्बन्धी बयान) :

'आयत' का अर्थ देखने मे सामान्य हो परन्तु 'हदीस' उसे किसी विशेष व्यक्ति से सम्बद्ध करती हो।

बयान तौजीह (स्पष्टीकरण सम्बन्धी बयान) :

'आयत' मे उल्लिखित आदेश या शिक्षा का कारण 'हदीस' से मालूम होता हो।

बयान तअलील (हेतु सम्बन्धी) :

'आयत' मे उल्लिखित शिक्षा या आदेश का हेतु 'हदीस' से व्यक्त होता हो।

बयान तासीर (गुण एवं प्रभाव सम्बन्धी बयान) :

'आयत' के प्रभाव और गुण को 'हदीस' व्यक्त करती हो।

बयान तमसील (उपमा सम्बन्धी बयान) :

'आयत' के किसी सार्विक सिद्धान्त के किसी आनुषगिक प्रसंग का उल्लेख 'हदीस' मे हुआ हो।

बयान तफ़रीअ (निष्कर्षण सम्बन्धी बयान) :

'आयत' के किसी सार्विक सिद्धान्त से 'हदीस' कोई आनुषांगिक या गौण प्रसंग निष्कर्ष रूप मे प्रस्तुत करती हो।

बयान क़यास (अनुमान सम्बन्धित बयान) :

'हदीस' किसी सम्मिलित हेतु के आधार पर 'आयत' के किसी आनुषंगिक प्रसंग के अनुरूप कोई आनुषागिक प्रसग प्रस्तुत करती हो।

बयान इस्तिखराज (उद्धरण सम्बन्धी बयान) :

'आयत' के किसी आनुषगिक प्रसग से 'हदीस' ने कोई सार्विक सिद्धान्त उद्धृत करके प्रस्तुत किया हो।

कुरआन व हदीस से प्रत्येक के उदाहरण प्रस्तुत किए जा सकते हैं, परन्तु हम यहाँ केवल सक्षिप्त सकेतो पर बस करते हैं।

अब यह बात स्पष्ट हो गई कि 'सुन्नत' (नबी सल्ल० का व्यवहार व वचन) वास्तव मे कुरआन के आदेशों का विस्तार है। 'सुन्नत' से कुरआन के आदेश के अभिप्राय का स्पष्टीकरण होता है। बहुत सी 'हदीसे' ऐसी भी है जिन से कुरआन की 'आयतो' का केवल समर्थन होता है। उदाहरणार्थ एक 'हदीस' है: "चांद देखकर रोज़ा रखना शुरू करो और चाद देखकर रोज़ा रखना बन्द कर दो" यह 'हदीस' कुरआन की निम्नलिखित 'आयत' के आदेश की पुष्टि करती है. 'रमज़ान' का महीना वह है जिस मे कुरआन (पहले-पहल) उतारा गया, जो लोगो के लिए एक मार्ग-दर्शन है, और (जिस में) मार्ग-दर्शन की खुली निशानियां हैं और जो (सत्य और असत्य को अलग कर देने वाली) कसौटी है तो तुम मे से जो कोई इस महीने को पाये, उसे चाहिए कि उसके रोज़े रक्खे।"

—अल-बकरा १८५

'सुन्नत'[1] का अनुसरण

नबी सल्ल० के कर्म और वचन और आपके तरीके का अनुपालन करना हमारे लिए अनिवार्य है। आपकी 'नुबूवत' और 'रिसालत' किसी विशेष युग तक सीमित नहीं है। आप नबी होने के समय से लेकर 'कियामत' तक सारे ही लोगों के रसूल हैं : "(हे नबी!) हमने तो तुम्हें समस्त मनुष्यों के लिए शुभ सूचना देने वाला और सचेत करने वाला बना कर भेजा है; परन्तु अधिकतर लोग जानते नही है।" —सबा : २८

एक दूसरे स्थान पर कहा गया

"और (कहो:) यह कुरआन मेरी ओर 'वह्य' किया गया है, ताकि मैं इस से तुम्हें और जिस किसी को यह पहुँचे सब को सचेत कर दूँ।"

—अल-अनआम : १९

एक दूसरे स्थान पर कहा गया : "और (हे मुहम्मद!) हमने तुम्हे सारे संसार के लिए 'रहमत' (दयालुता) ही बना कर भेजा है।"

—अल-अंबिया : १०७

मालूम हुआ आपकी 'रिसालत' केवल आपके अपने ही समय के लिए न थी। 'कियामत' तक अल्लाह के आदेशानुपालन के साथ आपके आदेशों का पालन करना भी आपके अनुयायियों का कर्तव्य है। कुरआन की यह शिक्षा 'कियामत' तक के लिए है : "हे 'ईमान लाने वालो'! अल्लाह का हुक्म मानो, और 'रसूल' का हुक्म मानो और उनका जो तुम मे अधिकारी लोग हैं; फिर यदि तुम्हारे बीच किसी बारे मे झगड़ा हो जाये, तो उसे अल्लाह और 'रसूल' की ओर ले जाओ।" —अन-निसा : ५९

अधिकारी लोग जो आदेश देंगे उनका पालन करना भी मुसलमानों के लिए आवश्यक है, शर्त यह है कि वे अल्लाह और 'रसूल' के आदेश के प्रतिकूल न हों बल्कि मौलिक रूप से वे उनके अनुरूप हों। मतभेद की दशा में सदा अल्लाह और 'रसूल' की ओर रुजू करना चाहिए। मुस्लिम व्यक्ति पर केवल कुरआन के आदेशों का अनुपालन ही काफी नही है, 'सुन्नत' का अनुसरण भी उसके लिए आवश्यक है। यही कारण है कि नबी सल्ल० कहते है : "तुम जिस तरह मुझे 'नमाज' पढ़ते देखते हो उसी तरह नमाज़ अदा करो।" अन्तिम 'हज्ज' के अवसर पर आपने कहा . "लोगो! तुम 'हज्ज' से सम्बन्धित रीतियां मुझ से सीख लो कदाचित् मैं तुम्हे इस वर्ष के बाद न देखूँ।"

नबी सल्ल० कहते है : "जिस किसी ने मेरी 'सुन्नत' से किनारा खीचा

१. नबी सल्ल० का तरीका।

उसका मुझ से कोई सम्बन्ध नही[1]।" आपकी वसीयत है : "मैंने तुम्हारे बीच दो चीजे छोड़ी है, जब तक तुम उन्हें मजबूती से पकडे रहोगे कदापि गुमराह न होगे : अल्लाह की किताब और अल्लाह के 'रसूल' की 'सुन्नत'।"

नबी सल्ल० के बाद किसी दूसरे 'नबी' के आने की सम्भावना भी नही है, इसलिए कि 'नुबूवत' का सिलसिला आप पर समाप्त कर दिया गया.

"(लोगो!) मुहम्मद तुम्हारे पुरुषो मे से किसी के पिता नही हैं, परन्तु वे अल्लाह के 'रसूल' और 'नबियो' के समापक है, और अल्लाह हर चीज का ज्ञान रखने वाला है।" —अल-अहज़ाब : ४०

स्वय नबी सल्ल० क कथनो से भी यही मालूम होता है कि 'नुबूवत' का सिलसिला आप पर समाप्त हो गया है[2]। अब 'क़ियामत' तक आप ही के अनुसरण मे मानव-कल्याण और मुक्ति है। आपके द्वारा अल्लाह ने अपने 'दीन' को पूर्ण कर दिया[3]। और उसके सदा सुरक्षित रहने का वादा किया है[4]। अल्लाह की 'किताब' के साथ रसूल सल्ल० की 'सुन्नत' का अनुसरण मुस्लिम व्यक्तियों के लिए आवश्यक है जिस से इन्कार नही किया जा सकता। सहाबा रजि० और 'दीन' के दूसरे महान्, योग्य और विद्वान् व्यक्तियो ने कुरआन के साथ 'सुन्नत' के अनुपालन को अपने लिए अनिवार्य समझा। 'सुन्नत' से किनारा खीचना या उसका इन्कार करना उस पद्धति के सर्वथा प्रतिकूल है जिस पर नबी सल्ल० अपने अनुयायियो को छोड गए थे। 'सहाबा' रज़ि० का तरीका यह था कि उन्हे हर अवसर पर नबी सल्ल० को 'सुन्नत' की तलाश होती थी। हजरत अबू बक्र रज़ि० के सामने कोई मामला आता तो वे पहले उसका हुक्म अल्लाह की 'किताब' व रसूल सल्ल० की 'सुन्नत' ही मे तलाश करते थे। किसी मामले मे वे इजतिहाद[5] से उसी समय काम लेते जब अल्लाह की 'किताब' और रसूल की 'सुन्नत' में उसके लिए

---

१. बुखारी, मुस्लिम, हज़रत अनस रजि० से उल्लिखित।

२ इस किताब के अध्याय 'रिसालत पर ईमान' मे 'नुबूवत की समाप्ति' से सम्बन्धित 'हदीसें' देखिए।

३ दे० सूरा अल-माइदा . ३।

४. दे० सूरा अल-हज्ज : ६।

५. नये मामलो मे कुरआन, 'सुन्नत' और धर्म के मौलिक नियमो के प्रकाश में सोच-विचार कर धर्म का आदेश मालूम करना।

हुक्म और आदेश न पाते[1]। हज़रत अबू बक्र रज़ि० ने अपने सर्वप्रथम 'खुतबे' (भाषण) मे कहा था : "मेरा हुक्म मानो जब तक मै अल्लाह और उसके रसूल का हुक्म मानता रहूँ; किन्तु यदि मै अल्लाह और उसके रसूल की अवज्ञा करूँ तो मेरा कोई आज्ञापालन तुम पर नही है।"

एक स्त्री अपने पोते की मीरास की माँग करती है जिसकी माता मर चुकी थी। हज़रत अबू बक्र रजि० कहते है : "अल्लाह की 'किताब' में कोई ऐसा आदेश नही जिस की दृष्टि से तुझे हक पहुँचता हो, और 'रसूल' की 'सुन्नत' को दृष्टि से तेरा कोई हक मुझे मालूम नही है। अतः इस समय वापस जा यहाँ तक कि मैं लोगो से पूछूँ।" इसके बाद उन्होने लोगों से पूछा तो हज़रत मुगीरह बिन शोअबा और मुहम्मद बिन मुस्लिमा ने खड़े होकर गवाही दी कि उनकी मौजूदगी मे नबी सल्ल० ने दादी को छठा हिस्सा दिलाया है। इस के बाद हज़रत अबू बक्र रज़ि० ने इसी के अनुसार उस स्त्री को छठा हिस्सा दिलाया[2]।

हज़रत अबू बक्र रजि० ने अपनी बेटी हज़रत आइशा रजि० को कुछ माल देने को कहा था परन्तु उन्हे याद नही रहा कि यह माल उन्होने दिया या नही। मृत्यु के समय उन्होंने हज़रत आइशा रजि० से कहा कि यदि तुमने वह माल ले लिया है तब तो वह तुम्हारे पास रहेगा (वह तुम्हें हिबा हो चुका) परन्तु यदि अभी तक तुमने उसे अपने कब्जे मे नही लिया है तो अब वह मेरे सब वारिसो मे तकसीम होगा। यह बात उन्होने इसलिए कही कि यदि माल अभी तक क़ब्ज़े मे नही लिया गया है, तो उसकी हैसियत केवल वसीयत की रहती है और 'हदीस' मे है : "वारिस के लिए कोई वसीयत नही।"

हज़रत सिद्दीक रजि० 'जकात' रोकने वालो से लड़ने का निश्चय करते है। हज़रत उमर रज़ि० को इस निश्चय के सही होने मे सदेह होता है। वे कहते है कि आप उन से किस तरह लड़ेगे जबकि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा है कि मुझे हुक्म दिया गया है कि मैं लोगों से लड़ूँ यहाँ तक कि वे इसको मान ले कि अल्लाह के सिवा कोई 'इलाह' (उपास्य) नही। जब वे इसे मान लेंगे तो वे मुझ से अपने माल और अपने प्राण को बचा लेंगे किन्तु हक के साथ (यदि उनके विरुद्ध कोई कार्रवाई करनी पड़ी तो दूसरी बात है) और उनका हिसाब अल्लाह के जिम्मे है। (अब जबकि वे इसको मानते हैं कि अल्लाह के सिवा कोई उपास्य नही तो आप उनसे

१. एलामुलमोकईन भाग १, पृष्ठ ५४।
२. मुवत्ता, बुख़ारी, मुस्लिम।

किस तरह लड़ेंगे ?) हजरत अबू बक्र रज़ि० ने कहा : अल्लाह की कसम मैं उन से अवश्य लड़ूँगा जो 'नमाज' और 'जकात' के बीच अन्तर करते है। 'जकात' माल का हक है (जिस तरह 'नमाज' आत्मा का हक है)। अल्लाह की कसम यदि वे ऊँट बाँधने की एक रस्सी भी रोक लेंगे जो वे अल्लाह के रसूल सल्ल० के समय मे देते थे, तो मैं उन से लड़ूँगा[1]।"

हजरत उमर रजि० का तरीका भी वही था जो हजरत अबूबक्र सिद्दीक रजि० का था। जब मजूस का देश इस्लामी राज्य मे सम्मिलित हुआ तो हजरत उमर रजि० को संकोच हुआ कि मजूस से 'जिजया' लिया जाये या न लिया जाये। क़ुरआन मे केवल 'किताब वालो' से 'जिजया' लेनें का उल्लेख है और क़ुरआन की भाषा मे 'किताब वालो' से अभिप्रेत 'यहूद' व 'नसारा' है। हजरत अब्दुर्रह्मान बिन औफ रजि० ने इस बात की गवाही दी कि नबी सल्ल० ने हिज्र के 'मजूस' से 'जिजया' लिया है। इसके बाद हजरत उमर रजि० को उन से जिजया लेने मे कोई सकोच नही हुआ।

हजरत उमर रजि० ने काज़ी शुरैह के नाम अपने एक पत्र मे लिखा था कि यदि कोई मामला ऐसा सामने आए जिसके बारे मे अल्लाह की किताब मे कोई आदेश न हो तो उसका फैसला उस हुक्म के अनुसार करे जो उसके बारे मे 'रसूल' की 'सुन्नत' मे मिलता हो। और यदि कोई ऐसा मामला हो कि उसके बारे मे अल्लाह की किताब और 'रसूल' की 'सुन्नत' दोना हो खामोश हों तो उस कानून का अनुसरण करे जिस पर 'इजमाअ' हो चुका हो[2]। और यदि उसके बारे मे कोई 'इजमाअ' न हुआ हो तो फिर 'इजतिहाद'[3] से काम लेने का अधिकार है या फिर प्रतीक्षा करे कि उस मामले मे कोई 'इजमाअ' हो जाये। हजरत उमर रजि० ने उन्हे यह भी लिखा कि मेरी दृष्टि मे प्रतीक्षा करना ज्यादा अच्छा है[4]।

हजरत उमर रजि० का विचार था कि पति की 'दियत'[5] से पत्नी को

---

१. बुखारी, मुस्लिम।

२ अर्थात् मुस्लिम समुदाय का कोई निर्णय हो चुका हो।

३. नये विषयो मे कुरआन व 'सुन्नत' और इस्लाम के मौलिक नियमो के प्रकाश मे सोच-विचार कर हुक्म मालूम करना।

४. एलामुल मोकईन।

५. कत्ल और खून के बदले का धन। वह धन जो किसी की हत्या करने पर उसके घर वालो को दिलाया जाये।

विरासत न मिलनी चाहिए परन्तु जब उन्हे इस बात की सूचना मिली कि नबी सल्ल० ने पति की 'दियत' से पत्नी को विरासत दिलाई है तो उन्होने अपने कौल से रुजू कर लिया।

एक बार हजरत उमर रजि० ने एलान किया कि किसी व्यक्ति ने नबी सल्ल० से इसके बारे मे कुछ सुना है कि यदि झगड़े मे किसी स्त्री का गर्भपात हो जाये तो उसकी 'दियत' क्या है? हमल बिन मालिक न खडे होकर कहा कि एक बार दो स्त्रियो मे लड़ाई हो गई। एक स्त्री ने दूसरी को खेमे की लकडी से मारा जिसकी चोट से उसका गर्भपात हो गया। नबी० सल्ल के सामने मामला लाया गया तो आपने उस पर दियत के पाँच सौ दिरहम जरूरी ठहराये। यह सुनकर हजरत उमर रजि० ने कहा कि यदि हम 'हदीस' न सुनते और अपनी राय से फैसला करते तो शायद इसके विरुद्ध फैसला कर जाते।

हजरत उमर रजि० के बाद हजरत उस्मान रजि० 'खलीफा' हुए। उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा कि वे 'किताब' (कुरआन) और 'सुन्नत' के पाबन्द होगे। और भूतपूर्व खलीफा हज़रत अबू बक्र रजि० और हज़रत उमर रजि० के उन फैसलो और तरीको का अनुसरण करेंगे जो मुसलमानों के मतैक्य और सहमति से नियत पा चुके होगे। और स्यय उनके अपने समय में जो बाते भले लोगा के मतैक्य से तै होगी उन्हे व्यवहार में लायेंगे[1]।

हजरत अली ने खलीफा होने के बाद मिस्र वालों को जो सरकारी आदेश हजरत कैस बिन सअद बिन उबादा के हाथ भेजा था उसमें लिखा था कि हम पर तुम्हारा यह हक है कि अल्लाह की किताब और उसके 'रसूल' की 'सुन्नत' के अनुसार कार्य करे, और तुम पर वह हक कायम करे जो किताब व 'सुन्नत' की दृष्टि से हक हो, और अल्लाह के 'रसूल सल्ल०' की 'सुन्नत' को जारी (प्रचलित) करे और तुम्हारी बेखबरी की दशा मे भी तुम्हारा हित करते रहे।

चारों 'खलीफा' के अतिरिक्त दूसरे 'सहाबा' भी किताब व 'सुन्नत' को अन्तिम निर्णायक वस्तु और अन्तिम पमाण (*Final Authority*) समझते थे। वे अपने को अल्लाह के रसूल की सुन्नत के विरुद्ध निर्णय करने का अधिकारी नही समझते थे। रोमी सरकार और हजरत मुआविया रजि० के बीच एक समझौते के अन्तर्गत एक नियत

१ तारीख तबरी भाग ३, पृष्ठ ४४६।

समय तक युद्ध बन्द हो गया। जब वह अवधि समाप्त होनें को आई तो हजरत मुआविया रजि० नें सेना के साथ शत्रु के देश की ओर प्रस्थान कर दिया। उन्होंनें सोचा कि समझौते का जो मुद्दत है उसमें आक्रमण नही करेंगे परन्तु मुद्दत समाप्त होते ही अचानक हमला कर देंगे। एक दिन उन्हे दूर से एक सवार आता दिखाई दिया जो ऊँचे स्वर से कह रहा था अल्लाहु अकबर, अल्लाहु अकबर! प्रतिज्ञा पूरी करनी है, उसे भग नही करना है। सवार अम्र बिन अबसा थे। हजरत मुआविया रजि० नें कहा क्या बात है? उन्होंनें कहा "मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना है कि जिस व्यक्ति का किसी जाति से कोई समझौता हो तो उस समझौते में कोई परिवर्तन न कर, जब तक कि (समझौते की) मुद्दत न गुजर जाये। या उस जाति को सूचित न कर दे।" हजरत मुआविया रजि० नें यह सुना तो अपनी सेना के साथ वापस हो गये।

हजरत उमर रजि० के बाद हजरत अब्दुर्रहमान बिन औफ रज़ि० और दूसरे सहाबा रजि० नें हजरत उस्मान रजि० को 'खलीफा' चुना तो उनके हाथ पर इन शब्दों में 'बैइत' की "हम आपके हाथ पर इस शर्त पर 'बैइत' करते है कि आप अल्लाह की किताब, अल्लाह के 'रसूल' की 'सुन्नत' और दोनों भूतपूर्व ख़लीफा के तरीके पर कार्य करेंगे।"

हजरत इब्न उमर 'मुख़ाबरह' (बटाई पर मामला करना) किया करते थे जब राफेअ बिन ख़दीज की इस सिलसिले में निषेध की 'रिवायत' पहुँची तो उन्होंनें 'मुख़ाबरह' करना छोड दिया। इसी तरह हजरत जैद रजस्वला के लिए भी 'तवाफ सद्र' करना अनिवार्य समझते थे परन्तु जब हजरत इब्न अब्बास नें बयान किया कि नबी सल्ल० ने 'तवाफ सद्र' छोडनें की इजाजत दी है, तो उन्होंनें अपनें कौल से रुजू कर लिया।

अब्दुल्लाह इब्न उमर से पूछा गया कि एक व्यक्ति नें यह 'नज्र' की है कि वह रोजा रहेगा। सयोग से उसके बाद ही ईदुलअजहा या ईदुलफित्र आ गई (जिस में रोजा रखनें से नबी सल्ल० नें रोका है)। क्या वह इन दिनों में भी रोजा रक्खे? उन्होंनें कहा : नही। और यह 'आयत' पढी "निश्चय ही तुम लोगा के लिए अल्लाह के 'रसूल' में एक उत्तम आदर्श था" (अल-अहजाब २१)। नबी सल्ल० ईदुल अजहा और ईदुल फित्र में न खुद रोजा रखते थे और न रोजा रखना पसन्द करते थे (बुख़ारी)।

हज़रत अब्दुल्लाह् इब्न मसऊद कहते है जिसे कोई फैसला करना हो तो वह अल्लाह् की किताब से करे यदि उसमें मौजूद न हो तो नबी सल्ल० की 'हदीस' के अनुसार फैसला करे। हजरत अब्दुल्लाह् इब्न अब्बास रजि० से भो इसी तरह् 'रिवायत' है[१]।

सहाबा रजि० के बाद दूसरे घर्माधिकारियों और विद्वानों ने भी रसूल की 'सुन्नत' को वही स्थान दिया जो स्थान सहावा रज़ि० ने दिया था। हज़रत उमर बिन अब्दुल अजीज एक व्यक्ति को अपने पत्र में लिखते है 'मैं तुझ को वसीयत करता हूँ अल्लाह् का डर रखने की और उसके हुक्म पर चलने की और उसके नबी की 'सुन्नत' का अनुसरण करने की, और जो बाते 'विदअत' वालों ने निकाली है उन्हे छोड़ने की। 'बिदअत' वालों ने ये बाते उस समय निकाली है जबकि 'सुन्नत' जारी (प्रचलित) हो चुकी थी। ये लोग सुन्नत को पीछे डालकर उसके अनुसरण से बेपरवाह हो गये। तुझ पर 'सुन्नत' का अनुपालन अनिवार्य है क्योंकि यह चीज तुझे अल्लाह् के अनुज्ञानुसार तुझे (पथभ्रष्टता से) सुरक्षित करने वाली है।"
—अबू दाऊद

हजरत उमर बिन अब्दूल अजीज के इन शब्दों से स्पष्ट है कि उन की दृष्टि में 'ईमान वालों' के लिए 'सुन्नत' का अनुसरण आवश्यक एवं अनिवार्य है। और यही वह सुरक्षित मार्ग है जिसके द्वारा मनुष्य अपने-आपको हर प्रकार के आपदाओ और गुमराहियों से बचा सकता है। वे स्वयं भी 'सुन्नत' के अनुवर्त्ती थे और दूसरो को भी 'सुन्नत के पालन करने पर उभारते थे।

हज़रत उमर बिन अबुल अजीज के समय में एक गुलाम बेचा गया। बाद में उसमे कोई ऐब साबित हुआ तो उसके खरीदने वाले ने उसकी वापसी का दावा कर दिया। गुलाम के द्वारा जो आमदनी इस बीच हुई थी उसके बारे में झगडा पैदा हुआ कि वह किसको मिलेगी। हज़रत उमर बिन अब्दुल अजीज का विचार था कि आमदनी की राशि विक्रेता को दी जाये परन्तु जब उन तक हजरत आइशा रजि० की 'रिवायत' पहुँची कि नबी सल्ल० का यह फैसला है कि आमदनी क्रेता को मिलनी चाहिए क्योंकि इस बीच में यदि गुलाम मर जाता तो हानि क्रेता ही की होती अत जिसकी हानि होती लाभ भी उसी को मिलना

१. अल-मुवाफिकात भाग ४ पृष्ठ ७-८।

चाहिए। इसके बाद हजरत उमर बिन अबुल अजीज ने अपने कौल से रुजू कर लिया।

इमाम अबू हनीफा रह० कहते है कि मुझे जब कोई हुक्म अल्लाह की किताब में मिल जाता है तो मैं उसी को थाम लेता हूँ, जब उसमें नही मिलता तो अल्लाह के रसूल सल्ल० की 'सुन्नत' और आपकी उन 'हदीसो' को लेता हूँ जो विश्वसनीय लोगो के यहाँ विश्वसनीय लोगो के द्वारा प्रसिद्ध हैं। फिर जब न अल्लाह की किताब में हुक्म मिलता है और न 'रसूल' की 'सुन्नत' में तो मैं रसूल सल्ल० के सहाबा रजि० (अर्थात् उन के इजमा, जिसमे वे सहमत है) का अनुसरण करता हूँ, और उनके मतभेद की दशा में जिस 'सहाबी' का कौल चाहता हूँ, स्वीकार करता हूँ और जिसका चाहता हूँ छोड़ देता हूँ; परन्तु उन सबके कौल से बाहर जाकर किसी का कौल अंगीकार नही करता। रहे दूसरे लोग तो जैसे उन्होंनें 'इजतिहाद' किया, मैं भी 'इजतिहाद' करता हूँ।

एक दिन किसी ने इमाम अबू हनीफा से कहा कि आप नबी सल्ल० के हुक्म का उल्लंघन करते हैं। इमाम नें कहा · अल्लाह की उस पर फिटकार जो अल्लाह के रसूल सल्ल० का विरोध करता है। आप ही के कारण अल्लाह नें हमें सम्मानित किया और आप ही के कारण हम नें मुक्ति पाई।"[२]

अल्लामा इब्नुल 'कय्यिम रह० नें इमाम अहमद बिन हबल रह० के निष्कर्षण के नियम का उल्लेख करते हुए लिखा है कि वे सर्वप्रथम दर्जा अल्लाह की किताब और सही 'हदीसो' को देते है। यदि वे न मिलें तो सहाबा रजि० के कौल को, वे भी न हों तो फिर "कियास"[3] से काम लेनें से पहले देख लेना चाहिए कि कोई 'रिवायत' मौजूद है जो यद्यपि सही होनें के उच्च स्तर पर न हो परन्तु ऐसी भी न हो कि बिल्कुल ही प्रमाण न बन सकती हो। ऐसी हालत में इमाम अहमद के विचार में इस प्रकार की 'हदीस' को दलील बनाना चाहिए। उनके विचार में 'मुरसल' और

---

१ खतीब की तारीख बगदाद भाग १३, जहबी की मनाकिब अबू हनीफा व साहिबैन पृष्ठ २०, मनाकिब इमाम आजम लिल मुवफ्फक अल-मक्की भाग १ पृष्ठ ७९।

२. इब्न अब्दुल बर्र की अल-इन्तिका पृष्ठ १४०-१४१।

३ किताब व सुन्नत आदि के प्रकाश मे किसी विषय मे स्वय विचार करके उसका हुक्म मालूम करना।

'जईफ' हदीस को कियास' की अपेक्षा प्राथमिकता एवं प्रमुखता प्राप्त है। उन्होंने इस बात को स्पष्ट कर दिया है कि 'जईफ' से अभिप्रेत असत्य और 'मुन्कर' हदीस नही है बल्कि इतना ही है कि वे शुद्धता की दृष्टि से अत्यन्त उच्च कोटि की 'हदीसे' न हो।[1]

पहले लोगों की परिभाषा में 'जईफ' (कमजोर) का आशय वह नही है जो बाद वालों की परिभाषा में हे। वल्कि जिस 'हदीस' को बाद के लोग 'हसन' कहते है उसी को अगले लोग 'जईफ' कहते है।[2]

इब्न कय्यिम लिखते है कि इमाम अहमद इस नीति में अकेले नही हैं बल्कि सभी इमामों की यही नीति रही है[3]। इब्न कय्यिम ने इमाम अबू हनीफा रह० के ऐसे 'फतवों' (शास्त्रीय निर्णयों और गिरई हुक्मों) को उदाहणार्थ प्रस्तुत किया है जो इस 'नियम पर आधारित है। इब्न कय्यिम इमाम मालिक रह० के वारे में लिखते हैं कि इमाम मालिक की दृष्टि में हदीस 'मुरसल', 'मुनकतेअ' और वलागात[4] और 'सहावी' के कौल को 'कियास' के मुकाबले में प्राथमिकता प्राप्त है[5]।

यहाँ यह बात सामने रहनी चाहिए कि इमाम मालिक रह० जिन 'मुरसल', 'मुनकतेअ' और 'वलागात' को प्रमाणीकरण का आधार ठहराते थे उनके विचार में उन 'रिवायतो' को प्रमाणिक हैसियत प्राप्त थी[6]।

इमामों और धर्म विधिज्ञों के अतिरिक्त दूसरे पुण्यात्माओं और महानभावों का भी यही तरीका था कि वे किताव व 'सुन्नत' दोनों ही को (धर्म) का मौलिक आधार समझते थे। उन्होंनें क्षण भर के लिए भी यह नही सोचा कि 'सुन्नत' का अनुसरण एव अनुपालन उनके लिए अनिवार्य नही है। 'हदीस' के मुकाबले में वे किसी की वात को भी दलील नही समझते थे। हजरत जनैद रह० कहते है. "उन लोगों के अतिरिक्त जो अल्लाह के रसूल सल्ल० के पद-चिन्हों पर चले शेष सब के लिए अल्लाह तक पहुँचनें के मार्ग वन्द है।"

१. एलामुलमोक्ईन भाग १ पृष्ठ २५।

२. एलाम भाग १ पृष्ठ ६४।

३. एलाम भाग १ पृष्ठ २५।

४. 'वलागात' से अभिप्रेत मुअत्ता की वे रिवायतें हैं जिनको "बलगहू" ( ) से बयान किया गया है।

५. एलाम भाग १ पृष्ठ २६।

६. मुसफ्फा पृष्ठ ७, १३।

हजरत जुन्नून रह० कहते है . 'अल्लाह से प्रेम करने वाले का एक लक्षण यह है कि वह अल्लाह के 'हवीव' (प्यारे) सल्ल० का अनुसरण करे। आप की मनोदशा में भी, कर्मो में भी, आदेशों और हुक्मों में भी और आपकी 'सुन्नतो' में भी।"

हज़रत इब्न अता रह० का कहना है "कोइ मकाम और सोपान भी अल्लाह के 'हवीव' (हजरत मुहम्मद) सल्ल० के आदेशो, आपके कर्मो और आपके स्वभाव का अनुसरण करने के सोपान से उच्च नही।"

'सुन्नत' की रक्षा

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि जीवन का सीधा और सरल मार्ग पाने के लिए नवी सल्ल० का अनुसरण जिस प्रकार आपके समय के लोगा के लिए अनिवार्य था ठीक उसी प्रकार 'कियामत' तक के लोगो के लिए अनिवार्य है। इसके लिए जरुरी है कि कुरआन के साथ 'रसूल' की 'सुन्नत' और आपके आदेश भी सुरक्षित हो। इस पहलू से देखते है तो मानना पडता है कि अल्लाह ने कुरआन के साथ 'सुन्नत' को भी सुरक्षित रक्खा है।

नवी सल्ल० ने अपने जीवन काल मे एक ओर तो अपने कर्म और वचन से कुरआन और अल्लाह के आदेशों को स्पष्ट किया दूसरी ओर आपने इस्लामी नियमो के अनुसार लोगो के चरित्र का निर्माण किया और उन्हे एक सुसगठित और शक्तिशाली समुदाय वनाया। विचार और धारणाओं से लेकर व्यावहारिक जीवन के समस्त अङ्गो तक समाज का निर्माण आप ही के निश्चित किए हुए नियमो के आधार पर हुआ। आपके सिखाये हुए ढग पर 'नमाज़' 'रोजा', आदि 'इबादतो' और उपासनाओं के तरीके प्रचलित हुए। शादी-विवाह, तलाक और विरासत आदि के जो नियम और व्यवस्था इस्लामी समाज ने ग्रहण किया वह वही था जो आपने नियत किये थे। युद्ध में शत्रुओ से आपने जो मामला किया, पराजित जाति के साथ आपने जो व्यवहार किया, वही इस्लामा राज्य का नियम और जाब्ता समझा गया। घर से लेकर मस्जिद, बाजार, न्यायालय, शासन से लेकर अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति तक सभी मामलो में नवी सल्ल० की 'सुन्नत' आपके अनुयायियो के लिए एक कानून, नियम और ज़ाब्ते की हैसियत रखती थी। मुसलमानो ने उसे कानून और जाब्ते के रूप में ग्रहण भी किया। इसी जाब्ते और कानून के अनुसार इस्लामी समाज में एक चीज हलाल (वैध) समझी जाती थी और एक चीज़

'हराम' (अवैध) होती थी। इस्लामी समज की उसके अपने समस्त तत्वों और पहलुओं के साथ नबी सल्ल० की 'सुन्नत' पर स्थापना हुई। आपके बाद यह समाज अवशेष रहा। और इस इस्लामी समाज के व्यवहार और आचरण ने बाद की शताब्दियो में 'सुन्नत' की रक्षा की। इस चीज की पुष्टि इस से भी होती है जब हम देखते हैं कि 'हदीस' के प्रमाणिक उल्लेखो और इस्लामी समुदायं के निरन्तर व्यवहार मे कोई विभेद नही पाया जाता बल्कि उनके बीच पूर्ण अनुकूलता पाई जाती है।

कुछ 'सुन्नतें' ऐसी है जो आपके जीवन काल में प्रसिद्ध न हो सकी थी। उनका ज्ञान विभिन्न लोगों को था जिसे उन लोगो ने नबी सल्ल० के कर्म, वचन आदि को देख-सुनकर प्राप्त किया था। नबी सल्ल० के स्वर्गवास के पश्चात् तुरन्त ही ऐसी 'सुन्नतो' के एकत्र करने का सिल-सिला शुरू हो गया। नबी सल्ल० अपने जीवन-काल में लोगों के पथ-प्रदर्शन के लिए स्वय मौजूद थे; परन्तु आपके बाद इसकी आवश्यकता हुई कि आपकी वे 'सुन्नतें' भी जमा की जाये जिनका ज्ञान अभी हर व्यक्ति को नही हो सका है। जनसाधारण से लेकर जजो और अधिकारी व्यक्तियों सभी को अपने-अपने क्षेत्र में ऐसे मामले पेश आते थे जिनके बारे में उन्हे 'सुन्नत' के ज्ञान की आवश्यकता होती थी। जिन लोगों के पास नबी सल्ल० की किसी 'सुन्नत' का ज्ञान था वे भी उसे एक अमानत समझते थे। वे इस बात को जानते थे कि उनके पास जो ज्ञान भी है उसे दूसरों तक पहुँचाना उनका कर्तव्य है। इस प्रकार 'हदीस' की 'रिवायत' का आरम्भ हुआ और 'हदीस' जमा करने का यह सिलसिला सन् ११ हि० से तीसरी-चौथी शताब्दी तक जारी रहा। इसके साथ सही 'हदीसों' मे मन-गढन्त हदीसो को सम्मिलित करने के प्रयास को असफल बनाने की हर सम्भव कोशिश की गई। विशेष रूप से उन 'सुन्नतों' की जो नियम और कानून आदि से सम्बन्ध रखती थी हर प्रकार से जो सम्भव हो सकता था छान-बीन की गई। और आलोचना के कड़े-से-कड़े नियमों पर उन्हे परखा गया। तर्क-वितर्क और आलोचना की उस सामग्री को भी सुरक्षित कर दिया गया जिसके कारण किसी 'रिवायत' को छोडा गया या किसी 'हदीस' को कबूल किया गया। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति को यह अवसर प्राप्त है कि वह किसी भी 'रिवायत' या 'हदास' के विषय में निश्चयात्मक निर्णय तक पहुँच सके। 'मुहद्दिसों' ('हदीस' के विद्वानों) का यह ऐसा महान् कार्य है जिसके द्वारा नबी

सल्ल० का जीवन और उस समाज का जिसका निर्माण आपके हाथों हुआ था पूरा नक्शा सदैव के लिए सुरक्षित हो गया। आपके एक-एक कथन की सनद को सुरक्षित कर दिया गया जिसे किसी समय भी जाँच कर सरलतापूर्वक यह निर्णय किया जा सकता है कि कोई 'रिवायत' किस दर्जे की है और कहाँ तक उस पर विश्वास किया जा सकता है।

'हदीस' का प्रचार

जैसा कि ऊपर कहा चुका जा है कि 'हदीसें' आरम्भ काल से ही बयान की जाने लगी और कम-से-कम दो शताब्दी तक मुसलमान 'हदीसों' के सुनने और उन्हे दूसरों तक पहुंचाने में लगे रहे। प्राचीन समय में घटनाओं और वृत्तान्तों को सुरक्षित रखने और उन्हे बाद के लोगों तक पहुंचाने का मुख्य साधन यह था कि वृत्तान्तों को याद रक्खा जाये और मौखिक रूप से उन्हे दूसरों तक पहुंचाया जाये। अरब निवासी हजारों वर्ष से लिखने के बदले अधिकतर मुख और स्मरण शक्ति से अपना कार्य चलाते आये थे। उन्हे स्मरण शक्ति और शुद्ध रूप में बात को दूसरों तक पहुंचाने में विशेषता प्राप्त थी। वे कवियों के काव्य को ही नही, क़बीलों की वशावली, बल्कि घोडों तक की वशतालिका याद रखते थे और अपनी सन्तान को याद कराते थे। फिर यह कैसे सम्भव था कि ये लोग अल्लाह के रसूल जैसे महान् पुरुष के जीवन-वृत्तान्त और आपके जीवन की घटनाओं और आपकी बात-चीत को भूल जाते और उसे अपने बाद के लोगो तक न पहुँचाते। नबी सल्ल० से 'सहाबा' को जो गहरा सम्बन्ध था इतिहास उसका उदाहरण प्रस्तुत करने में असमर्थ है। 'सहाबा' के हृदय पर आपका जो प्रभाव था उसका अनुमान करना भी हमारे लिए कठिन है। उनकी दृष्टि में तो जीवन का वही दिन सबसे बड़ा मूल्यवान था जो आपके साथ व्यतीत हुआ। वे आपकी हर बात ध्यान-पूर्वक सुनते थे। और आपके प्रत्येक कार्य को देखते थे और इस एहसास के साथ सुनते और देखते थे कि उसे अपने जीवन में व्यावहारिक रूप से अपनाना है। इस तरह का उदाहरण भी मिलता है: दो 'सहाबी' आपस में निश्चय करते है कि हम में से कोई-न-कोई हर समय नबी सल्ल० की सेवा में उपस्थित रहे और वह एक-दूसरे को आपकी बातो और आदेशो से सूचित करे ताकि आपकी कोई एक बात से भी हम

अनभिज्ञ न रहे[1]। जब हार्दिक सम्बन्ध इस प्रकार का हो तो आपके साथी आपकी बाता को याद रखने में असावधानी कैसे दिखा सकते थे। जो लोग आपके दर्शन नही कर सके थे और न उन्हे आपके साथ रहने का सुअवसर मिल सका था स्वभावत उन्हे इसकी लालसा थी कि वे आपकी प्रत्येक बात सुने और आपके जीवन चरित्र से परिचित हो। इतिहास के पृष्ठों में इस प्रकार के वृत्तान्त मिलते है कि लोगो को जहाँ कही किसी 'सहाबी' की सूचना मिलती वे सैकडो मील चलकर मुलाकात करते और नबी सल्ल० के बारे में जानना चाहते।

नबी सल्ल० की ओर से 'सहावा' रजि० को इसकी इजाज़त थी बल्कि आपने उन्हे इसकी ताकीद की थी वे उन आदेशो और हिदायतो को जो उन्हे अल्लाह के रसूल से मिले याद रक्खे और उन्हे दूसरो तक पहुँचाये। इस सिलसिले की कुछ 'हदीसे' यहाँ पेश की जाती है :

हजरत अबू बकरह रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : "जो हाजिर है वह उन लोगो तक पहुँचाये जो हाज़िर नही है, सम्भव है वह किसी ऐसे व्यक्ति को पहुचा दे जो उस से अधिक समाई वाला हो।"

—बुखारी, मुस्लिम

जैद बिन साबित रजि०, अब्दुल्लाह बिन मसऊद रजि०, जुबैर बिन मुतइम रजि० और अबू दरदा रजि० का वयान है कि नबी सल्ल० ने कहा "अल्लाह उस व्यक्ति को प्रफुल्ल रक्खे जो हमसे कोई वात सुने, उसे सुरक्षित रक्खे यहाँ तक कि वह दूसरों तक पहुँचाये। कभी ऐसा होता है एक व्यक्ति स्वय 'फकीह' (समझ-बूझ वाला) नही होता परन्तु 'फिक्ह' (ज्ञान एव समझ) का वाहक हो जाता है।"

—अबू दाऊद, तिरमिजी, अहमद, इब्नमाजा दारमी।

बहरैन से बनी अब्दुल कैस का प्रतिनिधि मण्डल नबी सल्ल० की सेवा मे उपस्थित हुआ। वापसी के समय मण्डल के लोगो ने आप से निवेदन किया कि आप हमे कुछ ऐसी हिदायतें दे जो हम वापस हो कर अपनी जाति के लोगो को बताये और 'जन्नत' के अधिकारी हों।

---

१. हजरत उमर रज़ि० कहते है कि मैं और मेरा एक अनसारी पडोसी नबी सल्ल० की सेवा मे बारी-बारी हाज़िर होते थे। एक दिन वे हाज़िरी देते और एक दिन मैं हाज़िर रहता। जिस दिन मैं हाज़िर रहता उस दिन के वृत्तात और 'वह्य' आदि का विवरण उन्हे सुनाता और जिस दिन वे हाज़िर होते उस दिन का वृत्तान्त वे मुझे सुनाते।

—बुखारी

आपने 'दीन' (धर्म) के कुछ आदेश बताये और कहा "इन बातो को याद कर लो और वहाँ के लोगों को बता दो।" —बुखारी, मुस्लिम

इब्न अब्बास रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा "तुम मुझसे सुनते हो और लोग तुम से सुनेंगे, फिर जिन लोगों ने तुम से सुना होगा उन से दूसरे लोग सुनेंगे।" —अबू दाऊद

सहाबा रजि० ने 'हदीस' के प्रचार का असाधारण प्रयत्न किया। बुखारी मे हजरत अबूजर रजि० का यह कौल मिलता है कि यदि तुम मेरी गर्दन पर तलवार रख दो और मुझे इस बात की आशा हो कि मैं मरने से पहले अल्लाह के रसूल सल्ल० का एक 'कलमा' (बात) भी जो मैंने सुना है कह सकूँगा, तो मैं अवश्य कह दूँगा।"

हजरत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रजि० नबी सल्ल० के समय में अल्पायु थे। वे सहाबा रजि० के दरवाजे पर केवल इसलिए प्रात काल से सन्ध्या तक बैठे रहते थे की वे नबी सल्ल० की कोई बात बयान करे, तो ये उसे नोट कर ले। —दारमी

कर्म और वचन तो बड़ी चीज है, सहाबा रजि० ने नबी सल्ल० की चाल-ढाल और आपकी एक-एक अदा को सुरक्षित करने की कोशिश की है। उदाहरणार्थ हज़रत अगर्र मुजनी की एक 'रिवायत' को लीजिए। वे कहते हैं कि एक बार हम ने गिना तो नबी सल्ल० ने एक मजलिस में सौ बार ईश्वर से क्षमा की प्रार्थना की। इस से अन्दाज़ा किया जा सकता है कि किस प्रकार नबी सल्ल० की एक-एक अदा पर सहाबा रजि० की निगाह रहती थी।

अल्लाह के रसूल सल्ल० ने एक और सहाबा रजि० को 'हदीसों' के प्रचार की ताकीद की दूसरी ओर आप ने 'हदीसो' में ऐसी चीज़ो को मिलाने से सख्ती के साथ बचने की ताकीद की जो वास्तव में हदीस न हो। इस सिलसिले की कुछ 'हदीसे' ये है

हजरत सलमा रजि० कहते है कि मैनें नबी सल्ल० को यह कहते सुना है "जो व्यक्ति मुझ से सम्बन्ध लगा कर वह बात कहे जो मैनें नही कही वह अपना ठिकाना 'जहन्नम' मे बना ले।" —बुखारी

अबू सईद खुदरी रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा "मेरी बाते रिवायत करो,[1] इसमे कोई हरज की बात नही है परन्तु जो

१ अर्थात् उनको दूसरो तक पहुँचाओ और उनका प्रचार करो।

कोई जान-बूझ कर मेरी ओर झूठ बात जोड़ेगा वह अपना ठिकाना 'जहन्नम' में बनायेगा।" —मुस्लिम

इब्न अब्बास रज़ि०, इब्न मसऊद और जाबिर बिन अब्दुल्लाह रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० नें कहा · मेरी ओर से कोई बात बयान करनें से बचो सिवाय उसके जिसके बारे में तुम जानते हो कि वह मैंनें कही है क्योंकि जो व्यक्ति मेरी ओर झूठी बात जोड़ेगा वह अपना ठिकाना 'जहन्नम' में बनायेगा। —तिरमिज़ी, इब्नमाजा

सहाबा रज़ि० को इसका पूरा एहसास था कि अल्लाह के रसूल सल्ल० का ऐसी किसी बात से सम्बन्ध जोड़ना जो आपकी कही हुई न हो साधारण गुनाह नही है बल्कि यह ऐसा गुनाह है जिसकी सजा 'जहन्नम' है। यही कारण है कि वे नबी सल्ल० की ओर से कोई बात बयान करने में बड़ी सावधानी से काम लेते थे। सहाबा रज़ि० मे कोई एक मिसाल भी नही पेश की जा सकती कि किसी सहाबी ने किसी व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए अपनी ओर से कोई बात गढकर नबी सल्ल० से उसका सम्बन्ध जोडा हो। सहाबा रज़ि० का हाल यह था कि जब वे कोई 'हदीस' बयान करते तो काँप उठते। जहाँ उन्हे कुछ भी सन्देह होता कि शायद नबी सल्ल० के अपनें शब्द कुछ और रहे हों वहाँ वे आपकी बात बयान करने के पश्चात् "औ कमा क़ाल रसूलुल्लाह सल्ल०" (या इसी तरह के शब्द अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहे हैं) कह देते थे ताकि सुनने वाला शब्दो को तथैव नबी सल्ल० के शब्द न समझें।

इससे इन्कार नही कि पहली शताब्दी हिजरी के अन्त से 'हदीसों' में ऐसी 'रिवायतें' सम्मिलित होने लगी जो मन गढन्त थी। 'हदीस' के भण्डार में यदि कुछ घडी हुई 'हदीसें' सम्मिलित भी हुईं तो 'मुहद्दिसों' ('हदीस' के विशेषज्ञों) की छान-बीन और उनके आलोचना सम्बन्धी सिद्धान्तों ने उन्हे छाँट कर रख दिया। इसी उद्देश्य के लिए 'मुहद्दिसों' ने 'असमाउर्रिजाल' का फ़न ईजाद किया।

हदीस का लिपिबद्ध होना

अरब के लोग दीर्घ काल से स्मरण और मौखिक रूप से अपना काम चलाने में अभ्यस्त रहे हैं। इस्लाम के प्रारम्भिक काल में वर्षों तक उनमें यह विशेष गुण बाक़ी रहा है। आरम्भ में जिस चीज को सुरक्षित करने के लिए लिपिबद्ध करना आवश्यक समझा गया वह क़ुरआन था। इसका विशेष कारण यह था कि कुरआन के प्रत्येक शब्द को उस विशेष

क्रम के साथ सुरक्षित करना अभीष्ट था जो अल्लाह ने उसके लिए नियत किया था। क़ुरआन अपने शब्द, अर्थ और क्रम आदि प्रत्येक दृष्टि से 'वह्य' (ईश्वर-प्रेषित) था इसलिए उसकी प्रत्येक चीज़ को सुरक्षित रखना आवश्यक था। 'सुन्नत' में नबी सल्ल० का वचन और कर्म दोनों सम्मिलित हैं। कर्म और व्यवहार सम्बन्धी 'सुन्नत' को सहाबा रज़ि० अपने शब्दों में बयान करते थे। उदाहरणार्थ आपका स्वभाव ऐसा था और आपने यह कार्य किया आदि। आपके वचन और आपके मुख से निकले हुए शब्दों का उल्लेख करने के विषय में भी सहाबा रज़ि० पर यह पाबन्दी न थी कि वे नबी सल्ल० के शब्दों को अक्षरश. ही बयान करें। वे आपकी बातों को सुनकर उसके अर्थ और भाव को बदले बिना उसे अपने शब्दों में बयान कर सकते थे और उन्होने अपने शब्दों में बयान भी किया है।

'हदीस' को लिपिबद्ध करने का वह महत्व न था जो महत्व क़ुरआन को लिपिबद्ध करने का था। कबीला कुरैश में केवल गिने-चुने १७ व्यक्तियों को लिखना-पढना आता था। मदीना के 'अनसार' में भी ११ से अधिक व्यक्ति न थे जिन्हे लिखना-पढ़ना आता था। कागज अप्राप्य था। लिखने के लिए झिल्लियाँ, हड्डियाँ और खजूर के पत्ते काम में लाये जाते थे। ऐसी स्थिति में सबसे आवश्यक था कि क़ुरआन करीम को ऐसा सुरक्षित रक्खा जाये कि दूसरी चीज़े उसमें मिलने न पाये। लिखने वाले केवल थोड़े से लोग थे जो कुरआन लिख रहे थे। वे यदि दूसरी चीजें भी लिखने लगते तो इसका भय था कि कही कुरआन में दूसरी चीज़े न मिल जाये। इन्ही कारणो से आरम्भ में नबी सल्ल० ने 'हदीसों' को लिखने से रोका था, परन्तु यह रुकावट अधिक समय तक नही रही। 'हिजरत' के बाद आप मदीना पहुँचे वहाँ आपने शिक्षा का प्रबन्ध किया। जल्द ही अच्छी सख्या में ऐसे लाग होगए जो लिख-पढ़ सकते थे। फिर आपने 'हदीसों' के लिखने की इजाज़त सामान्य रूप से दे दी। इस सिलसिले की 'रिवायतें' बहुत सी हैं। हम यहाँ केवल कुछ अत्यन्त प्रामाणिक रिवायतों का उल्लेख करते हैं.

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० का बयान है कि 'अनसार' में से एक व्यक्ति ने कहा : "मै आप से बहुत सी बाते सुनता हूँ परन्तु याद नही रख पाता।" अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : "अपने हाथ से मदद लो।" और अपने हाथ के इशारे से बताया कि लिख लिया करो। —तिरमिज़ी

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० कहते हैं कि नबी सल्ल० ने एक 'खुतबा' भाषण) दिया। अबू शाह ने कहा : मेरे लिए लिखा दीजिए। आपने

कहा "इसे अबूशाह को लिखकर दे दो।" —बुखारी, अहमद तिरमिजी

अबू हुरैरह रजि० की एक दूसरी 'रिवायत' से मालूम होता है कि यह 'खुतबा' नबी सल्ल० ने मक्का की विजय के अवसर पर दिया था और इस खुतबे में आपने हरम मक्का से सम्बन्धित आदेश और कत्ल के मामले के सम्बन्ध में कुछ कानून बयान किये थे। यमन वालों में से एक व्यक्ति ने कहा था कि ये आदेश मुझे लिखा दें।

अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस रजि० कहते हैं कि मैं अल्लाह के रसूल सल्ल० से जो कुछ सुनता था उसे याद करने के लिए लिख लिया करता था। लोगो ने मुझे रोका और कहा कि रसूलुल्लाह सल्ल० एक मनुष्य हैं, कभी प्रसन्नता की हालत में बातें करते है कभी क्रोध की दशा में। इस पर मैंने लिखना छोड दिया फिर मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० से इस का जिक्र किया तो आपने अपनी उँगलियो से अपने मुँह की ओर सकेत करते हुए कहा "लिखो, उस सत्ता की कसम जिसके हाथ मे मेरे प्राण हैं, इस मुख से हक (सत्य) के सिवा कुछ नही निकलता।"

—अबू दाऊद, मुसनद अहमद, दारमी, हाकिम, बैहकी · मुदखल

हजरत अबू हुरैरह रजि० का बयान है कि सहाबा रजि० मे मुझ से अधिक किसी के पास 'हदीसे' न थी सिवाय अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस रजि० के। इसलिए कि वे लिख लेते थे और मै लिखता नही था।

अब्दुल्लाह इब्न अम्र बिन आस रजि० ने 'हदीसो' का एक सग्रह लिख रक्खा था, उसका नाम उन्होने सादिका रक्खा था। इस सग्रह मे लगभग एक हजार 'हदीसे' थी। —असाबा, तबकात इब्न सअद, अबू दाऊद

हजरत अली रजि० ने एक मौके पर लोगो को एक लेख निकाल कर दिखाया जिसमे 'जकात', दण्ड विधान से सम्बन्धित कानून और हरम मदीना और कुछ दूसरे मामलो के सम्बन्ध मे कुछ आदेश थे।

—बुखारी, मुस्लिम, अहमद, नसई

अब्दुल्लाह इब्न हुकैम से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० का एक लेख हमारे कबीला जुहैनह के पास पहुँचा जिसमे विभिन्न 'हदीसें' थी और यह 'रिवायत' भी थी कि मुरदार जानवर का चमडा और पुट्ठे बिना पकाए हुए काम मे न लाओ। —तिरमिजी

नबी सल्ल० ने अपने जीवन के अन्तिम समय में 'हदीस' की एक बडी किताब लिखाकर अम्र बिन हज्म रजि० के द्वारा यमन वालो के पास भेजी थी। उसमें करआन की 'तिलावत' (वाचन), नमाज, 'रोजा', 'जकात', तलाक, 'गुलाम आजाद करना,' 'किसास' (प्रतिहत्या), 'दियत'

(हत्या के बदले का रुपया जो हत्यारे से हत्यादण्ड के रूप में लिया जाये) और दूसरे बहुत से आदेश और बडे गुनाहों का विवरण अंकित था। (दार कुतनी, दारमी, बैहकी, मुसनद अहमद, मुअत्ता इमाम मालिक, नसई)। इस किताब को 'हदीस' की पहली किताब कहना उचित है। इस किताब के विषय में अल्लामा इब्न कय्यिम लिखते हैं "वह बहुत बडी किताब है जिसमें बहुत से 'फिक्ह' के (धर्मशास्त्र सम्बन्धी) विषय, जकात दियत, आदेश, बडे गुनाह, तलाक गुलाम आजाद करने, नमाज, कुरआन के छूने और दूसरे आदेश लिखे हुए हैं। इमाम अहमद बिन हबल कहते हैं कि निश्चय ही नबी सल्ल० ने स्वय यह किताब लिखाई थी।"

—जादूलमआद भाग १, पृष्ठ ३०

हजरत अब्दुल्लाह बिन उमर रजि० का बयान है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने अपने जीवन के अन्तिम समय मे अपने 'आमिलो' (कर्मचारिओ) के पास भेजने के लिए किताबुस्सदका' लिखवाई थी। परन्तु अभी वह भेजी नही गई थी कि आपके ससार से प्रस्थान करने की घटना घटित हुई। आपके बाद जब हजरत अबू बक्र रजि० खलीफा हुए तो वह 'आमिलो' के पास भेजी गई। किताबुस्सदका में जानवरो की 'जकात' से सम्बन्धित आदेश थे। —तिरमिजी

नबी सल्ल० ने विभिन्न अवसरो पर फौजदारी, दीवानी के कानून, मीरास और 'जकात' से सम्बन्धित आदेश लिखाकर अपने उन कर्मचारियों को दिये थे। जिन्हे आपने विभिन्न इलाको में भेजा था जिन्हे 'हदीस' की किताबो और इतिहास के पन्नो मे हर व्यक्ति देख सकता है। इसके अतिरिक्त आपके भेजे हुए पत्र, सन्धि-पत्र, और जागीरो के 'वसीके' (अधिकार-पत्र) जिन्हे आपने लिखाकर और मुहर लगाकर बादशाहो और विभिन्न कबीलो के सरदारो को भेजा था या विभिन्न लोगो के हवाले किया था। इस प्रकार के पत्रो और वसीको को डाक्टर हमीदुल्लाह ने एकत्र किया है, जिनका सग्रह प्रकाशित हो चुका है। इस सग्रह में वे पत्र और वसीके भी सम्मिलित है जो नबी सल्ल० के बाद होने वाले चारो खलीफा ने जिन्हे 'खुलफा-ए-राशिदीन' कहा जाता है, लिखे थे। इस सग्रह में नबी सल्ल० के लिखाये हुए जो पत्र और वसीके सम्मिलित है उनकी सख्या २८१ है। इन पत्रो में वह पत्र भी है जो नबी सल्ल० ने मिस्र के सम्राट मकोकस के नाम भेजा था। इस पत्र का उल्लेख 'हदीस' की किताबो मे है। मिस्र के भग्नावशेषो की खुदाई मे यह पत्र प्राप्त हुआ है और आज भी मिस्र में मौजूद है। इस पत्र के शब्द बिल्कुल वही है जो 'हदीस' की

किताबों में मिलते हैं। इस पत्र का अक्स (चित्र) प्रकाशित हो चुका है।

'हदीसों' को सुरक्षित रखने का प्रबन्ध आरम्भ से ही मौलिक रूप से भी किया गया है और लेखनी द्वारा भी। 'हदीस' का इतिहास बिल्कुल सुरक्षित है। यह इतिहास प्रामाणिक भी है और इसमें निरन्तरता भी पाई जाती है। 'सहाबा' रज़ि० ने नबी सल्ल० की 'हदीसों' और आपकी 'सुन्नतों' को सुरक्षित करने और अपने बाद के लोगों तक पहुँचाने में कदापि असावधानी से काम नही लिया। उन्होंने नबी सल्ल० से जो कुछ प्राप्त किया था उसे छिपाकर भी नही रक्खा बल्कि उसे अपने बाद वालो तक पहुँचाया।

'हदीस' का जो भण्डार मौजूद है वह लगभग दस हज़ार 'सहाबा' से प्राप्त किया गया है। सहाबा' में सब से अधिक 'रिवायतें' जिन्होंने बयान की हैं वे हैं : हज़रत अबू हुरैरह रज़ि०, हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि०, हज़रत आइशा रज़ि०, हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि०, हजरत जाबिर बिन अब्दुल्लाह रज़ि०, हज़रत अनस बिन मालिक रज़ि० और हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ि०। ये वे 'सहाबा' हैं जिन की 'रिवायतों' की संख्या हज़ार से अधिक है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस रज़ि०, हज़रत अली रज़ि० और हज़रत उमर रज़ि० उन 'सहाबा' में से हैं जिनकी 'रिवायतें पाँच सौ और हज़ार के बीच हैं। हज़रत अबू बक्र रज़ि०, हजरत उस्मान रज़ि०, हज़रत उम्मेसलमा रज़ि०, हज़रत अबू मूसा अशअरी रजि०, हजरत अबूज़र ग़िफ़ारी रज़ि०, हज़रत अबू अय्यूब अनसारी रजि०, हजरत उबई बिन कअब रज़ि० और हज़रत मआज़ बिन जबल रज़ि० ऐसे 'सहावा' है जिनकी 'रिवायतो' की संख्या सौ से अधिक और पाँच सौ से कम है।

'सहाबा' रज़ि० के बाद 'ताबईन' ने 'हदीस' व 'सुन्नत' के उस ज्ञान को जो उन तक 'सहाबा' के द्वारा पहुँचा था अपने बाद वालों तक पहुँचाया। 'ताबईन' ने 'सहाबा' से केवल 'हदीसें' ही नहीं ली बल्कि उन्होंने 'सहाबियों' का जीवन-चरित भी बयान किया। उन्होंने इस बात को स्पष्ट किया कि किस 'सहाबी' को नबी सल्ल० के साथ रहने का कितना अवसर प्राप्त हुआ है। और उसने आपको कब और किस स्थान पर देखा है और किन-किन अवसरों पर उसने आपकी सेवा में हाज़िरी दी है। ताबईन में कुछ महान् व्यक्तियो के नाम ये हैं :

सईद बिन मुसैइब, हसन बसरी, उरवह बिन जुबैर, सालिम बिन अब्दुल्लाह बिन उमर (रजि०), नाफ़ेअ मौला अब्दुल्लाह इब्न उमर,

इब्न शिहाब जुहरी, हुमाम बिन मनुब्बह आदि। सईद बिन मुसैइब हजरत उमर रजि० की खिलाफत के दूसरे वर्ष मदीना मे पैदा हुए। सन् १०५ हि० मे देहान्त हुआ। उन्होने हजरत उसमान रजि०, हजरत आइशा सिद्दीका रजि०, हजरत अबू हुरैरह रजि० और जैद बिन साबित रजि० से 'हदीस' का ज्ञान प्राप्त किया।

उरवह बिन जुबैर मदीना के प्रमुख विद्वानो में से थे। वे हजरत आइशा रजि० के भाजे थे। उन्होने अपनी खाला से बहुत सी 'हदीसे' रिवायत की है। हजरत अबू हुरैरह रजि० और जैद बिन साबित रजि० का शिष्य होने का भी उन्हे श्रेय प्राप्त हुआ है। नबी सल्ल० के जीवन-चरित्र पर सबसे पहली पुस्तक इन्होंने ही लिखी। सन् ६४ हि० में स्वर्ग-वास हुआ है।

नाफेअ मौला अब्दुल्लाह बिन उमर हजरत अब्दुल्लाह बिन उमर रजि० के प्रमुख शिष्य और इमाम मालिक के गुरू है। 'मुहद्दिसो' ('हदीस' के विशेषज्ञो) ने इस सनद (मालिक, नाफेअ, अब्दुल्लाह बिन उमर रजि०) को 'सिलसिलतुज्जहब' (स्वर्णिम जजीर) कहा है। हजरत नाफेअ का स्वर्गवास सन् ११७ हि० मे हुआ। सालिम बिन अब्दुल्लाह बिन उमर (रजि०) मदीना के सात 'फकीह' (धर्म शास्त्री) मे से है। अपने पिता और दूसरे 'सहाबा' रजि० से 'हदीस' का ज्ञान प्राप्त किया है। इन का स्वर्गवास सन् १०६ हि० में हुआ। हुमाम बिन मुनब्बह हजरत अबू हुरैरह रजि० के शिष्यो में से है। इन्होने 'हदीस' का एक सग्रह तैयार किया था। यह सग्रह आज भी मौजूद है और प्रकाशित हो चुका है। इमाम अहमद बिन हबल ने 'मुसनद' में पूरा सग्रह सम्मिलित कर दिया है। यह सग्रह वास्तव में हज़रत अबू हुरैरह रजि० की बयान की हुई 'हदीसो' का एक भाग है। इसकी अधिकतर रिवायतो' को 'बुखारी' और 'मुस्लिम' की किताबो में भी देखा जा सकता है।

मुहम्मद इब्न शिहाब जुहरी प्रसिद्ध ताबईन मे से है। इन्होने लिखित रूप मे 'हदीस' का बहुत बडा भण्डार छोडा है। इन्होंने अब्दुल्लाह बिन उमर रजि०, अनस बिन मालिक रजि० और सह्ल बिन सअद रजि० से 'हदीस' का ज्ञान प्राप्त किया। 'ताबईन' मे सईद बिन मुसैइब, मुहम्मद बिन रबीअ आदि महानुभावों से 'हदीस' सुनी। इनके शिष्यो में इमाम औजाई, इमाम मालिक और सुफयान बिन उययनह जैसे 'हदीस' के इमाम सम्मिलित है। इन्हे सन् १०१ में हि० खलीफा उमर बिन अब्दुल अजीज ने 'हदीसे' एकत्र करने का आदेश दिया था। उन्होने मदीना के

राज्यपाल (*Governor*) अबू बक्र मुहम्मद बिन उमर बिन हज़्म को भी आदेश भेजा था कि उमरह बिन्त अब्दुर्रहमान और कासिम बिन मुहम्मद के पास जो 'हदीसें' हो उन्हे लिख लो। उमर बिन अब्दुल अजीज़ ने इस्लामी राज्य के समस्त जिम्मेदारो के पास आदेश भेजा था कि वे हदीसो को एकत्र करे। इसका परिणाम यह हुआ कि 'हदीस' के दफ्तर के दफ्तर राजधानी दिमश्क पहुँच गए। खलीफा ने उनकी नक्ले (प्रतिलिपियाँ) राज्य के प्रत्येक भाग मे फैला दी[1]।

'ताबईन' में अधिकतर ऐसे लोग थे जिनका पालन-पोषण 'सहाबा' रजि० के घरो में हुआ था। कुछ ऐसे थे जिन्होने अपना सम्पूर्ण जीवन किसी-न-किसी 'सहाबी' की सेवा में व्यतीत किया। 'ताबईन' के जीवन-चरित का अध्ययन कीजिए तो अन्दाजा होगा कि एक-एक व्यक्ति ने किस तरह बहुत से सहाबा रजि० से मुलाकात कर के नबी सल्ल० के जीवन-वृत्तान्त, आपके वचन, आदेश और आपके फैसलों आदि के विषय में विस्तृत ज्ञान सचित किया है।

'ताबईन' मे महान् व्यक्तियो के बाद साधारण 'ताबईन' और 'तबअताबईन' को लीजिए जो हजारो की सख्या में फैले हुए थे। इन्होंने दूरवर्ती स्थानो का सफर करके एक-एक भू भाग के 'सहाबा' रजि० और उनके शिष्यों के पास जो-कुछ ज्ञान था उसे एकत्र किया। यह दूसरी शताब्दी का समय था। इस समय में 'हदीस' के सग्रहों के सकलित करने का काम व्यवस्थित एव नियमित रूप से आरम्भ हुआ। इस समय बहुत से व्यक्तियो ने 'हदीस' के सग्रह तैयार किए। उनमें से कुछ लोगों ने 'फिक्ही' (शास्त्रीय एव कानूनी) विषयों के अन्तर्गत 'हदीस' और 'आसार' को एकत्र किया। कुछ लोगों ने एक-एक 'सहाबी' की 'रिवायतों' को अलग-अलग एकत्र किया। किसी ने नबी सल्ल० के 'गजवात' (वे युद्ध जिनमें नबी सल्ल० स्वय सम्मिलित हुए) का इतिहास सकलित किया। किसी ने नबी सल्ल० और 'सहाबा' रजि० और 'ताबईन' के जीवन-वृत्तान्त एकत्र किए। इनमें से जिनकी पुस्तके आज तक मौजूद है वे ये है इमाम मालिक, इमाम अबू यूसुफ, इमाम मुहम्मद बिन इस्हाक, इब्न सअद, इमाम अहमद बिन हबल और अबू बक्र इब्न अबी शैबह। मूसा बिन अकबह की किताब अल-मगाजी का भी एक भाग प्रकाशित हो चुका है। आज हम पूर्वजो में से जिनकी किताबों को नही देखते वे किताबे भी वास्तव मे नष्ट नही हुई बल्कि बुखारी, मुस्लिम आदि ने और उनके बाद

१ दे० तजकिरतुल हुफ्फाज, भाग १, पृष्ठ १०६, जामउल इल्म, पृष्ठ ३८।

के लोगों ने उनको अपनी किताबो मे सम्मिलित कर लिया है। आरम्भ से लेकर इमाम बुख़ारी तक 'हदीस' का ऐसा शृ खलित इतिहास पाया जाता है जिसकी कडियाँ कही भी टूटी हुई नही दिखती। और 'हदीस' के इतिहास की यह निरन्तरता आज तक खडित नही हुई। इमाम बुख़ारी से जिन लोगों ने बुख़ारी पढी है उनकी सख्या ९० हजार तक पहुँचती है।

सही बुखारा के अतिरिक्त इस समय की दूसरी किताब सही मुस्लिम है। क्रम की सुन्दरता की दृष्टि से सही मुस्लिम को प्रमुखता प्राप्त है। इस समय की तीसरी महत्वपूर्ण सग्रह 'सुननत' अबू दाऊद है। इसमें अधिकतर नियम और कानून आदि से सम्बन्धित 'रिवायतें' सकलित की गई है। नियम और विधि-विधान आदि की दृष्टि से सुनन अबू दाऊद एक उत्तम ग्रन्थ है। इस समय का चौथा सकलन जामेअ तिरमिजी है जिसमें 'फिक्ही मसलकों' (शास्त्री-प्रणालियों) को सविस्तार स्पष्ट किया गया है। पाँचवाँ सकलन नसई है जो अस-सुननुल मुजतबा के नाम से प्रसिद्ध है। छठा सग्रह सुनन इब्न माजा है। इन छ किताबो को 'महद्दिसो' (हदीस के विशेषज्ञों) ने 'सिहाह सित्ता' (छ सही किताबे) के नाम से याद करते हैं। कुछ विद्वान इब्न माजा के स्थान पर मुअत्ता इमाम मालिक की गणना 'सिहाह सित्ता' में करते है। बुख़ारी, मुस्लिम और तिरमिजी को 'जामेअ' कहा जाता है इसलिए कि इनमें विचार, धारणा, 'इबादत', नैतिकता कर्म, व्यवहार आदि समस्त विषयों के अन्तर्गत 'हदीसो' को संकलित किया गया है। अबू दाऊद, नसई, इब्न माजह को 'सुन्नन' कहते हैं क्योकि इनमे अधिकतर व्यावहारिक जीवन से सम्बन्ध रखने वाली 'रिवा-यतें' जमा की गई है।

हमारे अपने इस समय में ऐसे लोग लाखो की सख्या में है जिन तक हदीस की किनाबे 'हदीस' के इमामों से सिलसिले के साथ पहुँची है। वह समस्त सामग्री जिसके द्वारा 'मुहद्दिसो' (हदीस के विशेषज्ञो) ने 'हदीस' के 'रावियों'(उल्लेख कर्त्ताओं) के जीवन चरित की जाँच-पडताल की थी वह भी प्रामाणिक ग्रन्थों के द्वारा हम तक पहुँची है। 'हदीस' की जाँच के सिलसिले मे 'मुहद्दिसों के बीच जो वाद-विवाद हुआ है, और उनके बीच जो मतभेद हुआ है, वह भी अपनी दलीलो के साथ सुरक्षित रूप में हम तक पहुँचा है।

'हदीसों' और 'रिवायतों' के रूप मे नबी सल्ल० का जीवन और आपके ज़ीवन-काल के वातावरण और समाज का विस्तृत नक्शा सविस्तार

हम तक पहुँचा है। एक-एक घटना और आपके एक-एक कर्म और वचन की सनद मौजूद है जिसे जॉच कर कोई भी व्यक्ति किसी भी समय यह मालूम कर सकता है कि किस 'रिवायत' पर कहाँ तक विश्वास और एतबार किया जा सकता है। नबी सल्ल० के सही जीवन-वृत्तान्त मालूम करने के लिए उस समय के छ लाख व्यक्तियो के जीवन-वृत्तान्त सकलित किए गए है। यह इसलिए कि जिस व्यक्ति ने भी नवी सल्ल० से सम्बन्ध लगाकर कोई 'रिवायत' वयान की है उसके व्यक्तित्व को जाँच-परख कर यह राय कायम की जाये कि उसके वयान पर किस हद तक विश्वास किया जा सकता है। आलोचना सम्बन्धी इतिहास का यह एक ऐसा शास्त्र है जिसका सकलन अत्यन्त बारीक वीनी और सूक्ष्मदर्शिता के साथ हुआ है जिसका कोई दूसरा उदाहरण प्रस्तुत नही किया जा सकता। इसका उद्देश्य यह है कि नवी सल्ल० से सम्बन्ध लगाकर जो वात भी कही गई हो उसे हर पहलू से जॉच-परख कर यह राय कायम की जा सके कि उस का सम्बन्ध आप से स्थापित करना सही है या नही। 'मुहद्दिसों' ने सही व गलत, शुद्ध व अशुद्ध की परीक्षा के लिए कडे-से-कड़े नियम निर्धारित किए, जिससे सरलता के साथ सही और गढी हुई 'हदीसो' मे पहचान हो सकती है। 'मुहदिसो' ने प्रत्येक 'हदीस' के विषय में अपनी राय भी जाहिर कर दी और यह बता दिया कि वह किस 'हदीस' या 'रिवायत' को क्या स्थान देते है और इस सिलसिले में उनके पास क्या दलीलें हैं। 'मुहद्दिसों' ने आलोचना सम्बन्धी नियम को इतनी उन्नति दी कि 'इस्नाद', जिरह, तअलील आदि स्थायी रूप से अलग-अलग शास्त्र वन गए। अल्लामा जजायरी ने 'तौजीहुन्नजर' में 'हदीस' से सम्बन्धित ५२ प्रकार के शास्त्रों का विस्तारपूर्वक उल्लेख हुआ है।

किसी भी 'रिवायत' की जॉच के सिलसिले में कड़े से कड़ा नियम जो बनाया जा सकता है वह यही कि हम यह देखे कि 'रिवायत' हम तक किस तरीके से पहुँची है। बीच के वास्तो (माध्यमो) का सिलसिला अन्त तक चला गया है या नही। बीच के 'रावियों' (उल्लेख कर्त्ताओ) ने जिस-जिस के वास्ते से 'रिवायत' बयान की है उस से उसकी मुलाकात है या नही। 'रावी' ने 'रिवायत' किस आयु में और किस हालत में बयान की है।

जिन लोगो के द्वारा और माध्यम से 'रिवायत' पहुँची है वे अपने चरित्र और आचरण आदि की दृष्टि से कैसे थे? वे झूठे, बददियानत

और दुष्प्रकृति तो नही थे ? उनकी स्मरण शक्ति कैसी थी ? 'रिवायत' को सही तौर से याद रखने और उसे सही रूप में पहुँचाने की योग्यता उन में थी या नही ? जो 'रिवायत' उन्होने की है उस में उनकी किसी प्रकार का व्यक्तिगत या गरोही स्वार्थ तो निहित नही था ?

'रिवायत' को 'रावी' (उल्लेखकर्ता) ने शब्दश पहूँचाया है या उसके आशय, अर्थ और भाव को अपने शब्दों में बयान किया है। 'रावी' की 'रिवायत' दूसरे तरीकों से भी पहुँची है या नही ? यदि दूसरे तरीके से यह 'रिवायत' पहुँची है तो बयान में समानता पाई जाती है या नही ? यदि उनके बयानों मे भिन्नता पाई जाती है तो वह किस हद तक है ? खुली हुई भिन्नता तो उन में नही पाई जाती ? यदि पाई जाती है तो विभिन्न तरीको मे से जिन के द्वारा यह 'रिवायत' पहुँची है कौन सा ज्यादा भरोसा करने योग्य है ?

नबी सल्ल० के स्वभाव और आप के आचार एव चरित्र और आप के वातावरण और समाज के बारे में जो 'रिवायतें' मशहूर व 'मुतवातिर' और प्रामाणिक है यह 'रिवायत' उन के विरुद्ध तो नही है ?

यदि 'रिवायत' किसी असाधारण चीज के विषय मे है तो क्या 'रिवायत' के तरीके इतने अधिक और विश्वास करने योग्य है कि उसे मान लिया जाये ?

'रिवायतो' और 'हदीसो' की जॉच-पडताल मे 'मुहद्दिसो' (हदीस के विशेषज्ञो) ने इन सारे ही पहलुओं को अपने सामने रक्खा है। इसके बाद उन्होने किसी 'रिवायत' के बारे में कोई राय कायम की है और उस के सही होने या न होने का फैसला किया है।

'दरायत' (प्रज्ञा एवं मीमांसा) का प्रयोग

'हदीसों' की जॉच-पडताल में 'रिवायत' के साथ 'दिरायत' अर्थात् समझ-बूझ एव प्रज्ञा का प्रयोग भी आवश्यक है। इस्लाम की वास्तविकता और उसके आंतरिक भाव एव आत्मा से पूर्ण रूप से परिचित होने के पश्चात् जब कोई 'हदीस' का अधिक-से-अधिक अध्ययन करता है तो अध्ययन की अधिकता और अभ्यास एव अनुभव से उस मे ऐसी योग्यता पैदा हो जाती है कि वह किसी 'हदीस' को देखते ही समझ सके कि वह अल्लाह के रसूल सल्ल० का कर्म व वचन हो सकता है या नहीं।

मुल्ला अली कारी ने मौजूआत कबीर में लिखा है .

"इब्न कय्यिम जोजी से पूछा गया कि क्या यह सम्भव है कि घडी हुई 'हदीस' को उस की 'सनद' पर निगाह डाले बिना ही पहचान लिया

जाये ? उन्होंने कहा कि यह प्रश्न बड़ा महत्व रखता है। यह पहचान उसी व्यक्ति को हो सकती है जिसे 'सुनन' और 'सही हदीसों' का पूरा ज्ञान हो और 'हदीस' का ज्ञान उस के मास और रक्त मे सम्मिलित हो चुका हो। और इस ज्ञान में उस ने विशेष योग्यता प्राप्त कर ली हो। और उसने 'सुनन' और 'आसार' का गहरा परिचय और रसूल सल्ल० के चरित्र की पहचान हासिल की हो। और वह अच्छी तरह आपकी हिदायत (मार्ग-दर्शन) को पहचान गया हो और उस बात को कि आप किस चीज का हुक्म देते है, किस चीज से रोकते हैं, किस बात की खबर देते है, किस चीज की ओर आमन्त्रित करते हैं, क्या चीज आप पसन्द करते है, क्या नापसन्द करते है और कौन से तरीके अपने समुदाय (अपने अनुयायियो) के लिए निश्चित करते हैं। जब कोई व्यक्ति इन बातों के जानने मे इस दर्जे को पहुँच जाये कि मानो वह नबी सल्ल० के साथ आपके सहाबा रजि० मे सम्मिलित है तो वह व्यक्ति पहचान जायेगा कि क्या चीज आप के मन के भावो और आप की हिदायत (मार्ग-दर्शन) से सम्बन्ध रखती है और कौन सा कलाम आप का है और किन कर्मो और वचनो का सम्बन्ध आप से जोडा जा सकता है।"

इमाम रबी अबिन खसीम ने 'दिरायत' (प्रज्ञा, समझ-बूझ) की व्याख्या इन शब्दो मे की है "हदीस में एक प्रकाश होता है, दिन के प्रकाश जैसा और एक अन्धकार होता है, रात के अन्धकार जैसा। इस प्रकाश और अन्धकार मे तमीज करना (पहचानना) 'दिरायत' है।" अब्दुल हक मुहद्दिस देहलवी ने शर्ह सफरुस्सआदह मे लिखा है कि एक बार एक व्यक्ति ने 'हदीस' के एक विशेषज्ञ के सामने एक 'हदीस' पेश की उसने कहा 'मअलूल' है। पूछा कि आप किस कारण इसे 'मअलूल' ठहरा रहे हैं ? कहा नही बयान कर सकता, अलबत्ता इस के सुनने से तबीअत बेमजा हो गई। वह व्यक्ति कई 'मुहद्दिसो' के पास गया। सबका एक उत्तर था। जिस प्रकार सिक्के को सर्राफ हाथ लगाते ही बता देता है कि वह खोटा है या खरा, ठीक उसी प्रकार 'हदीस' के सम्बन्ध में जिन्हे सूझ-बूझ और कुशलता प्राप्त होती है वे पहली ही दृष्टि मे समझ जाते है कि कोई 'रिवायत' किस दर्जे की है। हाफिज इब्न हजर ने लिखा है कि 'मुहद्दिस' की मिसाल सर्राफ और जौहरी की है। बहुधा रुपये के रग-रूप और आवाज तक मे कोई अन्तर महसूस नही होता परन्तु सर्राफ छूते ही उसके खोट को जान लेता है।

'हदीसों' का अध्ययन करने वाले इस बात को भली-भाँति जानते

हैं कि नबी सल्ल० की भाषा और आप की वाणी में एक अद्वितीयत्व और अनुपमता पाई जाती है। आपकी अपनी एक भाषा और आपकी अपनी एक विशेष वर्णन-शैली (*Style*) है। 'सही हदीसो' मे आप का व्यक्तित्व बोल रहा होता है। उस में आप की महानता और आप के उच्च पद की झलक लक्षित हो रही होती है। आप के वचनो में इतना अद्वितीयत्व पाया जाता है कि कोई उनकी नक्ल नही उतार सकता। वे विशेषताएँ कोई कहाँ से ला सकता है जो आपको अल्लाह ने प्रदान की थी। जो लोग नबी सल्ल० की भाषा से परिचित है वे किसी 'हदीस' को देखते ही बता सकते है कि वह 'सही हदीस' है या घडी हुई है। बल्कि यदि 'रिवायत' करने वाले ने नबी सल्ल० की 'हदीस' के अर्थ और भाव को अपने शब्दो मे व्यक्त किया है तो वे तुरन्त महसूस कर लेते हैं कि यह बात तो नबी सल्ल० ही की है परन्तु भाषा और शब्द आप के नही है बल्कि 'रावी' के अपने हैं।

जिस प्रकार नबी सल्ल० का व्यक्तित्व समस्त व्यक्तियो से बढ कर प्रिय और महान् है उसी प्रकार आपका कलाम भी सारे कलामो और वाणियो में उत्तम है। स्वय नबी सल्ल० का अपना बयान है "मुझे व्यापक और सक्षिप्त कहने की योग्यता दी गई।" कुरआन के बाद यह 'हदीस' ही का चमत्कार है कि स्पष्ट और सक्षिप्त होते हुये भी अर्थ और भाव की दृष्टि से उस मे अत्यन्त फैलाव और व्यापकता पाई जाती है। आप के 'कलाम' में शब्द कम और अर्थ अधिक होते है। शब्द कम होने के बावजूद आपका बयान कही भी अव्यवस्थित और अस्पष्ट नही होता। आशय के व्यक्त करने मे कही किसी प्रकार की त्रुटि और अपूर्णता नही पाई जाती। आप के 'कलाम' में कृत्रिमता और अनुचित शाब्दिक आडम्बर नही पाया जाता। कलाम मे महान् व्यक्तित्व बोलता दीख पडता है। साधारण व्यक्तित्व के लोगो का कलाम इतना उच्च और पवित्र हो ही नही सकता। न तो आप गिरी हुई बाजारू भाषा का प्रयोग करते है और न आप के यहाँ ऐसे शब्दो का प्रयोग मिलता है जिस से लोग बिल्कुल ही अपरिचित हो। जहाँ विस्तार की आवश्यकता होती है वहाँ आप विस्तार से काम लेते है और जहाँ सक्षिप्त वर्णन की आवश्यकता होती है वहाँ आप विस्तार मे नही जाते। भाषा और भाषण पर आपको पूर्ण अधिकार प्राप्त है। 'कलाम' में जहाँ रोब और तेज पाया जाता है वही उस मे आश्चर्यजनक रस, माधुर्य और हृदयाकर्षकता भी पाई जाती है। दोनो में सुन्दर समन्वय और सामजस्य दीख पड़ता

है। आप का 'कलाम' आप के हार्दिक भावो और अन्त प्रकाश का द्योतक है। आपकी प्रत्येक वार्ता ज्ञान और तत्वदर्शिता से सुसज्जित होती है। 'कलाम' मे कही अनुचित पुनरावृत्ति नही पाई जाती और न आप के प्रस्तुत किये हुये तर्क मे कोई त्रुटि और कमजोरी पाई जाती है।

आप अपने शत्रुओ और विरोधियो पर व्यग्य और चोट करते दिखाई नही देते। और श्रोताओ पर रोब डालने के लिए अपने भाषण मे अनुचित जोश कदापि नही दिखाते और न ही अतिशयोक्ति से काम लेते है। आपका सक्षिप्त कलाम बड़े-बड़े विस्तृत भाषणो पर भारी होता है। तर्कोपस्थिति में आप सदैव सच्चाई को अपने सम्मुख रखते हैं। आप बस उतनी ही बात करते है जितनी सत्य और ठीक होती है। बात-चीत में न अधिक ठहरते है और न जल्दबाजी से काम लेते हैं। 'कलाम' न इतना लम्बा होता है कि लोगो को उकता दे और इतना सक्षिप्त होता है कि बात ही न समझ में आ सके। शब्द जँचे-तुले होते है। वर्णन शैली में मनोहरता और सौन्दर्य पाया जाता है। आपकी भाषा मे स्वा-भाविक सारल्य और प्रवाह पाया जाता है। जोश और विकलता की अभिव्यक्ति आप के यहाँ होती है तो शान्ति-रूप लिए होती है। 'कलाम' में किसी प्रकार की सख्ती, उग्रता और असन्तुलन नही पाया जाता। आप की 'हदीसो' को जितनी बार पढिए उतना ही उन का प्रभाव बढता हुआ प्रतीत होता है और उनकी साहित्यिक एव आन्तरिक विशेषताये स्पष्ट होती चली जाती है।[1]

बात-चीत में आप सम्बोधित व्यक्ति के मासिक स्तर और उस के ज्ञान एव बुद्धि की सीमा आदि का पूरा ध्यान रखते है। विरोधी को उस की अपनी जानकारी के द्वारा शान्त करते है। आप के 'कलाम' मे कहीं नाम मात्र को किसी प्रकार की शंका और सकोच का चिह्न नही मिलता। मिस्री विद्वान सैयद महमूद शाकिर ने लिखा है कि रसूल सल्ल० की 'हदीस' को 'बलागत' अर्थात् वक्तृत्व का अत्यन्त उच्च स्थान प्राप्त है। जिस तक पहुचने की कोशिश लोगों की गरदने तोड देती है।

एक और पहलू से विचार कीजिए। सही 'हदीसो' मे आचार-विचार, धारणा और व्यवहार की एक पूर्ण व्यवस्था मिलेगी। इस व्य-वस्था का सम्बन्ध मानवीय जीवन के किसी विशेष अङ्ग से नही अपितु समस्त अङ्गो से है। विचार एव सिद्धान्त सम्बन्धी समस्याये हो या

१ दे० अल-बयान वत्तबईन।

व्यावहारिक जीवन से सम्बन्ध रखने वाली समस्यायें हों, चाहे उनका सम्बन्ध मनुष्य के व्यक्तिगत जीवन से हो या सामाजिक और अन्तर्राष्ट्रीय जीवन से, समस्त समस्यायें और जीवन के समस्त अङ्ग उस से सम्बन्धित हैं। इस जीवन-व्यवस्था के समस्त भागों में परस्पर नैयायिक एवं तार्किक सम्पर्क पाया जाता है और विचार एवं व्यवहार की इस व्यवस्था का प्रारम्भ से अन्त तक अपना एक विशेष स्वभाव है। ऐसी पूर्ण, संबद्ध और सन्तुलित जीवन-व्यवस्था विभिन्न मस्तिष्क की उपज नही हो सकती। यह व्यवस्था एक ऐसी कसौटी है जिसके द्वारा हम सरलतापूर्वक गढ़ी हुई और कमजोर 'हदीसो' को अलग कर सकते हैं। गढ़ी हुई 'हदीसों' की इस जीवन-व्यवस्था के साथ असंगति स्वयं बता देगी कि वे गढी हुई हैं, वे विश्वास करने योग्य नही है।

'ख़बर वाहिद'

ऐसी 'रिवायत' जिस के 'रावी' हर समय में इतने अधिक रहे हों कि उनका झूठ पर सहमत होना स्वाभावतः सम्भव न हो, 'ख़बर मुतवातिर' कहलाती है। जिस 'रिवायत' के रावी संख्या में 'मुतवातिर' रिवायत के रावियो की संख्या के बराबर न हों उसे परिभाषा में 'ख़बर वाहिद' कहते हैं। 'ख़बर वाहिद' का अर्थ यह नही होता कि उसका 'रिवायत' करने वाला हर समय में एक ही रहा है। किसी 'हदीस' के बयान करने वाले 'सहाबा' रजि० और 'ताबईन' के समय में अधिक संख्या मे हों पर किसी एक समय किसी कारण से उस के रावियों की संख्या कम हो जाये तो उसे 'ख़बर मुतवातिर' न कह कर 'ख़बर वाहिद' ही कहेगे। 'रिवायतें' अधिकतर 'ख़बर वाहिद' ही हैं। 'मुतवातिर रिवायतें' कम हैं। कुछ लोग इस तरह का मत प्रकट करते हैं कि 'ख़बर वाहिद' से केवल 'गुमान गालिब' ही प्राप्त होता है। अर्थात् इस बात की केवल अधिक सम्भावना ही होती है कि वह नबी सल्ल० की 'हदीस' है। उसके प्रति ऐसा पूर्ण विश्वास प्राप्त नही होता जिस में नाम मात्र को भी सन्देह बाकी न रहे, जैसा कि 'ख़बर मुतवातिर' की विशेषता है। इस तरह का विचार रखने वाले वास्तव मे गलती पर हैं। स्वय हमारे दैनिक जीवन के अधिकतर मामलो के फैसलो का आधार 'गुमान गालिब' ही होता है। कुरआन ने भी ऐसी गवाहियों को जिन से 'गुमान गालिब' ही प्राप्त होता है अविश्वसनीय नही ठहराया बल्कि उनका एतबार किया है। यहाँ तक कि उन की बुनियाद पर एक मुसलमान को मृत्यु दण्ड भी दिया जा सकता है। 'जिना', चोरी आदि के सिलसिले में फैसला दो-चार गवाहों पर ही होता है, जबकि इस मे एक मुसलमान को [illegible] सजा भी दी

जा सकती है और उसका हाथ भी काटा जा सकता है। जब कुरआन 'गैर मुतवातिर' गवाहियों पर अपने न्याय-व्यवस्था की बुनियाद रखता है तो फिर किसी मुसलमान व्यक्ति के लिए यह कैसे उचित हो सकता है कि वह यह कहने लगे कि रसूल सल्ल० की 'हदीसो' के लिए प्रत्येक युग मे दो-चार 'रावियों' का होना काफी नही है, वल्कि हर समय में रावियों का एक विराट जन समूह होना चाहिए। इस से इन्कार नही कि 'रावी' के लिए यह आवश्यक है कि वह न्यायी और विश्वसनीय हो। इसी बात की जाँच के लिए वास्तव में 'अस्माउर्रिजाल' जैसा शास्त्र तैयार हुआ है।

कुरआन में कहा गया है "हे ईमान लाने वालो! जब कोई फासिक' (अवज्ञाकारी और मर्यादाहीन व्यक्ति) तुम्हारे पास कोई सूचना ले कर आये तो उस की छान-बीन कर लिया करो, ऐसा न हो कि तुम किसी गरोह के साथ बेजा हरकत कर बैठो, फिर तुम्हे अपने किये पर पछतावा हो।" (अल-हुजुरात ६), इस 'आयत' में कुरआन ने 'खबर वाहिद' को रद्द करने का आदेश नही दिया है। सूचना यदि किसी पापाचारी की दी हुई है तो वह उसकी जाँच-पडताल का आदेश देता है। इस 'आयत' से यह बात अपने आप निकलती है कि यदि सूचना किसी ऐसे व्यक्ति ने दी है जो 'फासिक' (अवज्ञाकारी) नही बल्कि उस के न्यायशील और सच्चा होने पर पूरा विश्वास है तो जाच-पडताल के विना भी उस की दी हुई सूचना के आधार पर कार्रवाई की जा सकती है।

स्वय कुरआन के ईश्वरीय ग्रन्थ होने का विश्वास भी हमें एक ही विश्वसनीय व्यक्ति हजरत मुहम्मद के बयान से प्राप्त हुआ है। ऐसा नही हुआ है कि अल्लाह की ओर से बहुत से लोगो या 'फिरिश्तो' ने आ कर कुरआन के ईश्वरीय ग्रन्थ होने की गवाही दी हो।

कुरआन के अतिरिक्त 'हदीस' से भी इसका प्रमाण मिलता है कि 'खबर वाहिद' को धर्म में दलील और बुनियाद की हैसियत हासिल है। इस सिलसिले में यहाँ कुछ उदाहरण प्रस्तुत किये जाते है

यजीद बिन शैबान रजि० का बयान है कि हम 'अरफात' मे थे। सयोग से हम जहाँ ठहरे थे वह स्थान उस जगह से दूर था जहाँ नबी सल्ल० ठहरे हुये थे। हमारे पास आप का सन्देशवाहक यह सन्देश ले कर आया कि हम जहाँ ठहरे है उसी जगह रहे, वहाँ से किसी और स्थान पर जाने की आवश्यकता नही। 'अरफात' में जहाँ भी ठहर जाये (उस मैदान मे) ठहरने के कर्तव्य की पूर्ति हो जाती है। इससे स्पष्ट है कि एक विश्वासपात्र व्यक्ति की दी हुई सूचना को भी 'दीन' मे बुनियाद का

दर्जा प्राप्त है। यदि ऐसी बात न होती तो आप अपनी ओर से केवल एक व्यक्ति को न भेजते।

सन् ६ हि० मे नवी सल्ल० हज़रत अबू बक्र रज़ि० को 'हज्ज' का अमीर (नायक) बना कर भेजते हैं। इस के वाद सूरा अत्-तौबा की प्रारम्भिक 'आयते' अवतीर्ण हुई तो आप ने हजरत अली रज़ि० को भेजा ताकि वे 'हज्ज' के अवसर पर वे आयते लोगो को सुना दे।

नबी सल्ल० ने जहाँ भी कोई दूत या 'आमिल' (कर्मचारी या हाकिम) भेजा है इस मे सख्या की कोई पावन्दी नही की है। आप वहरैन के प्रतिनिधि-मण्डल के साथ इब्न सअद बिन आस रज़ि० को भेजते हैं, मुआज विन जवल रजि० को यमन भेजते है, कैस बिन आसिम रज़ि० और इब्न जुवैर रजि० आदि को उन के अपने-अपने कबीलों के पास भेजते हैं। इस प्रकार इस्लाम का आमन्त्रण देने के सिलसिले मे विभिन्न भू-भाग न आपने अपने वारह दूत भेजे। आपने केवल इस बात का ध्यान रक्खा कि किसी भी स्थान पर ऐसा व्यक्ति भेजा जाये जिस से वहाँ के निवासी परिचित हो, ताकि लोगो को उस के बारे मे किसी प्रकार का सन्देह न हो और उन्हे विश्वास हो जाये कि वह वास्तव मे 'रसूल' का भेजा हुआ दूत है।

जो उदाहरण ऊपर दिये गये है उन से स्पष्ट होता है कि किसी बात पर विश्वास प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक नही है कि उस के साक्षी विराट जन हों। 'सहाबा' रजि० किसी सूचना को मानने के सिलसिले मे इस के पावन्द न थे कि वह 'खबर मुतवातिर' ही है। इस के कितने ही उदाहरण 'हदीस' की किताबों से प्रस्तुत किये जा सकते है। हज़रत अनस रजि० कहते है कि अबू उबैदा रजि०, अबू तलहा रज़ि०, उबई बिन कअब रजि० को शराब पिला रहे थे कि अचानक एक व्यक्ति ने आ कर ख़बर दी कि शराब हराम हो गई। यह सुनना था कि अबू तलहा रजि० ने कहा कि अनस (रज़ि०) उठो और शराब के मटके तोड डालो। मैने उठ कर शराब के बरतन तोड दिये।

देखिए केवल एक व्यक्ति के कहने पर मान लिया गया कि शराब हराम हो गई। 'खवर मुतवातिर' की प्रतीक्षा नही की गई और न यह आवश्यक समझा गया कि खबर की तसदीक के लिए नबी सल्ल० के पास जाये।

'कवा' के लोग 'फज्र' की नमाज मे थे कि उन के पास नवी सल्ल० का भेजा हुआ आदमी यह ख़बर ले कर पहुँचा कि 'किबला' बदल गया। अब नमाज 'काबे' की ओर मुँह कर के अदा की जाये। सूचना मिलते

ही हर एक ने 'नमाज' ही मे अपना मुख 'वैतुल मकदिस' की ओर से 'काबा' की ओर कर लिया। उन्हे एक व्यक्ति के बयान पर विश्वास करने में कोई सकोच नही हुआ।

वास्तव मे विश्वास केवल इसी से प्राप्त नहीं होता कि कोई सूचना हम तक 'तवातुर' के साथ पहुँचे वल्कि दूसरे बहुत से प्रमाण और सगत वाते एकत्र हो कर जब किसी चीज की साक्षी होती है तो शाब्दिक 'तवातुर' न सही, एक प्रकार का आन्तरिक 'तवातुर' अवश्य पैदा हो जाता है। जो इस के लिए बिल्कुल पर्याप्त होता है कि आदमी उस पर विश्वास कर सके। इमाम शातवी इस सिलसिले मे कहते हैं :

"साधारणतया जिन प्रमाणो का यहाँ एतबार किया जाता है वे इस तरह के हैं कि यद्यपि अलग-अलग उन की हैसियत 'गुमान' की है परन्तु किसी एक मामले में सब मे एकता पाये जाने के कारण उस मामले मे उन से विश्वास प्राप्त हो जाता है। सब प्रमाणो के मिलने से जो वल पैदा होता है वह उनकी अपनी अलग हैसियत मे नही पैदा हो सकता। 'खबर मुतवातिर' मे भी सामूहिक बल के कारण ही विश्वास प्राप्त होता है। अतः किसी मामले मे विविध प्रमाण एकत्र हो जायें तो उनके सग्रह से एक विश्वास प्राप्त हो जाता है और यह एक प्रकार से आन्तरिक 'तवातुर' के समान हो जाता है।"[1]

इब्न तैमिया का बयान है कि जब कोई वृत्तान्त किसी व्यक्ति के मुख से हम सुनते हैं फिर विभिन्न स्थानो से विभिन्न ढग से उस की विभिन्न गवाहियाँ हमें मिल जाती हैं तो यद्यपि उन में से हर एक गवाही की हैसियत 'खबर वाहिद' की होती है परन्तु उन खबरो के मिलने से हमे पूरा विश्वास हो जाता है कि वे वास्तव में सही हैं। यह बुद्धिसगत बात नही हो सकती कि विभिन्न व्यक्ति एक दूसरे की बेखबरी मे कोई वृत्तान्त गढ़ कर बयान करें और उन के बयान में समानता पाई जाये। उदाहरणार्थ बुखारी और मुस्लिम में यह रिवायत मिलती है कि एक सफर मे नबी सल्ल० ने हजरत जाबिर रजि० से ऊँट खरीदा। यद्यपि ऊँट का मूल्य बयान करने में रावियो में मत-भेद हुआ है परन्तु विभिन्न तरीको[2] से यह मालूम होता है कि आपने जाबिर रजि० से ऊँट खरीदा था। विभिन्न व्यक्ति जब एक घटना का उल्लेख करते हैं और इसका कोई प्रमाण और लक्षण नही मिलता कि उन लोगो ने इस से पहले आपस में मिलकर वह घटना गढी हो, और न उस खबर से उनके किसी स्वार्थ का

१. अल-मुआफिक़ात भाग १, पृष्ठ ३६।
२. अर्थात् रिवायत के सिलसिलो से।

सम्पर्क होता है तो उस घटना के मान लेने मे क्या सकोच हो सकता है[1]।

अल्लामा जजायरी ने इस सिलसिले मे एक और काम की बात लिखी है। वे इस आक्षेप का कि 'मुहद्दिसो' ने 'सही हदीसो' के अतिरिक्त 'हदीस' की किताबो मे कमजोर 'हदीसे' क्यो जमा की है, उत्तर देते हुए लिखते है कि अज्ञात और कमजोर स्मरण शक्ति के लोगो की 'हदीसा' को मुहद्दिस लोग इसलिए एकत्र करते थे कि ये 'हदीसें' कम-से-कम किसी मजमून या विषय की पुष्टि और समर्थन मे उपयोगी हो सकती है।

——तौजीहुन्नजर, पृष्ठ १३०

इमाम अहमद कहते है मैं कभी एक व्यक्ति की 'हदीस' इस ध्येय से लिखता हूँ कि उसको अनुकूलता दिखाने के लिए या दृष्टान्त के रूप मे काम मे ला सकूँ। (तौजीहुन्नजर)

कुछ सन्देह

ऊपर जो-कुछ बयान किया गया वह यह अन्दाजा करने के लिए काफी है कि जिस तरह अल्लाह ने कुरआन को सुरक्षित किया और वह हम तक सुरक्षित रूप में पहुँचा है उसी तरह उसने अपने 'रसूल' की 'सुन्नत' को सुरक्षित रखने का प्रबन्ध किया है। नबी सल्ल० के कर्म, और वचन आदि का उल्लेख हम तक इस तरह पहुँचा है कि हम महसूस करते है कि मानो आज भी आप हमारे बीच मौजूद है। इसमे सन्देह नही कि पहली शताब्दी हिजरी के अन्त में कुछ लोगों ने आपसे ऐसी बाते सम्बद्ध की जो वास्तव मे आपकी न थी परन्तु ऐसी समस्त गढी हुई और गलत 'रिवायतों' को 'महद्दिसो' ने आलोचना की कसौटी पर परख कर अलग कर दिया।

'हदीसों' के बारे में साधारणतया लोगो को कुछ उलझने पेश आती या आ सकती हैं, हम चाहते है कि उन उलझनो को भी दूर कर दिया जाये। 'हदीस' के बारे में एक सन्देह यह किया जाता है कि 'हदीसों' का भण्डार यदि प्रमाणित है और 'दीन' मे उन्हे मौलिक स्थान प्राप्त है तो हजरत उमर रजि० ने 'हदीस' रिवायत (बयान) करने पर क्यों पाबन्दी लगा दी थी। हजरत उमर रजि० जिस कारण अधिक 'रिवायत' करने को पसन्द नही करते थे वह यह कदापि न था कि वे 'सुन्नत' और 'हदीस' को 'दीन' मे कोई महत्व नही देते थे या यह कि उनके समय में लोग 'हदीसे' गढने लगे थे बल्कि इसका कारण वास्तव मे यह था कि हजरत उमर रजि० के समय तक कुरआन का सामान्य रूप से प्रचार न

1. तौजीहुन्नजर, पृष्ठ १३० ।

हो सका था । इस सिलसिले में हजरत उमर रज़ि० ने ज़रूरी समझा कि सारे लोगों को पहले कुरआन से परिचित कराया जाये और उन बातों से बचा जाये जिन से कुरआन मे दूसरी चीजों के मिलने की आशंका हो ।

एक बात यह कही जाती है कि 'हदीस' के मज़मून और बयान में विभेद पाया जाता है। इसलिए उन पर कैसे विश्वास किया जा सकता है। इस आक्षेप में भी गहरे सोच-विचार से काम नही लिया गया। जिन लोगो ने भी 'हदीसो' का अध्ययन किया है वे इस बात को भली-भाँति जानते हैं कि रिवायतों' में समानता अधिक है, विभेद बहुत ही कम पाया जाता है। उनके बीच जो विभेद पाये भी जाते हैं वे अधिकतर निम्नलिखित प्रकार के हैं ·

एक ही भाषण, वार्ता या घटना है 'रावियों' (उल्लेख कर्त्ताओ) ने उसको अपने-अपने शब्दों में बयान किया है। उनके शब्द अवश्य अलग-अलग हैं परन्तु अर्थ और आशय में कोई विभेद नही है। इस प्रकार के विभेद को वास्तविक विभेद कहना सही न होगा।

एक ही घटना या वार्त्ता है किसी 'रावी' (उल्लेख कर्त्ता) ने उसके किसी भाग का उल्लेख किया, किसी ने उसके किसी दूसरे अ श का उल्लेख किया जिसके कारण उनके बीच विभेद और भिन्नता लक्षित होने लगी हालाँकि वास्तव मे उनके बीच विभेद सिरे से है ही नही।

ऐसा भी होता है कि एक 'हदीस' पहले की है, दूसरी बाद की है। बाद की 'हदीस' ने पहली 'हदीस' के हुक्म को मनसूख (निरस्त) कर दिया है। जिस व्यक्ति को इसकी खबर नही है उसे 'हदीसो' मे विपरी-तता और प्रतिकूलता दिखाई दे सकती है हालाँकि यह विपरीतता नही बल्कि वास्तव मे आदेश और हुक्म का परिवर्तन है। नबी सल्ल० अल्लाह रसूल थे अल्लाह के हुक्म से आप किसी भी आदेश को मनसूख कर सकते थे। इस में सिरे से आपत्ति की कोई बात है ही नही।

विभेद के समस्त प्रकार ऐसे हैं कि इन को वास्तविक विभेद नही कहा जा सकता। यदि कुछ थोडी 'रिवायते' ऐसी निकल भी आये जिन में पाये जाने वाले विभेद को दूर करना कठिन हो तो उनके त्यक्त होने से यह आवश्यक कहाँ होता है कि 'हदीस' के सम्पूर्ण भण्डार को ही त्याग दिया जाये।

एक बात यह भी कही जाती है कि 'हदीसो' मे अत्यन्त सक्षेप और असम्बद्धता पाई जाती है जिस के कारण उन का समझना कठिन है। यह बात भी वह व्यक्ति कह सकता है जो सोच-विचार से काम नही लेता या जिस की निगाह 'हदीस' के सम्पूर्ण भण्डार पर नही है। अधिकतर 'हदीसें'

ऐसी हैं जो यदि एक स्थान पर संक्षिप्त श्रौर असम्बद्ध हैं तो वही किसी दूसरे स्थान पर प्रसग सहित तथा अपने विस्तार के साथ उल्लिखित हुई हैं। जिन 'हदीसों' का विस्तारपूर्वक उल्लेख नही भी हुआ है उन के शब्दों में ऐसे सकेत पाये जाते हैं जिन से उन 'हदीसों' के ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि पर पूर्ण प्रकाश पड़ता है। अलबत्ता उन के इशारों को समझने के लिए यह आवश्यक है कि हमें नबी सल्ल० के जीवन काल और उस समय के समाज की स्थिति आदि का पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो। ऐसी हालत में किसी 'हदीस' या रिवायत में किसी कथन या घटना का उल्लेख देख कर उस से हम सरलतापूर्वक अन्दाज़ा कर सकते हैं कि उसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि क्या है।

उम्मुल अहादीस

उम्मुल अहादीस

उम्मुल अहादीस (*The Essence of the Hadith*) शीर्षक के अन्तर्गत यहाँ एक विशेष 'हदीस' प्रस्तुत की जा रही है। इस 'हदीस' में पूरे 'दीन' (धर्म) और नबी सल्ल० की समस्त 'हदीसों' का साराश आ गया है। इसीलिए विद्वानो ने इसे 'उम्मुल जवामेअ', उम्मुस्सुन्नह या उम्मुल अहादीस ('हदीसो' का मूल या साराश एवं सार) कहा है। इस 'हदीस' का नाम 'उम्मुस्सुन्नह' या 'उम्मुल अहादीस' उसी तरह का है जैसे कुरआन मजीद की पहली 'सूरा' अल-फातिहा का नाम 'उम्मुल किताब' (*Mother of the book*) है। जिस तरह सूरा अल-फातिहा में कुरआन की समस्त मौलिक बाते आ गई हैं उसी तरह इस 'हदीस' में भी पूरा 'दीन' सिमट आया है। दूसरी समस्त 'हदीसे' मानो इस एक 'हदीस' का विस्तार हैं। इस 'हदीस' की इसी विशेषता के कारण इमाम मुस्लिम ने हदीस के अपने प्रसिद्ध सग्रह 'सहीह मुस्लिम' को इसी 'हदीस' से शुरू किया है और इमाम बगवी ने अपनी किताब मसाबीह और शर्हुस्सुन्नह का आरम्भ इसी 'हदीस' से किया है।

'दीन' वास्तव में नाम है विचार एव धारणा, कर्म और सत्यनिष्ठा का। इस हदीस में 'दीन' की इन तीनों मौलिक चीजो पर प्रकाश डाला गया है।

इस 'हदीस' मे हजरत जिब्रील अ० के प्रश्नो का और नबी सल्ल० ने उनके जो उत्तर दिए है उनका उल्लेख किया गया है, इसीलिए इस हदीस को 'हदीसे जिबरील' भी कहा जाता है। कुछ रिवायतो (उल्लेखों) से मालूम होता है कि हजरत जिबरील अ० से नबी सल्ल० की यह बात-चीत आपके जीवन के अन्तिम समय में हुई थी। इस तरह २३ वर्ष की मुद्दत मे जो 'दीन' पूर्ण हुआ था उसका साराश हज़रत जिबरील के प्रश्नों के उत्तर के रूप मे प्रस्तुत कर दिया गया है। रिवायतों से यह भी मालूम होता है कि इस अवसर पर 'सहाबा' रजि० (नबी सल्ल० के साथी) अच्छी-खासी सख्या मे उपस्थित थे।

بِسْمِ اللهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

عَنْ عُمَرَ بْنِ الْخَطَّابِ قَالَ بَيْنَمَا نَحْنُ عِنْدَ رَسُوْلِ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ
ذَاتَ يَوْمٍ اِذْ طَلَعَ عَلَيْنَا رَجُلٌ شَدِيْدُ بَيَاضِ الثِّيَابِ، شَدِيْدُ سَوَادِ الشَّعْرِ، لَا يُرٰى
عَلَيْهِ اَثَرُ السَّفَرِ، وَلَا يَعْرِفُهُ مِنَّا اَحَدٌ حَتّٰى جَلَسَ اِلَى النَّبِيِّ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ
فَاَسْنَدَ رُكْبَتَيْهِ اِلٰى رُكْبَتَيْهِ وَوَضَعَ كَفَّيْهِ عَلٰى فَخِذَيْهِ، وَقَالَ يَا مُحَمَّدُ اَخْبِرْنِيْ عَنِ
الْاِسْلَامِ. فَقَالَ رَسُوْلُ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ اَلْاِسْلَامُ اَنْ تَشْهَدَ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللهُ
وَاَنَّ مُحَمَّدًا رَّسُوْلُ اللهِ، وَتُقِيْمَ الصَّلٰوةَ وَتُؤْتِيَ الزَّكٰوةَ، وَتَصُوْمَ رَمَضَانَ وَتَحُجَّ الْبَيْتَ
اِنِ اسْتَطَعْتَ اِلَيْهِ سَبِيْلًا. قَالَ. صَدَقْتَ. قَالَ. فَعَجِبْنَا لَهٗ يَسْاَلُهٗ وَيُصَدِّقُهٗ.
قَالَ فَاَخْبِرْنِيْ عَنِ الْاِيْمَانِ قَالَ. اَنْ تُؤْمِنَ بِاللهِ وَمَلٰٓئِكَتِهٖ وَكُتُبِهٖ وَرُسُلِهٖ وَ
الْيَوْمِ الْاٰخِرِ، وَتُؤْمِنَ بِالْقَدَرِ خَيْرِهٖ وَشَرِّهٖ. قَالَ صَدَقْتَ. قَالَ فَاَخْبِرْنِيْ عَنِ
الْاِحْسَانِ. قَالَ اَنْ تَعْبُدَ اللهَ كَاَنَّكَ تَرَاهُ، فَاِنْ لَّمْ تَكُنْ تَرَاهُ فَاِنَّهٗ يَرَاكَ. قَالَ
فَاَخْبِرْنِيْ عَنِ السَّاعَةِ. قَالَ. مَا الْمَسْئُوْلُ عَنْهَا بِاَعْلَمَ مِنَ السَّائِلِ. قَالَ فَاَخْبِرْنِيْ
عَنْ اَمَارَاتِهَا. قَالَ اَنْ تَلِدَ الْاَمَةُ رَبَّتَهَا، وَاَنْ تَرَى الْحُفَاةَ الْعُرَاةَ الْعَالَةَ رِعَاءَ الشَّاءِ
يَتَطَاوَلُوْنَ فِي الْبُنْيَانِ قَالَ. ثُمَّ انْطَلَقَ فَلَبِثْتُ مَلِيًّا ثُمَّ قَالَ لِيْ، يَا عُمَرُ! اَتَدْرِيْ
مَنِ السَّائِلُ؟ قُلْتُ اللهُ وَرَسُوْلُهٗ اَعْلَمُ. قَالَ فَاِنَّهٗ جِبْرِيْلُ، اَتَاكُمْ يُعَلِّمُكُمْ
دِيْنَكُمْ. ———— مسلم

हजरत उमर बिन खत्ताब रजि० कहते है कि एक दिन हम अल्लाह के रसूल सल्ल० की सेवा मे उपस्थित थे कि अचानक एक व्यक्ति हमारे सामने आया जिसका वस्त्र अत्यन्त उज्ज्वल और बाल बहुत ही काले थे। न उस पर सफर का कोई असर दिखाई देता था और न हम मे से कोई उसे

पहचानता था।[1] यहां तक कि वह नबी सल्ल० के पास बैठ गया और उसने अपने घुटने आप (सल्ल०) के घुटनों से मिला दिए और अपने हाथ आप (सल्ल०) की रानों पर रख दिए[2] और कहा हे मुहम्मद ! मुझे 'इस्लाम' के बारे में बताइए।

अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'इस्लाम' यह है कि तुम यह गवाही दो कि अल्लाह के सिवा कोई 'इलाह' (पूज्य) नहीं और मुहम्मद अल्लाह के 'रसूल' हैं। और नमाज' कायम करो और 'जकात' दो और 'रमज़ान' के 'रोज़े' रक्खो, और अल्लाह के घर ('काबा') का 'हज्ज' करो, यदि तुम्हें उसके मार्ग का सामर्थ्य प्राप्त हो[3]।

उसने कहा . आपने सच कहा।

(हज़रत उमर रजि०) कहते हैं कि हमें उस पर आश्चर्य हुआ कि वह आप (सल्ल०) से पूछता भी है और आपकी तसदीक भी करता है[4]।

---

१. अर्थात् हम उसे पहचान नहीं रहे थे कि उसे अपने यहाँ का निवासी समझते, उस पर थकावट और सफर का भी कोई चिह्न दीख नहीं पड रहा था कि उसे मुसाफिर समझा जाता।

२. अर्थात् वह आप के बिल्कुल निकट शिष्टता के साथ बैठ गया। और उस ने पूर्ण रूप से अपना ध्यान आप की ओर केन्द्रित कर दिया।

३ 'इस्लाम' का अर्थ होता है आज्ञापालन और आत्म-समर्पण। इस्लाम को इस्लाम इसलिए कहा गया है कि यह पूर्णत अल्लाह के आज्ञापालन और उस के आदेशो के अनुसार चलने का धर्म है। उस मे मनुष्य अपने सम्पूर्ण जीवन को अल्लाह के अर्पण कर देता है और उसके आदेशो के पालने मे लग जाता है। 'अल्लाह' को अपना स्रष्टा पालनकर्त्ता, स्वामी, पूज्य और शासक मान कर उस की पसन्द की हुई जीवन-प्रणाली और उस के दिये हुये कानून को अपना लेता है। 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) और 'रिसालत' की गवाही, नमाज, जकात, 'रोज़ा' और हज्ज' ये 'इस्लाम' के पाँच 'अरकान' (स्तम्भ या मूलाधार) है। इस्लाम का परिचय कराने के लिए नबी सल्ल० ने यहाँ इन ही का उल्लेख किया। इन ही पर इस्लामी जीवन के भवन का निर्माण होता है। यदि इन्हे तोड दिया जाये तो पूरा भवन गिर जायेगा।

४ अर्थात् हमे इस पर आश्चर्य हुआ कि वह आप से प्रश्न भी करता है फिर स्वय आप की बातो की तसदीक भी करता है मानो वह वास्तविकता से भली-भाँति परिचित है।

फिर उसने कहा मुझे 'ईमान' के बारे में बताइए[५]।

आपने कहा 'ईमान' यह है कि तुम अल्लाह, उसके 'फिरिश्तो', उसकी 'किताबों', उसके 'रसूलो' और अन्तिम दिन (आखिरत') को मानो और तकदीर की भलाई और बुराई पर 'ईमान' लाओ[६]।

---

५ अर्थात् बताइये कि किन बातों को मानना हमारे लिए आवश्यक है और वे कौन सी वास्तविकताएँ है जिन पर हम को विश्वास करना चाहिए।

६ यहाँ जिन चीजो को मानने की शिक्षा दी गई है उन मे सब से पहली चीज़ अल्लाह पर 'ईमान' है। यही इस्लाम का केन्द्र और उसका आधार है। अल्लाह पर ईमान लाये बिना 'दीन' और इस्लाम सब ही कुछ निरर्थक हो जाता है। 'इस्लाम' मे समस्त विचारो और धारणाओं का सम्बन्ध वास्तव मे 'अल्लाह पर ईमान' से ही है। 'रिसालत' का इन्कार वास्तव मे अल्लाह की दयालुता और उस की महानता का इन्कार है (दे० सूरा बनी इसराईल : ८६-८७, अल-अनआम : ९१)। अल्लाह के बारे मे वास्तविक ज्ञान और उस की इच्छा के अनुसार जीवन व्यतीत करने का ढग 'रसूलो' के द्वारा ही मालूम होता है। इसलिए 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) के साथ-साथ 'रिसालत' पर 'ईमान' लाना भी आवश्यक है। 'आखिरत' का सम्बन्ध भी 'तौहीद' से है। 'आखिरत' का इन्कार वास्तव मे अल्लाह के प्रभुत्व (*Sovereignty*) का इन्कार है।
अल्लाह पर 'ईमान' के बाद दूसरी चीज जिस पर 'ईमान लाने की शिक्षा दी गई वह 'फिरिश्तो' का गुप्त अस्तित्व है। 'मुश्रिक' (बहुदेववादी) लोग साधारणतया जहाँ प्रभुत्व मे उन चीजो को शरीक समझते थे जो अपना दैहिक अस्तित्व रखती है, जिनको हम अपनी आँखो से देखते हैं—जैसे सूर्य, नदी, पर्वत आदि—वही वे उन चीजो को भी प्रभुत्व मे शरीक ठहराते थे जो हमारी आँखो से ओझल है। 'मुश्रिको' ने इन गुप्त सृष्टि-जीवो को देवी-देवता या अल्लाह की औलाद समझ लिया था। नबी सल्ल० ने बताया कि वे अल्लाह के पैदा किए हुए 'फिरिश्ते' है। ईश्वरीय प्रभुत्व मे उनका कुछ भी अधिकार नही है। वे अल्लाह ही के आज्ञाकारी है। वे वही करते है जो अल्लाह का हुक्म होता है, यह सही है कि वे विभिन्न कामो मे लगे हुए है और विश्व के प्रबन्ध कार्य मे लगे हुए है परन्तु वे जो कुछ भी करते है अल्लाह ही के आदेश और उसके प्रदान किए हुए अधिकार से करते है। उन्हे प्रभुत्व मे सहभागी समझना, उनकी उपासना करना या सकट मे उन्हे पुकारना अन्याय और 'शिर्क' है। वे तो अल्लाह के उसी तरह बन्दे और दास है जिस तरह हम हैं। इस प्रकार 'तौहीद' को 'शिर्क' (बहुदेववाद) की गन्दगी से बचाने के लिए 'फिरिश्तो' पर 'ईमान लाने' का उल्लेख एक स्थायी धारणा के रूप मे किया गया।

उसने कहा : आपने सच कहा ।

फिर कहा · मुझे 'एहसान' के बारे में बताइए ।

आप ने कहा ('एहसान') यह है कि तुम अल्लाह की 'इबादत' इस तरह करो मानो तुम उसे देख रहे हो, क्योंकि यदि तुम उसे नही

तीसरी चीज जिस पर 'ईमान लाने' की शिक्षा दी गई है वे अल्लाह की किताबें है । अल्लाह ने लोगो के दिशा-दर्शन और पथ-प्रदर्शन के लिए किताबें उतारी । कुरआन उसी 'दीन' की शिक्षा के लिए अवतरित हुआ है जिसकी शिक्षा पहले ईश्वरीय ग्रन्थो या आसमानी किताबो (*Heavenly Book*) मे दी गई थी ।

किताबो के साथ-साथ 'रसूलो' पर 'ईमान लाना' भी आवश्यक है । रसूलों ही के द्वारा अल्लाह ने लोगो तक अपना मार्ग-दर्शन और ग्रन्थ भेजा । 'रसूल' अल्लाह के प्रतिनिधि होते है । वे अल्लाह की इच्छा के अनुसार जीवन यापन करके लोगो को दिखाते हैं । अल्लाह की 'किताब' को व्यवहार मे कैसे लाया जाये, यह हमे 'रसूल' ही के जीवन से ज्ञात होता है । 'रसूल' का जीवन हमारे लिए आदर्श होता है । हजरत मुहम्मद सल्ल० 'नुबूवत' के सिलसिले की अन्तिम कड़ी हैं । आप पर 'नुबूवत' और 'रिसालत' का सिलसिला समाप्त हो गया ।

'रसूलो' के बाद 'आखिरत' पर 'ईमान' लाने की शिक्षा दी गई है । 'आखिरत' या अन्तिम दिन से अभिप्रेत यह है कि एक दिन सारा ससार विनष्ट हो जायेगा । इसके बाद अल्लाह लोगो को दूसरा जीवन प्रदान करेगा । सब लोग अल्लाह के सामने हाज़िर किये जायेंगे । लोगो ने जो कुछ सासारिक जीवन मे किया होगा उसका उन्हे बदला दिया जायेगा ।

अन्त मे 'तकदीर' पर 'ईमान लाने की शिक्षा दी गई है । 'तकदीर' पर 'ईमान वास्तव मे अल्लाह पर 'ईमान' लाने का एक पहलू है । कुरआन मे इस धारणा का इसी हैसियत से उल्लेख भी हुआ है । उदाहरणार्थ देखिए सूरा आले इमरान . २६, ७३, अन-निसा ७८, अल-आराफ · १२८, अल-फुरकान : २-३, अल-हदीद : २२-२३ । 'तकदीर' पर 'ईमान' वास्तव मे इस बात का इकरार है कि अल्लाह सर्वशक्तिमान अबाध्य शासक है । उसका ज्ञान सब को घेरे हुये है । कोई भी चीज उस के ज्ञान से विलग नही । उस ने हर चीज़ का अन्दाजा ठहराया है कोई भी चीज़ उसका अतिक्रमण नही कर सकती । उस की शक्ति और बल का मुकाबला कोई नही कर सकता । यह ससार उस की सोची-समझी योजना (*Scheme*) के अन्तर्गत चल रहा है । कोई उस को उस के मनसूबे मे असफल नही कर सकता । फिर लाभ-हानि की सारी शक्तियो का वही मालिक है । सम्मान और अपमान और धन और बल सब उस के

देखते हो, तो वह तो तुम्हे देख रहा है[७]।

उसने फिर कहा मुझे उस घड़ी ('कियामत') के बारे में बताइए।

आपने कहा जिस से पूछा जा रहा है वह उसे पूछने वाले से अधिक नही जानता[८]।

उसने कहा अच्छा, मुझे उसकी निशानियो से सूचित कीजिए[९]।

आपने कहा (निशानियाँ ये है कि) लौंडी (दासी) अपनी

अधिकार मे है। वह अपनी 'हिकमत' और दत्वदर्शिता (*Wisdom*) की दृष्टि से जिस व्यक्ति को भी जो-कुछ और जितना चाहता है देता है। उस की 'हिकमत' म कोई त्रुटि नही। उम का कोई काम और उस का कोई निर्णय निरर्थक नहीं।

७ यहाँ आप ने 'एहसान' की वास्तविकता का जो वास्तव मे पूरे 'दीन' (धर्म) का सार एव प्राण है, उल्लेख किया है। 'एहसान' शब्द 'हुस्न' से निकला है। 'हुस्न' सुन्दरता एव उत्तमता को कहते है। 'इबादत' मे सुन्दरता, खूबी और पूर्णता उसी समय पैदा होती है जब कि हमारा 'ईमान' और विश्वास ऐसा हो कि मानो अल्लाह हमारी दृष्टि से ओझल नही है बल्कि हमारी निगाहो के सामने है। इस मनोभाव और हृदय-स्थिति के साथ जो 'इबादत' की जायेगी उस मे जो सौन्दर्य होगा वह उन उपासनाओ और 'इबादतो' मे नही हो सकता जो इस मनोभाव से वचित हो। 'एहसान' वास्तव मे मानवीय विकास की उच्चतम मजिल है। यहाँ पहुँच कर मनुष्य को अल्लाह का अत्यन्त सामीप्य और उस का अत्यन्त गहरा प्रेम प्राप्त होता है। 'एहसान' अल्लाह की पहचान (ब्रह्म-ज्ञान) का सब से उच्च दर्जा है। यहा पहुँचने के पश्चात् अल्लाह की पसन्द मनुष्य की अपनी पसन्द हो जाती है। उस की इच्छा वही होती है जो उस के ईश्वर की इच्छा होती है। जो चीज़ उस के पालनकर्त्ता को अप्रिय होगी वह उसे भी अप्रिय होगी। वह उन भलाइयो और नेकियो को फैलाने और उन्हे कायम करने की कोशिश मे अपनी सारी शक्ति लगा देता है जिन से उस का स्वामी (ईश्वर) इस धरती को सुसज्जित देखना चाहता है। इसी प्रकार वह उन बुराइयो को मिटाने के लिए जान तोड़ कोशिश करता है जिन्हे उस का स्वामी इस धरती मे देखना नही चाहता। ऐसा नही कि वह केवल 'नमाज' की हालत मे 'एहसान' के पद पर हो बल्कि अल्लाह के प्रत्येक आदेश के पालन मे वह 'एहसान' ही के दर्जे पर होता है।

८ अर्थात् इसका ज्ञान हम मे से किसी को नही है कि 'कियामत' कब आयेगी इसका ज्ञान केवल अल्लाह को है।

९ जिनके प्रकट होने पर यह समझा जा सके कि 'कियामत' निकट आ गई है।

स्वामिनी को जन्म देगी[10] और तुम नगे पाँव और नगे शरीर वाले कंगालो और बकरियाँ चराने वालो को देखोगे कि वे भवनों (के निर्माण) में एक-दूसरे से बढ-चढ कर रहना चाहते है[11]।

(हजरत उमर रजि०) कहते हैं कि फिर वह चला गया और मैं कुछ देर ठहरा रहा। फिर आप (सल्ल०) ने मुझ से कहा हे उमर! क्या तुम्हे मालूम है कि प्रश्न करने वाला कौन था ?

मैंने कहा अल्लाह और उसका 'रसूल' ज्यादा जानते हैं।

आपने कहा वे जिबरील थे, तुम्हारे पास आए थे कि तुम्हे दीन (धर्म) की शिक्षा दे[12]।

---

१० मतलब यह है कि 'कियामत के करीब लोगो मे परस्पर सहानुभूति और प्रेम-भाव शेष नही रहेगा। लोग रिश्ते-नाते का आदर करना भी छोड देंगे। बडो का आदर-सम्मान न होगा। बेटी जिसे अपनी माता से गहरा लगाव होना चाहिए उस का व्यवहार माता के साथ ऐसा होगा जैसे साधारणतया स्वामिनी का अपनी दासी के साथ होता है। माता ने मानो बेटी नही बल्कि अपनी स्वामिनी को जन्म दिया है।

११ अर्थात् धन-वैभव और उच्च पद उन लोगो को प्राप्त होगा जो ज्ञान, सभ्यता, सज्जनता आदि गुणो से कोरे होगे। उन्हे बस इस की धुन होगी कि ऊँचे-ऊँचे भवन का निर्माण करायें। इस मे वे एक-दूसरे से बाजी ले जाने की चेष्टा करेंगे। इसी को वे अपने लिए गर्व की बात समझने लगेंगे। एक दूसरी 'हदीस' मे नबी सल्ल० ने कहा है कि हुकूमत, अधिकार और मामले अयोग्य लोगो को सौंपा जाने लगे तो 'कियामत' की प्रतीक्षा करो (बुखारी) अर्थात् उस समय समझ लो कि अब 'कियामत' दूर नही है।

१२ अर्थात् अल्लाह के विशेष 'फरिश्ता' हजरत जिबरील अ० थे जो मानव रूप मे इस लिए आये थे ताकि धर्म के विषय मे मुझ से प्रश्न करें और इस तरह तुम्हे अपने 'दीन' के विषय मे सच्चा और उत्तम ज्ञान प्राप्त हो सके।

मौलिक विचार और धारणाएँ

मौलिक धारणाएँ

मनुष्य अपने जीवन को कभी विचार और धारणाओं से रिक्त नही रख सकता। हर व्यक्ति का कोई-न-कोई दृष्टिकोण, मत और धारणा होती है जिसके अन्तर्गत वह जीवनयापन करता है। संसार में जिन प्रत्यक्ष वास्तविकताओ से हम परिचित हैं वास्तविकताएँ उन ही तक सीमित नही हैं। कितनी ही ऐसी चीजें हैं जिनको हम अनुभव शक्ति से मालूम नही कर सकते, हमें उनका ज्ञान बुद्धि और तर्क द्वारा होता है। *A E. Mander* ने लिखा है कि दीख पडने वाली घटनाये वास्तविकता के केवल कुछ अंश हैं। अनुभव-शक्ति और इन्द्रियों के द्वारा हम जो-कुछ जानते है वे केवल आशिक और असम्बद्ध घटनाये होती है। यदि अलग से केवल उन ही को देखा जाये, तो वे निरर्थक होंगी। वे घटनाएँ प्रत्यक्षत जिनका अनुभव होता है उनके साथ और बहुत सी ऐसी अप्रत्यक्ष घटनाओं को मिलाकर जब हम देखते हैं उस समय हम उनका अर्थ समझ पाते हैं। उसकी दृष्टि में जब हम कभी किसी निरीक्षण का उल्लेख करते है तो उससे अभिप्रेत ऐन्द्रिक निरीक्षण मात्र से कुछ अधिक होता है। उस से अभिप्रेत ऐन्द्रिक निरीक्षण और विभावन (*Recognition*) दोनों ही होते हैं, जिसमें कुछ व्याख्या (*Interpretation*) का अंश भी सम्मिलित होता है। मनुष्य ऐन्द्रिक निरीक्षण और उन प्रत्यक्ष वास्तविकताओ पर ही सन्तोष नही कर सकता जिन से वह प्रत्यक्षत परिचित होता है। वह जो-कुछ देखता और महसूस करता है उसके अतिरिक्त भी उसका कोई-न-कोई विचार और कल्पना होती है और इसके लिए वह विवश होता है।

जीवन और वास्तविकताओं की सही व्याख्या से और मानवीय जीवन के सही विचार और दृष्टिकोण से परिचित कराने वाले अल्लाह के भेजे हुए वे बन्दे है जिन्हे 'नबी' और 'रसूल' कहा जाता है। 'नबी' वास्तव में अल्लाह के प्रतिनिधि होते है। अल्लाह उन्हे इसीलिए भेजता है कि वे मनुष्यों को सही और सत्यानुकूल विचारों की शिक्षा दे और लोगों को हर प्रकार की विचार सम्बन्धी और व्यावहारिक पथभ्रष्टता से बचाये। 'नबियो' ने मनुष्यों को जो विचार और दृष्टिकोण दिये वे किसी अनुमान और अटकल पर अवलम्बित नही है। 'नबियों' को उन धारणाओं

का प्रत्यक्षत अल्लाह की ओर से ज्ञान दिया गया। जिन धारणाओं की शिक्षा 'नबियों' ने दी है उनमें से किसी एक का खंडन भी नवीन खोजों और अनुसंधानों से नही होता। और न इसकी आशा की जा सकती है कि भविष्य में कोई खोज और अनुसधान उनके मिथ्या होने का प्रमाण बन सकेगा। नवीन खोजों से 'नबियों' की शिक्षा और उनके दृष्टिकोण का समर्थन और पुष्टि ही होती है। जीवन के सही दिशा-दर्शन के लिए आवश्यक है कि मनुष्य 'नबियों' पर और उनकी लाई हुई 'हिदायत' और मार्ग-दर्शन पर विश्वास करे। 'नबियो' पर 'ईमान' लाये बिना मनुष्य अंधियारियों से छुटकारा नही पा सकता। जीवन के लिए केवल बुद्धि और अनुभव का मार्ग-दर्शन पर्याप्त नही। इस सिलसिले मे शीन (*Sheen*) ने सही विश्लेषण किया है। वह लिखता है · "हमारी अनुभव शक्ति और इन्द्रियाँ उत्तम रीति से उस समय काम करती है जब बुद्धि द्वारा उनकी पूर्ति हो जाये इसी प्रकार हमारी बुद्धि भी उस समय ठीक काम कर सकती है जबकि 'ईमान' के द्वारा उसकी पूर्ति हो जाये। जो व्यक्ति अस्थायी रूप से (जैसे शराब पीने वाला शराब पीकर) बुद्धिविहीन हो जाता है, उसकी अनुभव शक्ति और इन्द्रियाँ वही होती हैं जो पहले थी, परन्तु उस समय वह कभी भी अपने कर्तव्यो का पालन उस तरह नही कर सकता जिस तरह वह बुद्धि और होश की हालत में कर सकता है। जो दशा बुद्धि के बिना इन्द्रियों की होती है ठीक वही दशा 'वह्य' के बिना बुद्धि की होंती है।" आँख से काम लेने के लिए प्रकाश और दीप की आवश्यकता होती है। बुद्धि से भी सही काम उसी समय लिया जा सकता है जबकि उसके लिए 'वह्य' और 'नुबूवत' का प्रकाश सचय कर दिया जाये।

सही धारणा और सत्य विचार मनुष्य को हर प्रकार की गुम्राही और पथभ्रष्टता से बचाते हैं और उसके चरित्र और स्वभाव को महान् शक्ति प्रदान करते हैं। विचार और धारणाये ही वास्तव में किसी व्यक्तित्व या जाति की महानता को जामिन होती है। दृष्टिकोण और विचार यदि उच्च हैं, तो निश्चय ही वे किसी व्यक्ति या जाति को महानता प्रदान कर सकते हैं। इसके विपरीत विचार और अपनी धारणाओं की दृष्टि से यदि कोई जाति गिरी हुई या पथभ्रष्ट है तो कोई दूसरी चीज़ उसे प्रतिष्ठा का वह स्थान नही दिला सकती जो संसार में केवल उच्च विचार, शुद्ध धारणा और सही दृष्टिकोण के द्वारा प्राप्त होता है। यहाँ यह बात न भूलनी चाहिए कि सही-से-सही और उच्च-से-उच्च विचार और दृष्टिकोण भी व्यावहारिक क्षेत्र में निरर्थक सिद्ध होता

है यदि उसे ग्रहण करने वाला कोई ऐसा गरोह ज़मीन में मौजूद न हो जो उसके लिए अपना सब-कुछ निछावर कर सके और उसके प्रचार में हर वह कोशिश करे जो वह कर सकता हो। विचार और धारणाओं के द्वारा ही मनुष्य के आंतरिक भावों और अनुभूतियों में सतुलन पैदा होता है। चरित्र-निर्माण के लिए आवश्यक है कि मनुष्य के विचार और उसके मनोवेग और इच्छाओ मे अनुरूपता पाई जाती हो। मनुष्य यदि अपने विचार और मनोवेग एव इच्छाओं में एकता बनाये रखने में सफल न हो सका, तो वह अपने सामयिक उद्वेगों के हाथ एक खिलौना मात्र है, इससे अधिक उसकी कोई हैसियत नही। ऐसे व्यक्ति से किसी उच्च और सुदृढ़ चरित्र एवं स्वभाव की आशा नही की जा सकती। और न ऐसे व्यक्तियों से यह आशा की जा सकती है कि उनके द्वारा किसी सुदृढ़ सभ्यता को विकास मिल सकेगा। जार्ज फूट मूर (*George Foot Moor*) के शब्दों में सभ्यता केवल इस रूप मे विकास पा सकती है जबकि मनुष्यों की अधिक-से-अधिक संख्या किसी उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए सचेष्ट हो। इस प्रकार का सगठन केवल विचारो और कल्पनाओ की एकता (*Unity of bare ideas*) के आधार पर सम्भव नही होता। यह सगठन मनोवेगों और अनुभूतियो की एकता से सम्भव होता है। जिन से कल्पनाओं एव विचारों को प्रेरणा मिलती है और वे (केवल विचार और कल्पना न रह कर) आस्था और उद्देश्य बन जाते है।

'इस्लाम' ने विचार और धारणा को मानव-जीवन मे. वही स्थान दिया है जो वास्तव में उनका स्थान होता है। विचार और धारणा के महत्व के कारण ही 'इस्लाम' ने ज्ञान व विश्वास और 'ईमान' को धार्मिक व्यवस्था में मौलिक स्थान दिया है। जो लोग वास्तविकता से अपरिचित हैं और जीवन के अन्तिम परिणाम से निश्चिन्त-होकर जीवन-यापन करते हैं उनके जीवन का उल्लेख करते हुए कुरआन में एक जगह कहा गया है . "ऐसे व्यक्ति से किनारा खीच लो जो हमारे 'जिक्र' से मुँह मोडे और सासारिक जीवन के अतिरिक्त कुछ न चाहे। उनके ज्ञान की पहुँच यही तक है। निस्सन्देह तुम्हारा 'रब' उस व्यक्ति को भली-भाँति जानता है जो उसके मार्ग से भटक गया, और वह उस व्यक्ति को भी भली-भाँति जानता है जिसने सीधी राह अपनाई" (अन-नज्म २९-३०)। कुरआन के इस बयान से यह बात भली-भाँति स्पष्ट हो जाती है, कि जीवन में ज्ञान, शुद्ध विचार और सही दृष्टिकोंण का कितना महत्व है। सही विचार मनुष्य को सही मार्ग की ओर ले जाता है, अशुद्ध विचार और असत्य भावनाये मनुष्य को विनाश की ओर ले जाती हैं

ज्ञान एवं विवेक

मानव-जीवन मे ज्ञान का वडा महत्व है। ज्ञान ही वास्तव मे मनुष्य के चरित्र और आचार का मौलिक आधार है। मनुष्य की सफलता वास्तव मे इसी वात पर निर्भर है कि उसे वास्तविकता का ज्ञान प्राप्त हो, जिस के अनुसार वह अपने जीवन का निर्माण कर सके। यदि उसे इस बात का ज्ञान ही न हो कि उसे यह जीवन किस ने प्रदान किया है और उस के जीवन का वास्तविक उद्देश्य क्या है, तो वह कभी भी जीवन के सीधे और सच्चे मार्ग पर नही चल सकता और न अपने सृष्टिकर्त्ता की इच्छा को कभी पूरी कर सकता है। उस की मिसाल विल्कुल ऐसी होगी जैसे कोई गहन अन्धकार में भटक रहा हो और उसे इस की विल्कुल खबर न हो कि वह कहाँ है और उसे किस ओर जाना चाहिए। एक 'ईमान' वाले व्यक्ति और 'काफिर (अल्लाह के अकृतज्ञ) में वास्तविक अन्तर ज्ञान और कर्म ही का है। इस अन्तर के कारण उन के जीवन और उन के परिणाम में महान् अन्तर पाया जाता है। 'ईमान' वालो को ससार में भी उत्तम जीवन (हयात तैयवा) प्राप्त होता है और 'आखिरत' मे वे अल्लाह की कृपा एव दयालुता और उस की 'जन्नत' के अधिकारी होंगे। 'काफिर' केवल अल्लाह के प्रकोप और 'जहन्नम' की यातना का भागी होगा। कुरआन और 'हदीस' में ज्ञान एव बुद्धिमत्ता को मौलिक महत्व दिया गया है। कुरआन में कहा गया है "कह दो क्या बराबर होते है वे लोग जो जानते है और वे लोग जो नही जानते ?"

—अज्जुमर ९

"अल्लाह उन लोगों के दर्जे ऊँचे कर देगा जो तुम मे से 'ईमान ले आये', और जिन्हे ज्ञान प्रदान किया गया है।" —अल-मुजादला ११

"अल्लाह से तो उस के बन्दों मे बस ज्ञान वाले ही डरते है।"

—फातिर २८

"और कहो 'रब'! मुझे ज्ञान और वढा दे।"—ता० हा० ११४

"(अल्लाह) जिसे चाहता है 'हिकमत' प्रदान करता है, और जिसे 'हिकमत' (तत्वदर्शिता) दी गई, उसे बडी दौलत दी गई।"

—अल-बकरा २६९

'काफिरो' और 'मुश्रिको' (बहुदेव वादियो) को विशेष रूप से इस लिए अपराधी कहा गया है कि वे ज्ञान का अनुसरण नही करते और केवल अटकल और अनुमान से काम लेते हैं। कहा गया "वे तो बस गुमान पर चलते है, और गुमान हक बात के सामने कुछ काम नही देता।"
—अन-नज्म · २८

"ये लोग तो बस गुमान पर और जो जी चाहता है उस पर चल रहे है।"
—अन-नज्म २३

"और उस व्यक्ति से बढ कर भटका हुआ कौन होगा जो अल्लाह के मार्ग-दर्शन के विना अपनी (तुच्छ) इच्छा पर चले।"
—अल-कसस . ५०

ऐसे लोग वास्तव में बुद्धि और सूझ-बूझ से वचित होते है।

"क्या तुम समझते हो कि इन मे अधिकतर सुनते या समझते है? यह तो बस चौपायो की तरह हैं—वल्कि ये और बढ कर राह से भटके हुये है।"
—अल-फुरकान ४४

'दीन' मे समझ और अल्लाह की उतारी हुई 'किताव' मे सूझ-बूझ प्राप्त करना हमारा कर्तव्य है। इस के विना हमारी चेष्टाये अव्यवस्थित और हमारा जीवन अस्त-व्यस्त और अनियमित ही रहेगा। हमारे विश्वास और विचार को खोखला और हमारी 'इबादतो' और उपासनाओं को प्राणहीन और निस्सार होने से जो चीज वचा सकती है वह यही है कि आदमी 'दीन' मे समझ हासिल करे और किताब व 'सुन्नत' में सोच-विचार से काम ले। इसी लिए नबी सल्ल० नें मुसलमानो को इस की बार-बार ताकीद की है कि वे 'दीन' मे सूझ-बूझ हासिल करे और उस के आदेशो को समझे।

عَنْ مُعَاوِيَةَ قَالَ قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ. مَنْ يُّرِدِ اللّٰهُ بِهٖ خَيْرًا يُّفَقِّهْهُ فِي الدِّيْنِ وَاِنَّمَا اَنَا قَاسِمٌ وَاللّٰهُ يُعْطِيْ وَلَنْ تَزَالَ هٰذِهِ الْاُمَّةُ قَائِمَةً عَلٰى اَمْرِ اللّٰهِ، لَا يَضُرُّهُمْ مَنْ خَالَفَهُمْ حَتّٰى يَاْتِيَ اَمْرُ اللّٰهِ. ——— بخاری، مسلم، ابن ماجہ

१ हजरत मुआविया रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिसके लिए अल्लाह भलाई का इरादा करता है उसे 'दीन' मे समझ प्रदान करता है[1]। मैं तो बस वितरण करने वाला हूँ और अल्लाह देता है[2]। यह समुदाय सदा अल्लाह के हुक्म पर कायम रहेगा जो कोई उनका (इस समुदाय वालों का) विरोधी होगा उन्हे हानि न पहुँचा सकेगा यहाँ तक कि 'कियामत' आ जायेगी[3]।

—बुखारी, मुस्लिम, इब्न माजा

---

१. "दीन मे समझ" से अभिप्रेत वह सूझ-बूझ और विवेक है जिस के कारण मनुष्य 'दीन' की वास्तविकता और उस के रहस्यो को जान जाता है। वह धर्म का मर्मज्ञ हो जाता हे। वास्तविक रूप से उसे 'दीन' का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। धार्मिक आदेशो के आशय और अभिप्राय को वह पा लेता है फिर वह कोई अन्धा अनुवर्ती नही रहता, बल्कि पूरी सूझ-बूझ और विवेक के साथ वह जीवन मे ईश्वरीय आदेशो का पालन करता है। उस पर यह प्रत्यक्ष हो जाता है कि अल्लाह की बन्दगी और उस के आदेशो के पालन ही मे मानव की सफलता और उस का कल्याण है। अल्लाह की दासता और उपासना के बिना मनुष्य जीवन के वास्तविक अभिप्राय से अनभिज्ञ ही रहता है। यह 'हदीस' बताती है कि वह व्यक्ति बडा ही भाग्यवान है जिसे अल्लाह ने 'दीन' मे समझ प्रदान की हो। इसलिए कि यही चीज़ समस्त भलाइयो और कल्याण का स्रोत एव उद्‌गम है।

२. अर्थात् मेरा काम तो वितरण करना है। जो सन्देश या ज्ञान की बाते मैं लोगो तक पहुँचा रहा हूँ वे मेरी अपनी घड़ी हुई कदापि नही है, बल्कि वे अल्लाह ही की ओर से हैं।

३. इस मे इस बात की भविष्यवाणी है कि मुस्लिम समुदाय 'कियामत' तक शेष

२ हजरत इब्न मसऊद रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · ईर्ष्या केवल दो आदमियो के सिलसिले मे की जा सकती है एक वह व्यक्ति जिसे अल्लाह ने धन दिया फिर उसको सत्य (हक) मार्ग मे लुटाने का दैवयोग प्रदान किया, दूसरा वह व्यक्ति जिसे अल्लाह ने 'हिकमत' (तत्वदर्शिता, निर्णय शक्ति) प्रदान की तो वह उसके अनुसार निर्णय करता है और (लोगों को) उसकी शिक्षा देता है[४]।

—बुखारी, मुस्लिम

३ हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो व्यक्ति ज्ञान की खोज मे निकले वह अल्लाह के मार्ग में है जब तक कि वापस न आ जाये[५]। —तिरमिज़ी

४ हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : यदि किसी व्यक्ति को इस दशा में मृत्यु आ जाये कि वह ज्ञान प्राप्त कर रहा हो, तो वह अल्लाह से इस दशा में मिलेगा कि उसके और 'नबियो' के बीच केवल 'नुबूवत' के दर्जे का अन्तर रहेगा। —अत-तबरानी . औसत

५ हज़रत अबू दरदा रजि० से उल्लिखित है, वे कहते है कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना जो व्यक्ति ज्ञान की खोज में कोई मार्ग अपनायेगा अल्लाह उसके लिए 'जन्नत' का मार्ग सुगम कर देगा[६]। और 'फिरिश्ते' ज्ञानार्थी की प्रसन्नता के लिए अपनी भुजाये

रहेगा, कोई भी शक्ति उस का उन्मूलन न कर सकेगी। 'इस्लाम' चिरस्थायी वास्तविकता है, इसे मिटाया नही जा सकता। एक गरोह सदा उस का समर्थक रहेगा।

४ अर्थात् ये दो प्रकार के मनुष्य ऐसे है जो बड़े भाग्यशाली है उन की नीति का अनुकरण सफलता की कुंजी है। किसी को अल्लाह ने धन दिया है और उसे वह अल्लाह के मार्ग और शुभ कर्मों मे व्यय करता है, तो वह सफल है। इसी प्रकार वह व्यक्ति भी सफल है जिसे अल्लाह ने ज्ञान और विवेक प्रदान किया है और वह इसे उचित रूप से प्रयोग मे लाता है। मामलो का सही फैसला करता और लोगो को ज्ञान (*Wisdom*) की शिक्षा देता है।

५ ज्ञान की खोज मे निकलने वाला अल्लाह के मार्ग मे होता है। वह उस मार्ग मे होता है जिस पर चल कर वह अपने 'रब' को पाता और उस की प्रसन्नता प्राप्त करता है। सत्य-ज्ञान का जिज्ञासु वास्तव मे अल्लाह के मार्ग का 'मुजाहिद' (धर्मयोद्धा) होता है।

६ ज्ञान का मार्ग वास्तव मे मनुष्य को 'जन्नत' मे पहुँचाने वाला है। वास्तविकता

बिछाते है। और ज्ञानी के लिए आकाश और धरती के रहने वाले यहाँ तक कि जल की मछलियाँ भी क्षमा की प्रार्थना करती है[७]। और ज्ञानी की श्रेष्ठता उपासक की अपेक्षा ऐसी है जैसे चन्द्रमा की श्रेष्ठता शेष समस्त तारागण के मुकावले मे है[८]। और निस्सन्देह ज्ञानी 'नवियो' के वारिस (उत्तराधिकारी) हैं नवी मीरास मे न दीनार छोड़ते हैं और न दिरहम, वे तो विरासत मे वस ज्ञान छोड जाते है तो जिस किसी ने उसे

का ज्ञान प्राप्त करने के वाद ही मनुष्य पथ-भ्रष्टता मे वच सकता है और उस मार्ग पर चल सकता है जिस पर चल कर मनुष्य 'जन्नत' मे जाने के योग्य होता है। यदि वह ज्ञान का जिज्ञासु है, तो अल्लाह उस के लिए सत्यमार्ग पर चलना सरल कर देता है।

७ यह 'हदीस' वताती है कि सत्यज्ञान के इच्छुक का आदर 'फिरिश्ते' तक करते हैं। आकाश और धरती के जीवधारी उन के लिए दुआयें करते है कि यदि उन से कोई भूल-चूक और गुनाह हुआ हो, तो उसे क्षमा कर दे और उन के ऐवो को छिपा ले। ज्ञान और ज्ञानियो ही के कारण ससार मे भलाई और मगल की अभिव्यक्ति होती है। अल्लाह ससार वालो पर दया करता है। उन्ही की वरकत से वर्षा होती है और प्रत्येक जीवधारी अपना आहार पाता है। विलो मे च्यूँटियाँ और समुद्र के तल मे मछलियाँ उन्ही की वरकत से जीवन का आनन्द लेती हैं मानो वे अपनी स्थिति की जिह्वा से उन के लिए दुआ कर रही होती है कि उन पर अल्लाह की दया हो ताकि वे उन की वरकत से ज्यादा-से-ज्यादा लाभान्वित हो सकें। यदि ससार से ज्ञान और ज्ञान वाले उठ जायें तो फिर 'कियामत' ही आ जायेगी। फिर कोई जीवधारी जीवित नही रह सकता।

८ इस मे सन्देह नही कि अल्लाह की 'इवादत' और उस का स्मरण मानव-जीवन की वास्तविक सम्पत्ति है परन्तु इस वहुमूल्य सम्पत्ति की प्राप्ति ज्ञान और समझ-बूझ के बिना सम्भव नही। और लोक-सुधार का कार्य तो इस के विना हो ही नही सकता कि लोगो को जग-स्रष्टा और उस के मार्ग-दर्शन से परिचित किया जाये। स्वय नवी सल्ल० जो ज्ञान एव मार्ग-दर्शन ले कर आये उस की शिक्षा और उस के प्रचार मे अन्त तक लगे रहे। आप के प्रयास एव प्रयत्न के परिणामस्वरूप वह क्रान्ति आई जिस ने लोगो के सोच-विचार और व्यवहार को बदल कर रख दिया। भटके हुये मनुष्यो को सत्य-मार्ग मिला और गुमराही, मार्ग-भ्रष्टता और 'कुफ़्र' व 'शिर्क' (अधर्म और अनेकेश्वरवाद) मे ग्रस्त लोगों को 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) की दौलत मिली।

प्राप्त किया उसने अत्यधिक हिस्सा प्राप्त किया[९]।

—अबू दाऊद, तिरमिज़ी, इब्न माजा

६ हज़रत अबू मूसा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिस मार्ग-दर्शन और ज्ञान के साथ अल्लाह ने मुझे भेजा है उसकी मिसाल ऐसी है जैसे वर्षा जो धरती पर हुई, तो उस (धरती) का जो भाग अच्छा था उसने जल को शोषित किया और हरियाली और हरी-भरी घास उगाई और उस (धरती) का जो भाग कठोर था उसने जल को रोक लिया, तो अल्लाह ने उस से लोगो को फायदा पहुँचाया। लोगो ने उस से वह जल पिया और जानवरो और खेतो को सिंचित किया और खेती-बारी की। और वह वर्षा भूमि के एक ऐसे भाग पर भी हुई जो चटियल है, वह न जल को रोक सकता है और न हरियाली उगा सकता है। यह मिसाल उन लोगो की है जिन्होने सर्वोच्च ईश्वर के (उतारे हुए) 'दीन' में समझ प्राप्त की और उस चीज से फायदा उठाया जिसके साथ अल्लाह ने मुझे भेजा है, तो उन्होंने सीखा और सिखाया। और यह उन लोगो की मिसाल है जिन्होंने न तो इस तरफ सिर उठाकर देखा और न अल्लाह के उस मार्ग-दर्शन को अपनाया जिसके साथ मुझे भेजा गया है[१०]।

—बुखारी, मुस्लिम

---

९ 'नबी' अपनी जाति वालो के लिए पिता के समान होते है बल्कि इस से भी बढ़ कर उन का दर्जा होता है। वे अपने पीछे तरका मे धन-दौलत नही छोडते। उन का तरका तो वह ज्ञान है जिसे लेकर वे आते हैं। वे लोग बडे ही भाग्य-शाली है जो वास्तविक रूप मे 'नबियो' के वारिस बने।

१० इस 'हदीस' मे नबी सल्ल० ने ज्ञान एव मार्ग-दर्शन (*Divine Guidance*) को वर्षा की उपमा दी है। जब वर्षा होती है, तो अच्छी भूमि जल से सिंचित हो कर हरी-भरी हो जाती है। दूसरी प्रकार की भूमि वह है जिस मे हरि-याली तो नही होती परन्तु उस मे जल एकत्र हो जाता है जिससे लोग फायदा उठाते है। तीसरी प्रकार की भूमि वह है जो बिल्कुल चटियल मैदान होती है न तो वह जल को शोषित कर सकती है कि वहाँ हरियाली हो सके और खेती-बाडी की जा सके और न उस मे पानी एकत्र हो सकता है। ऐसी भूमि न वर्षा से स्वय फायदा उठाती है और न उस के द्वारा दूसरी भूमि को कोई फायदा पहुँच सकता है। ठीक इसी वर्षा की तरह अल्लाह की ओर से ज्ञान और मार्ग-दर्शन का अवतरण होता है। उस का 'रसूल' लोगो को ज्ञान और मार्ग-दर्शन की ओर बुलाता है और उन्हे किताब व 'हिकमत' की शिक्षा देता है। जो लोग बुद्धिमान, विवेकशील और सूझ-बूझ वाले है वे उस से

७ हजरत कअब बिन मालिक रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिसने ज्ञान इस ध्येय से प्राप्त किया कि वह उस से ज्ञानी जन पर गर्व करे या मूर्ख और नीच प्रकृति के लोगो से झगड़े या लोगो को अपनी ओर खींचे, अल्लाह उसको ('जहन्नम' की) आग में डालेगा"। —तिरमिजी, इब्न माजा इब्न उमर

८ हजरत अबूहुरैरह रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिसने उस ज्ञान को जिससे अल्लाह की प्रसन्नता चाही जाती है, केवल इस ध्येय से सीखा कि वह उससे सासारिक उपभोग्य वस्तु प्राप्त करे, उसे 'कियामत' के दिन 'जन्नत' की सुगन्ध प्राप्त न होगी।

—अहमद, अबूदाऊद, इब्न माजा

९. हजरत आमस रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा ज्ञान की आपदा भूलना है और उसे विनष्ट करना यह है कि तुम

लाभान्वित होते हैं। उन का जीवन ज्ञान व मार्ग-दर्शन रूपी वर्षा से भली-भाँति सिंचित हो जाता है। उन के जीवन-उपवन मे वसन्त आ जाता है। उन के जीवन मे ज्ञान और कर्म के ऐसे पुष्प खिलते है जिस से मानवता का सम्पूर्ण वातावरण सुरक्षित हो जाता है। कुछ लोग ऐसे होते हैं जो स्वय ज्ञान और मार्ग-दर्शन से पूरा फायदा नही उठा पाते परन्तु उन के द्वारा दूसरो को फायदा पहुँचता है। वे धार्मिक आदेशो और ज्ञान को सुरक्षित रखते हैं और दूसरो तक पहुँचाते हैं। उन की मिसाल उस सरोवर की है जिस मे पानी भरा रहता है जिस से भूमि की सिंचाई कर के खेतियाँ उगाई जाती हे। जिस के पानी को लोग स्वय पीते और अपने जानवरो को भी पिलाते हैं। तीसरे प्रकार के लोग वे है जो बिल्कुल चटियल मैदान होते है। ज्ञान की अमृत वर्षा से न उन मे सजीवता आती है और न वे ज्ञान को सुरक्षित रखते हैं कि दूसरे लोग उस से फायदा उठा सकें। उन के जीवन मे जैसे पहले बिगाड होता है वैसे ही ज्ञान अवतरित होने के पश्चात् भी बिगाड शेष रहता है। वे ज्ञान और ईश्वरीय-निर्देश की ओर ध्यान ही नही देते।

११ अर्थ यह है कि ज्ञानार्जन किसी घटिया और तुच्छ उद्देश्य के लिए नही होना चाहिए। दूसरे कार्यों की भाँति ज्ञान की प्राप्ति मे भी सदैव ईश्वर की प्रसन्नता ही इच्छित होनी चाहिए। किसी ने ज्ञान यदि ईश-प्रसन्नता के लिए नही बल्कि लोक-प्रसिद्धि और लौकिक लाभ ही की दृष्टि से प्राप्त किया तो अल्लाह के यहाँ उस के लिए कोई प्रतिदान नही है। वहाँ वह 'जन्नत' की नेमतो से वचित रहेगा वहाँ उस के हिस्से मे 'जहन्नम' की आग के अतिरिक्त और कुछ न आ सकेगा।

उसे ऐसे व्यक्ति से बयान करो जो उसके योग्य नहीं[१२]। —दारमी

१० हज़रत अबूजर रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : बन्दे ने जब संसार में परहेजगारी और निस्पृहता अपनाई अल्लाह ने उस के दिल में 'हिकमत' (तत्वदर्शिता) पैदा की, और 'हिकमत उस की जबान पर जारी की। संसार के अवगुण और उस के रोग और उन का उपचार उसे सुझा दिया और फिर उसे ससार से भला-चंगा (सकुशल) सलामती के घर की ओर निकाल ले गया।[१३]

---

१२ ज्ञानार्जन की भाँति ज्ञान की रक्षा भी आवश्यक है। ज्ञान प्राप्त कर के उसे विस्मृत कर देना बडे दुर्भाग्य की बात है। ज्ञान और तत्वदर्शिता (*Wisdom*) किसी ऐसे व्यक्ति से बयान करना जो उसके योग्य न हो एक प्रकार का अन्याय है। एक तरफ हमे हर व्यक्ति से उस की बुद्धि और उसके मानसिक स्तर के अनुसार बात करनी चाहिए। दूसरी तरफ हमे योग्य लोगो की खोज होनी चाहिए और उन तक ज्ञान पहुँचाना अपना कर्तव्य समझना चाहिए। यदि हम ऐसा नही करते तो न केवल यह कि हम हक़-दारो का हक मारते है बल्कि स्वय ज्ञान को भी अत्यन्त हानि पहुँचाते हैं और उसे नष्ट करते हैं। ज्ञान जब योग्य लोगो तक पहुँचेगा तो वे उस से लाभान्वित होगें और उन के द्वारा ज्ञान की अधिक-से-अधिक उन्नति और प्रचार भी हो सकेगा। वे अपने चिन्तन और विचार-शक्ति द्वारा ज्ञान-राशि मे श्री वृद्धि भी कर सकते है चाहे वह वृद्धि चिन्तन और 'इजातिहाद' के रूप मे हो या साहित्य-भण्डार के रूप मे।

१३ मनुष्य मृत्यु-लोक का पुजारी न बने, लोभ और लोलुपता से दूर हो, प्रत्येक दशा मे 'आखिरत' को अपने सामने रक्खो यही वास्तविक 'जुहद' (निस्पृहता) है। 'आखिरत' के प्रतिदान के अतिरिक्त सासारिक जीवन मे भी अल्लाह बन्दे को उसके 'जुहद' (विस्पृहता) के कारण तत्काल पुरस्कार प्रदान करता है जिसे कुरआन मे "खैर कसीर" (बडी दौलत) कहा गया है (दे० अल-वकरा · २६९) अल्लाह उस को ज्ञान और 'हिकमत' (*Wisdom*) प्रदान करता है। इस से बढ कर पुरस्कार दूसरा नही हो सकता। यह सब से उत्तम पुरस्कार और प्रतिदान है अपनी भावात्मकता और रसात्मकता की दृष्टि से भी और इस दृष्टि से कि मनुष्य इस के द्वारा इस उपद्रव और फितनो (*Persecution*) से भरी दुनिया मे अपने को गुमराही और विनाश से बचाने मे सफल हो सकता है। जिसे ज्ञान और 'हिकमत' की दौलत मिल गई उसे वह विवेक और अन्त दृष्टि मिल गई जिसके द्वारा वह सत्य-असत्य, उचित-अनुचित और बुरे-भले मे अन्तर कर सकता है और जीवन की पेचीदा राहो मे अपने आपको

और हर चीज का एक आधार होता है और इस 'दीन' (इस्लाम) का आधार समझ है[१७]। —दार कुतनी, बैहकी

१४ हजरत इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा ('दीन' में) समझ श्रेष्ठतम 'इबादत' (उपासना) है[१८] और श्रेष्ठतम 'दीन' (धर्म) परहेजगारी (सयम) है[१९]। —तबरानी

१५. हजरत इब्न अब्बास रजि० कहते हैं कि नबी सल्ल० ने मुझे अपने सीने से लगाया और कहा "हे अल्लाह ! इस को 'हिकमत' (तत्वदर्शिता) प्रदान कर[२०]।" एक 'रिवायत' में ये शब्द हैं: इस को किताब

कर ले और सासारिक प्रलोभनो के अवसर पर उदासीनता दिखाये किन्तु वह अपने वातावरण को बदलने मे सफल नही हो सकता। इस्लाम को एक जीवन-प्रणाली के रूप मे प्रचलित करने और 'शैतान' के उपद्रवो को दबाने के लिए 'दीन' की समझ अभीष्ट है। यही कारण है कि शैतान उन लोगो से अधिक भयभीत रहता है जो 'दीन' के मर्मज्ञ होते हैं, जिन्हे 'दीन' की समझ पूर्ण रूप से प्राप्त होती है।

१७. इस से मालूम हुआ कि इस्लाम आदेशो के अन्ध-अनुसरण का नाम कदापि नही है बल्कि इस 'दीन' की नीव ही समझ और तत्वदर्शिता पर रक्खी गई है। अत. 'इस्लाम' का इन्कार वह व्यक्ति नही कर सकता जो समझ-बूझ से काम लेता और वास्तविकताओ एव जीवन-तथ्यो को मन और मस्तिष्क के पूर्ण प्रकाश मे स्वीकार करता और हर प्रकार के पक्षपात से अलग हो कर केवल सत्य की इच्छा करता है।

१८. 'समझ' को 'इबादत' मे सम्मिलित किया गया बल्कि उसे श्रेष्ठतम 'इबादत' कहा गया। 'समझ' के बिना मनुष्य धर्म-आदेशो और 'इबादतो' के वास्तविक भाव, तत्व और अभिप्राय से अनभिज्ञ ही रहता है। इसीलिए 'समझ' (तफक्कुह) को मौलिक महत्व दिया गया है। एक 'हदीस' मे है · "लोगो मे सब से श्रेष्ठ वे हैं जो कर्म की दृष्टि से श्रेष्ठ हो, शर्त्त यह है कि वे 'दीन' मे समझ रखते हो।"

१९. यहाँ सयम या परहेजगारी के लिए 'वर्अ' शब्द प्रयुक्त हुआ है। 'वर्अ' वास्तव मे अल्लाह की अवज्ञा और गुनाहो से दूर रहने और उन कामो से बचने को कहते हैं जिन के अनुचित और अवैध होने का सन्देह होता है। उच्चतम सयम, परहेजगारी और निस्पृहता (जुहद) का नाम 'वर्अ' है।

२० तिरमिजी की एक 'रिवायत' है कि इब्न अब्बास रजि० ने कहा . "अल्लाह के रसूल सल्ल० ने मेरे लिए दो बार दुआ की कि अल्लाह मुझे "हिकमत' (तत्वदर्शिता और ज्ञान) प्रदान करे।"

(कुरआन) का ज्ञान दे[२१] । —बुखारी

१६ हजरत अबू सईद अनसारी रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० 'नमाज' (में खड़े होने) के समय हमारे कन्धों पर हाथ फेरते (ताकि हम पक्ति ठीक कर ले) और कहते बराबर हो जाओ और विभेद और अन्तर पैदा न करो, नही तो तुम्हारे दिलो मे फूट पड़ जायेगी । तुम में जो बुद्धिमान और समझ वाले हैं वे मुझ से निकट रहे फिर जो उनके समीप है, फिर जो उनके समीप हैं[२२] । —मुस्लिम

१७ हज़रत अब्दुल्लाह इब्न उमर रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा एक व्यक्ति 'नमाज़' भी पढता है, 'रोज़ा' भी रखता है, 'जकात' भी देता है, 'हज्ज' और 'उमरा' भी करता है—यहाँ तक कि आपने समस्त शुभ कर्मों की चर्चा की—परन्तु 'क़ियामत' के दिन उसे उसकी बुद्धि के अनुसार प्रतिदान दिया जायेगा[२३] । —बैहकी

१८ हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा श्रेष्ठ 'सदका' (दान) यह है कि एक 'मुस्लिम' व्यक्ति ज्ञान सीख कर अपने दूसरे मुस्लिम भाई को उसकी शिक्षा दे[२४] । —इब्न माजा

२१ कुरआन का ज्ञान स्वय सर्वथा 'हिकमत' (*Wisdom*) है ।

२२. इस 'हदीस' से बुद्धिमान और विवेकशील व्यक्तियो की श्रेष्ठता का भली-भाँति अनुमान किया जा सकता है कि उन्हे 'नमाज़' मे नबी सल्ल० के निकट स्थान मिल रहा है । नमाज़ की सफो (पक्तियो) मे बेढगापन और उन का तितर-बितर होना दिलो मे फूट पडने का कारण बन सकता है । बाह्य-प्रभाव अन्तर पर भी पडता है इसी लिए सफो (पक्ति) को ठीक रखने की ताकीद की गई ।

२३. यह 'हदीस' बताती है कि बुद्धि और समझ को 'दीन' मे मौलिक महत्व प्राप्त है । मनुष्य जितनी समझ, बुद्धि और विवेक के साथ अल्लाह की 'इबादत' करेगा और शुभ कार्यो मे लगा रहेगा उतना ही वह 'इबादत' और सत्कर्म के वास्तविक उद्देश्य से परिचित हो सकता है और ईश्वरीय आदेशो के अभिप्राय को पूरा कर सकेगा और उतना ही उसे अल्लाह का सामीप्य और आत्मिक आनन्द प्राप्त होगा । कुरआन मजीद मे भी बुद्धि और विवेक से काम लेने वालो की जगह–जगह प्रशसा की गई है । एक जगह कहा गया है : (कृपा-शील ईश्वर के अभीष्ट बन्दे तो वे हैं कि) जब उन्हे उन के 'रब' (पालन कर्त्ता स्वामी) की 'आयतो' के द्वारा चेताया जाता है, तो उन (आयतो) पर वे अन्धे और बहरे बन कर नही गिरते (बल्कि बुद्धि से काम लेते और उन से वास्तविक रूप मे प्रभावित होते हैं) ।

२४. अर्थात् 'सदका' और दान केवल माल ही मे नही होता बल्कि ज्ञान और

१६. हज़रत अनस बिन मालिक रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा क्या तुम जानते हो कि दानशीलता मे कौन सब से बढकर है ? लोगों ने कहा अल्लाह और उसके रसूल ज्यादा जानते है। आपने कहा दानशीलता में सब से बढ कर अल्लाह है, फिर आदम के बेटो (मानव-जाति) मे सबसे अधिक दानशील मैं हूँ और मेरे बाद दानशीलता में सब से बढकर वह है जिसने ज्ञान प्राप्त किया और उसको फैलाया[२५]। यह व्यक्ति 'कियामत' के दिन एक नायक की भाँति आयेगा। या आपने यह कहा कि यह एक समुदाय के रूप में आयेगा[२६]। —बैहकी

२० हज़रत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . स्वभाव सम्बन्धी दो बातें ऐसी है जो 'मुनाफिक' (द्वयवादी, कपटाचारी) में नही एकत्र हो सकती, एक सुशीलता, दूसरे 'दीन' की समझ (सूझ-बूझ)[२७]। —तिरमिज़ी

२१ हज़रत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है; वे कहते है कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना ससार और ससार की प्रत्येक वस्तु तिरस्कृत है सिवाय अल्लाह के स्मरण और उस चीज के जो उसके निकट हो और सिवाय ज्ञानी और ज्ञानार्थी के[२८]।

—तिरमिज़ी, इब्न माजा, बैहकी

'हिक्मत' (*Wisdom*) मे भी व्यय और दान होता है। श्रेष्ठतम दान ज्ञान और 'हिक्मत' ही का है कि स्वय भी ज्ञानार्जन करे और दूसरो को भी उस की शिक्षा दे ताकि वे भी उस से लाभान्वित हो सके।

२५. ज्ञानार्जन के पश्चात् उस के प्रचार मे प्रयत्नशील होना यदि दानशीलता है, तो उस के प्रसार एव प्रचार की ओर से उदासीन होना निकृष्टतम प्रकार की कृपणता होगी। कृपणता ऐसा दुर्गुण है जिस मे कोई भी अपने चरित्र को दूषित करना न चाहेगा।

२६ अर्थात् 'आखिरत' मे उस का पद ऊँचा होगा। उसे नायकता की प्रतिष्ठा और गौरव प्राप्त होगा।

२७. 'निफाक' (कपटाचार) ऐसा रोग है कि जिसे लग जाता है वह इन दो चीजो से वचित हो जाता है। 'मुनाफिक' (कपट-नीति अपनाने वाला) कभी सुशील एव चरित्रवान नही हो सकता और न उसे 'दीन' की समझ प्राप्त हो सकती है। अल्लाह 'मुनाफिको' का पथ-प्रदर्शन नही करता। 'मुनाफिक' में 'हदीस' मे वर्णित ये दोनो गुण कभी एकत्र नहीं हो सकते।

२८. अर्थात् ससार मे वास्तविक रूप से वही चीजे अपना मूल्य रखती हैं जिन का अल्लाह के स्मरण और ज्ञान से सम्बन्ध हो। जो चीजे इस से रहित है वे वास्तव मे मगल एव कल्याण से रहित है, अत उन्हे तिरस्कृत ही कहा

२२. हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० ने कहा : जिस व्यक्ति से ज्ञान की कोई बात पूछी जाये और वह उस को छिपा ले तो 'कियामत' के दिन उस के (मुँह मे) आग की लगाम दी जायेगी। —अबू दाऊद, तिरमिज़ी

२३ हज़रत अब्दुल्लाह इब्न मसऊद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह उस बन्दे को प्रफुल्लित रक्खे जिसने मेरी बात सुनी, उसे याद रक्खा और उसे (ठीक रूप में लोगों तक) पहूँचाया क्योंकि प्राय. ऐसा होता है कि समझ और विवेक की बात का वाहक स्वयं समझदार नही होता और ऐसा भी होता है कि समझ और विवेक की बात का वाहक ऐसे व्यक्ति तक बात पहुँचा देता है जो उससे कही ज्यादा विवेकशील होता है[२६]। —तिरमिज़ी, अबूदाऊद

२४ हज़रत अब्दुल्लाह बिन अम्र रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मेरी ओर से पहुँचाओ यद्यपि एक ही 'आयत' हो और 'बनी इसराईल' से (सुनी हुई 'रिवायतें') बयान करो इस में कोई हर्ज नही। और जो व्यक्ति जान बूझ कर झूठी बात का सम्बन्ध मुझ से जोडे उसे अपना ठिकाना ('जहन्नम') की आग में बनाना चाहिए। —बुख़ारी

२५, हज़रत ज़ियाद बिन लबीद रज़ि० कहते है कि नबी सल्ल० ने किसी (भयावह) चीज़ की चर्चा की और फिर कहा कि यह (आपदा और उपद्रव) ज्ञान के चले जाने के समय होगा। मैंने कहा · हे अल्लाह के 'रसूल' ! ज्ञान कसे चला जायेगा जबकि हम कुरआन पढते हैं और उसे अपनी औलाद को पढाते है और हमारी औलाद अपनी औलाद को पढायेगी ? आपने कहा · तुम्हारी माँ तुम्हे खोये ज़ियाद ! मैं तो तुम्हें मदीना का अत्यन्त समझदार एवं विवेकशील व्यक्ति समझता था क्या ये 'यहूदी' और नसारा (ईसाई) 'तौरात' और, इन्जील' नही पढते

जायेगा। अल्लाह के स्मरण और उसके प्रति आत्म-निवेदन और आज्ञा-पालन की भावना लौकिक कार्य-व्यापार को भी इतना पावन बना देती है कि हम उसे अल्लाह के स्मरण और अल्लाह के 'ज़िक्र' से भिन्न नहीं कह सकते। जो कार्य भी अल्लाह की प्रसन्नता के लिए नियमित रूप से किया जाये वह 'ज़िक्र' अर्थात् ईश-स्मरण ही है।

२६. इस 'हदीस' से नबी सल्ल० के सन्देश और आपके वचन को दुसरो तक पहुँचाने की श्रेष्ठता पर प्रकाश पडता है सारे लोग समान योग्यता के अधिकारी नही होते। यह असम्भव नही कि ज्ञान और मार्ग-दर्शन की बात पहुँचाने वाले से वह व्यक्ति समझ और बुद्धि मे बढा हुआ हो जिस तक बात पहुँचाई जा रही है और वह उस से ज्यादा-से-ज्यादा लाभान्वित हो सके।

(परन्तु फिर भी) जो-कुछ उनमें है उसका कुछ भी पालन नही करते।

—इब्नमाजा, तिरमिजी

२६. हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रजि० नबी सल्ल० से 'रिवायत' करते हैं कि आपनें कहा · मैं इस समुदाय में हर 'मुनाफिक' (द्वयवादी, कपटाचारी के दुष्कृत्य) से डरता हूँ, जो बाते तो 'हिकमत' (ज्ञान एवं तत्वदर्शिता) की करे, परन्तु कार्य उसका अत्याचार का हो।

—बैहकी : शोअबुल ईमान

२७. हजरत शद्दास बिन औस रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा : बुद्धिमान व्यक्ति वह है जो अपने आपको दबाए और मृत्यु के पश्चात् जो-कुछ है उसके लिए कर्म करे और निरुपाय एवं अक्षम व्यक्ति वह है जो अपनी (तुच्छ) इच्छाओं का दास हो और अल्लाह से (बड़ी-बड़ी) अभिलाषाये रखता हो। —तिरमिज़ी इब्न माजा

'इस्लाम' उस जीवन प्रणाली का नाम है जो स्वभाव से ही मनुष्य को अपेक्षित है। 'रसूलों' को भेज कर अल्लाह ने मनुष्य को जिन चीजो का स्मरण कराया है वे उन की अपनी प्रकृति और स्वभाव ही की माँगें हैं। इस्लाम विचार एवं व्यवहार का ऐसा विधान है जो बुद्धि-विवेक और हमारी प्रकृति के सर्वथा अनुकूल है। इसी कारण कुरआन ने 'इस्लाम' को 'सहज मार्ग' की उपमा दी है[1]। इस्लामी आदेशों का उल्लंघन वास्तव में अपनी प्रकृति और अपने स्वभाव का विरोध और अल्लाह की रचना को विकृत करना है[2]। 'इस्लाम' ने जिन चीजो का आदेश दिया है स्वभावतः उन्ही के द्वारा व्यक्ति को पूर्णता प्राप्त होती है। उन्ही से मनुष्य का व्यक्तित्व निखरता और विकसित होता है। और जिन बातो से इस्लाम ने रोका है वे वही हैं जो मनुष्य के व्यक्तित्व को विकृत करती हैं और वह अपने प्राकृतिक एवं स्वाभाविक उद्देश्यों को पूरा करने मे असफल रह जाता है। व्यक्ति की सिद्धि एवं पूर्णता *(Perfection)* और आत्मा की शुद्धि एवं विकास ही 'शरीअत' (कर्मकाण्ड) का मौलिक उद्देश्य है। यही कारण है कि कुरआन मे आत्म-शुद्धि और आत्म-विकास को अन्तिम लक्ष्य बताया गया है। एक जगह कहा गया "सफल हो गया जिसने उसे (आत्मा को) निखारा, और असफल हुआ जिसने उसे दबाया"।

—अश-शम्स ९-१०

एक दूसरी जगह कहा गया : "हमारे 'रब' उन लोगो के बीच उन्ही मे एक ऐसा 'रसूल' उठाना जो उन्हे तेरी 'आयते' पढकर सुनाये उन्हे किताब और 'हिकमत' की शिक्षा दे और उनकी आत्मा को शुद्ध (कर के उसे विकसित होने का अवसर प्रदान) करे।"

—अल-बकरा १२९

इस 'आयत' से मालूम हुआ कि 'रसूल' लोगो को कुरआन सुनाता

---

१ उदाहरणार्थ देखिए अल-फातिहा ७, अल बकरा १४२, २१३, आले इमरान ५१, १०१, अल-अनआम १२६, १५३, मरयम ३६, या सीन० ६१, अज़-जुख़रुफ ६१, ६४, अल-हिज्र ४१, अल-माइदा १६, यूनुस २५।

२ दे० सूर अन-निसा ११६।

और उन्हे 'शरीअत' (कर्मकाण्ड) और 'हिकमत' (तत्वदर्शिता, *Wisodm*)की शिक्षा देता है, और परिणाम की दृष्टि से उन की आत्मा को शुद्ध और विकसित करता है। शुद्ध एवं विकसित ('तजकिया') करने के शब्द स्वय इस वास्तविकता पर प्रकाश डालते हैं कि अल्लाह् को मनुष्य से कोई ऐसी चीज अपेक्षित नही है जो मनुष्य की अपनी प्रकृति अथवा स्वभाव के प्रतिकूल हो।[1] मनुष्य से केवल इस की माँग की गई है कि वह अपने व्यक्तित्व को विकसित करे और उन नैतिक गुणों की पूर्णता का आयोजन करे जो उस की प्रकृति में अन्तर्निहित है। 'इस्लाम' मे व्यक्ति की पूर्णता-प्राप्ति ही मूल वस्तु है। 'कियामत' मे प्रत्येक व्यक्ति को वास्तव में जिस चीज का हिसाब देना है वह यही कि ससार में अल्लाह् ने उसे जो शक्तियाँ और योग्यताये प्रदान की थी उन से काम ले कर वह स्वय क्या बन सका है ? वह अपना क्या व्यक्तित्व वना कर अल्लाह् की सेवा में पहुँचा है ? इस्लाम में सामाजिक व्यवस्था और सामाजिक विधान का महत्त्व इसलिए है कि वह व्यक्ति की पूर्णता-प्राप्त में सहायक होता है। सामाजिक जीवन में व्यक्ति एक ओर स्वयं अपनी पूर्णता को प्राप्त होता है दूसरी ओर दूसरे लोगो को पूर्णता की प्राप्ति में उस से सहयोग मिलता है। 'इस्लाम' ने न व्यक्ति को ऐसी स्वतन्त्रता दी है जिस से सामाजिकता को किसी प्रकार की हानि पहुँचे और न 'इस्लाम' में सामाजिकता को ऐसे अधिकार दिये गये हैं जो व्यक्ति से उस की वह स्वतन्त्रता छीन ले जो उस के व्यक्तित्व के विकास के लिए जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अभीष्ट है। 'इस्लाम' ने व्यक्ति और समाज मे अत्यन्त सन्तुलन स्थापित किया है। इस्लाम प्रत्येक दृष्टि से मनुष्य की प्रकृति और उस के व्यक्तित्व और सामाजिक अपेक्षाओ और आवश्यक्ताओं के नितान्त अनुकूल है। इस का अनुभव हर उस व्यक्ति को हुआ होगा जिस ने इस्लाम का अध्ययन एक 'दीन' और जीवन-व्यवस्था के रूप में किया होगा।

इस्लामी दृष्टिकोण से मानव-व्यक्तित्व का विकास सम्भव नही

---

१. इस्लाम वास्तव मे उन्ही वास्तविकताओ को, जो मानव-प्रकृति मे अन्तर्निहित हैं, प्रदर्शित कर के मनुष्य को उन से परिचित कराता है। वह 'ईमान' और कर्म की ओर बुद्धि एव विवेक ही के मार्ग से बुलावा देता है, वह मनुष्य को उसके वास्तविक स्वभाव एव प्रकृति और उसकी अपेक्षाओ से परिचित कराता है। यही कारण है कि कुरआन ने अपने को 'ज़िक्र' (अनुस्मारक) और 'तबसिरह' (आँखें खोलने की सामग्री) के नाम से प्रस्तुत किया है।

जब तक कि मनुष्य अपना और अपने प्रयास और साधनाओ का वास्तविक लक्ष्य ईश-प्रसन्नता को न ठहराये। ईश्वर की चाह और उस का प्रेम ही हमारे 'दीन' व 'ईमान' (धर्म व आस्था) का अन्तिम लक्ष्य है। अल्लाह के आज्ञापालन, उस की दासता और आत्म-निवेदन मे ही वास्तविक जीवन है जिस की मानव-प्रकृति को जिज्ञासा है। अल्लाह के उतारे हुये आदेशों का पालन किसी दमनकारी विधान की अधीनता स्वीकार करना कदापि नही हैं बल्कि यह ऐसे कानून का अनुपालन है जो स्वय अपनी प्रकृति का कानून और नियम है। अल्लाह का आज्ञापालन वास्तव मे एक ऐसे शासक का आज्ञापालन है जिसका राजसिंहासन स्वय हमारे हृदय की गहना है। अल्लाह का इन्कार करने के पश्चात् न केवल यह कि ससार अपनी प्रियता एवं आकर्षण से वचित हो जाता है बल्कि मानव-जीवन से शान्ति, परितोष और वास्तविक आनन्द सदैव के लिए विदा हो जाता है। जीवन जीवन के उच्चतम मूल्यो (*Values*) से वचित होकर रह जाता है। खाने-पीने और भोग-विलास के अतिरिक्त जीवन का कोई उच्च अभिप्राय और अर्थ शेष नही रहता। अल्लाह का दिखाया हुआ मार्ग और उसकी दासता एवं आज्ञापालन मे ही मनुष्य के लिए जीवन है। उसको सफलता का मार्ग इसके अतिरिक्त और कोई नही है कि वह अपने जीवन में वह पद्धति अपनाये जिसकी शिक्षा अल्लाह ने अपने नबियो के द्वारा दी है: "कह दो: अल्लाह का मार्ग-दर्शन ही (वास्तव में) मार्ग-दर्शन है, और हमें आदेश मिला है कि हम ससार के 'रब' (पालनकर्त्ता स्वामी) के लिए अपने-आपको अर्पण कर दे। और यह कि 'नमाज' कायम रक्खो और उसका डर रक्खो, वही है जिसके पास तुम इकट्ठे किये जाओगे।"

—अल-अनआम : ७१-७२

'नबी' जो आदेश और मार्ग-दर्शन (*Guidance*) से लेकर आये वह वास्तविक जीवन ही का मार्गदर्शन है। कुरआन के अतिरिक्त पुरातन ग्रन्थों मे भी इसका उल्लेख मिलता है। इञ्जील मे है "लिखा हुआ है कि मनुष्य केवल रोटी सें जीवित नही रहता बल्कि उस शब्द से जीवित रहता है जो ईश्वर की ओर से आता है।" —मत्ता ४.४

अर्थात् अल्लाह के हुक्म और आदेश से मानव को जीवन मिलता है। 'शरीअत' (कर्म काण्ड) के पालन में ही उसका वास्तविक जीवन है। कुरआन में कहा गया "क्या वह व्यक्ति जो मुरदा था फिर हम ने उसे जीवित किया, और उसके लिए प्रकाश कर दिया जिसको लिये हुये वह लोगो के बीच चलता-फिरता है, उस व्यक्ति की तरह हो सकता

है जो अधेरों में पडा हो, उन (अधेरो) से निकलने वाला ही न हो ?"

—अल-अनआम . १२२

कुरआन की इस 'आयत' में 'ईमान' को जीवन और 'शरीअत' (कर्म काण्ड) का पालन करने को प्रकाश लेकर चलना कहा गया है। जिस व्यक्ति को 'ईमान' न मिल सका और जिसे सत्यता का ज्ञान न हो सका वह निर्जीव पत्थर के समान है, उसे वास्तविक जीवन प्राप्त नही। जिसको जीवन का सीधा, सहज और स्वाभाविक मार्ग नही मिला वह उस व्यक्ति जैसा है जो अँधेरों में इधर-उधर भटक रहा हो और उसके पास कोई प्रकाश न हो जिस से वह उस मार्ग को अपना सके जो मजिल तक पहुँचाता है।

———

* عن ابى هريرة عن النبى صلى الله عليه وسلم ما من مولود الا يولد على الفطرة فابواه يهودانه او ينصرانه او يمجسانه كما تنتج البهيمة بهيمة جمعاء، هل تحسون فيها من جدعاء ثم يقول ابوهريرة واقرءوا ان شئتم فطرة الله التى فطر الناس عليها لا تبديل لخلق الله ذلك الدين القيم. بخارى، مسلم، ابوداؤد، ترمذى

१ हजरत अबू हुरैरा रज़ि० नबी सल्ल० से 'रिवायत' करते हैं कि कोई बच्चा ऐसा नही जो प्रकृति पर[1] पैदा न होता हो फिर उसके माता-पिता उसे 'यहूदी' या 'ईसाई' या 'मजूसी' बना लेते है[2] जैसा कि जानवर के पेट से भला-चगा जानवर पैदा होता है। क्या उनमें से किसी को तुम नाक, कान कटा पाते हो ? (उनके कान तो बाद मे लोग अज्ञान-पुर्ण प्रथा के अन्तर्गत काटते है[3]) ? फिर अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि यदि चाहो तो (इसकी पुष्टि के लिए कुरआन की यह 'आयत') पढ

१. अर्थात् प्राकृतिक एव स्वाभाविक गुणो और विशेषताओ के साथ।

२. मालूम हुआ कि 'इस्लाम' मानव का प्राकृतिक एव स्वाभाविक धर्म है। इस 'हदीस' मे 'प्रकृति' (फितरत) से अभिप्रेत 'इस्लाम' है, इसीलिए यहूदी, ईसाई तथा मजूसी धर्मों का उल्लेख उसके मुकाबले मे किया गया। इस 'हदीस' को कुछ 'रिवायतो' मे "प्रकृति पर" के स्थान पर "इस्लामी प्रकृति पर" और "इस मिल्लत (पन्थ) पर" के शब्द आये हैं जिनसे यह बात बिलकुल स्पष्ट हो जाती है कि इस 'हदीस' मे इस्लाम ही को "प्रकृति" (फितरत) कहा गया है। "प्रकृति" कहने का आशय यह है कि वह प्रकृति और मानवीय स्वभाव के सर्वथा अनुकूल है।

३ यहाँ एक महत्वपूर्ण वास्तविकता पर प्रकाश डाला गया है, वह यह कि मनुष्य ससार मे विशुद्ध प्रकृति लेकर आता है जिसका ही नाम 'इस्लाम' है। उसकी प्रकृति अल्लाह को अपना 'रब' (पालन-कर्त्ता स्वामी) और 'इलाह' (इष्ट, पूज्य) जानती और उसी के बताये हुए जीवन-मार्ग और स्वाभाविक नियमो से परिचित होती है। 'शिर्क' (बहुदेववाद), 'कुफ्र' (अधर्म), नास्तिकता और अज्ञानपूर्ण विचारो और कर्मो से उसकी प्रकृति का कोई ताल-मेल नही है।

लो "यह अल्लाह की (बनाई हुई) प्रकृति है जिस पर उसने लोगों को पैदा किया है। अल्लाह की प्रकृति में कोई परिवर्तन होने का नही है। यही ठीक (यथोचित) 'दीन' है[४]।

—बुखारी, मुस्लिम, अबूदाऊद, तिरमिज़ी

२ इयाज बिन हिमा अल-मुजाशिई से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने एक दिन अपने 'खुतबे' (भाषण) में कहा सुन लो! 'रब' ने मुझे आदेश दिया है कि जो-कुछ आज उसने मुझे बताया है मैं तुम्हे बता दूँ जिसे तुम नही जानते (उसने कहा है) कि जो माल (धन-सम्पत्ति आदि) मैंने किसी बन्दे को दिया वह उसके लिए वैध है। और मैंने अपने समस्त बन्दो (सेवको-दासो) का एकनिष्ठ (एक ईश्वर के होकर रहने वाले) पैदा किया, तत्पश्चात् उनके पास 'शैतान' आए और उन्हे उनके 'दीन' से हटा ले गये। उन्होंने उन पर वे चीजे 'हराम' (वर्जित) कर दो जिनको मेने उनके लिए 'हलाल' (अवर्जित) किया था, और उन्हें

मनुष्य तो ईश-ज्ञान की जिज्ञासा और उसकी उपासना एवं दासता की प्रेरणा लेकर आता है। प्रत्येक बालक उस वास्तविक प्रकृति के साथ जन्म लेता है, जो 'कुफ्र' और अधर्म से सर्वथा विमुक्त होता है। हर बच्चा स्वभावतः एकनिष्ठ होता है। यदि मनुष्य अपनी जन्मसिद्ध प्राकृति पर स्थिर रहे, तो 'इस्लाम' की शिक्षा ग्रहण करने मे उसे तनिक भी सकोच न हो। वह उसे इस प्रकार स्वीकार करेगा जैसे कोई अपनी जानी-पहचानी चीज को ग्रहण करता है, परन्तु होता यह है कि बिगडा हुआ वातावरण और उसके पथभ्रष्ट माता-पिता, आदि उसकी प्रकृति को विकृत करके उसे 'शिर्क' (अनेकेश्वरवाद) ओर मोड देते है। उसकी दशा उस जानवर जैसी होती है जिस को उस की माँ ने भला-चगा जन्म दिया हो, परन्तु किसी ने उसकी नाक और उसके कान काट कर उसका रूप बिगाड दिया हो। मनुष्य 'कुफ्र', 'शिर्क', नास्तिकता की ओर वे चीज़ें जो उसकी प्रकृति के प्रतिकूल हैं लेकर नही आता, परन्तु पथ-भ्रष्ट हो कर वह उन समस्त चीज़ें ग्रहण कर लेता है जो उसके स्वभाव और उस की सृष्टि के वास्तविक उद्देश्य के विरुद्ध होती हैं। कोइ भी व्यक्ति यह नही चाहेगा कि उसका कान या उसकी नाक कटी हुई हो या वह पैर का लगडा या आँखो का अन्धा हो लेकिन यह उसका दुर्भाग्य है कि वह अपनी प्रकृति को विकृत दशा मे देखना ही पसन्द नही करता बल्कि हठ भी करता है कि उसके व्यक्तित्व को विकृत अवस्था ही मे रहने दिया जाये।

४. कुरआन का यह टुकडा सूरा रूम की 'आयत' ३० से उद्धृत है। इस से भी इस बात की पुष्टि होती है कि मनुष्य का स्वाभाविक धर्म यह है कि वह एक

इस बात की ओर प्रेरित किया कि वे उन चीजो को मेरा साभी ठहरायें जिनके लिए कोई प्रमाण नही उतारा गया[५]। —मुस्लिम

३ अनस बिन मालिक रजि० से उल्लिखित है कि नबी० सल्ल० ने कहा : ' कियामत' के दिन एक नारकी व्यक्ति से कहा जायेगा कि बता यदि (तेरे पास) धरती की समस्त वस्तुये होती, तो क्या तू उन सबको इस (यातना) से बचने के लिए प्रतिदान के रूप में दे डालता ? आपने कहा वह कहेगा . हाँ। अल्लाह् कहेगा ' मैंने तुझ से इस से बहुत हल्की चीज चाही थी, जब तू आदम की पृष्ठ मे था तो मैने तुझ से वचन लिया था कि मेरे साथ किसी चीज को शरीक न करना, परन्तु तू माना नही, मेरे साथ (दूसरो को) शरीक करके रहा[६]। —बुखारी, मुस्लिम, अहमद

अल्लाह् का दास, आज्ञाकारी और उपासक हो जाये। इसी का नाम इस्लाम है। इस्लाम हमारे स्वभाव एव प्रकृति को आघात नही पहुँचाता बल्कि उसे निखारता और सँवारता है। इस धर्म का ज्ञान वास्तव मे मनुष्य की अपनी प्रकृति और अपने जीवन के उद्देश्य और अभिप्राय का ज्ञान है। जीवन के उद्देश्य और अभिप्राय का ज्ञान है। जीवन के इस उद्देश्य के प्रतिकूल आचरण कर के मनुष्य अपनी प्रकृति और अपने अस्तित्व को ऐसी हानि पहुँचाता है जिस की क्षति-पूर्ति सम्भव नही।

५. इस 'हदीस' का विषय पहली 'हदीस' से मिलता-जुलता है। इस 'हदीस' मे भी इस सत्यता का उल्लेख किया गया है कि अल्लाह् के अपने बन्दो को 'प्रकृति' (फितरत) पर एकनिष्ठ (एक अल्लाह का ही रहने वाला) पैदा किया है। लोग 'शैतानो' और गुमराह लोगो के बहकावे मे आ कर 'शिर्क' ग्रहण कर लेते हैं। और अल्लाह ने जिन चीजों को उन के लिए वैध किया है उन्हे अपने लिए वर्जित (हराम) कर लेते है। इस प्रकार विचार और व्यवहार दोनो पहलू से वे अपने स्वाभाविक धर्म से दूर हो जाते है।

इस 'हदीस' की कुछ 'रिवायतो' मे "एक निष्ठ" (हुनफा) के स्थान पर एकनिष्ठ मुस्लिम ('हुनाफाऽ मुस्लिमीन') के शब्द आये हुये है जिस से मालूम होता है कि अल्लाह् ने अपने बन्दो को एक निष्ठ मुस्लिम (मुस्लिमे हनीफ) पैदा किया था, 'इस्लाम' ही उन का जन्मसिद्ध और स्वाभाविक धर्म था। 'शिर्क' (बहुदेववाद) का समर्थन न आसमानी किताबो से होता है और न उस के लिये, विश्व से कोई प्रमाण प्रस्तुत किया जा सकता है।

६. इस 'हदीस' से भी इस बात की पुष्टि होती है कि 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) ही मानव का स्वाभाविक धर्म है। 'कुफ़' व 'शिर्क' का उस की प्रकृति से कोई जोड नही है। मानव-प्रकृति मे यह चीज़ समोई हुई है कि वह एक ईश्वर के अतिरिक्त किसी को अपना पूज्य, कष्ट-निवारक और अपनी काम-

४. हज़रत इब्न अब्बास रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसू० सल्ल० से कहा गया समस्त धर्मों में अल्लाह को सब से अधिक प्रिय कौन सा धर्म है ? आपने कहा "एक निष्ठता (एक प्रभु का हो रहना) जो अत्यन्त सरल और सहज है७।" —अहमद, अदबुल मफ़रद, तबरानी

नाओ और अभिलाषाओ का केन्द्र न बनाये। अल्लाह की बन्दगी करने और 'शिर्क' की गन्दगी से अपने आप को बचाये रखने का वचन स्वभावत. प्रत्येक व्यक्ति से लिया जा चुका है। कुरआन मे भी इस प्रतिज्ञा का उल्लेख विशेष ढग से किया गया है (दे० सूरा अल-आराफ १७२ १७३)। मानव-प्रकृति 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) और अल्लाह की प्रभुता के इकरार के साँचे मे ढाली गई है, इस के साथ यह बात भी असम्भव नही है कि अल्लाह ने हज़रत आदम के पैदा किये जाने के पश्चात् समस्त मानवो को, जो 'कियामत' तक पैदा होने वाले थे, एक साथ किसी रूप मे अपने सामने हाज़िर किया हो और उन्हे यह ज्ञान दिया गया हो कि उन का 'रब' (पालन-कर्त्ता स्वामी) केवल एक अल्लाह है। और उन से अल्लाह ने अपने 'रब' होने का इकरार भी कराया हो। यद्यपि यह इकरार आज हमे याद नही है फिर भी इस इक़रार की गहरी छाप हमारी आत्मा और हमारे मन मे वर्तमान है। 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) का इकरार मनुष्य की प्रकृति और उस की अन्तरात्मा की स्वाभाविक प्रेरणा है। पैगम्बर इसी इकरार को स्मरण कराते है। वे कोई नई चीज़ ले कर मनुष्यो के पास नही आते। आज यदि हमारे मस्तिष्क मे अल्लाह से किये हुये इकरार की याद को बाकी नही रक्खा गया, तो केवल इसलिए कि संसार मे हमारी प्रतीक्षा हो सके।

७. अर्थात् अल्लाह का प्रिय धर्म जो उस ने अपने बन्दो के लिए निर्धारित किया है यह है कि बन्दा अल्लाह के लिए सब ओर से एकाग्र हो जाये। वह एक अल्लाह की बन्दगी और आज्ञापालन करे और जीव का वही मार्ग ग्रहण करे जो उस की अपनी प्रकृति के अनुकूल है। जिस की शिक्षा अल्लाह ने दी है, जिस मे किसी तरह की सख्ती नही है। जो बहुत नर्म और सहज है। जिस मे न मानवीय प्रकृति के प्रतिकूल मनुष्य को ससार-त्याग की शिक्षा दी गई है कि वह घर-बार छोड कर जगल और पर्वतो की गुफाओ मे रहने लगे और न जिस मे मानव के आध्यात्मिक विकास के मार्ग मे शरीर को बाधक समझा गया है कि शरीर को कष्टो और यातनाओ के द्वारा दबाया जाए ताकि आत्मिक विकास का मार्ग सुगम हो सके। इस्लामी शिक्षा की दृष्टि से शरीर और आत्मा मे कोई विरोध नही है। शरीर आध्यात्मिक विकास के मार्ग मे सहयोग देता है जिस प्रकार उडने मे पक्षी के पख सहायक होते, है

५. हज़रत इब्न अब्बास से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : 'दीन' (धर्म) बहुत सहज है[८]।

—बुख़ारी, अहमद, अदबुल मुफ़रद

६ हज़रत जाबिर रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . अल्लाह ने मुझे मशक्कत में डालने वाला बनाकर नही भेजा, बल्कि मुझे सिखाने वाला और आसानी करने वाला बनाकर भेजा है[९]।

—मुस्लिम

बोझ नही होने। शरीर और शारीरिक गुण और विशेषताएं आध्यात्म-मार्ग मे सहायक होते है, शर्त यह है कि मनुष्य ईश्वर की निश्चित की हुई सीमाओ का उल्लघन न करे बल्कि ईश्वरीय आदेशो के अन्तर्गत जीवन व्यतीत करे।

८. मुसनद अहमद की एक 'रिवायत' मे है . "तुम्हारे सब 'दीनो' (धर्मों) मे अच्छा वह है जो सब मे सहज हो।'

९. नबी सल्ल० ने यह बात एक विशेष अवसर पर कही थी जब कि कुरआन मे आप की पत्नियो को दो बातो मे से एक बात को अगीकार करने के लिए कहा गया था या तो वे अल्लाह और 'रसूल' को अपनाये या सासारिक वैभव और धन-सम्पत्ति को। यदि वे दुनिया चाहती हैं, तो उन्हें 'रसूल' से नाता तोड लना पड़ेगा और यदि वे अल्लाह और 'रसूल' को चाहती है, तो उन के लिए 'आख़िरत' मे बडा प्रतिदान और पुरस्कार है (दे० अल-अहज़ाब : २८-२९)। नबी सल्ल० ने जब अपनी पत्नियो को अल्लाह के इस से सूचित करना चाहा, तो सब से पहले हज़रत आइशा रज़ि० से कहा कि मैं तुम्हारे सामने एक बात रखता हूँ और मैं चाहता हूँ कि तुम इस के बारे मे जल्दबाज़ी से काम न लो जब तक कि अपने माँ-बाप से सलाह न कर लो। आप को भय था कि कही जल्दबाज़ी मे वे कोई गलत फैसला न कर ले। माता-पिता से सलाह करेंगी, तो वे उन्हे ठीक सलाह देंगे। हज़रत आइशा रज़ि० ने कहा . हे अल्लाह के रसूल ! वह क्या बात है ? आप ने जब उन्हे अल्लाह का आदेश सुनाया, तो वे बोल उठी हे अल्लाह के रसूल ! क्या आप के सग रहने की बात भी ऐसी है जिस मे मैं अपने माता-पिता से सलाह करूँ। मैं अल्लाह और रसूल को चाहती हूँ। हाँ, मेरा एक निवेदन है, वह यह कि आप मेरे इस उत्तर की सूचना अपनी पत्नियो मे से किसी को न दे। आप ने कहा ' उन मे से जो भी पूछेगी मैं उसे तुम्हारे उत्तर से सूचित कर दूँगा। अल्लाह ने मुझे मशक्कत मे डालने वाला बना कर नही भेजा है, बल्कि मुझे सिखाने वाला और आसानी करने वाला बना कर भेजा है।" इस से मालूम होता है कि आप की हैसियत एक दयालु शिक्षक की है। आप लोगो को

७. हजरत अबू मूसा रजि० कहते है कि हम एक यात्रा मे अल्लाह के रसूल० के साथ थे। लोग उच्च स्वर से 'तकबीर' (अल्लाह की महानता का वर्णन) का उच्चारण करने लगे। इस पर अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : "हे लोगो! अपने-आप पर तरस खाओ। तुम उसे नही पुकार रहे हो जो सुनता न हो या यहा मौजूद न हो। तुम तो उसको पुकार रहे हो जो सुनने वाला और देखने वाला है और वह तुम्हारे ऊँट की गरदन से भी अधिक निकट है[१०]। —बुखारी, मुस्लिम

उसी बात की शिक्षा देते हैं जिस मे उन की भलाई और कल्याण है। आप की यह कामना होती है कि लोग सीधे मार्ग पर चलने लग जायें। इस के लिए हर वह उपाय करते हैं जो आप कर सकते है।

१० मालूम हुआ कि नबी सल्ल० जिस 'दीन' या धर्म की शिक्षा और प्रचार के लए भेजे गए थें मानव-प्रकृति और बुद्धि, दोनो से, उस की पुष्टि होती है। वह न मानव-प्रकृति के प्रतिकूल है और न उसे बुद्धि-विरुद्ध धर्म कहा जा सकता है। सच्ची बात यह है कि वह हमारी प्रकृति और बुद्धि दोनो के लिए आहार समान है, उस से हमारी बुद्धि को शक्ति और हमारी आत्मा और प्रकृति को बल प्राप्त होता है।

ईश्वर की कल्पना

इस्लाम की सम्पूर्ण व्यावहारिक और विचार सम्बन्धी व्यवस्था मे जिस चीज़ को मौलिक एवं केन्द्रीय स्थान प्राप्त है वह 'अल्लाह' में विश्वास है। दूसरी धारणाये और आदेश वास्तव मे इस एक मूल की शाखाये हैं। जितने भी विचार, आदेश और मान्यताये हैं उनमें दृढता और सार्थकता अल्लाह में विश्वास द्वारा ही आती है। यदि इस एक केन्द्र से निगाह हटा ली जाये, तो प्रत्येक चीज अर्थहीन हो जायेगी और इस्लाम की सम्पूर्ण व्यवस्था, चाहे उसका सम्बन्ध विचार एव आस्था से हो या व्यवहार से, छिन्न-भिन्न हो जायेगी।

इस्लाम मे अल्लाह को मानने और उस पर 'ईमान लाने' का अर्थ केवल इतना ही नही है कि अल्लाह मौजूद है बल्कि इस विश्वास मे अल्लाह की सत्ता और उसके गुणो की उचित और पूर्ण कल्पना पाई जाती है। यह विश्वास हमें अल्लाह की सत्ता और उसके गुणो की जो कल्पना देता है उसका हमारे जीवन से गहरा सम्बन्ध है। यही कारण है कि इस्लाम अल्लाह मे विश्वास द्वारा केवल यही नही कि आत्मा की शुद्धि एव विकास और नैतिक सुधार का काम लेता है बल्कि इसी को उसने जीवन के समस्त कार्य-कलाप और मानवीय सभ्यता एव सस्कृति की आधार-शिला माना है।

'इस्लाम' ने प्रभुता एव ईश्वरत्व की जो कल्पना प्रस्तुत की है उस की दृष्टि से 'इलाह' (प्रभु एव पूज्य) और ईश्वर वही हो सकता है जो परम-स्वतन्त्र निरपेक्ष और सर्व शक्तिमान हो, जो सदा से हो और सदैव रहने वाला हो। जिसे प्रत्येक चीज का ज्ञान हो, जो तत्वदर्शी, ज्ञान एवं बुद्धि का स्रोत हो, जिस शक्ति के आधीन सब हो और जिसकी दयालुता अत्यन्त व्यापक हो। जिसके अधिकार में जीवन और मृत्यु, हानि और लाभ सारी चीजे हो। जिसकी कृपा दृष्टि और जिसकी रक्षा के सभी आश्रित हों। जिसकी ओर सबकी वापसी हो। जो सबका हिसाब लेने वाला हो, और जिसे किसी को दण्ड देने या पुरस्कृत करने का पूर्ण अधिकार हो। प्रभुता एव ईश्वरत्व कोई ऐसी वस्तु नही है जिसे विभिन्न भागों मे विभक्त किया जा सके या जिसका वितरण सम्भव हो। उसे

काया और सन्तानोत्पत्ति आदि वृत्ति से लिप्त समझना भी सही न होगा। समस्त ईश्वर गुण केवल एक सत्ता मे एकत्र माने जा सकते हैं और वह अल्लाह ही की सत्ता है। अल्लाह की सत्ता सर्वोच्च है। विश्व की सब चीजें उसी के आधीन और आश्रित हैं। वही इस अखिल विश्व का व्यवस्थापक और नियता है। उसी का कोप अक्षय है। मनुष्य का कर्तव्य है कि वह उसकी महानता एवं महत्ता को पहचाने। उसके आगे झुके, उस से डरे, उसी से आशा करे, उसी पर उसका भरोसा हो। माँगे तो उस से माँगे। दुख और सकट में पुकारे तो उसे ही पुकारे। उसी के पास सब को लौटकर जाना है। वही हमारे शुभाशुभ कर्मों का हिसाब लेने वाला है। वही है जिसके निर्णय पर मनुष्य का अच्छा या बुरा परिणाम निर्भर है। 'तौहीद' या एकेश्वरवाद की यही धारणा है जिसकी शिक्षा पिछले समस्त 'नबियों' ने दी है। इस धारणा का मानव-जीवन पर गहरा प्रभाव पडता है। अल्लाह पर 'ईमान' मनुष्य को ईश्वरीय आदेश और उसके नियत किए हुए नियमो और विधान का पाबन्द बनाता है और उसके अन्दर उत्तरदायित्व का एहसास पैदा करता है। अल्लाह पर 'ईमान' रखने वाला व्यक्ति यह समझता है कि उसका अल्लाह प्रत्येक अवस्था में उसे देखता है। वह उसकी पकड से बच नही सकता। इसलिए वह, अकेला हो या लोगो के साथ हो, हर दशा में अल्लाह से डरता और उसके दिए हुए नियमों और उसकी निश्चित की हुई सीमाओं व मर्यादाओ का आदर करता है। फिर अल्लाह में विश्वास उसे नैतिकता एव चरित्र के उच्चतम स्तर तक पहुँचाता है। अल्लाह पर 'ईमान' रखने वाला कभी सकीर्ण-दृष्टि नही हो सकता। और न उसे गर्व और अहकार का रोग लग सकता है। वह जानता है कि अखिल विश्व ईश्वर का है। उसकी मित्रता और शत्रुता अपने लिए नही, अल्लाह के लिए होती है। इस तरह उसकी सहानुभूति, प्रेम और सेवा का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत हो जाता है। वह जानता है कि उसे जो-कुछ प्राप्त है वह अल्लाह का दिया हुआ है, फिर वह गर्व कैसे कर सकता है। अल्लाह में विश्वास रखने के परिणामस्वरूप वह विनम्र ही होगा न कि अहकारी और उद्दड। अल्लाह पर ईमान रखने के परिणामस्वरूप मनुष्य को आत्म गौरव और स्वाभिमान का उच्च स्थान प्राप्त होता है। वह अल्लाह ही को समस्त शक्तियों का स्वामी समझता है। उसका विश्वास होता है कि अल्लाह ही के अधिकार में हानि-लाभ, जीवन-मरण सब कुछ है। अत वह अल्लाह के सिवा किसी से नही डरता। अल्लाह के सिवा किसी के आगे उसकी गरदन नही झुकती। वह अल्लाह के सिवा समस्त शक्तियों से निर्भय होकर अपने कर्तव्य-पालन में

लग जाता है। उसका 'ईमान' है कि उसका अल्लाह निरपेक्ष और न्याय-शील है। उसका कानून बेलाग है। किसी को उसके ईश्वरत्व में हस्तक्षेप करने का अधिकार प्राप्त नही है कि उसकी पकड़ से किसी को बचा सके। उसके यहा आत्मा की शुद्धता और सत्कर्म के अतिरिक्त और कोई चीज़ काम आने वाली नही है इसलिए वह किसी से गलत और अनुचित आशाएँ नही रखता। उसका अल्लाह अक्षय कोष और अपार शक्तियों का स्वामी है, इसलिए न वह निराश होता है और न साहस छोड़ता है। उसमें धैर्य, सन्तोष, दृढता और वीरता की वह शक्ति होती है कि बड़ी-से-बड़ी विरोधी शक्तियां भी उसका मार्ग नही रोक सकती। वह लोभी और लालची नही होता, उसे अत्यन्त निस्पृह होता है। वह अल्लाह की कृपा और उसकी प्रदान की हुई जीविका का इच्छुक होता है, परन्तु जीविको-पार्जन के लिए किसी निकृष्ट उपाय का अवलम्बन कदापि नही करता। वह जानता है कि अल्लाह अपने ज्ञान और तत्वदर्शिता (*wisdom*) के अन्तर्गत जिसको जो-कुछ चाहता है प्रदान करता है। वह अल्लाह के फैसले पर राजी होता है और अपने कर्तव्य-पालन के लिए अधिक-से-अधिक सचेष्ट रहता है।

अल्लाह पर ईमान

عَنِ ابْنِ عُمَرَ قَالَ، قَالَ رَسُولُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ: بُنِيَ الْإِسْلَامُ عَلٰى خَمْسٍ
شَهَادَةِ أَنْ لَّا إِلٰهَ إِلَّا اللّٰهُ وَأَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُهُ وَرَسُولُهُ، وَإِقَامِ الصَّلٰوةِ، وَإِيتَاءِ
الزَّكٰوةِ، وَالْحَجِّ، وَصَوْمِ رَمَضَانَ. —— بخاری، مسلم

१ हजरत अब्दुल्लाह इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'इस्लाम' की बुनियाद पाँच चीजो पर रक्खी गई है इस बात की गवाही देना कि अल्लाह के अतिरिक्त कोई 'इलाह' (पूज्य प्रभु) नही और यह कि मुहम्मद अल्लाह के बन्दे और उस के 'रसूल' हैं. और 'नमाज' कायम करना 'जकात' देना और 'हज्ज' करना और 'रमजान' के 'रोजे' रखना[1]। —बुखारी, मुस्लिम

---

१ यही इस्लाम के पाँच 'अरकान' (स्तम्भ) हैं जिन पर 'दीन' के विशाल भवन का निर्माण होता है। केवल अल्लाह को 'इलाह' (पूज्य प्रभु) मानने का अर्थ यह है कि मनुष्य यह स्वीकार करे कि अल्लाह ही हमारा उपास्य, स्वामी और शासक है, सब उसी के आश्रित है। वही है जिस की चाह, अभिलाषा और खोज की प्रेरणा हमारी प्रकृति मे रक्खी गई है। उस के सिवा कोई दूसरा हमारी साधना और प्रयास का केन्द्र या लक्ष्य नही बन सकता। उस के सिवा कोई नही जिस की इच्छा हमारे जीवन का उद्देश्य बन सके।

अल्लाह के बारे मे यथार्थ ज्ञान उसके 'रसूलो' के द्वारा होता है। 'रसूल' ही बताते हैं कि अल्लाह की इच्छा के अनुसार जीवन किस प्रकार व्यतीत किया जाए। इसलिए 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) और अल्लाह के प्रभुत्व को मानने के साथ 'रिसालत' (ईशदूतत्व) को मानना भी आवश्यक है। 'रसूलो' मे सबसे अन्तिम 'रसूल' हजरत मुहम्मद सल्ल० हैं। जीवन का यथार्थ पाने के लिए आवश्यक है कि आपकी 'रिसालत' को माना जाये और आपके नेतृत्व और मार्ग-दर्शन को स्वीकार किया जाये।

'नमाज' एक ओर अल्लाह का स्मरण और उसकी उपासना है दूसरी ओर वह हमारी अपनी दासता का प्रदर्शन और आत्मनिवेदन भी है। 'नमाज'

प्रत्येक दिन कई बार अल्लाह का स्मरण कराती है और उसके सर्वव्यापी एव सर्वज्ञाता होने की याद ताज़ा करती और हमारे हृदय मे उसका प्रेम-भाव भरती रहती है। 'नमाज़' हमे सचेत करती रहती है कि एक दिन हमे अल्लाह की अदालत मे पेश होना है। अल्लाह के न्यायालय मे सफल होने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य अपना सम्पूर्ण जीवन अल्लाह के आज्ञापालन मे व्यतीत करे।

'रोज़े' के द्वारा इन्द्रियनिग्रह मे हमे सफलता मिलती है। आत्मसयम के के निए रोज़ा अत्यन्त आवश्यक है। 'रोज़े' के द्वारा हम अपनी इच्छाओ पर काबू पा सकते हैं। फिर हम अल्लाह की खुशी के मुकाबले मे किसी चीज़ को प्रधानता नही दे सकते। अल्लाह के लिए हम हर चीज़ से मुख मोड सकते है। उसकी प्रसन्नता के लिए हर सुख और आनन्द को त्याग सकते हैं, हर कठिनाई और सकट का मुकाबला कर सकते हैं। हम मे कर्तव्य-परायणता की वह भावना जाग्रत हो जाती है कि हम अल्लाह की इच्छा के विरुद्ध कोई काम नही कर सकते।

'ज़कात' हमे याद दिलाती है कि अल्लाह के अलावा हम पर उसके बन्दो का भी हक है। हमारा यह परम कर्तव्य है कि हम दूसरो के काम आए और कमज़ोरो और दीन-दुखियो का सहारा बनें। 'ज़कात' के द्वारा हमारे मन से धन का मोह निकल जाता है। नैतिक दृष्टि से हम ऊँचे उठते हैं। हमारा मन पवित्र होता है। मन की सकीर्णता दूर होती है। हमारा सम्पूर्ण जीवन प्रकाशमान हो जाता है। मनुष्य की आत्मा सन्दूको और तिजोरियो मे बन्द होकर रह जाये इससे बढकर कारावास क्या हो सकता है? जिस प्रकार दीपक अपने को और अपने वातावरण को प्रकाशित रखने के लिए बडी उदारता से अपने पात्र मे सचित तेल खर्च करता है ठीक उसी प्रकार 'ज़कात', 'सदका' और दान के द्वारा एक ओर मनुष्य जन-समाज के काम आता है तो दूसरी ओर वह अपनी आत्मा को विकसित करता और उसे वास्तविक स्वतन्त्रता और आत्मिक आनन्द से आलिंगित करता है। त्याग और दान द्वारा मनुष्य अपना अहित नही करता बल्कि अपनी आत्मा को उज्ज्वल और विशाल बनाता है। वह उस दीपक के समान नही होता जो अपने पात्र का समस्त तेल सुरक्षित रखने के लिए सदैव बुझा रहता है।

'हज्ज' हमारे हृदय मे अल्लाह की महानता और उसके प्रेम की अमिट छाप अकित करता है। 'हज्ज' के द्वारा हमे इस्लाम से ऐसा हार्दिक लगाव हो जाता है जो सदा बाकी रहने वाला होता हैं: 'हज्ज' हमे इसके लिए तैयार करता है कि हमारी समस्त चेष्टाये और दौड-धूप 'इस्लाम' की उच्चता के लिए हो।

२. हजरत अनस बिन मालिक रजि० कहते हैं कि हम (लोगो) को वर्जित कर दिया गया था कि अल्लाह के रसूल सल्ल० से (बिना विशेष आवश्यकता के) कुछ पूछे, तो हमें इस बात से खुशी होती थी कि कोई बुद्धिमान बदवी (ग्रामीण) आये और आप से कुछ पूछे और हम सुनें। तो बदवी लोगों में से एक व्यक्ति आया और उस ने कहा हे मुहम्मद ! आप का दूत हमारे पास आया और हम से बयान किया कि आप का कहना है कि अल्लाह ने आप को 'रसूल' बना कर भेजा है। आप ने कहा उस ने सच कहा। फिर उस व्यक्ति ने कहा आकाश को किस ने पैदा किया ? आप ने कहा अल्लाह ने। उस ने कहा . धरती को किस ने पैदा किया ? आप ने कहा . अल्लाह ने। फिर उस ने कहा ये पर्वत किस ने खडे किये हैं और इन मे जो कुछ बनाया है, वह किस ने बनाया है ? आप ने कहा अल्लाह ने। उस ने कहा · तो कसम है उस की जिस ने आकाश और धरती को पैदा किया और ये पर्वत खडे किये, क्या अल्लाह ने आप को भेजा है ? आप ने कहा . हाँ[२]। उस ने कहा · आप के दूत ने बयान किया कि हम पर हमारे मालो (धन-सम्पत्ति) में 'ज़कात' भी अनिवार्य है। आप ने कहा · उस ने सच कहा। उस ने कहा : कसम है उस की जिस ने आप को 'रसूल' बना कर भेजा है, क्या अल्लाह ने आप को इसका आदेश दिया है ? आप ने कहा · हाँ। उस ने कहा · आप के दूत ने बयान किया था कि वर्ष में रमजान-मास का 'रोजा' भी हम पर अनिवार्य है। आप ने कहा . उस ने सच कहा। उस ने कहा कसम है उस की जिस ने आप को 'रसूल' बना कर भेजा है, क्या अल्लाह ने आप को इस का आदेश दिया है ? आप ने कहा हाँ। उस ने कहा आप के दूत ने यह भी बयान किया कि हम में से उस पर अल्लाह के घर ('काबा') का 'हज्ज' अनिवार्य है जो उस तक पहुँचने का सामर्थ्य रखता हो[३]। आप ने कहा उस ने सच कहा। 'रावी' ('हदीस' के उल्लेख-कर्त्ता) बयान करते हैं कि फिर वह व्यक्ति यह कहता हुआ वापस हुआ कि उस की कसम जिस ने आप को 'हक' (सत्य) के साथ भेजा है मैं इन में (अपनी ओर से) न कुछ बढाऊँगा और न इन मे कोई कमी करूँगा। इस पर नबी सल्ल० ने कहा यदि यह सच्चा है तो अवश्य 'जन्नत' में प्रवेश करेगा।

—बुखारी, मुस्लिम

२. अर्थात् हमे अपना 'रसूल' बनाकर उसी ने भेजा है जो आकाश, धरती और सारे ससार का सृष्टिकर्त्ता है।

३. अर्थात् जो व्यक्ति इसका सामर्थ्य रखता हो कि मक्का की यात्रा कर सके उसके लिए 'हज्ज' करना अनिवार्य है।

३ हज़रत अली इब्न अबी तालिब रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . कोई बन्दा 'ईमान' वाला नही हो सकता जब तक कि वह चार चीजों पर 'ईमान' न लाये इस बात की गवाही दे कि अल्लाह के सिवा कोई 'इलाह' (इष्ट, पूज्य प्रभु) नही और यह कि मैं, मुहम्मद अल्लाह का 'रसूल' हूँ, मुझे उस ने 'हक' (सत्य) के साथ भेजा है और मृत्यु पर 'ईमान' लाये (कि वह आने वाली है) और मृत्यु के पश्चात् (दुबारा जीवित कर के) उठाये जाने पर 'ईमान' लाये और तक-दीर (भाग्य) पर 'ईमान' लाये। —तिरमिज़ी

४ हजरत सुफयान बिन अब्दुल्लाह सकफी रजि० कहते है कि मैंने कहा हे अल्लाह के रसूल ! मुझे 'इस्लाम' के बारे में ऐसी बात बता दीजिए कि आप के बाद फिर मैं किसी से इस के बारे में कुछ न पूछूँ। आप ने कहा कहो मैं अल्लाह पर 'ईमान लाया' फिर (इसी पर) जमे रहो[४]। —मुस्लिम

५ हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल

४ इस 'हदीस' मे सक्षिप्त शब्दो मे सम्पूर्ण 'दीन' (धर्म) का साराश प्रस्तुत कर दिया गया है। अल्लाह पर 'ईमान लाना ही वास्तव मे 'दीन' का मूल आधार है। अल्लाह पर ईमान लाने का अर्थ केवल इतना ही नही होता कि मनुष्य अल्लाह की सत्ता को स्वीकार कर ले बल्कि इसके साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि वह अल्लाह को उसके समस्त गुणो के साथ माने और उसके प्रति अपने समस्त कर्तव्यो का निर्वाह करे। वही व्यक्ति सफल है जो अल्लाह पर 'ईमान' लाये और उसके सृष्टि-कर्त्ता, 'रब' स्वामी और शासक होने को स्वीकार करे और इस पर जमा रहे, किसी भय या लोभ के कारण वह अपने 'ईमान' से न फिरे। अल्लाह को मानने और उसकी दासता की प्रतिज्ञा करने के पश्चात् इस पर दृढ रहना जीवन का सब से बडा सौभाग्य है। कुरआन मे ऐसे लोगो के विषय मे कहा गया है "निश्चय ही जिन लोगो ने कहा हमारा 'रब' अल्लाह है, फिर वे कायम रहे, तो उन्हे न तो कोई भय होगा और न वे दुखी होगे। ये 'जन्नत' (मे वास करने) वाले लोग है, उसमे सदैव रहेगे, *यह बदला होगा उसका जो वे करते थे।'* (अल-अहकाफ़ : १३-१४)। कुरआन मे एक-दूसरे स्थान पर कहा गया है "जिन लोगो ने कहा हमारा 'रब' अल्लाह है फिर जमे रहे, उन पर 'फिरिश्ते' उतरते हैं, कि डरो नही और न दुखी हो, बल्कि उस 'जन्नत' की खुशखबरी (शुभ सूचना) लो जिसका तुम से वादा किया गया था। हम सांसारिक जीवन मे भी तुम्हारे साथी है। और आखिरत मे भी (तुम्हारे साथी हैं)" (हा० मीम० अस-सजदह . ३०-३१)

सल्ल० ने कहा तुम में से किसी-किसी के पास 'शैतान' आता है और कहता है कि अमुक वस्तु को किस ने पैदा किया ? अमुक वस्तु को किस ने उत्पन्न किया ? यहाँ तक कि वह कहता है कि तुम्हारे 'रब' (पालन-कर्त्ता प्रभु) को किस ने पैदा किया ? जब बात यहाँ तक पहुँच जाये, तो चाहिए कि वह अल्लाह से पनाह माँगे और रुक जाये[५]।

—बुखारी, मुस्लिम

६. हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा लोग एक-दूसरे से प्रश्न करते रहेंगे यहाँ तक कि कहा जायेगा कि समस्त सृष्टि को तो अल्लाह ने पैदा किया, अच्छा अल्लाह को किस ने पैदा किया ? तो जब कोई व्यक्ति इस प्रकार कोई बात पाये, तो उसे चाहिए कि कहे . अल्लाह और उस के 'रसूलो' पर मेरा 'ईमान' है[६]।

७ हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा लोग सदैव परस्पर प्रश्न करते रहेंगे यहाँ तक कि कहा जायेगा कि सृष्टि की रचना तो अल्लाह ने की, अच्छा अल्लाह को किस ने पैदा किया ? जब लोग इस प्रकार की बाते करे तो कहो अल्लाह यकता है ! अल्लाह निराधार एव सर्वाधार है ! उस के कोई औलाद

---

५. अर्थात् 'शैतान' लोगो के दिलो मे इस तरह के भ्रम और वसवास डालता है कि जब समस्त चीज़ो और सारी सृष्टि का सृष्टि-कर्त्ता अल्लाह है, तो अल्लाह का भी कोई सृष्टि-कर्त्ता होना चाहिए। जब इस तरह की भ्रमयुक्त भावनायें मन मे उत्पन्न हो, तो इनको शैतान के वसवास समझ कर अल्लाह की पनाह माँगनी चाहिए और अपने ध्यान को इधर से हटा लेना चाहिए। कुरआन करीम मे भी शैतानी वसवास से सुरक्षित रहने के लिए यही शिक्षा दी गई है कि ऐसी हालत मे अल्लाह की पनाह लेनी चाहिए, दे० हा० मीम अस-सजदह ३६, अन-नहल ९८-९९, अल-फलक, अन-नास।

६. यह शिक्षा उन लोगो को दी जा रही है जो अल्लाह और रसूल पर 'ईमान' रखते हैं। कहा जा रहा है कि जब 'ईमान' वालो के सामने इस प्रकार की बाते आएँ जो ईमान के प्रतिकूल हैं तो ऐसी बातो को यह कहकर रद्द कर देना चाहिए कि हमारा तो अल्लाह और 'रसूल' पर 'ईमान' है। हम ऐसे कुतर्क मे नही पड सकते। वह अल्लाह ही क्या हुआ जिसके विषय मे माता-पिता का प्रश्न उठता हो। इस प्रकार की बाते वही कर सकता है जिस का दिल 'ईमान' से खाली हो या जो बुद्धि और विवेक का शत्रु हो।

नही और न वह किसी की औलाद है। और कोई नही जो उस के बराबर का हो[७]। फिर तीन बार अपनी बाई ओर थूको[८] और तिरस्कृत 'शैतान' से अल्लाह की पनाह चाहो। —अबू दाऊद

---

७. अर्थात् जब इस तरह की बाते कही जाने लगें और इस प्रकार के बेहूदा प्रश्नो मे उलझने लगें कि सबका सृष्टिकर्त्ता तो अल्लाह है आखिर अल्लाह का सृष्टा कौन है, तो तुम्हे सूरा अल-इखलास पढनी चाहिए जिसमे अल्लाह के मौलिक गुणो का उल्लेख किया गया है। जिसमे एकेश्वरवाद का पूर्णतः प्रदर्शन हुआ है। सूरा अल-इखलास मे अल्लाह का यह गुण बयान हुआ है कि वह 'यकता' है। उस जैसा कोई नही। फिर उसके प्रति उस प्रकार सोचना जिस प्रकार हम सृष्टि की दूसरी चीजो के बारे मे सोचते है अन्याय नही तो और क्या है ?

अल्लाह का दूसरा गुण जो इस सूरा मे बयान हुआ है वह यह है कि वह निराधार और सर्वाधार है। वह सर्वथा पूर्ण है। उसमे कोई कमी और अपूर्णता हो ही नही सकती। अत उसकी सत्ता के विषय मे वास्तव मे यह प्रश्न ही नही उठता कि उसका स्रष्टा कौन है। यदि यह मान लिया जाये कि उसका कोई सृष्टि कर्त्ता है, तो इसका अर्थ यह होगा कि वह अपने अस्तित्व मे किसी दूसरे का आश्रित है। जब वह किसी दूसरे का मुहताज हुआ, तो फिर उसकी सत्ता को पूर्ण कैसे कह सकते हैं ? अल्लाह तो वही हो सकता है जो अपने अस्तित्व और अनश्वरता मे किसी दूसरे का आश्रित न हो, वह सदा से हो। यदि वह सदा से है, तो फिर उसका कोई शरीक और सहभागी नही हो सकता। इसलिए कि अमरता और अनश्वरता के लिए पूर्णता अपेक्षित है और पूर्णता के लिए यकताई अनिवार्य शर्त्त है। यदि हम कई ईश्वर मानते है तो शक्ति और अधिपत्य विभिन्न ईश्वरो मे विभक्त हो जायेगा। फिर हम किसी एक ईश्वर के बारे मे भी नही कह सकते कि वह अपार शक्ति और अधिपत्य का स्वामी है। जब शक्ति और अधिपत्य सीमित हो गए तो फिर कोई एक ईश्वर भी महान् और अपूर्णतारहित नही रहा। इसलिए मानना पडेगा कि ईश्वर यकता है। वह निराधार और सर्वाधार है। फिर जो यकता, परम-स्वतन्त्र और निरपेक्ष है वह सदा से होगा। और जो सदा से होगा उसके लिए किसी स्रष्टा का प्रश्न ही कब उठता है।

अल्लाह की यकताई और उसकी निरपेक्षता के पश्चात् कहा गया . "उसके कोई औलाद नही और न वह किसी की औलाद है और कोई नही जो उसके बराबर का हो।" यह स्पष्ट ही है कि जो यकता और अद्वितीय होगा

वह किसी का बाप या बेटा कैसे हो सकता है और कोई उसकी बराबरी का कैसे होगा ? यदि उसकी औलाद मान ली जाये, तो उसकी यकताई कहा शेष रहती है ?

८ यह वसावस का मनोवैज्ञानिक उपचार भी है और 'शैतान' और दूसरे [illegible] के प्रति घृणा का प्रदर्शन भी है ।

पवित्रता एवं पावनता

عَنْ اَبِیْ هُرَیْرَةَ رض قَالَ قَالَ رَسُوْلُ اللهِ صَلَّی اللهُ عَلَیْهِ وَسَلَّمَ قَالَ اللهُ تَعَالٰی كَذَّبَنِیْ اِبْنُ اٰدَمَ وَلَمْ یَكُنْ لَّهٗ ذٰلِكَ وَشَتَمَنِیْ وَلَمْ یَكُنْ لَّهٗ ذٰلِكَ فَاَمَّا تَكْذِیْبُهٗ اِیَّایَ فَقَوْلُهٗ لَنْ یُّعِیْدَنِیْ كَمَا بَدَاَنِیْ وَلَیْسَ اَوَّلُ الْخَلْقِ بِاَهْوَنَ عَلَیَّ مِنْ اِعَادَتِهٖ، وَاَمَّا شَتْمُهٗ اِیَّایَ فَقَوْلُهُ اتَّخَذَ اللهُ وَلَدًا وَاَنَا الْاَحَدُ الصَّمَدُ الَّذِیْ لَمْ اَلِدْ وَلَمْ اُوْلَدْ وَلَمْ یَكُنْ لِّیْ كُفُوًا اَحَدٌ۔ ——— احمد، بخاری، مسلم، ابوداؤد، نسائی

१ हजरत अबू हुरैरह रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि सर्वोच्च ईश्वर कहता है आदम के बेटे ने मुझे झुठलाया यद्यपि उसे यह न चाहिए था और उस ने मुझे गाली दी यद्यपि उसे यह न चाहिए था। उस का झुठलाना तो यह है कि वह कहता है कि जिस तरह (अल्लाह ने) मुझे पहली बार पैदा किया है वह (मरने के पश्चात्) दोबारा मुझे कदापि नही जीवित करेगा हालाँकि मेरे लिए पहली बार पैदा करना उस के दोबारा पैदा करने की अपेक्षा सरल तो न था[1]। और उस का मुझे गाली देना यह है कि वह कहता है कि अल्लाह ने अपना बेटा बनाया है यद्यपि मैं निराधार व सर्वाधार हूँ, न मै किसी का बाप हूँ और न औलाद और न कोई मेरे बराबर का है[2]।

—अहमद, बुख़ारी, मुस्लिम, अबू दाऊद, नसई

---

१ मेरा वादा है कि मैं लोगो को मृत्यु के पश्चात् पुनर्जीवन प्रदान करूँगा फिर उनके कार्यों का हिसाब लूँगा। परन्तु कुछ लोग मृत्यु के पश्चात् के जीवन का इन्कार करके मुझे झूठा ठहराते है और उस महान् उद्देश्य का निषेध करना चाहते है जिसके अन्तर्गत इस विश्व की रचना हुई है, हालाँकि यदि वे सोच-विचार से काम लेते तो यह बात आसानी से उनकी समझ मे आ सकती थी कि जिस अल्लाह ने उन्हे पहली बार जीवन प्रदान किया है वह उन्हे दोबारा जीवन प्रदान करने मे असमर्थ कैसे हो सकता है।

२ यह कहना कि अल्लाह के कोई बेटा है (जैसा कि ईसाई हज़रत मसीह अ० को

२ हजरत अबू मूसा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · अल्लाह से बढ कर कष्टदायक बात सुन कर सहन करने वाला कोई नही, लोग अल्लाह के लिए बेटा ठहराते हैं फिर भी वह उन्हे सुख-शान्ति से रखता और उन्हे रोजी देता है[3]। —बुखारी,मुस्लिम

३ हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा प्रभावशाली एव प्रतापवान ईश्वर कहता है . समय को बुरा कह कर आदम का बेटा मुझे कष्ट पहुँचाता है क्योंकि मैं ही समय हूँ मेरे ही हाथ मे कार्य कलाप का सूत्र है। मैं ही रात और दिन में उलट-फेर करता हूँ[4]। —बुखारी-मुस्लिम-अहमद

४ हजरत जैद बिन खालिद जुहन्नी रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने हुदैबिया मे वर्षा के पश्चात् जो रात से हो रही थी भोर में प्रात की 'नमाज' पढाई। जब आप 'नमाज' से लौटे तो लोगों की ओर रुख किया और कहा क्या तुम जानते हो कि तुम्सारे 'रब' ने क्या कहा ? बोले अल्लाह और उस का 'रसूल' ज्यादा जानते हैं। कहा उस ने कहा कि मेरे बन्दो मे मे कुछ लोगों ने मुझे माना और कुछ 'काफिर' हो गये। जिस ने कहा कि हम पर अल्लाह की कृपा और उस की दयालुता से वर्षा हुई उस ने मुझे माना और सितारो का इन्कार किया और जिसने कहा कि अमुक नक्षत्रो से हम पर वर्षा हुई है वह मेरा इन्कार

खुदा का बेटा कहते है) वास्तव मे अल्लाह की महानता का इन्कार है। यदि हम यह स्वीकार कर ले कि उसके औलाद है, तो इस से उसकी यकताई और उसके चिरस्थाई और चिरजीवी होने का निषेध हो जाएगा। फिर हम यह नही कह सकते कि वह खुद से कायम (*self subsisting*) सारी सृष्टि का स्थापित करने वाला और स्थिर रखने वाला है।

३ अल्लाह चाहे तो मनुष्य को उसके दुष्कर्म के कारण तत्काल ही विनष्ट कर दे। उस पर ऐसा वज्र प्रहार हो कि उसकी चीख भी निकल सके, परन्तु यह उस का धैर्य है कि वह अन्यायियो को ढील-परन्ढील और मुहलत-पर-मुहलत दिए जाता है और उनकी जीविका का प्रबन्ध भी करता है।

४ समय (*Time*) का वास्तव मे कोई अस्तित्व नही है। समय केवल अवास्त-विक अथवा सापेक्ष वस्तु है। रात-दिन का चक्र और समस्त क्रिया-कलाप अल्लाह ही के अधिकार मे है। मनुष्य यदि दुखो, कष्टो आदि से पीडित होकर समय को बुरा कहता है, तो उसके बुरा कहने की चोट वास्तव मे ईश्वर ही पर पडती है, इसलिए कि ससार पर अधिकार और अधिपत्य उसी का है, सारी परिवर्तन-शक्ति उसी के हाथ मे है।

करने वाला और सितारों पर ईमान रखने वाला है[५]।

—बुखारी व मुस्लिम

५ हजरत अबूजर रजि० कहते है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा : "सर्वोच्च अल्लाह् अपने बन्दे को क्षमा करता है जब तक कि परदा बीच में न आ जाये।" लोगों ने कहा "परदा क्या है?" कहा "यह कि कोई ऐसी दशा में मरे कि 'मुश्रिक' (अनेकेश्वरवादी) हो[६]।"

—अहमद-बैहकी

५ इस 'हदीस' मे इस वास्तविकता का उल्लेख किया गया है कि मनुष्य के भाग्य, और हानि-लाभ या वर्षा आदि का निर्णय अल्लाह् के हाथ मे है। उसके अतिरिक्त कोई दूसरा कार्य-साधक नही है। सारा परिवर्तन और क्रिया-कलाप उसी के अधिकार मे है। जो-कुछ होता है उसके आदेश से होता है। वही समस्त कार्य का आदिकारण है। वर्षा के अवसर पर उसकी अनुकम्पा को भूल जाना और उसे सितारो और नक्षत्रो का चमत्कार समझना वास्तव मे धृष्टता की वात है। भौतिक जगत मे तारो, नक्षत्रो आदि की जो वास्तविक स्थिति है उस से इन्कार नही, परन्तु अभौतिक रूप शासक ईश्वर ही है। उसी के हाथ मे सव-कुछ है, इसलिए हमारा भरोसा उसी पर होना चाहिए और हमारी समस्त आशाएँ और अभिलाषाएँ उसी से सम्बद्ध होनी चाहिएँ। प्रत्येक अवसर पर हमे उसका ही स्मरण करना चाहिए। ऋग्वेद मे है

य एक इद् हव्यश्चर्षणीतामिन्द्र त गीभीरभ्यर्नो आभि।
य पत्यने वृणय वृष्णयवान्त्स त्य सत्वा पुरुमाया महस्वान्॥

(ऋ० ६/२२/१)

"जो ईश्वर समस्त मानव ससार का एक ही उपास्य है उसी का इन वाणियो द्वारा भली-भाँति अर्चन करो वही सुख की वर्षा करने वाला सर्व-शक्तिमान, सत्यस्वरूप, सर्वज्ञ और समस्त शक्तियो का अधिपति है।"

६ वन्दे ने जव अल्लाह् के अतिरिक्त किसी और को भी अपना ईश्वर समझ लिया और उसे ईश्वरत्व मे सहभागी ठहराने लगा और उस से ऐसी आशाएँ करने लगा जैसी आशाएँ केवल अल्लाह् से की जानी चाहिएँ तो उसने अपने और अपने वास्तविक ईश्वर के बीच ऐसी दूरी पैदा कर ली कि वह अल्लाह् की दयालुता और क्षमा के योग्य नही रहता। यदि वह अपनी नीति बदलदे और एक अल्लाह् का उपासक हो जाये, तो अल्लाह् उसके अपराध को क्षमा कर सकता है, परन्तु यदि 'शिर्क' (अनेकेश्वरवाद) ही मे उसका जीवन समाप्त हो गया, तो फिरवह् कर्म कहाँ से लाएगा। जो उस दीवार को ढा सके जो उसने अपने अपने और अल्लाह के बीच खडी कर ली है।

ऋग्वेद मे है य एक इत तमुष्टुहि कृष्टीना विचर्षणि।

पतिज्ञे वृषकूतु ।

"जो ईश्वर एक ही है तू उसी की स्तुति कर, वह सब मनुष्यो का सर्वद्रष्टा सर्वज्ञ है। सुख की वर्षा करने वाला सम्पूर्ण ससार का एकमात्र अधिपति है।" अथर्वेद मे कहा गया है

"वह ईश्वर न दूसरा है न तीसरा और न चौथा कहा जाता है, वह पाचवाँ, छटा, और सातवाँ भी नही कहा जाता है, वह ईश्वर समुच्चय ससारस्थ प्राणि-अप्राणि वर्ग को त्रिविध प्रकार से देखता है। उसे सब सामर्थ्य प्राप्त है। वह अकेला ही वर्तमान है। उसी मे पृथ्वी आदि समस्त वर्तमान है।

(अथर्वेद १३/४/१६-२१)

दयालुता एवं क्षमाशीलता

عَنْ اَبِيْ هُرَيْرَةَ اَنَّ النَّبِيَّ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ: لَمَّا خَلَقَ اللّٰهُ الْخَلْقَ كَتَبَ فِيْ كِتَابِهٖ فَهُوَ عِنْدَهٗ فَوْقَ الْعَرْشِ اِنَّ رَحْمَتِيْ تَغْلِبُ غَضَبِيْ ——— بخاری، مسلم، ترمذی

१ हज़रत अबूहुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा जब अल्लाह ने सृष्टि रची, तो अपनी 'किताब' में लिख दिया, जो 'अर्श' (राज सिहासन) पर उनके पास मौजूद है "मेरी दयालुता मेरे प्रकोप से बढी हुई है[1]।" —बुख़ारी, मुस्लिम, तिरमिजी

२ हजरत अबूहुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह की सौ दयालुताएँ है जिनमे से उसने केवल एक भाग 'जिन्न' व मनुष्य, चौपायो और छोटे जीव-जन्तुओ मे उतारा जिसके कारण वे परस्पर ममता दिखलाते और एक-दूसरे पर दया करते है। इसी

१. एक 'रिवायत' के शब्द ये है "मेरी दयालुता मेरे प्रकोप की अपेक्षा अग्रसर रही।" अर्थात् अल्लाह की दयालुता को प्रधानता प्राप्त है। वह प्रकोप से बढी हुई है। यह उस की दयालुता ही है कि उसने लोगो को पैदा किया, उसके पथ-निर्देशन के लिए 'वह्य' व 'रिसालत' का मिलसिला जारी किया। यह उसकी दयालुता ही है कि वह उपद्रवी और अत्याचारी लोगो को तुरन्त नही पकडता बल्कि उन्हे सभलने और ज़ुल्म व अन्याय से वचने का पूरा अवकाश प्रदान करता है। वे उसका इन्कार करते हैं फिर भी वह उनके लिए आजीविका का प्रबन्ध करता है। वे उसके पथ-निर्देशन से विमुख होते हैं और उसके 'रसूलो' को कष्ट पहुँचाते है फिर भी वह उन पर तुरन्त ही यातना नही भेजता बल्कि उन्हे सोचने-समझने का पूरा अवसर देता है। 'आख़िरत' मे उसकी दयालुता का पूर्णत प्रदर्शन होगा। उस दिन वह न्याय करेगा। कुरआन करीम मे भी कहा गया है "मेरी दयालुता प्रत्येक वस्तु पर छाई हुई है (अल–आराफ: १५६)"। अल्लाह के यहाँ मौलिक स्थान उसके प्रकोप को नही, उसकी दयालुता को प्राप्त है। यह विश्व-व्यवस्था उस की दयालुता और न्याय पर अवलम्बित है। उसका प्रकोप तो केवल उन लोगो पर होता है जो सरकशी और अत्याचार मे बहुत आगे बढ जाते हैं।

के कारण वन पशु अपने बच्चे की ओर झुकता है। और निन्यानवे दयालुता को उसने रख छोडा है उन से वह 'कियामत' के दिन अपने बन्दों पर दया करेगा[२]। —बुखारी, मुस्लिम, तिरमिज़ी

३ हजरत उमर बिन खत्ताब रजि० कहते हैं कि नबी सल्ल० के पास कुछ कैदी आये उन कैदियो में एक स्त्री दीख पडी जिसके स्तनो से दूध बह रहा था। वह (अपना बच्चा) खोजती फिरती थी। जब उसे कैदियो में बच्चा मिल जाता उठाकर उसे अपने सीने से लगा लेती और उसे दूध पिलाने लगती। नबी सल्ल० ने हम से कहा तुम्हारा क्या विचार है क्या यह स्त्री अपने बच्चे को आग में डाल सकती है? हमने कहा . नही, जबकि उसे यह सामर्थ्य प्राप्त हो कि उसे (आग मे) न डाले। इस पर (अल्लाह के रसूल सल्ल० ने) कहा अल्लाह उस से कही अधिक अपने बन्दो पर दयालु है जितना यह स्त्री अपने बच्चे पर दयावती है[३]। —मुस्लिम, तिरमिज़ी

४ हजरत अबूजर गिफारी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा प्रभावशाली एव प्रतापवान अल्लाह कहता है जो व्यक्ति एक नेकी करेगा उसे उसका दसगुना बदला मिलेगा और मैं और भी उसे प्रदान करूँगा। और जो बुराई करेगा उसे केवल एक बुराई का बदला मिलेगा या मैं क्षमा कर दूँ। और जो मुझ से एक बित्ता निकट होगा, मैं उससे एक हाथ निकट हूँगा। और जो मुझ से एक हाथ निकट

---

२ ससार मे जहाँ कही जिस रूप मे दयालुता और प्रेम का प्रदर्शन होता है वह वास्तव मे अल्लाह की उस दयालुता का प्रदर्शन है जो ससार मे अवतरित हुई है। अल्लाह की दयालुता एव अनुकम्पा का पूर्ण प्रदर्शन तो 'आखिरत' मे होगा। जो लोग 'आखिरत' की ओर ध्यान नही देते, वे अल्लाह की अपार एव असीम दयालुता से अपने-आपको वञ्चित कर रहे है।

३. यही कारण है कि उसने अपने बन्दो के मार्ग-निर्देशन के लिए 'नबियो' को भेजा और उन पर अपनी 'किताबे' उतारी। फिर भी जो लोग विनाशता ही की ओर बढते है और 'कुफ्र' और अधर्म के मार्ग को नही त्यागते, उनको वह तुरन्त नही पकडता बल्कि उन्हे मुहलत-पर-मुहलत देता जाता है, कदाचित वे अत्याचार को छोड कर सत्य-मार्ग अपना ले। फिर भी जो उसकी दयालुता से अपने को दूर ही रखना चाहते है, वह उनके साथ जबरदस्ती भी नही करता कि वे तो घृणा ही किए जाये और वह उन्हे बलपूर्वक सीधे मार्ग पर ले आये। अल्लाह जहाँ दयावान और कृपाशील है वही वह स्वाभिमानी और गौरवान्वित भी है।

होगा मैं उससे दो हाथ निकट हूँगा। और जो मेरी ओर चलकर आयेगा, मैं उसकी ओर लपकता हुआ आऊँगा, और जो मुझ से धरती के बराबर गुनाह करके मिलेगा मैं उस से उसी जैसी क्षमा के साथ मिलूँगा, शर्त्त यह है कि उसने किसी को मेरा सहभागी न बनाया हो[४]।

—मुस्लिम, तिरमिजी

५ हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने अपने प्रभावशाली प्रतापवान् 'रब' से रिवायत करते हुए कहा कि एक बन्दे ने गुनाह किया और कहा हे अल्लाह ! मेरा गुनाह क्षमा कर दे। बरकत वाले सर्वोच्च (अल्लाह) ने कहा मेरे बन्दे ने गुनाह किया और यह समझा कि उसका कोई 'रब' है जो गुनाह को क्षमा करता और गुनाह पर पकडता है[५]। कुछ समय के पश्चात् उसने फिर गुनाह किया और कहा हे मेरे 'रब' ! मेरा गुनाह क्षमा कर दे। बरकत वाले सर्वोच्च (अल्लाह) ने कहा मेरे बन्दे ने गुनाह किया और समझा कि उसका कोई 'रब' है जो गुनाह को क्षमा करता और गुनाह पर पकडता है (यदि मेरी ओर तेरे रुजू करने का यही हाल है) तो अब जो चाहे कर, मैंने तुझे क्षमा कर दिया[६]।

—बुखारी, मुस्लिम

४ इस हदीस' मे अल्लाह की दयालुता और क्षमा का उल्लेख जिस सुन्दर ढग से किया गया है उससे अनुमान किया जा सकता है कि उसकी दयालुता उन बन्दो की ओर लपकने को कितना विह्वल है जो अल्लाह की दयालुता एव कृपा की आशा लिए हुए उसकी ओर बढते और उसकी पुकार पर दौड पडते है।

५ इसलिए मेरे इस सेवक का यह हक होता है कि मैं इसकी खताओ को क्षमा कर दूँ और इसको अपनी दयालुता की ओर से निराश न होने दूँ।

६. इस 'हदीस' मे 'तौबा' से अभिप्रेत दिखाने की तौबा' नही बल्कि वास्तविक 'तौबा' है। एक 'मोमिन' से गुनाह हो जाता है फिर उसे अल्लाह की प्रभुता और उसका अजाब (यातना) याद आता है। वह सच्चे दिल से अल्लाह की ओर पलटता और उससे अपने गुनाहो के लिए क्षमा की प्रार्थना करता है। अल्लाह उसकी गलती को क्षमा कर देता है। मानवीय दुर्बलता और सकल्प की निर्बलता के कारण उससे फिर गुनाह हो जाता है। वह फिर काँप उठता है और अल्लाह के आगे फिर 'तौबा' करता है। वह अल्लाह ही के दिखाये मार्ग पर चलना चाहता है, परन्तु बार-बार उसका कदम डगमगा जाता है किन्तु हर बार वह सँभलता है और सँभल कर अल्लाह के मार्ग पर कदम रखता है। ऐसे व्यक्ति की आत्मा कदापि विकृत नही होती। ऐसे व्यक्ति से चाहे कितनी ही बार गुनाह हो वह अपनी 'तौबा' से अल्लाह की क्षमा और दयालुता का अधिकारी बन जाता है।

६. हज़रत सौबान रज़ि० कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को यह कहते सुना है कि यदि इस 'आयत' के बदले में मुझे पूरी दुनिया मिल जाये तो भी मुझे पसन्द नही : "हे मेरे बन्दो ! जिन्होने अपने-आप पर ज़्यादती की है अल्लाह की दयालुता (की ओर) से निराश न हो।" इस पर एक व्यक्ति ने कहा . अच्छा क्या वह व्यक्ति भी, जिसने 'शिर्क' किया है ? नबी सल्ल० चुप रहे। फिर कहा . सुन लो जिसने 'शिर्क' किया वह भी, तीन बार कहा[७]। —अहमद

७. हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० 'नमाज़' के लिए खड़े हुए, हम भी आपके साथ खडे हो गए। एक ग्रामीण ने 'नमाज़' में ही कहा . हे अल्लाह ! मुझ पर और मुहम्मद पर दया कर और हमारे साथ किसी दूसरे पर दया न कर। नबी सल्ल० ने सलाम फेरा तो उस ग्रामीण से कहा तूने तो अत्यन्त विस्तृत वस्तु को तग कर दिया[८]। —बुख़ारी

८. हज़रत जाबिर रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम में से किसी व्यक्ति को उसका कर्म 'जन्नत' में दाखिल करेगा और न ही ('जहन्नम' की) आग से बचायेगा और मुझे भी नही, परन्तु अल्लाह की दयालुता से[९]। —मुस्लिम

९. हज़रत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . जब कोई बन्दा अल्लाह के सामने 'तौबा' करता है तो वह अपने बन्दे की 'तौबा' से तुम में से उस व्यक्ति से कही अधिक प्रसन्न होता है जिसकी सवारी खाना-पानी सहित किसी चटियल मैदान में खो जाये और वह (परेशान होकर) एक वृक्ष के निकट आकर उसकी छाया में निराश होकर पड रहे, तो इसी निराशावस्था मे वह पड़ा रहे इस बीच में उसकी सवारी उसके पास आ खडी हो, वह उसकी रस्सी पकड़ ले

---

७. अर्थात् जिन लोगो ने अल्लाह की अवज्ञा कर के अपने-आप पर अत्याचार किया है उन्हें कदापि निराश न होना चाहिए। 'शिर्क' जैसे बडे गुनाह को भी अल्लाह क्षमा कर सकता है यदि बन्दा 'तौबा' कर के 'शिर्क' से बाज़ आ जाये और पूर्ण रूप से अपने को एक अल्लाह की सेवा मे दे दे।

८ अर्थात् अल्लाह की दयालुता तो अत्यन्त विस्तृत थी उसे तूने क्यो केवल दो व्यक्तियो तक सीमित रक्खा।

९. मनुष्य अल्लाह के आज्ञापालन और उसकी उपासना मे कितना ही प्रयास क्यो न करे, अल्लाह का हक़ किसी तरह अदा नही होता। मनुष्य से कोई न कोई कोताही और भूल-चूक हो ही जाती है। अल्लाह की दयालुता ही है जिसके सहारे मनुष्य का 'आखिरत' मे उद्धार हो सकता है।

और हर्ष की अधिकता के कारण बोल उठे हे अल्लाह ! तू मेरा बन्दा है और मैं तेरा रव हूँ । मारे खुशी के असत्य कहने लगे[१०] । —मुस्लिम

१०. इब्न उमर रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : ('कियामत' के दिन) अल्लाह 'मोमिन' (ईमान वाले) को अपने करीब कर लेगा और अपने संरक्षण की चादर डालकर उसे ढक देगा[११] । फिर अल्लाह कहेगा : क्या तुम इस गुनाह को जानते हो ? क्या तुम इस गुनाह से परिचित हो ? वह कहेगा हाँ, हे मेरे 'रब' ! (मैं जानता हूँ) यहाँ तक कि अल्लाह उस से उसके समस्त गुनाहो का इकरार करा लेगा ।

१० अर्थात् हर्ष मे वह कुछ ऐसा खो सा जाये कि उसके मुख से कुछ गलत बातें निकल जायें । इस 'हदीस' मे अल्लाह की अपार दयालुता का उल्लेख किया गया है । इन्जील मे भी अल्लाह की दयालुता और क्षमाशीलता की कुछ सुन्दर उपमाएँ मिलती हैं । एक जगह आया है : 'तुम क्या समझते हो ? यदि एक व्यक्ति की सौ भेंडें हो और उनमे से एक भटक जाए तो, क्या वह निन्यानवे को छोडकर और पहाड मे जाकर उस भटकी हुई भेड को न ढूँढेगा ? और यदि ऐसा हो कि उसे पाए तो मैं तुम से सच कहता हूँ कि वह निन्यानवे की अपेक्षा जो भटकी नही उस भेंड के लिए ज्यादा खुशी करेगा । इसी प्रकार तुम्हारा आसमानी बाप यह नही चाहता कि इन छोटो मे से एक भी विनष्ट हो ।" (मत्ता १८ १२-१३) ।

एक दूसरी जगह खोई हुई भेंड की उपमा दे कर कहा गया है · "मैं तुम से सच कहता हूँ कि इसी प्रकार निन्यानवे सत्यवादियो की अपेक्षा जिन्हे 'तौबा' की आवश्यता नही एक तौबा करने वाले गुनाहगार के कारण आसमानो पर खुशी होगी ।" (लूका १५ · ७) ।

इसी प्रकार एक हृदयस्पर्शी उपमा उस बेटे की दी गई है जो बहुत ही नालायक था । जिसने पिता से मिली हुई सम्पत्ति बुरे कर्मों मे लुटा दी थी । जब वह परेशानी मे ग्रस्त हुआ, तो कहा · "अब मैं उठ कर अपने पिता के यहाँ जाऊँगा और कहूँगा कि हे बाप ! मैं आसमान का तेरी दृष्टि मे गुनहगार हुआ । अब इस योग्य नही कि तेरा बेटा कहलाऊँ ।' बाप ने अपने नौकरों से कहा · अच्छे-से-अच्छा वस्त्र निकाल कर जल्द इसे पहिनाओ और इसके हाथ मे अँगूठी और पाँव मे जूती पहिनाओ और पले हुये बछडे को ला कर जव्ह करो ताकि हम खा कर हर्ष मनायें क्योकि मेरा यह बेटा मुर्दा था अब जीवित हुआ खो गया था अब मिला है ।" (लूका . १५) ।

११. अर्थात् उसे अपने सरक्षण मे ले लेगा और उसे हर प्रकार की रुसवाई से बचायेगा ।

और वह अपने जी मे समझेगा कि वह (अपने गुनाहो के कारण) अब विनष्ट हुआ। अल्लाह कहेगा : मैंने दुनिया मे तेरे इन अवगुणों पर परदा डाला और आज मै तेरे इन गुनाहो को क्षमा कर दूँगा। उसे उसकी नेकियो का कर्म-पत्र दिया जायेगा। रहे 'काफिर' (अधर्मी जन) और 'मुनाफिक' लोग (कपटी लोग), उन्हे समस्त सृष्टि-जन के सामने बुलाया जायेगा और पुकार कर कहा जायेगा . ये वे लोग है जिन्होने अपने 'रब' से झूठी बाते सम्बद्ध की, जान लो अल्लाह की फिटकार है ज़ुल्म (अत्याचार) करने वालो पर[१२] ! —बुखारी, मुस्लिम

११ हज़रत आइशा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : अल्लाह मेहरबान है और नर्मी और मेहरबानी को पसन्द करता है और नर्मी और मेहरबानी (अनुकम्पा) पर वह चीज प्रदान करता है जो क्रूरता एव कठोरता पर नही प्रदान करता और न किसी और ही चीज़ पर प्रदान करता है[१३]। —मुस्लिम

१२. 'मोमिन' यदि वास्तव मे 'ईमान' वाला है। जालिम, अल्लाह का अवज्ञाकारी और विद्रोही नहीं है, तो उस पर 'क़ियामत' के दिन अल्लाह की विशेष कृपा होगी। मानवीय दुर्बलता के कारण उससे जो कोताही या गुनाह के काम हुये होगे अल्लाह उनको क्षमा कर देगा। और 'क़ियामत के दिन की रुसवाई और अपमान से उसे बचा लेगा। इसके विपरीत 'काफिर' और 'मुनाफिक' के लिए 'क़ियामत' का दिन रुसवाई का दिन होगा। वे अपनी करतूतो की सज़ा उस दिन पा कर रहेगे।

१३. मालूम हुआ कि नर्मी और मेहरबानी की नीति ही अल्लाह को प्रिय है। उसकी विशेष सहायता, योग और समर्थन, उन्ही लोगो को प्राप्त होती है जो नर्मी और मेहरबानी से पेश आते है। अल्लाह स्वय मेहरबान है। उसका प्रकोप यदि होता है तो केवल उन लोगो पर जो अत्याचारी और अधर्मी हैं, विनाश ही के अधिकारी हैं। जालिमो और अपराधियो को भी अल्लाह सँभलने और सही मार्ग पर आने का पूरा अवसर प्रदान करता है, परन्तु जब उनकी सरकशी बहुत ज्यादा बढ जाती है, तो फिर ईश्वरीय प्रकोप मे ग्रस्त हो कर रहते हैं। अल्लाह मेहरबान और दयावन्त है परन्तु इसके साथ वह न्यायशील, गौरवान्वित और स्वाभिमानी भी है। उसके स्वाभिमान, गौरव और न्याय को चुनौती दे कर कोई कहाँ शरण पा सकता है। दयालुता के साथ जब तक महानता के गुणो से भी अल्लाह को युक्त न माना जाये, प्रभुता की कल्पना अपूर्ण ही रहती है।

अल्लाह की महानता

عَنْ اَبِيْ مُوْسَى الْاَشْعَرِيِّ رض قَالَ قَامَ فِيْنَا رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ بِاَرْبَعٍ فَقَالَ اِنَّ اللّٰهَ عَزَّ وَجَلَّ لَا يَنَامُ وَلَا يَنْبَغِيْ لَهٗ اَنْ يَّنَامَ يَخْفِضُ الْقِسْطَ وَيَرْفَعُهٗ يُرْفَعُ اِلَيْهِ عَمَلُ اللَّيْلِ بِالنَّهَارِ وَعَمَلُ النَّهَارِ بِاللَّيْلِ — احمد، مسلم، ابن ماجه

१ हजरत अबू मूसा अशअरी रजि० महते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने हमारे वीच खड़े होकर चार वाते वयान की प्रतापवान एव तेजोमय अल्लाह सोता नही और न यह उसे शोभा देता है कि वह सोये। न्याय-तुला को झुकाता और उसे ऊँचा करता है। रात के कर्म दिन में और दिन के कर्म रात में उसकी ओर उठाये जाते हैं[1]।

—अहमद, मुस्लिम, इब्न-माजः

---

१. अर्थात् अल्लाह कभी अचेत और असावधान नही होता। उसको ऊँघ या निद्रा नही सताती (अल-वकर २५५)। इस प्रकार की समस्त दुर्बलताओ से वह रहित है। फिर सारे अधिकार उसी के हाथ मे है। जिसे चाहता है उच्चता प्रदान करता है, जिसे चाहता है नीचे गिराता है। किसी को अधिक रोजी देता है, किसी को कम और नपी-तुली रोजी देता है। उसके फैसले सत्य, न्याय और तत्वदर्शिता (*Wisdam*) की तुला पर पूरे उतरते है। उसका कोई फैसला न्याय और इन्साफ से हटा हुआ नही होता। और न उसका कोई काम तत्वदर्शिता और शुभहेतु से रहित होता है। यह दूसरी बात है कि अपनी अन्धता के कारण मनुष्य उसके उद्देश्य एव हेतु के समझने मे असमर्थ रहे। अल्लाह की महानता और शासनाधिकार ऐसा है कि समस्त कर्म और कारगुजारियाँ उसकी सेवा मे पेश होती हैं। वह किसी कार्य से भी वेखबर नही है। वह साक्षात् प्रत्येक चीज़ का ज्ञान रखता है। इसके

२. हज़रत अबू मूसा अशअरी रज़ि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह सोता नही और न यह उसे शोभा देता है कि वह सोये, न्याय-तुला को झुकाता और उसे ऊँचा करता है। (सृष्टि के जीव आदि और उसके बीच उसके मुख मडल का) तेज एव ताप उस का आवरण है। यदि वह उसे उठा दे, तो उसके श्री मुख का तेज जहाँ तक दृष्टि पहुँचे सबको भस्म कर दे[२]। इसके बाद अबू उबैदा रज़ि० ने कुरआन की इस आयत को पढ़ा . 'जब वह (मूसा) उस के निकट पहुँचा, तो उसे पुकारा गया कि बरकत दी गई उसे जो इस अग्नि में है और जो इसके आस-पास है ! और महिमावान है अल्लाह, सारे ससार का पालनकर्त्ता स्वामी[३]।" --मुस्लिम, अहमद, इब्न-माज:

३. हज़रत अबूज़र रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा "मैं वह कुछ देखता हूँ जो तुम नही देखते और वे बाते सुनता हूँ जो तुम नही सुनते, आसमान चरचरा रहा है और उसे चरचराना ही चाहिए। उस में चार अंगुल स्थान भी ऐसा नही है जहाँ कोई 'सजदा' करने वाला 'फिरिश्ता' मौजूद न हो। यदि तुम वे बाते जानते जो मैं जानता हूँ, तो हँसते कम और रोते अधिक और अपने बिछौनो पर अपनी स्त्रियों के साथ सुख न भोगते। और सर्वोच्च अल्लाह की ओर चीखते-चिल्लाते मैदानो मे निकल जाते। अबूज़र रज़ि० कहते है "क्या ही अच्छा होता कि मैं एक वृक्ष होता (जो जड से) काट दिया जाता[४]।"
—तिरमिज़ी ,इब्नमाजा ,अहमद

अतिरिक्त 'फिरिश्ते' भी अपनी कारगुजारी और मनुष्यो के कर्म उसके सामने प्रस्तुत करते हैं।

२ इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि लोगो की दृष्टि यदि अल्लाह को देखने मे असमर्थ है, तो इसका कारण यह कदापि नही है कि बीच मे कोई आवरण और अन्धकार है, बल्कि इसका मूल कारण यह है कि अल्लाह की महानता और उसके प्रताप का प्रकाश ही उसका आवरण बन रहा है। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार सूर्य का प्रकाश और उसकी चमक ही उसका अपना आवरण बनजाये और कमज़ोर निगाह का व्यक्ति उसके देखने मे असमर्थ रहे। हमारी दृष्टि और नेत्र-ज्योति मे यह शक्ति नही कि वह अल्लाह के दर्शन का सहन कर सके। हज़रत मूसा अ० ने दर्शन की अभिलाषा की थी, परन्तु वे उसका सहन न कर सके और मूर्छित हो कर गिर पडे और पर्वत चकनाचूर हो गया। (कुरआन सूरा अल-आराफ : १४३)।

३. दे० कुरआन सूरा अन-नम्ल ८।

४. इस 'हदीस' मे अल्लाह के प्रताप, तेज और उसकी महानता और श्रेष्ठता का

४. हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : 'क़ियामत' के दिन अल्लाह ज़मीन को अपनी मुट्ठी में लेगा और आसमान को अपने दाहिने हाथ में लपेट कर कहेगा : मैं हूँ सम्राट, धरती के सम्राट कहाँ हैं?[५]

५. अब्दुल्लाह इब्न उमर रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : आदम के बेटों (मनुष्यों) के हृदय कृपाशील ईश्वर की उंगलियों में से दो उंगलियों के बीच में हैं, वह जैसा चाहता है उन्हें फेरता है। फिर अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : हे अल्लाह! हृ...ों

उल्लेख जिस ढंग से किया गया है वह अत्यन्त प्रभावशाली है। किसी अप्रत्यक्ष वास्तविकता के दर्शन का प्रभावकारी ढंग यही है कि प्रत्यक्षतः उनके विषय में कुछ कहने के बदले बाह्य वातावरण पर उनके जो प्रभाव पड़ रहे हों उन्हीं को उनके दर्शन का साधन बनाया जाय। यह 'रसूल' ही का हृदय और उसकी सहन-शक्ति है कि वे अलौकिक और परोक्ष सम्बन्धी वास्तविकताओं से प्रत्यक्षतः परिचित होते हुए भी अपने होश-हवास को क़ायम रखते हैं। दूसरा कोई इसको सहन नहीं कर सकता। दूसरा कोई यदि उन बातों से परिचित हो जाए जिन से 'रसूल' परिचित होता है, तो उस का यही हाल होगा जो इस 'हदीस' में बयान हुआ है। उसके लिए संसार में मनोरंजन की कोई चीज़ शेष न रहेगी। आसमान में कोई स्थान भी ऐसा नहीं है जहाँ कोई-न-कोई 'फ़रिश्ता' अल्लाह की महानता के आगे नतमस्तक न हो और आसमान की हालत यह है कि वह चरचरा रहा है, परन्तु लोगों का हाल यह है कि उन्हें इसका कुछ भी ज्ञान नहीं कि क्या हो रहा है और क्या होने वाला है।

५ इस 'हदीस' में वही बात कही गई है जो क़ुरआन में इन शब्दों में कही गई है : "अल्लाह जैसा-कुछ है ये लोग उसका अन्दाज़ा नहीं कर सके, उसका हाल तो यह है कि 'क़ियामत' के दिन यह धरती पूरी-की-पूरी उसकी मुट्ठी में होगी, और आकाश उसके दाहिने हाथ में लिपटे होंगे। महिमावान् है वह और उच्च है उस 'शिर्क' से जो ये लोग करते हैं (अज़-ज़ुमर आयत ६७)"। इस 'हदीस' और क़ुरआन की इस 'आयत' में अल्लाह के सामर्थ्य, उसकी शक्ति, प्रभुत्व और उसकी महानता एवं श्रेष्ठता का अनुपम वर्णन है। 'क़ियामत' के दिन यह वास्तविकता किसी से छिपी न रहेगी कि धरती और आकाश सब-कुछ उसके अधिकार में है। आज धरती में जो लोग शासक एवं सम्राट बने हुए हैं उनका झूठा शासन और उनकी झूठी राजसत्ता उस दिन समाप्त हो चुकी होगी। वे अपनी वास्तविकता से पूर्ण रूप से परिचित हो चुके होंगे।

के फेरने वाले ! हमारे हृदयों को अपने आज्ञापालन की ओर फेर दे[६] ।

—मुस्लिम

६. हज़रत जुबैर बिन मुतइम रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० के पास एक ग्रामीण आया। उस ने कहा : लोगों की जानें मशक़्क़त में पड़ गईं, बच्चे भूखे हुये, माल तबाह हो गये, चौपाये विनष्ट हो गये, अतः अल्लाह से हमारे लिए वर्षा की प्रार्थना कीजिए। हम अल्लाह के सामने आप की सिफारिश चाहते हैं और आप के सामने अल्लाह की सिफ़ारिश चाहते हैं। इस पर नबी सल्ल० कहने लगे : महिमावान् है अल्लाह ! महिमावान् है अल्लाह ! और यहाँ तक 'तसबीह' करते रहे कि आप के साथियों के मुख पर भी उसका प्रभाव लक्षित होने लगा। फिर आप ने कहा अरे (नादान) : अल्लाह की सिफ़ारिश किसी के सामने नही पेश की जाती। अल्लाह का गौरव इस से कही उच्च और बढ़ कर है। तू जानता भी है कि अल्लाह का गौरव क्या है ? उस का 'अर्श' (राजसिंहासन) आसमानों पर इस तरह है। आप ने अपनी उँगलियों से गुम्बद की तरह बना कर दिखाया। कहा वह उसकी महानता से इस प्रकार चरचरा रहा है जैसे कजावा सवार के भार से चरचराता है।

—अबू दाऊद

७. हजरत उम्मुल अला अनसारिया रज़ि० कहती हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : अल्लाह की कसम, मैं नही जानता, अल्लाह की क़सम, मैं नही जानता यद्यपि मैं अल्लाह का रसूल हूँ कि मेरे साथ क्या किया जायेगा और तुम्हारे साथ क्या[७] ?

—बुख़ारी

---

६. मनुष्य का बाह्य अस्तित्व ही नही, उसकी अन्तरात्मा भी अल्लाह के अधिकार मे है। वह हमारे दिल को जिस ओर चाहे फेर दे। अल्लाह से इसी की प्रार्थना करते रहना चाहिए कि वह हमारे दिलो को अपनी ओर झुकाए रक्खे और हम उसकी बन्दगी और आज्ञापालन से कभी विमुख न हो। मनुष्य को जिस चीज़ की इच्छा होती है, अल्लाह उसके दिल को उसी ओर झुका देता है। मनुष्य स्वय इसका उत्तरदायी है कि वह किस चीज़ का इच्छुक होता है।

७. नबी सल्ल० अल्लाह के सच्चे 'रसूल' हैं। आपने अल्लाह की ओर से लोगो को जीवन की वास्तविकता से परिचित किया। उन्हे जीवन की सीधी-सच्ची राह दिखाई, और यह बताया कि एक दिन अल्लाह की अदालत मे सब को उपस्थित होना है। परन्तु तमाम बातों के बावजूद आपको अल्लाह की महानता और गौरव का इतना एहसास है कि उस दिन के बारे मे कहते हैं जो फ़ैसले का दिन होगा, जिस दिन अल्लाह अपने पूर्ण तेज एव प्रताप के साथ

८. हज़रत अबू जर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने प्रतापवान एवं तेजोमय अल्लाह से रिवायत करते हुये कहा कि वह कहता है. हे मेरे बन्दो ! मैंने अपने ऊपर ज़ुल्म को हराम कर लिया है और उसे तुम्हारे बीच भी हराम (अवैध) किया है, तो तुम एक-दूसरे पर ज़ुल्म न किया करो। हे मेरे बन्दो ! तुम सब राह से भटके हुये हो सिवाय उस के जिसे मैंने राह दिखाई, तो मुझ से पथ-प्रदर्शन के लिए प्रार्थना करो, मै तुम्हे मार्ग दिखाऊँगा। हे मेरे बन्दो ! तुम सब भूखे हो सिवाय उस के जिसे मैने खिलाया, तो मुझ से खाना माँगो मै तुम्हे खिलाऊँगा। हे मेरे बन्दो ! तुम सब नगे हो सिवाय उस के जिसे मैंने वस्त्र पहनाया, तो मुझ से वस्त्र माँगों, मै तुम्हे पहनाऊँगा। हे मेरे बन्दो ! तुम रात-दिन ख़ताएँ किया करते हो, मै सब गुनाहों को क्षमा करता हूँ, तो मुझ से क्षमा की प्रार्थना करो, मै तुम्हे क्षमा कर दूँगा। हे मेरे बन्दो ! तुम कदापि मुझे हानि पहुँचाने की स्थिति मे नही हो सकते कि मुझे हानि पहुँचाओ। और तुम कदापि मुझे फ़ायदा पहुँचाने की स्थिति मे नही हो सकते कि मुझे फायदा पहुँचाओ। हे मेरे बन्दो ! यदि तुम्हारे अगले और तुम्हारे पिछले तुम्हारे मनुष्य और तुम्हारे 'जिन्न' तुम में सब से बढ कर (अल्लाह का) डर रखने वाले व्यक्ति के समान हो जाये, तो यह चीज मेरे राज्य में कुछ बढा नही सकती। हे मेरे बन्दो ! यदि तुम्हारे अगले और तुम्हारे पिछले, तुम्हारे मनुष्य और तुम्हारे 'जिन्न' तुम में सब से बढ कर दुस्साहसी व्यक्ति के समान हो जाये, तो यह चीज़ मेरे राज्य मे कोई कमी पैदा नही कर सकती। हे मेरे बन्दो ! यदि तुम्हारे अगले और तुम्हारे पिछले, तुम्हारे मनुष्य और तुम्हारे जिन्न सब एक मैदान मे खडे हो और मुझ से माँगे और मै हर व्यक्ति की माँग पूरी करूँ, तो इस से उस में कुछ भी कमी नहीं आ सकती। जो मेरे पास है सिवाय उस के जैसी कमी सूई पैदा करती है जब वह समुद्र में दाखिल होती है। हे मेरे बन्दो ! ये तुम्हारे कर्म ही है जिन की मै तुम्हारे लिए गणना करके रखता हूँ फिर मै तुम्हे उन को पूरा-पूरा दे दूँगा। फिर जो व्यक्ति अच्छा बदला पाये, तो उसे अल्लाह की 'हम्द' (प्रशसा) करनी चाहिए। और जो इस के प्रतिकूल (अर्थात् बुरा बदला) पाये उसे अपने-आप को ही मलामत करनी चाहिए[९]। —मुस्लिम-तिरमिज़ी

प्रकट होगा. मै नही कह सकता कि ससार को किस स्थिति का सामना करना पडेगा। उसका पूर्ण अनुमान करने मे मैं भी असमर्थ हूँ। मैं उस भयावह दृश्य का पूर्ण रूप से चित्रण नही कर सकता।

९. इस 'हदीस' से कई बातें प्रकाश मे आती है। अल्लाह परम स्वतन्त्र और

९ हजरत अबू जर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि प्रतापवान् एव तेजोमय अल्लाह कहता है ' हे मेरे बन्दो ! तुम सब गुनहगार हो सिवाय उस के जिसे मैं बचा लूँ, तो मुझ से क्षमा की प्रार्थना करो, मैं तुम्हे क्षमा कर दूँगा। जो व्यक्ति यह जानता है कि मुझे क्षमा कर देने का सामर्थ्य प्राप्त है फिर मेरे सामर्थ्य के बल पर मुझ से क्षमा की प्रार्थना करता है उसे मैं क्षमा कर देता हूँ और कोई परवाह नही करता। (हे मेरे बन्दो !) तुम सब राह से भटके हुये हो सिवाय उस के जिसे मैं राह दिखाऊँ, तो मुझ मे मार्ग-दर्शन के लिए प्रार्थना करो, मैं तुम्हे (सीधा) मार्ग दिखाऊँगा[६]। और तुम सब मुहताज

निरपेक्ष है। उसको न कोई फायदा पहुँचा सकता है और न हानि पहुँचा सकता है। सब उसके मुहताज और आश्रित हैं। वह किसी का भी मुहताज नही है। जिस प्रकार समुद्र मे सूई डाल कर निकालने से समुद्र का पानी घट नही जाता उसी तरह लोगो को देने से अल्लाह के यहा कोई कमी नही आ सकती। समुद्र की उपमा तो केवल समझाने के लिए दी गई है, समुद्र तो उसकी महानता के मुकाबले मे कुछ भी नही है। हमारा कर्तव्य है कि हम अल्लाह के सम्बन्ध से लोगो के साथ अच्छा व्यवहार करें। अल्लाह को जुल्म पसन्द नही, हम भी किसी पर जुल्म और अत्याचार न होने दें। मनुष्य अपना उत्तरदायी स्वय है। जैसे उसके कर्म होगे उसी के अनुसार अल्लाह उसे प्रतिदान प्रदान करेगा। यदि किसी को अच्छा बदला मिले तो उसे अल्लाह का कृतज्ञ होना चाहिए कि उसने उसके कर्मों को अकारथ नही किया। उसे अपने रब की 'हम्द' (प्रशसा) करनी चाहिए कि जो कार्य और शुभ कर्म भी हो सका उसके पालनकर्त्ता अल्लाह की कृपा और दया ही से हो सका। यदि किसी को अल्लाह के यहाँ बुरा बदला मिलता है और वह वहाँ दण्ड का भागी समझा जाता है, तो उसे अपने को मलामत करनी चाहिए, किसी दूसरे को नही। अल्लाह के यहाँ न्याय होता है, अन्याय कदापि नही होता।

६. इस 'हदीस' मे पूर्ण रूप से 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) का चित्रण हुआ है। यह 'हदीस' बताती है कि मनुष्य का वास्तविक सरक्षक और सहायक केवल अल्लाह है। मनुष्य को उसी पर भरोसा करना चाहिए और सहायता के लिए उसी को पुकारना चाहिए। जिस व्यक्ति ने अल्लाह को अपना मित्र और कार्य साधक बना लिया। वही सफलतापूर्वक जीवन के सीधे मार्ग पर चल सकता है। अल्लाह ही की दया दृष्टि है जो मनुष्य को गुनाहो से बचाती और उसे शुद्धता और पवित्रता प्रदान करती है। जब तक अल्लाह की कृपा न हो कोई भी व्यक्ति जीवन का सीधा मार्ग नही पा सकता। उसे न वास्तविकता

हो सिवाय उस के जिसे मैं बेपरवाह् कर दूँ, तो मुझ से माँगो मैं तुम्हे बेपरवाह् कर दूँगा"। यदि तुम्हारे अगले और पिछले, जिन्दा और मुर्दा, आर्द्र और शुष्क सब मिल कर मेरे बन्दो में सब से अधिक दुष्ट और पाषाण हृदय व्यक्ति के समान हो जाये, तो मेरे राज्य मे मच्छर के पंख के बराबर भी कोई कमी नही आ सकती और यदि सब मिल कर मेरे बन्दों मे सब से अधिक (अल्लाह् का) डर रखने वाले व्यक्ति के समान हो जायें तो मेरे राज्य में एक मच्छर के पंख के बराबर भी कोई अधिकता नही हो सकती। और यदि तुम्हारे अगले और पिछले, जिन्दा और मुरदा, आर्द्र और शुष्क सब इकट्ठा हो और उन मे से प्रत्येक माँगने वाला मुझ से माँगे जहाँ तक उस की कामना की पहुँच हो, फिर मैं उन में से प्रत्येक माँगने वाले को दे दूँ जो-कुछ वह माँगे, तो इस से मेरे यहाँ कोई कमी न आयेगी जैसे कि तुम मे से कोई समुद्र के किनारे से गुजरे और उस मे कोई सूई डिबो कर निकाल ले (तो इस से समुद्र के जल में कोई कमी नही आती) इसी प्रकार मेरे राज्य में कोई कमी नही आती। यह इसलिए कि मैं बडा दानशील हूँ, गौरव वाला हूँ[११], निरपेक्ष, सर्वाधार हूँ[१२], कलाम मेरा प्रदान और कलाम मेरा अजाब है (मुझे कुछ

का ज्ञान हो सकता है और न वह वास्तविकता के अनुसार अपने जीवन को ढाल ही सकता है। पथ-प्रदर्शन के लिए अल्लाह ही पर भरोसा करना चाहिए और उसके दिखाये हुये मार्ग पर चलने और उसके आदेशो के अनुपालन को ही अपना परम कर्तव्य समझना चाहिए।

१० मनुष्य को जो-कुछ प्राप्त है वह अल्लाह ही का दिया हुआ है। सब उसी के आश्रित हैं। मनुष्य को उसी के आगे हाथ फैलाना चाहिए। उसको छोडकर किसी और को अपना दाता और कष्ट निवारक समझना घोरतम अन्याय है।

११. अर्थात् अल्लाह निरपेक्ष है और परम स्वतन्त्र है, उसके यहाँ किसी चीज़ की कमी नही। वह महान् और और अपार सामर्थ्य व शक्ति का स्वामी है। किसी का विद्रोह उसका कुछ नही बिगाड सकता। दान-व-प्रदान से उसके यहाँ कोई कमी नही होती। वह अपने-आप बडाई और श्रेष्ठता का अधिकारी है। उसकी महानता और श्रेष्ठता किसी के मानने-न-मानन पर कदापि अवलम्बित नही है। यदि कोई उसे मानने से इन्कार करता है, तो इमसे उसकी पूर्णता एव सौन्दर्य मे कोई अन्तर नही आ सकता।

१२ यहाँ जिसका अनुवाद निरपेक्ष व सर्वाधिकार किया गया है वह 'समद' शब्द है। समद का मौलिक अर्थ चट्टान होता है। शत्रु के आक्रमण के अवसर पर चट्टान

करना नही पडता), जब मैं किसी चीज का इरादा करता हूँ, तो बस उसके लिए यह कह देता हूँ कि हो जा, तो वह हो जाती है[13]।

—अहमद, मुस्लिम, तिरमिज़ी

१० हजरत अबू दरदा रजि० मे उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह की प्रतिष्ठा एव सम्मान करो, वह तुम्हे क्षमा कर देगा[14]। —अहमद, तबरानी

११ हजरत अदी बिन हातिम रजि० मे उल्लिखित है कि एक भाषण-कर्त्ता ने नबी सल्ल० के सामने भाषण दिया। उस ने (भाषण देते हुये) कहा जो अल्लाह और उस के रसूल का आज्ञापालन करेगा

की पनाह ली जाती थी। ज़बूर (*Psalms*) प्राचीन ग्रन्थो मे भी अल्लाह को "चट्टान" और "मदद की चट्टान" कहा गया है। उदाहरणार्थ देखिए ज़बूर १८ २, ६२ . २, ६, ६४ · २२। जबूर के ये वाक्य कितने सुन्दर हैं· "मेरी चट्टान और मेरा किला (दुर्ग) तू है। हे मेरे प्रभु! मुझे दुष्ट के हाथ से, कुटिल और निर्मम मनुष्य के हाथ से छुडा। क्योकि हे प्रभुवर, प्रभु तू ही मेरी आशा है" (ज़बूर ७१ : ३-४)।"

उस नायक अथवा सरदार को भी 'समद' कहते हैं जिसके ऊपर कोई और सरदार न हो। अपनी आवश्यकताओ को लेकर जिसकी ओर सब दौडते हो और वह अपनी आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए कही न जाता हो। अल्लाह को 'समद' कहने का अर्थ यह है कि वह निरपेक्ष है, दूसरे सब उसी के आश्रित और उपजीवी है। उसे किसी सहायक की आवश्यकता नही परन्तु वह स्वय सबका सहायक, आश्रयदाता और आधार है। मनुष्य की निगाह उठनी चाहिए। तो केवल उसी की ओर उठनी चाहिए। पुकारना चाहिए तो उसे ही और दोडना चाहिए, तो उसी की ओर।

१३ अर्थात् कुछ करने के लिए वह साधन एव सामग्री का मुहताज नही। कोई भी काम उसके लिए मुश्किल नही। वह सर्वशक्तिमान है। जो बात भी कह दे वह हो जाती है (दे० कुरआन सूरा अल-बकरा आयत ११६, ११७, सूरा आले इमरान आयत ६)। कार्य-कारण की शृखला आदि को उसके आदेश की प्रतीक्षा होती है, उसे किसी की प्रतीक्षा नही करनी पडती। हर चीज का अन्तिम कारण वह स्वय है।

१४ अर्थात् उसकी महानता और उसके गौरव का हर समय ध्यान रक्खो, तुम्हारे सिर सदैव उसके आगे झुके हुए हो। अपने जीवन मे सदा उसके आदेशो का ध्यान रक्खो। वह भी तुम्हारी गलतियो को क्षमा करेगा और तुम पर उसकी दया-दृष्टि बनी रहेगी।

वह सीधे मार्ग पर रहा और जिसने उन दोनो की अवज्ञा की . ..इस पर आप ने कहा खड़ा हो जा या चला जा। तू बहुत बुरा भाषण-कर्त्ता है[१५]।

१२. हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · तुम में कोई व्यक्ति (अपने गुलाम या लौडी को) मेरा गुलाम और मेरी लौडी न कहे, तुम सब अल्लाह के गुलाम हो और तुम्हारी सारी स्त्रियाँ अल्लाह की लौडियाँ (दासियाँ) है—बल्कि यो कहे मेरा सेवक और मेरी सेविका और मेरा लडका और मेरी लडकी। और न कोई गुलाम (अपने स्वामी को) मेरा 'रब' (स्वामी) कहे बल्कि 'मेरा सरदार' कहे[१६]। —मुस्लिम

१३ हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि सर्वोच्च अल्लाह कहता है श्रेष्ठता मेरी चादर है और महानता मेरी तहमत है। जो व्यक्ति इन दोनो में से किसी एक मे मुझ से झगडेगा मैं उसे ('जहन्नम' की) आग मे दाखिल करूँगा। एक

---

१५ 'इन दोनो की अवज्ञा की' अर्थात् अल्लाह और उसके 'रसूल' की अवज्ञा की। भाषणकर्त्ता ने अल्लाह और 'रसूल' को एक ही सर्वनाम मे जोड दिया। इसमे एक प्रकार की समानता का आभास होता है। नबी सल्ल० इसको सहन न कर सके कि अल्लाह की महानता के प्रति कोई तनिक भी असावधानी से काम ल। आपने भाषण देने वाले को सख्ती से टोका कि वह अल्लाह की बडाई और उसकी प्रतिष्ठा का पूरा-पूरा ध्यान रक्खे। मुस्लिम की एक 'हदीस' है कि इस अवसर पर आपने कहा "तू बुरा भाषणकर्ता है, तुझे यो कहना चाहिए था कि जो अल्लाह और उसके 'रसूल' की अवज्ञा करे।" अर्थात् तुझे अल्लाह और 'रसूल' का अलग-अलग जिक्र करना चाहिए था। 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) और अल्लाह की महानता यदि पूर्ण रूप से हृदय मे जगह पा ले, तो सर्वनाम का इस प्रकार मे प्रयोग क्षमा योग्य समझा जा सकता है, परन्तु कभी-कभी भाषणकर्त्ता और श्रोताओ की स्थिति और उनकी मनोवृत्ति ऐसी होती है कि आवश्यक होता है कि साधारण भूल-चूक पर भी चुप न रहा जाये।

१६ मतलब यह है कि मनुष्य को सदा अपनी दासता और अल्लाह की प्रभुता एवं महानता को ध्यान मे रखना चाहिए। कोई ऐसी बात कदापि नही कहनी चाहिए जो बन्दे को शोभा न देती हो या जो अल्लाह की महानता और प्रभुता की अनुभूति से रहित हो।

रिवायत में है कि मैं उसे ('जहन्नम' की) आग में फेंक दूँगा[१७]।

—मुस्लिम

१४ अब्दुल्लाह इब्न अम्र रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : आदम के बेटे (मनुष्य) के समस्त हृदय कृपाशील ईश्वर की दो उँगलियो के बीच एक हृदय की तरह है। वह जिस प्रकार चाहता है उन्हे फेरता रहता है। इसके बाद अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . हे अल्लाह, हृदयों के फेरने वाले ! हमारे हृदयों को अपने आज्ञा-पालन की ओर फेर दे[१८]।

—मुस्लिम

---

१७. एक 'रिवायत' मे "महानता मेरी तहमत है' के स्थान पर "इज्ज़त मेरी तहमत है" के शब्द आये है। 'हदीस' का अर्थ यह है कि जिस प्रकार चादर और तहमत मनुष्य के वस्त्र होते हैं, यह कोई पसन्द नही कर सकता कि कोई व्यक्ति उसके वस्त्र को उससे छीन ले। इस तरह महनता एव श्रेष्ठता और गौरव एव प्रतिष्ठा अल्लाह के निजी वस्त्र के समान हैं। जो व्यक्ति ससार मे अपनी बडाई और इज्ज़त या गौरव का दावेदार है वह वास्तव मे अपनी वास्तविकता को भूल कर अपने को ईश्वरत्व का अधिकारी समझता है। वह कदाचित् इस बात से अनभिज्ञ है कि बडाई और महानता केवल अल्लाह के लिए है। बन्दे को जो चीज़ शोभा देती है वह दासता और विनयभाव है। अभिमान, अहकार और अपने बडे होने का घमण्ड मानव के लिए घातक ही सिद्ध होता है।

१८. मनुष्य के बाह्य अस्तित्व ही पर नही, उसके अन्तर, उसकी हृदयस्थिति और आतरिक भावो पर भी अल्लाह का पूर्ण रूप से अधिकार है। वह जिस ओर चाहता है मनुष्य के दिल को फेर देता है। दुर्भाग्य है उन लोगो का जिनके दिल गुनाह और जुल्म और सरकशी की ओर झुके हुये हो, जिनके दिल मे भलाई और नेकी के लिए कोई जगह न हो। और भाग्यवान् हैं वे लोग जिन के दिल अल्लाह के आज्ञापालन और उसकी दासता की ओर झुके हुये हो। अल्लाह उन्ही लोगो को अपने आज्ञापालन, दासता और प्रेम का सुअवसर प्रदान करता है जो वास्तव मे इसके इच्छुक होते है। वे लोग जिनको सत्य-असत्य, सुन्दर-असुन्दर और भलाई-बुराई की कोई चिन्ता नही, तो अल्लाह को भी ऐसे लोगो की कोई परवाह नही होती। वह ऐसे लोगों को विनाश के लिए छोड देता है। [illegible] प्रार्थना कि अल्लाह ! हमारे दिलो को अपने आज्ञापालन और दासता की ओर फर, इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि बन्दा उस मार्ग पर चलना चाहता है जो अल्लाह को प्रिय है। ऐसे लोगो को अल्लाह अवश्य अपनी प्रसन्नता के मार्ग पर चलने का सौभाग्य प्रदान करता है।

ईश-आत्माभिमान

عن المغيرة رض قال قال سعد بن عبادة لو رأيت رجلا مع امرأتي لضربته
بالسيف غير مصفح فبلغ ذلك رسول الله صلى الله عليه وسلم فقال أتعجبون
من غيرة سعد، والله لأنا أغير منه والله أغير مني ومن أجل غيرة الله حرم الله
الفواحش ما ظهر منها وما بطن ولا أحد أحب إليه العذر من الله ومن أجل ذلك
بعث المنذرين والمبشرين، ولا أحد أحب إليه المدحة من الله ومن أجل
ذلك وعد الجنة ———— بخاری

१. हजरत मुगीरह रजि० से उल्लिखित है कि सअद बिन उबादा रजि० ने कहा कि यदि मैं किसी व्यक्ति को अपनी स्त्री के साथ (अनुचित दशा में) देख लूँ तो तलवार से उसके टुकडे-टुकडे कर डालूँ। यह बात अल्लाह के रसूल तक पहुँची, तो आपने कहा : क्या तुम सअद के आत्म सम्मान पर आश्चर्य करते हो ? अल्लाह की कसम मै उन से बढ़कर आत्माभिमानी हूँ। और अल्लाह मुझ से बढकर आत्माभिमानी है। इसीलिए उसने समस्त अश्लील और निर्लज्जता की बातो को चाहे वे खुली हो या छिपी अवैध कर दिया[1] इसी प्रकार अल्लाह से अधिक यह बात किसी को प्रिय नही कि हुज्जत पूरी हो, इसीलिए उसने ('जहन्नम' से) डराने वाले और

---

१. जिस प्रकार मनुष्य की गैरत और उसके आत्माभिमान को यह असह्य है कि कोई व्यक्ति उसकी स्त्री पर हाथ डाले और उसकी पत्नी मे उसका सहभागी हो, इसी प्रकार अल्लाह की गैरत और उसकी आत्म-प्रतिष्ठा को भी यह असह्य है कि उसके बन्दे ऐसे कर्म करें जो बेगैरती और निर्लजता के कर्म हैं। इसीलिए अल्लाह ने खुले-छिपे समस्त बुरे और अश्लीलता के कर्म को अवैध कर दिया

('जन्नत' की) शुभ सूचना देने वाले ('नबी') भेजे[२]। और अल्लाह से बढ कर प्रशसा भी किसी को प्रिय नही इसीलिए उसने (इस पर) 'जन्नत' का वादा किया है[३]।
—बुखारी

२ हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · बरकत वाला सर्वोच्च अल्लाह आत्माभिमान करता है और अल्लाह का आत्माभिमान यह है कि कोई 'ईमान' वाला ऐसा कर्म करे जिसे अल्लाह ने अवैध किया हो (वह अल्लाह को बुरा मालूम होता है)।
—बुखारी

३. हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा हे मुहम्मद के समुदाय वालो! अल्लाह की कसम अल्लाह से अधिक कोई इस बात की ग़ैरत (लज्जा, आत्माभिमान) नही रखता कि उसका गुलाम या उसकी लौडी (दासी) जिना (व्यभिचार) करे[४]।
—बुखारी

४ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि सर्वोच्च अल्लाह कहता है . "मैं समस्त सहभागियो में सबसे बढकर 'शिर्क' से निरपेक्ष हूँ। जो व्यक्ति कोई कर्म करता और उस में मेरे साथ किसी और को भी साझी कर लेता है, तो मैं उसे और उसके 'शिर्क' को छोड़कर अलग हो जाता हूँ।" एक 'रिवायत' में है कि मैं ऐसे

है। ज़िना और व्यभिचार की तरह अल्लाह को यह बात भी अप्रिय है कि कोई उसकी बन्दगी, उपासना आदि मे किसी को उसका सहभागी बनाये। अल्लाह अत्यन्त आत्माभिमानी है, वह 'शिर्क' जैसे घृणित कर्म को कभी पसन्द नही कर सकता।

२ अर्थात् अल्लाह को यह बात पसन्द नही है कि उसके बन्दे अनजाने मे उसके प्रकोप के भागी हो। इसी कारण उसने 'नबियो' को भेजा ताकि वे लोगों को सूचित कर दे कि उन्हे क्या चीज़ अपनानी है और किस चीज़ से उन्हें बचना है।

३. अर्थात् अल्लाह को यह बात बहुत ही प्रिय है कि उसके सेवक बन्दे उसकी 'हम्द', और उसकी प्रशसा एव गुणगान मे लगे रहे। उसकी 'हम्द' और गुण-गान ही जीवन का अभिप्राय और प्राप्ति है और इसी पर 'जन्नत' का वादा भी किया गया है।

४. अर्थात् जिना (व्यभिचार) और अवैध कर्मों मे लिप्त होना अल्लाह की गैरत को अत्यन्त अप्रिय है।

कर्म से विरक्त हूँ, वह कर्म उसी के लिए है जिसके लिए उसने किया है[५]।'
—मुस्लिम

५. हज़रत अबू उमामा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि प्रतापवान् एवं तेजोमय अल्लाह केवल उस कर्म को स्वीकार करता है जो केवल उसी के लिए हो और जिसके द्वारा उसको मुखाकांक्षा की गई हो। —अबू दाऊद, नसई

६. अता बिन यसार से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : हे अल्लाह ! मेरी कब्र को बुत न बनने देना कि उसकी पूजा की जाने लगे[६]। अल्लाह का उन पर प्रकोप हुआ है जिन्होने अपने 'नबियों' की

---

५. अर्थात् अल्लाह की गैरत (आत्माभिमान) इसको कभी पसन्द नही कर सकती कि उसके साथ किसी को शरीक् किया जाये जबकि कोई उसके बराबर का नही है। जो भी है-उसका बन्दा और उसका पैदा किया उपजीवी है। फिर किसी भी हैसियत से कोई उसका सहभागी कैसे हो सकता है। अल्लाह को अपने बन्दो और सेवको से निर्लिप्त और शुद्ध बन्दगी और सेवा अभीष्ट है। जिस 'इबादत' और उपासना मे 'शिर्क' मिला हुआ हो या जिस कर्म मे अल्लाह के अतिरिक्त किसी दूसरे को प्रसन्न करना अभीष्ट हो उसे अल्लाह के यहाँ कभी भी स्वीकृति प्राप्त नही हो सकती। कुरआन में (सूर अन-नूर ३) 'शिर्क' करने वाले पुरुषो और स्त्रियो और ज़िना करने वाले पुरुषो और स्त्रियो का उल्लेख एक साथ किया गया है। 'तौरात' और इञ्जील मे 'शिर्क' को स्पष्ट शब्दो मे विभिन्न स्थानो पर ज़िना और व्यभिचार कहा गया है। उदाहरणार्थ देखिए निर्गमन (*Ex.*) २० : ३-७; ३४. १४-१८, लैव्यव्यवस्था (*Lev*) २० ५-८, व्यवस्था विवरण (*Deut.*) ५ ८-१०, यसइयाह (*Isaih*) ५७ ३-६, यरमियाह (*Jermiah*) २ ५-२८, ३ १-६। 'शिर्क' और ज़िना मे बड़ी समानता पाई जाती है। 'शिर्क' भी ज़िना (व्यभिचार) ही की तरह अत्यन्त घृणित कर्म है। इसी लिए कुरआन मे 'शिर्क' को "रिज्स" अर्थात् नापाकी और 'मुश्रिक' को "नज्स" (नापाक व अशुद्ध) कहा गया है।

'शिर्क' करने वाला उस उच्च और आदरणीय स्थान से, जो अल्लाह ने मनुष्य को प्रदान किया है, गिर जाता है। उसकी दशा कुरआन के शब्दो मे यह होती है "जो कोई अल्लाह के साथ 'शिर्क' करे तो मानो वह आकाश से गिर पड़ा फिर चाहे चिडियाँ उसे उचक ले जाये या वायु उसे दूरवर्ती स्थान पर (ले जा कर) फेंक दे" (सूरा अल-हज्ज ३१)।

६. अर्थात् ऐसा न हो कि मेरे बाद लोग मेरी कब्र की पूजा करने मे लग जावें।

क़ब्रों को सजदागाह बना डाला[७]। —मालिक (मुरसल रूप मे)

७. हज़रत इब्न उमर रजि० कहते हैं कि मैंने अल्लाह् के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि जिसने अल्लाह् के सिवा किसी दूसरे की कसम खाई उसने 'शिर्क' किया[८]। —तिरमिज़ी

८ हज़रत अबू सईद रजि० और हजरत अबू हुरैरह रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा कि अल्लाह् कहता है बडाई एव श्रेष्ठता मेरी चादर है और इज्ज़त मेरी तहमत है। जो व्यक्ति इनमें से कुछ छीनना चाहेगा, मैं उसे यातना दूँगा[९]। —मुस्लिम, अबूदाऊद

९ हज़रत जाबिर बिन अतीक रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा : कतिपय गैरत (आत्माभिमान) सर्वोच्च अल्लाह्

---

७ इबादत' और पूजा अल्लाह् के सिवा किसी की भी वैध नही है। यह अल्लाह् ही का हक है कि उसे अपना 'इलाह' (पूज्य) बनाया जाये और उसकी पूजा और 'इबादत' की जाये। जो व्यक्ति अल्लाह् के अतिरिक्त किसी और की उपासना और इबादत' करता है वह वास्तव में अल्लाह् की गैरत (आत्माभिमान) को चुनौती देता है। ऐसा व्याक्ति अल्लाह् के प्रकोप से कैसे बच सकता है। पिछली जातियाँ जब 'शिर्क' (बहुदेववाद)' मे ग्रस्त हुई और उन्होंने अल्लाह् को छोड कर अपने 'नबियो' को अपना पूज्य और उनकी क़ब्रो को सजदागाह् बना लिया फिर वे अल्लाह् के प्रकोप से न बच सकी।

८. कसम उसकी खाई जाती है जिसका दिल मे असाधारण आदर, सम्मान और जिसकी महानता की अनुभूति हो। अल्लाह् के अलावा किसी दूसरे की कसम खाने का अर्थ यह है आदमी अपने व्यवहार से उसे अल्लाह् के बराबर स्थान देना चाहता है। इससे बढ कर अत्याचार क्या हो सकता है। कसम खाने की आदत को पसन्द नही किया गया है। बार-बार और बिना किसी विशेष आवश्यकता के कमम खा कर मनुष्य कसम और जिसकी कसम खाता है उसकी प्रनिष्ठा को घटाता है। यदि किसी कारण कसम खानी ही पड़े, तो मनुष्य को अल्लाह् और उसके गुण की कसम खानी चाहिए, किसी और की क़सम कदापि न खानी चाहिए। मक्का के लोगो को विशेष रूप से कुरैश वश के लोगो की आदत थी, वह अपनें पूर्वजो की कसमे खाया करते थे। नबी सल्ल० ने इस से रोका।

९. मतलब यह है कि इज्ज़त, बडाई, और महानता वास्तव मे अल्लाह ही के लिये है। बन्दे को जो चीज़ शोभा देती है वह बन्दगी और विनय भाव है न कि झूठी बड़ाई और प्रतिष्ठा का दावा। ऐसे व्यक्ति के लिये अल्लाह के यहाँ अपमानजनक दण्ड है ताकि वह अपने अहकार का मज़ा चख ले।

को प्रिय है और कतिपय सर्वोच्च अल्लाह को प्रिय नही है। जो गैरत अल्लाह को प्रिय है वह सन्देह के अवसर की गैरत है[10]। और जो गैरत अल्लाह को प्रिय नही वह सन्देह के अवसर की गैरत है[11]। और कतिपय गर्व अल्लाह को प्रिय नही और कतिपय गर्व सर्वोच्च अल्लाह को प्रिय है। जो गर्व सर्वोच्च अल्लाह को प्रिय है वह मनुष्य का सग्राम के अवसर का गर्व है और उसका 'सदका' (दान) करने के समय का गर्व है[12]।और जो गर्व सर्वोच्च अल्लाह को प्रिय नही वह उसका जुल्म व सरकशी और बड़ाई न गर्व करना है। —अबू दाऊद, नसई

---

१० अर्थात् जहाँ बदकारी और व्यभिचार का सन्देह या शका हो वहाँ अवश्य आदमी को गैरत और आत्म-प्रतिष्ठा का खयाल होना चाहिए। ऐसी गैरत अल्लाह को प्रिय है इसलिए कि वह स्वय गैरत वाला है।

११ अर्थात् जहाँ किसी बदकारी या किसी अश्लील कर्म का सन्देह या शका न हो वहाँ अपनी गैरत होने का अकारण परिचय देने लगना अशोभनीय और सामाजिक नियम व लोक व्यवहार के प्रतिकूल है, इसलिए उसे अल्लाह कभी पसन्द नही कर सकता।

१२ सत्य-असत्य के युद्ध के अवसर पर यदि कोई सत्य के लिये लडने वाला गर्व करता है वह वास्तव मे अल्लाह ही के लिये होता है। इससे धर्म-योद्धाओ का साहस बढता और शत्रु पर उनका रोब छा जाता है। सदका के समय का गर्व यदि वह गर्व अल्लाह के लिये है, मनुष्य को विशाल-हृदय बनाता है और उसे तग दिली से बचाता है। इससे दूसरो मे भी सदका करने का जोश उभरता है। दूसरे शब्दो मे हम कह सकते हैं कि गर्व की चीज़ यदि है तो वह शत्रु के मुकाबले मे वीरता और दृढता का प्रदर्शन और अल्लाह के मार्ग मे अपना माल खर्च करना या इसी तरह के दूसरे सत्कर्म। ऐसे कर्म जिनके पीछे स्वार्थ के अतिरिक्त कोई उच्च भावना काम न कर रही हो, उन पर गर्व करने के बदले मनुष्य को लज्जित होना चाहिए। यदि ऐसा नही है, तो इसे अज्ञान और निकृष्ट अभिरुचि ही का फल समझना चाहिए।

अल्लाह का हक़

عَنْ مُعَاذِ بْنِ جَبَلٍ قَالَ كُنْتُ رِدْفَ النَّبِيِّ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ لَيْسَ بَيْنِيْ وَ بَيْنَهُ إِلَّا مُؤْخِرَةُ الرَّحْلِ، فَقَالَ يَا مُعَاذَ بْنَ جَبَلٍ، فَقُلْتُ لَبَّيْكَ يَا رَسُوْلَ اللّٰهِ وَ سَعْدَيْكَ، ثُمَّ سَارَ سَاعَةً، ثُمَّ قَالَ، يَا مُعَاذَ بْنَ جَبَلٍ! قُلْتُ لَبَّيْكَ يَا رَسُوْلَ اللّٰهِ وَ سَعْدَيْكَ! ثُمَّ سَارَ سَاعَةً، ثُمَّ قَالَ، يَا مُعَاذَ بْنَ جَبَلٍ! قُلْتُ لَبَّيْكَ يَا رَسُوْلَ اللّٰهِ وَ سَعْدَيْكَ! قَالَ هَلْ تَدْرِيْ مَا حَقُّ اللّٰهِ عَزَّ وَجَلَّ عَلَى الْعِبَادِ؟ قَالَ قُلْتُ اللّٰهُ وَرَسُوْلُهُ أَعْلَمُ، قَالَ فَإِنَّ حَقَّ اللّٰهِ عَلَى الْعِبَادِ أَنْ يَعْبُدُوْهُ وَلَا يُشْرِكُوْا بِهِ شَيْئًا، ثُمَّ سَارَ سَاعَةً ثُمَّ قَالَ يَا مُعَاذَ بْنَ جَبَلٍ! قُلْتُ لَبَّيْكَ يَا رَسُوْلَ اللّٰهِ وَسَعْدَيْكَ! قَالَ هَلْ تَدْرِيْ مَا حَقُّ الْعِبَادِ عَلَى اللّٰهِ إِذَا فَعَلُوْا ذٰلِكَ؟ قُلْتُ اللّٰهُ وَرَسُوْلُهُ أَعْلَمُ، قَالَ أَنْ لَا يُعَذِّبَهُمْ. ——— بخاری، مسلم

१. हजरत मुआज़ बिन जबल रज़ि० कहते है कि मै नबी सल्ल० के पीछे एक सवारी पर बैठा हुआ था। और मेरे आपके बीच मैं कजावा का केवल पिछला भाग था। आपने कहा . हे मुआज बिन जबल, मैंने कहा . हे अल्लाह के रसूल ! मैं आपकी सेवा के लिए बारम्बार हाजिर हूँ। फिर कुछ देर चले, फिर कहा . हे मुआज बिन जबल ! मैंने कहा हे लल्लाह के रसूल ! मैं आपकी सेवा के लिए बाारम्बार हाजिर हूँ। फिर कुछ देर चले, फिर कहा हे मुआज बिन जबल! मैंने कहा. हे अल्लाह के रसूल! में आप की सेवा के लिए बारम्बार हाजिर हूँ। आपने कहा : क्या तुम जानते हो कि बन्दो पर प्रतापवान् तेजोमय अल्लाह का क्या हक है ? मैंने कहा : अल्लाह और उसका 'रसूल' अधिक जानते हैं। आपने कहा . 'अल्लाह' का हक बन्दो पर यह है कि वे उसकी 'इबादत' करे और उसके साथ किसी चीज़ को शरीक न करे।" फिर कुछ चले, फिर कहा . हे मुआज़ बिन जवल ! मैंने कहा : हे अल्लाह के रसूल ! मैं सेवा में हाज़िर हूँ। आपने कहा क्या तुम जानते हो कि बन्दो का अल्लाह पर क्या हक़ है, जबकि वे ऐसा कर दे ? मैंने कहा . अल्लाह और उसका 'रसूल' अधिक जानते है। कहा यह कि वह उन्हे यातना न दे[1]। —बुख़ारी, मुस्लिम

१. हज़रत मुआज़ रज़ि० को नबी सल्ल० ने तीन बार इसलिए पुकारा ताकि वे पूर्ण रूप से ध्यान देकर आपकी बात सुनें। आपने जो बातें बताई वे ऐसी ही हैं कि उन्हे ध्यान से सुनकर हृदयंगम किया जाये।

यह 'हदीस' बताती हैं कि अल्लाह का यह हक है कि लोग उसकी बन्दगी करें और किसी को उसका सहभागी न बनाएँ। केवल एक अल्लाह के होकर

२ हज़रत अनस रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा : अल्लाह (कियामत[1] के दिन) उस जहन्नमी (नरकगामी) से जो सब से कम यातना में होगा, पूछेगा : क्या इस यातना से बचने के लिए तेरे हाथ में धरती की समस्त चीजें होती, तो दे देता ? वह कहेगा : हाँ (मेरे पास जो-कुछ भी होता यातना से छुटकारा पाने के लिए दे डालता)। अल्लाह कहेगा : मैंने तो तुझ से बहुत हल्की चीज चाही थी जबकि तू आदम की पीठ में था, वह यह कि मेरे साथ किसी चीज़ को शरीक न करना, परन्तु तू न माना और (मेरे हाथ) 'शिर्क'[2] किया। —बुखारी, मुस्लिम

रहें। जब वे अल्लाह ही के दास और गुलाम हैं, तो फिर उन्हें अपना सम्पूर्ण जीवन अल्लाह ही के आज्ञापालन मे व्यतीत करना चाहिए। न उन्हे अपनी तुच्छ इच्छाओ का दास होना चाहिए और न अपने जैसे दूसरे मनुष्यो की दासता स्वीकार करनी चाहिए और न किसी देवी-देवता के आगे अपना सिर झुकाना चाहिए। वे एक अल्लाह के बन्दे हैं, उन्हे एक ही की बन्दगी करनी चाहिए। अल्लाह की बन्दगी और ईश्वरीय इच्छा का अनुपालन हमारी प्रकृति की माँग है। अपनी प्रकृति की माँग की पूर्ति ही से वास्तविक आनन्द की प्राप्ति भी सम्भव है। इस प्रकार अल्लाह की बन्दगी और दासता कोई रस-हीन व्यस्तता नही रहती बल्कि वह मनुष्य के लिए परम सुख शान्ति एव आनन्द का विषय सिद्ध होती है।

बन्दा यदि अल्लाह के हक को नही भूलता, तो उसका अल्लाह भी उसे विनष्ट नही होने देता। वह उसे शाश्वत विनाश और 'जहन्नम' की यातनाओ से अवश्य ही बचा लेगा जो उन लोगो के लिए तैयार की गई हैं जो अल्लाह के सरकश और अवज्ञाकारी हैं।

'रिवायत' से यह भी मालूम होता है कि हज़रत मुआज़ रज़ि० ने नबी सल्ल० से पूछा था कि क्या मैं लोगो को इसकी शुभ-सूचना दे दूँ ? आपने कहा . 'उनको शुभ सूचना न दो क्योकि वे इसी पर भरोसा कर बैठेंगे अर्थात् लोग इस भ्रम मे पड सकते हैं कि 'जहन्नम' से बचने के लिए मुख से अल्लाह के एक होने को मान लेना काफी है।

२. अर्थात् मैंने तुझ से एक ऐसी चीज माँगी थी जो बिल्कुल स्वाभाविक और सहज थी मैंने तुझ से चाहा था कि तू केवल मुझे अपना उपास्य और 'इलाह' समझना और अपने जीवन मे किसी को वह स्थान न देना, जो स्थान केवल मेरा है। परन्तु तूने मेरी इच्छा और माँग की उपेक्षा करके विश्वासघात किया। मेरे साथ तू दूसरो की उपासना करने लगा और प्रभुता एव ईश्वरत्व को विभाजनीय वस्तु बनाकर तूने घोर अन्याय किया।

३ हज़रत अबू दरदा रजि० से उल्लिखित है कि सर्वोच्च अल्लाह कहता है मेरा और जिन्न व मनुष्य का मामला एक भारी बात बन चुका है पैदा मै करता हूँ। और वह 'इबादत' (दासता एव उपासना) मेरे सिवा दूसरे को करता है। रोजी मैं देता हूँ और वह कृतज्ञता मेरे सिवा दूसरे के आगे दिखलाता है[3]।

४ हज़रत सलमान फारसी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि सर्वोच्च अल्लाह कहता है हे आदम के बेटे तीन बातें ऐसी हैं जिनमे से एक का सम्बन्ध तो केवल मेरे साथ है और एक बात ऐसी है जो मेरे और तेरे बीच समन्वित है। जिसका सम्बन्ध मुझ से है वह यह है कि मेरी 'इबादत' कर और मेरे साथ किसी चीज को शरीक न कर, जिस बात का सम्बन्ध तेरे साथ है वह यह है कि तू जो कर्म करे उसका मैं तुझे प्रतिदान दूँ और यदि मै क्षमा कर दूँ, तो मै क्षमाशील और दयावन्त हूँ। और जो चीज मेरे और तेरे बीच समन्वित है वह यह है कि तेरा काम प्रार्थना करना और माँगना है और मेरा काम प्रार्थना को स्वीकार करना और देना है[4]। —तबरानी अल-कबीर

५. हज़रत अबूजर गिफारी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के

---

३ अर्थात् यह कितनी विचित्र बात है कि लोगो को पैदा करने वाला तो कोई और हो और वे 'इबादत' और उपासना किसी और की करने लगे। रोज़ी तो उन्हे कोई दे रहा हो और वे कृतज्ञ किसी और के हो। आखिर इससे बढकर अप्रिय और असुन्दर बात और क्या हो सकती है।

४ मतलब यह है कि अल्लाह और उसके बन्दो के बीच जो सम्बन्ध एव सम्पर्क है स्वभावत अपेक्षित यही है कि बन्दे केवल उसी की 'इबादत' और उपासना करे और किसी को उसका सहभागी न बनाये। वे अल्लाह ही को पुकारे और अपनी आवश्यकताओ के लिए उसी से प्रार्थनाएँ करे। और अल्लाह का काम यह है कि वह उनकी पुकार सुने, उनके विनयभाव को स्वीकार करे और उनकी प्रार्थनाओ को स्वीकृति प्रदान करे। यह लोगो की निकृष्टतम पथभ्रष्टता और विश्वासघात है कि वे अल्लाह का हक़ नही पहचानते और अपने सम्पूर्ण विनय भाव और दास्यभाव आदि मन की सुन्दरतम चेष्टाओ एव अनुभूतियो को उनपर निछावर करते है जो वास्तव में इसके अधिकारी नही होते। वे अपनी आशाओ को उन झूठे-प्रभुओ से सम्बद्ध रखते है जो स्वय उनके अपने घडे हुये होते हैं। जिनके हाथ मे न लोगो की हानि होती है और न लाभ होता है। जो स्वय उन्ही की तरह विवश होते है।

रसूल सल्ल० ने कहा कर्मो मे सर्वोच्च अल्लाह् को सब से प्रिय वह प्रेम है जो अल्लाह के मार्ग मे हो और वह द्वेष और वैर है जो अल्लाह् के मार्ग में हो[५] । —अबू दाऊद

६. हजरत अबू उमामा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब भी किसी बन्दे ने अल्लाह् के लिए किसी बन्दे से प्रेम किया, उसने अपने प्रतापवान तेजोमय, 'रब' (पालनकर्त्ता प्रभु) की प्रतिष्ठा की[६] । —अहमद

७. हजरत अबू हुरैरह् रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा कि सर्वोच्च अल्लाह् 'कियामत' के दिन कहेगा मेरे प्रताप के कारण परस्पर प्रम करने वाले कहाँ है, आज मैं उन पर अपनी छाया करूँगा, आज मेरी छाया के अतिरिक्त कोई छाया नही[७] । —मुस्लिम

८ अबू उमामा रजि० कहते हैं कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा जिसने प्रेम किया अल्लाह् के लिए, दिया अल्लाह् के लिए और

---

५. अर्थात् अल्लाह् का बन्दे पर एक हक यह भी है कि उसका प्रेम और द्वेष व बैरभाव केवल अल्लाह् के लिए हो वह जिस से प्रेम करे अल्लाह् ही के लिए करे और यदि किसी से उसे बैर और घृणा हो, तो इसका कारण कोई व्यक्तिगत कलह एव शत्रुता न हो बल्कि उसका बैर और उसकी शत्रुता भी अल्लाह् ही के लिए हो ।

६. अर्थात् अल्लाह् की बड़ाई और प्रताप की अपेक्षा यह होती है कि मनुष्य को अल्लाह् के सत्कर्मी बन्दो से प्रेम और स्नेह हो ।

७. अर्थात् वे लोग कहाँ है जिन्होने साँसारिक जीवन मे मेरे हक को पहचाना । आज के दिन उन्हे उनकी वफादारियो और सेवाओ का पूरा बदला दिया जायेगा । आज उन्हे मेरी छाया प्राप्त होगी । मेरी दयालुता की छाया के अतिरिक्त और दूसरी कोई छाया नही है । मेरे सिवा आज कही भी किसी को शरण नही मिल सकती । आज उन लोगो पर मेरी कृपा दृष्टि होगी ससार मे जिनकी मित्रता का आधार केवल मेरा प्रताप और मेरी महानता थी । वे न स्वय अपनी तुच्छ इच्छाओ के दास बने और न किसी और चीज़ के उपासक थे वे केवल मेरे उपासक थे । उन्हे जिस चीज़ ने परस्पर जोडा था वह परस्पर मेरी प्रतिष्ठा और मेरी बडाई की अनुभूति थी । निर्लिप्त और सच्चा प्रेम वही है जो अल्लाह के लिए हो । अल्लाह् पवित्रता की चरम सीमा है । जिस मित्रता मे अल्लाह् की इच्छा, उसकी प्रतिष्ठा और उसकी महानता का ध्यान न रक्खा गया हो वास्तविकता की दृष्टि मे उसका कोई मूल्य और मान्यता नही है ।

रोका अल्लाह के लिए, उसने 'ईमान' को पूर्ण कर लिया[८]।

—अबू दाऊद, तिरमिज़ी

९. हजरत अबूजर रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० हमारे पास आए और कहा . क्या तुम जानते हो कि कौनसा कर्म अल्लाह को सबसे अधिक प्रिय है ? कहने वाले ने कहा 'नमाज' और 'जकात' और कहने वाले ने कहा 'जिहाद'। नबी सल्ल० ने कहा सर्वोच्च अल्लाह की दृष्टि मे सब से प्रिय कर्म है अल्लाह से प्रेम करना और अल्लाह के लिए द्वेष व बैर रखना[९]। —अहमद व अबू दाऊद

१०. हजरत मुआज बिन जबल रजि० कहते है कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि बरकत वाले, सर्वोच्च अल्लाह का कथन है मेरे लिए परस्पर प्रेम करने वालो, और मेरे लिए एक-दूसरे के पास बैठने वालो, और मेरे लिए एक-दूसरे से मिलने वालों, और मेरे लिए एक-दूसरे पर खर्च करने वालो के लिए मेरा प्रेम आवश्यक हो गया[१०]।

—मुअत्ता-इमाम मालिक

११. हज़रत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने इस आयत "वह इस योग्य है कि उसका डर रक्खा जाये। और

---

८. अर्थात् मनुष्य के 'ईमान' की माँग है कि उसका सब-कुछ अल्लाह के लिए हो जाये और उसके समस्त कार्य ईश्वरीय इच्छा के अधीन हो जाये। वह किसी से मित्रता का सम्बन्ध जोड़े, तो अल्लाह के लिए जोड़े। किसी से उसका बैर हो, तो उसके पीछे भी अल्लाह को प्रसन्न करने की पवित्र भावना ही काम कर रही हो। किसी को कुछ दे तो अल्लाह के लिए दे और न दे तो यह न देना और हाथ रोक लेना भी अल्लाह के लिए हो। जब तक यह बात पैदा न हो मनुष्य का 'ईमान' पूर्ण नही होता और न वह सत्य और न्याय पर स्थिर रह सकता है। मनुष्य का सब-कुछ यदि अल्लाह की इच्छा के अधीन हो जाये, तो वह न तो किसी पर अत्याचार कर सकता है और न किसी के साथ अन्याय की नीति अपना सकता है। और न कभी सत्य एव न्याय की माँग की उपेक्षा कर सकता है। तिरमिज़ी मे यह 'हदीस' हज़रत अनस रज़ि० से उल्लिखित है और उसके अन्तिम शब्द ये है "उसने अपने 'ईमान' को पूर्ण कर लिया।"

९ अबू दाऊद मे केवल अन्त के शब्दो का उल्लेख हुआ है।

१०. अर्थात् जो लोग मेरी ही प्रसन्नता और मुखाकाक्षा के लिए परस्पर मिलते-जुलते और एक-दूसरे पर अपना माल खर्च करते हैं, मैं उन से अवश्य प्रेम करता हूँ। मेरे ये सेवक मेरी कृपा दृष्टि से कभी वचित नही रह सकते।

इस योग्य कि क्षमा करे"—के बारे में कहा, अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . मैं इस योग्य हूँ कि मेरा डर रक्खा जाये और मेरे साथ मेरे गैर को शरीक न किया जाये। और मैं इस योग्य हूँ कि जो व्यक्ति इस से बचा कि वह किसी को मेरा सहभागी बनाये मै उसे क्षमा कर दूँ[११]।

—इब्न माजह

१२ हजरत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : सर्वोच्च अल्लाह 'कियामत' के दिन कहेगा : मैंने तुम्हे हुक्म दिया था तो तुम ने उन आदेशों को अकारथ किया जो मैंने तुम्हे दिए थे और अपने कुल और गोत्र को ऊपर उठाया। आज मै अपनी श्रेणी ऊँची करूँगा और तुम्हारे वश-श्रेणी को अकारथ करूँगा। कहाँ हैं (अल्लाह का) डर रखने वाले ? निस्सन्देह अल्लाह की दृष्टि मे तुम मे सबसे अधिक प्रतिष्ठित वह है जो तुम में सब से अधिक (अल्लाह का) डर रखने वाला हो[१२]। —बैहक़ी-शोबुल ईमान

१३. हजरत अबू मूसा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . बूढे मुस्लिम की प्रतिष्ठा एव सम्माल, उस कुरआन-वाहक की प्रतिष्ठा जो कुरआन में अत्युक्ति और ज्यादती करने वाला न हो, और न्यायशील सुलतान (राज्याधिकारी) की प्रतिष्ठा अल्लाह की प्रतिष्ठा में से है[१३]। —अबू दाऊद, बैहकी-शोबुल ईमान

१४. हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा ('जहन्नम' की) आग में दुर्भागी के अतिरिक्त और कोई न जायेगा। कहा गया : हे अल्लाह के रसूल ! दुर्भागी कौन होगा ? कहा . जो अल्लाह के लिए कोई आज्ञापालन का कार्य न करे और उसके लिए कोई अवज्ञा का काम न छोडे। —इब्न माजह

---

११ अर्थात् जिसने मेरे हक़ को पहचाना, मुझ से डरता रहा और 'कुफ़्' व 'शिर्क' की गन्दगियो से अपने-आपको बचाये रक्खा, मैं उसे क्षमा करूँगा और 'जहन्नम' की यातनाओं से बचा लूँगा।

१२ अर्थात् आज मैं तुम्हारे सारे नस्ली और जाति एव गोत्र आदि सम्बन्धी गर्व को धूल में मिला दूँगा जिसके कारण तुम धरती पर अकड़ते फिरते थे और दूसरो को तुच्छ समझते और उन पर अत्याचार करते रहे थे। आज तुम्हे ज्ञात हो जायेगा कि अल्लाह की दृष्टि में सब से बढकर इज्जत वाला और सम्मानित व्यक्ति वही है जो सब से अधिक अल्लाह के हक और अधिकार को पहचानता हो और अपने मन में उसका डर रखता हो।

१३. मालूम हुआ कि उनका आदर और सत्कार करना हमारे लिए आवश्यक है, जो इसके

योग्य हो। जिसके मन में उन लोगो का आदर और सम्मान नहीं जो वास्तव मे आदर व प्रतिष्ठा का अधिकारी हैं वह जीवन के मौलिक मूल्यो (*Values*) और मान्यताओ से अनभिज्ञ है। इसका जीवन अभी उस अनुभूति और आत्मिक दृष्टि से रहित है जिसके कारण मनुष्य अल्लाह की प्रतिष्ठा करता और उसके प्रताप एव महानता के आगे अपने को झुका देता है। अल्लाह की प्रतिष्ठा एव महानता की अनुभूति से अपने हृदय को रिक्त न होने देना और आदरणीय व्यक्तियो का आदर करना वास्तविकता की दृष्टि से मे दो कृति नही हैं बल्कि यह एक ही कृति है। चरित्र एव आचरण की पूर्णता उसी समय सम्भव है जबकि उसमे किसी अवसर पर भी दोष न दीख पडे।

अल्लाह से प्रेम

عَنْ اَنَسٍ قَالَ، قَالَ رَسُوْلُ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ ثَلٰثٌ مَنْ كُنَّ فِيْهِ وَجَدَ حَلَاوَةَ الْاِيْمَانِ: اَنْ يَّكُوْنَ اللهُ وَرَسُوْلُهٗ اَحَبَّ اِلَيْهِ مِمَّا سِوَاهُمَا وَاَنْ يُّحِبَّ الْمَرْءَ لَا يُحِبُّهٗ اِلَّا لِلّٰهِ وَاَنْ يَّكْرَهَ اَنْ يَّعُوْدَ فِي الْكُفْرِ كَمَا يَكْرَهُ اَنْ يُّقْذَفَ فِي النَّارِ ـــــــــــ بخاری، مسلم

१. हजरत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा: तीन चीजे हैं कि जिस व्यक्ति मे वे हो उसे 'ईमान' की मिष्ठा प्राप्त होगी, यह कि अल्लाह और उसके 'रसूल' से उसे समस्त अतिरिक्त लोगो से बढकर प्रेम हो, वह जिस व्यक्ति से भी प्रेम करे, अल्लाह ही के लिए प्रेम करे और 'कुफ्र' की ओर पलटना उसे उतना ही अप्रिय हो जितना अप्रिय उसे यह बात है कि उसको आग में डाल दिया जाये[1]। —बुखारी मुस्लिम

२, हज़रत अब्दुर्रहमान बिन अबी कुराद रज़ि० कहते है कि एक दिन नबी सल्ल० ने 'वज़ू' किया। आपके साथी आपके 'वज़ू' के पानी को अपने शरीर से मलने लगे। नबी सल्ल० ने कहा. तुम ऐसा क्यो कर रहे हो? उन्होने कहा: अल्लाह और उसके 'रसूल' के प्रेम के कारण। नबी

१ एक 'रिवायत' के शब्द हैं "तीन चीजे ऐसी है कि जिस व्यक्ति मे हो उसे 'ईमान' की मिष्ठता (मज़ा एव आनन्द) प्राप्त होगा यह कि अल्लाह और उसका 'रसूल' उसे समस्त अतिरिक्त लोगो से बढकर प्रिय हो। वह किसी से प्रेम करे तो अल्लाह के लिए और द्वेष करे तो अल्लाह के लिए, और यह कि बडी आग भडकाई जाये और वह उसमे गिरा दिया जाये, तो वह उसे अल्लाह के साथ 'शिर्क' करने के मुकाबले मे ज्यादा पसन्द हो (बुखारी व मुस्लिम)।

अल्लाह का प्रम वास्तव मे 'ईमान' की आवश्यक माँग है। कुरआन मे कहा गया है, "और जो लोग 'ईमान' लाये वे अल्लाह से अत्यन्त प्रेम करते हैं" (अल-बकरा, आयत १६५)। एक दूसरी जगह कहा गया (हे नबी!) कह दो, यदि तुम्हारे बाप, तुम्हारे बेटे, तुम्हारे भाई तुम्हारी पत्नियाँ और तुम्हारे घराने के लोग और माल जो तुमने कमाये है, और कारबार जिनके मन्द पड जाने का तुम्हे भय है, और घर जिन्हे तुम पसन्द करते हो, तुम्हे अल्लाह और उसके रसूल और उसके मार्ग मे 'जिहाद'

करने से अधिक प्रिय हैं, तो प्रतीक्षा करो यहाँ तक कि अल्लाह् अपना फैसला तुम्हारे सामने ले आये और अल्लाह् सीमोल्लंघन करने वाले उन लोगो को राह नही दिखाता, जो मर्यादा का उल्लंघ करने वाले हैं। (अत-तौबा आयत २४)।

अल्लाह् के अस्तित्व मे विश्वास रखना और उसे सम्पूर्ण ससार का स्रष्टा, स्वामी, शासक, पूज्य और आराध्य मानना जीवन की किसी कटु वास्तविकता का इकरार नही है बल्कि यह इकरार और स्वीकरण वास्तव मे हमारे जीवन को अर्थमय बनाता, और उसे वास्तविक आनन्द और जीवन के वास्तविक सौन्दर्य और सूक्ष्म आन्तरिक भावो से परिचित कराता है। 'ईमान' वालो का कर्तव्य है कि वे अल्लाह् से सब से बढकर प्रेम करें। यह कोई अनिष्ठ एव अप्रिय कर्तव्य नही है बल्कि वास्तव मे अल्लाह् सब से बढकर प्रिय सत्ता है। प्रेम-भाव और मन की उमंगो को केवल उसी के चरणो मे शान्ति एव तृप्ति प्राप्त होती है। इसलिए ससार के दूसरे प्रेम-भाव उसके प्रेम के अधीन होने चाहिएँ न कि उस से स्वतन्त्र।

ईश्वर आनन्द रूप है। हमारी आत्माएँ उसी का प्रतिबिम्व हैं इस कारण वे भी आनन्द रूपी और रस स्वरूप हैं। आनन्द से ही ससार का उद्‌भव हुआ है। 'आनन्दाद्येव सर्वानि भूतानि जायन्ते' आनन्द ही से सब पैदा होते हैं। गायक अपने आनन्द को गीत मे बदलकर उसे प्रत्यक्ष रूप देता है। श्रोता आनन्द लेने के लिए गीत को उसके मूल-रूप आनन्द मे बदलता है। इस क्रिया से गायक और श्रोता मे एक सरसता और एकात्मता आती है। गायक की तरह आनन्द रूप ईश्वर भी अपने आनन्द को अनेक रूपो मे प्रकट करता है। वह संसार रूपी अद्‌भुत सगीत के प्रत्येक स्वर मे अपने को बाँधता है। हमारी साधना यह होनी चाहिए कि हम विश्व रूप सगीत के रहस्य को समझें और इसमे अन्तर्निहित आनन्द से आनन्दित हो। और इस प्रकार विविधता मे एकता अथवा अनेक रूपता मे एक रूपता *(Unity in diversity)* से परिचित हो जो आनन्दमय कौतूहलो का मूल रहस्य हैं। इसी से हम अपने वास्तविक स्वरूप को भी जान सकते है। आनन्द का ही दूसरा नाम प्रेम है। प्रेम चेतना का पूर्ण रूप है। यही मुक्ति की चरम स्थिति है। और यही जीवन का वास्तविक ध्येय है। जीवन के सारे प्रयोजन- प्रेम-स्थिति को प्राप्त करके ही पूर्णता को प्राप्त होते हैं। प्रेम के ही द्वारा हमे अल्लाह् मे स्थित रहने का आनन्द प्राप्त होता है और हमारा अल्लाह् से गहरा सम्पर्क हो जाता है। यह सम्पर्क केवल ज्ञानात्मक ही नही होता बल्कि इस तरह हमारा अल्लाह् से रागात्मक सम्बन्ध भी स्थापित हो जाता है। हमारी आत्मा का कल्याण हो जाता है।

सल्ल० ने कहा . जिसको यह् पसन्द हो कि वह् अल्लाह् और उसके "रसूल' से प्रेम करे या अल्लाह् और उसका 'रसूल' उस से प्रेम करे उसे चाहिए कि वह् बात-चीत करे तो सच बोले और जब उसके पास अमानत रक्खी जाये तो अमानत को अदा करे और जो कोई उसका पडोसी हो उसके साथ अच्छे प्रतिवास का व्यवहार करे[2] । —बैह्की

३ हज़रत इब्न अब्बास रजि० कहते है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० नें अबूज़र रजि० से कहा हे अबूज़र ! 'ईमान' की कौन सी शाखा सबसे सुदृढ है ? उन्होंने कहा अल्लाह् और उसके रसूल अधिक जानते हैं। आपनें कहा . अल्लाह् के लिए परस्पर मिलना या सम्बन्ध रखना, अल्लाह् के लिए प्रेम करना और अल्लाह् के लिए द्वेष और बैर रखना[3] ।

—बैह्की-शोबुल ईमान

---

२ मतलब यह है कि अल्लाह् और उसके 'रसूल' से प्रेम करने के लिए यह् भी आवश्यक है कि मनुष्य के व्यावहारिक जीवन से उस स्वभाव और चरित्र का प्रदर्शन हो जो अल्लाह् और अल्लाह् के 'रसूल' को प्रिय है। वह् सच्चा और अमानतदार हो और अपने पडोसियों के साथ उसका व्यवहार अच्छा हो। वह् न अल्लाह् के हक और उसके प्रति अपने दायित्व को भूले और न अल्लाह् के बन्दों के हक़ की उपेक्षा करे। इञ्जील में भी कहा गया है : "तू परमेश्वर अपने प्रभु से अपने सारे मन और अपने सारे प्राण और सारी बुद्धि से प्रेम रख। बडा और मुख्य आदेश तो यही है। और दूसरा इसके समान यह है कि तू अपने पड़ोसी से अपने बराबर प्रेम रख। मैं इन ही दो आदेशो पर सम्पूर्ण 'तौरात' और 'नबियो' के 'सहीफ़ें' (ग्रन्थ) आधारित हैं।" (मत्ता २२ : ३७-४०)

एक दूसरी जगह् कहा गया है : "तुम परमेश्वर अपने प्रभु से प्रेम रखो और उसके समस्त मार्गों पर चलो और उसके आदेशो को मानो और उस से लिपटे रहो।" (व्यवस्था विवरण (*Deut*) ११ . २२)। "अपने सम्पूर्ण मन और सारे प्राण से उसकी सेवा करो" (व्यवस्था विवरण ११ · १३) ।

३. यो तो 'ईमान' की माँग और उसके प्रतीक बहुत से हैं, परन्तु इस सिलसिले की सब से मौलिक चीज़ यह है कि मनुष्य की मित्रता हो या बैर, जो कुछ भी हो सब अल्लाह् के लिए हो। उसकी सारी कामनाएँ, अभिरुचियाँ और चेष्टाएँ अल्लाह् ही के लिए हो। उसके सम्पूर्ण जीवन से जो चीज़ व्यक्त होती हो वह, ईश-प्रेम और प्रभु-कामना के अतिरिक्त कुछ और न हो। अल्लाह् की इच्छा और उसकी प्रसन्नता के विरुद्ध कुछ करना उसके लिए असम्भव हो जाए। जो कार्य अल्लाह् के लिए होगा वह् अवश्य ही न्याय और सच्चाई पर आधारित

४ हजरत अनस रजि० कहते हैं कि एक आदमी नबी सल्ल० की सेवा में उपस्थित था एक दूसरा व्यक्ति आया और कहा : हे अल्लाह के रसूल ! मुझे इस से प्रेम है । आपने कहा : क्या तुम ने उसे बताया भी[४] ? उस ने कहा नही । आपने कहा उसे बता दो . उसने उस व्यक्ति से मिल कर कहा : मै तुम से अल्लाह के लिए प्रेम करता हूँ । उसने कहा : जिसके लिए तुम मुझ से प्रेम करते हो वह भी तुम से प्रेम करे[५] । —अबू दाऊद

५ हजरत अबू हुरैरह रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब अल्लाह किसी बन्दे से प्रेम करता है तो 'जिबरील' को बुला कर कहता है कि मै अमुक व्यक्ति से प्रेम करता हूँ तुम भी उससे प्रेम करो । फिर जिबरील भी उससे प्रेम करने लगते हैं । और आकाश मे घोषणा कर देते है कि अल्लाह अमुक व्यक्ति से प्रेम करता है तुम भी उससे प्रेम करो, तो आकाश वाले भी उस से प्रेम करने लगते हैं । फिर उसके लिए धरती (वालों के दिलों) में भी स्वीकृति रख दी जाती है। और जब अल्लाह को किसी बन्दे से द्वेष व वैर होता है तो 'जिबरील' को बुला कर कहता है कि मै अमुक व्यक्ति से द्वेष व बैर करता हूँ तुम भी उससे द्वेष करो । फिर 'जिबरील' भी उससे द्वेष करते हैं और आकाश वालों में घोषणा करते हैं कि अल्लाह अमुक व्यक्ति से द्वेष करता है तुम भी उससे द्वेष करो अत. वे भी उससे द्वेष करने लगते हैं फिर उसके लिए

होगा । जो मित्रता अल्लाह के लिए होगी वह अवश्य ही उन व्यक्तियो से होगी जो वास्तव मे मित्र बनाने योग्य होगे, जो सच्चे, नेक और अल्लाह से डरने वाले होगे । इसी प्रकार अल्लाह के लिए वैर और विरोध भी उन्ही लोगो से होगा जो अल्लाह से फिरे हुये, सरकश और अत्याचारी होगे । जो धरती मे बिगाड पैदा करते तथा अल्लाह के बन्दो को सीधे मार्ग से भटकाते होगे ।

४. उस प्रेम-भाव और स्नेह से जो कोई व्यक्ति किसी के लिए अपने मन मे पाता हो उसको सूचित करने से मित्रता और प्रेम मे और अधिक दृढता और गहराई आ जाती है । दोनो मे अत्यन्त अच्छे सम्बन्ध की स्थापना हो जाती है। लोगों मे पारस्परिक अच्छे सम्बन्ध हो यह इस्लाम को अभीष्ट है । 'दीन' के दूसरे उद्देश्यो की पूर्ति मे भी इस से सहयोग मिलता है । एक दृढ और आदर्श समाज का निर्माण उसी समय सम्भव है जबकि उस समाज के व्यक्तियो मे परस्पर एकात्मा और प्रेम पाया जाता हो ।

५. अर्थात् जिस तरह तुम मुझ से अल्लाह के लिए प्रेम करते हो, अल्लाह भी तुम से प्रेम रक्खे । तुम्हारी गणना अल्लाह के प्रिय सेवको मे हो ।

धरती (वालो के हृदयों) में द्वेष रख दिया जाता है[६]। —मुस्लिम

६ हज़रत आइशा रज़ि० से उल्लिखित है कि एक व्यक्ति को अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने एक 'सरीया' पर भेजा। जब वे अपने साथ वालो को 'नमाज़' पढाते तो उसे (सूरा) "कुल हु अल्लाहु अहद" पर समाप्त करते। जब वे लोग लौटे अल्लाह् के रसूल से उसका ज़िक्र किया, आपने कहा कि उनसे पूछो कि वे ऐसा किस लिए करते थे? जब उनसे पूछा गया, तो उन्होने कहा कि उस मे 'रहमान' (कृपाशील ईश्वर) के गुण का उल्लेख हुआ है, उसका पढना मुझे प्रिय है[७]। (यह सुन कर) अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा उन्हे बता दो कि सर्वोच्च अल्लाह् उनसे प्रेम करता है[८]। —बुखारी, मुस्लिम

---

६. मतलब यह है कि जो व्यक्ति अल्लाह् को प्रिय होता है अल्लाह् उसे आकाश और धरती सब मे प्रिय बना देता है। हज़रत जिबरील अ० जैसे बडे 'फिरिश्ते' भी उस से प्रेम करने लगते हैं। ऊपरी लोक मे उसकी प्रियता की घोषणा कर दी जाती है। धरती पर भी उसका प्रभाव पडता है। धरती में ऐसा व्यक्ति चमकते सितारे की तरह होता है। वह लोगो के मन को मोह लेता है। उसके बडे-से-बडे शत्रु भी उस से उसकी प्रियता को छीन नही सकते। जो लोग उसकी शत्रुता के तत्पर होते हैं उनके विरोध और शत्रुता के पीछे कोई उच्च भावना काम नही कर रही होती है। वे केवल अपनी नीचता और सासारिक उद्देश्यो की पूर्ति के लिए स्वार्थवश उसका विरोध करते हैं। मन मे वे भी उसकी बडाई स्वीकार करते हैं।

इसके विपरीत जिस व्यक्ति से अल्लाह् को उसकी सरकशी और उसके बुरे चरित्र और बुरे कर्म के कारण द्वेष या नफरत होती है वह सारे ससार की दृष्टि मे घृणित हो जाता है। न जिबरील अ० को उस से प्रेम होता है और न दूसरे 'फिरिश्तो' को उस से कोई लगाव हो सकता है। उसे धरती के रहने वाले मनुष्यो का प्रेम और स्नेह भी प्राप्त नही होता। जो लोग उस से सम्बन्ध और सम्पर्क रखते है उनका यह सम्पर्क केवल दिखाने को होता है। वे अपने किसी लाभ और स्वार्थ के लिए उसके साथ होते हैं। उनके हृदय मे उसके लिए कोई उच्च स्थान और श्रद्धा कदापि नही होती।

७ अर्थात् 'कुलहु अल्लाहु' (सूरा अल-इखलास) मे कृपाशील ईश्वर के गुण और उसकी पूर्णता का उल्लेख विशेष रूप से हुआ है जिसके कारण यह सुरा मुझे अत्यन्त प्रिय है। इसीलिए 'नमाज़' में इसी सूरा पर समाप्त करता रहा।

८ अर्थात् उन्हे अल्लाह् से प्रेम है इस प्रेम के कारण उन्हे सूरा अल-इखलास से विशेष लगाव है, तो उन्हे इसकी सूचना दे दो कि अल्लाह् भी ऐसे व्यक्ति से

७. हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि सर्वोच्च अल्लाह कहता है . जिसने मेरे मित्र से वैर किया मैं उससे युद्ध की घोषणा करता हूँ[९]। स्वय मेरे निर्धारित किये हुये कर्म से बढ़ कर प्रिय चीज़ दूसरी नहीं हो सकती जिसके द्वारा बन्दा मेरा सामीप्य प्राप्त करे[१०]। मेरा बन्दा 'नफ्लों' (तद्-अधिक शुभ कर्मों) के द्वारा मुझ से निकट होता रहता है यहाँ तक कि मैं उससे प्रेम करने लगता हूँ। और जब मैं उससे प्रेम करता हूँ, तो मैं उसका कान बन

प्रेम रखता है जो उस से प्रेम करता और उसे उसके गुणो के साथ याद करता है। किसी बन्दे के लिए इससे बढकर श्रेय की बात और क्या हो सकती है ?

९. अर्थात् मेरे आज्ञाकारी और प्रिय सेवक से किसी की शत्रुता वास्तव मे मुझ से शत्रुता और विद्रोह है। ऐसा व्यक्ति मुझ से लोहा ले रहा है। ऐसा व्यक्ति अन्त मे मुँह की खाता है। कुरआन में इस तरह के प्रकोप का उल्लेख उन लोगो के लिए भी हुआ है जो ब्याज खाने से बाज न आयें। कहा गया है· "हे 'ईमान' लाने वालो! अल्लाह का डर रक्खो। और जो ब्याज (लोगो पर) रह गया है, उसे छोड दो, यदि तुम 'ईमान' वाले हो। यदि तुमने ऐसा न किया तो सावधान हो जाओ कि अल्लाह और उसके 'रसूल' की ओर से तुम्हारे विरुद्ध युद्ध की घोषणा है। अल-बक़रा आयत २७८-२७९।

१०. अर्थात् सब से प्रिय कर्म वे हैं जिनको मैंने अपने बन्दो के लिए अनिवार्य किया है, जिनके द्वारा बन्दों को मेरा सामीप्य प्राप्त होता है। मालूम हुआ कि अल्लाह ने हमारे लिए जो चीजें अनिवार्य की हैं उनका वास्तविक ध्येय अल्लाह का सामीप्य प्राप्त करना ही है। मनुष्य के जीवन में इस सामीप्य का प्रदर्शन विभिन्न रूप और विभिन्न ढग से होता है। अल्लाह के करीबी बन्दो को जहाँ एक ओर चरित्र की पवित्रता और कृत्य की महानता प्राप्त होती है वही उन्हें हृदय की वह मृदुलता, माधुर्य आनन्दमय वेदना और वह दिव्य शान्ति भी प्राप्त होती है जिसके मुक़ाबले मे संसार का सारा सुख-वैभव तुच्छ है। उन्हें वह जीवन मिलता है जिसका वादा कुरआन के इन शब्दो मे किया गया है : "जिस किसी ने अच्छा कर्म किया, पुरुष हो या स्त्री, यदि वह 'ईमान' पर है, तो हम उसे अवश्य अच्छा जीवन प्रदान करेंगे।"—(अल-नह्ल : ९७)। उस के व्यक्तित्व को वह ज्योति एवं प्रकाशमान जीवन प्राप्त होता है जिसके बारे मे कहा गया है : "क्या वह व्यक्ति जो मुरदा था फिर हमने उसे जीवित किया, और उसके लिए प्रकाश कर दिया जिसको लिये हुये वह लोगो के बीच चलता-फिरता है, उस व्यक्ति की तरह हो सकता है जो अंधेरो मे पड़ा हुआ हो उनसे निकलने वाला न हो।"—अल-अनआम : १२२। इसी प्रकाश एव

जाता हूँ जिससे वह सुनता है। और उसकी आँख बन जाता हूँ जिससे वह देखता है और उसका हाथ बन जाता हूँ जिससे वह पकड़ता और हमला करता है। और उसका पाँव बन जाता हूँ जिससे वह चलता है। यदि वह मुझ से माँगता है तो मैं उसे देता हूँ। यदि वह मुझ से पनाह का इच्छुक होता है, तो मैं उसे पनाह देता हूँ[११]। और जिस काम को मैं करने वाला होता हूँ उसमें मुझे संकोच नही होता। मुझे सकोच उस 'ईमान' वाले व्यक्ति के प्राण ग्रस्त लेने में होता है जिसे मृत्यु अप्रिय होती है, मुझे उसे तकलीफ पहुँचाना पसन्द नही परन्तु इससे किसी हाल में छुटकारा नही[१२]। —बुखारी

जीवन का प्रदर्शन 'ईमान' और धार्मिक आदेशो एव नियमो के पालन के रूप में भी होता है। यही प्रकाश है जिस से उसका व्यक्तित्व जगमगा उठता है। "उनका प्रकाश उनके आगे-आगे दौड़ता होगा और उनके दाहिने हाथ मे होगा (अत-तहरीम · ८)।" 'ईमान' की सच्चाई और चरित्र की पवित्रता से केवल संसार में ही 'ईमान' वालो का जीवन नही जगमगा उठता बल्कि 'आखिरत' मे भी उनके व्यक्तित्व का प्रकाश अपने वातावरण को प्रकाशित रक्खेगा और हश्र-क्षत्र से 'जन्नत' की ओर उनका मार्ग-दर्शन करेगा।

११. अल्लाह् का प्रिय सेवक अनिवार्य कर्म से भी आगे बढकर अल्लाह् के मार्ग में चेष्टा करता और अधिक-से-अधिक सत्कर्मों में लगा रहता है। वह 'फर्ज़' (अनिवार्य कर्म) के अतिरिक्त 'नफ्ल' कामो में भी भाग लेता और ज्यादा-से-ज्यादा अल्लाह् की वन्दगी, उसकी 'इबादत' और उपासना में रत रहता है। ऐसा व्यक्ति अल्लाह् का प्रिय वन्दा हो जाता है। अल्लाह् की सहायता और सहयोग उसे प्राप्त होता है। फिर उसका सम्पूर्ण जीवन अल्लाह् की इच्छाओ के अन्तर्गत व्यतीत होता है। उसका कोई भी काम ईश्वरीय इच्छा के विरुद्ध नही होता। उसका चलना-फिरना, देखना-सुनना कर्म-क्षेत्र में आगे बढना आदि, सभी कार्य अल्लाह् का इच्छा के अनुसार होने लगते हैं। 'ज़बूर' की भाषा में वह अल्लाह् का 'ममसूह' होता है और अपने प्रभु के मुखारविन्दु के प्रकाश मे चलता है (ज़बूर *Psalms* ८४ : ६, ८९ . १५)। कुरआन करीम मे एक जगह कहा गया है "(हे 'ईमान' वालो!) तुम ने उन धर्म-विद्रोहियो का वध नही किया बल्कि अल्लाह् ने उन का वध किया। और (हे 'नबी'!) तुमने नही फेंका बल्कि अल्लाह् ने फेंका।" इस 'आयत' में अल्लाह ने 'ईमान' वालो और अपने 'नबी' के कर्म को अपना कर्म कहा क्योकि यह कर्म अल्लाह् ही के लिए और उसकी इच्छा के अनुसार था और इसमें अल्लाह का सहयोग व सहायता भी सम्मिलित थी।

१२ मालूम हुआ कि अल्लाह को 'ईमान' वालो से गहरा सम्बन्ध होता है। उसे

अल्लाह का भय

عن أبي ذر رضي قال، قال لي رسول الله صلى الله عليه وسلم، اتق الله حيثما كنت وأتبع السيئة الحسنة تمحها وخالق الناس بخلق حسن. احمد، ترمذي، دارمي

१. हज़रत अबू ज़र रज़ि० कहते है कि मुझ से अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . जहाँ और जिस हाल में हो, अल्लाह का डर रक्खो और हर बुराई के पश्चात् नेकी करो, वह उसे मिटा देगी, और लोगों के साथ अच्छे शील-स्वभाव से पेश आओ[1] । —अहमद, तिरमिज़ी, दारमी

२. हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के 'रसूल' सल्ल० ने कहा : तीन चीज़े विनाशक और तीन चीज़े मुक्त करने वाली हैं : खुले-छिपे अल्लाह का डर रखना, प्रसन्नता और अप्रसन्नता दोनों ही अवस्था में सत्य बात कहनी और सम्पन्नता व निर्धनता, दोनो ही

यह पसन्द नही कि 'ईमान' वालो को किसी तरह की तकलीफ या कष्ट पहुँचे, परन्तु कुछ चीज़ें ऐसी होती हैं जिनका अपनी 'हिकमत', तत्वदर्शिता और महान् उद्देश्यों के कारण वह सहन कर लेता है । उनमे से एक 'मुस्लिम' या 'ईमान' वाले की मृत्यु भी है ।

१. यह नबी सल्ल० का एक सक्षिप्त किन्तु सारगर्भित उपदेश है । मनुष्य का परम कर्तव्य है कि वह जहाँ और जिस हाल मे हो अल्लाह से डरता रहे, कभी कोई ऐसा कार्य न करे जो अल्लाह की अप्रसन्नता का कारण बनता हो । यदि कभी भूल-चूक हो जाये, तो तत्काल अल्लाह के आगे झुक जाये और उस से क्षमा की प्रार्थना करे । और इसके पश्चात् कोई-न-कोई नेकी का काम भी उसे अवश्य कर लेना चाहिए ताकि नेकी से गुनाह और बुराई का प्रभाव उसके मन और मस्तिष्क से मिट जाये और उसकी आत्मा को पुन पूर्ण शुद्धता प्राप्त हो । क़ुरआन मे भी कहा गया है · "निस्सन्देह नेकियाँ बुराइयो को मिटा देती हैं (सूर. हूद, आयत ११४) ।"

जिस तरह बन्दे पर अल्लाह का हक़ है उसी तरह उस पर अल्लाह के बन्दो का भी हक़ है । अल्लाह के बन्दों के साथ सदा उसका व्यवहार अच्छा

दशा में, सन्तुलित नीति पर स्थिर रहना[2]। विनाशक वस्तुएँ हैं : वासना जिसका अनुसरण किया जाये, कृपणता जिसका अनुपालन किया जाये और मनुष्य की आत्मश्लाघा और यह इन में सब से भारी है[3]।

—बैहकी : शोबुल ईमान

३ हज़रत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा कि प्रतापवान् तेजोमय अल्लाह ('कियामत' के दिन) हुक्म देगा कि जिस ने किसी दिन मुझे याद किया या किसी जगह मुझसे डरा हो उसे ('जहन्नम' की) आग से निकाल लो[4]। —तिरमिजी, बैहकी किताबुल बअस वन्नुशूर

होना चाहिए।

२. जो व्यक्ति खुले-छिपे हर हाल मे अल्लाह से डरता और उसकी अवज्ञा से बचता है, चाहे वह किसी से प्रसन्न हो या अप्रसन्न सदा सत्य बात कहता है, उसके मुख से कभी कोई असत्य बात नही निकलती; दुख हो या सुख, तगी हो या कुशादगी, प्रत्येक अवस्था मे सन्तुलित मार्ग पर स्थिर रहता है, न वह धनवान् होकर व्यर्थ कामो मे अपना धन नष्ट करता और न मर्यादाओ का उल्लघन करता है, और न निर्धनता की अवस्था मे वह धैर्य, धर्म और सन्तोष का परित्याग करके किसी अनुचित नीति का पालन करता है। ऐसे व्यक्ति को सासारिक जीवन मे भी हार्दिक शान्ति और आत्मिक सन्तोष प्राप्त होगा और 'आखिरत' मे भी वह अल्लाह के प्रकोप से बच जायेगा।

३. जो व्यक्ति अल्लाह का आज्ञाकारी न बनकर अपनी तुच्छ इच्छाओ का दास बना रहता है। और अपने मे उदारता और दानशीलता की विशेषता पैदा करने के बदले तगदिली, कृपणता, आत्मश्लाघा और अभिमान जैसे रोगों में ग्रस्त हो जाता है वह सासारिक जीवन मे भी तबाह व बरबाद होता है 'आखिरत' मे भी तबाही के अतिरिक्त उसके हिस्से मे कुछ न आ सकेगा। ऐसे व्यक्ति का कोई व्यक्तित्व और कोई चरित्र नही होता। वह तो वास्तव मे एक बिकाऊ माल होता है जो किसी भी कीमत पर बिक सकता है। इस 'हदीस' मे आत्मश्लाघा और खुदपसन्दी को सबसे अधिक बुरा कहा गया है। जब किसी को खुदपसन्दी की बीमारी लग जाती है, तो उसका सीधे मार्ग पर आना असम्भव सा हो जाता है। ऐसा व्यक्ति इस अवस्था मे होता ही नहीं कि किसी की कोई भली बात सुन सके। अल्लाह को जो चीज़ सबसे अधिक अप्रिय और नापसन्द हो सकती है वह यही अहकार, आत्मश्लाघा और खुदपसन्दी ही है। इसी चीज़ ने इबलीस का नाश किया और इसी के कारण ससार के कितने ही अभिमानी मारे गये।

४. मतलब यह है कि मनुष्य की मृत्यु यदि इस हालत मे हुई है कि वह अल्लाह

४. हजरत अब्दुल्लाह् इब्न मसऊद रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा जिस किसी 'ईमान' वाले बन्दे की आँखों से आँसू निकले, यद्यपि वह मक्खी के सिर के बराबर ही क्यों न हो फिर वह बह कर उसके चेहरे पर पहुँच जाये, तो अल्लाह् उसे ('जहन्नम' की) आग के लिए निषिद्ध कर देगा[५]। —इब्न माजा

५ हजरत अबू हुरैरह् रजि० कहते हैं कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा · 'अल्लाह् के भय से रोने वाला व्यक्ति ('जहन्नम' की) आग में नहीं जायेगा जब तक कि दूध स्तन में न वापस हो जाये[६], और अल्लाह् के मार्ग की धूल और 'जहन्नम' (नरक) का धुवाँ एकत्र न होगे[७]।

—तिरमिज़ी

६ हज़रत अबू उमामा सुदै बिन अजलात बाहिली रजि० से

और 'रसूल' का मानने वाला था, 'काफिर' और 'मुश्रिक' होकर वह नही मरा है, तो वह अपने गुनाह या अपने किसी ज़ुल्म और अन्याय के कारण भले ही 'जहन्नम' (नरक) मे डाल दिया जाये, परन्तु यदि किसी अवसर पर उसने अल्लाह को याद किया है और कभी उसके मन मे अल्लाह् का डर पैदा हुआ है, तो इसके कारण अवश्य ही किसी न किसी दिन उसे क्षमादान प्राप्त होगा और वह 'जहन्नम' से निकाल लिया जायेगा।

५. मतलब यह है कि जो चेहरा ईश-भय के कारण बहे हुये आँसुओ से भीगा हुआ हो उसे 'जहन्नम' की आग नही छू सकती। इन आँसुओ की यही विशेषता और इनका यही शुभप्रभाव होना चाहिए जिसका उल्लेख इस 'हदीस' मे किया गया है। यह दूसरी बात है कि अल्लाह् के भय से आँसू बहाने वाला व्यक्ति अल्लाह् की अवज्ञा और ज़ुल्म व ज्यादती का कर्म करके स्वय अपने को अल्लाह् की कृपा और दया का अधिकारी न रहने दे

६. कोई व्यक्ति जीवन मे अनुचित नीति अपनाकर स्वय अपने आँसुओ का मूल्य घटा दे, तो दूसरी बात है, यो इन आँसुओ का गुण और इनकी विशेषता यही है जिसका उल्लेख इस 'हदीस' और इससे पहले वाली 'हदीस' मे किया गया है। अल्लाह् के भय से गिरे हुये आँसू मनुष्य के जीवन को पवित्र बना देते हैं और वह 'आखिरत' मे अल्लाह् के विशेष सामीप्य और पुरस्कार का अधिकारी हो जाता है। परन्तु जो आँसू जीवन की मलिनता को धो कर उसे निर्मल न कर सकें जिनका मनुष्य के जीवन और उसके चरित्र पर कोई प्रभाव न पडे, ऐसे आँसू अपना महत्व स्वय खो देते है।

७ अर्थात् वह व्यक्ति जिसके कदम या जिसके कपडे अल्लाह् की राह मे धूल से

उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा : अल्लाह् को कोई भी चीज प्रिय नही जितने दो कतरे (बूँदें) और दो चिह्न प्रिय हैं। एक क़तरा आँसुओ का जो अल्लाह् के भय से गिरे, दूसरा रक्त का कतरा जो अल्लाह् के मार्ग में बहाया जाये[८]। रहे दो चिह्न तो एक चिह्न तो वह है जो अल्लाह् के मार्ग में हो और दूसरा चिह्न वह है जो निर्धारित किये हुये किसी कार्य के सिलसिले में हो। —तिरमिज़ी

७. हज़रत अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब रज़ि० कहते हैं कि मैंने अल्लाह् के रसूल सल्ल० को कहते सुना : दो आँखें ऐसी हैं जिन को (जहन्नम की) आग नही छूयेगी : एक आँख वह जो मध्य रात मे अल्लाह् के डर से रोई, और दूसरी आँख वह जिसने अल्लाह् के मार्ग में निगहबानी करते रात बिताई[९]। —तबरानी

८ हज़रत अबू हुरैरह् रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा . सात व्यक्ति ऐसे हैं कि जिन पर अल्लाह् उस दिन छाया करेगा

मर गये हो, जिसने अल्लाह् के 'दीन' को ऊँचा उठाने के लिए दौड-धूप की हो, वह 'जहन्नम' की आग और उसके धुवो से बचा रहेगा। 'जहन्नम' की आँच कदापि उस तक नही पहुँच सकती।

८ अर्थात् रक्त की वे बूँदे जो अल्लाह् के 'दीन' की रक्षा या उसे ऊँचा उठाने के लिए रण-भूमि मे बहाई जायें। सौन्दर्य केवल गुलाब के फूलो ही मे नहीं है बल्कि उसे जीवन के अलौकिक सन्तुलन मे भी देखा जा सकता है। सौन्दर्य त्याग मे भी है, दान मे भी है सत्य-मार्ग मे असत्य से युद्ध करने मे भी है और सत्य की प्रतिष्ठा के लिए रक्त बहाने मे भी है।

९ इस 'हदीस' मे दो व्यक्तियो को 'जहन्नम' की यातना से मुक्ति पाने की शुभ-सूचना दी गई है एक व्यक्ति तो वह है जो रात मे उस समय उठकर अल्लाह् के आगे आँसू बहाता और उस से क्षमा की प्रार्थना करता है जब ससार सुख की नीद सो रहा होता है। दूसरा वह 'ईमान' वाला है जिसके ज़िम्मे सीमा की रक्षा है। वह रातो को अपनी नीद कुरबान करके पहरा देता और दुश्मनो से सरहद को सुरक्षित रखता है। निस्सन्देह ये दोनो व्यक्ति इस योग्य हैं कि अल्लाह् 'आखिरत' की यातना को इन से दूर रक्खे। यह आँसू और यह रात का जागरण अपना विशेष महत्व रखते है। ये आँसू इसके साक्षी है कि ये जिस के नेत्रो से बहे है उसका अपने 'रब' से असाधारण सम्बन्ध है। इसी प्रकार यह जागरण उस प्रेम को प्रदर्शित करता है जो सत्यप्रिय और कर्तव्यपरायण व्यक्ति को 'इस्लाम' और इस्लामी राज्य से होता है। वह उसकी रक्षा के लिए सहर्ष अपनी प्रत्येक सेवायें प्रस्तुत करता है।

जिस दिन उस की छाया के अतिरिक्त और कोई छाया न होगी[10]। न्याय-शील नायक[11], वह नवयुवक जिसका अल्लाह की 'इबादत' में पालन-पोषण हुआ[12], वह व्यक्ति जिसका मन मस्जिद में लगा रहे[13], वे दो व्यक्ति जो अल्लाह के लिए परस्पर प्रेम करे, इसी ध्येय से परस्पर इकट्ठा हों और इसी पर एक-दूसरे से अलग हों, वह व्यक्ति जिसे कोई प्रतिष्ठित और सुन्दर स्त्री बुलाये तो वह कहे कि मैं अल्लाह से डरता हूँ[14], वह व्यक्ति जो 'सदका' (दान) करे और उसे इतना छिपाये कि उसके बाये हाथ को न मालूम हो कि दाये हाथ ने क्या दिया[15], और वह व्यक्ति जो एकान्त में अल्लाह को याद करे और उसकी आँखो से आँसू बह जाये[16]।

—बुखारी, मुस्लिम

---

१० अर्थात् इन सात प्रकार के लोगो पर अल्लाह की विशेष दया होगी। ये 'आखिरत' मे हर प्रकार के सकट और दुख से दूर होगे। उस दिन अल्लाह की दयालुता जिस से रूठ गई उसे कही भी शरण न मिल सकेगी।

११. अर्थात् वह शासक और नायक जिसने अपने राज्य मे न्याय की स्थापना की और अपने को हर प्रकार के अन्याय और अत्याचार से दूर रक्खा।

१२. अर्थात् जिस व्यक्ति ने अपनी जवानी अल्लाह की 'इबादत' मे गुज़ारी।

१३. अर्थात् 'नमाज़' उसकी आँखो की ठढक और उसके हृदय की शान्ति बन चुकी हो। मस्जिद से निकलने के बाद भी उसका मन मस्जिद ही मे अटका रहता हो कि कब फिर 'नमाज़' का समय आये और वह वहाँ पहुँच कर अल्लाह के आगे अपना सिर झुकाये और उसकी सेवा मे 'सजदो' के रूप मे मन के कोमल भावो और उमगो का उपहार भेंट करे।

१४. जब मनुष्य को बुराई की ओर ले जाने वाली सभी चीज़े मौजूद हो, दिल का शिकारी पूरे सामान के साथ शिकार को आया हो, सौन्दर्य हो, प्रतिष्ठा हो, सम्मान हों, यौवन हो, और सौन्दर्य स्वय आमन्त्रण दे रहा हो, ऐसी अवस्था में केवल अल्लाह का भय ही किसी को बुराई से बचा सकता है। ऐसे समय मे भी यदि कोई अल्लाह के डर से बुराई के निकट नही जाता, तो निश्चय ही उसका 'ईमान' पूर्ण है और वह इस योग्य है कि उसे 'आखिरत' मे ईश्वरीय छाया प्राप्त हो।

१५. अर्थात् बहुत ही गुप्त रूप से 'सदका' (दान) करे कि किसी को खबर न हो। यह उसी समय सम्भव है जब मनुष्य को झूठी प्रतिष्ठा और झूठी ख्याति का लोभ न हो बल्कि वह केवल अल्लाह [illegible] [illegible]न्नता और उसकी दयालुता की ही अभिलाषा रखता हो।

१६ कोई व्यक्ति क्या है ? इसका प्रदर्शन सबसे अधिक [illegible] समय होता है जबकि

९. हज़रत अबू ज़र रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने उनसे कहा : तुम न किसी गोरे से अच्छे हो और न काले से। यह दूसरी बात है कि (अल्लाह का) डर रखने के कारण तुम्हे किसी की अपेक्षा श्रेष्ठता प्राप्त हो[१७]।

—अहमद

१० हज़रत मुआज बिन जबल रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : लोगो में सबसे अधिक मेरा सामीप्य (अल्लाह का) डर रखने वालो को प्राप्त है, वे जो भी हो और जहाँ-कही भी हों[१८]।

—अहमद

वह अकेला होता है और उसे देखने वाला दूसरा कोई नही होता। यदि ऐसे समय में भी वह अल्लाह को याद करे, उसके भय से काँपे और उससे सहायता चाहे, तो यह इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण होगा कि उसकी 'इबादत' और बन्दगी संसार को दिखाने के लिए नही है बल्कि सच-मुच वह अल्लाह में विश्वास रखता है और अल्लाह की बडाई और उसकी महानता का उसे पूरा ज्ञान है। अल्लाह उसके लिए कोई निर्जीव कल्पनामात्र नही है बल्कि अल्लाह उसकी दृष्टि में सब से व्यापी सत्ता और चेतना का मूल उद्गम है। वह उसके जीवन में पूर्णत. सम्मिलित हो चुका है। यदि वह लोगो से कहता है कि मैं एक अल्लाह का मानने वाला हूँ, तो निश्चय ही वह अपने दावे में सच्चा है। ऐसे व्यक्ति को यदि अल्लाह का सामीप्य प्राप्त न होगा, तो किसे होगा।

१७ अर्थात् रंग, नस्ल या देश के आधार पर किसी को बडाई और श्रेष्ठता प्राप्त नही हो सकती। बडाई का वास्तविक आधार अल्लाह का डर, धर्मपरायणता और संयम है। सब से श्रेष्ठ वही है जो सब से अधिक अल्लाह से डरने वाला और उसकी अवज्ञा से बचने वाला हो। यही बात कुरआन ने इन शब्दो में कही है "हे लोगो! हमने तुम्हे पैदा किया एक पुरुष और एक स्त्री से और तुम्हारी बहुत सी नस्लें और कबीलें बनाये, ताकि तुम एक-दूसरे को पहचान सको। अल्लाह के यहाँ तो तुम में सब से अधिक प्रतिष्ठित वह है जो तुम में सब से अधिक (अल्लाह का) डर रखने वाला है। निस्सन्देह अल्लाह जानने वाला और खबर रखने वाला है (सूरा अल-हुजुरात १३)।"

१८ नबी सल्ल० ने यह बात उस समय कही थी जब आप मुआज बिन जबल रज़ि० को यमन का काज़ी या कर्मचारी बनाकर भेज रहे थे। हज़रत मुआज़ रज़ि० अपनी सवारी पर थे और आप उनकी सवारी के साथ पैदल चल रहे थे। जब आप उन्हें आवश्यक उपदेश और ज़रूरी आदेश दे चुके, तो कहा मुआज! बहुत सम्भव है मेरे जीवन के इस वर्ष के पश्चात् फिर तुम्हारी मुझ से मुलाकात न हो। और कदाचित् ऐसा हो कि तुम इस मस्जिद और मेरी कब्र

अल्लाह के प्रति अच्छा गुमान

عَنْ أَنَسٍ قَالَ، قَالَ رَسُولُ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ. قَالَ اللهُ عَزَّوَجَلَّ أَنَا عِنْدَ ظَنِّ
عَبْدِي بِي فَلْيَظُنَّ بِي مَا يَشَاءُ ——— بيهقي، طبراني في الكبير

१ हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . प्रतापवान् एवं तेजोमय अल्लाह कहता है कि मैं अपने बन्दे के गुमान (ख्याल व अनुमान) के साथ हूँ, वह जैसा चाहे मुझसे गुमान कायम कर ले[1] । —बैहकी, तबरानी-कबीर

२ हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा सर्वोच्च अल्लाह कहता है : मैं अपने (सेवक) के

पास गुजरो । यह सुनकर हज़रत मुआज़ रजि० रोने लगे । फिर रसूल सल्ल० ने उनकी ओर से मुख फेर कर मदीना की ओर कर लिया और कहा "लोगो में मुझ से सबसे ज्यादा करीबी लोग वे है जो अल्लाह का डर रखते हैं, वे जो भी हों और जहाँ कही हो ।" मतलब यह कि मेरे साथ सम्बन्ध का मूल आधार अल्लाह का डर और धर्मपरायणता है। यदि कोई अल्लाह से डरता और उसकी अवज्ञा से बचता है, तो भले ही देखने में वह मुझ से दूर हो परन्तु वास्तव मेवह मुझसे दूर नही है। वह मुझ से करीब है और 'आखिरत' के शाश्वत जीवन मे दोनो एक साथ होंगे । परन्तु यदि किसी के हृदय से अल्लाह का भय ही निकल जाये, तो चाहे शारीरिक रूप से वह मुझ से करीब हो, परन्तु वास्तव में वह मुझ से दूर है और मैं उस से दूर हूँ । इस तरह आपने हजरत मुआज रजि० को तसल्ली दी कि उन्हें जुदाई का अधिक गम न होना चाहिए । बल्कि अधिक-से-अधिक चिन्ता इस बात की करनी चाहिए कि जीवन धर्मनिष्ठा, ईश-प्रतिष्ठा और अल्लाह के भय से वंचित न हो ।

१ अल्लाह का यह हक है कि उसका बन्दा (सेवक) उसके साथ अच्छा गुमान रक्खे । बन्दा अल्लाह के साथ जैसा गुमान और अनुमान करता है, अल्लाह उसी के अनुसार उस से मामला करता है । बन्दा अल्लाह के साथ क्या गुमान व ख्याल रखता है, यह इस बात की पहचान होती है कि उसकी विचार एव

गुमान (खयाल व अनुमान) के साथ हूँ और जब वह मुझे पुकारता है, तो मैं उसके साथ होता हूँ। —तिरमिजी

३. हज़रत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि प्रतापवान् एव तेजोमय अल्लाह का कथन है मैं अपने बन्दे (सेवक) के गुमान के साथ हूँ। यदि वह (मुझ से) अच्छा गुमान करे, तो उसी के लिए अच्छा है और यदि बुरा गुमान कायम करे, तो यह उसी के लिए बुरा है। —अहमद

४. हज़रत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा कि प्रतापवान् एवं तेजोमय अल्लाह कहता है "मैं अपने बन्दे (सेवक) के गुमान के साथ हूँ। मैं उसके साथ होता हूँ जहाँ वह मुझे याद करता है"। और अल्लाह की कसम अल्लाह अपनें बन्दे (सेवक) की 'तौबा' से उससे अधिक प्रसन्न होता है जितना कि तुम में से कोई अपने खोये हुये ऊँट को चटियल मैदान मे पाकर होता है। और (वह कहता है) जो मुझसे एक बालिश्त करीब होता है मैं उससे एक हाथ करीब होता हूँ। और जो मुझसे एक हाथ करीब होता है मै उससे दो हाथ करीब होता हूँ। और जो मेरी ओर चलकर आता है, मैं उसकी ओर दौड कर आता हूँ[2]। —बुखारी, मुस्लिम

५. हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा कि सर्वोच्च अल्लाह कहता है. मैं अपने बन्दे के गुमान के साथ हूँ वह जैसा मेरे साथ गुमान रक्खे[3]। मैं उसके साथ होता हूँ जब वह मुझे याद करता है। यदि वह मुझे अपने जी में याद करता है, तो मैं भी उसे अपनें जी में याद करता हूँ और यदि वह किसी समूह मे मुझे

व्यवहार सम्बन्धी दशा कैसी है ? अल्लाह की कृपा और उसके अनुग्रह का अधिकारी कोई व्यक्ति उसी समय हो सकता है जबकि वह अल्लाह के साथ अपने सम्बन्ध और कर्म को ठीक कर ले। अल्लाह के बारे मे अच्छा गुमान रक्खे और उसके आदेशानुपालन मे ही अपना जीवन व्यतीत करे। इस दशा मे अवश्य ही उसका गुमान और उसकी आशा वास्तविकता के अनुरूप ही होगी।

२ इस 'हदीस' से अल्लाह की अपार दयालुता प्रदर्शित होती है। बन्दा जब अल्लाह की ओर रुख करता और उसकी ओर ध्यान देता है, तो उससे कही अधिक अल्लाह की कृपा-दृष्टि उसकी ओर होती है।

३ अर्थात् वह मेरे बारे मे जैसा ख्याल व गुमान रखता है, मै उसके लिए वैसा

याद करता है, तो मैं भी उसे ऐसे समूह मे याद करता हूँ जो उन से अच्छा है[४]। —बुख़ारी, मुस्लिम

६ हज़रत जाबिर रजि० कहते है कि मैंने नबी सल्ल० से आपके स्वर्गवास से तीन दिन पहले सुना, आप कहते थे कि तुम में से किसी को मृत्यु न आये परन्तु इस अवस्था में कि वह प्रतापवान् एव तेजोमय अल्लाह के साथ अच्छा गुमान रखता हो[५]। —मुस्लिम

ही हूँ। मेरा मामला और व्यवहार उसके साथ उसके गुमान के अनुरूप ही होता है।

४. अर्थात् मैं उसका जिक्र और उसकी चर्चा उस मजलिस मे करता हूँ जिस मे फिरिश्ते' और स्वर्गवासी 'नबिया' और 'ईमान' वालो की आत्माएँ मौजूद होती हैं। ऐसी सभा और मजलिस से अच्छी कौन-सी मजलिस हो सकती है।

५. अर्थात् मृत्यु के ममय मनुष्य को अल्लाह से क्षमा और दयालुता की आशा रखनी चाहिए।

अल्लाह का आज्ञापालन

عَنِ الْمُهَاجِرِ بْنِ حَبِيْبٍ ؓ قَالَ، قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ، قَالَ اللّٰهُ تَعَالٰى، اِنِّىْ لَسْتُ كُلَّ كَلَامِ الْحَكِيْمِ اَتَقَبَّلُ وَلٰكِنِّىْ اَتَقَبَّلُ هَمَّهٗ وَهَوَاهُ، فَاِنْ كَانَ هَمُّهٗ وَهَوَاهُ فِىْ طَاعَتِىْ جَعَلْتُ صَمْتَهٗ حَمْدًا لِّىْ وَوَقَارًا وَاِنْ لَّمْ يَتَكَلَّمْهُ ــــــ دارمى

१ हज़रत मुहाजिर इब्न हबीब रज़ि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा कि अल्लाह कहता है मै मनीषी (हकीम) की प्रत्येक वाणी (कलाम) को स्वाकार नही करता, परन्तु मै उसके सकल्प और इरादे को स्वीकार करता हूँ (यदि वह स्वीकार करने योग्य है)। यदि उसका सकल्प मेरे आज्ञापालन में है, तो मै उसके मौन को अपनी प्रशंसा ('हम्द') और प्रतिष्ठा निर्धारित करता हूँ यदि वह बाते न करे[1]।

—दारमी

२ हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा कि तुम्हारा प्रतापवान एव तेजोमय 'रब' (पालनकर्त्ता स्वामी)

१. मतलब यह है कि कोई कितना ही बडा बुद्धिमान और ज्ञानी क्यो न हो, मेरी दृष्टि उसकी वाणी से अधिक उसकी भावनाओ, उसके सकल्प और उसकी हृदयस्थिति को देखती है। यदि उसका सकल्प निर्दोष और उसकी भावनाएँ पवित्र है, तो मैं उन्हें स्वीकार कर लेता हूँ। यदि उसके यहाँ मेरे आज्ञापालन के अतिरिक्त कोई और भावना काम नही कर रही है, तो उसकी बात-चीत ही नही, उसका मौन भी मेरी दृष्टि मे मेरी प्रशसा और प्रतिष्ठा करने के समान है। हर चीज के बाह्य रूप से अधिक मैं उसकी वास्तविकता को देखता हूँ। यदि किसी की वाणी तो बहुत सुन्दर और ज्ञानगर्भित है, परन्तु उसका मन अपवित्र और मेरे प्रेम और भय से रहित है, और वह मेरी दासता के बदले अपनी ही इच्छाओ का दास बना हुआ है, तो ऐसी दशा मे उसकी सुन्दर-से-सुन्दर वाणी का मेरे यहाँ कोई मूल्य नही।

कहता है · यदि मेरे बन्दे मेरी आज्ञा का पालन करे, तो मैं उन पर रात में मेंह बरसाऊँ (जबकि वे सो रहे हों) और दिन को सूर्य निकालूँ और बादल के गरजने की आवाज उन्हे न सुनाऊँ[२]। —अहमद

३. हजरत अली रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने एक छोटी सी सेना तैयार की और 'अनसार' में एक व्यक्ति को उसका नायक बनाया और उन (सैनिको) को हुक्म दिया कि उसकी बात सुनें और उसके आदेश का पालन करे। उन्होंने किसी बात पर उसे क्रुद्ध कर दिया। उसने (क्रोध में) हुक्म दिया कि मेरे पास लकड़ी इकट्ठा करो। लोगों ने (लकड़ियाँ) इकट्ठा कर दी। फिर उसने कहा: इनको जलाकर आग तैयार करो। उन्होने आग जलाई। फिर उसने कहा : क्या अल्लाह के रसूल सल्ल० ने हुक्म नही दिया था कि तुम मेरी बात सुनो और मेरा आदेश मानो ? उन्होने कहा · जी हाँ, हुक्म दिया है। उसने कहा अच्छा तो इस आग में प्रवेश करो। वे आपस में एक-दूसरे की ओर देखने लगे और बोले आग ही से तो बचने के लिए हम भाग कर अल्लाह के रसूल सल्ल० के पास आये थे (अब उसी में कैसे दाखिल हों ?)[३]। वे इसी हाल में थे यहाँ तक कि उस (नायक) का क्रोध शान्त हो गया और आग भी बुझ गई। जब ये लोग वापस हुए तो इसका जिक्र अल्लाह के रसूल सल्ल० से किया। आपने कहा "यदि ये लोग आग में दाखिल हो जाते, तो उस

---

२ अर्थात् यदि वे मेरे आज्ञाकारी बनेंगे तो 'आखिरत' के अतिरिक्त उन्हे इस लोक मे भी हमारी ओर से बरकतें हासिल होगी। अल्लाह उनके सुख और आराम के लिए उचित-से-उचित व्यवस्था करेगा। उदाहरणार्थ वे रात मे आराम से सो रहे होगें और उनकी भूमि मेह के जल से सिंचित हो रही होगी। इस प्रकार वे बादल की गरज और बिजली की कडक से भी सुरक्षित रहेंगे और दिन मे उन्हे धूप भी मिल सकेगी। कुरआन मे भी हजरत नूह अ० के इस कथन का वर्णन मिलता है "और (हे 'रब' ! अपनी जाति के लोगो से) मैंने कहा तुम अपने 'रब' से क्षमा की प्रार्थना करो निस्सन्देह वह क्षमा करने वाला है। वह आकाश को तुम पर खूब बरसता छोडेगा और तुम्हे और अधिक धन और बेटे देगा। और तुम्हारे लिए बाग लगा देगा और तुम्हारे लिए नहरे निकालेगा।" —सूरा नूह १०-१२।

३ अर्थात् हम अल्लाह के रसूल सल्ल० पर 'ईमान' इसीलिए तो लाये थे कि हम 'आखिरत' मे 'जहन्नम' की आग से बच सके और दुनिया मे भी बुरे परिणामो और बुरी मृत्यु से हमारी रक्षा हो सके, फिर आग के अलाव मे हम कैसे कूद सकते है।

से कभी न निकलते[४] ।" और आपने कहा : 'अल्लाह् की अवज्ञा में कोई आज्ञापालन नहीं[५], आज्ञापालन तो केवल सुकर्म में है[६] ।"

—बुखारी, मुस्लिम

४. नौरस बिन सिमग्रान कहते है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा . सृष्टिकर्ता की अवज्ञा मे किसी प्राणी के लिए कोई आज्ञापालन नहीं[७] ।

—शरहुस्सुन्नह्

५ हजरत इब्न मसऊद रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा : लोगो ! काई चीज़ सिवाय उसके जिसका मैं तुम को हुक्म दे चुका हूँ ऐसी नही जो तुम्हे 'जन्नत' से करीब कर दे और कोई चीज़ सिवाय उसके जिससे मैं तुम्हे वर्जित कर चुका हूँ ऐसी नही जो तुम्हे (जहन्नम की) आग से करीब और 'जन्नत' से दूर रक्खे[८] । और

---

४ अर्थात् 'आखिरत' मे चिरकाल तक 'जहन्नम' की आग ही मे जलते रहते । जीवन का यह भयानक परिणाम होता ।

५ अर्थात् वास्तव मे जिसका आज्ञापालन किया जाना चाहिए वह अल्लाह् है । ईमान वालो के व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन, दोनो ही का वास्तविक केन्द्र अल्लाह् की दासता और उसका आज्ञापालन है । किसी दूसरे का आज्ञा-पालन केवल उसी दशा मे किया जा सकता है जबकि वह अल्लाह् के आज्ञा-पालन के अन्तर्गत हो, उसके विपक्ष में न हो ।

६ आज्ञा का पालन केवल सुकर्म और भलाई के कामो मे किया जायेगा । ऐसे कामो मे किसी की आज्ञा का पालन कदापि नही किया जाना चाहिए जिनमें अल्लाह् की अवज्ञा होती हो । एक 'हदीस' मे है "मुस्लिम व्यक्ति के लिए ज़रूरी है कि वह अपने हाकिमो की बात सुने और माने, चाहे उसे पसन्द हो या नापसन्द हो जब तक कि उसे गुनाह (अल्लाह् की अवज्ञा) का आदेश न दिया जाये और जब उसे गुनाह का आदेश दिया जाये, तो फिर न सुनना है न आज्ञापालन ।" —(बुखारी, मुस्लिम)

७. किसी की आज्ञा का पालन उसी समय तक किया जा सकता है जब तक वह अल्लाह् की आज्ञा के विरुद्ध न हो ।

८. अर्थात् मैंने वे आदेश तुम तक पहुँचा दिए हैं जिनका पालन करके तुम 'जन्नत' के अधिकारी बन सकते हो । अल्लाह् की प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए वे आदेश पर्याप्त हैं जो मैंने तुम्हे दिये हैं । अल्लाह् की प्रसन्नता और मुखाकाक्षा मे तुम्हे इधर-उधर भटकने की आवश्यकता नही है । न तुम्हे इसके लिए जगलो और बयाबानो की खाक छानने की ज़रूरत है और न बस्ती से दूर

'रूहुल अमीन'[९] ने (एक 'रिवायत' के अनुसार रूहुल कुदुस ने) मेरे दिल मे यह बात डाली है कि कोई व्यक्ति उस समय तक नही मरता जब तक अपनी रोजी पूरी न कर ले[१०]। सावधान! अल्लाह का डर रक्खो और रोज़ी प्राप्त करने मे सन्तुलित नीति अपनाओ और रोजी में विलम्ब के कारण कही ऐसा न हो कि तुम उसे अल्लाह की अवज्ञा करके प्राप्त करो

वनो और पर्वतो की गुफाओ मे जाकर कठिन तपस्या करनी है। तुम्हारा तप और तुम्हारी साधना यही है कि तुम उन आदेशो के पालन मे लग जाओ जो मैं तुम्हे अल्लाह की ओर से पहुँचा रहा हूँ। इसके अतिरिक्त अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्त करने का कोई और साधन नही है। दूसरे उपाय और कृत्रिम साधन तुम्हें पथभ्रष्ट तो कर सकते हैं, उनके द्वारा तुम्हे अल्लाह की प्रसन्नता नही मिल सकती।

मैं तुम्हे उन बातो से भी सचेत कर चुका हूँ जिन से तुम्हे जीवन मे बचने की आवश्यकता है। जिन से यदि तुम बचे नही तो, 'जन्नत' से दूर और 'जहन्नम' से करीब हो जाओगे। मैंने जिन बातो से तुम्हे रोका है बस उन से दूर रहना 'जहन्नम' की आग से सुरक्षित रहने के लिए पर्याप्त है। गुमराह जातियो ने अपनी ओर से जो मशक्कतें घड ली हैं और जो पाबन्दियाँ अपने-आप पर लागू कर रक्खी है या जिन चीज़ो को उन्होने बिना किसी प्रमाण के वर्जित और अवैध निर्धारित कर लिया है, तुम कदापि उनके पाबन्द नहीं हो। जिस प्रकार अल्लाह की 'हराम' की हुई चीज़ किसी के 'हलाल' (*Lawful*) करने से हलाल (अवर्जित) नही हो सकती वह 'हराम' (*Unlawful*) ही रहेगी। इसी प्रकार जिन चीज़ो को अल्लाह ने हराम नही किया है बल्कि अवर्जित ही रक्खा है किसी को उन्हे हराम करने का अधिकार कदापि नही है।

क़ुरआन मे भी नबी सल्ल० के बारे मे कहा गया है : "जो उन्हे सुकर्म (भले कामो) का हुक्म देता है और बुराई से रोकता है और उनके लिए पाक (शुद्ध) चीजो को हलाल और नापाक (अशुद्ध) चीजो को हराम ठहराता है। और उन पर से उनका बोझ दूर करता है और उन फन्दो को (काटता है) जो उन पर चढे हुए थे।" —अल-आराफ आयत १५७

९ अर्थात् अल्लाह के विशेष 'फिरिश्ते' हज़रत जिबरील अ० ने।

१० मनुष्य के हिस्से की जो रोज़ी है वह उसे मिलकर रहेगी, इसलिए उसे रोज़ी हासिल करने मे वैध व अवैध और हलाल व हराम का सदैव ध्यान रखना चाहिए। उसे प्रत्येक अवस्था मे अल्लाह से डरते रहना चाहिए और रोजी प्राप्त करने के लिए वही साधन अपनाने चाहिएँ। जिन से न किसी का हक मारा जाता हो और न किसी के साथ अन्याय होता हो।

क्योंकि वह चीज, जो अल्लाह के पास है तुम्हे, अल्लाह के आज्ञापालन के द्वारा ही प्राप्त हो सकती है[11]। —शरहुस्सुन्नह, बैहकी-शोबुल ईमान

एकेश्वरवाद की प्रतिष्ठा

عَنْ اَنَسٍ قَالَ، قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ لِيَسْاَلْ اَحَدُكُمْ رَبَّهٗ حَاجَتَهٗ كُلَّهَا حَتّٰى يَسْاَلَ شِسْعَ نَعْلِهٖ اِذَا انْقَطَعَ ——— ترمذی

१. हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम में प्रत्येक को चाहिए कि वह अपनी समस्त आवश्यकताओं के लिए अपने 'रब' (पालनकर्त्ता स्वामी) से ही सवाल करे यहाँ तक कि यदि उसके जूते का तसमा टूट जाये तो वह भी उसी से माँगे[1]। —तिरमिज़ी

२ हजरत मुगीरा बिन शोबा रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० 'फर्ज' नमाजों के पश्चात् यह पढा करते थे "कोई 'इलाह' (पूज्य) नही सिवाय एक अल्लाह के, उसका कोई सहभागी नही। राज्य उसी का है, प्रशसा एव स्तुति ('हम्द') उसी के लिए है। और उसे हर चीज़ का सामर्थ्य प्राप्त है (वह सर्वशक्तिमान् है)। हे अल्लाह! तू जो दे दे उस से कोई रोकने वाला नही और जो तू न दे उसका देने वाला कोई नही। और तेरे सामने किसी वैभवशाली का वैभव भी (उसको) कोई लाभ नही पहुँचा सकता[2]।" —बुख़ारी, मुस्लिम

---

११ यदि किसी समय रोज़ी मिलने मे देर हो तो कदापि अधीर न होना चाहिए। और न घबराकर कोई ऐसा कदम उठाना चाहिए जो गलत हो। अल्लाह की ओर से यदि पाक रोज़ी मिल सकती है, तो अल्लाह के आज्ञापालन द्वारा ही मिल सकती है। अवैध और गलत रास्तो से मनुष्य जो-कुछ भी हासिल करता है वह उसके लिए पाक नही है। उसे यदि कोई ईश्वर की प्रदत्त वस्तु समझता है तो इसे एक धोखे के सिवा और कुछ नही कहा जा सकता।

१ अर्थात् 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) का अर्थ यह भी है कि मनुष्य अपनी आवश्यकताओ के लिए अल्लाह ही से प्रार्थना करे और उसी से सहायता चाहे। इस लिए कि वास्तविक कार्य-साधक अल्लाह ही है। दूसरे सभी उसके आश्रित हैं। जो लोग अल्लाह को छोडकर दूसरो को अपनी आवश्यकता-पूर्ति के लिए पुकारते है वे बडे भ्रम मे हैं।

२ अर्थात् अल्लाह के यहां किसी का धन-वैभव काम आने का नही है वहाँ जो चीज काम आ सकती है वह है सत्यनिष्ठा, हृदय की शुद्धता और पुण्यकर्म। अल्लाह ही के अधिकार मे सब-कुछ है। जिसको जो-कुछ मिलता है उसकी

३. हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है कि जब नबी सल्ल० बीमार हुये, तो आपकी कुछ पत्नियों ने उस गिरजा की चर्चा की जिसे मारियह कहते थे (यह गिरजा हब्शा मे था)। उम्म सलमा और उम्मे-हबीबा हब्शा जा चुकी थी। जब उन्होने उसकी सुन्दरता और उसके चित्रों का जिक्र किया, तो आप ने सिर उठाया और कहा : जब उनमें कोई भला व्यक्ति मर जाता तो वे उसकी कब्र पर एक इबादतगाह (उपासना गृह) का निर्माण कर देते और उसमे उसके चित्र बना देते थे[3]। ये अल्लाह के सृष्टि जीवो में सब से बुरे है[4]। —बुखारी, मुस्लिम

४. अता इब्न यसार कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० प्रार्थना करते थे · "हे अल्लाह! मेरी कब्र को बुत न बना देना कि उसकी पूजा की जाने लगे। अल्लाह का गुस्सा उन लोगो पर भडक उठा जिन्होने अपने 'नबियों' की कब्रो को सजदागाह (उपासना गृह) बना लिया[5]।"

—मालिक-हदीस-मुरसल

आज्ञा से मिलता है। उसका गौरव और महिमा अपार है। उसका कोई भी काम तत्वदर्शिता और शुभहेतु से अयुक्त नही। कोई नही जो उसके फैसले को बदल सके। कोई नही जो उसके कामो मे हस्तक्षेप कर सके।

३ इस प्रकार वे लोग 'शिर्क' (बहुदेववाद) की बुनियाद डाल देते थे।

४. इसलिए कि ये स्वय पथभ्रष्ट होते और दूसरे लोगो को पथभ्रष्टता का कारण बनते। अल्लाह की उपासना के बदले सृष्टि पूजा और समाधि पूजा की नीव डालते।

५. अल्लाह के सिवा किसी दूसरे की 'इबादत' और उपासना 'शिर्क' है। 'शिर्क' निकृष्टतम पाप है। पिछले आसमानी ग्रन्थो (*Heavenly Books*) मे भी 'शिर्क' की निन्दा की गई है और इसको जिना और व्यभिचार की उपमा दी गई है। कुरआन मे भी इसकी ओर सकेत किए गए हैं। देखिए सूरा अन-नूर आयत ३, सूरा अल-फुरकान आयत ६८। कुरआन 'शिर्क' को अत्यन्त भारी अन्याय कहता है। 'शिर्क' से बढकर अल्लाह की हकतलफी (स्वत्व हरण) दूसरी नहीं हो सकती। पिछले ग्रन्थो मे भी 'शिर्क' पर रोष प्रकट किया गया है। कुछ उदाहरण यहां प्रस्तुत किये जाते है

"तुझ को किसी दूसरे उपास्य की उपासना नही करनी होगी इसलिए कि परमेश्वर जिसका नाम स्वाभिमानी है, वह स्वाभिमानी ईश्वर है भी। अत. ऐसा न हो कि तू उस देश के निवासियो से कोई अनुबन्ध कर ले और जब वे अपने इष्ट देवो के अनुसरण मे व्यभिचारी (जिनाकार) ठहरे और अपने इष्टदेवो के लिए कुरबानी करें और कोई तुझ को आमन्त्रित करे और तू उस

५ हजरत जुनदुब रजि० कहते है कि मैंने नबी सल्ल० से सुना, आप कहते थे कि सुन लो ! तुम से पहले जो लोग थे वे अपने 'नबियों' और अच्छे लोगो की कब्रो को सजदागाह (उपासना गृह) बना लिया करते थे[६]। सावधान ! तुम कब्रो को सजदागाह न बनाना, मै तुम्हे इस कर्म से बाज़ रहने की ताकीद करता हूँ[७]। —मुस्लिम

६. इब्न अब्बास रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कब्रो पर जाने वाली स्त्रियों पर लानत की है और उन लोगो पर जो उनको (कब्रो को) सजदागाह (उपासना गृह) बनाते और उन पर दीपक जलाते है। —अबू दाऊद, तिरमिजी, नसई

७ हजरत अब्दुल्लाह इब्न मसऊद से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अपशकुन का विचार एक प्रकार का 'शिर्क' है। आपने यह (ताकीद के रूप मे) तीन बार कहा[८]।

—अबू दाऊद, तिरमिजी

की कुरबानी मे से कुछ खा ले। और तू उनकी बेटियो का विवाह अपने बेटो से करे और उनकी बेटियाँ अपने उपास्यो के अनुसरण मे व्यभिचारिणी ठहरें और तेरे बेटो को भी अपने उपास्यो के अनुसरण मे व्यभिचारी बना दे।"

—निर्गमन ३४ १४-१८

"(उन्होने) विमुख होकर अपने बाप-दादा की तरह विश्वासघात किया। और धोखा देने वाले धनुष की तरह एक ओर को झुक गए, क्योकि उन्होने अपने ऊँचे स्थानो के कारण उसके प्रकोप को उत्तेजित किया और अपनी खोदी हुई मूर्तियो से उसे गैरत दिलाई।"

—ज़बूर तीसरा भाग ७८ ५७-५८

"चालीस वर्ष तक मैं इस नस्ल से विरक्त रहा और मैंने कहा कि ये वे लोग है जिनके दिल आवारा हैं और इन्होने मेरी राहो को नही पहचाना। इस कारण मैंने अपने प्रकोप की कसम खाई कि ये लोग मेरे विश्राम मे कभी प्रवेश न करेंगे।" —ज़बूर, चौथा भाग ९५ १०-११

६ अर्थात् उन्हे सजदा करते थे हालाँकि उनके लिए कदापि उचित न था कि किसी दूसरे के आगे सिर झुकाये और नतमस्तक हो।

७ खेद की बात है कि बहुत से लोग नबी सल्ल० की इस वसीयत और उपदेश को भूल गए और कब्रो और मजारो के साथ वह सब-कुछ करने लगे जिस से आपने वर्जित किया था।

८ अपशकुन के विचार मे मनुष्य केव[illegible] शका की चीज को प्रभावकारी

८. हज़रत अबू हुरैरह् रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा . रोग का लग जाना, 'हामह्', नक्षत्र, 'सिफ' इन की कोई वास्तविकता नही है[९]। —मुस्लिम

९. उम्म कुर्ज़ कहती हैं कि मैंने अल्लाह् के रसूल सल्ल० से सुना आप कहते थे : पक्षियों को उनके अपने घोंसलों में बैठे रहने दो (उन्हें उड़ाकर अच्छे या बुरे शकुन का विचार न करो) —अबूदाऊद, तिरमिज़ी

१०. हज़रत मुआवियह् बिन हकम रजि० कहते हैं कि मैंने कहा :

भूल जाता है यह चीज़ 'शिर्क' है और शिर्क की भूमिका है। इसीलिए आपने ताकीद की कि इस से बचा जाये।

९. केवल आशका के आधार पर यह समझना कि रोग उडकर एक से दूसरे को लग जाते हैं, सही नही, किसी रोग के विषय मे निश्चित रूप मे उसके फैलने के कारणो का अनुसन्धान कर लिया गया हो, तो यह दूसरी बात है उनके मानने मे कोई दोष नहीं है। इस्लाम कार्य-कारण का इन्कार नही करता। वह हमे जिस चीज़ से बचाना चाहता है वह है अन्धविश्वास और निर्मूल बातो मे विश्वास रखना। अन्धविश्वास मनुष्य को वास्तविकता और सच्चाई से दूर कर देता और उसे विभिन्न प्रकार की पथभ्रष्टता मे फसा देता है चाहे उन का सम्बन्ध विचार और धारणा से हो या व्यवहार और कर्म से।

'हामह्' और 'सिफ़' से क्या अभिप्रेत है, इसमे मतभेद है। अज्ञान काल मे एक धारणा यह थी कि जब मारे गए व्यक्ति के खून का बदला नही लिया जाता, तो उसकी आत्मा एक पक्षी के रूप मे पुकारती फिरती है कि मैं प्यासी हूँ, मेरा बदला लिया जाये। 'सिफ़' एक धारणा के अनुसार ऐसा जन्तु है जिस के काटने से भूख का एहसास होता है। इसके अतिरिक्त इस तरह की कुछ दूसरी धारणाएँ भी है। इस्लाम ने उन सबको निर्मूल ठहरा कर मनुष्य के मन और मस्तिष्क को अन्धविश्वास से मुक्त किया है।

अज्ञान काल मे अरब वर्षा को नक्षत्रो से सम्बद्ध करते थे। इस विचार का खण्डन किया गया और बताया गया कि धरती और आकाश की समस्त शक्तियों का मालिक अल्लाह् है। जो-कुछ होता है उसके फैसले के अन्तर्गत होता है। इसलिए हमारा भरोसा उसी पर होना चाहिए न कि हम तारो और नक्षत्रो पर भरोसा करने लग जायें। कार्य-कारण की दुनिया मे तारो का जो-कुछ प्रभाव पडता हो उसमे, वैज्ञानिक रूप मे, जो बातें सिद्ध हो चुकी हों उनके मानने मे हमारे लिए कोई दोष नही है। दोष की बात यह है कि कोई व्यक्ति अन्धविश्वास के कारण अल्लाह् को छोडकर दूसरी चीज़ो पर भरोसा करने लग जाये और उन्ही का उपासक बन जाएं और उन्ही को अपना इष्ट देव बना लें।

हे अल्लाह के रसूल ! कुछ बाते हम अज्ञानकाल में किया करते थे (उनके बारे में आप क्या कहते है) हम 'काहिनों' के पास (परोक्ष की बातें मालूम करने के लिए) जाया करते थे। आपने कहा उनके पास न जाओ[१०]। उन्होने कहा कि हम पक्षी उड़ाकर शकुन-अपशकुन का विचार करते थे। आपने कहा यह ऐसी चीज़ है जिसका तुम्हारे दिलों पर असर तो होगा (इसलिए कि तुम यह काम करते आये हो) परन्तु चाहिए कि यह चीज तुम्हारे लिए रुकावट न बनने पाए[११]। वे कहते हैं कि मैंने कहा कि हमारे कुछ लोग रेखाये खीचते थे[१२]। आपने कहा 'नबियों' में एक 'नबी' रेखा खीचते थे, अब किसी की रेखा उसके अनुरूप हो जाती होगी, तो वह भी ठीक होता होगा (परन्तु यह कैसे मालूम हो कि किसी की खीची हुई रेखा उनके अनुरूप है[१३])। —मुस्लिम

---

१०. गैब और परोक्ष की बातें अल्लाह के सिवा कोई दूसरा नहीं जानता। दूसरो की सारी बातें अटकल और अनुमान पर अवलम्बित होती हैं जिसमे ग़लती की आशंका सदा बनी रहती है।

११. अर्थात् ऐसा नही होना चाहिए कि तुम उसके कारण अपने किसी प्रोग्राम को बदल दो।

१२ अर्थात् रेखा खीचकर, हिसाब लगाकर कुछ बातें मालूम करते थे।

१३ एक 'हदीस' मे आपने, ऐसे अवसर के लिए, कुछ शब्द पढने की शिक्षा दी है जिससे हृदय पर पड़े हुए बुरे प्रभाव मिट जाते हैं, मनुष्य अल्लाह पर भरोसा करने लगता है और उसे धैर्य और सन्तोष की परम निधि मिल जाती है, वे पवित्र शब्द ये हैं : "हे अल्लाह तू ही भलाई पहुँचाता है और तू ही बलाओ को दूर करता है और न कोई बल्गव है और न कोई शक्ति है सिवाय अल्लाह के द्वारा के।" —अबू दाऊद

तकदीर पर ईमान

तकदीर पर 'ईमान' वास्तव मे अल्लाह पर 'ईमान' का ही एक अग है। कुरआन में इसको इसी हैसियत से बयान भी किया गया है, उदाहरणार्थ देखिए सूरा आले इमरान, आयत २६, ७३, अन-निसा आयत ७८, अल-आराफ आयत १२८, अल-फुरकान आयत २-३, अल-हदीद आयत २२-२३। अल्लाह के मानने मे वस्तुत तकदीर का मानना भी सम्मिलित है। तकदीर का इन्कार वास्तव में अल्लाह का इन्कार है। हजरत इब्न अब्बास रजि० कहते है "तकदीर पर 'ईमान' से 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) की व्यवस्था सम्बद्ध है। जो व्यक्ति 'ईमान' लाये और तकदीर का इन्कार करे तो उस ने 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) का क्षय कर दिया"। (दे० किताबुस्सुन्नह-इमाम अहमद पृष्ठ १२३)।

तकदीर पर 'ईमान' वास्तव मे अल्लाह की प्रभुता और उसकी महानता को स्वीकार करना है। यह इस वात को मानना है कि अल्लाह सर्वशक्तिमान् और परम शासक है। उसका ज्ञान सबको अपनी परिधि में समेटे हुये है। कोई भी चीज उसकी ज्ञान-परिधि से बाहर नही है। उसने हर चीज का अन्दाजा ठहराया है, कोई भी चीज उससे बाहर नही जा सकती। उसकी शक्ति और अधिकार के अन्तर्गत हर चीज है। वह हर चीज के आरम्भ और अन्त को जानता है। यह ससार उसकी सोची-समझी योजना (*Scheme*) के अन्तर्गत चल रहा है। कोई उसे उसकी योजना मे असफल नही कर सकता। फिर हानि-लाभ, सारी शक्तियाँ उसके अधिकार मे हैं। जीवन प्रदान करने वाला और मृत्यु देने वाला वही है। रोजी का मालिक वही है, जिसे चाहे अधिक दे, जिसकी रोजी चाहे कम कर दे। आदर-सम्मान, वैभव, शक्ति, बल, शासन आदि सब-कुछ उसके अधिकार में है। वह अपनी तत्वदर्शिता की दृष्टि से, जिसको जितना चाहता है प्रदान करता है। उसकी हिकमत (तत्वदर्शिता) त्रुटिहीन है, उसमे किसी प्रकार की अपूर्णता नही पाई जाती। उसका कोई काम और उसका कोई फैसला व्यर्थ और निरुद्देश्य नही है। इस लोक में धन, प्रसिद्धि, सुन्दरता, बल और दूसरी चीजे सबको समान रूप से नही मिली हैं। यह व्यवस्था उसी की स्थापित की

हुई है। और पूर्ण रूप से इसमें 'हिकमत' (*Wisdom*) और शुभ हेतु पाया जाता है। उसकी हिकमतों को पूर्ण रूप से जान लेना मनुष्य के लिए सम्भव नही। न किसी मे यह सामर्थ्य है कि वह अल्लाह की निर्मित व्यवस्था को वदल सके। हमें चाहिए कि हम उन सीमाओं में रहते हुये अपने उन कर्त्तव्यो को पूरा करे जो अल्लाह नें हमारे लिए निर्धारित किये हैं। सफलता और असफलता सव उसके हाथ में है। वही है जो गिरे हुये को उठाता और उठे हुये को गिराता है। वही असफलताओ में सफलता की राहे निकालता है। वही उन लोगों को, जो अपनी सरकशी और उद्दण्डता में रत और अपनी सामग्री पर गर्व कर रहे होते हैं, असफलता के बुरे दिन दिखाता है।

तकदीर को मानने से मनुष्य के विचार और दृष्टि में बड़ी व्यापकता आ जाती है। उसे अपार शक्ति और बल मिल जाता है, वह निश्चिन्त और धैर्य्यवान् हो जाता है। उसका भरोसा अपने पालनकर्त्ता अल्लाह पर होता है। अल्लाह पर भरोसा उसमें सकल्प और उत्साह की वह शक्ति उत्पन्न कर देता है, जिसका मुकाबला नही किया जा सकता। वह चेष्टा और परिश्रम से नही भागता, प्रयास और कर्म के द्वारा उसे अपने 'रव' (पालनकर्त्ता स्वामी) की सहायता और उसकी कृपा की खोज होती है। वह कभी हताश नही होता। अल्लाह और तकदीर को मानने से आत्मसम्मान और निश्चिन्तता के साथ-साथ उसकी आत्मा को ऐसी शुद्धता और पवित्रता प्राप्त होती है जिस पर ससार की प्रत्येक वस्तु निछावर की जा सकती है। लोभ, वासना और ईर्ष्या एवं द्वेष की तुच्छ भावनाएँ उसके हृदय मे स्थान नही बना सकती। उसे यदि सव-कुछ मिल जाये तो वह गर्व नही करता, और यदि तगी और सकट का सामना करना पडे, तो वह अधीर नही होता। वह अल्लाह का एक कर्तव्यपरायण, धैर्य्यवान् और कृतज्ञ सेवक होता है। अल्लाह के गुणगान और स्मरण को मूल जीवन-निधि जानता है।

तक़दीर पर ईमान और उसका महत्व

عَنْ جَابِرٍ قَالَ، قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ، لَا يُؤْمِنُ عَبْدٌ حَتّٰى يُؤْمِنَ
بِالْقَدْرِ خَيْرِهٖ وَشَرِّهٖ حَتّٰى يَعْلَمَ اَنَّ مَا اَصَابَهٗ لَمْ يَكُنْ لِيُخْطِئَهٗ وَمَا اَخْطَاَهٗ
لَمْ يَكُنْ لِيُصِيْبَهٗ ——————— ترمذی

१. हज़रत जाविर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा वन्दा उस समय तक 'ईमान' वाला नही होता जव तक कि 'तकदीर' की भलाई और बुराई पर ईमान न लाये, और जव तक कि यह न जान ले कि जो चीज (भलाई और बुराई) उसको पहुँच गयी यह असम्भव था कि वह उसे न पहुँचती। और (इसी तरह) जो कुछ नही पहुँचा यह असम्भव था कि वह उसको पहुँच जाता'[1]। —तिरमिज़ी

---

१. अर्थात् अल्लाह पर ईमान उसी समय पूर्ण होता है जबकि मनुष्य तकदीर पर ईमान लाये, इसके विना 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) की धारणा पूर्ण नही हो सकती। तकदीर पर ईमान रखने वाला यह जानता है कि जो तकलीफ और आराम उसे पहुँचा, वह पहुँच कर रहने वाला था और जो नहीं पहुँचा वह पहुँचने वाला था ही नही। ससार मे जो कुछ होता है वह अल्लाह के फैसले के अन्तर्गत ही होता है। एक बडी स्कीम के अन्तर्गत ईश्वर इस विश्व-व्यवस्था को चला रहा है। जिस प्रकार सम्पूर्ण विश्व और उसके विभिन्न भागो में परस्पर सामजस्य और अनुकूलता पाई जाती है, उसी प्रकार इस ससार मे छोटी या बडी जो घटना भी घटित होती है वह स्थायी रूप से कोई अलग घटना नही होती बल्कि वह विश्व की घटनाओ के क्रम की एक कड़ी होती है और वह उस बडे उद्देश्य के अन्तर्गत ही घटित होती है जिसकी पूर्ति के लिए इस विश्व का सृष्टिकर्त्ता इस विश्व-व्यवस्था को चला रहा है। इस व्यवस्था के पीछे जो उद्देश्य काम कर रहा है यदि उसकी पूर्ति वर्तमान व्यवस्था से उत्तम किसी व्यवस्था से हो सकती तो, निश्चय ही अल्लाह उसी को स्थापित करता। इस ससार मे हर्ष के साथ शोक, सुख के साथ दुःख यदि पाया जाता है तो यो ही नही, बल्कि यह महान् तत्वदर्शिता (*Wisdom*) के अन्तर्गत ही

२ हज़रत अबूहुरैरह् रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह् को वलिष्ट 'ईमान' वाला निर्बल ईमान वाले से अधिक प्रिय है। और हर एक मे भलाई है, जो चीज तुम्हे लाभ पहुँचाये उसका लोभ करो और अल्लाह से सहायता की याचना करो और साहस न छोडो। और यदि तुम्हे कोई कष्ट पहुँचे तो यो न कहो कि "यदि" मैं ऐसा करता तो यों हो जाता बल्कि कहो अल्लाह् ने जो चाहा किया, इसलिए कि (यह) "यदि" शैतान के कर्म का द्वार खोल देता है[२]।

—मुस्लिम

३ हज़रत सहल विन सअ़द रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा . (कभी ऐसा होता है कि) बन्दा 'जहन्नम' में जाने वालो का सा कर्म करता है और होता है वह 'जन्नत' में ज़ाने वाला, और इसी प्रकार (कभी ऐसा होता है कि) 'जन्नत' वालो का सा कर्म करता है और होता है वह 'जहन्नम' मे जाने वाला और वात यह है कि कर्म में एतवार अन्त ही का होता है[३]। —बुख़ारी, मुस्लिम

पाया जाता है। यह हमारी अदूरदर्शिता होगी यदि हम इसे अलल-टप्पू या अन्याय पर आधारित व्यवस्था समझने लग जाये।

२. अर्थात् ऐसा ईमान वाला, जो साहसी और सकल्प का दृढ हो, अल्लाह् को उस ईमान वाले से अधिक प्रिय है जिसे तनिक भी असफलता हुई तो हिम्मत हार बैठता है। ईमान रखने वाले व्यक्ति का काम यह है कि वह किसी हालत मे भी साहस न छोडे, अल्लाह् से सहायता का इच्छुक हो। यदि कोई मुसीबत या तकलीफ पेश आये तो समझे कि इसका आना पहले से तै था, इसलिए सब्र से काम ले। ईमान वाले व्यक्ति के लिए यह किसी तरह उचित नही कि वह ऐसे समय पर यह कहने लगे कि यदि मैं ऐसा करता तो, यह मुसीबत न आती और यदि मैंने अमुक उपायो को अपनाया होता तो, इस तकलीफ से बच जाता। सोचने की यह नीति उसे विह्वलता, सन्ताप और दुख का ग्रास बनाकर हतोत्साह कर देगी। और शैतान यही चाहता है कि किसी-न-किसी तरह वह ईमान वाले व्यक्ति को उसके वास्तविक लक्ष्य से विमुख कर दे।

३ आदमी के जीवन का अन्त यदि 'कुफ़्र' (अधर्म) पर होता है तो वह 'दोज़ख' नरक मे जायेगा भले ही उसका सम्पूर्ण जीवन इस्लाम पर चलने मे व्यतीत हुआ हो। उसने स्वय अपने ईमान और शुभ कर्म को रद्द कर दिया। इसके विपरीत यदि आदमी की मृत्यु इस्लाम पर होती है और वह अन्तिम समय मे इस्लाम को अपना लेता है तो उसकी गणना 'जन्नत' वालो मे होगी, इसलिए कि उसने सच्चाई को अपनाकर अन्त मे ईश्वर की दासता स्वीकार कर ली

४ अबू खिजामह् अपने पिता के माध्यम से कहते है कि उनका बयान है कि मैने अल्लाह् के रसूल सल्ल० से कहा हे अल्लाह् के रसूल ! यह तो बताइए कि जो झाड-फूँक हम करते है या दवाये जिनको हम प्रयोग में लाते है या बचाव की चीजे जिनसे हम अपनी रक्षा करते है क्या अल्लाह् की (निश्चित की हुई) तकदीर को फेर सकती है ? आपने कहा : ये सब चीजे अल्लाह् की निश्चित की हुई तकदीर में से है[४]।

—तिरमिजी, इब्न माजह्, अह्मद

तक़दीर पर ईमान लाने का मानव-चरित्र पर प्रभाव

عَنْ اِبْنِ عَبَّاسٍ قَالَ كُنْتُ خَلْفَ النَّبِيِّ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ يَوْمًا فَقَالَ يَا غُلَامُ اِنِّيْ اُعَلِّمُكَ كَلِمَاتٍ، اِحْفَظِ اللّٰهَ يَحْفَظْكَ، اِحْفَظِ اللّٰهَ تَجِدْهُ تُجَاهَكَ، اِذَا سَأَلْتَ فَاسْئَلِ اللّٰهَ، وَاِذَا اسْتَعَنْتَ فَاسْتَعِنْ بِاللّٰهِ، وَاعْلَمْ اَنَّ الْاُمَّةَ لَوِ اجْتَمَعَتْ عَلٰى اَنْ يَّنْفَعُوْكَ بِشَيْءٍ لَمْ يَنْفَعُوْكَ اِلَّا بِشَيْءٍ قَدْ كَتَبَهُ اللّٰهُ لَكَ. وَلَوِ اجْتَمَعُوْا عَلٰى اَنْ يَّضُرُّوْكَ بِشَيْءٍ لَمْ يَضُرُّوْكَ اِلَّا بِشَيْءٍ قَدْ كَتَبَهُ اللّٰهُ عَلَيْكَ. رُفِعَتِ الْاَقْلَامُ وَجَفَّتِ الصُّحُفُ

——— ترمذی، احمد

१ इब्न अब्बास रजि० कहते है कि एक दिन मै नबी सल्ल० के पीछे सवारी पर सवार था। आपने कहा हे लडके ! मै तुम्हे कुछ बातो की शिक्षा देता हूँ अल्लाह् का ख्याल रक्खो अल्लाह् तुम्हारा ख्याल रखेगा। अल्लाह् का ख्याल रक्खो तो उसे अपने सामने पाओगे। जब माँगो तो अल्लाह् से माँगो और जब सहायता की याचना करो तो अल्लाह से सहायता की याचना करो। जान लो कि यदि सारे लोग मिल कर तुम्हे फायदा पहुँचाने के लिए एकत्र हो जाये, तो

और अधर्म मार्ग को छोड दिया। यह हदीस बताती है कि आदमी को अपने परिणाम की ओर से कभी भी गाफिल नही रहना चाहिए।

४ अर्थात् दुआ, इलाज और रक्षा के उपायो को अपनाना अल्लाह् की निश्चित की हुई तकदीर के विरुद्ध चेष्टा करना नही है वल्कि ये तकदीर ही के सिलसिले की चीज़े है। इनमे और तकदीर मे कोई टकराव और विरोध नही पाया जाता। इसलिए इन चीजो को अपनाने वाला तकदीर के विरुद्ध नही चलता वल्कि वह जो कुछ भी करता है तकदीर ही के अन्तर्गत करता है।

तुम्हे फायदा नही पहुँचा सकते सिवाय उसके जो अल्लाह ने तुम्हारे लिए लिख दिया है। और यदि सब लोग इकट्ठा होकर तुम्हे हानि पहुँचाना चाहे तो, वे तुम्हे हानि नही पहुँचा सकते सिवाय उसके जो अल्लाह ने तुम्हारे लिये लिख दिया है। लेखनियाँ उठा ली गई है और कागजो की स्याही सूख चुकी है[1]। —तिरमिजी, अहमद

२ हजरत सौवान रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तकदीर को कोई चीज नही फेर सकती सिवाय दुआ के, और आयु को कोई चीज बढा नही सकती सिवाय नेकी के, और निश्चय ही आदमी गुनाह को शामत से कभी रोजी से भी वंचित हो जाता है[2]।

—इब्न माजा

---

१ यह हदीम बताती है तकदीर पर ईमान लाने से बहुत से नैतिक लाभ भी मनुष्य को पहुँचते है। मनुष्य लोगो से निर्भय हो जाता है उसे भय होना है तो केवल ईश्वर का। वह ईश्वर के सिवा किसी से न फायदे की आशा करता है, और न किसी हानि की उसे आशका होती है। वह समझता है कि मुझे जो मिलना है मिल कर रहेगा और जो चीज़ मेरे हिस्से मे नही है वह किसी के देने से मुझे नही मिल सकती। इसलिए वह भय और लोभ से रहित होकर सत्य मार्ग मे आगे बढने की कोशिश करता है। न कोई भय उसे सत्य मार्ग से विचलित कर सकता है और न कोई लालच और आशा उसे सत्य से फेर सकती है।

२ यह हदीस बताती है कि तकदीर पर ईमान लाने का अर्थ यह कदापि नही है कि आदमी कर्म और उपाय आदि से किनारा खीच ले। तकदीर पर ईमान लाने से कर्म और उपाय आदि का निषेध नही होता। ये चीजे तो हमारी तकदीर को निश्चित करती है। दुआ से तकदीर बदलती या निश्चित होती है यह बात वास्तव मे हमारे एतबार से कही गई है, ईश्वरीय ज्ञान मे तो हर चीज पहले से निश्चित होती है। मिसाल के तौर पर अल्लाह को पहले से मालूम है कि अमुक व्यक्ति मुसीबत मे पड कर दुआ करेगा या नही। साधन, कार्य-कारण आदि तकदीर से भिन्न नही है। दुआ को लीजिए, दुआ कोई बेजान सी पुकार नही है बल्कि वह मनुष्य के लिए अतुल बल है। हज़रत यूनुस अ० की जाति वालो पर अल्लाह की यातना टूट पडने वाली थी, परन्तु जाति वालो के विलाप, दुआ और विनय से अजाब टल गया। यदि ये लोग ईश्वर की ओर न झुकते और दुआ और 'तौबा' (पश्चाताप) का सहारा न लेते, तो अल्लाह इन्हे विनष्ट कर देने का फैसला कर चुका था। इनको तबाही से कोई चीज नही बचा सकती थी। दुआ की इसी विशेषता के कारण यह बात कही गई कि तकदीर को कोई चीज़ फेर सकती है तो, वह दुआ है, मनुष्य के

३. हजरत अबूहुरैरह रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० हमारे पास बाहर आये उस समय हम लोग तकदीर के विषय में वाद-विवाद कर रहे थे इस पर आप क्रुद्ध हुये, यहाँ तक कि आपका चेहरा लाल हो गया मानो अनार के दाने आपके चेहरे पर निचोड़ दिये गये हैं। फिर आपने कहा क्या तुम्हे इस बात का हुक्म दिया गया था या मैं इसके लिए तुम्हारे पास 'रसूल' बना कर भेजा गया हूँ। तुमसे पहले जो लोग गुजरे हैं जब वे इस विषय मे उलझने लगे तो वे विनष्ट हो गये। मै तुम्हे ताकीद करता हूँ कि तुम कदापि इस बारे में न झगडना[3]।

—तिरमिजी, इब्न माजह

उपायों मे सबसे बडा उपाय दुआ ही है। यही कारण है कि जब आदमी की सारी तदबीरें विफल हो जाती हैं, तो वह दुआ का सहारा लेता है।

आयु के बढने का कारण स्वास्थ्य-रक्षक नियमो का पालन और स्वास्थ्य-वर्द्धक चीज़ो का सेवन ही नही है बल्कि इन भौतिक कारणो के अतिरिक्त नेकी-भलाई और लोगो के हक को अदा करना, लोक-सेवा आदि नैतिक और आध्यात्मिक कारण भी प्रभावकारी शक्तियाँ है जिन से मनुष्य की आयु मे वृद्धि होती है। इसी प्रकार रोज़ी की कमी या रोजी से वचित रह जाने का कारण केवल यही नही होता कि मनुष्य ने रोज़ी कमाने मे कोई कोताही की है, आदमी अपने गुनाहो के कारण भी रोजी से वचित हो सकता है। इस हदीस से मालूम होता है कि तकदीर मे बन्दो की दुआओ, उनकी नेकियो और उनके भले-बुरे कर्मों तक का लिहाज़ रक्खा जाना सम्भव है। जो लोग 'तकदीर' को जब्र और विवशता का नाम देते हैं वे गलती पर है। लोगो को जिस हद तक कर्म और सकल्प की स्वतन्त्रता प्राप्त है 'तकदीर' उसे लोगो से छीनती नही बल्कि यह स्वतन्त्रता तो तकदीर ही की देन है, फिर दोनो मे टकराव कैसे हो सकता है। यहाँ यह बात समझ लेने की है कि लोगो को जो-कुछ सामर्थ्य और अधिकार प्राप्त है वह सर्वशक्तिमान ईश्वर ही का दिया हुआ है। जिस प्रकार मनुष्य का अस्तित्व और उसका जीवन ईश्वर की शक्ति, बल और उसकी कृपा पर आश्रित है, ठीक उसी प्रकार मनुष्य अपने कर्म, संकल्प आदि मे भी उसी का मुहताज है। मनुष्य को जो कुछ शक्ति और सामर्थ्य प्राप्त है वह ईश्वर की शक्ति और सामर्थ्य पर अवलम्बित है। मनुष्य के पास अपना कुछ भी नही है, जो कुछ है, ईश्वर ही का दिया हुआ है।

२. एक दूसरी हदीस भी सामने रहनी चाहिए। हज़रत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो व्यक्ति चाहता है कि उसकी रोज़ी मे कुशादगी पैदा की जाये और उसकी मृत्यु मे विलम्ब किया जाये उसे नातेदारो

के साथ अच्छा व्यवहार करना चाहि (बुखारी, मुस्लिम)।

तकदीर का विषय कठिन और गूढ है इसलिए इस पर झगडने और वाद-विवाद करने से रोका गया। लोगो को इसका ध्यान दिलाया गया कि उन्हे अपने कर्त्तव्यो के पालन मे लगना चाहिए, जो उनके जीवन का मूल उद्देश्य है, जिसकी शिक्षा देने के लिए अल्लाह ने रसूलो को भेजा है। तकदीर पर ईमान लाना काफी है, इस विषय मे ज्यादा खोद-कुरेद करना उचित नही, समस्त ईश्वरीय रहस्यो को जान लेना मनुष्य के लिए सम्भव भी नही है।

रिसालत की धारणा

मनुष्य को संसार में जहाँ भोजन, जल और प्रकाश आदि की आवश्यकता है, वही उसकी सब से बडी आवश्यकता यह है कि कोई एक मार्ग-दर्शक हो जो उसे अल्लाह का मार्ग बता सके। जो उसे बता सके कि उस के जीवन का वास्तविक ध्येय क्या है ? अल्लाह ने उसे ससार में किस लिए भेजा है ? मार्ग-दर्शन (*Guadiance*) के बिना मनुष्य ईश्वरीय इच्छा के अनुसार जीवन-यापन नही कर सकता, हालाँकि अल्लाह की प्रसन्नता और शाश्वत सफलता की प्राप्ति के लिए आवश्यक है कि मनुष्य का जीवन अल्लाह की दासता और आज्ञापालन मे व्यतीत हो। जो अल्लाह हमारी छोटी-छोटी आवश्यकताओ को नही भूलता, बल्कि उन्हे पूरी करने की व्यवस्था करता है, उस से यह आशा कैसे की जा सकती है कि वह हमे यो ही ससार में भटकने के लिए छोड देगा और हमारे मार्ग-दर्शन की कोई व्यवस्था न करेगा।

मनुष्य के मार्ग-दर्शन के लिए एक मार्ग-दर्शक तो अल्लाह ने मनुष्य के अपने अन्तर में रख दिया है। अल्लाह ने मानव-प्रकृति को ऐसे साँचे मे ढाला है कि वह अच्छे-बुरे विचार और भले-बुरे कर्म में अन्तर कर सके। इसके साथ ही अल्लाह ने विश्व में अपनी निशानियाँ और चिह्न फैला रक्खे है जिनके द्वारा मनुष्य को सत्य के लिए दिशा-दर्शन मिल सकता है। किन्तु मानवीय मार्ग दर्शन के लिए अन्तर्बोध या सहज ज्ञान सम्बन्धी (*Intuitional*) और ऐहिक (*Cosmic*) दिशा दर्शन को ही पर्याप्त नही समझा गया बल्कि इसके साथ अल्लाह ने मनुष्यो के बीच अपने 'रसूलों' और 'नबियो' को भेजा ताकि वे लोगो को जीवन का सत्य और स्वाभाविक मार्ग दिखाये और उन्हे आचार-विचार की प्रत्येक पथ भ्रष्टता से बचायें। अल्लाह ने जिन महान् पुरुषों को 'रिसालत' (ईशदूतत्व) का पद प्रदान किया उन्हे उसने असाधारण ज्ञान और सूझ-बूझ दी ताकि वे स्वयं सत्यमार्ग पर स्थिर रह सके और दूसरे लोगो को सत्यमार्ग दिखाने के प्रति अपने दायित्वों को पूरा कर सके। पथभ्रष्टता और गुमराही से के लिए आवश्यक है कि मनुष्य 'रसूल' पर 'ईमान' लाये उस के आदेशो का पालन करे। 'रसूल' अल्लाह के सन्देष्टा होते ९। उन पर 'ईमान' लाये बिना न अल्लाह के विषय में मनुष्य को धारणा

और कल्पना ठीक हो सकती है और न दूसरे परोक्ष सम्बन्धी वास्तविकताओ के सम्बन्ध मे उसे ऐसा ज्ञान मिल सकता है जिस पर पूरा भरोसा किया जा सके और न उसका जीवन ईश्वरीय इच्छा के अनुसार व्यतीत हो सकता है।

फिर रिसालत' (ईशदूतत्व) पर 'ईमान' ही वह चीज हे जो सारे मनुष्यो को एक आस्था और विश्वास पर सगठित कर सकती है। लोगो में धारणा एव विचार सम्बन्धी जितने भी मत-भेद पाये जाते हे उनका कारण वास्तव में गुमान, अटकल और अनुमान का अनुपालन है। वास्तविकता विभिन्न नही हो सकती। रसूलो के पास अल्लाह का दिया हुआ वास्तविक ज्ञान होता है। उन्होने ने एक सत्य की ओर लोगो को आमन्त्रित किया। ससार के विभिन्न भागों मे जितने भी 'रसूल' आये सबकी मौलिक शिक्षा एक थी। सब ने लोगो को एक एकेश्वरवाद, ईश-दासता और ईश-उपासना की ओर बुलाया और उन्हे 'आखिरत' के दिन से सचेत किया। अल्लाह के 'रसूल' ने जो आदेश भी दिया वह अल्लाह की ओर से दिया और जीवन की जिस पद्धति की शिक्षा भी दी वह वही है जो अल्लाह की ओर से उन्हे मिली थी। अल्लाह के 'रसूलो' ने जो शिक्षा दी है वह सत्य और न्याय पर अवलम्बित है। वह अटकल, अनुमान और तुच्छ इच्छाओ और वासनाओ से रहित है।

अल्लाह की ओर से लोगो के मार्ग-दर्शन के लिए बहुत से 'रसूल' और 'नबी' आये जिनमें कुछ का कुरआन में उल्लेख भी हुआ है। सब के अन्त मे अल्लाह ने हजरत मुहम्मद सल्ल० को अपना 'रसूल' और पैगम्बर बना कर भेजा। आपका जीवन-चरित्र और आपके जीवन-वृतान्त विस्तार के साथ सुरक्षित है। आपकी लाई हुई किताब उन्ही शब्दो के साथ मौजूद है जिन शब्दो में आपने उसे ससार के सामने प्रस्तुत किया था। अगले 'नबियो' के जीवन-चरित्र और उनकी शिक्षाएँ आज अपने वास्तविक रूप मे सुरक्षित नही है। उनसे जिस चीज का भी सम्बन्ध जोडा जाता है, वह ऐसा नही जिसको पूरे भरोसे के साथ लोगो के सामने प्रस्तुत किया जा सके। अगले नबियो की मौलिक शिक्षाएँ क्या थी और उन्होने लोगो को किस मार्ग की ओर बुलाया था इसे मालूम करने का एक ही साधन ऐसा है जिस पर पूरा विश्वास किया जा सकता है। वह है अल्लाह के अन्तिम 'रसूल' हजरत मुहम्मद स० का चरित्र, उनकी जीवनी और उनका लाया हुआ सन्देश, जो अपने वास्तविक रूप मे हमारे सामने मौजूद है। आप ने ससार को जिस मार्ग की ओर बुलाया है वही वह मार्ग है जिसकी ओर अगले

'नबियो' ने भी लोगों को आमन्त्रित किया था।

अगले 'नबियों' की 'नुबूवत' (ईश-दूतत्व) विशेष समय और विशेष लोगो के लिए थी जिनमे वे आये थे। हज़रत मुहम्मद की 'नुबूवत' को अल्लाह ने किसी विशेष युग या किसी विशेष जाति तक सीमित नही किया; बल्कि आपको अल्लाह ने 'कियामत' तक के लिए और सारे ससार का 'रसूल' बना कर भेजा। आपके द्वारा अल्लाह ने 'दीन' (धर्म) को पूर्ण कर दिया। मार्ग-दर्शन की जो जीवनदायिनी निधि पिछले 'नबियो' के द्वारा भेजी जाती रही है, पूर्ण कर दी गई। हज़रत मुहम्मद के पश्चात न किसी नवीन नुबूवत की आवश्यकता है और न आप के पश्चात् कोई नया 'नबी' आने वाला है। अब सत्य-मार्ग पाने और शाश्वत-सफलता प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य आप का अनुसरण करे। जिसने आप का इन्कार किया उसके लिए सम्भव नही कि वह सही रास्ते को पा सके और दोनों लोक मे सफल हो सके। आप का इन्कार वास्तव मे अगले सभी 'नबियों' का इन्कार है। इसलिए कि आप उसी धर्म के आमन्त्रणदाता है जिसका आमन्त्रण अगले 'नबियो' ने दिया है। समस्त नबियो का सम्बन्ध एक गरोह से है।

रहा यह प्रश्न कि 'नबियों' और 'रसूलो' के द्वारा अल्लाह ने अपना सन्देश क्यो भेजा? जो अल्लाह रसूलों को अपनी इच्छा और अपने सन्देश की सूचना दे सकता था, वह सीधे (*Directly*) प्रत्येक व्यक्ति को मार्ग क्यो नही दिखाता? यह प्रश्न केवल दृष्टि की सकीर्णता के कारण ही किया जाता है। विश्व की वर्तमान व्यवस्था और मार्ग-दर्शन की इस रीति में कि अल्लाह प्रत्यक्ष प्रत्येक व्यक्ति को सम्बोधित करे, कोई सम्पर्क नही है। रहस्यमयता इस जगत का सामान्य नियम (*General law*) है। संसार की प्रत्येक वस्तु अपने अस्तित्व को स्थिर रखने और अपने विकास के लिए हर क्षण ईश्वरीय अनुदान पर आश्रित है परन्तु फिर भी बीच में कार्य-कारण के इतने परदे डाले गये है कि वास्तविकता का प्रत्यक्ष निरीक्षण किसी के लिए सम्भव नही है। रहस्यमयता के नियम से मनुष्य को अलग कर देने का अर्थ यह है कि रहस्यमयता की समस्त व्यवस्था निरर्थक हो जाये। इसलिए 'रिसालत' और 'वह्य' (दैवी प्रकाशन, *Rvealation*) या रिसालत ही मार्ग-दर्शन का वह साधन है जो वर्तमान जगत के अनुकूल है। 'रिसालत' ही एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा मनुष्य को जीवन के स्पष्ट आदेश भी मिल सकते हैं और साथ-साथ रहस्यमयता का नियम भी शेष रह सकता है। इस छिपाव और रहस्यमयता से अभीष्ट वास्तव में मनुष्य की अन्तःप्रेरणा और उसके संकल्प आदि की परीक्षा है।

रिसालत पर ईमान

عَنْ جَابِرٍ قَالَ قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ . وَالَّذِي نَفْسُ مُحَمَّدٍ
بِيَدِهٖ لَوْ بَدَا لَكُمْ مُوْسٰى فَاتَّبَعْتُمُوْهُ وَتَرَكْتُمُوْنِيْ لَضَلَلْتُمْ عَنْ سَوَاءِ السَّبِيْلِ،
وَلَوْ كَانَ مُوْسٰى حَيًّا وَّاَدْرَكَ نُبُوَّتِيْ لَاتَّبَعَنِيْ ——— دارمی، مسند احمد

१ हजरत जाबिर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कसम है उस (अल्लाह) की जिसके हाथ में मुहम्मद के प्राण है, यदि मूसा तुम्हारे सामने प्रकट हो और तुम उन का अनुसरण करो और मुझे छोड दो, तो निश्चय ही तुम सीधे मार्ग से भटक जाओगे। यदि मूसा जीवित होते और मेरी 'नूबूवत' (के समय) को पाते, तो मेरा अनुसरण करते[1]। —दारमी, मुसनद अहमद

२ हजरत अबूहुरैरह रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा उस (अल्लाह) की कसम जिसके हाथ मे मुहम्मद के प्राण है, इस 'उम्मत' (समय) का जो कोई भी—'यहूदी' हो या ईसाई—मेरी खवर

---

१ हज़रत उमर रजि० नवी सल्ल० की सेवा मे 'तौरात' की कोई प्रति ले के आए उस अवसर पर आपने वह वात कही है जिसका वर्णन इस 'हदीस' मे हुआ है। आपका ध्येय वास्तव मे इस वात को मन मे विठाना था कि सत्य मार्ग पाने के लिए यह वात आवश्यक भी है और पर्याप्त भी कि तुम मेरा अनुवर्तन करो। आज यदि हजरत मूसा अ० मौजूद होते जिन पर 'तौरात' का अवतरण हुआ था, तो उनके लिए भी अनिवार्य होता कि वे मेरी लाई हुई 'शरीअत' (धर्म विधान) का पालन करे। हजरत मुहम्मद सल्ल० की लाई हुई 'शरीअत' मे ऐसी विशेषताएँ पाई जाती है कि वह 'कियामत' तक वदलते हुए समयो मे साथ दे सके और समस्त लोगो के ग्रहण करने योग्य हो मके। अगली 'शरीअतें' और उनके आदेश विभिन्न समयो और विभिन्न जातियो के लिए उतरे थे। हजरत मूसा अब ससार मे नही हैं। हजरत ईसा अ० जीविन है, अन्तिम समय मे जव वे आयेगे तो वे नवी सल्ल० का ही अनुवर्तन करेगे।

सुन ले फिर वह उस चीज पर 'ईमान' लाये बिना मर जाये जिसे दे कर मुझे भेजा गया है, तो वह ('जहन्नम' की) आग वालो मे ही होगा[२]।
—मुस्लिम

३ हजरत अब्दुल्लाह इब्न मसऊद रजि० कहते है कि एक व्यक्ति नबी (सल्ल०) के पास आया, उसने कहा हे अल्लाह के रसूल ! ईसाइयो मे से एक व्यक्ति है जो 'इञ्जील' को दृढतापूर्वक पकड़े हुये है (अर्थात् इञ्जील के आदेशो का पूर्णत पालन करता है) और 'यहूदियो' में एक व्यक्ति है जो 'तौरात' को दृढतापूर्वक पकड़े हुये है, वह अल्लाह और 'रसूल' पर 'ईमान' भी रखता है फिर भी वह आप (की लाई हुई 'शरीअत' अर्थात् धर्म-विधान) का अनुसरण नही करता, तो कहिए उस के विषय में आप क्या कहते है ? आप ने कहा जिस 'यहूदी' या 'ईसाई' ने मेरे बारे मे सुना फिर उस ने मेरा अनुसरण नही किया वह ('जहन्नम' की) आग मे (जाने वाला) है। —दारकुतनी

४ हजरत अबूहुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मै ('नबियो' में) ईसा सुत मरयम से सब से ज्यादा करीब हूँ, दुनिया में भी और 'आखिरत' मे भी 'नबी' परस्पर सौतेले भाई की तरह होते है, जिनका बाप एक होता है और माएँ अलग-अलग होती है, और उनका 'दीन' (धर्म) एक है[३] और हम दोनों के बीच कोई 'नबी' नही है[४]।

---

२ अर्थात् जिस व्यक्ति को भी आपकी 'नुबूवत' और 'रिसालत' की सूचना मिल जाये उसके लिए आवश्यक है कि वह आपकी 'नुबूवत' और 'रिसालत' पर 'ईमान' ले आये और आपका अनुवर्तन करे। 'यहूदी' या ईसाई ही क्यो न हो, जो अगले 'नबियो' और अल्लाह की अगली किताबो पर 'ईमान' रखते हैं, उन के लिए भी आवश्यक है कि वे आप पर 'ईमान' लाये।

३ अर्थात् यद्यपि अल्लाह के 'नबी' विभिन्न युगो और विभिन्न देशो मे पदार्पण किये परन्तु उनका 'दीन' (धर्म) एक ही था। सबने एक ही मार्ग दिखाया। सबने अल्लाह की बन्दगी की ओर लोगो को बुलाया। सब एक ही अल्लाह के 'रसूल' या 'नबी' थे। समय और परिस्थति के अनुसार आदेशो और कानून मे जो भी अन्तर रहा हो परन्तु मूल धर्म और मौलिक धारणाओ और विचारो मे कोई अन्तर नही था। हजरत मुहम्मद सल्ल० ससार के समक्ष ठीक वही धर्म प्रस्तुत कर रहे है जो दूसरे 'नबियों' ने प्रस्तुत किया है।

४ अर्थात् हजरत ईसा अ० के पश्चात् हजरत मुहम्मद सल्ल० ही को अल्लाह ने 'रसूल' (अपना सन्देष्टा) बनाकर भेजा बीच मे कोई और 'नबी' नही आया। 'रिवायतो' से मालूम होता है कि हजरत ईसा मसीह अ० को अल्लाह ने

५ हज़रत उबादा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : जो व्यक्ति इसकी गवाही दे कि अल्लाह के सिवा कोई 'इलाह' (पूज्य) नहीं, और मुहम्मद उसके बन्दे और उस के 'रसूल' हैं और ईसा अल्लाह के बन्दे, और उसके 'रसूल', उस का 'कलमा' (शब्द) जो उसने मरयम की ओर भेजा और उसकी ओर की आत्मा[५]

आसमान पर उठा लिया। वे अभी जीवित हैं। उनका आसमान की ओर उठाया जाना साहित्य में उनकी 'हिजरत' है। 'क़ियामत' के निकट वे संसार में पदार्पण करेंगे। हज़रत मुहम्मद सल्ल० की 'रिसालत' और हज़रत ईसा मसीह अ० के दोबारा पदार्पण के बीच में कोई 'नबी' या 'रसूल' आने वाला नहीं है। बाइबिल में जिन बारह रसूलों का उल्लेख हुआ है वे अल्लाह के रसूल नहीं बल्कि हज़रत मसीह अ० के उत्तराधिकारी और सन्देशवाहक या दूत थे। दे० लूका ६ : १३।

५ क़ुरआन में भी है : "मसीह पुत्र मरयम तो बस अल्लाह के 'रसूल' है, उसका 'कलमा' (शब्द, हुक्म) है जो उसने मरयम की ओर भेजा और उसके ओर की आत्मा, तो अल्लाह और उसके 'रसूल' पर 'ईमान' लाओ और तीन (ईश्वर) न कहो। बाज़ आ जाओ तुम्हारे लिए यही अच्छा है। अल्लाह तो केवल अकेला 'इलाह' (पूज्य) है उसकी महिमा के प्रतिकूल है कि उसके कोई बेटा हो, उसी की है सारी चीज़ें जो आकाशों में और धरती में हैं और अल्लाह का कार्य साधक होना काफी है।"—सूर : अन्निसा आयत १७१

'हदीस' और क़ुरआन की इस 'आयत' से स्पष्ट है कि हज़रत मुहम्मद सल्ल० भी अल्लाह के 'रसूल' और उसके बन्दे हैं और हज़रत मसीह अ० भी अल्लाह के बन्दे और उसके 'रसूल' हैं। हज़रत मसीह अ० को ईश्वर या ईश्वर का बेटा कहना वास्तविकता के विरुद्ध और अन्याय है। यह सत्य है कि हज़रत मसीह अ० बिना पिता के पैदा हुए हैं। इसलिए वे अल्लाह की एक बड़ी निशानी अवश्य हैं, परन्तु उन्हें अल्लाह या अल्लाह का बेटा समझना सत्य के सर्वथा प्रतिकूल है, वे उसी तरह अल्लाह के शब्द 'कुन' (हो जा) से पैदा हो गये हैं जिस प्रकार हज़रत आदम अ० को अल्लाह ने अपने हुक्म से पैदा किया है। अल्लाह के 'कुन' शब्द और धरती के तत्वों में अल्लाह की ओर से आत्मा का सचार होने से जिस तरह आदम अ० बिना माँ-बाप के पैदा हो गए उसी तरह मसीह अ० भी अल्लाह के 'कलमा कुन' ('हो' शब्द अर्थात् अल्लाह के हुक्म) और मरयम के गर्भाशय में अल्लाह की ओर से आत्मा के डाले जाने से बिना पिता के पैदा हो गए हैं। क़ुरआन में एक जगह कहा भी गया है : 'ईसा का हाल अल्लाह की दृष्टि में ऐसा ही है जैसे आदम का

है और 'जन्नत' और ('जहन्नम' की) आग सत्य है, अल्लाह उसे 'जन्नत' में दाखिल करेगा, जिस कर्म पर हो[६]। —बुखारी

६ हजरत अब्दुल्लाह बिन अम्र रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा . तुम मे से कोई 'ईमान' वाला न होगा यहाँ तक कि उसकी इच्छा उस (धर्म-विधान) की अनुयायिनी हो जाये जिसे ले कर मै आया हूँ[७]। —शरहुस्सुन्नह

अल्लाह ने उसे मिट्टी से पैदा किया फिर उस से कहा हो जा, तो वह हो जाता है"—सूरा आले इमरान आयत ५६।

६ अर्थात् जो व्यक्ति 'तौहीद' (एकेश्वरवाद), 'रिसालत', और 'आखिरत' पर 'ईमान' रखता है और अल्लाह के 'दीन' का इन्कार नही करता वह 'जन्नत' मे अवश्य दाखिल होगा। यह दूसरी बात है कि किसी के कर्म अच्छे न हो और उसे 'जन्नत' मे दाखिल होने से पहले सजा भुगतनी पडे। "जिस कर्म पर हो" का एक अर्थ यह भी हो सकता है कि 'जन्नत' मे मनुष्य का स्थान उसके कर्म के अनुसार होगा।

७ मतलब यह है कि अल्लाह के 'रसूल' सल्ल० पर 'ईमान' लाने का हक उस वक्त अदा होता है जब आदमी अपनी इच्छा को उस शिक्षा के अनुकूल बनाये जिसे लेकर आप आए है और अपनी मनमानी करने के बदले आपकी शिक्षाओ और आदेशो का पालन किया जाये। यहाँ तक कि अपनी इच्छाओ और आप के लाये हुए धर्मादेशो मे कोई भेद शेष न रहे। मन की शुद्धता और विकास के पश्चात् यह बात अपने-आप प्राप्त हो जाती है कि मनुष्य पूरी रुचि और अनुराग के साथ अल्लाह के रसूल के आदेश और आपके लाये हुए ग्रन्थ के अनुसार जीवन यापन करने लग जाये।

वह्य[1]-अवतरण

عَنْ عُبَادَةَ بْنِ الصَّامِتِ رض قَالَ كَانَ النَّبِيُّ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ إِذَا أُنْزِلَ عَلَيْهِ الْوَحْيُ كُرِبَ لِذٰلِكَ وَتَرَبَّدَ وَجْهُهُ، وَفِي رِوَايَةٍ نَكَسَ رَأْسَهُ وَنَكَسَ أَصْحَابُهُ رُءُوسَهُمْ. فَلَمَّا أُتْلِيَ عَنْهُ رَفَعَ رَأْسَهُ ——— مسلم

१ हजरत उवादह विन सामित रजि० कहते है कि जब नबी सल्ल० पर 'वह्य' आती तो उस (की सख्ती) से आप को तकलीफ होती और आप के चेहरे का रग बदल जाता। एक 'रिवायत' मे है कि (उस समय) आप अपने सिर को झुका लेते और आप के 'सहाबा' भी अपने सिरो को झुका लेते[1]। फिर जब 'वह्य' का अवतरण समाप्त हो जाता, तो आप अपना सिर उठाते। —मुस्लिम

२. हजरत अबूहुरैरह रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० पर 'वह्य' का अवतरण होता तो जब तक 'वह्य' का अवतरण समाप्त न हो जाता हम मे से किसी का साहस नही हो सकता था कि वह आपकी ओर निगाह उठा सकता[2]। —मुस्लिम, हाकिम

---

१ अर्थात् जब आप पर 'वह्य' अवतरित होती और दिव्य लोक से प्रत्यक्षत आप का सम्पर्क होता, तो स्वभावत आपकी लौकिक चेतना और अलौकिक अनुभव शक्ति मे एक प्रकार का सघर्ष होता जिसके कारण आपको एक प्रकार की तकलीफ होती, यहाँ तक कि इसका प्रभाव आपके चेहरे से भी व्यक्त होता था। उस समय आप अपना सिर झुका लेते थे। 'वह्य' की कठिनाई के अतिरिक्त 'वह्य' की महानता और उसकी प्रतिष्ठा के लिए भी यह आवश्यक था कि उस समय आपका सिर झुक जाये। और उन लोगो के सिर भी झुक जाये जो उस समय आपके पास मौजूद हो। कुरआन अल्लाह की 'वह्य' ही है जिसके बारे मे कहा गया है "यदि हम इस कुरआन को किसी पर्वत पर उतारते, तो तुम उस (पर्वत) को देखते कि सहमा हुआ है और फटा जाता है अल्लाह के डर से।"—सूरा अल-हश्र आयत २१।

२ वह्य-अवतरण के समय नबी सल्ल० की जो हालत होती थी उस से ऐसे तेज

३ हज़रत आइशा रज़ि० से उल्लिखित है कि हारिस बिन हिशाम रज़ि० ने अल्लाह के रसूल सल्ल० से पूछा : हे अल्लाह के रसूल सल्ल० आप पर 'वह्य' कैसे आती है ? अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कभी-कभी वह मुझ पर इस प्रकार आती है कि जैसे घण्टी की आवाज हो और यह मुझ पर सब से अधिक कठिन होता है[३]। फिर इसका सिलसिला मुझ से कट जाता है और जो-कुछ कहा गया होता है उसे मैं सुरक्षित कर चुका होता हूँ[४]। और कभी-कभी 'फ़िरिश्ता' एक पुरुष के रूप मे मेरे सामने प्रकट होता है, 'वह मुझ से बात करता है, तो जो-कुछ वह कहता है मै याद कर लेता हूँ[५]। आइशा रज़ि० कहती है कि मैने आपको देखा कड़ाके के जाड़े के दिन में आप पर 'वह्य' अवतरित हुई फिर उसका सिलसिला समाप्त हुआ और हालत यह थी कि आप के ललाट से पसीना बह रहा था[६]। —बुख़ारी

४. हज़रत जैद बिन साबित रज़ि० कहते है कि (एक वार) अल्लाह ने अपने रसूल पर 'वह्य' उतारी उस समय आपकी रान मेरी रान पर थी। उसका मुझ पर इतना बोझ पडा कि मुझे भय हुआ कि कही मेरी रान न टूट जाये[७]। —बुख़ारी

और प्रताप का प्रदर्शन होता था कि उस समय कोई व्यक्ति इसका साहस नही कर सकता था कि आपकी ओर निगाह उठा सके।

३ अर्थात् इस प्रकार की 'वह्य' के समय घण्टी की सी आवाज आती जान पडती है और मुझे कठिन हालत से गुज़रना पडता है।

४ अर्थात् "वह्य" के अवतरण के पश्चात् 'वह्य' का विषय और वार्ता मुझे पूर्ण रूप से याद हो जाती है और 'वह्य' के द्वारा जो सन्देश मुझ तक अल्लाह की ओर से आता है वह मुझे कण्ठस्थ हो जाता है।

५ अर्थात् कभी ऐसा होता है कि अल्लाह का 'फ़िरिश्ता' मानव-रूप मे मेरे पास आता है, वह अल्लाह की ओर से जो सन्देश भी सुनाता है उसे मै याद कर लेता हूँ।

६ अर्थात् कडाके के जाडे मे भी मैंने देखा कि जब आप पर 'वह्य' का अवतरण हुआ तो आप का ललाट पसीने से भीग गया।

७ यह हज़रत जैद बिन साबित का अपना व्यक्तिगत निरीक्षण है। वे नबी सल्ल० के अत्यन्त निकट थे। नबी सल्ल० की रान उनकी रान पर थी। सयोग से आप (सल्ल०) पर 'वह्य' उतरने लगी। 'वह्य' के कारण आपकी रान का भार इतना बढ गया कि हज़रत जैद बिन साबित रज़ि० को ऐसा लगा जैसे

५ सफवान बिन याला रजि० से उल्लिखित है कि याला रजि० ने उमर रज़ि० से कहा कि मुझे नबी सल्ल० को दिखाना जब आप पर 'वह्य' का अवतरण हो[८]। वे कहते हैं कि उस बीच में जबकि आप जेराना[९] में थे और आप के साथ 'सहाबा' की एक मण्डली भी थी...... आप पर 'वह्य' का अवतरण हुआ। उमर रज़ि० ने याला रज़ि० को सकेत किया। याला आये। उस समय अल्लाह् के रसूल सल्ल०के ऊपर एक कपडा था जिस के द्वारा आप पर छाया की गई थी। उन्होंने भीतर सिर डाला तो क्या देखा कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० का मुखमण्डल लाल हो गया है और घरघराहट की आवाज़ आ रही है[१०]। फिर (थोडी देर में) आपकी यह हालत समाप्त हुई। —बुख़ारी

उनकी रान टूट जायेगी। कभी ऐसा भी होता था कि नबी सल्ल० ऊँटनी पर सवार होकर सफर कर रहे होते थे कि आप पर 'वह्य' उतरने लगती थी। ऊँटनी पर उसका इतना बोझ पडता कि वह बोझ से दब जाती थी और ऐसा लगता था कि वह बोझ का सहन न कर सकेगी और भूमि पकड लेगी।

८ अर्थात् हज़रत याला रजि० चाहते थे कि जब नबी सल्ल० पर 'वह्य' आये, तो उस समय देखें कि आपकी क्या हालत होती है।

९ यह मक्का और तायफ के मध्य एक स्थान है।

१०. 'वह्य' की सख्ती के कारण आपका चेहरा लाल हो गया था और गले से घरघराहट की आवाज़ आ रही थी। जब 'वह्य' उतर चुकी, तो आपकी यह असाधारण दशा शेष नही रही बल्कि आप सामान्य रूप से जैसे 'वह्य' के पहले थे, उसी हालत मे आ गये।

वह्य-अवतरण के सिलसिले मे और बहुत-सी रिवायते है यहाँ उदाहरणार्थ कुछ 'रिवायतें' प्रस्तुत की गई हैं। इन रिवायतो (उल्लेखो) से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि 'वह्य' उतरने के समय नबी सल्ल०. पर विशेष प्रकार की कैफियत छाई होती थी और आपकी हालत बदल जाती थी जिसका एहसास आपके निकट रहने वाले लोगो को भी हो जाता था। और वे समझ जाते थे कि इस समय आप पर 'वह्य' उतर रही है। वह्य-अवतरण के पश्चात् आप सहाबा रज़ि० को सूचित करते थे कि आप पर अल्लाह् की ओर से क्या सन्देश अवतरित हुआ है। कुरआन करीम जो 'वह्य' के द्वारा आप पर उतर रहा था, उसे आप नियमित रूप से 'वह्य' समाप्त होने के पश्चात् लिपिबद्ध करा दिया करते थे।

———

मुखारविन्दु

عن علي بن أبي طالب كان إذا وصف النبي صلى الله عليه وسلم قال. لم يكن
بالطويل الممغط ولا بالقصير المتردد وكان ربعة من القوم ولم يكن بالجعد
القطط ولا بالسبط كان جعدا رجلا ولم يكن بالمطهم ولا بالمكلثم وكان
في الوجه تدوير أبيض مشرب أدعج العينين أهدب الأشفار جليل المشاش
والكتد أجرد ذو مسربة. شثن الكفين والقدمين إذا مشى يتقطع كأنما
يمشي في صبب. وإما التفت التفت معا بين كتفيه خاتم النبوة وهو خاتم
النبيين أجود الناس صدرا وأصدق الناس لهجة وألينهم عريكة وأكرمهم
عشيرة من رآه بديهة هابه ومن خالطه معرفة أحبه بقول ناعته لم أر
قبله ولا بعده مثله —— صلى الله عليه وسلم —————— ترمذي

१ हजरत अली इब्न अबू तालिब रजि० जब नबी सल्ल० की विशेषता का वर्णन करते तो कहते कि आप न तो बहुत अधिक लम्बे थे और न कद के छोटे थे बल्कि लोगो में आप मध्य कद के थे[1] । आप के केश न बहुत घुँघराले थे और न बहुत सीधे थे बल्कि हल्का बल खाये हुये थे । आप न तो बहुत मोटे थे और न छोटे चेहरे वाले थे । चेहरा (बिल्कुल मंडलाकार होने के बदले) हल्की गोलाई लिये हुये[2] और श्वेत लालिमा लिये था[3] । आप की आँखे काली और पलके लम्बी, थी[4] । हड्डियो के सिरे

१. 'रिवायतो' से मालूम होता है कि जब आप लोगो के बीच होते तो आप का कद दूसरो से निकला हुआ मालूम होता था । आप इतने ज्यादा लम्बे न थे कि बुरा लगता, आपका कद लम्बाई लिए हुए अवश्य था ।

२. 'रिवायत' मे 'कान असीलुलखद' (आप लम्बे मुखारविन्दु वाले थे) के शब्द आते है ।

३ आपका रग गोरा लावण्य (सलोनापन) लिए हुए सरस, सौन्दर्य था ।

४ आतरिक्र गुणो के साथ अल्लाह् ने आपको शारीरिक सुन्दरता भी प्रदान की

अर्थात् जोड मोटे थे। शरीर पर अधिक वाल न थे। सीने से नाभि तक वालो की एक पतली रेखा थी। हथेलियाँ और पॉव मासयुक्त थे[५]। जब चलने को कदम उठाते तो ऐसा मालूम होता मानो ऊँचाई से ढाल में उतर रहे हैं[६]। जब किसी ओर मुख करते तो पूरे शरीर के साथ मुख करते[७]। आप के दोनो कन्धो के बीच 'नुवूवत' की मुह्र (छाप) थी[८]। और आप 'नबियो' के समापक थे। आप लोगो में उदार और दानशील और जबान के अत्यन्त सच्चे थे। स्वभाव अत्यन्त कोमल और जाति के अत्यन्त भद्र और श्रेष्ठ थे। जो कोई आपको एकाएक देखता वह आप से भयभीत हो जाता और जो पहचान कर आप से मिलता-जुलता वह आपका अनुरागी बन जाता[९]। आपकी प्रशसा करने वाला कहता है कि मैंने

थी। 'रिवायतो' से मालूम होता है कि सुन्दरता और आकर्षण की समस्त चीज़ें अल्लाह ने आपको दी थी। आपका माथा चौडा था। मुख अत्यन्त पवित्र था। मुखमडल उच्च विचारो का प्रतीक और निगाहे पवित्र भावो की सूचक थी। अधिकतर आप सोच-विचार मे डूबे रहते। लोगो से मिलते, तो होठो पर मुस्कराहट खेलती होती। आवाज मे भारीपन था और अपनी ओर आकर्षित कर लेने की अद्भुत क्षमता थी। आपकी खामोशी मे भी मनोहरता होती थी। आपके सौन्दर्य और गम्भीरता मे आनन्द-तत्व पाया जाता था। आपकी कोई अदा भी मनोहरता से वचित न होती थी।

५ तलवे कुछ गहरे थे। आपके शुभ चरण बहुत ही चिकने थे। एडियो पर मास बहुत कम था।

६ आप चलते तो बलपूर्वक आगे को तनिक झुक कर चलते थे। तेज गति से चलते। कदम जमा कर रखते थे। देखने पर ऐसा लगता मानो आप ढालू भूमि मे उतर रहे हैं। आपकी चाल-ढाल आदि हर चीज से आपके सन्तुलित जीवन और चरित्र का पता चलता।

७ अर्थात् किसी की ओर रुख करते, तो अभिमानी लोगो की तरह नही बल्कि उदार और विनयशील व्यक्ति की तरह पूरे तौर पर रुख करते थे। आप किसी ओर मुख करते तो उसमे किसी समय भी किसी तरह की बेपरवाई नहीं होती थी।

८ 'रिवायतो' से मालूम होता है कि आपके दोनो कन्धो के बीच बायें कन्धे की नर्म हड्डी के पास कबूतर के अण्डे की तरह मास इकट्ठा था जिस पर सियाह तिल थे। यह भी दूसरी निशानियो की तरह आपकी 'नुवूवत' का एक प्रत्यक्ष लक्षण था। इसे 'मुह्रे नुवूवत' कहते थे।

९ अर्थात् पहले-पहल जो कोई आपको देखता उस पर हैबत और रोब छा जाता था, परन्तु जो आपके करीब और आपके सम्पर्क मे आता और निकट से आपको

आप जैसा कोई नही देखा, न आप से पहले और न आप के बाद—आप पर अल्लाह् की दयालुता और सलामती हो । —तिरमिजी

२ अबूउबैदा बिन मुहम्मद बिन अम्मार बिन यासिर कहते है कि मैंने रबीअ बिन्त मुऔविज बिन अफरा मे कहा कि हम से अल्लाह् के रसूल सल्ल० के गुण बयान कीजिए। उन्होने कहा बेटे ! यदि तुम उन्हे देखते, तो इस तरह देखते जैसे सूर्य उदय हुआ है"। —दारमी

३ हजरत कअब बिन मालिक रजि० कहते है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० को जब (किसी कारण) प्रसन्नता होती, तो आप का मुखमडल ऐसा चमक उठता मानो आपका मुख चॉद का टुकडा है और हम इस से परिचित होते थे"। —बुखारी-मुस्लिम

देखता और आप से मिलता-जुलता वह आप से प्रेम करने लगता। मित्रो के अलावा इस बात की गवाही शत्रुओं तक ने दी है। हुदैबिया की सन्धि के अवसर पर 'कुरैश' ने उरवा बिन मसऊद को अपना प्रतिनिधि बनाकर आपके पास भेजा। उसने वापसी पर कबीला 'कुरैश' के सम्मुख बयान दिया 'हे कुरैश के लोगो ! मै 'किसरा' के पास उसके शाही दरबार मे जा चुका हूँ। 'कैसर' के पास उसके शाही दरबार मे जा चुका हूँ। और नज्जाशी के पास उसके शाही दरबार मे जा चुका हूँ। अल्लाह् की कसम किसी जाति मे किसी भी बादशाह् की वह शान (भव्यता) नही देखी जो शान मुहम्मद की मैंने उसके साथियो के बीच देखी। सच कहता हूँ मैंने ऐसे लोगो को देखा है जो किसी भी हालत मे उसका साथ नही छोड सकते। अब तुम सोच लो !"

१० अर्थात् अल्लाह् ने आपको पूर्ण रूप से सौन्दर्य, महिमा और प्रतिष्ठा प्रदान की थी।

११ अर्थात् उस चमक को देख कर हमे आपकी प्रसन्नता का ज्ञान हो जाता था।

आपके मुखाकृति आदि के विषय मे 'रिवायतें' बहुत है। यहाँ उदाहरणार्थ केवल तीन 'रिवायतें' दी गई है। 'नबी' अपनी जाति वालो मे विशिष्ट व्यक्तित्व का अधिकारी होता है। उसका चरित्र उसके सच्चे और सत्य पर होने का प्रत्यक्ष का प्रमाण होता है। मनुष्य का मुख उसके व्यक्तित्व, उसके कर्म, स्वभाव और उसके चरित्र का प्रतीक होता है। किसी की दृष्टि मे यदि दोष न हो, तो वह 'नबी' को देखने के बाद अवश्य ही उसके सच्चे होने की गवाही देगा। इतिहास मे ऐसे उदाहरण मिलते है कि केवल मुख देखकर लोगो ने आपके सच्चे होने की गवाही दी। हुसेन यहूद के एक प्रौढ विद्वान थे। नबी सल्ल० जब मदीना पहुँचे, तो वे आपको देखने के लिए गए। बाद मे उन्होने लोगो से कहा मैंने जैसे ही आपको देखा समझ

आपकी मिसाल

عَنْ جَابِرِ بْنِ عَبْدِ اللّٰهِ قَالَ. جَاءَتْ مَلَائِكَةٌ إِلَى النَّبِيِّ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ وَهُوَ نَائِمٌ فَقَالُوا إِنَّ لِصَاحِبِكُمْ هٰذَا مَثَلًا فَاضْرِبُوا لَهُ مَثَلًا فَقَالَ بَعْضُهُمْ إِنَّهُ نَائِمٌ وَقَالَ بَعْضُهُمْ إِنَّ الْعَيْنَ نَائِمَةٌ وَالْقَلْبَ يَقْظَانُ فَقَالُوا مَثَلُهُ كَمَثَلِ رَجُلٍ بَنَى دَارًا وَجَعَلَ فِيهَا مَأْدُبَةً وَبَعَثَ دَاعِيًا فَمَنْ أَجَابَ الدَّاعِيَ دَخَلَ الدَّارَ وَأَكَلَ مِنَ الْمَأْدُبَةِ وَمَنْ لَمْ يُجِبِ الدَّاعِيَ لَمْ يَدْخُلِ الدَّارَ وَلَمْ يَأْكُلْ مِنَ الْمَأْدُبَةِ فَقَالُوا أَوِّلُوهَا لَهُ يَفْقَهْهَا فَقَالَ بَعْضُهُمْ إِنَّهُ نَائِمٌ وَقَالَ بَعْضُهُمْ إِنَّ الْعَيْنَ نَائِمَةٌ وَالْقَلْبَ يَقْظَانُ فَقَالُوا الدَّارُ الْجَنَّةُ وَالدَّاعِي مُحَمَّدٌ (صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ) فَمَنْ أَطَاعَ مُحَمَّدًا (صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ) فَقَدْ أَطَاعَ اللّٰهَ (عَزَّ وَجَلَّ) وَمَنْ عَصَى مُحَمَّدًا (صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ) فَقَدْ عَصَى اللّٰهَ (تَعَالَى) وَمُحَمَّدٌ فَرْقٌ بَيْنَ النَّاسِ ——— بخاري، مسلم

१ हजरत जाबिर रजि० कहते है कि कुछ 'फिरिश्ते' नबी सल्ल० की सेवा मे उपस्थित हुए जबकि आप सो रहे थे। उन्होने (आपस मे) कहा तुम्हारे इस साथी (अर्थात् नबी सल्ल०) की एक मिसाल है उसे

गया कि आपका चेहरा एक झूठे मनुष्य का चेहरा नही हो सकता। इसी प्रकार जब अबू रमसह तेमी अपने बेटे के साथ नबी सल्ल० की सेवा मे उपस्थित हुये और लोगो ने दिखाया कि अल्लाह के रसूल ये है, तो देखते ही उन्होने कहा कि वास्तव मे यह अल्लाह के 'नबी' है (शमाइल-तिरमिजी)। एक बार मदीना मे एक तिजारती काफिला आया और नगर मे बाहर ठहरा। नबी सल्ल० ने उस से एक ऊँट का सौदा किया और मूल्य चुका देने का वादा करके ऊँट लेकर चले आये। बाद मे काफिले वालो की चिन्ता हुई कि बिना जान-पहचान के मामला किया है कही ऐसा न हो कि हमारा धन मारा जाये। इस अवसर पर एक प्रतिष्ठित महिला ने कहा इतमिनान रक्खो मैने उसका चेहरा देखा है जो पूर्णिमा की भाँति प्रकाशमान था वह कदापि तुम्हारे साथ बुरा मामला करने वाला नही हो सकता। यदि ऐसा व्यक्ति (ऊँट का धन) अदा न करे, तो मैं अपने पास से अदा कर दूँगी।

इनके सामने बयान करो। उनमें से किसी ने कहा · वे तो सो रहे हैं। इस पर दूसरे ने कहा : निस्सन्देह आँखे सोती हैं परन्तु मन जाग्रत है। फिर उन्होंने कहा आपकी मिसाल ऐसी है जैसे किसी व्यक्ति ने एक घर बनाया और उसमें खाने का एक दस्तर ख्वान लगाया और बुलाने वाले को भेजा (कि लोगो को खाने के लिए बुलाये) जिसने इस बुलाने वाले को बात मान लो। वह घर में दाखि ल हुआ और उसने दस्तर ख्वान से खाना खाया। और जिसने बुलाने वाले की बात नही मानो वह न घर मे दाखिल हुआ और न दस्तर ख्वान से खाना खाया। फिर उन्होने कहा आपके लिए इस (मिसाल) को स्पष्ट करो ताकि आप इसे समझ जाये, तो उन से किसी ने कहा वे सो रहे है और उनमे से कुछ ने कहा (ऐसा नही है) आँखे सो रही है परन्तु मन जाग्रत है। इस पर उन्होंने कहा . घर (से अभिप्रेत) जन्नत है और बुलाने वाले मुहम्मद सल्ल० हैं, तो जिस किसी ने मुहम्मद सल्ल० की आज्ञा का पालन किया, उसने अल्लाह की आज्ञा का पालन किया, और जिसने मुहम्मद सल्ल० की अवज्ञा की, उसने प्रतापवान एव तेजोमय अल्लाह की अवज्ञा की[1]। और (वास्तव में) मुहम्मद सल्ल० लोगों के बीच अन्तर कर

१. इस हदीस मे नबी सल्ल० के लिए जो मिसाल पेश की गई है उस से स्पष्ट रूप से यह बात सामने आ जाती है कि आपका स्थान क्या है। इस मिसाल से मालूम हुआ कि अल्लाह ने आपको आवाहक बना कर भेजा है। आप लोगो को उस घर की ओर बुलाते हैं जो अमर सफलता और सलामती का घर है जिसे 'जन्नत' कहते है, जिसे अल्लाह ने अपने उन बन्दो के लिए तैयार किया है जो उसके आवाहक की पुकार को सुने और मानें। ऐसे लोग 'जन्नत' मे प्रवेश करेंगे और उसमे चुने हुए खानो को खायेंगे और उसकी चीजो से फायदा उठायेंगे। सदैव का सुख और आनन्द उन्हे प्राप्त होगा। कुरआन मे भी कहा गया है (तुम नाशवान जीवन पर रीझते हो) और अल्लाह तुम्हे सलामती के घर (जन्नत) की ओर बुलाता है और जिसे चाहता है सीधे रास्ते पर लगा देता है (सूरा यूनुस आयत २५)।

इस हदीस से एक मौलिक बात यह भी मालूम हुई कि अल्लाह का आज्ञाकारी बनने का एक मात्र उपाय यह है कि आदमी हजरत मुहम्मद सल्ल० के आदेशो का पालन करे। आप अल्लाह के 'रसूल' है। आप लोगो को जिन आदेशो के पालन का हुक्म देते है वे अल्लाह ही के दिए हुए आदेश है। मनुष्य तक अल्लाह के आदेश रसूलो ही के द्वारा पहुँचते है। अल्लाह की बन्दगी और उसके आज्ञापालन से जो आनन्द और परितोष प्राप्त होता है वह कही

देने वाले हैं"। —बुख़ारी, मुस्लिम

८. रबीअ जुरशी रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के नबी सल्ल० की सेवा में 'फ़रिश्ता' उपस्थित हुआ, तो आप से कहा गया कि आपकी आँखों को सो जाना चाहिए और कानों को सुनना और दिल को समझना चाहिए। आप कहते हैं कि मेरी आँख सो गई, मेरे कानों ने सुना और मेरे दिल ने समझा। आप कहते हैं कि उस समय मुझ से कहा गया कि एक सरदार ने एक घर बनाया और (उसमें) दस्तर ख्वान चुना और एक बुलाने वाले को भेजा, तो जिस किसी ने उस बुलाने वाले के आमन्त्रण को स्वीकार किया उसने घर में प्रवेश किया और ख्वान में से खाया और उस से वह सरदार भी प्रसन्न हो गया और जिस किसी ने उस बुलाने वाले के आमन्त्रण को स्वीकार नहीं किया उसने न घर में प्रवेश किया और न उसने दस्तर ख्वान से खाना खाया और सरदार भी उस से अप्रसन्न हुआ। कहा, अल्लाह सरदार (स्वामी) है और मुहम्मद (सल्ल०) बुलाने वाले हैं और वह घर इस्लाम है और दस्तर ख्वान जन्नत है"। —दारमी

नहीं मिल सकता। प्राचीन ग्रन्थों में भी अल्लाह के आदेश और उसके दिए हुए नियमों को अनुपम और मनोरम विधि कहा गया है।

"प्रभुवर का (दिया हुआ) धर्मविधान पूर्ण है वह प्राण को बहाल करता है प्रभुवर के नियम सिद्ध हैं, मन को आनन्दित कर देते हैं, प्रभुवर की आज्ञा दोषरहित है, वह आँखों में ज्योति ले आती है प्रभुवर के आदेश सत्य हैं और पूर्ण रूप से ठीक हैं वे स्वर्ण बल्कि कुन्दन से भी बढ़कर प्रिय है, वे मधु से और (मधु के) छत्ते के टपकों से भी मधुर हैं।"

(ज़बूर, भजन संहिता १९ ७-१२)

इस पर भी मनुष्य अल्लाह के बुलावे पर ध्यान नहीं देता और उस घर की ओर नहीं चलता जिस की ओर वह बुला रहा है तो वह एक भटका हुआ और आवारा मनुष्य है "अपने मकान से आवारा उस पक्षी के समान है जो अपने घोंसले से भटक जाये।" अमसाल (नीति वचन) २७ ८।

२. अर्थात आप सत्य और असत्य को जानने की कसौटी है। आप के द्वारा सत्य और असत्य का भेद स्पष्ट रूप से सामने आ गया। आपके कारण अल्लाह के आज्ञाकारी और अवज्ञाकारी दोनों अलग-अलग हो गये। भले और बुरे एक-दूसरे से पृथक् पहचाने गये, और न्याय और अन्याय तथा सत्य और असत्य में भ्रम की कोई सम्भावना शेष नहीं रही।

३ इस से पहले जो हदीस गुज़री है उस में घर से अभिप्रेत 'जन्नत' है, इस हदीस में घर से अभिप्रेत इस्लाम है। दोनों मिसालों का अभिप्राय एक ही है।

३ हज़रत अबू मूसा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मेरी मिसाल और उस चीज की मिसाल जिसे देकर अल्लाह ने मुझे भेजा है ऐसी है जैसे कोई व्यक्ति अपनी जाति वालों के पास आये और कहे हे मेरी जाति के लोगो ! मैने (शत्रुओ की) एक सेना अपनी आँखो से देखी है और मै नग्न डराने वाला हूँ तो (विपत्ति से) छुटकारा पाने की कोशिश करो। उसकी जाति वालो मे से कुछ लोगो ने उसकी बात मान ली और वे इतमिनान से रातो-रात निकल खडे हुए और अपनी सामान्य चाल से चलते रहे और (अपने वैरियो से) छुटकारा पा गये। और उन में से कुछ लोगो ने झुठलाया और प्रात काल तक अपने स्थानो पर ठहरे रहे। (शत्रुओ की) सेना प्रात समय उन पर टूट पड़ी और उन्हे विनष्ट कर डाला और उनका पूर्ण रूप से उन्मूलन कर दिया। बस यही मिसाल उस व्यक्ति की है जिसने मेरा हुक्म माना और जो कुछ मै लेकर आया हूँ उसका पालन किया। और यही मिसाल उस व्यक्ति की है जिसने मेरी अवज्ञा की और जो कुछ मैं लेकर आया हूँ उसे झुठला दिया[४]।

—बुखारी, मुस्लिम

'जन्नत' मे प्रवेश पाने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य इस्लाम मे प्रवेश करे। इस्लाम को अपनाना परिणाम की दृष्टि से 'जन्नत' मे प्रवेश करना ही है। दोनो हदीसो मे विशेषत ज़ोर इस पर दिया गया है कि 'जन्नत' मनुष्य को उसी दशा मे मिल सकती है जबकि वह नबी सल्ल० के आमन्त्रण को स्वीकार करे और आप पर ईमान ले आये। आप के आदेशो का पालन करने लग जाये। इस से 'जन्नत' मे प्रवेश पाने का अधिकार भी उसे प्राप्त होगा और अल्लाह की खुशी और प्रसन्नता भी उसे मिल सकेगी जो समस्त अमूल्य निधियो से बढ कर है, परन्तु यदि वह दूसरी नीति गृहण करता है, तो उसे 'जन्नत' मे प्रवेश भी प्राप्त न हो सकेगा और अल्लाह के प्रकोप का वह अलग भागी ठहरेगा।

४ इस मिसाल से भी नबी सल्ल० के दायित्व और आपके स्थान का ज्ञान होता है। अरब मे लूट-मार साधारणत भोर मे होती थी, इसी लिए दुआ देने का यह तरीका वहाँ प्रचलित रहा है कि वे एक दूसरे से कहते थे कि ईश्वर तुम्हारा प्रात समय अच्छा रक्खे। अरब लोगो मे यह प्रथा भी थी कि किसी कबीले पर कोई विपत्ति आती और कोई वैरी आक्रमण करने के ध्येय से चढ आता, तो जो व्यक्ति उसे पहले देखता वह किसी ऊँची जगह चढकर अपने कपडे उतार कर सिर पर रख लेता और उनको हिलाता और चिल्ला-चिल्ला कर लोगो को सकट की सूचना देता। ऐसे व्यक्ति की हैसियत प्रत्यक्ष-

४. अबू हुरैरह् रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा मेरी मिसाल उस व्यक्ति जैसी है जिसने आग जलाई, परन्तु जब उसने अपने वातावरण को भली भांति प्रकाशमान कर दिया तो पतगे और ये कीडे जो आग पर गिरा करते है उसमे गिरने लगे। और वह है कि उन्हे रोक रहा है और ये है कि उसे विवश करके उसमे घुसे पडते है तो (मेरी और अपनी मिसाल ऐसी समझो कि) मैं तुम्हे आग (मे पडने) से रोकता हूँ और तुम हो कि उसमें घुसे पडते हो"। —बुखारी

दर्शी गवाह् की मानी जाती, और उनकी दी हुई सूचना पर सभी लोग विश्वास कर लेते। आगे चल कर लोगो को डराने और सावधान करने की यह रीति हर ऐसी परेशानी और विपत्ति के समय अपनाई जाने लगी जो अचानक सामने आई हो। नबी सल्ल० ने लोगो को समझाने के लिए अपने लिए नग्न डराने वाले की मिसाल बयान की ताकि लोग चौंकें और अपनी जिम्मेदारियो को समझें और अल्लाह् के अज़ाब से बचने का उन्हे चिन्ता हो। आपने पहाडी पर चढकर भी लोगो को पुकारा था और उन्हे आने वाले कठिन दिन से (कियामत से) सावधान किया था।

५. मुस्लिम की हदीस के अन्तिम शब्द ये है . आपने कहा यह मेरी और तुम्हारी मिसाल है कि मैं तुम्हारी कमरें पकड-पकड कर ('जहन्नम' की) आग से बचाता हूँ। (कहता हूँ) आग से बचो ,आग से बचो। तुम मुझे विवश करके उसमे घुसे जाते हो।"

इस मिसाल से नासमझ लोगो की नादानी और अल्लाह् के 'रसूल' के करुण भाव और हित-कामना का वास्तविक और जागरूक चित्र सामने आ जाता है। पतगो को नही मालूम कि अग्नि उनके कोमल और निर्बल शरीर को भस्म कर डालेगी, वे उसमे गिरे पडते हैं। ठीक यही दशा उन लोगो की है जो अल्लाह् के अजाब और उसकी भडकाई हुई आग से निश्चिन्त होकर ईश्वरीय सीमाओ का उल्लघन करते हैं और ईश-प्रकोप के भागी बनते है। अल्लाह् का रसूल उन्हे अज़ाब से बचाने की हर वह कोशिश करता है जो उसके बस मे है। फिर भी कोई नही सँभलता, तो वह अपनी तबाही का स्वय उत्तरदायी है।

आप से प्रेम

عَنْ اَنَسٍ قَالَ قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ : لَا يُؤْمِنُ اَحَدُكُمْ حَتّٰى اَكُوْنَ
اَحَبَّ اِلَيْهِ مِنْ وَّالِدِهٖ وَوَلَدِهٖ وَالنَّاسِ اَجْمَعِيْنَ ——— بخاری، مسلم

१ हजरत अनस रजि० कहते है कि अल्लाह के 'रसूल' सल्ल० ने कहा तुम मे से कोई व्यक्ति 'ईमान' वाला नही हो सकता जब तक कि मैं उसको उसके बाप और उसकी औलाद और समस्त मनुष्यों से बढकर प्रिय न हो जाऊँ[1]। — बुखारी, मुस्लिम

२ हजरत अब्दुल्लाह बिन हश्शाम रजि० कहते है कि हम नबी सल्ल० के साथ थे आप उमर बिन खत्ताब का हाथ अपने हाथ में लिये हुये थे। उमर रजि० ने आप से कहा : आप हे अल्लाह के रसूल! मुझे

---

१ जो सम्बन्ध 'नबी' सल्ल० का मुसलमानो से और मुसलमानो का आप से है उस का मुकाबला कोई दूसरा नाता या रिश्ता नही कर सकता। कुरआन मे भी कहा गया है ''नबी का सम्बन्ध 'ईमान' वालो के साथ उस से अधिक है जितना उन लोगो का अपने-आप से है।''—अल-अहजाब आयत ६। नबी सल्ल० को मुसलमानो से जितना ममत्व और प्रम है उसके तुल्य माता-पिता का स्नेह और ममत्व भी नही हो सकता। बल्कि आप की शुभाकाक्षा तो उस से भी बढकर है जितनी कि किसी व्यक्ति को अपने लिए होती है। मनुष्य को उसके माता-पिता पथभ्रष्ट कर सकते है, उसके साथ स्वार्थपरता का व्यवहार कर सकते है। इसी प्रकार पत्नी और बच्चे भी मनुष्य को हानि पहुँचा सकते है। मनुष्य स्वय अपने हाथो अपने पाँव पर कुल्हाडी मार सकता है, परन्तु 'नबी' सल्ल० केवल वही करेगे जिसमे हमारा कल्याण हो। आप हमारे लिए केवल वही प्रस्ताव कर सकते हैं जिसमे हमारा हित हो। ऐसी दशा मे मुस्लिमो का भी कर्तव्य होता है कि वे सब से अधिक यहाँ तक कि अपने माता-पिता, पत्नी, बच्चे और अपने प्राण से भी बढकर आप से प्रेम करें। उनके लिए आप दुनिया की प्रत्येक वस्तु से अधिक प्रिय हो। वे आपके आदेशो का पालन करे। आपका जो फैसला या आदेश हो उसके आगे नत मस्तक हो जाये। मन मे तनिक भी उन्हे यह चीज अप्रिय न लगे।

अपने प्राण के सिवा हर चीज से ज्यादा प्रिय है। आपने कहा नही, उस (अल्लाह) की कसम जिसके हाथ में मेरे प्राण है जब तक तुमको मै अपने प्राण से भी बढकर प्रिय न हो जाऊँ (तुम 'मोमिन' नही हो सकते)। उमर रजि० ने कहा . अब तो अल्लाह की कसम आप मुझे मेरे प्राण से भी अधिक प्रिय हो गए। आपने कहा अब हे उमर! (तुम 'ईमान' वाले हो)[२]।

—बुखारी

३. हजरत इब्न अब्बास रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह से प्रेम करो इसलिए कि वह तुम्हे विभिन्न प्रकार की नेमते (सुख सामग्री) प्रदान करता है और मुझ से प्रेम करो अल्लाह से प्रेम के कारण और मेरे घर वालो से प्रेम करो मुझ से प्रेम के कारण[3]।

—तिरमिजी

४ हज़रत अनस बिन मालिक रजि० से उल्लिखित है कि एक व्यक्ति ने 'नबी' सल्ल० से पूछा वह घड़ी ('कियामत') कब आयेगी? आपने कहा तुमने उसके लिए क्या तैयार कर रक्खा है? उसने कहा मैने उसके लिए कुछ ज्यादा तयार नही किया है, न ज्यादा 'नमाजे' ही, न रोज़े और न 'सदका' परन्तु मैं अल्लाह और उसके 'रसूल' से प्रेम करता हूँ। आपने कहा तुम उन्ही के साथ होगे जिनसे तुम्हे प्रेम है[४]।

—बुखारी

---

२ इस 'हदीस' मे भी वही बात कही गई है जो पहली 'हदीस' मे कही गई है। कोई भी व्यक्ति वास्तविक रूप से 'मोमिन' (ईमान वाला) उसी समय होता है जबकि वह हर चीज़ से बढकर अल्लाह और 'रसूल' से प्रेम करे। वह अल्लाह और रसूल के प्रेम पर हर चीज़ निछावर कर सके। अल्लाह की राह मे यदि माल व औलाद को छोडना पडे तो छोड दे। यहाँ तक कि प्राण देने का अवसर आये तो इस से भी न हटे।

३ मतलब यह है कि यदि तुम अल्लाह के इसी उपकार पर विचार करो कि वह तुम्हे तरह-तरह की नेमते प्रदान करता है तो तुम्हारे मन मे उस के प्रति कृतज्ञता और आदर की भावना जाग्रत होगी। और तुम अपने उपकारकर्त्ता प्रभु से प्रेम करने लग जाओगे। जब अल्लाह से प्रेम होगा तो उसके 'रसूल' से भी तुम्हे प्रेम होगा और रसूल से प्रेम होगा, तो अवश्य 'रसूल' के घर वालो से भी तुम प्रेम करोगे। प्रेम का मूलाधार और केन्द्र तो अल्लाह है। ईश-प्रेम को अपेक्षित है कि मनुष्य अल्लाह के 'रसूल' और उसके नातेदारो और सम्बन्धियो से भी प्रेम करे।

४ 'हदीस' का अन्तिम वाक्य विभिन्न अवसरो पर आपके मुख से निकला है।

५ हज़रत अब्दुल्लाह बिन मुगफ्फल रजि० कहते है कि एक व्यक्ति नबी सल्ल० की सेवा में उपस्थित हुआ और कहा मै आप से प्रेम करता हूँ। आपने कहा . देख क्या कहता है ? उसने तीन बार कहा अल्लाह की कसम मै आप से प्रेम करता हूँ। आपने कहा : यदि तू (अपनी बात मे) सच्चा है, तो मुहताजी और फाके का मुकाबला करने के लिए हथियार तैयार कर ले। जो लोग मुझ से प्रेम करते हैं उनकी ओर मुहताजी और फाका उस से अधिक तेजी के साथ बढते है जितना पानी की बाढ निचाई की ओर[५]। —तिरमिजी

इब्न मसऊद रज़ि० की 'रिवायत' (अर्थात् उनकी उल्लिखित 'हदीस') मे है कि जब 'सहाबा' ने आप से ऐसे व्यक्ति के बारे मे पूछा जो किसी जमात या गरोह से प्रेम करता है परन्तु उसका कर्म उस जमात के लोगो के बराबर नही है, आपने यही उत्तर दिया "मनुष्य ('आखिरत' मे) उसी के साथ होगा जिस से वह प्रेम करता था।" हज़रत अनस रज़ि० कहते है कि मैंने मुसलमानो को इस्लाम के पश्चात् किसी चीज़ से उतना प्रसन्न होते नही देखा जितना इस शुभसूचना से उन्हे प्रसन्न होते देखा। यह 'हदीस' बताती है कि प्रेम का फल 'आखिरत' का साहचर्य है। किसी को जितना अधिक आपे से प्रेम होगा उसे उतना ही अधिक 'आखिरत' मे आपका सामीप्य और साहचर्य प्राप्त होगा।

५ अर्थात् तुम्हे यदि वास्तव मे मुझ से प्रेम है तो फिर हर प्रकार की कठिनाइयो और सकटो का मुकाबला करने के लिए तैयार रहो। मुझ से प्रेम है, तो तुम्हे वह मार्ग अपनाना होगा जिसका ज्ञान अल्लाह ने मुझे प्रदान किया है। इस मार्ग मे नाना प्रकार की बाधायें सामने आती है। इसमे मुहताजी और फाके तक की नौबत भी आ सकती है। इस राह पर चलने वाले असत्य से किसी कीमत पर भी साँठ-गाँठ नही कर सकते। वे सत्य के लिए अपने प्राण दे सकते हैं, परन्तु अन्याय और असत्य के आगे अपना सिर नही झुका सकते। इस मार्ग पर वही चल सकता है जिसका अल्लाह पर पूरा भरोसा हो और 'आखिरत' पर पूर्ण ईमान हो। तुम्हे यदि अल्लाह के 'रसूल' से प्रेम है तो फिर आराम, सुख और विलास की अपेक्षा उस मुहताजी और फाके को प्रिय जानो जो अल्लाह की राह मे पेश आता हो।

'दरूद' व सलाम

عَنْ عَبْدِاللّٰهِ بْنِ عَمْرِوبْنِ الْعَاصِ اَنَّهٗ سَمِعَ رَسُوْلَ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ يَقُوْلُ
مَنْ صَلّٰى عَلَىَّ صَلٰوةً صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ بِهَا عَشْرًا ——— مسلم

१ हजरत अब्दुल्लाह् बिन अम्र बिन आस रजि० से उल्लिखित है कि उन्होने अल्लाह् के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि जो व्यक्ति मुझ पर एक बार 'दरूद' भेजता है, अल्लाह् उस पर दस बार 'दरूद' भेजता है'। —मुस्लिम

---

१ एक दयाशील पिता को अपने बच्चो की शिक्षा-दीक्षा की चिन्ता होती है। वह अपने बच्चो को जीवन के सारे नियम सिखाता है। यहाँ तक कि वह उन्हे इस की भी शिक्षा देता है कि वे अपने बडो और माता-पिता का आदर-सत्कार किस प्रकार करे। इसी प्रकार अल्लाह् का 'रसूल' भी, जिसकी हैसियत आध्यात्मिक दृष्टि से लोगो के बीच एक पिता ही की होती है, अपने अनुयायियो को छोटी-बडी हर चीज़ की शिक्षा देता है। नितान्त प्रेम और दया के साथ वह उन्हे इसकी भी शिक्षा देता है कि उन्हे अपने 'रसूल' और नायक से कितना गहरा सम्बन्ध होना चाहिए।

इस 'हदीस' मे 'ईमान' वालो को इसकी शिक्षा दी जा रही है कि उन्हे अपने 'रसूल' पर 'दरूद' भेजना चाहिए। यह उस सम्बन्ध की स्वाभाविक माँग है जो सम्बन्ध कि 'ईमान' वालो को अल्लाह् के रसूल से होता है। 'ईमान' वालो पर 'रसूल' के उपकार अगणित है। अल्लाह् के रसूल सल्ल० ही के द्वारा उन्हे सत्य का प्रकाश मिला है। धर्म, 'ईमान' और नैतिक उच्चता उन्हे रसूल सल्ल० ही के द्वारा मिल सकी है। अब यह कृतज्ञता की बात है कि वे अपने 'रसूल' को प्राण और हृदय से भी अधिक प्रिय जाने, अल्लाह् से उनके लिए दुआ करे, और उनके सच्चे आज्ञाकारी बन कर रहे। 'दरूद' के लिए अरबी मे 'सलात' शब्द आया है। 'सलात' शब्द जब 'अला' के 'सिला' के साथ आता है तो इसके तीन अर्थ होते है। एक, किसी की ओर प्रेमपूर्वक रुख करना, और उस पर झुकना, किसी की ओर प्रवृत्त होना। दूसरे, किसी की प्रशसा करना। किसी के लिए दुआ करना। इस 'दरूद' मे प्रेम का अर्थ भी सम्मिलित है और प्रशसा व स्तुति का अर्थ भी। इसके अतिरिक्त 'रहमत' अर्थात् दयालुता (*Divine Favour or Blessing*) का अर्थ भी इसमे सम्मिलित है। 'रसूल' पर 'दरूद' भेजने का अर्थ यह है कि हम 'रसूल के अनुरागी हो जाये, उनकी प्रशसा करे। उनकी विशेषताओं को

२ आमिर बिन रबीअह् अपने बाप से 'रिवायत' करते हैं कि उन का बयान है कि मैंने रसूल सल्ल० को भाषण देते और कहते सुना कि जो व्यक्ति मुझ पर 'दरूद' भेजता है 'फिरिश्ते' उस पर 'दरूद' भेजते रहते है जब तक वह मुझ पर 'दरूद' भेजता रहता है[2]। —अहमद, इब्ने माजह

३ हज़रत इब्न मसऊद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'कियामत' के दिन मेरे साथ रहने का सबसे ज्यादा हकदार वह होगा जो मुझ पर सब से ज्यादा 'दरूद' भेजेगा[3]।

—तिरमिज़ी

माने और अल्लाह से उनके लिए 'रहमत' की दुआ करे।

यह जो कहा कि जो मुझ पर 'दरूद' भेजता है, अल्लाह उस पर दस बार 'दरूद' भेजता है, इसका अर्थ यह है कि ऐसे व्यक्ति पर अल्लाह की विशेष कृपा-दृष्टि होती है। ऐसा व्यक्ति अल्लाह को प्रिय हो जाता है। अल्लाह की उस पर दया और कृपा होती है। वह उसकी प्रशसा करता है और उसके कार्य मे बरकत देता है और उसे सम्मान और उच्चता प्रदान करता है। अल्लाह के 'रसूल' से गहरे हार्दिक सम्बन्ध और प्रेम के पीछे वास्तव मे ईशकामना की भावना ही काम करती है। 'रसूल' से हमारे प्रेम और आसक्ति का कारण इसके अतिरिक्त और क्या है कि वे हमे अल्लाह का मार्ग दिखाते और हमे अल्लाह की इच्छा से परिचित करते है। इसलिए उस व्यक्ति की ओर जो 'रसूल' पर 'दरूद' भेजता है अल्लाह की 'रहमत' और दयालुता का प्रवृत्त होना स्वाभाविक बात है।

कुरआन मे भी नबी सल्ल० पर 'दरूद' व सलाम भेजने का हुक्म हुआ है। कहा गया है "निस्सन्देह अल्लाह और उसके 'फिरिश्ते' नबी पर 'दरूद' (रहमत) भेजते है। हे लोगो जो 'ईमान' लाये हो! तुम भी उन पर 'दरूद' भेजो और खूब सलाम भेजो।"—सूरा अल-अहज़ाब आयत ५६।

२ अर्थात् अल्लाह के 'फिरिश्ते' उस से अत्यन्त प्रेम करते हैं और उसके लिए अल्लाह से दुआये करते है।

३ मनुष्य हृदय से 'इस्लाम' और 'ईमान' को जितनी अधिक मान्यता देगा उतना ही ज्यादा उसे नबी सल्ल० के उपकारो की अनुभूति होगी। और नबी सल्ल० के एहसानो का जितना ज्यादा एहसास होगा उतना ही ज्यादा वह आप पर 'दरूद' भेजेगा। 'दरूद' की अधिकता एक माप-दण्ड है जिस से मालूम होता है कि मनुष्य को 'दीन' (धर्म) से कितना लगाव है। आप पर ज्यादा-से-ज्यादा 'दरूद' भेजने का अर्थ यह है कि आदमी को आपके लाये हुए धर्म से गहरा सम्पर्क है, आप उसे सब से बढकर प्रिय है। इसलिए अवश्य ही 'कियामत' मे

४ हजरत अबूहुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो लोग किसी मजलिस मे बैठे और उस मे अल्लाह का 'जिक्र' न करे और न अपने नबी पर 'दरूद' भेजे तो अवश्य ही वह मजलिस उनके हक में तबाही होगी, अल्लाह चाहे उन्हे यातना दे और चाहे उन्हे क्षमा कर दे। —तिरमिजी

५ हजरत अली रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कृपण है वह व्यक्ति जिसके सामने मेरा जिक्र किया जाये और वह मुझ पर दरूद न भेजे[४]। —तिरमिजी

६ हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो कोई मुझे सलाम करता है, तो अल्लाह मेरी आत्मा को मुझ पर पलटाता है यहाँ तक कि मै उसके 'सलाम' का उत्तर देता हूँ[५]। —अबूदाऊद

७. अबू हुमैद साइदी रजि० से उल्लिखित है कि लोगो ने निवेदन किया हे अल्लाह के रसूल सल्ल० हम आप पर किस तरह 'दरुद' भेजे ? आपने कहा कहो

"हे अल्लाह ! रहमत (दयालुता) भेज मुहम्मद पर और उनकी पत्नियो और उनकी सन्तति पर, जिस प्रकार तू नें 'रहमत' भेजी इबराहीम पर। और बरकत प्रदान कर मुहम्मद को और उनकी पत्नियो और उनकी सन्तति को जिस प्रकार तू ने बरकत प्रदान की इबराहीम को निस्सन्देह तू प्रशसा (हम्द, दानशीलता) का अधिकारी और गौरव वाला है[६]।" —बुखारी, मुस्लिम

उसे आपका विशेष सामीप्य प्राप्त होगा। दूसरी 'रिवायतो' से मालूम होता है कि आदमी उसी के साथ होगा जिससे उसको प्रेम होगा।

४ इस से बढकर कृपणता और बखीली की बात और क्या हो सकती है कि आदमी के सामने उसके सब से बडे उपकारकर्त्ता का जिक्र आये और वह चुप रह जाये, उसके मुख से अपने उपकारकर्त्ता के लिए कोई प्रशसा और शुभ कामना व्यक्त करने वाले शब्द या दुआ न निकले।

५ अर्थात् अल्लाह सलाम करने वाले के सलाम रूपी उपहार को मुझ तक पहुँचा देते है और मेरी आत्मा को ऐसी दशा मे लाते है कि मैं उसके सलाम का उत्तर दे सकूँ। इस तरह मृत्यु के पश्चात् भी आपको लोगो के दरूद का ज्ञान होता है।

६ 'हदीसो' मे नबी सल्ल० के सिखाये हुये और बहुत से 'दरूद मिलते है। इस 'दरूद' से मालूम होता है कि नबी सल्ल० ने ऐसा नहीं किया कि इस दुआ को अपने ही लिए रखे। आपने अपनी पत्नियो और अपनी सन्तति को भी इसमे

आपका आज्ञापालन

عَنْ عَبْدِاللّٰهِ بْنِ عَمْرٍو قَالَ، قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ لَا يُؤْمِنُ
اَحَدُكُمْ حَتّٰى يَكُوْنَ هَوَاهُ تَبَعًا لِّمَا جِئْتُ بِهٖ ——— شرح السنة

१। हजरत अब्दुल्लाह् बिन अम्र रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा : तुम में से कोई 'ईमान' वाला न होगा जब तक कि उसकी इच्छा उस 'दीन' के अधीन न हो जाये जिसे लेकर मै आया हूँ'। —शरहुस्सुन्नह

सम्मिलित कर लिया है। कुछ दरूदो मे आपने अपनी 'आल' (अपने लोगो) को भी शामिल किया है। उदाहरणार्थ बुखारी और मुस्लिम मे कअब बिन उजरह रज़ि० से उल्लिखित है कि एक दिन अल्लाह् के रसूल सल्ल० हमारे पास आये, तो हमने कहा हे अल्लाह् के रसूल ! हमने आप पर सलाम भेजने का तरीका तो मालूम कर लिया मगर आप पर 'दरूद' किस तरह् भेजे ? आप ने कहा यो कहा करो .

"हे अल्लाह् ! 'दरूद' भेज मुहम्मद और मुहम्मदकी 'आल' (लोगो) पर जिस प्रकार तू ने 'दरूद' भेजा इबराहीम पर। निस्सन्देह तू प्रशसा ('हम्द', दानशीलता) का अधिकारी और गौरव वाला है। हे अल्लाह् ! बरकत प्रदान कर मुहम्मद की आल (लोगो) को जिस प्रकार तू ने बरकत प्रदान की इबराहीम को। निस्सन्देह तू प्रशसा ('हम्द', दानशीलता) का अधिकारी और गौरव वाला है।"

'आल' मे नबी सल्ल० के घर और घराने के लोगो के अतिरिक्त वे लोग भी आ जाते है जो आपके अनुयायी और आपके मानने वाले हो।

१ वास्तव मे 'मोमिन' (ईमान वाला) वही है जो आचार-विचार की उस पद्धति को अपनाये जिसकी ओर नबी सल्ल० ने लोगो को आमन्त्रित किया है। और दिल से यह मान ले कि सत्य वही है जिसे अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने सत्य कहा, और जिसे आपने असत्य कहा वह वास्तव मे असत्य है। 'ईमान' का वास्तविक भाव यही है कि मनुष्य की रुचि और उसकी कामनाएँ और इच्छाएँ उस मार्ग-दर्शन के अधीन हो जाएँ जिसे लेकर अल्लाह् का 'रसूल' ससार मे आया है। जिस ने नबी के मार्ग-दर्शन (*Guidance*) को छोड कर अपनी तुच्छ इच्छाओ का पालन किया वह सीधे और सत्य मार्ग से दूर जा पडा। कुरआन मे भी कहा गया है "उस से बढ कर पथभ्रष्ट कौन होगा जिस ने अल्लाह् के मार्गदर्शन के बिना अपनी (तुच्छ) इच्छाओ का अनुसरण किया, अल्लाह् अन्यायी लोगो

२ हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा मेरे समुदाय के सब लोग 'जन्नत' में दाख़िल होंगे सिवाय उसके जो इन्कार कर दे। ('सहाबा' ने) कहा इन्कार कौन करता है ? आपने कहा जिसने मेरी आज्ञा का पालन किया वह 'जन्नत' मे जायेगा और जिसने मेरी अवज्ञा की निश्चय ही उसने मेरा इन्कार किया[२]। —बुख़ारी

३. हज़रत मालिक बिन अनस से एक 'मुरसल' रिवायत है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा मैं तुम्हारे बीच दो चीज़े छोडे जा रहा हूँ जब तक उन्हे थामे रहोगे कदापि पथभ्रष्ट न होगे अल्लाह् की किताब और उसके 'रसूल' की 'सुन्नत' (तरीका)[३]। —मुअत्ता

४ हज़रत अबू राफ़ेअ रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा मैं कदापि तुम मे से किसी व्यक्ति को न पाऊँ कि वह अपनी मसनद पर तकिया लगाये बैठा हो और उसे मेरे उन आदेशो में से कोई आदेश पहुँचे जिनका मैंने हुक्म दिया हो या जिनसे मैने रोका हो, तो वह कहे कि मैं नही जानता, जो-कुछ मैंने अल्लाह् की किताब मे पाया उसका अनुसरण किया[४]। —अहमद, अबूदाऊद, तिरमिज़ी, इब्न माजह

को राह् पर नही लगाता।"' —सूर अल-क़सस आयत ५०।

२. अर्थात् जो आपकी अवज्ञा करता है और आपके आदेशो का पालन नही करता वह वास्तव मे आप का इन्कार करता है।

३. मालूम हुआ कि गुमराही और पथभ्रष्टता से बचने के लिए जहाँ अल्लाह् की किताब का अनुसरण आवश्यक है वही हमारे लिए यह भी आवश्यक है कि हम अल्लाह् के 'रसूल' सल्ल० की 'सुन्नत' (तरीके) और आप के आदेशो का पालन भी करें। आपके आदेशो और उपदेशो से बेपरवाह हो कर तो कोई वास्तविक रूप मे अल्लाह् की किताब का अनुयायी भी नही बन सकता। अल्लाह् ने अपने रसूल सल्ल० को अपनी किताब का भाष्यकार बना कर भेजा है। आपके कथन, आपका चरित्र, वास्तव मे अल्लाह् की किताब (कुरआन) की ही व्याख्या और विस्तार है। आपकी जहाँ और बहुत-सी ज़िम्मेदारियाँ थी वही एक महत्त्वपूर्ण दायित्व यह भी था कि आप लोगो को किताब और 'हिकमत' (*Wisdom*) की शिक्षा दे। दे० सूरा अल-बक़रह आयत १२९, आले इमरान आयत १६४, अल-जुमुआ आयत २।

४ 'मोमिन' (ईमान वाले व्यक्ति) के लिए आवश्यक है कि वह अल्लाह् की किताब की तरह उन आदेशो का भी पालन करे जो अल्लाह् के रसूल सल्ल० की ओर से उन तक पहुँचे है। आपकी 'सुन्नत' (तरीका) कुरआन की

५ हजरत जाबिर रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने ('खुतबा' देते हुये) कहा ईश-प्रशसा और सलाम के पश्चात् (अब यह बात सुन लो कि) उत्तम कलाम (वाणी) अल्लाह की किताब (कुरआन) है और उत्तम मार्ग मुहम्मद का (दिखाया हुआ) मार्ग है और बुरी बातें वे है जो ('दीन' में) नई निकली हों और ('दीन' में) हर नई और बढाई हुई बात गुमराही (पथभ्रष्टता) है[५]। —मुस्लिम

६ हजरत गुजैब बिन हारिस सुमाली रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . जिस जाति ने ('दीन' मे) कोई नई बात निकाली उसी जैसी एक 'सुन्नत' (उस जाति से) उठा ली गई, तो 'सुन्नत' (नबी के तरीके) को दृढता से पकडे रहना, नई बात निकालने से अच्छा है[६]। —अहमद

व्याख्या की हैसियत रखती है (अन नह्ल आयत ४४)। व्याख्या के लिए व्याख्या सम्बन्धी आदेश भी अल्लाह की ओर से आपको प्रदान हुये। कुरआन मे आपके बारे मे कहा गया है "वह (नबी) उन्हे नेकियो का हुक्म देता और उन्हे बुराई से रोकता है और उनके लिए पाक चीज़े (शुद्ध वस्तुये) हलाल (वैध) करता है और उनके लिए नापाक चीजे हराम (वर्जित) करता है" —अल-आराफ आयत १५७।

५ हजरत आइशा रजि० का बयान है कि आप ने कहा "जिस ने हमारे इस 'दीन' मे कोई ऐसी नई बात निकाली जो उस मे नही है वह अस्वीकृत है" — बुखारी, मुस्लिम।

'दीन' मे किसी नई चीज का दाखिल करना गुमराही है। 'दीन' म किसी परिवर्द्धन या सशोधन और निराकरण का अधिकार किसी को प्राप्त नही। अल्लाह की ओर से 'दीन' (धर्म) जिस रूप मे हम तक पहुँचा है, हमे उसे उसी रूप मे स्वीकार करना चाहिए। 'दीन' मे किसी प्रकार का परिवर्द्धन करना वास्तव मे दीन को विकृत करना और उस का रूप बिगाडना है। अगली जातियो का इतिहास साक्षी है कि जब उन के 'दीन' मे 'विदअतो' (मनगढन्त नई बातो) को दाखिल होने का अवसर मिला, तो इस चीज ने 'दीन' को बिगाड कर रख दिया। विचार और धारणा स ले कर व्यवहार और कर्म तक सारी चीजो मे बिगाड इतना पैदा हो गया कि यह पता लगाना भी असम्भव हो गया कि उनका वास्तविक और मूल धर्म क्या था।

६. 'विदअत' ('दीन' मे मनगढन्त नई बातो) का 'सुन्नत' (नबी के तरीके) के साथ कोई जोड नही लग सकता। जिस प्रकार की मनगढन्त चीज 'दीन' मे शामिल की जायेगी उसी प्रकार की 'सुन्नत' लोगो के बीच से उठ

७ हज़रत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . जिन किसी ने मेरे अनुयायी समुदाय के बिगाड के समय मे मेरी 'सुन्नत' (तरीके) को अपनाया उसके लिए सौ शहीदो का सवाब (पुण्य) है। —बैहकी

८. हज़रत बिलाल हारिस मुज़नी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिसने मेरी किसी ऐसी 'सुन्नत' (तरीका) को जीवित किया जो मेरे पश्चात् मुरदा हो गई हो, तो उसके अनुसार आचरण करने वालो के बराबर उसे बदला मिलेगा बिना इसके कि उन आचरण करने वालो के सवाब और बदले मे कुछ कमी की जाये। और जिस व्यक्ति ने पथभ्रष्टता की कोई ऐसी बात निकाली जिस से अल्लाह और उसका रसूल प्रसन्न और सहमत नही तो उस (नई बात) के अनुसार आचरण करने वालो के गुनाहो के बराबर उसके हिस्से मे गुनाह आयेगा बिना इसके कि उन (आचरण करने वालो) के बोझ मे कुछ कमी की जाये। —तिरमिजी, इब्न माजह

जायेगी। 'दीन' अपनी जगह पूर्ण है, उसमे किसी परिवर्द्धन की न आवश्यकता है और न गुंजाइश। 'बिदअत' जब भी दाखिल होगी वह किसी 'सुन्नत' की जगह ले लेगी। उदाहरणार्थ 'नमाज' का एक तरीका नबी सल्ल० का सिखाया हुआ है। अब यदि कोई व्यक्ति अपनी ओर से 'नमाज' मे कोई बात दाखिल करे, तो उस से नमाज के उस भाग को आघात पहुँचेगा जिसमे वह अपनी ओर से कोई बात सम्मिलित कर रहा है। और फिर इस 'नमाज' का पूरा ढांचा प्रभावित होगा। बुद्धिमानी यह नही है कि आदमी 'दीन' मे मनगढन्त बातो का परिवर्द्धन करता रहे, बल्कि बुद्धिमानी की बात यह है कि आदमी 'सुन्नत' (नबी के तरीके) से चिमटा रहे। भलाई, बरकत और कल्याण सब-कुछ 'सुन्नत' ही से सम्बद्ध है।

७ ऐसे समय मे जबकि समुदाय मे बिगाड पैदा हो गया हो और लोग 'दीन' से गाफिल हो गये हो, तरह-तरह की बिदअतें प्रचलित हो गई हो 'दीन' के नाम पर तरह-तरह की आपत्ति सामने आ रही हो, ऐसे कठिन समय मे नबी सल्ल० की 'सुन्नत' का पालन करना और उसे उजागर करना महान 'जिहाद' (धर्म-युद्ध) से कम नही है। इसलिए इसका बदला भी अल्लाह के यहाँ बहुत ज्यादा है।

———

सारे संसार के रसूल

عن الحسن مرسلاً قال قال رسول الله صلى الله عليه وسلم انا رسول من
ادرك حيا ومن يولد بعدى ——————— ابن سعد، الكنز والخصائص

१ हजरत हसन से 'मुरसल' रूप से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मै उनका भी 'रसूल' हूँ जो (इस समय) जीवित है और उनका भी जो मेरे पश्चात् पैदा होगे[1]।

—इब्न सअद, अलकज़ वलखसाइस

२. हजरत अनस बिन मालिक रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा उसे एक मुबारकबाद (बधाई) जिसने मुझे देखा और मुझ पर 'ईमान' लाया और उसे सात बार मुबारकबाद जिसने मुझे नही देखा और मुझ पर 'ईमान' लाया[2]। —अहमद

३ हजरत जाबिर बिन अब्दुल्लाह रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · पहले 'नबी' केवल अपनी जाति वालो की ओर भेजा जाता था और मैं समस्त मनुष्यो की ओर भेजा गया हूँ[3]।

—बुखारी, मुस्लिम

---

१ अर्थात् आपकी 'नुबूवत' का सम्बन्ध केवल आपके जीवन काल से ही नही है बल्कि आपकी 'रिसालत' कियामत तक के लोगो के लिए है।

२ इस 'हदीस' मे बाद मे आने वालो के लिए तसल्ली का सामान है। आपने उन्हे बार-बार मुबारकबाद इसलिए दी है कि वे आपको न देखने के बावजूद आपकी 'रिसालत' का इकरार करेंगे और आपको अपने प्राण से बढकर प्रिय समझेंगे। दूसरे पहलुओ से 'सहाबा' रज़ि० को जो श्रेष्ठता प्राप्त है उसमे उन का शरीक कौन हो सकता है।

३ अर्थात् यह आपकी विशेषता है कि आप सारे मनुष्यो के लिए रसूल बनाकर भेजे गए है जबकि अगले 'नबी' केवल अपनी जाति की ओर 'नबी' बनाकर भेजे गए थे। जो मार्ग दर्शन और ज्ञान लेकर आप आए है वह समस्त मनुष्य की सम्मिलित विरासत है। वह किसी विशेष जाति की विशिष्ट निधि नही है। वह किसी के लिए पराई कदापि नही है। यही कारण है कि नबी सल्ल० ने धर्म-प्रचार और सत्य आमन्त्रण के शुभ कार्य को अपनी जाति या अरब तक सीमित नही रक्खा, बल्कि बाहर के लोगो को भी आपने 'इस्लाम' की ओर आमन्त्रित किया। विभिन्न बादशाहो और शासको को आपने आमन्त्रण-पत्र लिखे इसी उद्देश्य के लिए अल्लाह ने आपको एक ऐसा मुस्लिम समुदाय प्रदान किया

८ हज़रत अबू मूसा अशअरी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मैं काले और गोरे सबकी ओर भेजा गया हूँ[४]।

नुबुवत' की समाप्ति

عَنْ اَبِىْ حَازِمٍ قَالَ قَاعَدْتُ اَبَا هُرَيْرَةَ خَمْسَ سِنِيْنَ فَسَمِعْتُهُ يُحَدِّثُ عَنِ
النَّبِيِّ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ، كَانَتْ بَنُوْ اِسْرَآئِيْلَ تَسُوْسُهُمُ الْاَنْبِيَآءُ كُلَّمَا
هَلَكَ نَبِيٌّ خَلَفَهُ نَبِيٌّ وَاِنَّهُ لَا نَبِيَّ بَعْدِيْ وَسَتَكُوْنُ خُلَفَآءُ فَيَكْثُرُوْنَ قَالُوْا
مَا تَاْمُرُنَا. قَالَ اَوْفُوْا بِبَيْعَةِ الْاَوَّلِ فَالْاَوَّلِ اَعْطُوْهُمْ حَقَّهُمْ فَاِنَّ اللّٰهَ سَائِلُهُمْ
عَمَّا اسْتَرْعَاهُمْ —— بخاری، مسلم، ابن ماجه، احمد

१. अबूहाजिम से उल्लिखित है, वे कहते है कि मैं अबू हुरैरह रजि० के साथ पाँच वर्ष रहा हूँ। मैने उन्हे नबी सल्ल० से यह 'हदीस' बयान करते सुना कि आपने कहा 'बनी इसराईल' का नेतृत्व 'नबी' किया करते थे। जब कोई नबी मर जाता तो दूसरा नबी उसका उत्तराधिकारी होता परन्तु मेरे बाद कोई 'नबी' नही है बल्कि 'खलीफा' होगे और वे बहुत होगे। लोगो ने कहा : (उनके बारे में) आप हमें क्या हुक्म देते है ? कहा जो पहले हो उसकी 'बैअत' (अनुपालन प्रतिज्ञा) पूरी करना। तुम उनका हक अदा करते रहना उस निगरानी और जिम्मेदारी के

जिसका दायित्व यह ठहरा कि वह अपने मिशन (*Mission*) को लेकर उठे और सत्य-सन्देश को सारे ससार मे फैलाये। कुरआन मे भी विभिन्न स्थानों पर स्पष्ट शब्दो मे बयान किया गया है कि आप समस्त मनुष्यो के लिए 'रसूल' बनाकर भेजे गए थे। उदाहरणार्थ सूरा सबा आयत २८ पढिए "और (हे नबी !) हम ने तो तुम्हे समस्त मनुष्यो के लिए शुभसूचना देने वाला और सचेत करने वाला बनाकर भेजा है, परन्तु अधिकतर लोग नही जानते।" एक दूसरी जगह है "और (हे नबी ! कहो) यह कुरआन मेरी ओर 'वह्य' किया गया है ताकि मैं इसके द्वारा तुम्हे और जिस किसी को यह पहुँचे सबको सचेत कर दूँ सूरा अल-अनआम आयत १९।

पिछले 'नबियो' की 'नुबूवत' विशेष काल और विशेष जाति के लिए थी, यह स्वय उनके काम, उनकी कोशिश और उनके कथनो से सिद्ध है।

४ अर्थात् मेरी 'नुबूवत' किसी विशेष रग और नस्ल की जाति के लिए नही है, बल्कि मैं समस्त मनुष्यों के लिए 'रसूल' बनाकर भेजा गया हूँ।

विषय मे अल्लाह स्वय उनसे पूछेगा जो उसने उन्हे सौपी है'।

—बुखारी, मुस्लिम इब्नमाजह, अहमद

२ हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : मेरी मिसाल और मुझ से पहले गुजरे हुए 'नबियो' की मिसाल ऐसी है जैसे किसी व्यक्ति ने एक घर बनाया और उसे अत्यन्त सुन्दर और छवि-सम्पन्न बनाया परन्तु एक कोने मे एक ईंट की जगह छूटी हुई थी। लोग उस (घर) के चारों ओर फिरते और उसकी मनो-

१ यह 'हदीस' बताती है कि हजरत मुहम्मद सल्ल० अल्लाह के अन्तिम 'नबी' है। 'नुबूवत' का सिलसिला आप पर समाप्त है। यह हदीस वास्तव मे कुरआन की इस 'आयत' की व्याख्या है "(हे लोगो !) मुहम्मद तुम्हारे पुरुषो मे से किसी के पिता नही है, परन्तु वे अल्लाह के 'रसूल' और 'नबियो' के समापक है। और अल्लाह को हर चीज का ज्ञान है।"—अल-अहजाब आयत ४०।

'नुबूवत' वास्तव मे एक पद है जिस पर अल्लाह विशेष आवश्यकता से किसी व्यक्ति को नियुक्त करता है। वह आवश्यकता जब होती है, तो अल्लाह की ओर से 'नबी' की नियुक्ति हो जाती है। जब आवश्यकता नही होती तो 'नबी' नही भेजे जाते। कुरआन के अध्ययन से मालूम होता है कि चार हालतो मे नबी भेजे गए है (१) किसी विशेष जाति मे कोई नबी न आया हो, और किसी दूसरी जाति मे आये हुए 'नबी' का सन्देश भी उस तक न पहुँच सकता हो, तो उस जाति के मार्गदर्शन के लिए अल्लाह की ओर से 'नबी' आता है। (२) गुजरे हुए नबी की शिक्षाओ को लोगो ने भुला दिया हो या उस 'नबी' की शिक्षा मे लोगो ने अपनी ओर से कुछ घटा-बढा दिया हो कि सत्य और असत्य मे अन्तर करना कठिन हो गया हो और वास्तविक रूप मे उस 'नबी' का अनुसरण सम्भव न हो। (३) एक 'नबी' के साथ उसकी सहायता और सहयोग के लिए किसी और 'नबी' की आवश्यकता हो। (४) गुजरे हुए 'नबी' के द्वारा जो शिक्षा दी गई हो वह पूर्ण न हो अब उसे पूर्ण करने के लिए किसी 'नबी' के आने की आवश्यकता हो।

नबी सल्ल० के आने के पश्चात् इनमे से कोई भी आवश्यकता शेष नही है। आप सम्पूर्ण ससार को सीधा मार्ग दिखाने के लिए 'रसूल' बनाकर भेजे गए है। आपकी 'नुबूवत' के समय से लेकर निरन्तर ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न होती गई है कि आपका सन्देश सारे ससार मे पहुँचाया जा सकता है और पहुँच रहा है। आपके बाद अलग-अलग जातियो मे 'नबियो' को नियुक्त करने की आवश्यकता शेष नही रही। कुरआन इस बात का साक्षी है और नबी सल्ल० की जीवनी और 'हदीसो' का महान् भण्डार इस बात का स्पष्ट प्रमाण

हरता पर विस्मय प्रकट करते, और कहते थे यह ईंट भी क्यो न रख दी गई ? तो वह ईंट मैं हूँ और मैं 'नबियो' का समापक हूँ[२]।

—बुखारी मुस्लिम

३ हज़रत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मेरे और ईसा के बीच कोई 'नबी' नही है वे अवश्य उतरेंगे जब तुम उन्हे देखोगे तो वे एक मध्य कद के लाल व श्वेत रग वाले और दो केसरिया चादरें ओढे हुए होगे (उन पर ऐसी ताजगी होगी जैसे वे अभी स्नान करके आ रहे हैं) मानो उनके सिर से पानी की बूँदे टपकी पड रही है यद्यपि उन्हे सजलता छुई भी न होगी। वे इस्लाम के लिए लोगो से युद्ध करेंगे[३]।

—अबूदाऊद

है कि आपकी लाई हुई शिक्षा अपने वास्तविक रूप मे सुरक्षित है। आपकी लाई हुई किताब अक्षरश उसी रूप मे मौजूद है जिस रूप मे आपने उसे ससार के समक्ष प्रस्तुत किया था। आपके कथन, उपदेश और आपका सम्पूर्ण जीवन इस प्रकार हम तक पहुँचा है लगता है मानो आप हमारे बीच मौजूद हैं। नबी० सल्ल० के द्वारा अल्लाह ने 'दीन' (धर्म) को पूर्ण कर दिया। सुधारकर्ता आपकी सूचना के अनुसार मुस्लिम समुदाय मे बराबर उठते रहे है और उनके द्वारा धर्म के पुनरुत्थान और उसे नवीनता प्रदान करने का कार्य होता रहा है।

२ मुस्लिम मे इस विषय की चार 'हदीसें' आई है। एक 'हदीस' मे ये शब्द मिलते है · "तो मैं आया और मैंने 'नबियो' के सिलसिले को समाप्त कर दिया।" मुसनद अबू दाऊद तयालसी मे यह 'हदीस' जाबिर बिन अब्दुल्लाह की उल्लिखित 'हदीसो' के सिलसिले मे आई है। उसके अन्तिम शब्द ये है "मेरे द्वारा 'नबियो' का सिलसिला समाप्त हो गया।" इस 'हदीस' से मालूम होता है कि नबी सल्ल० के आने से 'नुबूवत' का भवन पूर्ण रूप से निर्मित हो गया और कोई जगह बाकी नही रही जिसे भरने के लिए किसी 'नबी' के आने की आवश्यकता हो। 'नुबूवत' और 'रिसालत' का सिलसिला आप पर पूर्ण हो गया। आपके बाद जो व्यक्ति भी अपने नबी 'होने' का दावा करे वह झूठा और मक्कार है।

३ यह 'हदीस' बताती है कि हज़रत ईसा अ० आसमान पर मौजूद है। अल्लाह ने उन्हे जीवित उठा लिया है। यह धारणा सही नही है कि उन्हे सूली पर चढा दिया गया है। अल्लाह ने उन्हे लोगो की शरारतो से सुरक्षित रक्खा। वे 'कियामत' के निकट अल्लाह के हुक्म से ससार मे दोबारा पदार्पण करेंगे और 'इस्लाम' की सेवा करेंगे। हज़रत मुहम्मद सल्ल० के रसूल होने और हजरत ईसा मसीह अ० के दोबारा पदार्पण करने के बीच कोई 'नबी' आने

४ हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : हम सब से अन्तिम है और 'कियामत' के दिन सब से पहले हो जायेगे केवल इतनी बात है कि पहले लोगों को किताब हम से पहले दी गई है और हमें उनके बाद दी गई है[४]।

—बुखारी, मुस्लिम, नसई

५. हजरत जुबैर इब्न मुतइम रजि० कहते है कि मैने नबी सल्ल० को कहते सुना मेरे कई नाम है, मैं मुहम्मद हूँ, और मैं अहमद हूँ और मैं 'माही' हूँ कि मेरे द्वारा अल्लाह 'कुफ्र' (अधर्म) को मिटायेगा[५] और मै 'हाशिर' हूँ वह 'हाशिर' जिसके बाद लोग 'हश्र' (प्रलय-क्षेत्र) मे एकत्र किए जायेंगे[६] और मै 'आकिब' (पीछे आने वाला) हूँ। 'आकिब' उसे कहते है जिसके बाद कोई 'नबी' न हो। —बुखारी, मुस्लिम

६. हजरत अबू मूसा अशअरी रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने हमारे सामने अपने ये नाम बयान किये : मैं मुहम्मद हूँ, अहमद हूँ, 'मुकफ्फी' हूँ[७], 'हाशिर' हूँ[८] तौबा वाला 'नबी' हूँ[९] और 'रहमत' वाला 'नबी' हूँ[१०]। —मुस्लिम

वाला नही है।

४ इस 'रिवायत' से भी मालूम हुआ कि हज़रत मुहम्मद सल्ल० की 'रिसालत' (ईश-दूतत्व) अन्तिम रिसालत है। आप पर 'वह्य' (ईश्वरीय सकेत) और 'रिसालत' का सिलसिला समाप्त हो गया। इस 'हदीस' से आपके समुदाय की श्रेष्ठता पर भी प्रकाश पडता है।

५ आपकी यह बात पूरी होकर रही, 'कुफ्र' जो आपसे सघर्ष कर रहा था, परास्त हुआ और धरती के एक बडे भाग पर अल्लाह का 'दीन' कायम हुआ।

६ अर्थात् मेरे बाद 'कियामत' ही आयेगी। मेरे बाद कोई 'नबी' न होगा।

७ अर्थात् मैं समस्त 'नबियो' के अन्त मे आने वाला हूँ। मेरे बाद कोई नवीन 'नुबूवत' कायम न होगी।

८ अर्थात् 'कियामत' के दिन लोगो को एकत्र करने वाला। मेरे बाद 'कियामत' ही आयेगी जिस मे लोग अल्लाह के सामने एकत्र किये जायेंगे।

९ नबी सल्ल० अल्लाह के सामने अधिक 'तौबा' किया करते थे। आप बहुत ज्यादा अल्लाह की ओर पलटते और उस से क्षमा की प्रार्थनाएँ किया करते थे।

१० आप सम्पूर्ण ससार के लिए 'रहमत' (सर्वथा दयालुता) बना कर भेजे गये आप सारे ससार के नायक और सारे मनुष्यो को मुक्ति, कल्याण और सफलता का मार्ग दिखाने वाले है। कुरआन मे भी कहा गया है "और (हे मुहमम्द !) हम ने तुम्हे सारे ससार के लिए 'रहमत' (दयालुता) ही बना कर भेजा है"।

७ अब्दुल्लाह् बिन इबराहीम बिन कारिज कहते है कि मै गवाही देता हूँ कि मैंने हजरत अबू हुरैरह् रजि० को कहते सुना है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा : मैं अन्तिम 'नबी' हूँ और मेरी मस्जिद अन्तिम मस्जिद है[११]। —मुस्लिम, नसई

८ अबुत्तुफैल से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा मेरे पश्चात् 'नुबूवत' नही है केवल शुभसूचक बाते है। कहा गया : वे शुभसूचक बाते क्या है, हे अल्लाह् के रसूल ! कहा "अच्छा स्वप्न" या कहा "ठीक स्वप्न"[१२]। —मुसनद अहमद, नसई, अबूदाऊद

९ हजरत अबू हुररह् रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा : तुम से पहले के समुदायो मे 'मुहद्दस' हुए है, यदि मेरे समुदाय में कोई ('मुहद्दस')है, तो वह उमर है[१३]। —बुखारी, मुस्लिम

एक दूसरी 'हदीस' हज़रत अबू हुरैरह् रजि० से उल्लिखित है कि आप ने कहा . मैं अल्लाह् की भेजी हुई 'रहमत' (दयालुता) हूँ। —दारी, बैहकी-शोबुल ईमान।

११, नसई की 'रिवायत' मे 'अन्तिम' के लिए आखिर के बदले 'खातिम' शब्द प्रयुक्त हुआ है। इसका अर्थ वही है जो आखिर का होता है।

दूसरी 'हदीसो' से मालूम होता है कि ससार मे तीन मस्जिदे ऐसी है जिन्हे साधारण मस्जिदो के मुकाबले श्रेष्ठता प्राप्त है। जिन मे 'नमाज़' पढने का 'सवाब' (पुण्य) दूसरी मस्जिदो मे नमाज पढने से हजार गुना अधिक है। इसी कारण इन मस्जिदो मे 'नमाज़' पढने के लिए सफर कर के जाना वैध हैं। जबकि दूसरी किसी मस्जिद को यह हक नही पहुँचता कि आदमी अन्य मस्जिदो को छोड कर उस मे 'नमाज़' अदा करने के लिए सफर करे। इन श्रेष्ठतम मस्जिदो मे पहली मस्जिद वह है जो जो 'मस्जिदे हराम (*Inviolable Place of Worship*) के नाम से प्रसिद्ध है। जो आदर और विशेष प्रतिष्ठा वाली मस्जिद है। जिसके निर्माण कर्त्ता हजरत इबराहीम अ० थे। दूसरी 'मस्जिद मस्जिदे अकसा' (*Sacred Place of Jerusalem*) जिसे हज़रत सुलैमान अ० ने बनाया था। तीसरी मस्जिद मदीना की 'मस्जिदे नबुई' जिसकी बुनियाद नबी सल्ल० ने रक्खी है।

१२ अर्थात् मेरे बाद 'वह्य' व 'नुबूवत' की सम्भावना नही है। किसी को अल्लाह् की ओर से कोई सकेत मिलेगा, तो वह अच्छे स्वप्न के रूप मे मिलेगा।

१३ अर्थात् मेरे समुदाय मे यदि 'मुहद्दस' है तो उन मे से निश्चय ही दूसरो के अतिरिक्त एक उमर (रज़ि०) भी है। कुछ 'रिवायतो' के शब्द ये है : "तुम से पहले वनी इसराईल मे ऐसे लोग हुये है जिन से कलाम किया जाता था

१० हजरत सौबान रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा मेरे समुदाय मे तीस बडे झूठे होंगे उन में से प्रत्येक अपने 'नबी' होने का दावा करेगा, हालाँकि मैं 'नबियों' का समापक हूँ मेरे बाद कोई 'नबी' नही[१४] । —मुस्लिम

बिना इस के कि वे 'नबी' हो । मेरे समुदाय मे यदि कोई हुआ तो वह उमर होगे" । 'मुहद्दस' और 'मुकल्लम' का अर्थ एक ही है । 'मुहद्दस' या 'मुकल्लम' उसे कहेगे जो ईश्वरीय वार्त्तालाप या ईश्वरीय सम्बोधन से सम्मानित हो या जिसके साथ गैब के परदे (परोक्ष) से बात की जाये। मुस्लिम की कुछ रिवायतो मे मुलहमून ,शब्द भी प्रयुक्त हुआ है अर्थात् वे लोग जिन को 'इलहाम' होता हो, जिनके मन मे ईश्वर की ओर से बातें डाली जाती हो। जिनको दैवी प्रेणाएँ प्राप्त होती हो। अबू सईद खुदरी रजि० से 'मरफूअ' तरीके पर उल्लिखित है नबी सल्ल० से पूछा गया कि 'मुहद्दस' कैसा होता है? आपने कहा ये वे लोग है कि 'फिरिश्ते' इन की जिह्वा से बोलते है। विद्वानो ने इस का विभिन्न अर्थ समझा है। अधिकतर लोगो का विचार है कि यह वह व्यक्ति है जिसका ख्याल अधिकतर सही होता हो जिस के दिल मे अल्लाह् के निकटवर्ती 'फिरिश्तो' की ओर से कोई बात इस तरह डाली जाये मानो उस से किसी ने कह दी है। किसी के विचार मे 'मुहद्दस' वह है जिस की ज़बान से सत्य और ठीक बात अकस्मात बिना सकल्प के निकले।

१४ इस 'हदीस' मे तीस बडे मक्कारो का उल्लेख हुआ है। नबी सल्ल० ने मुस्लिम समुदाय को सचेत कर दिया कि 'नुबूवत' आप पर समाप्त है। आप के बाद 'नुबूवत' का जो भी दावेदार होगा वह झूठा होगा। आपकी यह भविष्यवाणी अक्षरश सत्य सिद्ध हुई। आप के बाद अल्लाह् की ओर से कोई नबी नही आया। आपकी सूचनानुसार 'नुबूवत' के झूठे दावेदार अवश्य उठे, परन्तु वे अपने छल और षड्यत्र को छिपाने मे सफल न हो सके। उन का छल और उन की मक्कारी खुल कर रही। उनमे 'नुबूवत' का कोई तेज और पवित्रता नही पाई गई। इञ्जील मे बयान हुआ है "झूठे नबियो से सावधान रहो जो तुम्हारे पास भेडो के भेष मे आते है, परन्तु अन्तर मे फाडने वाले भेडिए है। उन के फलो से तुम उन्हे पहचान लोगे क्या झाडियो से अगूर, या ऊँट कटारो से अजीर तोडते है"? —मत्ता ६ १५-१६।

आपकी कुछ प्रमुख विशेषताएँ

عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ، أَنَّ رَسُولَ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ: فُضِّلْتُ عَلَى الْأَنْبِيَاءِ بِسِتٍّ: أُعْطِيتُ جَوَامِعَ الْكَلِمِ، وَنُصِرْتُ بِالرُّعْبِ، وَأُحِلَّتْ لِيَ الْغَنَائِمُ، وَجُعِلَتْ لِيَ الْأَرْضُ مَسْجِدًا وَطَهُورًا، وَأُرْسِلْتُ إِلَى الْخَلْقِ كَافَّةً، وَخُتِمَ بِيَ النَّبِيُّونَ — مسلم، ترمذی، ابن ماجه

१ हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मुझे 'नबियों' में छ बातों में श्रेष्ठता प्रदान की गई है. मुझे संक्षिप्त और व्यापक अर्थयुक्त बात कहने की योग्यता दी गई है[1]। रोब के द्वारा मुझे सहायता प्रदान की गई[2], 'ग़नीमत' के माल को मेरे लिए अवर्जित किया गया[3], धरती को मेरे लिए मस्जिद और स्वच्छता प्राप्त करने का साधन बना दिया गया[4]। मुझे सारे संसार के

---

१. अर्थात् मुझे ऐसी योग्यता प्रदान की गई है कि मेरे संक्षिप्त शब्द अत्यन्त सारग-र्भित और व्यापक अर्थ से युक्त होते है। नबी सल्ल० के शब्द स्पष्ट होते हैं परन्तु उनको विस्तृत कीजिए तो प्रत्येक विस्तार का वे ऐसा साथ देते हैं कि मानो वे उसी के लिए आप के शुभ मुख से निकले हैं। क़ुरआन के बाद यह 'हदीस' का ही चमत्कार है कि स्पष्ट और संक्षिप्त होने पर भी उसमे अत्यन्त व्यापकता पाई जाती है।

२. अर्थात् दुश्मन पर रोब डाल कर और उसे आतंकित कर के मेरी सहायता की गई।

३ इस्लामी युद्ध मे शत्रु का जो माल हाथ आता है उसे 'ग़नीमत' कहते हैं। अगले 'नबियों' के समय मे इस माल को अपने काम मे लाना अवैध था, परन्तु, अल्लाह ने अपनी कृपा से 'ग़नीमत' के माल को नबी सल्ल० की 'शरिअत' (धर्म विधान) मे हलाल (वैध) कर दिया है।

४. अर्थात् मेरी 'शरिअत' (धर्म विधान) मे 'नमाज़' केवल मस्जिद और पूजा-गृहो तक ही सीमित नही है बल्कि धरती पर हर जगह नमाज पढी जा सकती है और यदि पानी न मिले तो 'वज़ू' (शुद्धता के लिए हाथ-पाँव और मुँह आदि धोने) के बदले 'तयम्मुम' से काम चलाया जा सकता है और इसी तरह पानी न मिलने पर स्नान के बदले मिट्टी से 'तयम्मुम' किया जा सकता है। 'तयम्मुम' से अभिप्रेत यह है कि शुद्ध मिट्टी पर अपने दोनो हाथ मारे फिर सारे मुँह पर भली-भाँति मले इसी तरह दोबारा मिट्टी पर दोनो हाथो को मार कर दोनो हाथो को कुहनियो तक मले यह 'नमाज़' का आदर

लिए 'रसूल' वना कर भेजा गया[५]। और मुझ पर 'नवियों' के सिलसिले को समाप्त कर दिया गया[६]। —मुस्लिम, तिरमिजी, इब्न माजह

२ हजरत अनस रजि० कहते है कि अल्लाह के 'रसूल' सल्ल० ने कहा 'कियामत' के दिन 'नवियों' मे सबसे अधिक सख्या मेरे अनुयायियों की होगी। और मैं प्रथम व्यक्ति हूँगा जो 'जन्नत' का द्वार खुलवायेगा। —मुस्लिम

३ हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा: मै पहला व्यक्ति हूँ जो 'जन्नत' में सिफारिश करूँगा[७]। नवियो में से किसी की उतनी तसदीक (समर्थन एव पुष्टि) नही की गई जितनी मेरी तसदीक की गई। और 'नवियो' में से एक 'नवी' ऐसे है जिन की तसदीक उन के समुदाय के केवल एक व्यक्ति ने की है[८]। —मुस्लिम

४. हजरत अबू हुरैरह रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मैं 'कियामत' के दिन आदम की औलाद का नायक हूँगा। और सब से पहला व्यक्ति जो अपनी कब्र से उठेगा मै हूँगा। सबसे पहले मैं सिफारिश करूँगा और सब से पहले मेरी सिफारिश कबूल की जायेगी —मुस्लिम

५. हजरत अबूहुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा· 'नवियो' में से हर एक 'नवी' को चमत्कारो मे से उतना ही प्रदान किया गया जिस पर मनुष्य 'ईमान' ला सके और

और पवित्रता की भावना को बाकी रखने का एक उत्तम और मनोवैज्ञानिक उपाय है।

५ अर्थात् मैं सारे ससार का 'रसूल' हूँ। मुझे किसी विशेष जाति और देश के लिए 'रसूल' बना कर नही भेजा गया है, मैं तो सारे ससार को सत्यमार्ग दिखाने आया हूँ।

६ अर्थात् मेरे बाद कोई दूसरी 'नुबूवत' कायम होने वाली नही है, मैं अल्लाह का अन्तिम 'नबी' (सदेश वाहक और दूत) हूँ।

७ अर्थात् मेरी सिफारिश से बहुत से लोग 'जन्नत' मे जायेगे। और बहुत से लोगो के दर्जे मेरी सिफारिश से उच्च कर दिये जायेगे।

८ अर्थात् मेरी 'नुबूवत' को मानने वालो की सख्या सब से अधिक है। एक 'नबी' तो ऐसे गुजरे है जिन को उन के समुदाय मे से केवल एक व्यक्ति ने माना, शेष सब लोगो ने उन का विरोधी ही किया और उन्हे 'नबी' मानने से इन्कार कर दिया।

जो चीज़ मुझे प्रदान की गई वह 'वह्य' (ईश्वरीय वाणी) है जिसे अल्लाह ने मेरी ओर भेजा[९]। इसलिए मुझे आशा है कि 'कियामत' के दिन मेरे अनुयायियो की सख्या समस्त 'नबियो' के अनुयायियों से अधिक होगी। —बुखारी, मुस्लिम

---

९ मतलब यह है कि हर 'नबी' को उसके अपने युग और परिस्थिति के अनुसार चमत्कार *(Wonders)* प्रदान किए गए थे। मुझे अल्लाह ने जो विशेष चमत्कार प्रदान किया है वह वह्य एव दैवी प्रेरणा *(Inspiration)* का चमत्कार है। कुरआन जो 'वह्य' के द्वारा मुझ पर अवतरित हुआ है एक सर्वकालिक चमत्कार है। इसके द्वारा 'कियामत' तक लोग सीधा मार्ग पाते रहेगे। मुझे जो चमत्कार मिला है उसकी विलक्षणता का कभी अन्त नही हो सकता।

कुरआन पर जिम पहलू से विचार कीजिए वह एक चमत्कार सिद्ध होगा। भाषा, साहित्य, वर्णनशैली, विषय, आशय आदि जिस पहलू से भी देखिए वह एक चमत्कार है। कुरआन जैसा कलाम पेश करने मे सारा जग असमर्थ है। मानवीय मार्ग दर्शन के लिए कुरआन काफी है। विचार और धारणा से लेकर व्यक्तिगत और सामूहिक कार्यों और प्रयासो के लिए कुरआन एक मार्गदर्शक ग्रन्थ है।

कुरआन के चमत्कार का उल्लेख स्वय कुरआन मे भी हुआ है। उदाहरणार्थ एक स्थान पर कहा गया है "और यह कुरआन ऐसा नही है कि अल्लाह के सिवा कोई अपनी ओर से घड लाये बल्कि यह तो जो कुछ इस से पहले (आ चुका) है उसकी तसदीक और (अल्लाह की) किताब का विस्तार है—इस मे कोई सन्देह नही—यह सारे ससार के 'रब' (पालनकर्त्ता स्वामी) की ओर से है। क्या ये लोग कहते हैं कि इस (नबी) ने उसे स्वय घड लिया है ? कहो : यदि तुम (अपने दावे मे) सच्चे हो, तो एक ही 'सूरा' उस की तरह बना लाओ। और अल्लाह के अतिरिक्त जिसको चाहो (इस कार्य मे) अपनी सहायता के लिए बुला लो। —सूरा यूनुस आयत ३७-३८।

अत्युक्ति से परहेज

عَنْ رَافِعِ بْنِ خَدِيجٍ قَالَ قَدِمَ النَّبِيُّ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ الْمَدِينَةَ وَهُمْ
يَأْبُرُونَ النَّخْلَ. فَقَالَ مَا تَصْنَعُونَ؟ قَالُوا كُنَّا نَصْنَعُهُ، قَالَ. لَعَلَّكُمْ لَوْ
لَمْ تَفْعَلُوا كَانَ خَيْرًا فَتَرَكُوهُ فَنَقَصَتْ، قَالَ: فَذَكَرُوا ذٰلِكَ لَهُ فَقَالَ إِنَّمَا
أَنَا بَشَرٌ إِذَا أَمَرْتُكُمْ بِشَيْءٍ مِنْ أَمْرِ دِينِكُمْ فَخُذُوا بِهِ وَإِذَا أَمَرْتُكُمْ بِشَيْءٍ
مِنْ رَأْيٍ فَإِنَّمَا أَنَا بَشَرٌ ——— مسلم

१ हजरत राफेअ बिन खदीअ रजि० कहते हैं कि नबी सल्ल० मदीना आये, तो उस समय मदीना वाले खजूर की 'ताबीर' किया करते थे। आप ने कहा यह क्या करते हो ? लोगो ने कहा . हम ऐसे ही करते आये है। आप ने कहा . यदि तुम ऐसा न करो, तो शायद अच्छा हो। लोगो ने इस को छोड दिया। फलत पैदावार कम हो गई[1]। उन्होने आप से इस का जिक्र किया तो आप ने कहा मैं तो केवल एक मनुष्य हूँ, जब मैं तुम्हे तुम्हारे किसी 'दीन' के (धर्म सम्बन्धी) मामले में हुक्म दूँ, तो तुम उसे ले लो और जब तुम्हे अपनी सम्मति से कुछ बताऊँ, तो बस मैं

१, खजूर की 'ताबीर' से अभिप्रेत एक प्रकार की पैवन्दकारी है। खजूर के मादा वृक्ष के शगूफे मे नर वृक्ष का शगूफा रख दिया करते थे। इस प्रकार नर व मादा के मिलने से फस्ल अच्छी आती थी। नबी सल्ल० ने 'ताबीर' के बारे मे 'सहाबा' से पूछा तो वे इस के सिवा कुछ न बता सके कि हम इसे करते आये हैं। आपने कुछ सकोच के साथ इसे छोड देने की सम्मति दी, तो फस्ल कम आई।

इस 'हदीस' से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि आप एक मनुष्य थे कोई अलौकिक व्यक्तत्व आपका नही था। इसलिए यह आवश्यक नही था कि बागबानी के बारे मे आप का अनुमान सही ही निकलता। आप बागबानी, कृषि, और शिल्प कला आदि सिखाने आये भी नही थे। परन्तु जिन मामलों मे 'दीन' (धर्म) ने मार्ग दिखाया है उन मे आपका सनुसरण अनिवार्य है। और उनमे आप के कथन के सत्य होने मे कुछ सन्देह न होना चाहिए। जीवन के आध्यात्मिक, नैतिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक आदि समस्त क्षेत्र 'दीन' मे सम्मिलित है और आप ने अल्लाह की ओर से इन सभी क्षेत्रों और विभागो मे मार्गदर्शन का कार्य किया है। इन मे आप के आदेशो का पालन करना हमारे लिए आवश्यक है।

एक मनुष्य हूँ[२] । —मुस्लिम

२ हज़रत इब्न उमर रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · मुझे हद से न वढाओ जैसा कि 'नसारा' (ईसाइयों) ने मरयम के बेटे (हज़रत ईसा मसीह अ०) को हद से वढा दिया। मैं तो बस अल्लाह का बन्दा और उस का 'रसूल' हूँ। अत मुझे अल्लाह का बन्दा और उस का 'रसूल' कहा करो[३]। —बुख़ारी, मुस्लिम

३ हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने 'जुह्र' (की नमाज) में पाँच ('रकअतें') पढी। आप से कहा गया कि क्या नमाज में इज़ाफा (परिवर्द्धन) हुआ है ? आप ने कहा नही। तो, ('सहावा' ने) कहा · आप ने पाँच 'रकअतें' पढी, तो आप ने दो 'सजदे' किये, इस के पश्चात् कि आप सलाम फेर चुके थे (अर्थात् नमाज़ पूरी कर चुके थे)। एक 'रिवायत' मे है कि आप ने कहा : मैं तुम जैसा एक मनुष्य हूँ, जैसे तुम भूलते हो मैं भी भूलता हूँ, तो जब मैं भूलूँ, तो मुझे याद दिला दो। और जब तुम में से किसी को अपनी 'नमाज' मे सन्देह हो तो वह सही बात को जानने की कोशिश करे फिर उसके अनुसार 'नमाज' पूरी करे फिर सलाम फेरे[४]।—बुख़ारी, मुस्लिम

४ हज़रत उम्मे सलिमा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मैं एक मनुष्य ही हूँ। तुम लोग अपने झगडे लेकर मेरे पास आते हो, सम्भव है कि तुम मे से कोई अपने प्रमाण को बना-सँवार कर बयान करने मे दूसरे से बढ कर हो और मैं (उस के बयान से प्रभावित हो कर) जैसा उस से सुनूँ उस के अनुसार उस के हक में फैसला कर दूँ, तो यदि मैं किसी के भाई के हक का फैसला उस के हक

---

२ दूसरी 'रिवायत' मे है कि आप ने कहा "सासारिक मामलो मे तुम अधिक खबर रखते हो"।

३ अर्थात् मैं तो अल्लाह का बन्दा हूँ। उस ने मुझे अपना 'रसूल' अवश्य बनाया है इस से अधिक मैं कुछ नही हूँ। कही ऐसा न हो कि तुम अत्युक्ति से काम लो और मुझ से ऐसी विशेषताओं का सम्बन्ध जोडने लगो जो केवल अल्लाह के लिए विशिष्ट है। ईसाइयो ने हजरत मसीह को अल्लाह का बेटा कहा और उन्हे मानवीय स्तर से उच्च दर्जा दे दिया। तुम ऐसा न करना कि मुझे ईश्वर या ईश्वर का बेटा या अवतार समझने लग जाओ। मैं ईश्वर कदापि नही हूँ केवल अल्लाह का बन्दा हूँ।

४ इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि नबी सल्ल० मनुष्य होने की दृष्टि से दूसरे मनुष्यो की तरह मनुष्य थे।

में कर दूँ, तो वह उसे कदापि न ले क्योंकि जो-कुछ इस फैसले से उसे मिला है वह उसके लिए आग का एक अँगारा है[५]। —बुखारी, मुस्लिम

नबी सल्ल० की विनम्रता एवं दास्य भाव

عَنْ مُطَرِّفِ بْنِ عَبْدِ اللهِ بْنِ الشِّخِّيْرِ عَنْ أَبِيْهِ قَالَ. أَتَيْتُ النَّبِيَّ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ وَهُوَ يُصَلِّيْ وَلِجَوْفِهِ أَزِيْزٌ كَأَزِيْزِ الْمِرْجَلِ يَعْنِيْ يَبْكِيْ. وَفِيْ رِوَايَةٍ قَالَ رَأَيْتُ النَّبِيَّ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ يُصَلِّيْ وَفِيْ صَدْرِهِ أَزِيْزٌ كَأَزِيْزِ الرَّحَى مِنَ الْبُكَاءِ ——— احمد، نسائی، ابوداود

१. मुतर्रिफ बिन अब्दुल्लाह बिन शिख्खीर अपने पिता से 'रिवायत' करते हैं कि उन्होंने कहा : मैं एक बार नबी सल्ल० की सेवा में हाजिर हुआ। उस समय आप नमाज़ पढ रहे थे आपके सीने से व्यग्र और भयभीत स्वर में ऐसी आवाज निकल रही थी जैसे हाँडी के जोश मारने की आवाज होती है। दूसरी 'रिवायत' मे है मैंने आपको 'नमाज' पढते देखा और रोने के कारण आपके सीने से चक्की जैसी आवाज आ रही थी[१]। —अहमद, नसई, अबूदाऊद

२. हज़रत मुगीरह रजि० बयान करते हैं कि नबी सल्ल० (नमाज में) इतनी देर तक खडे रहे कि आपके पाँव सूज गये। इस पर आपसे कहा कहा गया कि "आपके तो अगले-पिछले सब गुनाह क्षमा किये जा चुके है आप यह कष्ट क्यों करते हैं? आपने कहा तो क्या मैं (अल्लाह का) कृतज्ञ दास न बनूँ[२]? —बुखारी, मुस्लिम

---

५ यह 'हदीस' इस विषय मे स्पष्ट है कि नबी सल्ल० अल्लाह के 'रसूल होने के बावजूद मनुष्य ही थे। अत आप के बारे मे अत्युक्ति से बचना चाहिए। आप को किसी ऐसे गुण से युक्त समझना सही न होगा जिस से केवल ईश्वरीय सत्ता ही युक्त हो सकती है। जैसे गैब का जानने वाला होना, सर्वशक्तिमान् होना आदि।

१ इस हदीस मे भली-भाँति इसका अन्दाजा किया जा सकता है कि आपको अल्लाह की महानता और उसके प्रताप एव प्रतिष्ठा का कितना एहसास था। और आपका हृदय दास्यभाव से कितना परिपूर्ण था।

२ अर्थात् यद्यपि अल्लाह मेरा रक्षक है और उसने मेरी भूल-चूक को क्षमा भी कर दिया है परन्तु यह उसकी दया और कृपा है। और उसकी इस दयालुता

३. हजरत इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा, मेरे बारे में अत्युक्ति से काम न लो जैसा कि 'नसारा' (ईसाइयों) ने मरयम के बेटे (हजरत ईसा मसीह) के बारे में अत्युक्ति से काम लिया। मैं तो बस अल्लाह का बन्दा (दास, सेवक) और उसका एक 'रसूल' हूँ अतः मुझे अल्लाह का बन्दा और उसका रसूल कहो[३]।

--बुखारी, मुस्लिम

४. हजरत आइशा रजि० कहती हैं कि एक रात मैंने नबी सल्ल० को शय्या पर न पाया तो मैं ने आपको तलाश किया तो मेरा हाथ आपके पाँव के तलवों पर पड़ गया. आप 'सजदे' में थे और कह रहे थे हे अल्लाह ! मैं तेरे क्रोध एवं प्रकोप से तेरी प्रसन्नता की शरण लेता हूँ, और तेरे दण्ड एवं यातना से तेरी क्षमा की शरण लेता हूँ और तेरी पकड़ से तेरी ही शरण लेता हूँ। पूर्ण रूप से तेरी प्रशंसा करने का मुझे सामर्थ्य नहीं है, तू वैसा ही है जैसी तूने स्वयं अपनी प्रशंसा की है[४]।

—मालिक, तिरमिज़ी, अबूदाऊद

पर स्वभावतः बन्दे को और अधिक उसका कलश होना चाहिए और ज्यादा-से-ज्यादा उसकी सेवा में विनम्रता और अपना दास्यभाव प्रदर्शित करना चाहिए।

३. अर्थात् मेरी ऐसी प्रशंसा न करना कि मुझे दासता के स्तर से उच्च देखने लगो उससे पहले ईसाइयों ने ऐसा दुःसाहस किया है। उन्होंने हजरत मसीह की प्रशंसा में अत्युक्ति से काम लिया और उन्हें ईश या ईश्वर का पुत्र बना लिया, हालाँकि मसीह अ० अल्लाह के केवल एक चुने हुये श्रेष्ठ बन्दे और पैग़म्बर थे। मुझे तुम अल्लाह का एक बन्दा और उसका रसूल ही समझो, इससे अधिक मैं और कुछ नहीं हूँ।

४ इस हदीस से भी नबी सल्ल० की हालत और आपकी मनोदशा पर प्रकाश पड़ता है। 'हदीसों' में आपकी बहुत सी दुआओं और प्रार्थनाओं का उल्लेख किया गया है जिनके अध्ययन से प्रत्यक्षतः यह बात मालूम होती है कि आप दासता के उच्च स्थान पर पहुँचे हुये थे। आपकी भावनायें, मनोवेग और अन्तःतरंगें दासता के रंग में ललित थी। आपकी दुआयें वास्तव में ईश-ज्ञान की महान् निधि है। ये दुआयें बताती है कि आपको अल्लाह से कितना गहरा और हार्दिक सम्बन्ध था। आपका हृदय सूक्ष्म एवं पवित्रतम भावों का आगार था। आपका हृदय सदैव अल्लाह के प्रताप एवं सौन्दर्य की अनुभूति से आच्छादित रहता था। अल्लाह के मुकाबले में सारे संसार की विवशता एवं दुर्बलता आप पर दिन के प्रकाश की भाँति विदित थी।

५. हजरत आइशा रजि० बयान करती हैं कि नबी सल्ल० का हाल यह था कि जब वायु तेज चलती तो आप कहते "हे अल्लाह ! मैं तुझ से माँगता हूँ अच्छाई इस वायु की और अच्छाई उसकी जो-कुछ कि इस में है और अच्छाई उसकी जिस (उद्देश्य) के लिए यह भेजी गई है। और मैं तेरी शरण चाहता हूँ बुराई से इस वायु की और उसकी बुराई से जो कुछ कि इस में है और उसकी बुराई से जिस (उद्देश्य) के लिए यह भेजी गई है।" और जब आकाश मे बादल आता तो आपका रंग बदल जाता था और घबराहट में कभी बाहर आते और कभी भीतर जाते, कभी आगे आते और कभी पीछे हटते, फिर जब वर्षा हो जाती तो आपकी यह हालत दूर हो जाती[५]। हजरत आइशा रज़ि० आपकी इस हालत को जान गई तो आप से (इस के बारे में) पूछा। आपने कहा : हे आइशा ! कदाचित् यह बादल ऐसा ही हो जिसके बारे मे आद जाति ने कहा था जब उन्होंने बादल को अपनी उपत्यकाओं की ओर बढते देखा, तो कहने लगे— यह घटा उठी है जो हम पर वर्षा करेगी[६]। —बुख़ारी, मुस्लिम

६. हज़रत अबू मूसा रजि० कहते हैं कि एक बार सूर्यग्रहण लगा

५ हज़रत आइशा की इस हदीस से भी यह बात मालूम होती है कि नबी सल्ल० के हृदय पर अल्लाह का भय और डर कितना ज़्यादा छाया रहता था। तनिक भी तेज़ हवा चले तो आप घबरा जाते और अल्लाह से प्रार्थना करने लगते थे कि हे अल्लाह ! यदि इसमे कोई बुराई और आपदा है तो हमे उस से बचा ले और यदि इसमे कोई अच्छाई और भलाई है तो हम तुझ से उसके इच्छुक हैं। बादल देखते तो आपका रंग बदल जाता, आपको अल्लाह का वह प्रकोप याद आ जाता जो आद नामक जाति पर हुआ था। हजरत हूद अ० की सरकश और अवज्ञाकारी जाति आद पर अज़ाब बादल के रूप मे आया था। (दे० कुरआन सूर अल-अहकाफ आयत २४) जब उनके लोगों ने बादल को अपने भूभाग की ओर बढते हुये देखा, तो लगे खुशियाँ मनाने कि वर्षा होगी हालाँकि वह अजाब की आँधी थी, जो तबाही लेकर आई थी। आद जाति जिस क्षेत्र मे आबाद थी उसे कुरआन मे 'अल-अहकाफ' कहा गया है। इससे अभिप्रेत अरब का दक्षिणीय भूभाग है। किसी समय मे यह एक हरे-भरे मैदान के रूप मे था।

६ नबी सल्ल० ने यहाँ कुरआन से एक आयत का टुकडा पेश किया है। आयत का शेष भाग यह है "(कहने लगे यह घटा उठी है जो हम पर वर्षा करेगी) जी नही, यह तो वह है जिसकी तुमने जल्दी मचा रखी थी, आँधी है, दुख-दायी अज़ाब लिये हुये।" (अल-अहकाफ २४)।

तो नबी सल्ल० घबरा कर उठ खडे हुये आप डर रहे थे कि कही वह (कियामत की) घडी न आ गई हो। मस्जिद मे आये और इतने लम्बे-लम्बे 'क़ियाम'[७], 'रुकूअ'[८] और 'सजदों'[९] के साथ नमाज पढी कि मैंने इतने लम्बे कियाम व रुकूअ करते आप को कभी नही देखा था[१०]। (नमाज़ अदा करने के बाद) आपने कहा ये निशानियाँ अल्लाह् किसी की मृत्यु या जीवन के कारण नही दिखता बल्कि इनके द्वारा अल्लाह अपने बन्दो को डराता है। जब इस प्रकार की कोई चीज देखो, तो दौड पड़ो उसकी याद की ओर उससे प्रार्थना करने और क्षमायाचना के लिए।[११]

—बुख़ारी, मुस्लिम

---

७ नमाज़ मे खडे होने की स्थिति।

८. नमाज़ मे अल्लाह् के सम्मुख झुकने की स्थिति।

९. नमाज़ मे अल्लाह के सामने बिलकुल बिछ जाने की स्थिति।

१०. आंधी, ग्रहण आदि के अवसर पर अल्लाह् की महानता, प्रताप और गौरव का एहसास हद दर्जा बढ जाता था। आप ऐसे अवसर पर अल्लाह की सेवा मे अधिक-से-अधिक अपनी विनम्रता, दीनता और निर्बलता का प्रदर्शन करते थे इस प्रदर्शन का उत्तम साधन 'रुकूअ' और सजदे ही हो सकते है।

११ अर्थात् इन निशानियो का सम्बन्ध किसी के मरने या जीने से कदापि नही है जैसा कि अज्ञान के कारण कुछ लोग समझते है बल्कि यह निशानियाँ तो अल्लाह् की बडाई और उसके बल और सामर्थ्य को प्रदर्शित करती है। इस तरह् की निशानियो को देखकर दिलो मे अधिक-से-अधिक अल्लाह् का भय उत्पन्न होना चाहिए और उससे अपनी भलाई और कल्याण के लिए अधिक-से-अधिक प्रार्थनाएँ करनी चाहिएँ। इन निशानियो को देखने के बाद भी यदि मनुष्य अल्लाह् को याद न करे और उसकी ओर से असावधान ही रहे, न तो उसकी ओर पलटे और न उससे क्षमा की प्रार्थना करे, तो समझ लेना चाहिए उसका हृदय मर चुका है। उसमे वास्तविक चेतना और जीवन शेष नही है। ग्रहण आदि को देखकर साधारणतया हमारा ध्यान उसके भौतिक एव प्राकृतिक कारणो की ओर जाता है। हम उस से वह शिक्षा ग्रहण नही करते जो वास्तव मे हमे ग्रहण करनी चाहिये।

एक 'हदीस' मे है कि नबी सल्ल० ने कहा अज्ञान काल मे लोग कहते थे कि चन्द्रमा और सूर्य मे ग्रहण पृथ्वी के किसी महान व्यक्ति की मत्यु ही पर लगता है और वास्तविकता यह है कि उनको न तो किसी की मृत्यु से ग्रहण लगता है और न उसके जीने के कारण, ये दोनो (चन्द्र और सूर्य) अल्लाह के पैदा किए हुए हैं। अल्लाह जो चाहता है अपनी पैदा की हुई चीज़ मे परिवर्तन—

७ हजरत जाबिर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम मे से किसी का कर्म उसे 'जन्नत' में नही ले जायेगा और न उसे (दोजख की) आग से बचा सकेगा और न मुझे ही (मेरा कर्म 'जन्नत' मे ले जायेगा और यातना से बचायेगा) परन्तु अल्लाह की दयालुता से[१२]। —मुस्लिम

८. हजरत अबू उमामह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · मेरे रब (पालनकर्ता प्रभु) ने मेरे सामने यह बात रक्खी कि मक्का की उपत्यका को सोना बना दे। मै ने कहा · नही, हे रब! बल्कि (यह चाहता हूँ कि) मैं एक दिन तृप्त हूँ और एक दिन भूखा रहूँ। जब मै भूखा हूँ तो तेरे आगे विनम्रता दिखाऊँ और तुझे याद करूँ और जब तृप्त हूँ तो मैं तेरी हम्द (प्रशंसा) करूँ और तेरे आगे कृतज्ञता दिखलाऊँ[१३]। —अहमद, तिरमिज़ी

९ हजरत असवद रजि० कहते है कि मैं ने हजरत आइशा (रजि०) से पूछा नबी सल्ल० अपने घर में क्या किया करते थे? उन्हो नें कहा अपने घर वालों की आवश्यकताये पूरी करते थे परन्तु जब

कर देता है, अत जब इनमे किसी को ग्रहण लगे तो 'नमाज़' पढो यहाँ तक कि ग्रहण समाप्त हो जाये या अल्लाह कोई दूसरी बात ज़ाहिर करे"। —नसई

१२ आपके इस कथन से मालूम होता है कि आप इस बात को कभी नही भूलते थे कि आप अल्लाह के दास और बन्दे हैं। और अल्लाह महान् और प्रतापवान है। आपके हृदय पर अल्लाह का भय और डर हर समय छाया रहता था। आप किसी समय भी निर्भय और स्वच्छन्द नही रहते थे। आप सदा अल्लाह के आदेशो और उसकी इच्छा के अधीन रह कर ही जीवन व्यतीत करते थे।

१३ अर्थात् मैं धन-दौलत का अभिलाषी नही हूँ बल्कि मुझे जो धन अपेक्षित है वह है विनयभाव और दासता। मैं तो यह समझता हूँ तेरी हम्द (प्रशसा) करूँ, तेरा कृतज्ञ बनूँ और विवशता की हालत मे तेरे आगे गिडगिड़ाऊँ और तुझे याद करूँ।

मालूम हुआ कि मनुष्य के लिए भूख और तृप्ति दोनो ही अभीष्ट हैं परन्तु शर्त यह है कि वह भूख मे अल्लाह के सामने विनम्रता एव विनयभाव का प्रदर्शन करे और जब तृप्त हो तो अल्लाह की हम्द (प्रशसा) करे और उस के आगे कृतज्ञता दिखलाये। मनुष्य के जीवन मे मूल्यवान वस्तु यही विनयभाव, हम्द (प्रशसा) और कृतज्ञता है न कि कुबेर का धन, वैभव और सासारिक सुख और चैन।

नमाज का समय आता तो तुरन्त नमाज के लिए जाते[१४]। —बुखारी

१०. हजरत अनस रजि० कहते है कि सहाबा रजि की निगाह में अल्लाह के रसूल सल्ल० से अधिक कोई प्रिय न था, फिर भी जब वे आप को देखते तो खडे न होते क्योकि वे जानते थे कि यह बात (आप को) नापसन्द है[१५]। —तिरमिजी

११ हजरत अब्दुल्लाह बिन सलाम से उल्लिखित है कि जब अल्लाह के रसूल सल्ल० बैठे हुये बाते करते तो प्राय आप आकाश की ओर निगाह उठाते रहते[१६]। —अबूदाऊद

१२. हज़रत आइशा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . हे आइशा! यदि मैं चाहूँ तो मेरे साथ सोने के पहाड चला करे। मेरे पास एक 'फिरिश्ता' आया जिसकी कमर 'काबा' के बराबर थी[१७]। उस ने कहा कि तुम्हारा 'रब' तुम्हे सलाम कहता है और कहता है कि यदि चाहो तो 'बन्दा पैगम्बर'[१८] बनो और चाहो तो 'बादशाह पैगम्बर' बनो। मैंने 'जिबरील' की ओर देखा उन्होंने कहा कि अपने

१४ यह अल्लाह की बड़ाई का ही एहसास था कि 'नमाज़' का समय आ जाने पर आप नमाज़ के अलावा किसी दूसरी चीज़ की ओर ध्यान नही देते थे बल्कि तुरन्त नमाज़ की तैयारी करते थे।

१५ एक दूसरी 'रिवायत' अबू उमामा रज़ि० से है। वे कहते है कि एक बार अल्लाह के रसूल सल्ल० लाठी का सहारा लिये हुए बाहर आये हम आपके आदर एव सम्मान के लिए खडे हो गए। आपने कहा "उस तरह खडे मत हुआ करो जिस तरह 'अजम' के लोग (गैर अरब) खडे होकर एक-दूसरे का सम्मान करते हैं। इन 'रिवायतो' से मालूम हुआ कि आपको वह तरीका पसन्द था जिसमे ज्यादा-से-ज्यादा मनुष्य की दासता का प्रदर्शन होता हो। जिस रीति से दास्य-भाव एव दास्य रीति को आघात पहुँचता हो उसे आप कभी भी पसन्द नही करते थे।

१६ अल्लाह से आपको हर समय आशा लगी रहती, उसके आदेशो का आपको इन्तजार रहता। अल्लाह की महानता आपके लिए केवल कल्पना मात्र चीज़ नही थी बल्कि जीवन की सबसे बडी प्रत्यक्ष वास्तविकता थी। अपने जीवन मे आप सबसे अधिक जिस चीज़ का ध्यान रखते थे वह अल्लाह की प्रसन्नता के अतिरिक्त कोई दूसरी चीज़ न थी।

१७ अर्थात् फिरिश्ता बहुत ही लम्बे कद का था।

१८ अर्थात् वह पैगम्बर, दासता और दीनता ही जिसकी विशेषता हो।

आपको पस्त (विनम्र) कर दो[१९]— इब्न अब्बास की एक 'रिवायत' में है कि फिरिश्ते की बात सुन कर अल्लाह के रसूल सल्ल० ने जिबरील की ओर रुख़ किया मानो उनसे परामर्श लेना चाहा। जिबरील ने अपने हाथ से सकेत किया कि विनम्रता अपनाओ— मैं ने कहा मैं बन्दा पैगम्बर बनना चाहता हूँ। हज़रत आइशा रजि० कहती है कि इस के बाद अल्लाह के 'रसूल' सल्ल० ने कभी तकिया लगा कर खाना नही खाया। आप कहते थे मैं इस तरह खाना खाता हूँ जैसे दास खाता है और इस तरह बैठता हूँ जिस तरह दास बैठता है। —शर्हुस्सुन्नह

आपका स्वर्गवास

عَنْ عُقْبَةَ بْنِ عَامِرٍ قَالَ صَلَّى رَسُولُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ عَلٰى قَتْلٰى اُحُدٍ
بَعْدَ ثَمَانِ سِنِيْنَ كَالْمُوَدِّعِ لِلْاَحْيَاءِ وَالْاَمْوَاتِ ثُمَّ طَلَعَ الْمِنْبَرَ فَقَالَ. اِنِّيْ بَيْنَ اَيْدِيْكُمْ
فَرَطٌ وَاَنَا عَلَيْكُمْ شَهِيْدٌ وَاِنَّ مَوْعِدَكُمُ الْحَوْضُ وَاِنِّيْ لَاَنْظُرُ اِلَيْهِ وَاَنَا فِيْ مَقَامِيْ هٰذَا
وَاِنِّيْ قَدْ اُعْطِيْتُ مَفَاتِيْحَ خَزَائِنِ الْاَرْضِ وَاِنِّيْ لَسْتُ اَخْشٰى عَلَيْكُمْ اَنْ
تُشْرِكُوْا بَعْدِيْ وَلٰكِنِّيْ اَخْشٰى عَلَيْكُمُ الدُّنْيَا اَنْ تَنَافَسُوْا فِيْهَا وَتَزَادَ بَعْضُهُمْ
فَتَقْتَتِلُوْا كَمَا هَلَكَ مَنْ كَانَ قَبْلَكُمْ ——— بخاری، مسلم

१. हजरत उकबा बिन आमिर रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने उहुद के 'शहीदो' पर आठ वर्ष के पश्चात् 'नमाज' पढी[१] मानो आप जीवित लोगो और मुरदो को रुखसत कर रहे हैं। फिर आपने मिबर पर पदार्पण किया और कहा "मैं तुम्हारे आगे इस तरह जा रहा हूँ जैसे काफिले का 'मीर मन्जिल'[२] प्रस्थान करता है[३]। मै तुम पर

१९ अर्थात् विनम्र एव विनयशील वनो।

१ कुछ लोगो के विचार मे यहाँ 'नमाज' से अभिप्रत 'नमाज' जनाजा है जो मुरदो की भलाई और उन के हक मे अल्लाह से दुआ करने के लिए पढी जाती है। आपने 'उहुद' के युद्ध मे वीरगति को प्राप्त होने वाले शहीदो के लिए अल्लाह से दुआ की।

२ अर्थात् काफिले या यात्री-दल से आगे ठिकाने पर पहुँच कर खाने-पीने और दूसरी आवश्यक चीजो की व्यवस्था करने वाला प्रधान कर्मचारी।

३ अर्थात् जिस प्रकार काफिले का 'मीर मजिल' काफिले मे आगे बढकर मजिल

गवाह हूँ और तुम्हारे वादे का स्थान हौज़ है, और अपनी इस जगह खड़ा हुआ उसे देख रहा हूँ[४]। और मुझे जमीन के खज़ानों की कुंजियाँ प्रदान की गई है[५]। तुम्हारे बारे मे मुझे इस का तो डर नही कि तुम मेरे बाद 'शिर्क' करोगे, परन्तु मुझे तुम्हारे बारे मे इस का डर है कि दुनिया की चाहत मे पड जाओ[६]"। कुछ उल्लेखकारों ने इस 'रिवायत' मे ये शब्द ज्यादा बयान किये है : "फिर तुम आपस मे लड़ाई करो और विनष्ट हो जिस प्रकार तुम से पहले लोग बिनष्ट हुये[७]"। —बुखारी, मुस्लिम

२. हज़रत अबू मूसा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब अल्लाह अपने बन्दो मे से किसी समुदाय पर दयालुता का निश्चय करता है, तो उस के 'नबी' को उस समुदाय से पहले (ससार से) उठा लेता है और उसे उस समुदाय का मीर मज़िल और अग्रगामी

पर काफिले की आवश्यकताओ की सामग्री जुटाता और काफिले की सुविधा के लिए उचित व्यवस्था करता है ताकि काफिले के लोग जब वहाँ पहुँचे, तो उन्हे किसी प्रकार की असुविधा न हो, उसी प्रकार इस दुनिया से कूच करना भी 'मीर मज़िल' की हैसियत से है। मैं तुम्हे 'आखिरत' मे 'मीर मज़िल' की हैसियत से मिलूँगा।

नबी सल्ल० ने यहाँ अपने प्रिय साथियों और अनुयायियो को तसल्ली दी है ताकि वे आपकी जुदाई से होने वाले शोक और दुख का सहन कर सकें।

४ मैंने सत्य तुम तक पहुँचा दिया है। अब मैं 'हौज़ कौसर' (हौज़ कौसर का वर्णन आखिरत के अध्याय मे देखिए) पर तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगा। तुम उस हौज़ पर मुझ से मिलने की चेष्टा करो।

५. अर्थात् तुम्हारे लिए अल्लाह विजय के द्वार खोल देगा। धरती पर तुम्हे राज-सत्ता प्राप्त होगी। तुम से जो टकरायेगा टुकडे-टुकडे हो जायेगा। कितने ही राज्य तुम्हारे अधिकार क्षेत्र मे आयेगे। इस्लामी इतिहास का अध्ययन करने वाले जानते है कि नबी सल्ल० की यह भविष्यवाणी अक्षरशः सत्य सिद्ध हुई। थोडे ही समय मे धरती के विस्तृत क्षेत्र पर इस्लामियो का कब्ज़ा हो गया।

६ अर्थात् ऐसा तो न होगा कि तुम सब 'मुश्रिक' (बहुदेववादी) जाति बन जाओ परन्तु इसकी पूरी सम्भावना है कि तुम दुनिया से प्रेम करने लग जाओ और 'आखिरत' के प्रति अपने कर्त्तव्यो को भुला दो।

७ अर्थात् तुम आपस ही मे लडने लगो और इस तरह तुम्हारा जत्था छिन्न-भिन्न हो जाये और तुम्हारी शक्ति क्षीण हो जाये।

बना देता है । और जब वह किसी समुदाय को विनष्ट करने का निश्चय करता है तो उस के 'नबी' के जीवन ही में उस को यातना देता है और 'नबी' की आखो के सामने उसे विनष्ट कर देता है, ताकि उस को विनष्ट कर के 'नबी' की आखों को ठढक प्रदान करे जव कि उस समुदाय ने उस (नबी) को झुठलाया और उस की अवज्ञा की है[८] । —मुस्लिम

३ हजरत अबू हुरैरह रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कसम है उस (अल्लाह) की जिस के हाथ मे मुहम्मद के प्राण है, तुम में से प्रत्येक पर एक दिन ऐसा आयेगा कि वह मुझे न देखेगा । फिर उसे मेरा देखना अपने घर वालों और अपने माल से बढ कर प्रिय होगा । मुस्लिम

४ हजरत अनस रजि० कहते है कि जिस दिन अल्लाह के रसूल सल्ल० ने मदीना में प्रवेश किया तो (आप के आने से) हर चीज़ प्रकाशमान हो गई फिर जब वह दिन आया जव आप का स्वर्गवास हुआ तो हर चीज अँधेरी हो गई और हम अभी आपके दफ्न के कार्य मे ही लगे थे, अपने हाथ की मिट्टी को झाडा भी न था कि हम ने अपने दिलो को बदला हुआ, अजनबी पाया[९] । —तिरमिज़ी

५ हज़रत आइशा रजि० कहती है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने (अपनी मृत्यु के पश्चात्) न तो कोई दीनार छोडा, न दिरहम न कोई बकरी और न ऊँट और न आपने किसी चीज की वसीयत की[१०] । —मुस्लिम

---

८ अर्थात् वह अवज्ञाकारी और सत्य-विरोधी लोगो के बुरे परिणाम को अपनी आखो से देख ले ।

९ अर्थात् हमारे दिलो की वह हालत बाकी न रही जो आपकी सगति और आपकी मौजूदगी मे रहती थी । आपके प्रस्थान के पश्चात् हम कितनी ही बरकतो से वचित हो गए । साफ मालूम होता था कि एक प्रकाश हम से छिन गया । अब प्रत्येक चीज़ हमे अन्धकार मे डूबी हुई दीख पडती थी । एक वह दिन था जब आपने मदीना मे पदार्पण किया था और आपके आने से हर चीज़ चमक उठी थी । आपने यहाँ से प्रस्थान किया, तो हर चीज़ पर उदासी छा गई ।

१० इस से बढकर आपके एक सच्चे 'रसूल' होने का क्या प्रमाण हो सकता है कि ससार मे आपने न तो अपने लिए कोई सम्पत्ति सचित की और न कोई महल और प्रासाद निर्माण कराया । इस लोक मे यात्री के समान आये और यात्री ही

६. हज़रत अबू बक्र रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा "हमारा कोई वारिस नही होता[11], जो-कुछ हम छोडे वह 'सदका' (दान) है। —बुखरी, मुस्लिम

७ हिशाम बिन उरवह्, अब्बाद बिन अब्दुल्लाह बिन जुबैर से 'रिवायत' करते है कि उन्हे नबी सल्ल० की पत्नी आइशा रजि० ने खबर दी कि उन्होने अल्लाह के रसूल सल्ल० को आप की मृत्यु से पहले कहते सुना जब कि आप उन के सीने से तकिया लगाए हुए थे और वे आप की ओर झुकी हुई दत्तचित थी "हे अल्लाह! मुझे क्षमा कर, मुझ पर दया कर और मुझे 'रफीक़ आला' (परम सगी) से मिला[12]।

मुवत्ता-ईमाम मालिक

की तरह यहाँ से वापस हुये। जीवन मे जिस चीज की ओर आपका विशेष ध्यान रहा वह यह कि अल्लाह का सन्देश लोगो तक पहुँचाने मे कोई असावधानी न हो और अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्त करने के प्रयास मे कोई कोई कोताही न होने पाये।

११. अर्थात् 'नबियो' और 'रसूलो' का कोई वारिस नही होता। यह बात उनकी महानता से गिरी हुई है कि वे अपनी औलाद के लिए धन-सम्पत्ति एकत्र कर जायें। उनकी दौड-धूप और कोशिशें सारे ही लोगो के लिए होती है।

१२ 'रफीक़ आला' (परम सगी) से सकेत 'नबियो' की जमात है जिसका निवास 'आला इल्लीयीन' मे है। देखिए सूरा अल-ततफीफ आयत १८-१९।

इल्लीयीन' का अर्थ होता है बहुत ऊँचे लोग, इस 'आयत' मे इससे अभिप्रेत उनका स्थान है।

एक विचार यह भी है कि 'रफीक आला' (परम सगी) अल्लाह ही का एक नाम है। मृत्यु के समय नबी सल्ल० के अन्तिम शब्द यही थे "अल्लाहुम्म रफीकिल आला" (हे अल्लाह 'रफीक आला'!) —बुखारी, मुस्लिम हज़रत आइशा रज़ि० से उल्लिखित।

आपके 'सहाबा' रज़ि०

عَنْ عِمْرَانَ بْنِ حُصَيْنٍ قَالَ: قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ خَيْرُ أُمَّتِيْ
قَرْنِيْ ثُمَّ الَّذِيْنَ يَلُوْنَهُمْ ثُمَّ الَّذِيْنَ يَلُوْنَهُمْ، ثُمَّ إِنَّ بَعْدَهُمْ قَوْمٌ يَشْهَدُوْنَ وَ
لَا يُسْتَشْهَدُوْنَ وَيَخُوْنُوْنَ وَلَا يُؤْتَمَنُوْنَ وَيَنْذِرُوْنَ وَلَا يَفُوْنَ وَيَظْهَرُ فِيْهِمُ
السِّمَنُ وَفِيْ رِوَايَةٍ وَيَحْلِفُوْنَ وَلَا يُسْتَحْلَفُوْنَ ——— بخاری ومسلم

१. हज़रत इमरान बिन हुसैन रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . "मेरे समुदाय के उत्तम लोग मेरे समय के लोग है। फिर वे लोग उत्तम है जो उनके सन्निकट हैं फिर वे लोग जो उन से सन्निकट है। फिर उनके पश्चात् वे लोग होगे जो बिना माँगे गवाही देगे। और ख़यानत (विश्वासघात और कपट) करेंगे, उनकी अमानतदारी (विश्वसनीयता) पर भरोसा नही किया जायेगा। वे 'नज्र' (भेट, प्रण, मन्नत) मानेगे किन्तु उसे पूरा नही करेगे। और उन में मासलता ज़ाहिर होगी।" और एक 'रिवायत' मे है "वे कसम खिलाये बिना कसम खायेगे[1]।" —बुख़ारी मुस्लिम

२. हज़रत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . मेरे समुदाय में मेरे 'सहाबा' खाने (भोजन) मे नमक की तरह है। नमक के बिना भोजन रुचता नही, ठीक नही होता[2]। —शर्हुस्सुन्नह

---

१. अर्थात् उन मे अधिकतर लोग ऐसे हो जो सत्यनिष्ठा, सज्जनता, मानवता और ज़िम्मेदारी के एहसास से बिल्कुल ख़ाली होगे।

इस 'हदीस' से 'सहावा' रज़ि० की महानता और श्रेष्ठता का पता चलता है। 'सहावा' को नवी सल्ल० का शुभ जीवन काल प्राप्त हुआ। यह बहुत बड़े सौभाग्य की बात है। एक 'हदीस' मे है कि आप ने कहा: मेरे 'सहावा' की प्रतिष्ठा और आदर करो क्योकि वे तुम मे सव से अच्छे हैं। फिर वे लोग जो उन के सन्निकट है, फिर वे लोग जो उन के सन्निकट हैं। इस के वाद झूठ फैल जायेगा। —नसई

२ इस 'हदीस' से भी 'सहावा' की श्रेष्ठता विदित होती है। यदि नमक न हो तो वेमज़ा मालूम होता है। नमक वहुत सी हानिकर तत्वो का निवारक और सुधारक भी है। 'सहावा' मुस्लिम समुदाय के लिए मज़िल के प्रतीक

३. हज़रत अबू सईद खुदरी रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा मेरे 'सहाबा' को बुरा न कहो इसलिए कि यदि कोई तुम में से 'उहुद' के बराबर सोना खर्च करे तो वह 'सहाबा' के एक 'मुद्द' या आधा 'मुद्द'[३] को भी नही पा सकता।" —बुखारी, मुस्लिम

४. हज़रत इब्न उमर रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा जब तुम उन लोगो को देखो जो मेरे 'सहाबा' को बुरा कहते हैं, तो तुम कहो . तुम्हारी बुराई (इस बुरी हरकत) पर अल्लाह की लानत (धिक्कार) हो[५]।

५ हज़रत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · मेरे समुदाय मे मेरे समुदाय पर सबसे अधिक दयाशील अबू बक्र (रजि०) है और अल्लाह के आदेश के मामले मे सबसे ज्यादा सख्त (कडे) उमर (रजि०) है, और उनमें सबसे सच्चे लज्जावान उस्मान (रजि०), विरासत-विधान के सबसे बढ कर ज्ञानी ज़ैद बिन साबित (रज़ि०), सबसे बढ कर 'कारी' उबैय बिन कअब (रज़ि०) और हलाल व हराम (वैध व अवैध) का सबसे अधिक ज्ञान रखने वाले मुआज़ बिन जबल (रजि०) है। हर समुदाय का एक अमीन (विश्वसनीय व्यक्ति)

और उसका सौन्दर्य और शोभा हैं। उनके अनुसरण मे ही मुस्लिम समुदाय का जीवन और जागृति का रहस्य निहित है।

३ एक नाप और पैमाना है जिस मे सेर भर जौ आता है।

४. ईमान वालो का कर्तव्य है कि वे 'सहाबा' का आदर करें और अपशब्द उनके बारे मे कदापि प्रयोग न करें। 'सहाबा' और विशेष रूप से नबी सल्ल० के मुख्य 'सहाबा' का पद और स्थान अत्यन्त उच्च है। कोई व्यक्ति यदि 'उहुद' पर्वत के बराबर सोना अल्लाह की राह मे खर्च कर दे, तो उसका यह 'सदका' (दान) सहाबा के एक या आधे 'मुद्द' के बराबर भी नही हो सकता। 'सहाबा' को जिस दर्जा का 'ईमान' और हृदय की शुद्धता प्राप्त थी वह किसी दूसरे को कहाँ प्राप्त हो सकती है। अल्लाह की दृष्टि मे वास्तविक रूप से मूल्यवान वस्तु आदमी का 'ईमान' उसकी सत्यप्रियता और आत्मशुद्धता ही है।

५ मालूम हुआ कि 'सहाबा' से द्वेष या वैर रखना या उन्हे बुरा कहना किसी बुराई और अनाचार से कम नही है। और यह तिरस्कृत और घृणित कर्म है जिस से बचना आवश्यक है। माननीय 'सहाबा' का आदर और प्रतिष्ठा करना हमारे 'ईमान' का आवश्यक अग है।

होता है। इस समुदाय के अमीन अबू उबैदह बिन जर्राह (रज़ि०) हैं[१]।

—अहमद, तिरमिज़ी

६. हज़रत अब्दुर्रहमान बिन औफ रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा : अबू बक्र 'जन्नत' में हैं। उमर 'जन्नत' में हैं, उस्मान 'जन्नत' में हैं, अली जन्नत में हैं, तलहा जन्नत में हैं, जुबैर जन्नत में हैं, अब्दुर्रहमान बिन औफ जन्नत में हैं, सअद बिन अबी वक्क़ास जन्नत में हैं, सईद बिन ज़ैद जन्नत में हैं और अबू उबैदह बिन जर्राह जन्नत में हैं[७]।

—तिरमिज़ी

७ हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · जन्नत तीन आदमियों की अभिलाषी है अली, अम्मार, और सलमान की।

—तिरमिज़ी

८. हजरत अब्दुल्लाह बिन अम्र रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · चार आदमियों से कुरआन सीखो अर्थात् अब्दुल्लाह बिन मसऊद, सालिम मौला अबू हुज़ैफा, उबैय बिन कअब और मुआज बिन जबल से।

—बुखारी, मुस्लिम

६. इस 'हदीस' मे नबी सल्ल० के कुछ मुख्य 'सहाबा' (साथियो) की विशेषता का उल्लेख किया गया है। दयाशीलता हो या लज्जा या अमानतदारी (विश्वसनीयता) या नियम और विधान सम्बन्धी ज्ञान हो, इन सब का मुस्लिम समाज मे बडा महत्व है। नैतिकता, ज्ञान, कर्म आदि सभी गुणो से समुदाय के लोग सम्पन्न हो इसकी आवश्यकता पहले भी थी और हमारे युग मे भी इसकी आवश्यकता है। इस के बिना धर्म की स्थापना और स्थायित्व असम्भव है। इस के बिना धर्म का पालन सम्भव ही नही है।

७ इन दस व्यक्तियो को नबी सल्ल० ने दुनिया ही मे शुभ सूचना दे दी कि ये 'जन्नत' के बागो मे दाखिल होगे। इस 'हदीस' के कारण इन मुख्य 'सहाबा' को "अशरए मुबश्शरा" (दस शुभ सूचनाप्राप्त) की उपाधि दी गई है। इन श्रेष्ठ व्यक्तियो को अल्लाह के आज्ञापालन का उच्च पद प्राप्त था कि 'जन्नत' की खुशखबरी पाने के बाद भी ये कभी अल्लाह से निर्भय नही हुये और न कभी अपनी ज़िम्मेदारियो की ओर से गाफिल हुये। अल्लाह की महानता का एहसास और उस के 'रसूल' का जो प्रेम उन के मन मे बस गया था वह कभी निकल न सका। ये लोग जीवन के रहस्य और उसकी वास्तविकता को पा चुके थे। सत्यमार्ग के सिवा, इन का कोई दूसरा मार्ग कैसे हो सकता था। हज़रत अबू बक्र रज़ि० पर तो अल्लाह का ऐसा भय छा जाता था

९. हज़रत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा 'ईमान' का लक्षण 'अनसार' से प्रेम करना है और 'निफ़ाक' (कपट नीति) का लक्षण 'अनसार' से द्वेष एवं वैर है[८]। —बुखारी, मुस्लिम

१०. हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से उल्लिखित है कि हज़रत जिबरील नबी सल्ल० के पास आये तो कहा . हे अल्लाह के रसूल! ये खदीजा (रज़ि०) आ रही हैं। इनके साथ बरतन है जिस मे सालन या खाना है। जब वे आपके पास आ जायें, तो आप उन्हे उनके 'रब' की ओर से सलाम कहिए और मेरी ओर से भी[९]। और उन्हे एक मोती के महल की शुभ सूचना दीजिए जो 'जन्नत' में (उनके लिए) होगा जिसमे न शोर व कोलाहल होगा और न कष्ट व क्लेश होगा[१०]।

—बुखारी, मुस्लिम

११. हज़रत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा सारे ससार की स्त्रियों में केवल इनकी श्रेष्ठता मालूम कर लेना

कि वे ऐसी आहे भरते थे कि 'अव्वाहुम्मुनीब' (बहुत आहे भरने वाला) उन का लकब पड़ गया था।

८. 'अनसार' (मदीना के मुस्लिम लोग जो नबी के सहायक हुये) ने नबी सल्ल० के लाये हुये 'दीन' (धर्म) को उस समय स्वीकार किया जबकि मक्का वाले उसका इन्कार कर चुके थे। 'अनसार' ने आप को और आप पर 'ईमान' लाने वाले मुसलमानो को अपने यहाँ जगह दी और हर तरह से उनकी मदद की जबकि मक्का वालो ने मुसलमानो का जीना दूभर कर दिया था और उनकी दुश्मनी यहाँ तक पहुँच चुकी थी कि वे नबी सल्ल० को शहीद कर देने की योजना कर चुके थे। 'अनसार' की सेवाओ को कभी भुलाया नही जा सकता। यही कारण है कि उनके प्रेम को 'ईमान' की निशानी और उन से वैर रखने को 'निफ़ाक' (कपट नीति) कहा गया।

९ नबी सल्ल० की पत्नी हज़रत खदीजा रज़ि० की श्रेष्ठता का अन्दाजा इस से कीजिए कि उन्हे अल्लाह के विशेष 'फ़िरिश्ते' हजरत जिबराईल अ० ही का नही अल्लाह का भी सलाम आया है।

१० हज़रत खदीजा रज़ि० को तसल्ली दी जा रही है कि वे ससार के दुख और कष्ट की तनिक भी चिन्ता न करें। ये सारी तकलीफे समाप्त होने वाली हैं। अल्लाह उन्हे 'जन्नत' के ऐसे महल मे जगह देगा जिसमे किसी प्रकार का शोर और कोलाहल न होगा और न वहाँ किसी प्रकार का दुख और क्लेश होगा।

तुम्हारे लिए काफी है . इमरान की बेटी मरयम (रज़ि०), खुवेलद की बेटी ख़दीजा (रजि०), मुहम्मद की बेटी फ़ातिमा और फ़िरऔन की पत्नी आसिया[११]। —तिरमिज़ी

१२. हज़रत अबू सलमा रज़ि० से उल्लिखित है कि हज़रत आइशा रज़ि० ने बयान किया कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें (एक दिन) कहा : "हे आइशा ! ये जिबरईल हैं, तुम्हे सलाम कह रहे है।" हज़रत आईशा रज़ि० कहती हैं कि मैंने कहा : "व अलैहिस्सलाम व रहमतुल्लाह ।" वे कहती हैं कि आप वह कुछ देखते थे जो मैं न देखती थी[१२]।

—बुख़ारी, मुस्लिम

१३. हज़रत जाबिर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . मुझे 'जन्नत' दिखाई गई, मैंने वहाँ अबुल्लाह की स्त्री को देखा और अपने आगे मैं नें कदमों का चाप सुना देखा तो बिलाल (रज़ि०) थे[१३]। —मुस्लिम

---

११. ससार मे यो तो कितनी ही पुण्यवती और महान् व्यक्तित्व की स्त्रियो ने जन्म लिया है जिनका जीवन अत्यन्त उज्ज्वल था। उनमे ये चार पुण्यवती स्त्रियाँ ही बहुत हैं यदि हम इनके जीवन से शिक्षा प्राप्त करना चाहे। इनकी पवित्रता और आदर्शजीवन के विषय मे कोई सन्देह नही किया जा सकता। हज़रत मरयम और हज़रत आसिया के बारे मे कुरआन मे कहा गया है : "अल्लाह 'ईमान' लाने वालो के लिए फिरऔन की पत्नी को मिसाल मे पेश करता है, जब उसने कहा . 'रब' ! मेरे लिए अपने पास 'जन्नत' मे एक घर बना, और मुझे फिरऔन और उसके कर्म से छुटकारा दे, और छुटकारा दे मुझे ज़ालिम लोगो से; और इमरान की बेटी मरयम को (मिसाल मे पेश करता है) जिसने सतीत्व की रक्षा की, फिर हमने उसमे अपनी (ओर से) 'रूह' फूँकी। और उसने अपने 'रब' की बातों और उसकी 'किताबो' की तसदीक़ की और वह आज्ञाकारी और विनयभाव वाले व्यक्तियो मे से थी।"—सूरा अत-तहरीम आयत ११-१२।

१२ अर्थात् अल्लाह के 'रसूल' थे, आप परोक्ष लोक की कितनी ही वस्तुयें देखते थे, जिनको मैं न देख पाती थी।

इस 'रिवायत' से मालूम होता है कि हज़रत आइशा रजि० को भी अत्यन्त उच्च स्थान प्राप्त था। हज़रत जिबरील तक उन्हे सलाम कहते थे। वे लोग कितने नादान हैं जो ऐसी पुण्यवती स्त्री से, जिसे मुस्लिम समुदाय की माता होने का सौभाग्य प्राप्त हैं, द्वेष रखते हैं।

१३ नबी सल्ल० के 'सहाबा' की श्रेष्ठता के सम्बन्ध मे रिवायतें बहुत मिलती हैं, यहाँ उदाहरण के रूप मे केवल कुछ ही 'हदीसो' का उल्लेख किया गया है।

आपका अनुयायी समुदाय

عَنْ اَبِیْ مُوْسٰی قَالَ، قَالَ رَسُوْلُ اللّٰہِ صَلَّی اللّٰہُ عَلَیْہِ وَسَلَّمَ مَثَلُ الْمُسْلِمِیْنَ
وَالْیَھُوْدِ وَالنَّصَارٰی کَمَثَلِ رَجُلٍ اِسْتَاجَرَ قَوْمًا یَعْمَلُوْنَ لَہٗ عَمَلًا اِلَی اللَّیْلِ عَلٰی
اَجْرٍ مَعْلُوْمٍ فَعَمِلُوْا لَہٗ اِلٰی نِصْفِ النَّھَارِ، فَقَالُوْا لَا حَاجَةَ لَنَا اِلٰی اَجْرِكَ الَّذِیْ
شَرَطْتَ لَنَا وَعَمِلْنَا بَاطِلٌ، فَقَالَ، لَا تَفْعَلُوْا اَکْمِلُوْا بَقِیَّةَ عَمَلِکُمْ وَخُذُوْا
اَجْرَکُمْ کَامِلًا فَاَبَوْا وَتَرَکُوْا وَاسْتَاجَرَ اٰخَرِیْنَ بَعْدَھُمْ فَقَالَ اَکْمِلُوْا بَقِیَّةَ یَوْمِکُمْ
ھٰذَا وَلَکُمُ الَّذِیْ شَرَطْتُ لَھُمْ مِنَ الْاَجْرِ فَعَمِلُوْا حَتّٰی اِذَا کَانَ حِیْنَ صَلٰوةِ
الْعَصْرِ، قَالُوْا لَكَ مَا عَمِلْنَا بَاطِلٌ وَلَكَ الْاَجْرُ الَّذِیْ جَعَلْتَ لَنَا فِیْہِ۔ فَقَالَ
اَکْمِلُوْا بَقِیَّةَ عَمَلِکُمْ فَاِنَّمَا بَقِیَ مِنَ النَّھَارِ شَیْءٌ یَسِیْرٌ فَاَبَوْا فَاسْتَاجَرَ
قَوْمًا یَعْمَلُوْنَ بَقِیَّةَ یَوْمِھِمْ فَعَمِلُوْا فَاسْتَکْمَلُوْا اَجْرَ الْفَرِیْقَیْنِ کِلَیْھِمَا فَذٰلِكَ
مَثَلُھُمْ وَمَثَلُ مَا قَبِلُوْا مِنْ ھٰذَا النُّوْرِ ـــــــــ بخاری

१ हज़रत अबू मूसा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : मुसलमानो और यहूद और 'नसारा' (ईसाई) की मिसाल ऐसी है जैसे एक व्यक्ति ने एक जाति को निश्चित मजदूरी पर रात तक के लिए कार्य पर लगाया। उन्होने (उस जाति वालों ने) दोपहर तक उसका कार्य किया। फिर कहने लगे कि हमे तुम्हारी मजदूरी की आवश्यकता नही, जो तुमने हमारे लिए निश्चित की थी, और हमने जो काम किया वह अकारथ हुआ। उसने कहा ऐसा न करो, अपना शेष कार्य पूरा कर लो और अपनी पूरी मजदूरी ले लो। उन्होने इन्कार किया और छोड़ गये। उसने उनके बाद दूसरे लोगो को मजदूरी पर लगाया और कहा कि तुम शेष दिन पूरा काम कर दो जो मजदूरी मैंने उनके लिए निश्चित की थी वह तुम्हे मिलेगी। उन्होने काम किया यहाँ तक कि जब 'अस्र' की 'नमाज' का समय हुआ, तो बोले: हमने तुम्हारा जो काम किया वह अकारथ हुआ और तुमने जो मजदूरी हमारे लिए निश्चित की थी वह हमने तुझे छोड दी। उसने कहा तुम अपना शेष कार्य पूरा कर दो, बस अब तो बहुत थोडा दिन रह गया है। उन्होने इन्कार किया। फिर उसने दूसरे लोगो की मजदूरी पर लगाया जो शेष दिन कार्य करे। उन्होने कार्य किया और दोनो गरोहो की पूरी मजदूरी भी ले ली। यह है

मिमाल उनकी और मिसाल है उस प्रकाश की जिसे उन्होंने स्वीकार किया[1]।
—बुख़ारी

२ हज़रत इब्न उमर रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा. दूसरे समुदायों की मुद्दत और आयु की अपेक्षा तुम्हारी आयु और मुद्दत इतनी है जितना पूरे दिन के मुकाबले मे 'अस्र' की नमाज से सूर्यास्त तक का समय होता है और तुम्हारी मिसाल और 'यहूद' व नसारा' (ईसाई) की मिसाल बस ऐसी है जैसे एक व्यक्ति ने कुछ मजदूरों को कार्य पर लगाया और कहा कि कौन दोपहर तक एक-एक 'कीरात' (एक मुद्रा, सिक्का) पर मेरा कार्य करेगा? तो यहूद ने कार्य किया। फिर उस ने कहा कि कौन दोपहर से अस्र की नमाज तक एक-एक 'कीरात' पर मेरा कार्य करेगा? तो यहूद ने कार्य किया। फिर उस ने कहा कि कौन दोपहर से अस्र की नमाज तक एक-एक 'कीरात' पर मेरा कार्य करेगा तो नसारा ने कार्य किया। फिर कहा कि कौन है जो 'अस्र' की नमाज़ से सूर्यास्त तक दो-दो 'कीरात' के बदले में मेरा कार्य करेगा? जान लो कि ये तुम (मुस्लिम लोग) हो जिन्होंने 'अस्र' की नमाज से सूर्यास्त तक कार्य किया। सुन लो! तुम्हारे लिए दोहरा प्रतिकार है। इस पर 'यहूद' व 'नसारा' क्रुद्ध हुये और कहा कि हमारा कार्य अधिक है और मिला कम। अल्लाह ने कहा: क्या मैंने

---

१ इस मिसाल मे मुस्लिम समुदाय की बडाई बयान हुई है। 'यहूद' और 'नसारा' (यहूदी और ईसाई) ने स्वय जब अपने आपको अल्लाह की दयालुता से वञ्चित कर लिया और अल्लाह की दयालुता और अनुकम्पा की उपेक्षा की, तो अल्लाह ने उन्हे उच्च पद से हटाकर मुस्लिम समुदाय को नायकता के श्रेष्ठ पद पर नियुक्त किया। और 'आख़िरत' मे मिलने वाला प्रतिकार भी उसे प्रदान किया। 'यहूद' और 'नसारा' जिन्होने अवज्ञा और विद्रोह की नीति अपनाई, उनके लिए 'आख़िरत' मे कोई पारितोषिक और प्रतिकार नही, बल्कि वे उल्टे अजाब मे ग्रस्त होगे।

मुस्लिम समुदाय के लिए किताब वालो (यहूद व नसारा) की अपेक्षा दोहरा बदला और प्रतिकार है। कुरआन मे कहा गया है, "हे ईमान वालो! अल्लाह का डर रक्खो और उसके रसूल पर 'ईमान' लाओ। वह तुम्हे अपनी दयालुता से दो हिस्से प्रदान करेगा। और तुम्हारे लिए एक प्रकाश कर देगा जिसके साथ तुम चलोगे-फिरोगे और तुम्हे क्षमा कर देगा, अल्लाह बडा क्षमाशील और दयावन्त है।"

इन्जील (*Gospel*) की उपमा मे भी इसकी ओर प्रत्यक्ष सकेत मिलता। दे० मत्ता २० . १-१६।

तुम्हारे साथ अन्याय किया है कि तुम्हारे हक में कोई कमी की हो? उन्होने कहा नही। अल्लाह नें कहा . फिर यह तो मेरा फजल (अनुग्रह) है जिसे चाहूँ प्रदान करूं[2]। —बुख़ारी

३. हजरत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा : मेरे समुदाय का हाल वर्षा के सदृश है जिसके बारे में नही कहा जा सकता कि उसका प्रथम अच्छा है या अन्तिम अच्छा है[3]। —तिरमिजी

४. अब्दुर्रहमान बिन अल हज़रमी कहते है कि मुझसे यह 'हदीस' उस व्यक्ति ने वयान की जिसने उसे नवी सल्ल० से सुना कि आपने कहा. इस समुदाय के अन्त मे एक जनसमूह होगा। उनका (समूह वालो का) प्रतिकार उनके पहले लोगो के प्रतिकार के सदृश होगा। वे लोगों की भलाई का हुक्म देगे और बुराई से रोकेंगे और फितना फैलानें वालों (उपद्रवकारी लोगो) से लड़ेगे[4]। —अल-बैहक़ी

---

२ अर्थात् यह तो मेरी दया और कृपा है कि मैंने मुस्लिम समुदाय के लिए दोहरा प्रतिकार रक्खा है। तुम्हारे साथ मैंने कोई अन्याय तो नही किया है। इस हदीस से यह भी मालूम हुआ कि यह अन्तिम मुद्दत, जिसके पश्चात् 'कियामत' हो आने वाली है पिछली मुद्दतो के मुकावले मे कोई अधिक लम्बी मुद्दत नही है वल्कि इसकी मुद्दत ऐसी ही कम है जैसे सम्पूर्ण दिन के मुकाबले मे 'अस्र' और सूर्यास्त के बीच का समय होता है।

३ यो तो मुस्लिम समुदाय के प्रारम्भिक अथवा प्रथम युग को दूसरे समस्त युग की अपेक्षा प्रधानता एव श्रेष्ठता प्राप्त है, परन्तु अन्तिम युग मे भी इस समुद मे ऐसे लोग पैदा होगे जिनकी गणना अल्लाह के श्रेष्ठतम आज्ञाकारी वन्द होगी और वे इस्लाम की महान सेवा करेंगे, जैसा आगे आने वाली 'हदीस' से विदित है। अल्लाह के ऐसे सच्चे और सत्यनिष्ठ वन्दे वास्तव मे अपने समय की आवरू हैं।

इस 'हदीस' मे वाद वालो को तसल्ली दी गई है कि उन्हे इसका दुख न होना चाहिए कि वे प्रथम युग मे क्यो नहीं पैदा हुये। इस्लाम के इतिहास मे अन्तिम युग को भी किसी-न-किसी पहलू मे महत्व प्राप्त होगा।

४ अर्थात् उनकी विशेषता यह होगी कि वे लोगो को भलाई और नेकी की ओर बुलायेंगे और उन्हे बुराई से रोकेंगे। और सत्य-विरोधी शक्तियो से लडेगे। जिस प्रकार अन्धकार और प्रकाश मे समझौता सम्भव नही ठीक उसी तरह असत्य के उपासको और उपद्रवकारी लोगो से उनका भी समझौता न हो

५ अम्र बिन शुऐब अपने पिता से और वे अपने पितामह के माध्यम से कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने 'संहाबा' से पूछा · ईमान की दृष्टि से सृष्टिजीव में तुम्हें कौन सबसे अधिक प्रिय है ? उन्होंने कहा : 'फिरिश्ते' । आपने कहा वे आखिर ईमान क्यों न लाते जबकि वे अपने 'रब' के क़रीब रहते हैं । उन्होंने कहा · फिर हम नबियों को अच्छा जानते हैं । आपने कहा : वे आखिर क्यों 'ईमान' न लाते जबकि उन पर 'वह्य' आती है । उन्होंने कहा · फिर अपने-आपको अच्छा समझते हैं आपने कहा · तुम आखिर क्यों 'ईमान' न लाते जबकि मैं तुम्हारे बीच मौजूद हूँ उल्लेखकर्त्ता कहते हैं कि इसके बाद अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : मेरे विचार में 'ईमान' की दृष्टि से वे लोग सबसे अच्छे हैं जो मेरे बाद होगें । वे 'मसहफ' (सजिल्द ग्रन्थ, कुरआन) पायेगे जिस मैं आदेश अंकित होंगे और वे उन पर ईमान लायेंगे[५] । —बैहक़ी

६. हज़रत अबूहुरैरह रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : मेरे समुदाय में मुझसे अत्यधिक प्रेम करने वाले वे लोग हैं जो मेरे बाद पैदा होंगे । उनमें से प्रत्येक चाहेगा कि क्या ही अच्छा होता कि मुझे देखता और अपने घर वालों और अपने माल को मुझ पर निछावर करता[६] । —मुस्लिम

७. अबू मालिक अशअरी से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा: अल्लाह ने तुम्हे तीन चीज़ों से सुरक्षा प्रदान की है यह कि तुम्हारा 'नबी' तुम्हें श्राप न दे कि तुम सब विनष्ट हो जाओ और यह कि अनृतवादी सत्य वालों पर आधिपत्य प्राप्त न कर सकें[७] और

सकेगा । उन्हें असत्य के सामने झुकाया न जा सकेगा । वे असत्य से लड़ेंगे और ज़मीन से फ़ितना और बिगाड़ दूर करने की कोशिश करेंगे ।

५ बाद के लोगों ने नबी सल्ल० को देखा नही फिर भी वे आप पर और आपकी लाई हुई किताब (कुरआन) पर ईमान लायेंगे और आपके दिये हुये आदेशो को स्वीकार करेंगे । इस पहलू से उनके ईमान का बड़ा महत्व है । इस 'हदीस' मे पश्चात्‌वर्ती लोगो को तसल्ली दी गई है कि उनके ईमान और कर्म को असाधारण महत्व प्राप्त है ।

६. आज हम देखते हैं कि साधारण-से-साधारण मुसलमान को भी अल्लाह के रसूल सल्ल० के दर्शन की कामना ससार की समस्त वस्तुओ से अधिक प्रिय है ।

७ अर्थात् तुम्हारा नबी न तो तुम्हारे विनष्ट हो जाने की दुआ करेगा और न असत्य के पुजारी कभी तुम्हारी धारणाओ और तुम्हारे दीन और धर्म को

यह कि तुम सब गुमराही पर एकत्र न हो[८]। —अबू दाऊद

८. अबू मूसा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : मेरा समुदाय दयापात्र समुदाय है[९], 'आख़िरत' में उस पर अज़ाब न होगा. दुनिया मे उसका अज़ाब फितना, (उपद्रव, विगाड) भूकम्प और हत्या है[१०]। —अबू दाउद

९. हजरत मुगीरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा. मेरे समुदाय मे से एक गरोह सदैव अविचल और छाया हुआ रहेगा यहाँ तक कि अल्लाह का हुक्म आ पहुँचेग। और वे छाये हुये ही रहेगे[११]। —बुखारी, मुस्लिम

१०. हज़रत मुआवियह रज़ि० कहते है कि मैं ने नवी सल्ल० को कहते सुना मेरे समुदाय मे एक गरोह सदैव अल्लाह के हुक्म पर क़ायम रहेगा, उसका न वह व्यक्ति कुछ विगाड़ सकेगा जो उसकी सहायता करनी छोड देगा और न वह व्यक्ति जो उसका विरोध करेगा

दलील, प्रमाण और तर्क से पराजित कर सकेंगे। यदि सत्य के लिए असत्य के अनुयायियो से तुम्हारा युद्ध हुआ तो अन्त मे विजय तुम्ही को प्राप्त होगी, परन्तु इसके लिए शर्त यह है कि तुम्हे 'ईमान' की शक्ति प्राप्त हो और तुम्हारी लडाई वास्तव मे ईश्वर के मार्ग मे हो और तुम अल्लाह की दी हुई शक्ति और क्षमता से पूर्ण रूप से काम लो।

८. अर्थात् ऐसा कभी न होगा कि सम्पूर्ण मुस्लिम समुदाय पथभ्रष्ट हो जाये। बड़े-से-बडे फितने उपद्रव (*Persecution*) और विगाड के समय मे भी मुस्लिम समुदाय की कोई-न-कोई जमाअत सत्य पर अवश्य ही रहेगी।

९. अर्थात् इस समुदाय पर ईश्वर की विशेष कृपा और दया है।

१० अर्थात् मुस्लिम समुदाय को यथा सम्भव आख़िरत के अज़ाव से बचाया जायेगा। गुनाहो और गलतियो के सिलसिले मे उसे दुनिया ही मे कत्ल, भूकम्प और फितना, विगाड आदि के रूप मे दण्ड मिल जायेगा। उसकी 'आख़िरत' ज्यादा से ज्यादा प्रिय और शोभायमान रूप मे सामने आयेगी। आखिरत मे उसे अज़ाव न होगा यह वात सामूहिक दृष्टि से कही गई है यो तो इस समुदाय के कितने ही लोग अपने अनुचित कार्य के कारण उस दिन मुसीवत मे ग्रस्त होगे। यह दूसरी वात है कि अन्त मे उन्हे अजाव से छुटकारा मिल जायेगा और वे 'जन्नत' मे प्रवेश करेंगे।

११. अर्थात् सत्य के अनुयायियो का यह गरोह अन्त तक सत्य पर दृढ रहेगा कोई भी शक्ति उसे सत्य से हटा न सकेगी।

यहाँ तक कि अल्लाह का हुक्म आ पहुचेगा और वह इसी हालत पर होगा।
—बुखारी, मुस्लिम

११. अम्र बिन कैस रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा हम अन्त में है परन्तु 'कियामत' के दिन हम अग्रसर रहने वाले है[१२]। और मैं एक बात कहता हूँ किन्तु गर्व से नही[१३]। इबराहीम अल्लाह के खलील (घनिष्ट मित्र) हैं, मूसा 'सफीउल्लाह' (अल्लाह के चुने हुये महान् व्यक्ति) है और मैं अल्लाह का 'हबीब' (प्रिय) हूं[१४], और 'कियामत' के दिन मेरे साथ प्रशसा (हम्द) का पताका होगा[१५]। और अल्लाह ने मुझसे मेरे समुदाय के बारे में वादा किया है और मेरे समुदाय को अल्लाह ने तीन चीज़ों से सुरक्षित रक्खा है उसे सर्व अकाल में विनष्ट न करेगा, और न शत्रु उसका उन्मूलन कर सकेगा[१६] और न सम्पूर्ण समुदाय गुमराही पर एकत्र (सहमत) होगा। —दारमी

१२. अर्थात् यद्यपि ससार मे हमारा समय सबसे अन्त मे है, परन्तु 'आखिरत' मे हमे प्राथमिकता और श्रेष्ठता प्राप्त होगी।

१३ अर्थात् यह बात मैं किसी गर्व से नही कहता बल्कि यह तो केवल ईश्वर की दयालुता और उसकी अनुकम्पा की चर्चामात्र है।

१४ अर्थात् आप मे वे समस्त विशेषतायें एकत्र हो गइ है जो हज़रत इब्राहीम अ० और हज़रत मूसा अ० सरीखे नबियो को प्राप्त हुई हैं।

१५ अर्थात् 'कियामत' के दिन अल्लाह मुझे विशेष सम्मान और ख्याति प्रदान करेगा।

१६ मतलब यह कि ऐसा कभी न होगा कि मेरा अनुयायी समुदाय पूरा-का-पूरा अकाल मे ग्रस्त होकर तबाह हो जाये और न यही सम्भव होगा कि कोई शत्रु उसका उन्मूलन करने मे सफल हो सके। मेरे समुदाय को कोई मिटा न सकेगा। यह समुदाय धरती पर सत्य के दीप्त चिन्ह के सदृश है, इसे मिटाना सम्भव नही। मेरे समुदाय को 'कियामत' तक ससार मे जीवित रहना और ससार के लिए प्रकाश-स्तम्भ बनना है। इस स्तम्भ की अनुपस्थिति मे तो 'कियामत' ही आ जायेगी।

आपके कुछ भविष्य-कथन

عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ رض قَالَ: قَالَ رَسُولُ اللهِ صلى الله عليه وسلم: بَادِرُوا بِالْأَعْمَالِ فِتَنًا كَقِطَعِ اللَّيْلِ الْمُظْلِمِ يُصْبِحُ الرَّجُلُ مُؤْمِنًا وَيُمْسِي كَافِرًا، وَيُمْسِي مُؤْمِنًا وَيُصْبِحُ كَافِرًا يَبِيعُ دِينَهُ بِعَرَضٍ مِنَ الدُّنْيَا ——— مسلم

१ हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · कर्म मे जल्दी करो उस फितने (उपद्रव) से पहले जो अन्धेरी रात के टुकड़े की तरह होगा। मनुष्य प्रात.काल एक ईमान वाले व्यक्ति के रूप मे उठेगा और स ध्या को 'काफिर' होगा और सन्ध्या को ईमान वाला होगा और प्रात काल 'काफिर' होगा। वह अपने 'दीन' (धर्म) को सांसारिक सामग्री के बदले बेच देगा[1]।" —मुस्लिम

२. हज़रत सौबान रज़ि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . मैं जिन लोगो से अपने समुदाय के बारे मे डरता हूँ वे पथ भ्रष्ट करने वाले नायक हैं। और जब मेरे समुदाय में तलवार चल जायेगी तो फिर 'कियामत' के दिन तक रुकने की नही[2]। —अबूदाऊद, तिरमिजी

---

१. अर्थात् एक समय बडी आज़माइश का आने वाला है, वह समय अत्यन्त कठिन होगा। उसमे अपने 'ईमान' की रक्षा करनी कोई सरल कार्य न होगा। लोगो की दशा यह होगी कि वे अपने धर्म और 'ईमान' को सासारिक लाभ के लिए त्याग देंगे। 'ईमान' का क्या महत्व है ? इसका एहसास बिल्कुल मिट सा जायेगा इस कठिन समय मे जो लोग 'दीन' (धर्म) पर कायम रहेगे उनके लिए ईश्वर के यहाँ बडा प्रतिकार और पुरस्कार है। हज़रत मअकल बिन यसार रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा फितने के समय की 'इबादत' को मेरी ओर, 'हिजरत' करने का दर्जा प्राप्त है।

२ नबी सल्ल० के समुदाय अर्थात् आपके अनुयायियो के लिए सबसे बडा फितना (और बिगाड का कारण) पथभ्रष्ट करने वाले और गलत रास्ते पर ले जाने वाले नायक और राज्याधिकारी लोग ही हैं। नबी सल्ल० के इस बयान मे इस बात की ओर प्रत्यक्ष सकेत किया गया था कि 'मुस्लिम समुदाय को इस भयानक फितने का सामना करना पडेगा। इस समुदाय मे परस्पर लडाई और युद्ध का सिलसिला शुरू होगा। 'ईमान' वालो की शक्ति पारस्परिक कलह-विग्रह और सघर्ष मे नष्ट होगी।' उनमे तलवार चलेगी और इस मुसीबत से अन्त तक छुटकारा

३. हजरत अबू हुरैरह रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : 'किसरा' (फारिस का सम्राट) विनष्ट होगा और उसके बाद कोई 'किसरा' न होगा और 'क़ैसर' (रूम का सम्राट) भी विनष्ट होकर रहेगा फिर उसके बाद कोई 'कैसर' न होगा। और इन दोनों के खजाने अल्लाह के मार्ग में बाँटे जायेंगे[3]। —बुखारी, मुस्लिम

न मिल सकेगा। अल्लाह के रसूल सल्ल० की दी हुई यह सूचना अक्षरश: पूरी होकर रही। खलीफा हज़रत उसमान रज़ि० के समय मे सबसे पहले तलवार निकली, तो फिर वह रुक न सकी। और मुस्लिम समुदाय की कहानी एक दुखद कहानी बन कर रही। कितने ही करबला और जमल-युद्ध इस समुदाय के हिस्से मे आये।

३ नबी सल्ल० ने जो कहा था वही हुआ, मुसलमानो ने फारिस और रूम पर विजय प्राप्त की और उनके खजाने मुसलमानो के कब्ज़े मे आये और अल्लाह के मार्ग मे खर्च हुये।

यहाँ मिसाल के तौर पर केवल कुछ ही भविष्य कथन का उल्लेख किया गया। आपके भविष्य कथन अ गणित हैं जिनको 'हदीस' की किताबो मे देखा जा सकता है। उदाहरणार्थ बद्र की लडाई के अवसर पर आप जब बद्र मे ठहरे तो आप भूमि पर हाथ रख-रख कर बताते जाते थे कि यहाँ अमुक (मुश्रिक) व्यक्ति गिरेगा और यहाँ अमुक व्यक्ति गिरेगा। हदीस के उल्लेखकर्त्ता का बयान है कि (सब उसी स्थान पर मारे गये जहाँ उनके मारे जाने की सूचना आपने दी थी) उनमे से कोई न था जो आपके बताये हुये स्थान से तनिक भी कही अलग गिरा हो। —(मुस्लिम, हज़रत अनस रज़ि० से उल्लिखित)

आपने 'हज्जतुलविदा' (अपने अन्तिम हज्ज) के अवसर पर कहा था जान लो! शैतान सदैव के लिए इस बात से निराश हो गया कि तुम्हारे इस नगर मे उसकी 'इबादत' की जाये। (इब्न माजह, तिरमिज़ी)। मतलब यह था कि अब ऐसा न होगा कि मक्का मे मूर्ति की पूजा हो और 'शिर्क' और 'कुफ़्र' (बहुदेववाद और अधर्म) फैले। यह और इस प्रकार के अगणित भविष्य कथन इस बात के प्रत्यक्ष प्रमाण है कि आप अल्लाह के सच्चे 'रसूल' थे और भविष्य मे पेश होने वाली बातो की सूचना आपने 'वह्य' (ईश्वरीय सकेत) के द्वारा दी। यदि आप 'नुबुवत' के झूठे दावेदार होते, तो इस प्रकार भविष्य के बारे मे कोई बात न कह सकते। यह बात बुद्धिमानी के भी विरुद्ध थी कि कोई व्यक्ति अकारण भविष्य के प्रति केवल अटकल और अनुमान से कुछ सूचनाये देने लग जाये और इस बात को भूल जाये कि उसके भविष्य कथनो मे से यदि कोई असत्य

४. हज़रत नाफेअ बिन उतबा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम (मेरे बाद) प्रायद्वीप अरब मे लडोगे, अल्लाह तुम्हें उस पर विजय प्रदान करेगा। फिर तुम फारिस से लडोगे अल्लाह उस पर भी तुम्हे विजय प्रदान करेगा। फिर तुम रूम से लड़ोगे अल्लाह उस पर भी तुम्हे विजय प्रदान करेगा। फिर तुम 'दज्जाल' से लडोगे[४] और अल्लाह उस पर भी विजय प्रदान करेगा। —मुस्लिम

५. हज़रत नोमान बिन बशीर रज़ि० हुज़ैफा रज़ि० के माध्यम से कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · तुममें 'नुबूवत' उस समय तक रहेगी जब तक अल्लाह् चाहेगा फिर अल्लाह 'नुबूवत' को उठा लेगा और उसके बाद 'नुबूवत' के तरीके पर 'खिलाफत' कायम होगी जब तक अल्लाह चाहेगा, फिर अल्लाह् उसे उठा लेगा। फ़िर उसके बाद क्रूर और परपीड़क बादशाहत होगी जब तक अल्लाह् चाहेगा, रहेगी फिर अल्लाह उसे उठा लेगा जब्र की हुकूमत होगी और जब तक अल्लाह् चाहेगा रहेगी फिर अल्लाह् उसे उठा लेगा। और फिर नुबूवत के तरीके पर 'ख़िलाफत' क़ायम होगी। फिर आप मौन हो गये[५]।

—अहमद, अल-बैहकी —दलायलुन्नुबूवत

सिद्ध हुआ, तो इससे स्वय उसकी 'नुबूवत' का खण्डन हो जायेगा। और अटकल से कही हुई बातो मे गलती ही की सम्भावनायें अधिक रहती है।

४. 'दज्जाल' का विस्तारपूर्वक उल्लेख 'क़ियामत' की निशानियो के सिलसिले की 'हदीस' मे मिलेगा।

५ इस 'हदीस' मे जिन कालावधि (*Periods*) का उल्लेख किया गया है उनमे से 'नुबूवत' खिलाफत और बादशाही का समय व्यतीत हो चुका है। इस समय जब्र का शासन है। अब इसके बाद 'नबूवत' के तरीके पर चलने वाली 'खिलाफत' की बारी है। संसार ने समस्त जीवन-प्रणालियो; वादो और इज्मों की असफलता देख ली। वह इस समय मृत्यु के दहाने पर पहुँच चुका है। यदि उसे जीवन और अपनी जटिल समस्याओ का समाधान अभीष्ट है, तो उसे अवश्य ही इस्लाम की ओर पलटना होगा। हज़रत ईसा मसीह अ० के समय मे जबकि वे ससार मे पुन पदार्पण करेंगे 'इस्लाम' ही को प्रभुत्व प्राप्त होगा, परन्तु इसका अर्थ यह नही है कि उससे पहले खिलाफत का कायम होना असम्भव है। उस से पहले भी 'खिलाफत' कायम हो सकती है। 'खिलाफत' मे शासन-व्यवस्था ईश्वर के दिए हुए नियम और कानून पर आधारित होती है। राज्य की व्यवस्था के लिए जो अधिकारी चुने जाते हैं, वे भी क़ानून

६. हज़रत सौबान रज़ि० कहते हैं कि जिस तरह खाना खाने वाले एक दूसरे को दस्तरखान की ओर बुलाते हैं उसी तरह जल्द ही ऐसा होगा कि (शत्रु) जातियाँ तुम पर टूट पड़ेंगी। एक पूछने वाले ने पूछा : क्या ऐसा हमारे कम संख्या में होने के कारण होगा ? आपने कहा . नही, बल्कि उस समय तुम बहुत ज्यादा होगे, परन्तु तुम ऐसे होगे जैसे जल-प्लावन के झाग से मिले हुये खर-पतवार होते हैं। तुम्हारे दुश्मन के दिलों से तुम्हारा भय निकल जायेगा और तुम्हारे दिलों में 'वह्न' (निर्बलता एवं सुस्ती) का रोग पैदा हो जायेगा। एक पूछने वाले ने कहा : हे अल्लाह के रसूल 'वह्न' क्या है ? कहा ससार का मोह और मौत से नफरत[६] —अबू दाऊद, अल्-बैहकी, दलायलुन्नुबूवत

के उसी तरह पावन्द होते हैं जिस प्रकार जनसाधारण उसके पावन्द होते हैं।

६. इस 'हदीस' मे जिस समय का उल्लेख किया गया है वह सम्भवत यही है जिसमे आज हम साँस ले रहे है। आज ससार मे मुसलमान करोडो की सख्या मे हैं, परन्तु शत्रुओ के दिलो से उनका भय निकल चुका है। वे उन्हे अपना नर्म चारा समझते हैं। अमेरिका के इशारे पर इसराईल ने ५ जून सन् ६७ ई० को अरबो पर जो आक्रमण किया है वह इसका एक पत्यक्ष उदाहरण है। हमारी अस्त-व्यस्तता और पराजय का मूल कारण इसके अतिरिक्त और कुछ नही कि हमारे 'ईमान' की शक्ति क्षीण हो गई है, हममे 'ईमान' की वह ज्योति और अन्तर्दृष्टि भी नही रही जो सामुदायिक जीवन के प्रत्येक मोड पर और बदले हुये समय की विभिन्न अवस्था मे हमारा पथ प्रदर्शन कर सके और हमारे अपने वास्तविक दायित्व से हमे अवगत करती रहे।

———

अल्लाह् की किताब

अल्लाह् ने अपने बन्दो के मार्गदर्शन के लिए अपने 'रसूलों' पर किताबे उतारी। अल्लाह् की अन्तिम किताब कुरआन मजीद है जो अल्लाह् के अन्तिम रसूल हज़रत मुहम्मद सल्ल० पर अवतीर्ण हुआ है। क़ुरआन अपने शब्द और अर्थ दोनों पहलुओं से अल्लाह् का 'कलाम' है। यह किताब अल्लाह् के रसूल सल्ल० की अपनी रचना कदापि नही है। रसूल का काम तो यह है कि वह एक अमानतदार की तरह उस किताब को जो अल्लाह् की ओर से उसके दिल पर अवतीर्ण हुई है, अल्लाह् के बन्दो तक पहुँचाये। और अपनी ओर से उस मे कोई कमी-बेशी न करे। अल्लाह् की दी हुई सूझ-बूझ से इस किताब की व्याख्या करे और अपनी शिक्षा और अपने चरित्र द्वारा लोगो के आचार-विचार को ठीक करे। उनके जीवन मे क्रान्ति लाये। और उन्हे एक उत्तम गरोह या समुदाय बनाये। ऐसा गरोह जिसके द्वारा ससार मे भलाई फैले और बुराई समाप्त हो।

तौरात, इञ्जील, जबूर आदि अल्लाह् की ओर से बहुत सी किताबे अवतीर्ण हुईं, परन्तु उनमें से कितनी किताबे है जो बिल्कुल लुप्त हो चुकी हैं। जो किताबे आज पाई भी जाती हैं उनमें कुरआन के सिवा कोई किताब अपने वास्तविक शब्दों और अर्थो के साथ सुरक्षित नही है। उनमें अल्लाह् के कलाम के साथ मानवीय कलाम भी सम्मिलित हो गया है। लोगो ने उनमें बहुत सी बाते अपनी ओर से मिला दी है। और कितनी ही बातो को लोगो ने बदल कर रख दिया है। अब यह निर्णय करना बहुत ही मुश्किल है कि उनमे कितना सत्य ह कितना असत्य है। कुरआन की विशेषता यह है कि वह अपने उन्ही शब्दो और अर्थो के साथ मौजूद है जिन शब्दो और अर्थो के साथ अल्लाह् के अन्तिम रसूल ने उसे दुनिया के सामने प्रस्तुत किया था। इस 'किताब' की भाषा आज भी संसार की एक जीवित भाषा है। इसकी भाषा को बोलने और समझने वाले करोड़ों की सख्या मे दुनिया में मौजूद है। यह किताब दिव्य नार्गदर्शन का अन्तिम और नवीनतम सस्करण है जिसमे 'कियामत' तक

के लिए और संसार के सारे ही लोगो के मार्गदर्शन की सामग्री है। इस किताब के बाद किसी और किताब की आवश्यकता शेष नही रहती। सीधा मार्ग पाने और अल्लाह् की इच्छानुसार जीवन व्यतीत करने के लिए जिन बातों की आवश्यकता थी वे सभी बातें इसमे बयान कर दी गई हैं। इस किताब में वे समस्त विशेषताएँ पाई जाती हैं जो अगली किताबों और 'सहीफ़ो' में अलग-अलग थी। कुरआन को आचार-विचार सम्बन्धी दिशा दर्शन और व्यावहारिक जीवन के लिए पूर्ण जीवन व्यवस्था और ऐसे कानून की हैसियत प्राप्त है जिसका पालन करना प्रत्येक के लिए अनिवार्य है। जिसने इस किताब की उपेक्षा की उसने अपना सम्बन्ध वास्तविक जीवन-स्रोत से काट लिया।

कुरआन मनुष्य को जिस 'दीन' (धर्म) की ओर आमन्त्रित करता है वही मानव का वास्तविक और स्वाभाविक धर्म है। यही कारण है कि उसने लोगो को उनकी बुद्धि और सूझ-बूझ के मार्ग से आमन्त्रित किया है। दूसरे शब्दों में उसने उनकी प्रकृति को आकर्षित किया है। उसने मानवीय प्रकृति में निहित तथ्यों से लोगों को परिचित किया है। मानव को उसकी वास्तविक प्रकृति और उसकी माँग का स्मरण कराया है। इसीलिए वह अपने-आप को 'जिक्र व तबसरा' (अनुस्मारक व आँखे खोल देने की सामग्री) के नाम से प्रस्तुत करता है। फिर वह ज्ञान, विश्वास और चिन्तन और सोच-विचार के लिए ऐसी दृढ बुनियाद संचित करता है जिसे सन्देह और शंका कभी हिला नही सकते। इस दृष्टि से वह 'हुदा' और 'तिबयान' (मार्ग-दर्शन व स्पष्टकर्त्ता) 'हक' व 'बुरहान' (सत्य व प्रमाण) है और हमारे लिए 'बसायर' व 'नूर' (अन्तदृष्टियों की सामग्री व प्रकाश) है।

कुरआन जो अल्लाह् की 'वह्य' है इसी के द्वारा मनुष्य को वास्तविक जीवन प्राप्त होता है। यही हमारे शाश्वत जीवन का साधन है। इसके द्वारा हमे जीवन का सीधा और सुगम मार्ग मिलता है। अल्लाह की 'वह्य' वह पवित्र आहार है जिससे हमारा आत्मिक जीवन सम्बद्ध है। मूसा की किताब में है. "मनुष्य केवल रोटी से नही जीवित रहता बल्कि उस 'कल्मा' (शब्द) से जीवित रहता है जो प्रभु (ईश्वर) की ओर से आता है।" (मत्ता ४ ४) हज़रत मूसा कहते हैं: मनुष्य केवल रोटी ही से नही जीता बल्कि जो-कुछ प्रभु के मुख से निकलता है उससे जीवन पाता है"—(व्यवस्था विवरण ८ ३। हज़रत मसीह अ० की प्रार्थना है: "हमारी रोज की रोटी हमें रोज दिया कर"—लूका ११ ३।

कुरआन में भी कहा गया है कि 'वह्य' और मार्गदर्शन की हैसियत "रिज्क हसन" अर्थात् अच्छी रोजी की है। सूरा हूद आयत ८८ मे कहा गया हैं . "(शुऐब ने) कहा हे मेरी जाति वालो! देखो तो, यदि मैं अपने 'रब' की खुली दलील पर हूँ, और उसने मुझे (अपनी ओर से) "रिज्क हसन" (अच्छी रोज़ी) प्रदान किया है (तो मैं कैसे तुम्हारी तुच्छ इच्छाओं का पालन कर सकता हूँ)"। इस रोजी से वंचित रह जाना बड़े दुर्भाग्य की बात है।

———

किताब पर 'ईमान'

عَنْ اَبِىْ هُرَيْرَةَ رض قَالَ. كَانَ اَهْلُ الْكِتٰبِ يَقْرَءُوْنَ التَّوْرَاةَ بِالْعِبْرَانِيَّةِ وَيُفَسِّرُوْنَهَا بِالْعَرَبِيَّةِ لِاَهْلِ الْاِسْلَامِ فَقَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ: لَا تُصَدِّقُوْا اَهْلَ الْكِتٰبِ وَلَا تُكَذِّبُوْهُمْ وَقُوْلُوْا اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَمَا اُنْزِلَ اِلَيْنَا —— بخارى

१. हज़रत अबूहुरैरह रजि० कहते है कि 'किताब वाले' (यहूदी व इसाई) इब्रानी में 'तौरात' को पढते और मुसलमानों के लिए अरबी में उस की व्याख्या करते थे इस पर अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा· तुम 'किताव वालों' की न तसदीक करो और न उन को झुठलाओ[1] और कहो हम 'ईमान' याये अल्लाह पर और उस चीज़ पर जो हमारी ओर उतारी गई[2]। —बुखारी

१. मतलब यह है कि अल्लाह की ओर से अगले 'नबियो' पर भी किताबें उतरी है और मुसलमान अल्लाह की ओर से आई हुई सभी किताबो पर 'ईमान' रखते हैं। परन्तु किताब रखने वाले 'यहूदी' और 'ईसाई' आज जो कुछ 'तौरात' और 'इन्जील' के नाम से प्रस्तुत करते है उसके बारे मे नही कहा जा सकता कि उनकी कितनी बाते वास्तव मे तौरात व इन्जील की हैं और कितनी बातें लोगो की अपनी ओर से घडी हुई हैं। आसमानी किताबें आज अपने वास्तविक रूप मे सुरक्षित नही हैं अत उचित बात यही है कि 'किताब वाले' ईश्वरीय ग्रथ के नाम से जा कुछ प्रस्तुत करते है उनके बारे मे चुप रहा जावे। न उनका समर्थन किया जाये और न उनका इन्कार किया जावे। हाँ जिन बातो की पुष्टि कुरआन से होती है उनकी तसदीक़ की जायेगी और जिन बातो का असत्य होना कुरआन से सिद्ध है उन्हे असत्य कहा जायेगा।

२. यह सकेत कुरआन की एक विशेष 'आयत' की ओर है। पूरी आयत यो है: "कहो हम ईमान' लाये अल्लाह पर और उस चीज़ पर जो हमारी ओर उतारी गई और उस पर जो इबराहीम, इसमाईल, इसहाक और याकूब, (याकूब की) औलाद की ओर उतारी गई, और जो मूसा और ईसा को दी गई, और जो दूसरे सभी 'नबियो' को उनके 'रब' की ओर से मिलती रही है, हम उनके बीच कोई अन्तर नही करते; और हम उसके मुस्लिम (आज्ञाकारी) हैं।" —अल बकरा आयत १३६।

कुरआन की महानता

عَنْ عُثْمَانَ بْنِ عَفَّانَ رض عَنِ النَّبِيِّ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ، خَيْرُكُمْ مَنْ تَعَلَّمَ الْقُرْآنَ وَعَلَّمَهُ ——————— بخاری

१. हजरत उसमान बिन अफ्फान रजि० रिवायत करते है कि आप ने कहा तुममे उत्तम व्यक्ति वह है जिसने कुरआन सीखा और सिखाया।
—बुखारी

२ हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब भी लोग अल्लाह के घरो मे से किसी घर (मस्जिद) मे एकत्र होकर कुरआन पढते-पढाते है तो उन पर 'सकीनत' (शान्ति) अवतरित होती है और अल्लाह की दयालुता उन्हे ढाँक लेती है[1] और 'फिरिश्ते' उन्हे घेर लेते है और अल्लाह उनकी चर्चा अपने पास वालो मे करता है। और जिस व्यक्ति का कर्म उसे पीछे कर दे उसका वश उसे आगे नही बढा सकता[2] —मुस्लिम, अबूदाऊद, तिरमिजी

३ हजरत अबू हुरैरह रजि कहते है : अल्लाह के रसूल सल्ल० ने

१ 'सकीनत' (शान्ति) से अभिप्रेत दिल का इत्मीनान, स्थिरता और धैर्य है। कुरआन के पाठ मे यह आध्यात्मिक प्रभाव पाया जाता है कि उससे दिल मे इत्मीनान (*conviction*) और शान्ति का अवतरण होता है। सन्देह और हर प्रकार की खटक दूर हो जाती है। 'शैतान' के हस्तक्षेप से आदमी बच जाता है। कुरआन एक ऐसा प्रकाश है जिससे दिलो के सभी गोशे प्रकाशित हो जाते हैं। अन्धकार लेशमात्र को भी शेष नही रहता। दिल की बेचैनी दूर हो जाती है। 'ईमान' मे दृढता और निखार आ जाता है। फिर आदमी को सच्चाई के लिए प्राण तक देने मे कोई झिझक नही होती। अल्लाह के मार्ग मे चलने ही मे उसके दिल को शान्ति और ठढक मिलती है।

२ अर्थात् अल्लाह के यहाँ जिस चीज का वास्तव मे महत्व है वह यह है कि मनुष्य ने सत्य और सच्चाई को पहचान लेने के पश्चात् कहाँ तक उसे अपने जीवन मे अपनाया और कहाँ तक उसके तकाज़े पूरे किये। जो व्यक्ति कर्म सम्बन्धी अपने दायित्व के प्रति असावधान रहा वह 'आखिरत' मे केवल इस कारण ऊँचा दर्जा न पा सकेगा कि उसका जन्म एक उच्च और पवित्र वश मे हुआ था। इसलिए मनुष्य को वश-श्रेष्ठता पर भरोसा करने के बदले ज्यादा-से-ज्यादा ध्यान कर्म की ओर देना चाहिए।

कहा : हर एक 'नबी' को कुछ चमत्कार दिये गये जिनके अनुसार लोग उन पर 'ईमान' लाये, मेरा चमत्कार जो मुझे प्रदान हुआ, 'वह्य' है, जिसे अल्लाह ने मेरी ओर भेजा है और मुझे आशा है कि 'कियामत' के दिन मेरे अनुयायी समस्त 'नबियों' से अधिक होंगे[3]। —बुखारी, मुस्लिम, अहमद

४. हज़रत जाबिर रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० अपनी 'नमाज' में 'तशहहुद' के पश्चात् कहा करते थे . सबसे अच्छा 'कलाम' अल्लाह का 'कलाम' है और सबसे अच्छा तरीका महम्मद (सल्ल०) का तरीका है। —नसई

५ हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कुरआन पाँच प्रकार की बातो पर अवतरित हुआ है[4] . हलाल-हराम, अटल[5], उपलक्षित[6] और मिसाले[7], तो तुम हलाल (वैध) को

---

३. अगले 'नबियो' को अल्लाह ने विभिन्न चमत्कार प्रदान किये थे। उन चमत्कारो से यह सिद्ध होता था कि वे उसी अल्लाह के भेजे हुए 'रसूल' या 'नबी' हैं जिसका अखिल विश्व पर शासन है। स्वय 'नबी' सल्ल० को भी बहुत से चमत्कार प्रदान किये गये परन्तु आपका सबसे बडा चमत्कार कुरआन है जो 'कियामत' तक शेष रहने वाला है। कुरआन अपने विषय, वर्णन शैली, साहित्य आदि प्रत्येक दृष्टि से एक महान् चमत्कार है। कुरआन एक ऐसा चमत्कार है जिसे देखकर 'कियामत' तक लोग प्रभावित होते रहेगे। नबी सल्ल० के अनुयायी समस्त 'नबियो' के अनुयायियो से अधिक होगे।

४. अर्थात् कुरआन मे पाच प्रकार की चीज़े मिलती हैं।

५. ऐसी 'आयतें' जिनका अर्थ बिलकुल स्पष्ट है। जिनमे वे सभी बाते स्पष्ट रूप से बता दी गई हैं जिनकी ओर आमन्त्रित करने के लिए कुरआन का अवतरण हुआ है। उदाहरणार्थ 'ईमान' और मौलिक धारणा सम्बन्धी बातें, भलाई क्या है ? बुराई किसे कहते हैं ? सत्य क्या है ? असत्य क्या है ? इनके अतिरिक्त वे सभी बातें जिनका सम्बन्ध व्यावहारिक जीवन और समाज से है।

६. उपलक्षित और अस्पष्ट (*Allegorical*) 'आयतें' वे है जिनमे वे बाते बयान हुई है जिन तक हमारी बुद्धि नही पहुँच सकती। जिन्हे पूर्ण रूप से समझना हमारे लिए सम्भव नही। उदाहरणार्थ अल्लाह की सत्ता, 'आखिरत' (परलोक) मे पेश आने वाली बातें आदि। इन बातो के बारे मे एक हद तक जानना मनुष्य के लिए आवश्यक था। इसलिए कि जब तक इनके बारे मे कुछ बातें न बता दी जायें जीवन की कोई रूपरेखा नही प्रस्तुत की जा सकती और न इसके बिना कोई जीवन-दर्शन ही प्रस्तुत किया जा सकता था।

७. मिसालो से अभिप्रेत उदाहरण, उपमाएँ और प्राचीन जातियो की कथाएँ हैं

हलाल जानो, हराम (अवैध) को हराम समझो, अटल का पालन करो, उपलक्षित पर 'ईमान' लाओ और मिसालों से शिक्षा ग्रहण करो।

—मसाबीह-बैहकी

६ हजरत वासिला रजि० ने नबी सल्ल० से उल्लेख किया है कि (आप ने कहा .) मुझे 'तौरात' के बदले मे 'सब्अ तवाल' मिली हैं और 'जबूर' के बदले मे 'मईन' और इन्जील, के बदले मे 'मसानी' और 'मुफस्सल' के साथ मुझे श्रेष्ठता प्रदान की गई[८]। —अहमद व अल-कबीर

७ हजरत अबू मूसा अशअरी रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · कुरआन पढने वाले 'मोमिन' (ईमान वाले व्यक्ति) की मिसाल तुरज (एक प्रकार का नीबू) की तरह है कि उसकी महक भी अच्छी और उसका मजा भी अच्छा है और उस 'ईमान' वाले व्यक्ति की मिसाल जो कुरआन नही पढता खजूर की तरह है कि उसमे महक नही होती परन्तु उसका मजा मीठा होता है। और उस 'मुनाफिक' की मिसाल जो कुरआन पढता है 'रैहान' (एक महकता पौधा) की तरह है कि उसकी महक तो अच्छी है परन्तु उसका मजा कड़ुवा होता है। और उस 'मुनाफिक' की मिसाल जो क़ुरआन नही पढता इंद्रायन की तरह है जिसमें कोई महक नही होती और उसका मजा भी कड़ुवा होता है[९]।

—बुखारी, मुस्लिम

जिनका उल्लेख कुरआन मे जगह-जगह हुआ है।

८. कुरआन की सात आरम्भिक सूरते 'तुवाल' कहलाती हैं। इसके बाद ग्यारह सूरते 'मईन' कहलाती हैं और इसके बाद को बीस सूरतें 'मसानी'। इसके बाद क़ुरआन के अन्त तक 'मुफस्सल' हैं। कुछ सूरतो के बारे मे मतभेद भी है कि वे 'तुवाल मे से हैं या 'मईन' मे सम्मिलित हैं। इसी प्रकार कुछ सूरतो के बारे मे यह मतभेद भी पाया जाता है कि वे 'मसानी' हैं या 'मुफस्सल' है। मालूम हुआ कि जो आसमानी किताबें पहले अवतीर्ण हो चुकी हैं कुरआन मे उन सब की मिसाल मौजूद है। इसके अलावा 'मुफस्सल' इस कुरआन की विशेष चीज हैं, इसकी मिसाल अगली किताबो मे नही मिलती।

९ मतलब यह है कि जो 'मोमिन' कुरआन पढता है वह बाह्य और आन्तरिक हर प्रकार के गुणो से युक्त होता है। जो 'मोमिन' कुरआन नही पढता उसमे एक दोष रह जाता है, परन्तु उसके आतरिक अस्तित्व को श्रीहीत नही कहा जा सकता, इसलिए कि 'ईमान' उसके दिल मे मौजूद है। 'मुनाफिक' (कपटनीति वाला) का आन्तरिक अस्तित्व श्रीहीन होता है। वह पढने को तो कुरआन पढ रहा होता है, परन्तु उसके दिल मे 'निफाक' (कपट) का रोग मौजूद होता है।

८ हज़रत अब्दुल्लाह् बिन अम्र बिन आस रजि० कहते हैं कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा · कुरआन वाले व्यक्ति से[10] ('कियामत' के दिन) कहा जायेगा कि पढते जाओ और चढते जाओ और उसी तरह सँभाल-सँभाल कर (कुरआन) पढो जिस तरह् से दुनिया में सँभाल-सँभाल कर पढते थे इसलिए कि तुम्हारा स्थान तुम्हारी 'तिलावत' (पठन) की अन्तिम 'आयत' पर होगा[11]।

—तिरमिजी, अबूदाऊद, इब्न माजाह

९ हजरत इब्न मसऊद रजि० कहते है कि मैनें अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि जो व्यक्ति सर्वोच्च अल्लाह् की किताब में से एक अक्षर पढे उसे प्रत्येक अक्षर के बदले एक नेकी मिलेगी और हर नेकी दस नेकी के बराबर होगी। मैं "अलिफ० लाम० मीम०" को एक अक्षर नही कहता 'अलिफ०' एक अक्षर है, लाम० एक अक्षर है, है, और मीम० एक अक्षर है[12]। —तिरमिजी

१० हजरत इब्न अब्बास रजि० कहते है कि एक व्यक्ति ने अल्लाह के रसूल सल्ल० से कहा हे अल्लाह् के रसूल ! कौन सा कर्म अल्लाह

ऐसा 'मुनाफिक़' जो कुरआन नही पढता उसके न बाह्य अस्तित्व मे सुन्दरता होती है और न उसके आन्तरिक जीवन मे कोई अच्छाई पाई जाती है।

१० अर्थात् उस व्यक्ति से जो कुरआन पढता और अपने जीवन को कुरआन के अनुसार बनाने की कोशिश करता है।

११ अर्थात् कुरआन की 'तिलावत' (पठन) के अनुसार तुम्हारे दर्जे ऊँचे होते जायेंगे। कुरआन की प्रत्येक 'आयत' मनुष्य के दर्जे को बढाने वाली है। मनुष्य यदि वास्तव मे समझ कर और जी लगा कर कुरआन की 'तिलावत' करे तो सासारिक जीवन मे ही वह अपने विचार और कर्म की दृष्टि मे ऊँचा होता चला जायेगा। विचार, स्वभाव और कर्म की दृष्टि से जो उच्चता उसे सासारिक जीवन मे प्राप्त होती है उसी का पूर्ण प्रकाशन 'आखिरत' के जीवन मे होगा।

१२ अर्थात् कुरआन के प्रत्येक शब्द और उसके प्रत्येक अक्षर की 'तिलावत' (पठन) पुण्य और नेकियो का कारण बनती है। अल्लाह् अपनी विशेष कृपा से प्रत्येक अक्षर पर दस नेकियो का 'सवाब' प्रदान करता है। कुरआन ऐसा अनुपम और कल्याणकारी ग्रन्थ है कि आदमी को उसके प्रत्येक शब्द से प्रेम होना चाहिए। एक नेकी पर दस नेकियो का सवाब प्रदान करना अल्लाह का सामान्य नियम है, कुरआन मे है "जो व्यक्ति एक नेकी लेकर आयेगा उसे उस जैसी दस नेकियो का 'सवाब' दिया जायेगा।"—सूरा अल-अनआम आयत १६०।

न अधिक पढ़ने से वह पुराना होता है[१५]। अल्लाह तुम्हे उसको तिलावत (पठन) पर हर अक्षर के बदले दस नेकियाँ प्रदान करेगा, मैं यह नही कहता कि 'अलिफ़० लाम० मीम०' एक अक्षर है बल्कि अलिफ० एक अक्षर है और लाम० एक अक्षर है और मीम० एक अक्षर है। —हाकिम

१२. हज़रत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल स०ल्ल० ने "कुल हुवल्लाहु अहद" के बारे में कहा कि यह तिहाई क़ुरआन के बराबर है[१६]। —मुस्लिम

कुछ कुरआन से प्राप्त किया वह उसके मुकाबले मे बहुत थोड़ा है जो अभी हम हासिल नही कर सके हैं।

१५. कुरआन का मामला दूसरी किताबों से भिन्न है। इस किताब को जितना अधिक पढिए और इसमे सोच-विचार कीजिए उतना ही आनन्द बढता जाएगा। इस किताब मे सदैव एक नयापन महसूस होता है जब कि दूसरी किताबो का हाल यह है कि उनके बारबार पढने से आनन्द और इसमे कमी होती चली जाती है।

१६ कुरआन मे मौलिक रूप से तीन बातें बयान हुई हैं उनमे सबसे महत्वपूर्ण 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) है। सूरा 'कुल हुवल्लाहु अहद' (सूरा अल-इखलास) वास्तव में 'तौहीद' की सूरा है। यो तो 'तौहीद' का प्रकाश पूरे कुरआन में फैला हुआ है लेकिन इस सूरा में विशेष रूप से 'तौहीद' की प्रकाशमान किरणें केन्द्रित हो गई हैं। इसलिए आपने इस सूरा को तिहाई कुरआन कहा।

हदीसो मे दूसरी सूरतो की विशेषताओ का भी वर्णन मिलता है जिनसे मालूम होता है कि कुरआन की प्रत्येक सूरा का अपने स्थान पर बडा महत्व है। सूरतों के अतिरिक्त कुरआन की विशिष्ट 'आयतो' के गुणो का उल्लेख भी हदीस मे किया गया है जिससे उन 'आयतो' की महानता का अनुमान किया जा सकता है। 'हदीसो' मे जिन 'सूरतो' के गुणो का विशेष रूप से उल्लेख हुआ है वे ये हैं · अल-फातिहा, अल-बकरा, आले इमरान, या० सीन०, अल-वाक़िआ, अल-मुल्क, अलिफ० लाम० मीम० तनज़ील, अल-कहफ, अर-रहमान, अल-आला, अल-ज़िलज़ाल, अत-तकासुर, अल-काफिरून, अल-इखलास, अल-फलक, अन-नास। कुरआन की जिन 'आयतो' की विशेष रूप से महानता और विशेषता बयान हुई हैं वे ये है आयतल कुरसी, (अर्थात् सूरा अल-बकरा की आयत २५५), सूरा अल-बकरा की अतिम दो 'आयतें', आले इमरान की आयत १९०-२००, सूरा अल-कहफकी प्रारम्भिक और अन्तिम दस आयतें।

१३ हज़रत अली रजि० कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि हर चीज़ का एक शृंगार होता है कुरआन का शृंगार सूरा अर-रहमान है[१७]। —बैहकी

१४. हजरत उमर बिन खत्ताब रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा : अल्लाह इस किताब के द्वारा बहुत से लोगों को उच्चता प्रदान करता है और इसके द्वारा बहुत से लोगों को पस्त करता है[१८]। —मुस्लिम

१५ हजरत अब्दुल्लाह बिन अम्र रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिसने कुरआन पढा उसने 'नुबूवत' को अपने अक में ले लिया अन्तर केवल यह है कि उसकी ओर 'वह्य' नही की जाती। क़ुरआन वाले व्यक्ति को यह बात शोभा नही देती कि वह क्रोध करने वाले के साथ स्वय क्रोध करे या झगडने वाले के साथ झगड़े जबकि उसके सीने में अल्लाह का कलाम मौजूद है[१९]। —हाकिम

१६. हजरत अब्दुर्रहमान बिन औफ रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के नबी सल्ल० ने कहा . 'कियामत' के दिन 'अर्श' (ईश्वरीय सिंहासन) के नीचे तीन चीजें होंगी[२०] : कुरआन जो बन्दों से झगड़ेगा[२१]

---

१७ सूरा अर-रहमान ऐसी सूरा है जिसमे स्पष्टत: सौंदर्य पाया जाता है। जिसको प्रत्येक व्यक्ति यहाँ तक कि अरबी भाषा न जानने वाले भी महसूस कर लेते हैं। यो तो प्रत्येक सूरा सुन्दरता ही का प्रतीक है।

१८. मतलब यह है कि जो लोग कुरआन को पढते और उसके आदेशों का पालन करते हैं और वास्तव मे उसे अपने जीवन मे एक मार्गदर्शक ग्रथ समझते हैं अल्लाह उन्हे उच्चता, आदर और शक्ति प्रदान करता है यहाँ तक ससार मे उन्हे राजसत्ता भी प्रदान करता है और 'आखिरत' मे उनके दर्जे बढाता है। इसके विपरीत जो लोग इस किताब के हक को नही पहचानते, अल्लाह भी उन्हे पस्ती मे डाल देता है जिससे वे कभी निकल नही पाते।

१९ 'कुरआन' बहुत बडी नेमत और 'नुबूवत' का साराश है। कुरआन के प्रेमी को चाहिए कि वह उसका सम्मान करे और अपने चरित्र और कर्म को उच्च से उच्च रखने का प्रयास करे।

२० अर्थात् कुरआन, अमानत और नाते-रिश्ते के मामले विशेष रूप से 'कियामत' के दिन अल्लाह के सामने पेश होगे। और इनके बारे मे वह फैसला करेगा। इन तीनो चीज़ो को मानव-जीवन मे मौलिक महत्व प्राप्त है। कुरआन जीवन

उसका एक बाह्य है और उसका एक अन्तर है[२२]—अमानत (न्यास) और रिश्ता-नाता। यह पुकार कर कहेगा · सुन लो! जिसने मुझे मिलाया उसे अल्लाह अपनी दयालुता से मिलायेगा और जिसने मुझे तोडा अल्लाह उसे तोड डालेगा[२३]।
—शरहुस्सुन्नह

१७ हजरत इब्न अब्बास रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो व्यक्ति कुरआन (की व्याख्या) में बिना ज्ञान के कोई बात कहे वह अपना ठिकाना ('जहन्नम' की) आग में बना ले[२४]।
—तिरमिजी, नसई, अहमद

मे एक प्रकाश-स्तम्भ और मार्गदर्शक है। अमानतदारी और नाते-रिश्ते का हक अदा करना वास्तव मे 'दीन' (धर्म) और नैतिकता का साराश है। इसलिए 'कियामत' मे सफल होने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य इन तीनो के हक को पहचाने और उन्हे अदा करने की कोशिश करे।

२१. अर्थात् 'कुरआन' एक दलील और प्रमाण के रूप मे लोगो के सामने पेश होगा। जिन लोगो ने कुरआन के आदेशो और उसकी निश्चित की हुई सीमाओ का आदर किया होगा वे उस दिन सफल होगे। परन्तु उन लोगो की कमर उस दिन टूट जायेगी जो गर्व और अहकार के मद मे कुरआन के आदेशो का निरादर करते और अपनी तुच्छ इच्छाओ के पालन मे लगे रहते हैं।

२२ कुरआन मे जहाँ नियम, अनुशासन, कानून आदि की शिक्षा दी गई है वही उसमें ऐसे आतरिक ज्ञान और सूक्ष्म वास्तविकताओ की ओर भी सकेत किये गये है जिन तक अपनी चेतना और बुद्धि-स्तर के अनुसार मनुष्य की पहुँच होती है। इसके लिए सोच-विचार, चिन्तन और आत्मा की शुद्धता एव विकास आवश्यक है।

२३ मतलब यह है कि जिन लोगो ने मेरा हक अदा किया होगा उन ही पर अल्लाह की दया होगी। मेरे हकको दवाने वाले आज असफल और अपमानित होगे।

२४ कुरआन की सही 'तफसीर' (टीका, व्याख्या) वही है जो ज्ञान और सूझ-बूझ पर अवलम्बित हो। जो लोग कुरआन का अर्थ करने मे ज्ञान के स्थान पर अपनी तुच्छ इच्छाओ का पालन करते हैं। वे अल्लाह की किताब पर अत्याचार करते है। उनका ठिकाना 'जहन्नम' ही हो सकता है। कुरआन मे सोच विचार और चिन्तन करना गलत और अनुचित बात कदापि नही है। कुरआन ने स्वय सोच-विचार और चिन्तन करने का आदेश दिया है। कुरआन मे एक जगह है· "तो क्या ये लोग कुरआन मे विचार नही करते या दिलो पर ताले डाले पड़ हुये हैं?"—सूरा मुहम्मद आयत २४। जिस चीज से हमे रोका गया है वह

क़ुरआन की 'तिलावत' (पठन)

عَنِ ابْنِ عُمَرَ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ إِنَّ هٰذِهِ الْقُلُوبَ تَصْدَأُ كَمَا يَصْدَأُ الْحَدِيدُ إِذَا أَصَابَهُ الْمَاءُ، قِيلَ يَا رَسُولَ اللّٰهِ وَمَا جِلَاؤُهَا، قَالَ كَثْرَةُ ذِكْرِ الْمَوْتِ وَتِلَاوَةُ الْقُرْآنِ ——— بیہقی فی شعب الایمان

१. हजरत इब्न उमर रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · इन दिलो को भी मोरचा लग जाता है जैसे लोहे को मोरचा लग जाता है जब कि उस पर पानी पहुँच जाये। कहा गया हे अल्लाह के रसूल! इन (दिलो) को चमक प्रदान करने वाली क्या चीज है? कहा मृत्यु को अधिक याद करना और कुरआन की 'तिलावत' (पठन)[1]। —बैहकी-शोबुलईमान

यह है कि हम ऐसी नीति न अपनायें कि, कुरआन का अनुसरण करने के बदले खुद कुरआन को अपने व्यक्तिगत भावनाओ और रुचि का अनुवर्ती बनाने लग जायें। कुरआन की किसी 'आयत' का जो अर्थ भी हम ले वह ऐसा होना चाहिए जिसका समर्थन प्रसग और वाणी-व्यवस्था आदि से होता हो। इसके लिए भाषा और साहित्य का गहरा ज्ञान और 'दीन' की गहरी सूझ-बूझ अपेक्षित है। जो लोग न तो अरबी भाषा और अरब साहित्य का पूरा ज्ञान रखते है और न जिनमे अल्लाह का डर और ज़िम्मेदारी का एहसास होता है वे जब कुरआन की 'तफसीर' (टीका) करने बैठेगे तो वे कुरआन को विकृत करके रख देंगे।

कुरआन की 'आयतो' के बारे मे जो कुछ कहा जाये वह ज्ञान पर अवलम्बित हो, केवल अटकल और गुमान से कुरआन के बारे मे कुछ कहना बहुत ही गैर ज़िम्मेदारी की बात है। एक 'हदीस' मे है कि नबी सल्ल० ने कहा "जो व्यक्ति कुरआन की 'तफसीर' (टीका) अपनी सम्मति से करे वह सही निकले जब भी वह गुनहगार होगा।"—अबूदाऊद, तिरमिजी।

१ मृत्यु की याद सासारिक इच्छाओ और वासनाओ की दासता से छुटकारा दिलायेगी और कुरआन की 'तिलावत' (पठन) से उसे वास्तविकता और सत्य का परिचय मिलेगा। हृदय की शुद्धता के लिए ये दोनो चीजे आवश्यक है। इच्छाओ और वासनाओ पर जब तक नियत्रण प्राप्त न हो अभीष्ट भाव मन मे नही पल सकते। हृदय कभी असावधानी और अस्वच्छता से छुटकारा नही पा सकता।

२ हजरत बरा इब्न आजिव रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : तुम अपनी आवाजों से कुरआन को विभूषित करो[२]।
—अबूदाऊद, नसई, इब्नमाजह

३ ताऊस से मुरसल तरीके से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० से पूछा गया कि कुरआन पढने में कौन व्यक्ति अधिक अच्छी आवाज़ वाला है ? कहा वह व्यक्ति कि जब तू उसे पढता हुआ सुने, तो तुझे ऐसा लगे कि वह अल्लाह से डरता है[३]। ताउस कहते हैं कि तल्क ऐसे ही थे।
—दारमी

४. हजरत अबू मूसा अशअरी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने उनसे कहा तुम्हे आले दाऊद के 'मिज़मारों' (एक बाजा) मे से 'मिजमार' प्रदान किया गया है[४]। —बुखारी, मुस्लिम

२ अर्थात् अच्छी आवाज़ के साथ कुरआन पढो। उसे बिगाड कर न पढो। कुरआन जहाँ अपने अभिप्रायो, अर्थों और वास्तविकता के सूक्ष्म रहस्यो की दृष्टि से महान् ग्र थ हैं वही उसकी ध्वनि और स्वर मे भी पूर्ण सगति और सौंदर्य पाया जाता है। एक 'हदीस' मे कहा गया है : "अल्लाह किसी चीज़ को भी उतने ध्यान से नही सुनता जितने ध्यान से वह 'नबी' को कुरआन गुनगुनाते हुये सुनता है।"—बुखारी, मुस्लिम, अबूदाऊद, नसई। एक दूसरी 'हदीस' है : "वह व्यक्ति हममे से नही है, जो 'कुरआन को अच्छी आवाज़ से न पढे'—बुखारी। इन 'रिवायतो' से जाहिर है कि कुरआन को जहाँ तक हो सके उत्तम ढग से पढना चाहिए। दिल मे तडप, द्रवण, कोमलता हो, स्वर मे रमणीयता हो, शब्दो के साथ-साथ कुरआन के अर्थ एवं अभिप्राय की ओर भी ध्यान हो।

३ वास्तव मे रमणीय और सुन्दर स्वर मे उसी समय सजीवता आती है जब उसमे मन के भाव भी सम्मिलित हो। ऐसे स्वर जिसमे मन के भाव भी मिले हो सीधे दूसरे दिलो को प्रभावित करते हैं। मन के भावो मे सबसे बढकर रस और सौंदर्य ईश-भय के भाव मे है यही भाव बन्दगी, विनयशीलता का प्राण है। प्रेम को भी यह भाव अभीष्ट है, ज्ञानी जन इस तथ्य को भली-भाँति जानते हैं।

४ हज़रत खबू मूसा अशअरी असाधारण तौर पर सुकण्ठ और अच्छी आवाज़ वाले थे। वे कुरआन पढ रहे थे। नबी सल्ल० उधर से गुज़रे तो आप उनकी आवाज़ सुनकर खडे हो गये और देर तक कुरआन सुनते रहे। जब वे कुरआन पढ चुके तो आपने वह बात कही जिसका उल्लेख इस 'हदीस' मे हुआ है। आपने अबू मूसा रज़ि० की आवाज़ और स्वर की मिठास को 'मिज़मार' की ध्वनि की

५. हज़रत इब्न अब्बास रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . जिस के अन्तर मे क़ुरआन मे से कुछ न हो वह उजाड़ घर के समान है[५] । —तिरमिज़ी, दारमी, हाकिम

उपमा दी । हज़रत दाऊद अ० अत्यन्त सुकंठ थे । आपके कथन का अभिप्राय यह है कि अबू मूसा रज़ि० को स्वर मे हिस्सा मिला है ।

५. मालूम हुआ कि क़ुरआन से दिलो की आबादी है । पवित्र से पवित्र और सुन्दर से सुन्दर वाणी भी क़ुरआन का स्थान नही ले सकती । क़ुरआन हमे हमारी प्रकृति और उस अभिरुचि से परिचित कराता है जिसके बिना हमारा जीवन भावहीन ही रह जाता ।

क़ुरआन हृदय-लोक ही की शोभा नही बल्कि वह हमारे घरो की भी शोभा और बहार है । एक 'हदीस' मे आया है "अपने घरो को कब्रिस्तान न बनाओ निश्चय ही 'शैतान' उस घर से भागता है जिसमे सूरा अल-बकरा पढ़ी जाती हो ।"—(मुस्लिम, नसई, तिरमिज़ी, अबू दाऊद, अहमद) मालूम हुआ कि जिस घर मे क़ुरआन की 'तिलावत' न हो वह घर कब्रिस्तान के समान उजाड है । उसमे कोई जीवन नही है । 'शैतान' यही चाहता है कि लोग वास्तविक जीवन से दुनिया और 'आख़िरत' मे वचित रहे । परन्तु यदि घर मे क़ुरआन की 'तिलावत' होती है, तो 'शैतान' की मक्कारी और चाल वहाँ नही चल सकती । सूरा अल-बकरा क़ुरआन की सबसे बड़ी सूरा है और उसमे वह सब कुछ मौजूद है जिसके द्वारा मनुष्य शैतानी हथकडो से अपने-आपको सुरक्षित रख सकता है । इस सम्पर्क से इस 'हदीस' मे सूरा अल-बकरा का विशेष रूप से उल्लेख हुआ है ।

क़ुरआन और 'नमाज़' मे गहरा सम्बन्ध है । इसीलिए 'हदीसो' मे क़ुरआन की 'तिलावत' (पठन) की तरह 'नमाज़' के बारे मे भी यह आदेश दिया गया है कि मनुष्य उसके द्वारा अपने घर को आबाद रक्खे और उसे उजाड भूमि न बनाये । हज़रत अबुल्लाह इब्न उमर रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा : "अपनी 'नमाज़ो' का कुछ हिस्सा अपने घरो मे अदा करो और उन्हे क़ब्रिस्तान न बनाओ ।"—(मुसनद अहमद) हज़रत ज़ैद बिन साबित रज़ि० कहते हैं कि नबी सल्ल० ने कहा : "आदमी की घर मे नमाज़ मेरी इस मस्जिद से उत्तम है, सिवाय 'फ़र्ज़' (अनिवार्य) नमाज़ के ।"—(अबूदाऊद) मस्जिद के अतिरिक्त अपने घर मे भी 'नमाज़' पढते रहने का अर्थ यह होता है कि नमाज़ आदमी के जीवन मे पूर्णत. सम्मिलित हो चुकी है, उसकी हैसियत किसी परिशिष्ट की कदापि नही है ।

६ हज़रत सग्र्द बिन उबादा रज़ि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो व्यक्ति कुरआन पढे और फिर उसे भुला दे वह 'कियामत' के दिन अल्लाह से इस दशा में मिलेगा कि उस का हाथ कटा हुआ होगा[६] । —अबू दाऊद

७, जुन्दुब बिन अब्दुल्लाह रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कुरआन पढो जब तक तुम्हारे दिलो की रुचि उस की ओर रहे और जब उकता जाओ तो उठ खड़े हो[७] ।

—बुखारी, मुस्लिम

८ हजरत अबू सईद खुदरी रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा बरकत वाले सर्वोच्च पालन कर्त्ता स्वामी का कहना है कि जिस व्यक्ति को कुरआन ने व्यस्त रक्खा और उसे इतना अवकाश न दिया कि वह मेरा जिक्र करता या मुझ से मागता, मैं उसे उस से बढ कर प्रदान करुँगा जो माँगने वालो का प्रदान करता हूँ[८] । दूसरे कलामों के मुकाबले में सर्वोच्च अल्लाह के कलाम की श्रेष्ठता ऐसी ही है जैसी स्वय अल्लाह की श्रेष्ठता एव उच्चता उस की पैदा की हुई चीजो के मुकाबले में है । —तिरमिजी, दारमी, बैहकी-शोअबुलईमान

९ हजरत उबादा मुलैको से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा हे कुरआन वालो ! तुम कुरआन से तकिया न करो[९] ।

---

६ कुरआन से विमुख होकर मनुष्य स्वय अपने व्यक्तित्व और अपने अस्तित्व को क्षति पहुँचाता है ।

७ मतलब यह है कि कुरआन को हार्दिक लगाव और आनन्द से पढना चाहिए । जब उकताहट पैदा हो, तो तुरन्त 'तिलावत' (पठन) समाप्त कर देनी चाहिए ।

८ अर्थात् यदि किसी व्यक्ति को कुरआन से ऐसा अनुराग है कि उसका अधिक समय कुरआन पढने और उसमे सोच-विचार और चिन्तन करने मे व्यतीत होता है, दुआ, जिक्र आदि के लिए उसके पास समय कम ही रहता है तो वह यह ख्याल न करे कि वह घाटे मे रहेगा । अल्लाह के यहाँ ऐसे व्यक्ति का जो कुरआन से गहरा लगाव रखता है अत्यन्त उच्च स्थान है । ऐसे व्यक्ति को वह उससे कही बढ कर प्रदान करेगा जो 'ज़िक्र' और दुआएँ करने वालो को प्रदान करेगा ।

९ अर्थात् कुरआन की ओर से असावधान न हो । उसके हक को पहचानो और उसे अदा करने की कोशिश करो ।

रात-दिन कुरआन की 'तिलावत' (पठन) करो जैसा कि उसकी 'तिलावता' का हक है, उसे फैलाओ[10], उसे गुनगुनाओ (अच्छी आवाज से पढो), और जो कुछ उस में है उसमे चिन्तन और सोच-विचार करो[11] कदाचित् तुम सफल हो जाओ। उस के 'सवाब' (पुण्य) में जल्दी न करो उसका 'सवाब' तो रक्खा हुआ है। —बैहकी-शोबुलईमान

क़ुरआन के अनुसार आचरण

عَنْ زِيَادِ بْنِ لَبِيدٍ قَالَ . ذَكَرَ النَّبِيُّ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ شَيْئًا فَقَالَ ذٰلِكَ عِنْدَ
اَوَانِ ذَهَابِ الْعِلْمِ . قُلْتُ يَارَسُوْلَ اللهِ وَكَيْفَ يَذْهَبُ الْعِلْمُ وَنَحْنُ نَقْرَءُ
الْقُرْاٰنَ وَنُقْرِئُهُ اَبْنَاءَنَا وَيُقْرِئُهُ اَبْنَاؤُنَا اَبْنَاءَهُمْ . فَقَالَ ثَكِلَتْكَ اُمُّكَ
يَا زِيَادُ اِنْ كُنْتُ لَاَرَاكَ مِنْ اَفْقَهِ رَجُلٍ بِالْمَدِيْنَةِ . اَوَلَيْسَ هٰذِهِ الْيَهُوْدُ
وَالنَّصَارٰى . يَقْرَءُوْنَ التَّوْرَاةَ وَالْاِنْجِيْلَ لَا يَعْمَلُوْنَ بِشَيْءٍ مِّمَّا فِيْهِمَا

——— ابن ماجه

१ हजरत जियाद बिन लबीद रजि० कहते है कि नबी सल्ल० ने एक (भयानक) चीज का जिक्र किया और कहा कि यह उस समय होगा जब कि ('दीन का') ज्ञान उठ जायेगा। मै ने कहा हे अल्लाह के रसूल! ज्ञान कैसे मिटेगा जब कि हम कुरआन पढ रहे है और अपनी औलाद को पढा रहे है और हमारे बेटे उसे अपनी औलाद को पढायेंगे? आप ने कहा . तुम्हे तुम्हारी माँ खोये हे जियाद! मै तो तुम्हे मदीना का अत्यन्त समझदार व्यक्ति समझता था। क्या ये 'यहूदी' और

१० अर्थात् कुरआन के प्रचार मे हिस्सा लो। पठन-पाठन और अर्थ, टीका आदि द्वारा कुरआन की शिक्षा को प्रसारित करो।

११ अर्थात् कुरआन मे सोच-विचार से काम लो क्योकि इसके बिना कुरआन की बहुमूल्यता का अनुमान नही हो पाता। और न कुरआन के गहरे अर्थ और रहस्यो से मनुष्य परिचित हो पाता है। कुरआन से पूर्णत. लाभान्वित होने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य उसमे सोच-विचार और चिन्तन से काम ले। कुरआन को हमारी पूरी रुचि और ध्यान अभीष्ट है इसके बिना हमारी पहुँच क़ुरआन के उच्च और पवित्र उद्देश्यो तक नही हो सकती।

'ईसाई' तौरात और इन्जील को नही पढते परन्तु उन में से किसी चीज़ को व्यवहार में नही लाते[1]। —इब्नमाजह

२ हजरत सुहब रजि० से उल्लिखित है-कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कुरआन पर 'ईमान' नही लाया वह व्यक्ति जिस ने उस की हराम की हुई चीजो को 'हलाल' (वैध) कर लिया[2]। —तिरमिजी

३. हजरत अबू सईद खुदरी रजि० बयान करते हैं कि मैं ने नबी सल्ल० को कहते सुना इस समुदाय मे कुछ लोग पैदा होगे, उन की 'नमाज' के सामने तुम अपनी नमाज को तुच्छ समझोगे। वे क़ुरआन पढ़ेगे परन्तु वह उन के गले के नीचे न उतरेगा। 'दीन' (धर्म) से वह इस प्रकार साफ़ निकल जायेगे जैसे तीर शिकार से निकल जाये। तीर चलाने वाला अपने तीर की लकड़ी, उस के लोहे और परों को देखता है और उसके पिछले भाग को देखता है कि उस मे कुछ रक्त भी लगा (या नही)[3]। —बुखारी, मुस्लिम

---

१. अर्थात् जब ज्ञान के अनुसार मनुष्य का कर्म और व्यवहार न हो, तो समझ लेना चाहिए कि ज्ञान शेष नही रहा। ज्ञान से फायदा उठाने वाले न हो तो किताब के पृष्ठो मे उसके मौजूद होने का कोई अर्थ नही होता। यदि कुरआन के अनुसार हम चलते है तो निश्चय ही 'आखिरत' मे हमे सफलता प्राप्त होगी। परन्तु यदि कुरआन से बेपरवा होकर हम जीवन व्यतीत कर रहे है, तो फिर यही कुरआन हमारे विरुद्ध हुज्जत होगा। हम अपनी बेअमली का कोई उज्र भी अल्लाह के सामने पेश न कर सकेगे। एक 'हदीस' मे आता भी है . कुरआन तुम्हारे हक मे हुज्जत (दलील व तर्क) होगा या तुम्हारे विरुद्ध 'हुज्जत' होगा।"—मुस्लिम, तिरमिजी इब्न माजह, अहमद, दारमी।

२. ऐसा हृदयहीन व्यक्ति जिसके मन और मस्तिष्क और आचार व व्यवहार मे कुरआन के पढने के बाद भी कोई परिवर्तन न हो, कुरआन पढने के बाद भी वही कुछ करता है जिससे कुरआन रोकता है, ऐसा व्यक्ति वास्तव मे कुरआन को मानता नही। कुरआन के मानने का तो अर्थ यह होता है कि मनुष्य अपने आपको बिल्कुल कुरआन के नेतृत्व मे दे दे। उन सभी चीजो से बाज़ आ जाये जिनसे कुरआन रोकता है।

३. मतलब यह है कि जिस प्रकार शिकार के शरीर को फाडकर कोई तीर निकल जाये और उसमे कुछ भी रक्त का धब्बा न लग सके यहाँ तक कि शिकारी तीर को ध्यान से देखे फिर भी उसे इस बात मे सन्देह ही रहे कि उसमे रक्त का कुछ धब्बा लगा भी या नही। ठीक इसी तरह कुछ लोग 'दीन' (धर्म) से बिल्कुल

४ हज़रत बुरीदा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो व्यक्ति कुरआन पढे और उस के द्वारा लोगो से खाये[४] वह 'कियामत' के दिन इस दशा में आयेगा कि उस का चेहरा हड्डी-ही-हड्डी होगा, उस पर मास न होगा[५]।

—अल-बैहकी, शोअबुलईमान

५ हजरत इब्न उमर रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा ईर्ष्या के योग्य दो ही व्यक्ति है एक वह जिसे अल्लाह ने कुरआन (का ज्ञान) दिया तो वह रात-दिन के समयो में उसे कायम करता है[६] और दूसरा वह जिसे अल्लाह ने माल दिया तो वह उसे रात-दिन (अल्लाह के मार्ग मे) ख़र्च करता है।

—बुख़ारी, मुस्लिम, तिरमिजी इब्नमाजह अहमद, दारमी

निकल भागेगे। वे 'दीन' से कुछ भी प्रभावित न हो सकेगे। कुरआन पढेगे परन्तु कुरआन का उनके दिल पर कुछ भी असर न होगा। हालाँकि उनकी नमाज़े देखने मे ऐसी शुद्ध और सुन्दर लगेगी कि देखने वालो के मन मे उनके प्रति प्रतिस्पर्धा की भावना उत्पन्न होगी।

४ अर्थात् कुरआन को दुनिया हासिल करने का साधन बनाए।

५. अल्लाह ऐसे व्यक्ति का सम्मान और उसके मुख का तेज छीन लेता है जो कुरआन का निरादर करता और उसे तुच्छ उद्देश्य के लिए प्रयोग करता है। 'आखिरत' मे पूर्ण रूप से उसकी अपमानित दशा लोगो के सामने होगी। सासारिक जीवन मे भी उसकी हीनता निगाह रखने वाले व्यक्तियो से छिपी हुई नही रहती।

६ अर्थात् उसका हक अदा करने मे लगा रहता है। उसकी 'तिलावत' (पठन) करता, 'नमाजो' मे उसे पढता, उसकी शिक्षाओ का पालन करता, उसके सन्देशो का ससार मे प्रचार करता और उन्हे व्यावहारिक रूप मे मानव-जीवन मे लाने की कोशिश करता है। कुरआन की 'तिलावत' (पठन) और उसके आदेशो के पालन के साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि उसे दूसरो तक पहुँचाया जाये। उसकी शिक्षाओ को अधिक-से-अधिक प्रसारित किया जाये। 'हदीस' मे आया भी है : "मेरी ओर से (दूसरो तक) पहुँचाओ यद्यपि एक ही 'आयत' हो।" —बुख़ारी, तिरमिज़ी, अहमद, दारमी।

'आखिरत' की धारणा

'आखिरत' से अभिप्रेत वह जीवन है जो मृत्यु के पश्चात् मनुष्यों को प्रदान किया जायेगा। वर्त्तमान लोक को अल्लाह तोड-फोड कर नष्ट कर देगा। और नये सिरे एक स्थायी और उच्च श्रेणी के लोक का निर्माण किया जायेगा। मनुष्यों को पुनः जीवित करके उठाया जायेगा। और उनसे उनके कर्मों का हिसाब लिया जायेगा। उनके कर्म के अनुसार अल्लाह उनके अन्तिम परिणाम के बारे मे निर्णय करेगा। 'आखिरत' की धारणा में उन बहुत से प्रश्नों का उत्तर मिल जाता है जो इस जीवन में मनुष्य के मन में उठते रहते हैं।

संसार में इस पर कम ही लोग विचार करते हैं कि यह संसार क्या है? इसका सृष्टिकर्त्ता कौन है? जीवन क्या है? इसका प्रारम्भ कैसे हुआ? इस जीवन का वास्तविक उद्देश्य और अभिप्राय क्या है? इन प्रश्नों पर गहरे विचारक ही सोचते और चिन्तन करते हैं। परन्तु मृत्यु की घटना एक ऐसी घटना है जो सभी को चौका देती हे। हर व्यक्ति यह सोचने पर विवश होता है कि मृत्यु के पश्चात् क्या होगा? यह अभिलाषा प्रत्येक को होती है कि क्या ही अच्छा होता यदि वह झाँक कर देख सकता कि मृत्यु के उस पार क्या है? मर कर मनुष्य कहाँ जाता है और उस पार का लोक कैसा है? क्या मृत्यु के पश्चात् भी कोई जीवन है? या मृत्यु के पश्चात् मनुष्य सदैव के लिए मिट्टी में मिल जाता है? मनुष्य के मन में स्वभावत उठने वाले इन प्रश्नो के मानव-मस्तिष्क ने विभिन्न उत्तर दिये है। परन्तु यह एक वास्तविकता है कि 'आखिरत' की धारणा के रूप में इन प्रश्नों का जो उत्तर 'इस्लाम' ने दिया है वही उत्तर सबसे अधिक दिल को लगता है। इस लोक में फैली हुई अल्लाह की निशानियों से भी इसी धारणा की पुष्टि होती है। इसी धारणा की शिक्षा अल्लाह के सभी 'नबियो' ने दी है।

यह मनुष्य की स्वाभाविक इच्छा है कि उसे ऐसा जीवन प्राप्त हो जो कभी समाप्त होने वाला न हो। जिसमें हर प्रकार का सुख और आनन्द हो। और जिसमें किसी प्रकार के कष्ट और दुख का सामना न

करना पडे। मनुष्य एक ऐसी बहार का स्वप्न देखता है जो पतझार से मुक्त हो। मनुष्य की यह कामना वर्तमान जीवन में पूर्ण नही हो सकती। यहाँ किसी व्यक्ति को शाश्वत जीवन प्राप्त नही है और न इसकी वर्तमान लोक मे कोई सम्भावना पाई जाती है कि कोई सदैव जीवित रह सके। फिर इस जीवन मे जहाँ सुख है वही दुख भी है। निरोगता के साथ रोग और जवानी के साथ बुढापा की मुसीबत भी लगी हुई है। किसी भी चीज को स्थायित्व प्राप्त नही है। मनुष्य की इच्छाएँ यदि पूरी हो सकती है और उसका स्वप्न यदि सत्य सिद्ध हो सकता है, तो वह किसी ऐसे जीवन में सिद्ध हो सकता है जो इसके पश्चात् आने वाला हो।

एक और पहलू से विचार किजिए। इस ससार में मनुष्य यदि न्याय करता है, तो बहुत से ऐसे लोग भी होते हैं जिनका मानो व्यवसाय ही यह है कि वे संसार को अन्याय और अत्याचार से भर दे। फिर इसके साथ बहुधा ऐसा भी होता है कि अत्याचारी व्यक्ति ससार मे सुख और चैन से जीवन व्यतीत करता है और सच्चाई के रास्ते पर चलने वाला व्यक्ति मुसीबत और दुख मे ग्रस्त होता है। न्याय की बात यह है कि ज़ालिम को उसके ज़ुल्म की सजा मिले और सत्य प्रिय एवं सज्जन और सुधारक को उसकी सेवाओ का पूरा-पूरा बदला दिया जाये। न्याय की यह माँग उसी समय पूरी हो सकती है जबकि यह मान लिया जाये कि इस जीवन के पश्चात् भी कोई जीवन है जिसमे हर एक को उसके कर्मो का पूरा-पूरा बदला दिया जायेगा।

मनुष्य की यह कामना भी 'आखिरत' के जीवन मे ही पूरी हो सकती है कि वह उन वास्तविकताओं को जान ले जिनका निरीक्षण इस ससार मे सम्भव नही। वे वास्तविकताएँ जिन पर आज परोक्ष का आवरण पडा हुआ है 'आखिरत' ही में अनावृत हो सकेगी।

वह अल्लाह जो विशाल विश्व का निर्माता है, जिसने हमें इस ससार मे जीवन प्रदान किया, उसके लिए यह कुछ भी मुश्किल काम नही है कि वह इस वर्तमान विश्व को अस्त-व्यस्त कर के नये सिरे से एक दूसरे ससार का निर्माण करे और मृत्यु के पश्चात् मनुष्यो को दोबारा जीवन प्रदान करे। जिस अल्लाह की दयालुता और न्याय पर वर्तमान विश्व की व्यवस्था कायम है। उसकी दयालुता और न्याय की ही माँग है कि इस ससार के पश्चात् वह एक दूसरे ससार की रचना करे और इस जीवन के पश्चात् मनुष्यों को एक नया जीवन प्रदान करे। इसलिए अल्लाह इस ससार के नष्ट-भ्रष्ट होने के पश्चात् एक दूसरे ससार का निर्माण अवश्य

करेगा और मनुष्यो को उनकी मृत्यु के पश्चात् दोबारा जीवन प्रदान करेगा। लोगो के अन्तिम परिणाम का निर्णय उनके कर्म के अनुसार होगा। अच्छे लोग 'जन्नत' मे दाखिल होंगे जहाँ उनके लिए वह सुख और आनन्द है जिसकी आज हम कल्पना भी नही कर सकते। बुरे लोगो का ठिका 'जहन्नम' (नरक) होगा। 'जहन्नम' अजाव और यातनाओं का घर है, जहाँ किसी प्रकार की शान्ति और आराम नही।

'आखिरत' सम्बन्धी धारणा की समस्या केवल एक दार्शनिक समस्या नही है। इस धारणा का मनुष्य के नैतिक एव व्यावहारिक जीवन से गहरा सम्पर्क है। 'आखिरत' को मानने के पश्चात् मनुष्य अवश्य ही अपने आपको, अल्लाह के सामने उत्तरदायी समझेगा। वह संसार में यह समझते हुये सारे काम करेगा कि एक दिन उसे अल्लाह के यहाँ अपने कामो का हिसाब देना है। उसके अपने कर्मों पर ही उसके भविष्य की सफलता अथवा असफलता अवलम्बित है। 'आखिरत' को मानने वाला कभी भी न्याय, सच्चाई और सत्यवादिता की उपेक्षा नही कर सकता। भले ही इसके कारण ससार मे उसे हानि ही हो। वह जानता है कि 'आखिरत' का लाभ ही वास्तविक लाभ है। और 'आखिरत' की हानि ही वास्तविक हानि है। सासारिक जीवन अस्थायी और नाशवान है। और 'आखिरत' का जीवन इस से उत्तम और स्थायी है। उसकी दृष्टि में यह बडी ही नादानी की बात है कि मनुष्य सासारिक सुख और वैभव के लिए अपनी 'आखिरत' को तबाह होने दे। इसके विपरीत जो व्यक्ति 'आखिरत' को नही मानता जिसे किसी आने वाले जीवन के बनने-बिगडने की आशका नही है वह बस इसी सासारिक जीवन के लाभ-हानि को अपने सामने रक्खेगा। वह आग में हाथ डालने से तो अवश्य बचेगा इसलिए कि वह जानता है कि आग हाथ को जला देगी परन्तु झूठ, अन्याय, विश्वासघात, धोखा, वचन-भङ्ग, जिना और ऐसे ही दूसरे उन कर्मों से बचना उसके लिए मुश्किल है जिनका फल पूर्ण रूप से वर्तमान जीवन में सामने नही आता।

———

आखिरत पर ईमान

عَنْ عَلِيِّ بْنِ اَبِيْ طَالِبٍ قَالَ، قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ. لَا يُؤْمِنُ عَبْدٌ حَتّٰى يُؤْمِنَ بِاَرْبَعٍ يَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَاَنِّيْ مُحَمَّدٌ رَّسُوْلُ اللّٰهِ. بَعَثَنِيْ بِالْحَقِّ وَ يُؤْمِنُ بِالْمَوْتِ وَيُؤْمِنُ بِالْبَعْثِ بَعْدَ الْمَوْتِ وَيُؤْمِنُ بِالْقَدْرِ —— ترمذی

१ हजरत अली बिन अबू तालिब रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कोई बन्दा उस समय तक मोमिन (ईमान वाला) नही हो सकता जब तक कि चार चीजो की गवाही न दे अल्लाह के सिवा कोई इलाह (पूज्य) नही, मैं अल्लाह का रसूल हूँ मुझे हक के साथ भेजा गया है, मृत्यु पर और मृत्यु के पश्चात् उठाये जाने पर ईमान लाये और तकदीर पर ईमान लाये[1]। —तिरमिजी

'बरजख'

● عَنْ عَبْدِ اللّٰهِ بْنِ عُمَرَ قَالَ قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ اِنَّ اَحَدَكُمْ اِذَا مَاتَ عُرِضَ عَلَيْهِ مَقْعَدُهٗ بِالْغَدَاةِ وَالْعَشِيِّ اِنْ كَانَ مِنْ اَهْلِ الْجَنَّةِ فَمِنْ اَهْلِ الْجَنَّةِ. وَاِنْ كَانَ مِنْ اَهْلِ النَّارِ فَمِنْ اَهْلِ النَّارِ فَيُقَالُ هٰذَا مَقْعَدُكَ حَتّٰى يَبْعَثَكَ اللّٰهُ اِلَيْهِ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ —— بخاری مسلم

१ हजरत अब्दुल्लाह बिन उमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम में से कोई मर जाता है, तो प्रात समय और सन्ध्या को उस के सामने उस का ठिकाना पेश किया जाता है। यदि मरने वाला 'जन्नत' वालो मे से है, तो 'जन्नत' वालों के ठिकानों में से और यदि वह ('जहन्नम' की) आग वालों में से है, तो आग वालों

१ अर्थात् 'मोमिन' होने के लिए जिस तरह यह आवश्यक है कि आदमी 'तौहीद' (एकेश्वरवाद)' और 'रिसालत' (ईशदूतत्व)' पर ईमान लाये उसी तरह इसके लिए यह भी आवश्यक है कि वह इस पर विश्वास रखता हो कि मरने के पश्चात् भी कोई जीवन है। मृत्यु के पश्चात् उसे दोबारा उठाया जायेगा और उसके जीवन-कर्म की परीक्षा की जायेगी और उसके कर्म के अनुसार उसे जन्नत या जहन्नम मे दाखिल किया जायेगा।

के ठिकानों मे से (उस के सामने पेश किया जाता है)। और कहा जाता है कि यह तेरी मजिल है यहाँ तक कि 'कियामत' के दिन तुझे दोबारा उठा कर उस तक पहुँचा देगा[1]। —बुखारी, मुस्लिम

२, हजरत अबूहुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा : जब मरने वाला कब्र में पहुँचता है (यदि वह नेक और 'मोमिन' है) तो वह बिना भय और घबराहट के कब्र मे बैठता है फिर उस से कहा जाता है कि तुम किस ('दिन') में थे ? वह कहता है : मैं 'इस्लाम' मे था। फिर कहा जाता है कि ये व्यक्ति कौन हैं ? वह कहता है कि ये मुहम्मद, अल्लाह के 'रसूल' हैं, जो अल्लाह की ओर से प्रकाशमान प्रमाणो के साथ आये, हम ने इन की तसदीक की। फिर उस से कहा जाता है कि क्या तुम ने अल्लाह को देखा है ? वह कहता है कि किसी के लिए सम्भव नही कि वह (संसार मे) अल्लाह को देख सके। फिर उस के लिए ('जहन्नम' की) आग की ओर एक खिडकी खोली जाती है। यह उस की ओर देखता है कि उस का कुछ हिस्सा कुछ हिस्से को खाये जा रहा है। फिर उस से कहा जाता है कि उस चीज़ को देख ले जिस से अल्लाह ने तुझे बचा लिया। फिर उस के लिए 'जन्नत' की ओर एक

१ यह 'हदीस' बताती है कि मरने के पश्चात् मनुष्य बिल्कुल लुप्त नही हो जाता। उसकी आत्मा अपनी व्यक्तिगत विशेषताओ के साथ शेष रहती है। प्रात समय और सायकाल उसे उसके वास्तविक ठिकाने की झाँकी दिखाई जाती है। 'जन्नत' को देख कर 'जन्नत' वाले को जो प्रसन्नता होगी उसकी आज हम कल्पना भी नही कर सकते। इसी तरह 'जहन्नम' (नरक) को देखकर नारकी की जो दशा होगी और वह जिस दुख और सन्ताप मे ग्रस्त होगा उसका अनुमान करना भी हमारे लिए असम्भव है। कुरआन मजीद से भी इस 'हदीस' के बयान की पुष्टि होती है। दे० सूरा या सीन० आयत २६-२७। सूरा अल-मोमिनून मे फिरऔन के लोगो के बारे मे कहा गया है . "तो जो चाल वे चल रहे थे उसकी बुराइयो से अल्लाह ने उसे बचा लिया, और फिरऔन के लोगो को बुरी यातना ने आ घेरा, आग है, जिसके सामने वे प्रात समय और साय काल पेश किये जाते हैं; और जिस दिन वह घडी (अर्थात् 'कियामत') कायम होगी (कहा जायेगा)' . फिरऔन के लोगो को सख्त यातना मे दाखिल करो (आयत ४५-४६)। मालूम हुआ कि मृत्यु के पश्चात् मनुष्य बिल्कुल लुप्त और विनष्ट नही हो जाता केवल उससे उसका वर्तमान शरीर छिन जाता है। उसका व्यक्तित्व मृत्यु के पश्चात् भी शेष रहता है। उसे दुख-सुख का एहसास भी होता है।

खिड़की खोली जाती है। वह उस की ताज़गी और शोभा और जो-कुछ उस मे हैं देखता है। फिर उस से कहा जाता है कि है यह तुम्हारा ठिकाना है। तुम विश्वास पर स्थिर रहे, उसी पर तुम मरे और उसी पर अल्लाह ने चाहा तो तुम उठाये जाओगे।

और बुरा आदमी अपनी क़ब्र में बैठता है तो वह डर और परेशानी की हालत मे होता है। उस से कहा जाता है कि तू किस ('दीन') मे था ? वह कहता है कि मैं नही जानता। फिर कहा जाता है कि ये कौन व्यक्ति हैं ? कहता है कि मैं ने लोगो को जो बात कहते सुना वही बात मैं ने भी कह दी। उस समय उस के लिए 'जन्नत' की ओर एक खिडकी खोली जाती है, तो वह उस की ताज़गी और शोभा और जो-कुछ उस में है देखता है। फिर उस से कहा जाता है कि उस चीज़ की ओर देखो जिसे अल्लाह ने तुम्हारी ओर से फेर दिया है। फिर उसके लिए ('जहन्नम' की) आग की ओर एक खिडकी खोल दी जाती है। वह उस की ओर देखता है कि उस का कुछ हिस्सा कुछ हिस्से को खाये जा रहा है। उस से कहा जाता है कि यह तुम्हारा ठिकाना है। तुम सन्देह में पडे रहे और इसी पर तुम मरे और इसी पर अल्लाह ने चाहा तो तुम उठाये जाओगे[2]। —इब्न माजह

---

२. मरने के पश्चात् अपने कर्म के अनुसार मनुष्य की आत्मा या तो सुख मे होती है या कष्टो और यातनाओ मे ग्रस्त रहती है। शरीर से विलग होने के पश्चात् भी आत्मा मे व्यक्ति-विशेषता शेष रहती है। शरीर से विलग होने के पश्चात् आत्मा विनष्ट नही होती बल्कि अपने पूरे व्यक्तित्व के साथ जिसका निर्माण विचारो, भावनाओ और कर्मो के द्वारा सासारिक जीवन मे होता है शेष रहती है। मृत्यु के पश्चात् से लेकर 'क़ियामत' के दिन तक आत्मा जिस लोक मे रहती है और उसे जिन चीज़ो का सामना करना पडता है उसे पूरे तौर पर समझना हमारे लिए मुश्किल है। मरने के बाद से लेकर 'क़ियामत' के दिन तक आत्मा जिस लोक मे रहती है उसे 'बरज़ख' कहते है क़ब्र की तकलीफ या आराम से अभिप्रेत वास्तव मे 'बरज़ख' की तकलीफ या आराम है। मरने वाला चाहे ज़मीन मे गाड दिया गया हो या उसके शव को जला दिया जाये या दरिया मे डाल दिया जाये। यदि वह अज़ाब और यातना का भागी है तो वह अवश्य यातना मे ग्रस्त होगा। और यदि उसके कर्म अच्छे हैं और वह अल्लाह की कृपा और दयालुता का अधिकारी है, तो उसकी आत्मा को वे समस्त सुख और आनन्द प्राप्त होंगे जिनका अन्दाज़ा करना भी हमारे लिए

३ हजरत जाबिर रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा जब मुर्दे को कब्र में दाखिल किया जाता है तो उस के सामने सूर्य के अस्त होने के निकट के समय का दृश्य प्रस्तुत किया जाता है। वह अपनी आँखे मलता हुआ उठ बैठता है और कहता है कि मुझे छोडो, 'नमाज' अदा कर लेने दो[3]। —इब्न माजाह

४. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · जब 'मोमिन' ('ईमान' वाले व्यक्ति) की मृत्यु का समय आ जाता है तो 'रहमत' (दयालुता) के 'फिरिश्ते' सफेद रेशमी वस्त्र ले कर आते हैं और कहते है कि निकल आओ— इस अवस्था में कि तुम उस (अल्लाह) से राजी हो और वह तुम से राजी है— अल्लाह की 'रहमत' (दयालुता) और सुगन्धित फूल-पौधो की ओर और 'रब' (पालन कर्त्ता स्वामी) की ओर जो क्रुद्ध नही है, तो वह (आत्मा) निकलती है अत्यन्त उत्तम कस्तूरी की सुगन्ध की भाँति यहाँ तक कि हाथों-हाथ उसे एक-दूसरे से लेते है यहाँ तक कि आसमान के दरवाजों पर लेकर पहुँचते हैं। (आसमान वाले 'फिरिश्ते') कहते है: क्या ही अच्छी है यह सुगन्ध जो धरती की ओर से तुम्हारे पास आई है! फिर उसे 'ईमान' वालों की आत्माओं के पास लाते है। तो वे उस से मिल

कठिन है। मरने के बाद तकलीफ और आराम का सम्बन्ध प्रत्यक्षता मनुष्य की आत्मा से होता है जबकि सासारिक जीवन मे शरीर बीच मे माध्यम का कार्य करता है। 'बरज़ख' की अवस्था का अन्दाज़ा स्वप्न देखने वाले व्यक्ति के आराम और तकलीफ के अनुभव से लगाया जा सकता है। यदि स्वप्न देखने वाले की नीद न टूटे, तो स्वप्न मे उस पर जो कुछ गुज़रेगा वह उसके लिए वास्तविकता होगी, वह उसे स्वप्न नही समझ सकता। क़ुरआन और 'हदीस' मे 'बरज़ख' के वृतान्तो को उन ही मिसालो और उपमाओ के द्वारा बुद्धिगम्य बनाने की कोशिश की गई है जिनसे हम सासारिक जीवन मे परिचित है।

३ कब्र या 'बरज़ख' मे उठने और बातचीत करने का सम्बन्ध शरीर से नही है बल्कि मनुष्य के आत्मिक अस्तित्व से हैं। इस 'हदीस' मे एक 'मोमिन' व्यक्ति का उल्लेख किया गया है जिसे सासारिक जीवन मे 'नमाज़' की चिन्ता लगी रहती थी। ऐसे व्यक्ति के पास जब 'फिरिश्ते' आयेंगे तो उसे ऐसा लगेगा जैसे शाम हो रही है और उसने अभी 'अस्र' की 'नमाज़' अदा नही की है। उसको सबसे पहले 'नमाज़' की चिन्ता होगी और यह उसकी सफलता का प्रत्यक्ष प्रमाण होगा।

तर उन से कहीं अधिक प्रसन्न होते हैं जितनी प्रसन्नता कि तुम में से किसी को अनुपस्थित व्यक्ति से मिल कर होती है जो उस के पास आये। फिर वे उस से पूछते हैं कि अमुक व्यक्ति का क्या हाल है और अमुक व्यक्ति का क्या हाल है? तो (उन में से कुछ लोग) कहते हैं इन्हें छोड़ो कि संसार के दुःख में पड़े हुये थे (इन्हें कुछ आराम करने दो) फिर जब कहता है कि अमुक व्यक्ति का तो देहान्त हो गया क्या वह तुम्हारे पास नहीं आया? वे कहते हैं: उसे उस के ठिकाने 'हावियह' ('जहन्नम') की ओर ले गये।

और जब 'काफ़िर' के मरने का समय आता है तो यातना के 'फ़िरिश्ते' टाट ले कर आते हैं फिर कहते हैं कि निकलो—इस अवस्था में कि तुम उस (अल्लाह) से अप्रसन्न और वह तुम से अप्रसन्न है— अल्लाह की यातना की ओर, तो वह मुर्दार की अत्यन्त तीव्र दुर्गन्ध की तरह निकलती है यहाँ तक कि उसे धरती के दरवाजे पर लाते हैं, तो वे कहते हैं कि कैसी दुर्गन्ध है यहाँ तक कि उसे 'काफिरों' की आत्माओं में पहुँचा देते हैं[4]। —नसई

---

४ इस 'हदीस' से मालूम होता है कि 'बरज़ख़' एक अलग लोक है जिसकी व्यवस्था और नियम आदि का वर्तमान जीवन में सही अन्दाजा नहीं किया जा सकता। 'हदीसों' में उस लोक के बारे में जो बातें बताई गई हैं उनसे मालूम होता है कि 'बरज़ख़' एक विस्तृत लोक है। वहाँ पहुँचने वाली आत्माओं का उन आत्माओं से मिलन भी होता है जो उनसे पहले वहाँ पहुँची होती हैं। वे दुनिया का हाल भी पूछती हैं। इससे मालूम हुआ कि संसार से उनका कुछ न कुछ सम्बन्ध और लगाव शेष रहता है। इस 'हदीस' से इस बात का भी पता चलता है कि 'बरज़ख़' में नेक लोगों का निवास बुरे लोगों से अलग होता है। अच्छे लोगों को उच्च स्थान मिलता है। बुरों को अधमस्थल में डाल दिया जाता है।

'क़ियामत' के लक्षण

عَنْ اَنَسٍ قَالَ، قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ بُعِثْتُ اَنَا وَالسَّاعَةُ كَهَاتَيْنِ ——— بخاری مسلم

१ हजरत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . मुझे रसूल वना कर (ससार में) भेजा जाना और वह ('कियामत' की) घड़ी इन दो उँगलियों के समान है[1] ।

—बुख़ारी, मुस्लिम

२. हजरत अनस रज़ि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . "कियामत' कायम नही होगी जब तक कि ऐसा समय न आ जाये कि धरती में अल्लाह-अल्लाह न कहा जाये" । और एक 'रिवायत' के शब्द ये है : "कियामत क़ायम न होगी किसी ऐसे व्यक्ति पर जो अल्लाह-अल्लाह कहता हो[2]" ।

—मुस्लिम

३. हज़रत अब्दुल्लह बिन मसऊद रज़ि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : 'कियामत' केवल बुरे लोगो पर कायम होगी[3] ।

—मुस्लिम

४. हज़रत अनस रज़ि० कहते हैं कि मैं ने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि 'क़ियामत' के चिन्ह्न ये हैं ज्ञान उठा लिया जायेगा[4],

---

१. नबी सल्ल० ने अपनी दोनो उँगलियाँ उठाकर यह बात कही थी । मतलब यह था कि जिस प्रकार ये दोनो उँगलियाँ क़रीब-क़रीब है, दोनो के बीच कोई तीसरी उँगली नही है ठीक इसी तरह मेरे बाद 'कियामत' ही आयेगी ।

२. अर्थात् जब तक धरती पर अल्लाह का नाम लेने वाले मौजूद होंगे, यह धरती और आकाश शेष रहेंगें, 'क़ियामत' नही आयेगी । परन्तु जब धरती पर अल्लाह का नाम लेने वाला कोई न होगा, तो फिर इस दुनिया का विलय हो जायेगा । यह कितनी विचित्र बात है कि ससार मे साधारणतया उन ही लोगो पर ज़ुल्म और अत्याचार किया जाता है जिनके अल्लाह का नाम लेने के कारण ही यह ज़मीन और आसमान क़ायम है ।

३. अर्थात् जिस समय 'कियामत' आयेगी उस समय ज़मीन पर वही लोग होंगे जो चरित्रहीन और अल्लाह को भूले हुये होंगे ।

४. ज्ञान से अभिप्रत 'दीन, (धर्म) का ज्ञान है आशय यह है कि 'दीन' का ज्ञान

अज्ञान अधिक होगा, जिना (व्यभिचार) की अधिकता होगी, शराब बहुत पी जाने लगेगी। पुरुष कम स्त्रियाँ अधिक हो जायेंगी यहाँ तक कि पचास स्त्रियों का सिरधरा एक (पुरुष) होगा।

—बुखारी, मुस्लिम, तिरमिजी, नसई, इब्नमाजह, अहमद

५. हजरत अबूहुरैरा कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० बाते कर रहे थे कि एक 'आराबी' (ग्रमीण) आया और उस ने कहा 'कियामत' कब होगी ? आपने कहा जब अमानत (न्यास) नष्ट हो जाये तो 'कियामत' की प्रतीक्षा करो। उस ने कहा वह कैसे नष्ट होगी ? आप ने कहा . जब मामले अयोग्य व्यक्ति के हाथ में दे दिये जाये तो 'कियामत' की प्रतीक्षा करो[५]। —बुखारी

रखने वाले ढू ढने से नही मिलेंगे। लोग धर्म एव ज्ञान के अनुसार आचरण करना छोड देंगे। अल्लाह के आदेश के बदले लोग अपनी तुच्छ इच्छाओ और वासनाओ के दास हो जाएँगे। अज्ञान का राज्य होगा। ऐसा ज्ञान जिसे प्राप्त करने के पश्चात् मनुष्य अल्लाह से अपरिचित ही रहे वह ज्ञान नहीं अज्ञान है, भले ही उसका मनोविज्ञान, दर्शन, नैतिक शास्त्र आदि सुन्दर-से-सुन्दर नाम क्यो न रख लिया जाये। ऐसे ज्ञान और ऐसी विद्याओ की बहुतात इस बात का लक्षण कदापि नही है कि ज्ञान मौजूद है। ज्ञान तो वही है जिस से अल्लाह कि पहचान हो सके, जिस से मनुष्य को अल्लाह की इच्छा अथवा अनीच्छा का ज्ञान हो सके। और जीवन के समस्त मामलो मे वह अल्लाह का आज्ञाकारी बन सके।

५. अर्थात् जब हुकूमत, राज्यसत्ता, अधिकार और मामला ऐसे लोगो के हाथो मे आ जाये जो अयोग्य और अल्लाह से विमुख हों तो समझ लो की 'कियामत' दूर नही है। कुछ 'हदीसो' से मालूम होता है कि 'कियामत' के निकट अज्ञान छा जायेगा। हर तरह के फितने और आपदाये सिर उठायेंगी। आदमी अपने दायित्व को भूल बैठेगा। एक 'रिवायत' के शब्द ये हैं "समय जल्द-जल्द आयेगा, कर्म कम हो जायेगा। कृपणता और लोभ छाया होगा। फितने (उपद्रव) वढेगे, कत्ल और लूट-पाट का बाजार गर्म होगा" —बुखारी, मुस्लिम। एक 'रिवायत' मे है कि 'कियामत' उस समय तक कायम न होगी जब तक कि तुम अपने 'इमाम' (नायक, खलीफा) की हत्या न करोगे और परस्पर एक दूसरे पर तलवार न चलाओगे। और तुम्हारी दुनिया के वारिस (उत्तराधिकारी) तुम्हारे दुर्जन और दुराचरण लोग न हो जायेंगे"

—तिरमिजी

६. हजरत अबूहुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'कियामत' नही आयेगी जब तक कि माल दौलत की रेल-पेल न हो जाये यहाँ तक कि आदमी अपने माल की 'जकात' निकालेगा तो उसे ऐसा कोई व्यक्ति न मिलेगा जो उसे कबूल कर ले। और 'कियामत' नही आयेगी जब तक कि अरब की भूमि (मरुस्थल) लहलहाते शस्यस्थलो और नहरों मे न परिवर्ति हो जाये[६]।

—मुस्लिम

७. हजरत आइशा रजि० कहती है कि अरब के अक्खड बद्दू नबी सल्ल० के पास आते और आप से पूछते कि 'कियामत' कब आयेगी ? आप उन मे सब से कम आयु वाले व्यक्ति की ओर देखते और कहते यदि यह जीवित रहा तो यह बूढा न हो पायेगा कि तुम पर तुम्हारी 'कियामत' आ जायेगी[७]। —बुखारी, मुस्लिम

८ हजरत अबूहुरैरा रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब 'फै' ('गनीमत' का माल) धन ठहरा लिया जाये, और 'अमानत' (न्यास) को 'गनीमत' (लडाई में मिला दुश्मन माल जिस का उपभोग वैध है) समझा जाये और 'जकात' को तावान समझा जाये और ज्ञान 'दीन' (धर्म) के अतिरिक्त दूसरी चीज के लिए प्राप्त किया जाये और पुरुष स्त्री का आज्ञाकारी हो जाये और अपनी माता का

---

६. मालूम हुआ कि 'कियामत' के निकट ससार धर्म और नैतिकता से रिक्त होगा, परन्तु सासारिक उन्नति चरम सीमा को पहुँच रही होगी। अरब मे पिट्रोल और सोने आदि खनिज पदार्थ की खोज से धन की जो बहुतात हो रही है और वहाँ के मरुस्थल की तह मे जिस निहित बडे जलाशय का पता चला है उसे सामने रखते हुए यह बात कुछ भी आश्चर्यजनक नही मालूम होती कि निकट भविष्य मे अरब की भूमि लहलहाते खेतो या शस्यस्थलो मे बदल जाये। और वहाँ नहरें बहने लगें। वैज्ञानिक साधनो को अपना कर बजर और मरुभूमि को कृषि के योग्य बनाया जा सकता है। और नहरें निकाली जा सकती है।

७ अर्थात् तुम्हारी मृत्यु आ जायेगी जो किसी 'कियामत' से कम नही। ससार का अन्त कब होगा ? इसके बारे मे सोचने के बदले मनुष्य को यह देखना चाहिए कि उसे कितनी मुहलत हासिल है जिसमे वह 'आखिरत' की तैयारी कर सकता है। जीवन मे वास्तविक महत्व रखने वाली चीज़ मनुष्य के विचार और कर्म है न कि कोई दूसरी चीज़।

अवज्ञाकारी हो और उसे दुख दे, और अपने मित्र को पार्श्ववर्ती बनाये और अपने पिता को दूर कर दे और मस्जिदो में आवाजे ऊँची होने लगे और कबीले की सरदारी कबीले का एक पापाचारी व्यक्ति करे, और जाति का नायक जाति का नीच और कमीना व्यक्ति हो और आदमी की प्रतिष्ठा उस की बुराई से बचने के लिए की जाये, और गाने वाली बाँदियाँ और बाजे फैल जाये, और शराबे पी जाने लगे और इस समुदाय के पिछले लोग इस के अगले लोगो को बुरा कहने लगे, तो उस समय प्रतीक्षा करो लाल आँधी, भूकम्प, भूमि के धंसने, रूप के विकृत होने, पत्थरों के बरसने की और उन निरन्तर निशानियो की मानो मोतियो की एक टूटा हुई लड़ी है जिस से मोती लगातार गिर रहे हों[८]।

—तिरमिजी

९ हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'कियामत' नही आयेगी जब तक तीस 'दज्जाल' मिथ्याचारी न पैदा हो ले, उन में से हर एक का दावा होगा कि वह अल्लाह का 'रसूल' है (हालाँकि वह झूठा और मक्कार होगा)[९]।

—अबूदाऊद, तिरमिजी

१०. हजरत हुजैफह बिन उसैद गिफारी कहते है कि एक बार अल्लाह के रसूल सल्ल० हमारी मजलिस मे आये और हम आपस में बात-चीत कर रहे थे। आप ने कहा तुम लोग किस चीज का जिक्र कर रहे हो? कहा हम 'कियामत' की चर्चा कर रहे थे। आप ने कहा: वह कदापि कायम न होगी जब तक उस से पहले दस निशानियाँ जाहिर न हो जाये। फिर आप ने उन का जिक्र किया धुआँ, दज्जाल, दाब्बा, (जानवर) पश्चिम से सूर्य का उदय होना, ईसा सुत मरयम का उतरना याजूज व माजूज, तीन बडे 'खस्फ' (भूमि का धँसना) एक पूर्वदिशा मे, दूसरा पश्चिम में तीसरा अरब प्रायद्वीप मे। अन्त में एक बडी आग

---

८ मतलब यह है कि यह बात भी 'कियामत' की निशानियो मे से है कि हर प्रकार की बुराइयाँ फैल जाये, खेल-तमाशा, निर्लज्जता और कमीनापन साधारण-सी बात हो। शान्ति और निश्चिन्तता दुर्लभ हो जाये आसमानी और भूमि की आपदाओ से सुरक्षित रहना कठिन हो जाये।

९ 'नुबूवत' के झूठे दावेदार तो न मालूम कितने होगे। तीस के लगभग तो वे होगे जो बडे उपद्रवी और सरकश होगे। चाले चलने और धोखा देने मैं जिन की टक्कर का मिलना मुश्किल होगा।

जो यमन से उठेगी और लोगों को हाँकती हुई उन के 'महशर' (प्रलय क्षेत्र) की ओर ले जायेगी[१०]। —मुस्लिम

११ हजरत जाबिर रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : "अन्तिम युग में एक खलीफा होगा जो माल को तक़सीम करेगा

---

१० इस 'हदीस' मे 'कियामत' की दस बडी निशानियो का उल्लेख हुआ है। धूआँ से अभिप्रेत सम्भवत वह धुआँ है जिसका उल्लेख कुरआन की सूरा अद-दुखान आयत १० मे मिलता है। यह धुआँ अजाब के रूप मे आसमान मे जाहिर होगा। 'कियामत' से पहले एक 'दज्जाल' जाहिर होने वाला है यह बात विभिन्न 'हदीसो' से मालूम होती है। 'हदीसो' मे उसके उपद्रव और खडयन्त्रो आदि का उल्लेख भी किया है। 'रिवायत' से यह भी मालूम होता है कि वह कैसा होगा और उसकी क्या विशेषताएँ होगी। 'दाब्बा' का उल्लेख कुरआन मे भी किया गया है। कहा गया है "जब हमारी बात उन पर पूरी (होने को) होगी (अर्थात् 'कियामत' करीब आ जायेगी जिसका वादा हमने कर रक्खा है) तो हम उनके लिए एक दाब्बा (जानवर) ज़मीन से निकालेंगे जो उन से बात करेगा कि लोग हमारी 'आयतो' पर विश्वास नही करते थे। —सूरा अन-नम्ल आयत ८२। सूर्य का पश्चिम से उदय होना भी 'कियामत' की बडी निशानियो मे से है। हजरत ईसा मसीह का आना वास्तव मे 'दज्जाल' के उपद्रव को शान्त करने के लिए होगा। 'यहूद' की 'रिवायतो' (*Traditions*) और उनके इतिहास से मालूम होता है कि हज़रत सलैमान अ० के पश्चात् जब यहूदियो पर बुरे दिन आये यहाँ तक कि बाबिल और असीरिया के राज्यो ने उन्हे गुलाम बनाकर उनके जातीय सगठन को छिन्न-भिन्न कर दिया और वे तितर-बितर हो गये तो 'बनी इसराईल' के 'नबियो' ने उन्हे एक मसीह के आगमन की शुभसूचना दी जिसके द्वारा वे अपमान से मुक्ति पा सकेंगे। यहूदी यह आस लगाए बैठे थे कि आने वाला मसीह एक एक प्रभावशाली शक्ति के साथ उभरेगा, वह एक योद्धा सैनिक, विजेता और नेता होगा। वह उन्हे वह क्षेत्र वापस दिलाएगा जिसे वे अपनी मीरास समझते है। हजरत मसीह अ० आये तो वे कोई सेना लेकर नही आये। यहूद ने उन्हे मानने से इन्कार कर दिया और उनके दुश्मन हो गये। आज तक यहूद मसीह की प्रतीक्षा मे है। मध्यपूर्व (*Middle East*) की वर्तमान अवस्था इस बात का पता दे रही है कि उस 'दज्जाल' के प्रकट होने का समय दूर नही जो यहूद का "मसीह मौऊद" (वह मसीह जिसका वादा किया गया हो) बन कर उठेगा और महान उपद्रव का आयोजन करेगा। इसराईल की योजना है कि वह न केवल यह कि सीरिया, लबनान, उरदुन और लग-

और एकत्र कर के (अपने पास) न रक्खेगा"। और एक 'रिवायत' में है कि आप ने कहा: "मेरे समुदाय के अन्त में एक 'ख़लीफ़ा' होगा जो

भग पूरे इराक को अपने अधिकार क्षेत्र मे सम्मिलित कर ले बल्कि उसकी स्कीम यह है कि वह टरकी से इस्कन्द्रोन, मिस्र से सीना और डेल्टा का अधिक्षेत्र और सऊदी अरब से ऊपरी हिजाज़ और नज्द का क्षेत्र जिसमे मदीना भी सम्मिलित है ले ले। इसराईल को जब भी अवसर प्राप्त होगा वह अपनी योजना को सफल बनाने की कोशिश करेगा। इस अवसर पर 'दज्जाल' उनका "मसीह" बन कर प्रकट होगा। 'हदीसो' से मालूम होता है कि वह समय मुसलमानो के लिए अत्यन्त कठिन होगा। फिर अल्लाह की कृपा होगी, वह यहूद के मसीह के मुक़ाबले के लिए वास्तविक मसीह अर्थात् हज़रत मरयम के बेटे हज़रत ईसा मसीह अ० को भेजेगा। हज़रत ईसा मसीह अ० ठीक उस समय पर दिमश्क मे उतरेंगे जबकि दज्जाल ७० हज़ार यहूदियो की सेना ले कर सीरिया मे घुसेगा और दिमश्क के सामने पहुँच चुका होगा। हज़रत मसीह अ० मुसलमानो को लेकर उसके मुक़ाबले के लिए निकलगे। दज्जाल परास्त होकर इसराईल की ओर भागेगा। हज़रत मसीह अ० उसका पीछा करेंगे वह लुद (*Lydda*) के स्थान पर आपके हाथो मारा जायेगा। यहूदी इस तरह मारे जायेंगे कि उनके समुदाय का सत्तानाश हो जायेगा। हज़रत मसीह अ० के दोबारा आने के बाद ईसाई धर्म भी शेष न रहेगा। इस्लाम को प्रभुत्व प्राप्त होगा।

याजूज-माजूज का फैल पडना भी 'क़ियामत' की निशानियो मे से है। याजूम-माजूम (*Gog and Magog*) का उल्लेख कुरआन मे भी हुआ है। इसके अतिरिक्त बाइबिल मे भी उनका उल्लेल किया गया है। याजूज-माजूज से अभिप्रेत एशिया के उत्तरीय और दक्षिणीय क्षेत्र की असभ्य और जगली जातियाँ हैं जो तातारी, मगोल, होण, सेथीन (*Seythians*) आदि नामो से जानी-पहचानी जाती हैं। ये जातियाँ प्राचीन समय से आक्रमण करके लूटमार मचाती रही हैं। ये जातियाँ एशिया और यूरोप दोनो ओर लूटमार के आक्रमण करती रही हैं। बाइबिल मे रूस, तूवल (*Tubal*) और मेसेक को याजूज-माजूज का अधिक्षेत्र वताया गया है। द० हेजकीएल (*Ezekiel*) अध्याय ३८ और ३९। तूबल और मेसेक को वर्तमान समय मे तोवाल्क और मासको (*Tobalak and Mascow*) कहते हैं। यूसिफस (*Josephus*) ने जो एक इबरानी इतिहासकार है सेथीन (*Scythians*) जाति को याजूज-माजूज कहा है जिसका अधिक्षेत्र कृष्ण सागर (*Black sea*) के उत्तर और पूर्व मे था। जिरोम (*Jerome*) के विचार

हाथो में भर-भर कर माल लुटाएगा और उस की गणना न करेगा[११]।

—मुस्लिम

१२. हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा 'कियामत' से फितने (उपद्रव) होंगे जैसे अँधेरी रात के टुकडे। आदमी प्रात समय 'मोमिन' होगा, और सायंकाल 'काफिर' हो जायेगा। कितने ही लोग अपने दीन (धर्म) को सासरिक सामग्री के बदले बेच देगे[१२]।

—तिरमिज़ी

१३ हजरत अनस रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'कियामत' कायम न होगी जब तक कि समय निकट न हो जायेगा[१३]। वर्ष मास के समान हो जायेगा, मास सप्ताह के समान होगा, सप्ताह एक दिन की तरह हो जायेगा और दिन एक घडी की तरह

मे याजूज व माजूज की आबादी काकेशिया *(Caucasus)* के उत्तर, कैस-पियन सागर *(Caspian sea)* के निकट पडती थी। इब्न बतूता के विचार मे याजूज व माजूज से अभिप्रेत पूर्वी एशिया की असभ्य जातियाँ हैं *(Ibn Batutah's Tranels iv P 274)*।

'खस्फ' से अभिप्रेत भूमि का धस जाना *(Land slide)* है। इसको अपनी भयकरता की दृष्टि से 'कियामत से एक तरह का सम्पर्क भी है। फिर 'कियामत' की एक निशानी वह आग है जो सब को हाँक कर एकत्र कर देगी। फिर इसके पश्चात् 'कियामत' ही आयेगी।

११ यह सकेत सभवत उस 'खलीफा' की ओर है जिसको कुछ 'रिवायतो' मे "अल-महदी" की उपाधि दी गई है। 'महदी' का अर्थ है 'राह पाया हुआ' 'हदीस' से मालूम होता है कि वह आने वाला खलीफा 'खिलाफत' (राज्य) की स्थापना 'नुबूवत' की रीति के अनुसार करेगा जबकि धरती बिगाड, उपद्रव और अत्याचार से भर चुकी होगी और इस्लामी खिलाफत (इस्लामी राज्य व्यवस्था) छिन्न-भिन्न हो चुकी होगी। उसके समय मे धरती न्याय से भर जायेगी। और अल्लाह अपनी बरकतें उतारेगा।

१२. मतलब यह है कि 'कियामत' के पहले का समय अत्यन्त फितने और बिगाड का समय होगा। 'दीन' व ईमान को सुरक्षित रखना अत्यन्त कठिन होगा।

१३. अर्थात् समय *(Time)* तेजी से गुज़रने लगेगा। चाहे यह विश्व मे या मानव लोक मे किसी महान् परिवर्तन के कारण हो या यह इस बात की ओर सकेत हो कि उपद्रव और कठिनाइयो के कारण वक्त अपनी बरकतें खो देगा।

होगा और घडी आग की एक लपट उठने के समान हो जायेगी[१४]।

—तिरमिजी

पुनर्जीवन

عَنْ اَبِیْ سَعِیْدِ الْخُدْرِیِّ قَالَ. قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّی اللّٰهُ عَلَیْهِ وَسَلَّمَ کَیْفَ اَنْعَمُ وَصَاحِبُ الصُّوْرِ قَدِ الْتَقَمَهُ وَاَصْغٰی سَمْعَهُ وَحَنٰی جَبْهَتَهُ یَنْتَظِرُ مَتٰی یُؤْمَرُ بِالنَّفْخِ، فَقَالُوْا یَارَسُوْلَ اللّٰهِ فَمَاذَا تَاْمُرُنَا؟ قَالَ. قُوْلُوْا حَسْبُنَا اللّٰهُ وَنِعْمَ الْوَکِیْلُ ——— ترمذی

१ हजरत अबूसईद खुदरी रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मैं कैसे सुख-चैन (निश्चिन्तता के साथ) रह सकता हूँ जब कि हाल यह है कि 'सूर' वाले ('फिरिश्ता' हजरत इसराफील अ०) 'सूर' मुख मे लिए, अपना कान लगाये, और अपना मस्तक झुकाये प्रतीक्षा कर रहे है कि कब 'सूर' मे फूँक मारने का आदेश होता है[१]। लोगो ने कहा : हे अल्लाह के रसूल ! फिर आप हमे क्या आदेश देते है ? आप ने कहा कहते रहो "अल्लाह हमारे लिए काफी है और वह उत्तम कार्यसाधक है[२]"। —तिरमिज़ी

---

१४ अर्थात् जिस प्रकार आग भडकने पर लपट उठे और तुरन्त ही बैठ जाये उसी तरह घडियाँ पलक झपकते ही बीत जायेंगी।

१ मतलब यह हे कि 'सूर' फूँकने वाला 'फिरिश्ता' 'सूर' मे फूँक मारने के लिए विल्कुल तैयार है, केवल आज्ञा पाने की देर है। हुक्म पाते ही वह सुर फूँक देगा और 'कियामत' आ जायेगी। धरती और आकाश की व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो जायेगी। और फिर दोबारा 'सूर' मे फूँकने से पुन संसार वजूद मे आयेगा और सारे लोग जीवित हो कर 'हश्र' के मैदान (प्रलयक्षेत्र) मे इकट्ठा होगे। और उन्हे उनके कर्म के अनुसार बदला दिया जायेगा। जब स्थिति ऐसी हो तो कोई व्यक्ति आराम-चैन और निश्चिन्तता के साथ कैसे दुनिया मे जीवन व्यतीत कर सकता है। उसे तो हर समय 'आखिरत' की चिन्ता लगी रहेगी।

२ मतलब यह है कि तुम अपने मामले को अल्लाह को सौंप दो और उस पर भरोसा करो, और उसी से सहायता चाहो। सफल जीवन उन्ही का है जो उसकी सरपरस्ती और सरक्षकता मे और उसकी दासता और आज्ञापालन मे जीवनयापन करते हैं।

२ हजरत अबदुल्लाह इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो कोई 'कियामत' का दिन आँखो से देखना चाहता है तो उसे इजश्शम्स कूविरत, 'इजस्समाउनफतरत', और इजस्समा उनशक्कत' पढनी चाहिए[3] । —अहमद, तिरमिजी

३ हजरत अबू सईद खुदरी रजि० से उल्लिखित है कि वे अल्लाह के रसूल सल्ल० की सेवा मे उपस्थित हुये और कहा मुझे बताइए कि कौन 'कियामत' के दिन खडा रह सकेगा जिस के बारे मे प्रतापवान् एव तेजोमय अल्लाह ने कहा है "जिस दिन लोग सारे ससार के 'रब' (पालनकर्ता स्वामी) के समक्ष खडे होगे" आप ने कहा वह 'मोमिन' के लिए हल्का होगा यहाँ तक कि वह उस के लिए 'फर्ज' नमाज के समान हो जायेगा[4] । —बैहकी

४ हजरत जाबिर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'कियामत' में हर बन्दा उस अवस्था में उठाया जायेगा जिस अवस्था मे वह मरा होगा[5] । —मुस्लिम

---

३ अर्थात् कुरआन की तीन सूरते अत-तकवीर अल-इनफितार और अल-इन शिकाक पढनी चाहिए । इन सूरतो मे ऐसा नक्शा पेश किया गया है कि 'कियामत' का दृश बिल्कुल निगाहो के सामने आ जाता है । और ऐसा लगता है मानो 'कियामत' अपनी समस्त भयकरता के साथ आ गई है ।

४ मालूम हुआ कि वह दिन 'काफिरो' और अल्लाह के अवज्ञाकारी लोगो के लिए अत्यन्त कठिन होगा । 'ईमान, वालो के लिए अल्लाह उसे फर्ज नमाज की तरह हल्का कर देगा । 'नमाज' और अल्लाह के सामने उस दिन की हाजिरी मे जो अनुरूपता है वह स्पष्ट है ।

५ मालूम हुआ कि वास्तव मे भरोसे की चीज मनुष्य का परिणाम है । यदि किसी का देहान्त 'ईमान' पर होता है, तो वह 'कियामत' के दिन एक 'मोमिन' की हैसियत से उठेगा और यदि वह 'कुफ्र' पर मरता है, तो वह 'कियामत' मे एक 'काफिर' ही के रूप मे उठेगा । मनुष्य का परिणाम ही उसके जीवन का साराश है । मनुष्य अपना एक नैतिक अस्तित्व रखता है । उसका एक व्यक्तित्व होता है । व्यक्तित्व ही का निर्माण जीवन की समस्त दौड-भाग की प्राप्ति होती है । मनुष्य क्या है इसकी पहचान इससे नही होती कि उस के पास कितनी दौलत है ? बल्कि इससे होती है कि वह स्वय क्या है ? अल्लाह के यहाँ वास्तविक प्रश्न इसी बात का होगा कि लोगो को उनके अपने व्यक्तित्व के निर्माण का जो अवसर सासारिक जीवन मे प्रदान किया गया था, उन्होने

५. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'कियामत' के दिन सारे लोग तीन किस्मों में उठाए जायेगे एक किस्म पैदल चलने वाले, एक किस्म सवार और एक किस्म मुँह के बल चलने वाले"। कहा गया हे अल्लाह के रसूल ! ये मुँह के बल कैसे चलेगे ? कहा जिस (अल्लाह) ने उन्हे पॉव पर चलाया है उसे इस का भी सामर्थ प्राप्त है कि उन्हे उन के मुँह के बल चलाये। मालूम होना चाहिए कि ये लोग अपने मुँह के द्वारा ही हर टीले और काँटे से बचेगे[६] । —तिरमिजी

६ हजरत अबूहुरैरा रजि० कहते है कि हल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा जो व्यक्ति भी मरेगा उसे अवश्य लज्जा और ग्लानि होगी। लोगों नें कहा हे अल्लाह के रसूल ! उसे ग्लानि क्यो होगी ? आप ने कहा यदि वह (मरनै वाला) सत्कर्मी है तो उसे ग्लानि होगी कि उस ने और अधिक (अच्छे कर्म) क्यों न किये और यदि दुराचारी है तो उसे ग्लानि होगी कि वह (बुराई से) बाज क्यों न रहा[७]।

—तिरमिजी

उससे कहाँ तक फायदा उठाया। वे दुनिया से क्या बन कर लौटे हैं। मनुष्य के बनने-बिगडने की सम्भावनाएँ जीवन के अन्तिम क्षण तक रहती है इसलिए वास्तव मे एतबार अन्त ही का है।

एक 'रिवायत' मे है कि आपने कहा कि जब अल्लाह किसी जाति पर अजाव उतारता है, तो उस अजाव और यातना की लपेट मे हर वह व्यक्ति आ जाता है जो उस जाति में होता है फिर ('आखिरत' में) लोगो को उनके कर्म के अनुसार उठाया जायेगा। —बुखारी, मुस्लिम

६ जिन तीन गरोहो का उल्लेख इस 'हदीस' मे किया गया है उनमें पैदल चलने वाला गरोह तो साधारण मुस्लिमो का होगा। जो लोग सवारियो पर होगे वे अल्लाह के विशेष बन्दे होगे। और सिर के बल चलने वाले वे बदनसीब लोग होगे जिन्होने सासारिक जीवन मे 'नबियो की शिक्षा के अनुसार सीधा चलने के बदले मरते दम तक उल्टे ही चलते रहे। 'कियामत' के दिन वे अपनी उलटी चाल का परिणाम देख लेंगे। वहाँ उन्हे मुँह के बल चलना होगा। वे अत्यन्त अपमानित होगे जो कष्ट और दुख उनको भोगने होगे वह अलग है।

७ इसलिए बुद्धिमानी की बात यह होगी कि आदमी दुनिया मे अधिक-से-अधिक अच्छे काम कर ले और जहाँ तक हो सके बुराइयो से अपने-आप को दूर

७ हजरत अदी बिन हातिम रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम में से प्रत्येक से अल्लाह इस तरह बात-चीत करेगा कि बीच में कोई अनुवादक न होगा और न कोई परदा होगा जो उसे छिपा सके। यह अपनी दाहिनी ओर देखेगा तो सिवाय उस कर्म के जो उस ने भेजा था उसे कुछ दिखाई न देगा फिर अपनी बाईं ओर देखेगा तो सिवाय उस के जो उस ने भेजा था उसे कुछ दिखाई न देगा और अपने सामने देखेगा तो सिवाय ('जहन्नम' की) आग के और कुछ दीख न पडेगा[८]। तो उस आग से वचो, खजूर के एक टुकडे के द्वारा ही सही[९] ! —बुखारी, मुस्लिम

८ हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह किसी 'मोमिन' पर उसकी नेकी के सिलसिले में अन्याय नही करता उसका बदला दुनिया मे भी दिया जाता है और 'आखिरत' में भी दिया जाता है। रहा 'काफिर' तो जो नेकियाँ उसने अल्लाह के लिए की थी उनका पूरा बदला दुनिया मे ही दे दिया जाता है यहाँ तक कि जब वह 'आखिरत' मे पहुँचता है तो उसकी कोई ऐसी नेकी वाकी नही रहती जिसका बदला उसे दिया जाये[१०]। —मुस्लिम

रक्खे।

८ अर्थात् आदमी का मामला उस दिन प्रत्यक्षत अपने अल्लाह से होगा। 'ईमान' 'इस्लाम' और अच्छे कर्म के सिवा उस दिन कोई चीज न होगी जो आदमी को उस आग से छुटकारा दिला सके जिसकी लपटे निगाहो के सामने उठ रही होगी।

९. मनुष्य को 'जहन्नम' की आग से बचने के लिए हर वह प्रयत्न करना चाहिए जो वह कर सकता है, यहाँ तक कि यदि वह खजूर का एक टुकडा ही 'सदका' कर सकता है, तो इससे बाज न रहे।

१० 'मोमिन' और 'मुस्लिम' व्यक्ति पर दुनिया और 'आखिरत' दोनो मे अल्लाह की कृपा होती है। उसे अपने सत्कर्म से इस लोक मे भी लाभ होता है और 'आखिरत' मे तो वह 'जन्नत' का वारिस होगा। रहा 'काफिर' तो उसके पास नेकियाँ होती ही कहाँ हैं। नेकी तो वास्तव मे उसी काम को कहा जायेगा जो अल्लाह के लिए किया गया हो। यदि 'काफिर' व्यक्ति ने कोई काम अल्लाह के लिए किया भी है तो वह सांसारिक जीवन मे अल्लाह की प्रदान की हुई चीजो से फायदा भी उठा चुका है। 'आखिरत' मे उसके लिए यातना के अतिरिक्त कुछ न होगा। अल्लाह किसी पर जुल्म नहीं करता। वह

९. हजरत आइशा रजि० कहती है कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को अपनी कुछ 'नमाजों' में यह दुआ करते सुना "हे अल्लाह! मेरा हिसाव आसान कर।" मैंने कहा · हे अल्लाह के नबी! आसान हिसाव का क्या अर्थ है? आपने कहा यह कि बन्दे के कर्म-पत्र पर निगाह डाली जाये और उसे छोड दिया जाये। बात यह है कि जिसके हिसाब में उस दिन जिरह की गई, हे आइशा! (उसका कुशल नहीं) वह विनष्ट हुआ[11]। —अहमद

१० हजरत इब्न उमर रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा ('कियामत' के दिन) अल्लाह 'मोमिन' को करीब करेगा और फिर उस पर अपना विशेष आवरण डालेगा और उसे छिपा लेगा फिर कहेगा क्या तुम इस गुनाह को जानते हो? तुम इस गुनाह को जानते हो वह कहेगा हाँ हे मेरे रव! यहाँ तक कि वह उस से उसके सारे गुनाह का इकरार करा लेगा। और वह अपने मन में सोचेगा कि मैं विनष्ट हुआ। अल्लाह कहेगा मैंने दुनिया मे तेरे इन गुनाहो को छिपाया था और आज मैं इन्हे क्षमा कर देता हूँ फिर उसे उसकी नेकियों का कर्म-पत्र दिया जायेगा।

रहे 'काफिर' और 'मुनाफिक' (पापाचारी) लोग तो उन्हे जन साधारण के सामने पुकारा जायेगा कि ये है वे लोग जिन्होंने झूठ घडकर उसे अपने 'रव' से सम्वद्ध किया था। सावधान! अल्लाह की लानत (फिटकार) है ऐसे जालिमो पर[12] —बुखारी, मुस्लिम

प्रत्येक व्यक्ति को उसके कर्म के अनुसार बदला देता है।

११ मतलव यह है कि इस नाजुक मौके पर वही लोग सफल होंगे जिनसे कोई जिरह और हुज्जत न हुई। केवल उनके कर्म अल्लाह के सामने पेश कर दिये गये। यही "आसान हिसाब" है, जिसका उल्लेख कुरआन मे भी हुआ है। दे० सूरा अल-इनशिकाक आयत ७-८। परन्तु जिस किसी से पूछ-ताछ हुई वह अल्लाह की पकड से वच नही सकता।

१२ अर्थात् ऐसा 'मोमिन' जो अपने कर्म और चरित्र की दृष्टि से अल्लाह की दयालुता और कृपा का अधिकारी होगा अल्लाह उस दिन उसके गुनाहो को लोगो की निगाहो मे छिपायेगा। अल्लाह की दयालुता उसे रुसवा और अपमानित होने मे बचा लेगी जिस तरह उसने दुनिया से उसे रुसवाई मे बचाया था। उसे नेकियो का कर्म-पत्र दिया जायेगा जिसे वे दूसरो को बेझिझक दिखा सके, परन्तु 'काफिरो' और 'मुनाफिकों' के लिए तो वह दिन रुसवाई और दुर्गति

११. हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है कि उन्हे एक बार ('जहन्नम' की) आग का खयाल आया और वे रो पडी। अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : "तुम्हे किस चीज नें रुलाया ?" कहती है कि मैने कहा : मुझे ('जहन्नम' की) आग याद आई और उसी ने मुझे रुलाया, तो क्या आप लोग 'कियामत' के दिन अपनें घर वालों को याद रख सकेंगे ? अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा : तीन स्थान ऐसे है जहाँ कोई किसी को याद न करेगा। 'मीजान' (तुला) पर, जब तक यह न मालूम हो जाये कि उसका पल्ला भारी है या हल्का। और कर्म-पत्र मिलने के समय—जब कि दाहिने हाथ मे कर्म-पत्र पानें वाला कह उठेगा कि आओ मेरा कर्म-पत्र पढो—जब तक कि यह न मालूम हो जाये कि उसका कर्म-पत्र उसके दाहिनें हाथ में पडता है या उसकी पीठ के पीछे से उसके बाये हाथ में आता है और 'सिरात' पर जबकि वह 'जहन्नम' के ऊपर रक्खा जायेगा (और लोगों को उस पर से गुज़रनें का हुक्म दिया जायेगा)[13]

—अबूदाऊद

लेकर आयेगा। वे सबके सामने अपमानित होगे। उनकी बुराइयाँ और गुनाह उस दिन सबके सामने होगे।

१३ ये तीन अवसर बहुत ही कठिन होगे। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी-अपनी पडी होगी, इसलिए हर व्यक्ति को उस दिन की चिन्ता करनी चाहिए। किसी पर भरोसा करके नही बैठ रहना चाहिए। 'मीज़ान' (तुला) से अभिप्रेत कर्म-तुला है। उस दिन सफल वही व्यक्ति होगा जिसका पलडा भारी रहा। वह व्यक्ति उस दिन तबाह हुआ जिसका पलडा उस दिन हल्का रहा (दे० सूरा अल-अंबिया आयत ४७, अल-आराफ आयत ८)। लोगो के कर्म-पत्र जिन मे उनके जीवन के बुरे-भले कर्म अंकित होगे उस दिन तकसीम किए जायेगे। जिसके दाहिने हाथ मे उसका कर्म-पत्र दिया गया, तो यह उसकी सफलता का प्रमाण होगा। इसके विपरीत जिसका कर्म-पत्र उसके बाये हाथ मे पीठ की ओर से दिया गया वह असफल रहा (दे० सूरा अन-शिकाक आयत ७-१२)। 'सिरात' की वास्तविकता को पूर्ण रूप से समझना वर्तमान लोक मे मुश्किल है। 'कियामत' के दिन प्रत्येक व्यक्ति को इस 'सिरात' (मार्ग) से गुजरना होगा। अल्लाह के आज्ञाकारी बन्दे बेखटके उस पर से गुज़र जायेंगे परन्तु जो अल्लाह के अवज्ञाकारी और सरकश होगे वे उसे पार न कर सकेगें, वे 'जहन्नम' की आग मे जा गिरेंगे। अल्लाह के दिखाये हुये मार्ग पर चलकर जिसने जीवन व्यतीत किया होगा वह इस "सिरात" से आसानी से गुज़र जायेगा। परन्तु जो व्यक्ति अपने जीवन मे उस 'सिरात मुस्तकीम' (सरल मार्ग) से

१२ हजरत अबू सईद खुदरी रजि० कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि ('कियामत' के दिन) हमारा 'रब' अपनी पिडली खोलेगा,[१४] उस समय प्रत्येक 'मोमिन' पुरुष और स्त्री उसे 'सजदा' करेंगे और वह व्यक्ति 'सजदा' न कर सकेगा जिसने केवल दिखाने और सुनाने के लिए 'सजदा' किया होगा। वह 'सजदा' करना चाहेगा परन्तु उसकी पीठ तख्ते की तरह हो जायेगी (और वह 'सजदा' न कर सकेगा)[१५]। —बुखारी, मुस्लिम

१३ हजरत इब्न मसऊद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा लोग ('जहन्नम' की) आग पर हाज़िर होंगे ('सिरात' से गुजरते हुए) फिर अपने कर्म के अनुसार उस से छुटकारा पायेंगे। उनमें जो सबसे अच्छे होगे वे बिजली चमकने के सदृश उस से गुजर जायेंगे। फिर वायु के सदृश, फिर घोडे के सदृश, फिर ऊँट के सदृश फिर दौड़ते हुए व्यक्ति के सदृश फिर पैदल साधारण चाल से चलने वाले की तरह[१६]। —तिरमिज़ी, दारमी

मुँह मोडता रहा जिसकी ओर अल्लाह ने अपने 'रसूलो' के द्वारा बुलावा दिया था वह 'जहन्नम' मे गिरेगा। अल्लाह की दिखाई हुई राह के अतिरिक्त जो-कुछ है विनाशता है। सीधे मार्ग से मुख मोडने का परिणाम उस दिन सामने आ जायेगा।

१४ इसका आशय क्या है ? इसके बारे मे विभिन्न बातें कही जाती हैं। इसका एक अर्थ यह भी हो सकता है कि यह कठिनाई और सख्ती का स्पष्टीकरण है अर्थात् यह उस समय का ज़िक्र है जब अल्लाह की ओर से सख्त और कठिन घडी आ जायेगी और लोगो मे हलचल पड जायेगी।

१५ अर्थात् उस दिन 'मुनाफिक' और अपराधी लोग 'सजदा' न कर सकेंगे। वे सजदा करना चाहेगे तो उनकी पीठ तख्ते की तरह सख्त हो जायेगी वे सजदे के लिए झुक न सकेंगे। कुरआन मजीद मे भी कहा गया है "जिस दिन पिंडली खोली जायेगी (यह मुहावरा है अर्थात् जिस दिन हलचल पडेगी) और ये सजदे के लिए बुलाये जायेंगे तो 'सजदा' न कर सकेंगे। इनकी निगाहे झुकी होगी और इन पर जिल्लत छा रही होगी। और उस समय भी सजदे के लिए बुलाये जा रहे हे जबकि ये भले-चगे है।"—सूरा अल-कलम आयत ४२-४३।

१६ अर्थात् जिस व्यक्ति ने जितना अधिक 'दीन' का पालन किया होगा और जितना अधिक 'इस्लाम' के सीधे मार्ग पर चला होगा वह उसी के अनुसार तेजी से गुजर जायेगा और आग से छुटकारा पा लेगा। सासारिक जीवन मे जिसकी

१४. हजरत सह्ल बिन सअद रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . मैं हौज़ पर तुम्हारा 'मीर मज़िल' हूँगा । जो मेरे पास से गुजरेगा (उस से) पियेगा और जो पियेगा कभी प्यासा न होगा । मेरे पास बहुत से लोग आयेंगे जिन्हे मै पहचानता हूँगा और वे मुझे पहचानेंगे फिर मेरे और उनके बीच कोई चीज़ रोक बना दी जायेगी । मैं कहूँगा : ये तो मेरे है, तो कहा जायेगा . आपको मालूम नही कि इन्होने आपके पीछे क्या-क्या नई बाते पैदा की । (यह सुनकर) मैं कहूँगा . दूर हो दूर जिन्होंने मेरे पीछे ('दीन' में) परिवर्तन किया है ।[१७]

१५. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कोई व्यक्ति उस समय तक 'जन्नत' में दाखिल न किया जायेगा जब तक कि उसे वह ठिकाना न दिखा दिया जाये जो उस के लिए 'जहन्नम' मे निश्चित था यदि वह बुरे कर्म करता, ताकि उस का कृतज्ञता-भाव बढ जाये और (इसी प्रकार) कोई व्यक्ति 'जहन्नम' में दाखिल नही किया जायेगा जब तक कि उसे वह ठिकाना न दिखा दिया जाये जो उस के लिए 'जन्नत' में था यदि वह अच्छे कर्म करता, ताकि उस का पश्चात्ताप बढ़ जाये ।[१८] —बुखारी

गति धीमी रही होगी उसका धीमापन उसदिन स्पष्ट हो जायेगा ।

१७ नबी सल्ल० की हैसियत उस दिन 'मीर मज़िल' की होगी जो काफिले से पहले पहुँच कर आने वालो के लिए आराम और सुविधा की व्यवस्था करता है। आप हौज़ पर जिसका नाम 'हौज़ कौसर' होगा अपने अनुयायियो की प्रतीक्षा करेंगे । आपके अनुयायी और उस "कौसर" से लाभ उठाने वाले जो दुनिया मे आपको प्रदान किया गया था, हौज से पीकर शीतलता प्राप्त करेंगे फिर उन्हे प्यास न सतायेगी । किन्तु जो व्यक्ति दुनिया मे आपके मार्ग-दर्शन शीतल स्रोत से सिंचित न हुआ बल्कि उसे गन्दा ही करने मे लगा रहा और आपके निर्मल 'दीन' (धर्म) मे मन-घड़त नई बातें सम्मिलित करके उसकी सुन्दरता को विकृत करना चाहा, वह 'हौज' के निर्मल एव शीतल जल मे वञ्चित रहेगा। आप उसको अपने पास से दूर कर देंगे ।

१८ अर्थात् 'जन्नत' (मे प्रवेश करने) वालो को केवल 'जन्नत' पाने की प्रसन्नता न होगी बल्कि उनको इस बात की भी प्रसन्नता होगी कि अल्लाह ने उन्हे 'जहन्नम' के अजाब मे बचा लिया । इसी तरह 'जहन्नम' (मे जाने) वालो को केवल 'जहन्नम' (नरक) मे जलते रहने ही की यातना न भुगतनी पड़ेगी बल्कि 'जन्नत' न मिलने का दुख और सन्ताप भी उनके हिस्से मे आयेगा । वे पश्चाताप

१६ हजरत अबू बरदह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मनुष्य 'कियामत' के दिन हटने नही पायेगा जब तक कि चार बाते (उस से) न पूछ ली जाये उस की आयु के बारे में कि उसे किस काम में समाप्त किया, उस के कर्म के बारे में कि उस ने क्या कर्म किये, और उस के माल के बारे में कि कहाँ से उसे कमाया और कहाँ उसे खर्च किया और उस के शरीर के बारे में कि किस काम में उसे गलाया।[१६]
—तिरमिजी

१७ हजरत इब्न मसऊद रजि० नबी सल्ल० से 'रिवायत' करते हैं कि आप ने कहा · आदम के बेटे (मनुष्य) के कदम (कियामत के दिन अपनी स्थान से) हट न सकेगे जब तक कि उस से पाँच बातो के बारे में प्रश्न न कर लिया जाये उस की आयु के बारे मे कि उसे उस ने किन कामों मे समाप्त किया, उस की युवावस्था के बारे में कि उसे उस ने कहाँ लगाया, और उस के माल के बारे में उसे कहाँ से कमाया और कहाँ खर्च किया और जो ज्ञान उसे प्राप्त था उस के अनुसार कहाँ तक उस ने आचरण किया।
—तिरमिज़ी

१८. हजरत अबू हुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा: 'कियामत' के दिन मेरी सिफ़ारिश से वही व्यक्ति लाभ उठा सकता है जिस ने अपने मन और प्राण की पूर्ण शुद्धता एव एकाग्रता के साथ "ला इलाह इल्लल्लाह" (अल्लाह के सिवा कोई पूज्य एव प्रभु नही है) कहा हो।[२०]
—बुखारी

ही करते रहेगे परन्तु अब इसका कोई अवसर उन्हे न मिल सकेगा कि वे अपने अपराध और गुनाह के धब्बे धोकर अपने को 'जन्नत' मे जाने योग्य बना सकें। 'जहन्नम' मे उन्हे आत्मिक और शारिरिक हर प्रकार का दुख भुगतना होगा।

१६ अर्थात् जब तक मनुष्य ये और इस प्रकार की बातो का उत्तर न दे लेगा वह हटने नही पायेगा। जिन बातो के बारे मे उस से प्रश्न होगा उनके अन्तर्गत मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन आ जाता है। जब तक मनुष्य अपने सम्पूर्ण जीवन के नकशे को ठीक न कर ले और हर मामले मे अल्लाह के सामने अपने को उत्तरदायी समझकर काम न करे वह 'आखिरत' की पकड से बच नही सकता।

२० अर्थात् नबी सल्ल० की सिफारिश उसी को हासिल हो सकेगी और उसी व्यक्ति के लिए आप सिफारिश कर सकेगे जो 'कुफ्र' व 'शिर्क' की गन्दगी से पाक होगा और अपने हृदय की शुद्धता के कारण इस बात का हक रखता

१९. हजरत उसमान बिन अफ्फान रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'क़ियामत' के दिन तीन प्रकार के लोग (विशेष रुप से) सिफरिश करेंगे 'नबी' फिर ज्ञानी जन फिर 'शहीद'।[२१]
—इब्न माजह

२०. हजरत अबू सईद रजि० का बयान है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मेरे समुदाय मे कुछ लोग होंगे जो एक जमात की शिफारिश करेंगे, कुछ एक कबीले की सिफारिश करेंगे, कुछ एक घराने की सिफारिश करेगे और कुछ केवल एक व्यक्ति की यहाँ तक कि लोग 'जन्नत' में दाखिल हो जायेंगे।[२२]
—तिरमिज़ी

होगा कि उसकी खताएँ और गलतियाँ क्षमा कर दी जायँ।

२१ इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि 'सिफारिश' करने का सम्मान 'नबियो' के अतिरिक्त दूसरे विशेष लोगो को भी प्राप्त होगा। धर्म का ज्ञान रखने वाले लोग, अल्लाह की राह मे प्राण निछावर करने वाले वीरगति को प्राप्त शहीद आदि दूसरे अच्छे और नेक लोगो को अपने दर्जे के अनुसार यह सम्मान प्राप्त होगा। 'हदीस' से मालूम होता है कि छोटे-नन्हे बालक, बालिकाएँ भी अपने माँ-बाप के हक मे सिफारिश करेंगे।

यहाँ यह बात समझ लेने की है कि 'शिफ़ाअत' या सिफारिश अपने तौर पर कोई चीज़ नही। अल्लाह की अनुमति के बिना कोई व्यक्ति किसी के हक मे सिफारिश न कर सकेगा, न अल्लाह के आगे ज़बान खोल सकेगा (दे० सूरा अल-बकरा आयत २५५)। फिर सिफारिश की इजाजत उन ही लोगो को मिल सकेगी जो वास्तव मे इसका हक रखते होगें और जिनको अल्लाह क्षमा करना चाहेगा। सिफारिश का अवसर प्रदान करके वास्तव मे अल्लाह अपने विशेष प्रिय बन्दो के सम्मान का प्रदर्शन करेगा।

२२ अर्थात् लोगो को अपने दर्जे और पद के अनुसार सिफारिश का हक़ हासिल होगा। कोई इतने ऊँचे दर्जे का व्यक्ति होगा कि उसे एक बडी जमात की सिफारिश का अधिकार होगा। कोई एक कबीले की सिफारिश का हक रखता होगा गौर कोई एक कुटुम्भ ही के हक मे सिफारिश कर सकेगा। कुछ लोग ऐसे होगें कि वे केवल एक व्यक्ति की सिफारिश कर सकेंगे।

'जन्नत' और 'जहन्नम'

وَعَنْ اَبِیْ هُرَیْرَةَ رض قَالَ، قَالَ رَسُوْلُ اللهِ صَلَّی اللهُ عَلَیْهِ وَسَلَّمْ قَالَ اللهُ تَعَالٰی اَعْدَدْتُ لِعِبَادِیَ الصَّالِحِیْنَ مَا لَا عَیْنٌ رَاَتْ وَلَا اُذُنٌ سَمِعَتْ وَلَا خَطَرَ عَلٰی قَلْبِ بَشَرٍ وَاقْرَءُوْا اِنْ شِئْتُمْ فَلَا تَعْلَمُ نَفْسٌ مَّا اُخْفِیَ لَهُمْ مِّنْ قُرَّةِ اَعْیُنٍ — بخاری مسلم

१. हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : सर्वोच्च अल्लाह ने कहा मैं ने अपने नेक बन्दो के लिए वह-कुछ तैयार किया है जिसे न किसी आँख ने देखा, न किसी कान ने सुना और न किसी आदमी के दिल में उस का खयाल गुजारा। यदि तुम चाहो तो (यह 'आयत') पढ लो "फिर जो कुछ आँखो की ठण्ढक (की सामग्री) उन के कर्मो के बदले में उन के लिए छुपा रक्खी गई है उस को किसी जीव को खबर नही।"[1] —बुखारी, मुस्लिम

२ हजरत अबूहुरैरा रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मैंने 'जहन्नम' जैसी कोई चीज नही देखी जिस से भागने वाला सोता हो' और न 'जन्नत' जैसी कोई चीज देखी जिस का चाहने वाला सोता हो।[2] —तिरमिजी

---

१. अर्थात् अल्लाह ने 'जन्नत' मे अपने आज्ञाकारी प्रिय सेवको के लिए जो चीजे और उनके सुख-चैन की जो सामग्री सचित कर रक्खी है वर्तमान जीवन मे हम उसकी कल्पना भी नही कर सकते। इसलिए कामना करने की चीज 'जन्नत' ही है, न यह कि मनुष्य दुनिया के पीछे अपने शाश्वत निवास-स्थान को भूल जाये। 'जन्नत' मे वही लोग प्रवेश कर सकेगे जो अल्लाह के उपासक और उसके आज्ञाकारी होगे। जो उसकी राह मे कोशिश करने वाले और उसकी 'इबादत' के दिव्य आनन्द से परिचित होगे। अल्लाह की बन्दगी जिनके लिए इस लोक मे आँखो की ठण्डक न बन सकी जो सरकशी और अवज्ञा ही मे जीवन व्यतीत करते रहे वे 'आखिरत' मे उस आनन्द मे दूर रक्खे जायेगे जो अपने विशेष बन्दो के लिए अल्लाह ने तैयार कर रक्खा होगा।

२. 'जहन्नम' की आग से बढकर भयानक और विनाशकारी चीज क्या हो सकती है जिस से मनुष्य भागे परन्तु मनुष्य की दशा आश्चर्यजनक है वह उस से साधारणतया असावधान ही रहता है, उस से बचने की चेष्टा नही करता। इसी

३. हज़रत अबू सईद रजि० और हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा · एक पुकारने वाला ('जन्नत' वालों को सम्बोधित कर के) पुकारेगा कि (यहाँ) तुम स्वस्थ रहोगे, कभी बीमार न होगे, जीवित रहोगे तुम्हारी कभी मृत्यु न होगी। युवा रहोगे कभी तुम बूढ़े न होगे। और चैन से रहोगे कभी भी कठिनाई और दुख न देखोगे।[३]

—तिरमिज़ी

४ हजरत अबू सईद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कसम है उस (अल्लाह) की जिस के हाथ मे मुहम्मद के प्राण है कि उन में से (जिन्हे 'जन्नत' में जाने की अनुमति मिल जायेगी) प्रत्येक अपने 'जन्नत' के घर को अपने दुनिया के घर से अधिक पहचानता होगा।[४]

—बुख़ारी

५. हजरत इब्न मसऊद रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा 'जन्नत' तुम्हारी जूती के तसना से भी अधिक निकट है और इसी तरह ('जहन्नम' की) आग भी।[५]

—बुख़ारी

तरह 'जन्नत' से बढकर प्रिय चीज़ कोई दूसरी नही हो सकती जिसे प्राप्त करने मे मनुष्य अपनी शक्ति और योग्यता को लगाये और उस से तनिक भी गाफिल न हो।

३ अर्थात् 'जन्नत' वालो को किसी भी प्रकार का भय और आशका न होगी 'जन्नत' मे न कभी वे बीमार होंगे, न वहाँ उन्हे मृत्यु का सामना करना पडेगा। और न उनकी शक्ति, बल और यौवन को किसी प्रकार की क्षति पहुँचेगी। सुख और आनन्द ही उनका जीवन होगा। किसी कठिनाई और दुख को वे न देखेंगे।

४ इस से मालूम हुआ कि 'जन्नत' का घर उसका वास्तविक निवास-स्थान होगा। उसका निवास-स्थान उसकी अपनी रूचि, भावना और कामना के अनुरूप होगा। दूसरे शब्दो मे वह उसकी अभिलाषाओ का प्रत्यक्ष रूप होगा। वह निवास-स्थान ऐसा होगा जिसको यद्यपि उसने पहले देखा नही था, परन्तु उस की आत्मा उस से पूर्णत परिचित थी। इस प्रकार 'जन्नत' के रूप मे उसे अपना अतीत भी मिल जायेगा। अपना अतीत प्रत्येक को प्रिय होता है।

५ अर्थात मनुष्य से न तो उसकी 'जन्नत' दूर है और न 'जहन्नम' दूर है। यदि उसके कर्म अच्छे है तो मानो 'जन्नत' उसके निकट आ गई है। उसके और 'जन्नत' के बीच एक ऊपरी आवरण के अतिरिक्त और कोई चीज बाधक नही

६ हजरत उबादा बिन सामित रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'जन्नत' में सौ दर्जे है। हर दो दर्जे के बीच इतना फासला है जितना कि आकाश और धरती के बीच है। 'फिरदौस' उन में दर्जे की दृष्टि से सब से उच्च है और उस से 'जन्नत' के चार दरिया निकलते है। और उस के ऊपर 'रहमान' (कृपाशील ईश्वर,) का 'अर्श' (सिहासन) है, तो जब तुम अल्लाह से मॉगो, तो उस 'फिरदौस' को मॉगो।[६] —तिरमिजी

है। इस लोक से प्रस्थान करने के पश्चात् उसका निवास जन्नत' की रमणीय उद्यानो मे ही होगा। और यदि उसके कर्म बुरे हैं, तो वह 'जन्नत' के नही बल्कि 'जहन्नम' के निकट है। उसके और 'जहन्नम' के मध्य कोई अधिक दूरी नही है। यदि वह सँभलता नही तो कोई चीज उसे 'जहन्नम' मे गिरने से नही बचा सकती। बल्कि 'जन्नत' और 'जहन्नम' की वास्तविकता तो हमारे अच्छे या बुरे कर्म ही है। मानो यही हमारे कर्म ही 'जन्नत' के सुख और 'जहन्नम' की यातनाओ और कष्टो का रूप धारण कर लेगे। यही कारण है कि कर्म और उनके प्रतिकार अथवा दण्ड मे अत्यन्त अनुरूपता पाई जाती है। स्वय नबी सल्ल० ने भी कहा है "सावधान! समस्त नेकियाँ और भलाइयाँ अपने ओर-छोर और पहलुओ सहित 'जन्नत मे है। सावधान! समस्त बुराइयाँ अपने ओर-छोर और पहलुओ सहित 'जहन्नम' मे हैं। अत कर्म करो और अल्लाह से डरते रहो और जान लो कि तुम्हे अपने कर्मो के साथ पेश होना है, तो जो कण भर भी कोई भलाई करेगा वह उसे देख लेगा और जो कण-भर भी कोई बुराई करेगा यह उसे देख लेगा।" —अश-शाफई यह टुकडा कि जो कण भर भी कोई भलाई करेगा वह उसे देख लेगा और जो कण-भर भी कोई बुराई करेगा वह उसे देख लेगा, कुरआन की सूरा अल—ज़िलज़ाल से उद्धृत है। यही बात कुरआन मे एक दूसरे स्थान पर इन शब्दो मे बयान हुई है "उस दिन तुम लोग पेश किये जाओगे, तुम्हारी कोई चीज़ छिपी नही रहेगी।"—सूरा-अल-हाक्का आयत १८।

६ इस 'हदीस' मे यह शिक्षा दी गई है कि 'मोमिन' को उच्च कोटि की 'जन्नत' का अभिलाषी होना चाहिए। उच्च कोटि की 'जन्नत' के अधिकारी वही लोग होगे जो 'ईमान' स्वभाव और कर्म की दृष्टि मे सब से उच्च होगे। इसलिए 'फिरदौस' के इच्छुक *(Seeker of Paradise)* को 'ईमान' चरित्र, आचरण और कर्म आदि प्रत्येक दृष्टि से ऊँचा उठने की कोशिश करनी चाहिए।

७ हजरत अली रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'जन्नत' में बाजार है उस मे क्रय-विक्रय न होगा वल्कि उस में पुर्षो और स्त्रियो के रूप होगे । जव कोई व्यक्ति किसी रूप की इच्छा करेगा तो उस मे प्रवेश करेगा ।[७] —तिरमिजी

८ हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल ने कहा अल्लाह के मार्ग मे प्रात समय और साय काल निकलना संसार और ससार में जो कुछ है सव से उत्तम है ।[८]— और यदि 'जन्नत' वालो की स्त्रियो में से कोई स्त्री धरती की ओर झाँके तो इन दोनों के बीच जो-कुछ है उसे प्रदीप्त कर दे और उसे सुगन्ध से भर दे । और उस के सिर की ओढनी दुनिया और दुनिया में जो-कुछ है सव से उत्तम है ।[९] —बुखारी

९ हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो व्यक्ति 'जन्नत, मे प्रवेश करेगा वह सुख और आनन्द से रहेगा, न तो उसे दुख और कष्ट पहुँचेगा और न उस के वस्त्र जीर्ण और पुराने होंगे और न उस की जवानी का अन्त होगा । —मुस्लिम

यदि कोई व्यक्ति 'फिरदौस' के लिए केवल दुआ और प्रार्थना ही करता है और इस सिलसिले की दूसरी जिम्मेदारियो को भूल जाता है, तो वास्तव मे 'फिरदौस' का वह सच्चा अभिलाषी नही है ।

एक 'हदीस' मे है कि 'जन्नत' वाले अपने ऊपर के बाला खाने वालो को इस तरह देखेंगे जिस प्रकार तुम उस प्रकाशमान सितारे को देखते हो जो उदय और अस्त होने के समय क्षितिज मे होता है । यह दर्जों और पद के उस अन्तर के कारण होगा जो उनके बीच पाया जायेगा —बुखारी, मुस्लिम

७ इस तरह की और बहुत सी हदीसें है जिन से मालूम होता है कि 'जन्नत' मे मनुष्य की प्रत्येक इच्छा पूरी होगी । वाह्य एव आन्तरिक हर प्रकार की सुख-दायक वस्तुएँ वहाँ उसे प्राप्त होगी ।

८ सफर के लिए साधारणतया लोग प्रात समय और सायकाल निकलते थे इस लिए प्रात काल और सन्ध्या समय के निकलने का जिक्र किया गया ।

९ अर्थात् सारा वातावरण उसकी सुन्दरता से चमक उठेगा और उसकी सुगन्ध से सुवासित हो जायेगी । केवल उसके सिर की ओढनी इतनी बहुमूल्य होगी कि सारा ससार उसका मूल्य चुकाने मे असमर्थ है । इस 'हदीस' के आरम्भिक भाग मे अल्लाह की राह मे निकलते और उसके 'दीन' (धर्म) के लिए दौड-धुप करने के महत्व का वर्णन किया गया है और अन्त मे 'जन्नत' की 'हूरों'

१० हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'जन्नत' मे एक बाजार है जिस में हर जुमा को 'जन्नत' वाले इकट्ठा होगे और वहाँ उत्तरी वायु चलेगी जो उन के मुख और वस्त्रों पर सुगन्ध बखेर देगी। और उन का सौन्दर्य और सुरूपता बढ जायेगी जब वे अपने घर वालो के पास लौट कर इस हाल मे जायेंगे कि उन की सुन्दरता और सुरूपता बढी हुई होगी, तो उन के घर वाले उनसे कहेंगे अल्लाह की कसम! हम से अलग हो कर तो तुम ने अपने सौन्दर्य और सुरूपता को बढा लिया। इस पर वे कहेंगे और तुम भी अल्लाह की कसम! हमारे बाद सौन्दर्य और सुरूपता मे बढ गये।[10]

—मुस्लिम

११ हजरत मुआज बिन जबल रजि० से उल्लिखित है नबी सल्ल० ने कहा 'जन्नत' वाले 'जन्नत' मे इस तरह प्रवेश करेंगे कि उन के शरीर बालों से साफ होगे, (मसे भीग रही होगी परन्तु) दाढी न निकली होगी, आँखे अजित होंगी और तीस तेंतिस वर्ष की आयु होगी[11]

—तिरमिजी

१२ हजरत जाबिर रजि० कहते है कि एक व्यक्ति ने पूछा हे अल्लाह के रसूल सल्ल०! क्या 'जन्नत' के लोग सोयेगे भी? कहा.

(मृगनैनी रूपवती स्त्रियो) की सुन्दरता और उनके वस्त्रो की बहुमूल्यता का उल्लेख हुआ है। इसमे इस बात की ओर सकेत है कि जो लोग अल्लाह की राह मे निकलते है और अपने घर वालो की जुदाई गवारा करते है उन्हे 'जन्नत' मे ऐसी पत्नियाँ मिलेगी जिनका सौन्दर्य सम्पूर्ण ससार को सुन्दरता एव प्रकाश प्रदान कर सकता है। जिनके केश की सुगन्ध सारे वातावरण को सुरभित कर सकती है और जिनके वस्त्र ससार की सारी चीजो से अच्छे और बहुमूल्य होगे।

१० अर्थात् उनके घर वालो और उनकी पत्नियो का सौन्दर्य भी पहले की अपेक्षा बढा हुआ होगा।

११ वे सदैव युवा और सुन्दर ही रहेगे। शरीर बालो से साफ होगे, मसे भीज रही होगी परन्तु दाढी न निकली होगी। वे गोरे-चट्टे होगे। शरीर गठे हुये आँखे सुन्दर अजित होगी। तिरमिज़ी मे यह 'रिवायत' हज़रत अबू सईद रज़ि० से भी उल्लिखित है और मुसनद अहमद मे हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० की बयान की हुई 'हदीसो' मे भी यह 'हदीस' मिलती है।

निद्रा मृत्यु की बहिन है। 'जन्नत' के लोग मरेंगे नही।[१२]

१३ हजरत अबू सईद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि सर्वोच्च अल्लाह 'जन्नत' वालों से कहेगा. हे 'जन्नत' वालो !" वे कहेगें. उपस्थित है हम हे हमारे रब! तेरी सेवा मे उपस्थित है और सारी नेंमते तेरे हाथ में है। फिर वह कहेगा क्या तुम राजी और खुश हो ? वे कहेगें हम क्यों न राजी होंगे जब कि आप ने हमे वह कुछ दिया जो अपने किसी सृष्टजीव को नही दिया था। वह कहेगा क्या मै तुम्हे उस से भी उत्तम एक चीज न दूँ ? वे कहेगें हे 'रब' ! वह क्या चीज है जो इस से भी बढ कर होगी ? (अल्लाह) कहेगा मै तुम्हे अपनी प्रसन्नता प्रदान करता हूँ, इस के बाद अब कभी भी मै तुम से अप्रसन्न न हूँगा।[१३] —बुखारी, मुस्लिम

१४ हजरत नोअमान बिन बशीर रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा ('जहन्नम' की) आग वालो में सब से हल्की यातना वाला वह व्यक्ति होगा जिस की चप्पले और जिन के तसमे आग के होगे। जिन से उस का मस्तिष्क इस तरह खौलेगा जिस तरह तेगची (चूल्हे पर) खौलती है और वह नही समझेगा कि कोई उस से बढ कर यातना में है हालाँकि वह समस्त 'जहन्नम' वालों से हल्की यातना में होगा[१४]। —बुखरी मुस्लिम

---

१२. अर्थात् वे सदैव जाग्रत अवस्था मे रहेगें। उनका यह जागना उनके लिए आनन्ददायक होगा। वे सदैव ताजादम रहेगें उनका यह जागना उनके लिए आनन्ददायक होगा। वे सदैव ताजादम रहेगें। उन्हे किसी प्रकार की थकान और शिथिलता न छू सकेगी और न उन्हे ऊँघ आयेगी।

मधु-मक्खियो के बारे मे कहा जाता है कि वे जीवन भर जाग्रत अवस्था मे रहती हैं, कभी सोती नही। वे विश्राम अवश्य करती है सोने की आवश्यकता उन्हे नही होती।

१३ अल्लाह की शाश्वत प्रसन्नता की प्राप्ति सब से बडी दौलत है जो 'जन्नत' वालो को प्राप्त होगी। कुरआन मजीद मे भी इस ईश-अनुग्रह का उल्लेख इन शब्दो मे किया गया है "ईमान वाले पुरुषो और 'ईमान' वाली स्त्रियो से अल्लाह ने ऐसे बागो का वादा किया है जिनके नीचे नहरें वह रही होगी जिन मे वे सदैव रहेगें—सदा बहार बागो मे (उनके लिए) घर होगें—और अल्लाह की खुशी और रजामन्दी तो बडी चीज़ है !"—सूरा अत-तौबा आयत ७२।

१४ जब हल्के अज़ाब और यातना की सख्ती और तकलीफ का यह हाल है तो

१५. हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा 'कियामत' के दिन ('जहन्नम' की) आग वालों में से एक ऐसे व्यक्ति को लाया जायेगा जो ससार का बडा ही सुखी और सम्पन्न व्यक्ति था और फिर उसे ('जहन्नम' की) आग में एक डुबकी दी जायेगी।[१५] फिर उस से कहा जायेगा कि हे आदम के बेटे! क्या तुम नें कभी अच्छी हालत भी देखी है? क्या कभी सुख और आनन्द का समय भी तुम पर बीता है? वह कहेगा. कभी नही। अल्लाह की कसम। हे 'रब'![१६]

और 'जन्नत' के लोगों मे से एक व्यक्ति को लाया जायेगा जो ससार मे सब से अधिक कष्ट और दुख उठाने वाला होगा और उसे 'जन्नत' में एक डुबकी दी जायेगी[१७] फिर उस से कहा जायेगा: क्या तुम नें कभी कोई दुख देखा है? क्या कभी तुम पर कोई कठिन समय वीता है? वह कहेगा · अल्लाह की कसम हे 'रब'! न तो मुझ पर कभी कोई तगी और दुख का समय बीता है और न मैं ने कभी कोई कठिनाई देखी है।[१८] —मुस्लिम

१६. हजरत इब्न अब्बास रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'जहन्नम' वालों (नारकी लोगो) में सब से हल्की यातना अबू तालिब को होगी वे केवल आग के जूते पहने होंगे जिस के कारण उन का दिमाग खौलता होगा![१९] —बुखारी

कठोर यातना की क्या हालत होगी। अल्लाह हम सबको 'जहन्नम' की यातना से बचाये।

१५ अर्थात् 'जहन्नम' मे डालकर उसे तुरन्त निकाल लेंगे।

१६. इस से इसका अन्दाज़ा किया जा सकता है कि 'जहन्नम' का अज़ाब कितना सख्त होगा। 'जहन्नम' का एक क्षण भी मनुष्य के सारे सुख-चैन को भुला देगा। उसे याद भी नही रहेगा कि कभी उसके सुख और आनन्द के दिन भी रहे हैं।

१७. अर्थात् 'जन्नत' के वातावरण मे पहुँचा कर तुरन्त उसे वापस लायेंगे।

१८ 'जन्नत' मे एक क्षण रहने का यह परिणाम होगा कि मनुष्य जीवन भर के कष्टो और दुखो को भूल जायेगा। जिन्हे सदैव के लिए 'जन्नत' मे रहने का स्थान मिल जायेगा उनके सौभाग्य का क्या कहना!

१९ अबू तालिब नबी सल्ल० के चचा थे। जब तक वे जीवित रहे आपक साथ

अल्लाह के दर्शन

وَعَنْ أَبِي مُوسَىٰ رضي قَالَ، قَالَ رَسُولُ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ، جَنَّتَانِ مِنْ فِضَّةٍ آنِيَتُهُمَا وَمَا فِيهِمَا، وَجَنَّتَانِ مِنْ ذَهَبٍ آنِيَتُهُمَا وَمَا فِيهِمَا وَمَا بَيْنَ الْقَوْمِ وَبَيْنَ أَنْ يَنْظُرُوا إِلَىٰ رَبِّهِمْ إِلَّا رِدَاءُ الْكِبْرِيَاءِ عَلَىٰ وَجْهِهِ فِي جَنَّةِ عَدْنٍ ——— بخاری، مسلم، ترمذی

१. हज़रत अबू मूसा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . दो 'जन्नतें' चाँदी की हैं। बरतन और जो वस्तुये उनमें है सब चाँदी की हैं। और दो 'जन्नतें' सोनें की हैं उन के बरतन और जो चीज़े उनमें हैं सब सोने की है। (जन्नत के) लोगों और उनके अपने 'रब' की ओर देखनें में कोई चीज रुकावट न बनेंगी सिवाय महानता और बड़ाई की चादर के जो उसके मुख पर होगी सदा-बहार जन्नत में[1]।

—बुख़ारी, मुस्लिम, तिरमिज़ी

रहे परन्तु चूँकि वे 'ईमान' न लाये थे इसलिए 'जहन्नम' की यातना से वे कभी छुटकारा न पा सकेंगे। यदि मनुष्य के पास 'ईमान' नही है, तो भले ही वह ऊँचे कुल का सदस्य हो अल्लाह की दृष्टि मे उसका कोई सम्मान नही।

१ अर्थात 'जन्नत' वालो और उन के 'रब' के बीच कोई परदा न होगा। यदि कोई आवरण होगा तो वह केवल अल्लाह की महानता और उस के प्रताप का आवरण होगा। उस की महानता और उस के प्रताप के कारण उस की ओर देखना साधारण बात न होगी, परन्तु अल्लाह अपनी विशेष कृपा से 'जन्नत' वालो को अपने दर्शन से वञ्चित न करेगा। वह उन को देखने की ऐसी शक्ति प्रदान करेगा कि वे अपने 'रब' के दर्शन कर सकेंगे।

नबी सल्ल० की सिखाई हुई एक दुआ के शब्द ये हैं, हे अल्लाह ! तुझ से आँख की ऐसी ठढक का इच्छुक हूँ जो कभी छिन न सके, तुझ से तेरे फ़ैसलो पर राज़ी रहने का योग माँगता हूँ। तुझ से मृत्यु के पश्चात् सुखमय जीवन चाहता हूँ। तुझ से तेरे मुखारविन्दु के दर्शन का आनन्द चाहता हूँ, तेरी मुलाकात की आकाक्षा का इच्छुक हूँ जो किसी परेशान कर देने वाली सख़्ती और गुमराह (पथभ्रष्ट) करने वाले फितने के बिना प्राप्त हो जाये।" दुआ के इन शब्दो से स्पष्ट है कि अल्लाह की मुलाकात और उस के दर्शन कितने आनन्द दायक है' इस वडी चीज़ की प्राप्ति की अभिलाषा स्वय एक बडी नेमत है।

२ हजरत जरीर बिन अब्दुल्लाह् रजि० कहते हैं कि हम अल्लाह के रसूल सल्ल० के पास बैठे हुये थे, आपनें चॉद की ओर देखा पूर्णिमा की रात थी फिर कहा निश्चय ही तुम अपने 'रब' को स्पष्ट रूप से देखोगे जिस तरह इस चॉद को देख रहे हो। उसके देखनें में तुम्हे कोई जहमत (कठिनाई) न होगी[2], तो यदि तुमसे हो सके तो सूर्य के उदय और अस्त होनें से पहले की 'नमाज' के मुकाबले मे कोई चीज तुम्हे पराजित न करे तो ऐसा अवश्य करो फिर आपनें (कुरआन का यह टुकडा) पढा . "और 'तसबीह्' करो अपने 'रब' की प्रशसा (हम्द) के साथ सूर्य उदय होने और उके अस्त होनें से पहले[3]।" —बुखारी, मुस्लिम

३ हजरत सुहैब रूमी रजि० कहते है कि नबी सल्ल० नें कहा जब 'जन्नत' वाले 'जन्नत' मे दाखिल हो जायेंगे तो सर्वोच्य अल्लाह् कहेगा क्या तुम चाहते हो कि तुम्हे एक चीज और प्रदान करूँ ? वे कहेंगे क्या आप नें हमारे चेहरे उज्जवल नही किये ? क्या आप नें हमें ('जहन्नम' की) आग से बचा कर 'जन्नत' मे दाखिल नही किया ? (अब क्या चीज शेष है जिस की हम इच्छा कर सकें ?) आप कहते

२ अर्थांत जिस तरह चाँद देखने मे तुम्हे कोई कठनाई नही होती। तुम सब एक साथ बिना किसी रूकावट के उसे देखतें हो इसी तरह बिना किसी कठिनाई के और रूकावट के 'कियामत' के दिन अपने 'रब' को देखोगे, सासारिक जीवन मे अल्लाह् का 'दीदार' (दर्शन) सम्भव नही परन्तु 'आखिरत' मे अल्लाह् 'जन्नत' वालो को जहाँ और बहुत सी विशेषताएँ और गुण प्रदान करेगा वही वह उन्हे ऐसी योग्यता और सहन-शक्ति भी देगा कि वे अपने 'रब' के दर्शन का आनन्द ले सकें।

एक और रिवायत' मे है "तुम अपने 'रब' को अपनी आँखो से देखोगे"।

३ अर्थांत् यदि तुम अल्लाह् के दर्शन के अधिकारी बनना चाहते हो तो प्रात काल और साय काल की नमाज़' को विशेष रूप से पूरे मनोयोग और नियमित रूप से अदा करो। और उस के महत्व को समझो। यह 'नमाज़' वास्तव मे अल्लाह् की'तसबीह्' और उस की 'हम्द' (गुण गान) है, तुम्हे इस से कदापि असावधान न होना चाहिए। अल्लाह् के दर्शन के अधिकारी वही लोग होगें जो प्रात समय और साय काल अपने 'रब' के सामने खडे होते और उस के गुण गाते हैं। जो लोग उस की सेवा मे उपस्थित नही होते वे कल भी उस के सामीप्य और दर्शन से वचित रहेगें। 'आखिरत' हमारे वर्तमान जीवन का स्वाभाविक परिणाम है।

हैं कि फिर आवरण उठ जायेगा और वे अल्लाह् के मुख को देख रहे होंगे, तो कोई भी चीज़ अपने 'रब' को देखने से अधिक प्रिय उन्हें न मिली होगी। फिर आप नें (इस 'आयत' का) पठन किया · "जिन लोगों ने भलाई की उन के लिए अच्छा परिणाम है और उस के सिवा और भी" ४।

—मुस्लिम

४. हज़रत जाबिर रजि० कहते है कि नबी सल्ल० ने कहा कि जब 'जन्नत' वाले अपने सुख और आन्नद में होंगे, अचानक उन्हे एक तेज़ प्रकाश दीख पडेगा वे अपने सिर को उठायेंगे तो क्या देखेंगे कि उन का 'रब' उन के ऊपर प्रकट है। अल्लाह् कहेगा "तुम पर 'सलाम' हो, हे 'जन्नत' वालो !" नबी सल्ल० ने कहा · यही सर्वोच्च अल्लाह् के इस कथन का अर्थ होता है "सलाम ! शब्द दयावन्त 'रब' का ! ! ५" आप ने कहा फिर अल्लाह् उन की ओर देखेगा और वे ('जन्नत' वाले) अल्लाह् की ओर देखेगे और वे 'जन्नत' की सुखसामग्री में से किसी चीज की ओर भी ध्यान न देगे (वे अल्लाह् के दर्शन मे लीन हो कर रह जायेंगे)६। वे अल्लाह् की ओर देख रहें होंगे यहाँ तक कि वह उन

४ ईश-मुखार् विन्दु के दर्शन का आनन्द 'जनन्त' क सार आनन्दा स बढा होगा। इस लोक मे अल्लाह् के दर्शन की कोई सम्भावना नही। यहाँ कुछ विशेष नियम हैं जिन के अन्तर्गत मनुष्य की चेतना शक्ति काम करती है। जो चीजे उन नियमो के अन्तर्गत नही आती मनुष्य को उन का बोध नही हो पाता। इस लिए हज़रत मूसा अ० ने जब 'दीदार' (दर्शन) की अभिलाषा व्यक्त की तो अल्लाह ने कहा कि तुम मुझे नही देख सकते। परन्तु 'आखिरत' के नियम सासारिक नियमो से भिन्न और उच्च होगे। वहाँ मनुष्य की चेतन शक्ति भी आज से भिन्न होगी।

५. दे० कुरआन सूरा या सीन० आयत ५८। इस 'आयत' मे अल्लाह की ऐसी ही कृपाओ की ओर सकेत किया गया है। एक 'रिवायत' मे है कि 'जन्नत वालो मे अल्लाह की दृष्टि मे सब से प्रतिष्ठित वह होगा जिसे प्रात: और साय काल दोनो ही समयो मे अल्लाह के दर्शन मिलेंगे। इस के पश्चात् आप ने कुरआन की यह 'आयत' पढी : "कितने चेहरे उस दिन खिले हुये होगे, अपने 'रब' की ओर देख रहे होगे" (अहमद, तिरमिज़ी इब्न, उमर रज़ि से उल्लिखित)।

६ अल्लाह के दर्शन की अपेक्षा कोई भी चीज़ उन के ध्यान को अपनी ओर आकर्षित न कर सकेगी।

की निगाहों से छिप जायेगा और उस का प्रकाश शेष रह जायेगा[७]।

—इब्न माजा

मानव विचार और कर्म पर आखिरत की धारणा का प्रभाव

عَنْ عَبْدِ اللّٰهِ بْنِ عُمَرَ رض قَالَ، قَالَ أَخَذَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ بِمَنْكِبِيْ
فَقَالَ، كُنْ فِي الدُّنْيَا كَأَنَّكَ غَرِيْبٌ أَوْ عَابِرُ سَبِيْلٍ ——— بخاری

१. हज़रत अब्दुल्लाह इब्न उम्र रजि० से उल्लिखित है, वे कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने मेरा कन्धा पकड कर कहा: तुम संसार में इस प्रकार रहो मानो तुम परदेशी हो या राह चलते राही।[१]

—बुखारी

२. हज़रत अबू अय्यूब अनसारी रजि० कहते हैं कि एक व्यक्ति नबी सल्ल० की सेवा में उपस्थित हुआ उस ने कहा मुझे संक्षेप में उपदेश दीजिए। आप ने कहा जब तुम 'नमाज' में खडे हो तो उस व्यक्ति की-सी नमाज अदा करो जो विदा किया जा रहा हो। और कोई ऐसी बात मुँह से न निकलो जिस के बारे में कल तुम्हे उज्र करना पडे। और जो-कुछ लोगो के हाथो में है उस से बिल्कुल निराश हो जाओ[२]।

—अहमद

---

७ अर्थात ईश-दर्शन का प्रभाव बाह्यान्तर पर शेष रह जायेगा।

१. ससार मे मनुष्य की वास्तविक स्थिति एक पथिक की है। उसे यहाँ इस प्रकार जीवन व्यतीत करना चाहिए जैसे उसे यहाँ सदैव रहना है, बल्कि उसे ससार मे एक मुसाफिर की तरह रहना चाहिए। मुसाफिर विदेश मे मन नही लगाता। उसका मन तो अपने वतन मे लगा रहता है। ठीक इसी प्रकार मनुष्य को 'आखिरत' की ओर अपना मन लगाना चाहिए जो उसका वास्तविक ठिकाना है। ससार को बिल्कुल विदेश समझना चाहिए, बल्कि इस से भी आगे यदि सम्भव हो तो वह उस पथिक के समान जीवन व्यतीत करे जो रास्ता चल रहा होता है, कही ठहरा हुआ नही होता बल्कि हर क्षण अपनी मजिल की ओर बढ रहा होता है। यदि मनुष्य इस भावना के साथ जीवन व्यतीत करे तो फिर ससार उसे उसके वास्तविक उद्देश्य से कभी ग़ाफिल नही कर सकता। और न कोई लोभ और लालच उसे सीधे मार्ग से हटा सकता है।

२. मतलब यह है कि तुम अपने को हर समय 'आखिरत' के लिए तैयार रक्खो।

३. हजरत उकबा बिन आमिर रज़ि० कहते है कि नबी सल्ल० ने कहा : तेजोमय प्रतापवान अल्लाह् बन्दे की अवज्ञा पर भी उस की पसन्द और इच्छा के अनुसार दुनिया की चीजे दे रहा है, तो समझ लो कि यह (अल्लाह् की ओर से) ढील है। फिर अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने (करआन की इस 'आयत' को) पढा "फिर जब ऐसा हुआ कि जिस से उन्हे याद दिहानी कराई गई थी उन्हों ने उसे भुला दिया, तो हम ने उन पर हर तरह् की नेमतो के द्वार खोल दिये यहाँ तक कि जब वे उस पर इतराने लगे तो अचानक हम ने उन्हे पकड लिया अब तो वे बिल्कुल निराश थे[३] (सूरा ६ ४४)"।

—अहमद

४ हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा. दुनिया उस का घर है (जिस का) 'आख़िरत' में कोई घर नही और उस का माल है जिस का ('आखिरत' में) कोई माल नही और उसे वही एकत्र करता है जिस के पास बुद्धि नही[४]।

—अहमद, बैहकी-शोबुल ईमान

किसी समय भी इस से असावधान न हो। 'नमाज़' अदा करो तो इस तरह मानो यह अन्तिम 'नमाज' है इसके बाद फिर 'नमाज' पढने का अवसर न मिल सकेगा। और कोई बात कहो तो पूरी जिम्मेदारी के साथ कहो। यह भावना सदैव बनी रहनी चाहिए कि तुम्हे हर बात का अल्लाह् के यहाँ उत्तर देना है। ससार मे लोगो को जो-कुछ सुख-वैभव और धन-दौलत प्राप्त है उस से अपने को निरपेक्ष रक्खो। उसके लिए मन मे किसी प्रकार का लोभ न होना चाहिए। तुम्हे आशा केवल एक ईश्वर से करनी चाहिए। यही 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) है और यही 'आखिरत' पर विश्वास करने का अभिप्राय है।

३ यह 'हदीस' बताती है कि किसी व्यक्ति या जाति की सासारिक दृष्टि से उन्नति और उसकी सम्पन्नता या उसका सत्ता प्राप्त कर लेना इस बात का प्रतीक नही है कि उस से अल्लाह् प्रसन्न है। यह अल्लाह् की ओर से एक ढील हो सकती है। इसके पश्चात् अल्लाह् का अजाब अपराधियो को अचानक आ दबोचता है फिर उन्हे कही शरण नही मिलती और वे विनष्ट होकर रह जाते है।

४ अर्थात् 'आखिरत' मे उस व्यक्ति के लिए कोई ठिकाना और सुख-सामग्री नही जिसने ससार ही को अपना सब-कुछ समझा और सासारिक जीवन मे 'आखिरत' की ओर से बिल्कुल गाफिल रहा। इस से बढकर अज्ञानता की

५ हज़रत अबू मूसा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · जिस व्यक्ति ने अपनी दुनिया से प्रेम किया उस ने अपनी 'आखिरत' को हानि पहुँचाई और जिस ने अपनी 'आखिरत' से प्रेम किया उस ने अपनी दुनिया को नुकसान पहुँचाया, तो तुम स्थायी वस्तु को उस के मुक़ाबले में प्राथमिकता दो जो विनष्ट होने वाली है [५]।

—अहमद, बैहकी-शोबुल ईमान

६ हजरत शद्दाद बिन औस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा शक्तिशाली व्यक्ति वह है जो अपने जी को क़ाबू में रक्खे और मृत्यु के पश्चात् के लिए कार्य करे और शक्तिहीन और असमर्थ है वह व्यक्ति जो अपनी (तुच्छ) इच्छाओं का अनुपालन करे और अल्लाह से (अच्छी) कामनाएँ करे [६]।

—तिरमिजी, इब्न माजह

७ हजरत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने (क़ुरआन की) इस 'आयत' का पाठ किया "अल्लाह

कौन सी बात हो सकती है कि कोई माल-दौलत के पीछे दीवाना बना रहे और अपनी 'आखिरत' के लिए कुछ भी सामग्री न जुटाये।

५. अर्थात् बुद्धिमानी की बात यही है कि मनुष्य 'आखिरत' के जीवन को प्रिय समझे जो सदैव रहने वाला है। दुनिया के पीछे 'आखिरत' को तबाह न करे। सासारिक जीवन मे बहुधा ऐसे अवसर आते है जबकि मनुष्य को 'आख़िरत' के लिए सासारिक हानि सहन करनी पडती है। ऐसे अवसरो पर मनुष्य को दुनिया और 'आखिरत' दोनो मे से किसी एक को प्राथमिकता देनी पडती है। सफल व्यक्ति वही है जो 'आखिरत' के मुकाबले मे सासारिक लाभ को प्राथमिकता न दे। लेकिन यह उस समय सम्भव हो सकता है जबकि मनुष्य के मन से ससार का मोह निकल गया हो और 'आखिरत' की इच्छा उसके मन मे करवटें लेने लगी हो।

६ अर्थात् यह अत्यन्त मूर्खता की बात है कि मनुष्य सत्य को त्याग कर तुच्छ इच्छाओ का वशवर्त्ती होकर रहे और आशा इसकी करे अल्लाह उसे 'आख़िरत' मे उच्च स्थान प्रदान करेगा और उसे विभिन्न प्रकार की निधियो और सुख-सामग्री से सम्मानित करेगा हालाँकि 'आखिरत' की सफलता तो उन ही लोगो के लिए है जो प्रत्येक अवस्था मे सत्य का पालन करते है, अपनी इच्छाओ के दास नही होते।

जिसे (सीधा) मार्ग दिखाना चाहता है उस के सीनें (दिल) को इस्लाम के लिए खोल देता है", इस के बाद आप ने कहा जव प्रकाश सीनें में प्रवेश करता है, तो सीना कुशादा हो जाता है। कहा गया : हे अल्लाह के रसूल! क्या कोई ऐसी चीज़ है जिस से उस की पहचान हो सके? आप ने कहा : हाँ, धोखे के घर (अर्थात् दुनिया) से दिल का उठ जाना और सदा रहने वाले घर का अभिलाषी होना और मृत्यु आने से पूर्व उस के लिए तैयार हो जाना [७]।

—बैहकी-शोबुल ईमान

८ हजरत अबू हुरैरह रजि० कहते है कि अबू कासिम (अर्थात् नबी) सल्ल० ने कहा . उस की कसम जिस के हाथ मे मेरे प्राण है जो कुछ मै जानता हूँ यदि तुम्हे मालूम हो जाये, तो तुम रोओ अधिक और हँसो कम [८]।

—बुखारी

९ हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा : जो डरता है वह रात के आरम्भिक भाग में चल देता है और जो रात के आरम्भ में चल पडता है वह मंजिल पर पहुँच जाता है। जान रक्खो! अल्लाह का सौदा बहुमूल्य है। जान रक्खो! अल्लाह का सौदा 'जन्नत' है [९]।

—तिरमिजी

---

७. मतलब यह है कि जब बन्दे के अन्दर का अन्धकार दूर हो जाता है और उसे सत्य का ज्ञान मिल जाता है तो स्वभावत: उसे 'आखिरत से लगाव और प्रेम हो जाता है। दुनिया जो मृत्युलोक है उसका मोह मन से निकल जाता है। और वह उस जीवन के निर्माण मे लग जाता है जो मृत्यु के पश्चात् मिलने वाला है।

८ अर्थात् वास्तविकता यदि इस प्रकार तुम्हारे सामने खुलकर आ जाये जिस प्रकार वह मेरे लिए प्रत्यक्ष है और तुम्हे अल्लाह के प्रताप, और 'आखिरत' के भयावह और मन को कँपा देने वाले दृश्य का ज्ञान हो जाये, तो तुम्हारा सुख और आराम-चैन सब छिन जाये।

९. अरब मे साधारणतया काफिले रात के अन्तिम भाग मे चलते थे। यही कारण है कि डाकुओ और बटमारो के आक्रमण भी भोर ही मे होते थे। जिस मुसाफिर या काफिले को लुटेरो का भय होता वह रात के आखिरी हिस्से मे चलने के बजाय रात के आरम्भ ही मे चल देता था। और इस तरह कुशलता पूर्वक अपनी मंजिल पर पहुँच जाता था। इस मिसाल के द्वारा नबी सल्ल० लोगो को समझाते कि जिस तरह मंजिल की चिन्ता रखने वाले और बट-

१० हजरत अब्दुल्लाह् बिन अम्र रजि० से उल्लिखित है कि एक व्यक्ति ने अल्लाह् के रसूल सल्ल० से कहा . हे अल्लाह् के नबी! लोगों में सब से बढ कर बुद्धिमान और दूरदर्शी कौन है ? आप ने कहा . जो उन मे मृत्यु को अधिक याद करता और उन में सब से अधिक उस की तैयारी करता है । ऐसे ही लोग है, उन्हों ने ससारिक प्रतिष्ठा भी प्राप्त की और 'आखिरत' का सम्मान भी [१०]।

—तबरानी-मोजमुस्सगीर

११. हजरत आइशा रजि० कहती है कि मै ने अल्लाह् के रसूल० से 'आयत'— "और जो देते है जो-कुछ कि देते है इस हाल में कि दिल उन के कॉप रहे होते है" के बारे मे पूछा कि क्या ये वे लोग है जो शराब पीते है और चोरी करते है ? आप ने कहा हे सिद्दीक की बेटी ! नही, बल्कि ये वे लोग हैं जो 'रोजा' रखते, 'नमाजे' पढते और 'सदका' करते है और इस पर भी डरते रहते है कि कही उनकी ये नेकियाॅ अस्वीकृत न हो जाये [११]। यही लोग है जो भलाइयों की ओर तेजी से

मारो से डरने वाले मुसाफिर अपने आराम और अपनी नीद को कुरबान कर के रात के आरम्भ मे ही चल देते है उसी तरह 'आखिरत' के मुसाफिर को भी चाहिए कि अपनी मजिल तक पहुँचने की चिन्ता करे और कदापि असावधान न हो । अपने सुख और अपनी इच्छा को इसके लिए कुरबान कर दे । बन्दे को अपने ईश्वर से जो चीज़ प्राप्त करनी है वह साधारण नही है वह बहुमूल्य है । अल्लाह् ने अपने सच्चे और वफादार सेवको के लिए 'जन्नत' तैयार की है जिसे हासिल करने के लिए सब-कुछ त्यागा जा सकता है । 'जन्नत' का वास्तविक मूल्य यही है कि बन्दा अपने प्राण और धन को अल्लाह् के समर्पण कर दे । और हर ओर से कट कर केवल एक अल्लाह् का हो जाये । यही बात कुरआन मे इन शब्दो मे कही गई है . "निस्सन्देह अल्लाह् ने 'ईमान' वालो की जान और उनके माल को 'जन्नत' के बदले खरीद लिया है" (सूरा अत-तौबा आयत १११) ।

१० ससार मे प्रतिष्ठा का पद भी उन ही लोगो को प्राप्त होता है जो दुनिया के लोभी नही बल्कि 'आखिरत' के इच्छुक होते है । और 'आखिरत' का उच्च पद और सम्मान तो उन ही लोगो के लिए है । दुनियादारो के लिए 'आखिरत' के जीवन मे तिरस्कार और अपमान के अतिरिक्त और कुछ नही है ।

११ कुरआन का यह टुकडा जो इस 'हदीस' मे पेश किया गया है सूरा अल-मोमिनून

बढ़ते है [१२]। —तिरमिजी, इब्नमाजा

१२. हजरत मस्तूर बिन सद्दाद रजि० कहते हैं कि मैं ने अल्लाह के रसूल सल्ल० से सुना, आप कहते थे . अल्लाह की कसम दुनिया की मिसाल 'आखिरत' के मुकावले मे बस ऐसी है जैसे तुम में से कोई अपनी एक उँगली समुद्र मे डाल कर निकाले और फिर देखे कि

का है। सूरा अल-मोमिनून मे एक जगह उन लोगो के गुणो का उल्लेख किया गया है जिन्हे भलाइयो से अत्यन्त लगाव होता है। जो अल्लाह की ओर तेज़ी से बढते हैं। इस सिलसिले मे उनका एक गुण यह बयान किया गया है कि वह देते है जो कुछ कि देते हैं और हाल उनका यह होता है कि उनके दिल डर से कॉप रहे होते है। इस 'आयत' मे देने से अभिप्रेत केवल भौतिक चीज़ो का ही देना नही है बल्कि अरबी भाषा मे देने के लिए 'ईता' शब्द प्रयुक्त हुआ है जो अभौतिक और अन्तरात्मा से सम्बन्ध रखने वाली चीज़ो के देने के लिए भी प्रयोग होता है। इस प्रकार इस 'आयत' का अर्थ यह हुआ कि वे जो-कुछ भी खर्च करते हैं और जो नेकी और 'इबादत' भी करते हैं इस हालत मे करते है कि दिल उनके कॉप रहे होते हैं कि मालूम नही अल्लाह के यहाँ यह नेकियाँ कबूल भी होती हैं या नही। हजरत आइशा रजि० ने इस 'आयत' के बारे मे पूछा कि क्या इस से सकेत उन लोगो की ओर है जो गुनाह करते हैं किन्तु वे अल्लाह से बिल्कुल निश्चित नही हो जाते। नबी सल्ल० ने उत्तर दिया नही, इस 'आयत' मे चर्चा उन लोगो की है जो अच्छे कर्म करते है फिर भी अल्लाह से डरते रहते है। आपने कहा कि वास्तव मे ऐसे ही लोग हैं जिनके बारे मे कहा गया है कि वे भलाइयो के लिए तेज़ी दिखाते है। इस से मालूम हुआ कि यह भावना 'दीन' मे अभीष्ट है कि मनुष्य किसी दशा मे भी निश्चिन्त हो कर न बैठ रहे। उसे अल्लाह से अच्छी आशा भी हो किन्तु वह अल्लाह के प्रताप से हर समय डरता भी रहे। ऐसे ही लोग 'दीन' के मार्ग मे आगे बढते रहते हैं। वे ठहरते नही और न उनमे किसी प्रकार की शिथिलता आती है। अधिक-से-अधिक कार्य करने के बाद भी वे यही समझते है कि अभी वे कुछ भी नही कर सके है। अभी तो बहुत से काम है जो करने को पडे हैं। न्यूटन ने उस समय जबकि विज्ञानलोक मे उसकी खोजो की शुहरत थी, कहा था हम जो-कुछ मालूम कर सके है वह उनकी अपेक्षा बहुत कम है जिन से हम अभी परिचित नही है। हमारी हालत उस व्यक्ति की सी है जिसके हाथ मे समुद्र की कुछ घोंघियाँ आ गई हो जब कि समुद्र मे अभी अगणित बहुमूल्य मोती मौजूद है। न्यूटन को इसकी अनुभूति हो गई थी कि प्रकृति (*Nature*) के जो नियम उसने मालूम किये है वे उन नियमो के

कितना पानी उस में लग कर आया है [१३]। —मुस्लिम

१३. हज़रत सह्ल बिन सअद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा यदि अल्लाह की दृष्टि में दुनिया की कीमत मच्छर के पर के बराबर भी होती, तो किसी 'काफिर' व्यक्ति को एक घूँट पानी भी न देता [१४]।

—अहमद, तिरमिजी, इब्नमाजा

१४ हज़रत उमर रजि० कहते हैं कि मैं अल्लाह के रसूल सल्ल० की सेवा मे उपस्थित हुआ तो आप एक खुर्री चटाई पर लेटे हुये थे और उस के और आप के शरीर के बीच कोई बिस्तर न था। चटाई ने पहलू पर निशान डाल दिये थे। आप चमड़े के एक तकिया का सहारा लगाए हुये थे जिस मे खजूर की छाल भरी हुई थी। मैं ने कहा . हे अल्लाह के रसूल! अल्लाह से प्रार्थना कीजिए कि वह आप के समुदाय को कुशादगी प्रदान करे। ये फारिस और रोम भी तो है,—इन्हे कितनी कुशादगी प्राप्त है, हालाँकि ये अल्लाह की 'इबादत' नही

मुकाबले मे कुछ भी नही हैं जो अभी मानव के लिए रहस्य मात्र है। इसी प्रकार जब एक मुस्लिम व्यक्ति को इसका एहसास हो जाता है कि उसके जिम्मे कितने काम हैं जो वह कर सकता था किन्तु वे यो ही पडे हुए है और जो काम उसने किये है मालूम नही उनमे कितनी त्रुटियाँ मौजूद है तो इस हालत मे उसके दिल का वही हाल होता है जो 'कुरआन' मे बयान हुआ है।

१२ यह कुरआन का हिस्सा है। बन्दो के अभीष्ट गुणो के उल्लेख के पश्चात् कहा गया कि यही लोग भलाइयो की ओर तेज़ी से दौडते है।

१३ मतलब यह है कि दुनिया 'आखिरत' के मुकाबले मे इतनी तुच्छ है जितना समुद्र के मुक़ाबले मे उँगली मे लगा हुआ पानी। आपने यह मिसाल केवल समझाने के लिए बयान की है, नही तो दुनिया और 'आखिरत' मे यह अनुपात भी नही है। 'आखिरत' असीमित है और दुनिया सीमित है। जो चीज सीमित हो उसका असीमित से क्या जोड। इसलिए 'आखिरत' को छोड कर दुनिया ही को सब सब-कुछ समझ लेना मूर्खता है।

१४ 'आखिरत' के मुकाबले मे दुनिया की कोई कीमत नही है इसलिए यहाँ 'काफिरों' और धर्म विरोधियो को भी फायदा उठाने का मौका मिल रहा है। 'आखिरत' मे किसी 'काफिर' या सत्यविरोधी को पानी की एक बूँद भी प्यास बुझाने को न मिल सकेगी।

करते। आप ने कहा हे इब्न खत्ताब ! क्या अभी तुम इसी ख्याल में हो। ये तो वे लोग है जिन की नेमते (सुख-सामग्रीयाँ) सासारिक जीवन ही में दे दी गई ('आखिरत' में इन का कोई हिस्सा नही है)। और एक दूसरी 'रिवायत' मे है कि (आप ने कहा) क्या तुम इस पर राजी नही हो कि इन के लिए दुनिया हो और हमारे लिए 'आखिरत' [१५]।

—बुखारी, मुस्लिम

१५. हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . दुनिया 'ईमान' वाले का कारागार है और 'काफिर' की 'जन्नत' है [१६]।

—मुस्लिम

१६. हजरत अम्र बिन औफ रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह की कसम मै तुम पर मुहताजी और निर्धनता आने से नही डरता किन्तु मुझे तुम्हारे बारे मे डर है कि दुनिया तुम पर कुशादा कर दी जाये जैसे कि उन लोगो पर कुशादा की गई थी जो तुम से पहले थे फिर तुम उसे एक-दूसरे से बढ कर चाहने लगो जैसा कि उन्हो ने उसे चाहा था और वह तुम्हे उसी प्रकार विनष्ट

---

१५. नबी सल्ल० ने सदैव दुनिया के मुकाबले मे आखिरत' को प्राथमिकता दी। ससार मे जिस चीज़ को आप ने हमेशा अपने सामने रक्खा वह अल्लाह की प्रसन्नता और 'आखिरत' की तलब थी, दुनिया कमाने की चिन्ता कभी आप को न हो सकी' और न आप ने भोग-विलास के जीवन को पसन्द किया आप की धर्म पत्नी हज़रत आइशा रजि० का बयान है कि मुहम्मद सल्ल० के घर वालो ने कभी दो दिन निरन्तर जो की रोटी से पेट नही भरा यहाँ तक कि अल्लाह के रसूल सल्ल० का स्वर्गवास हो गया (बुखारी, मुस्लिम) ।

१६. अर्थात् 'आखिरत' मे 'ईमान' वालो को जो जीवन प्राप्त होगा उसके मुकाबले मे सासारिक जीवन एक कारावास का जीवन है जो व्यक्ति कारागार मे होता है उसकी हार्दिक इच्छा होती है कि उसे कैद से छुटकारा प्राप्त हो और वह अपने घर पहुँच जाये। ठीक इसी प्रकार जिन लोगो ने दुनिया की वास्तविकता को समझ लिया है वे उस से जी नही लगाते वे तो उस 'जन्नत' की कामना मे जीते है जिनका उनके 'रब' (पालनकर्त्ता प्रभु) ने उन से वादा किया है। इसके विपरीत एक 'काफिर' जिसका 'आखिरत' मे कोई हिस्सा नही है उसके लिए दुनिया ही सब कुछ है। यही उसकी 'जन्नत' है। यह। वह जितना चाहे चर चुग ले। 'आखिरत' मे तो उसे एक ऐसे सख्त अजाब मे ग्रस्त होना है जिसकी आज कल्पना करना भी हमारे लिए मुश्किल है।

कर दे जैसे उन्हें विनष्ट किया[१७]। —बुख़ारी, मुस्लिम

१७ कअब बिन इयाज़ रज़ि० कहते हैं कि मैं ने अल्लाह के रसूल सल्ल० से सुना आप कहते थे हर समुदाय के लिए 'फितना' है और मेरे समुदाय का 'फितना' माल है[१८]। —तिरमिज़ी

१८ कअब बिन मालिक रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा दो भूखे भेडिए जो बकरीयो मे छोड दिये गये हों उन (बकरियों) को उस से ज्यादा तबाह नही करते जितना मनुष्य का धन-वैभव और मानमर्यादा का लोभ उस के 'दीन' (धर्म) को तबाह

---

१७ अर्थात् मैं तुम्हारे बारे मे गरीबी और मुहताजी से नही डरता बल्कि मुझे भय इस बात का है कि कही तुम्हे सासारिक सम्पन्नता और सुख वैभव प्राप्त हो और 'आखिरत' को भुला दो और इसके परिणामस्वरूप तबाही और बरबादी तुम्हारे हिस्से मे आये। तुम से पहले पिछली जातियो का यही हाल हुआ कि उन्हे सासारिक सुख वैभव प्राप्त हुआ, तो उन्होने जीवन के वास्तविक उद्देश्य को भुला दिया, वे दुनिया की उपासक बन गईं उन मे तरह- तरह के नैतिक रोग पैदा हो गये। जब उन की सरकशी हद से आगे बढ गई तो अल्लाह ने उन का सर्वनाश कर दिया।

१८ इस 'हदीस' मे माल को 'फितना' (पृतना) अर्थात् आज़माइश (*Persecution*) कहा गया है। कुरआन मजीद मे भी माल और औलाद को 'फितना की सज्ञा दी गई है (अल-अनफाल २८, अत तगाबुन १५)। माल और औलाद के प्रेम मे पडकर अधिकतर लोग सत्य की उपेक्षा करते है। माल तो मनुष्य की सेवा के लिए है लेकिन जब उसका लोभ मनुष्य के अन्दर पैदा हो जाता है, तो उलटे वह दौलत का पुजारी बन जाता है। और इस लोभ की कोई सीमा नही रहती। धन-दौलत के पीछे आदमी ऐसा दीवाना हो जाता है कि वह 'दीन' और धर्म को भी भुला देता है। इसीलिए आपने माल को 'फितना' या आज़माइश कहा है। इस आज़माइश मे कम ही लोग पूरे उतरते है। ऐसे लोग कम होते है जो दौलत पा कर अल्लाह से गाफिल न हो और 'दीन' (धर्म) के तकाज़ो को न भूले। माल की 'जकात' दें और दीन-दुखियो के काम आयें। और सामाजिक कल्याण के कार्यो मे अपने माल से योग दें।

वर्तमान युग मे तो कितने ही आन्दोलन आर्थिक समस्या के आधार पर चलाए गए है। इन आन्दोलनो ने आर्थिक समस्याओ को जीवन की वास्तविक समस्या ठहराया है जिसके परिणाम स्वरूप समस्यायें हल होने के बजाय और अधिक चिन्ताजनक रूप धारण करती जाती है।

करता है[१६]। —तिरमिजी

१६, हजरत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम मे कौन है जिसे अपने माल से वढ कर अपने वारिस का माल प्रिय हो ?[२०] लोगो ने कहा हे अल्लाह के रसूल हम में से तो प्रत्येक को अपने वारिस के माल से वढ कर अपना ही माल प्रिय है[२१]। आप ने कहा. उस का माल तो वही है जो उस ने आगे भेजा और वह उस के वारिस का माल है जो उस ने पीछे छोडा[२२]। —बुखारी

२० अबूहुरैररा रजि० नबी सल्ल० से 'रिवायत' करते है कि आप ने कहा · जब मरने वाला मरता है तो 'फिरिश्ते' कहते हैं इस *व्यक्ति ने आगे क्या भेजा ? जब कि सामान्य लोग* (ऐसे अवसर पर)

---

१६ नबी सल्ल० ने एक स्पष्ट मिसाल से यह बात् समझाई है कि मनुष्य को जब माल-दौलत और झूठे सम्मान का लोभ हो जाता है तो उसका 'दीन' (धर्म) तबाह हो जाता है । इसलिए कि 'दीन' (धर्म) तो वास्तव मे इसी चीज़ का नाम है कि मनुष्य को दुनिया की अस्थिरता और उसके नाशवान होने का पूरा एहसास और अल्लाह की महानता का पूरा ज्ञान हो । जब मनुष्य के मन मे दुनिया की बडाई और अपने वैभव, मान और आदर की इच्छा उभर आई तो फिर उसका 'दीन' (धर्म) कहाँ सुरक्षित रहा । ऐसे व्यक्ति से इसकी आशा नही की जा सकती कि वह धर्म की माँगो को पूरा करेगा और अपने जीवन मे अल्लाह की निर्धारित सीमाओ एव मर्यादाओ का आदर कर सकेगा।

२०. अर्थात् जिसे अपने हाथ मे माल आने से प्रिय यह बात हो कि माल उसके वारिसो के हाथ मे आये ।

२१ *अर्थात् हम मे से तो कोई ऐसा नही है जिसे अपने माल से ज्यादा वारिसो का* माल प्रिय हो । जो यह चाहे कि माल उसके हाथ मे न आये बल्कि उसके वारिसो के हाथ मे आये ।

२२ मतलब यह है कि वास्तव मे आदमी का अपना माल तो बस उतना ही है जिस को उसने अल्लाह की राह मे खर्च करके आगे भेजा । जो उसने अपने पीछे छोडा वह उसका नही है । वास्तव मे धनवान वह नही है जो दुनिया मे धन-दौलत का अधिकारी हैं बल्कि धनवान केवल वह है जिसने ज्यादा-से-ज्यादा माल अल्लाह के मार्ग मे खर्च करके आने वाले जीवन मे के लिए एकत्र किया हो ।

कहते हैं: उस ने क्या छोडा[२३]। —बैहकी-शोबुलईमान

२१ जुबैर बिन नुफैर से 'मुरसल' तरीके से 'रिवायत' है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा मेरी ओर यह 'वह्य' (ईश्वरीय प्रेरणा) नही की गई है कि मैं धन एकत्र करूँ और व्यापारी बनूँ[२४] बल्कि मेरी ओर 'वह्य' की गई है[२५] · "अपने 'रब' की 'हम्द' (प्रशसा एव कृतज्ञता प्रकाशन) के साथ 'तस्बीह्' (महानत्ता का वर्णन) करो और 'सजदा' करने वालो में सम्मिलित हो और अपने 'रब' (पालनकर्ता प्रभु) की 'इबादत' किये जाओ यहाँ तक कि यकीनी चीज (मृत्यु) तुम्हारे सामने आ जाये"।[२६] —शरहुस्सुन्नह

२२. हजरत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा जिस की नीयत 'आखिरत' हासिल करने की हो अल्लाह् उस के दिल को बेपरवा (अपेक्षारहित) बना देता है और उस के अव्यवस्थित कामो को, एकत्र कर देता है। दुनिया उस के सामने आती है और वह उस की निगाह मे हीन और तिरस्कृत होती है। और जिस की नीयत दुनिया हासिल करने की ही अल्लाह् निर्धनता और

२३ मतलब यह है कि मरने के बाद जो चीज़ देखने की होती है वह यह नही कि आदमी ने अपने पीछे क्या माल छोड़ा है जैसा कि आम तौर पर लोग समझते हैं बल्कि देखने की चीज़ केवल यह होती है कि उसने क्या अच्छे कर्म किये और क्या चीज़ आने वाले जीवन के लिए भेजी है।

२४ अर्थात् मेरा दायित्व और मेरा वास्तविक मेशन यह नही है कि मैं दुनिया मे माल-दौलत एकत्र करूँ और एक सफल व्यापारी बनने का प्रयास करूँ बल्कि अल्लाह् ने जिसकी 'वह्य' मुझे की है वह कुछ दूसरी ही चीज़ है।

२५. आगे जिस 'वह्य' का उल्लेख इस 'हदीस' मे किया गया है वह सूरा अल-हिज्र की अन्तिम दो 'आयतें' हैं।

२६. अर्थात् मेरे जीवन का वास्तविक लक्ष्य तो अल्लाह् की 'हम्द' (प्रशसा, गुणगान) और उसकी दासता एव आज्ञापालन है।· और यह 'हम्द' और उस की बन्दगी मुझे जीवन के अन्तिम क्षणो तक करते रहना है। यही मेरी वास्तविक सम्पत्ति है, न कि वह जिसे दुनिया वाले अपना धन समझते है।

नबी सल्ल० का यह केवल ज़बानी दाबा न था बल्कि आपने इसी के अनुसार अपना पूरा जीवन व्यतीत किया। यह आपके एक सच्चे 'नबी' होने का स्पष्ट प्रमाण है। जिस व्यक्ति का जीवन आपके जीवन के जितना अधिक अनुरूप होगा उतना ही अधिक वह अपने जीवन मे सफल समझा जायेगा।

मुहताजो को उस की निगाहों के समक्ष कर देता है और उस के, कामों को उस के लिए छिन्न-भिन्न कर देता है और दुनिया उसे बस उतनी ही मिलतो है जितनी उस के लिए, निश्चिय होती है [२७]।

—तिरमिज़ी, दारमी, अहमद

२३ अबू उमामा रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० नें कहा मेरे मित्रो मे सबसे बढ कर वह ईमान वाला व्यक्ति है जिस से स्पर्द्धा की जाये जो हल्का-फुल्का (भारमुक्त) हो, 'नमाज' मे उस का हिस्सा हो, अपने 'रब' (पालनकर्त्ता स्वामी) की 'इबादत, उत्तम ढग से करता हो और उस का आज्ञापालन छिपा कर करता हो और लोगों में गुमनामी की हालत मे हो, उस की ओर उँगलियों से सकेत न किये जाते हो, उस की रोजी बस ,इतनी ही हो कि काम चल जाये और उसे उस पर सन्तोष हो। फिर आप नें अपने हाथ की चुटकी बजाई और कहा · जल्द आ गई उस की मृत्मु उस के लिए रोने वाली स्त्रियाँ भी कम है और उस का तरका (छोडा हुआ धन) भी थोडा है [२८]।

—अहमद,तिरतिजी इब्नमाजा

---

२७ अर्थात उसे हर समय मुहताजी और गरीबी का भय लगा रहता है। एकाग्र-चितता और मन की शान्ति और परितोष से वह सदा वञ्चित रहता है। इन तमाम परेशानियो और आपत्तियो के बाद भी दुनिया उसे उस से अधिक नहीं मिलती जो उसके लिए अल्लाह के यहाँ पहले से नियत हो चुकी है । मानसिक शान्ति और मन की धीरता खोकर भी वह उस से अधिक कुछ नही पाता जो उसे मिलना ही था।

इस 'हदीस' को इमाम अहमद और दारमी ने अबान से और ज़ैद बिन साबित अनसारी से 'रिवायत' किया है।

२८. आपके कथन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि जीवन मे देखने की मूल चीज़ यह नही है कि मनुष्य के पास धन-सम्पत्ति की अधिकता है, और जिस ओर से वह गुजरे लोगो की निगाहे उसकी ओर उठती हो। लोग उसकी ओर सकेत करके कहते हो कि यह तो अमुक व्यक्ति के बोट है बल्कि जो चीज़ जीवन मे अपना विशेष मूल्य रखती है वह मनुष्य का अपने ईश्वर से सम्पर्क और सम्बन्ध है ईश्वर से सबध यदि ठीक है, तो फिर उसका जीवन प्रशसीय है। ऐसा व्यक्ति यदि भारमुक्त है तो वह अपने के धर्म के लिए अधिक समय निकाल सकेगा। वह ज्यादा-से-ज्यादा अल्लाह की बन्दगी और 'इबादत' मे अपने को लगा सकेगा। मृत्यु उसे ससार से बिदा करने आयेगी तो वह बोझल और भारग्रस्त होकर

२४ अबू हुरैरा रजि० और अबू खल्लाद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : जब तुम किसी बन्दे को देखो कि उसे दुनिया के प्रति उदासीनता और अल्प भाषिता (कम बोलने की रुचि) प्रदान की गई है तो उस का सामीप्य प्राप्त करो क्योंकि उस की ओर 'हिकमत' (तत्वदर्शिता) प्रेरित की जाती है [२६]।

—बैहकी-शोबुलईमान

२५. अबूजर रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो बन्दा दुनिया की ओर से उदासीन हो जाये अल्लाह अवश्य उस के दिल में 'हिकमत' (तत्वदर्शिता) उगाएगा और उस की ज़बान पर उस (हिकमत) को जारी करेगा और दुनिया का ऐब और उस का रोग और उस का इलाज उसे सुझायेगा और उसे वहाँ से सलामती (कुशलता) के साथ निकाल कर 'दारुस्सलाम' (सलामती के घर

नही वल्कि हल्का-फुल्का होकर अल्लाह के यहाँ हाज़िर हो सकेगा। न उसके पीछे धन-सम्पत्ति और तरका का कोई झगडा खडा होगा और न उसके यहाँ रोने वाली अधिक स्त्रियो की समस्या होगी।

२६ ऐसे व्यक्ति को सत्य का ज्ञान हो जाता है। उसकी ज़बान पर ऐसी बातें आती हैं जो ज्ञान और 'हिकमत' (तत्वदर्शिता) का सार होती हैं। ऐसे व्यक्ति की सगति अत्यन्त प्रभावकारी सिद्ध होती है। इसके विपरीत गाफिल आदमी जो ससार के लोभ मे ग्रस्त हो उसकी आवाज़ भी ग़फलत मे डूबी हुई होगी। उसकी सगति अत्यन्त आशकापूर्ण हो सकती है, किन्तु ऐसे व्यक्ति की सगति जिसकी ओर 'हिकमतो' और ज्ञान का अवतरण होता हो अत्यन्त लाभप्रद और कल्याणकारी है। इसलिए आप ऐसे व्यक्ति का सामीप्य ग्रहण करने की शिक्षा दे रहे है।

यह 'हदीस' बताती है कि सासारिक मोह-माया और व्यर्थ वार्तालाप आत्मिक विकास के लिए घातक है। व्यर्थ वार्तालाप और दुनिया का बढा हुआ मोह मनुष्य की अन्तरात्मा को मुरदा बना देता है। ऐसे हृदय का प्रकाश अत्यन्त मन्द हो जाता है। ऐसे हृदयो मे 'हिकमत' और रहस्य-ज्ञान का अवतरण नही होता। ऐसे व्यक्ति की बात-चीत से मन को जीवन नही मिलता और न उस से मनुष्य के 'ईमान' को ताज़गी मिलती है। 'हिकमत' (तत्वदर्शिता एव ज्ञान) वास्तव मे अल्लाह की ओर से एक नकद इनाम (पुरस्कार) है। कुरआन मजीद मे भी कहा गया है "जिसे 'हिकमत' *(wisdom)* प्रदान की गई उसे बडी दौलत दी गई" —सूर अल-बकरा आयत २६९।

अर्थात् 'जन्नत') में पहुँचा देगा [३०]। —बैहकी-शोबुलईमान

२६. मुआज़ बिन जबल रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने जब उन्हें यमन की ओर भेजा तो कहा : अपने-आप को सुख भोगने से बचाना क्योंकि अल्लाह के विशेष बन्दे सुखभोगी नही होते [३१]। —अहमद

२७. अबूज़र रज़ि० नबी सल्ल० से 'रिवायत' करते हैं कि आप ने कहा : 'दीन' के बारे में उदासीनता (जुहद) हलाल (जायज़ चीजों) को अपने ऊपर हराम (अवैध) कर लेने और माल को बरबाद करने का नाम नही बल्कि दुनिया के प्रति उदासीनता यह है कि जो-कुछ

३०. अर्थात् मनुष्य जब दुनिया से बेपरवा हो जाता है और उसके जीवन मे पवित्रता आ जाती है, सासारिक मोह-माया की लिप्सा उसमे शेष नही रहती, तो अल्लाह उस के दिल मे 'हिकमत' और ज्ञान को बढ़ाता है और उसकी जबान और लेखनी से ज्ञान और 'हिकमत' (*wisdom*) की ऐसी बातें निकलने लगती हैं जिन से हृदय को आहार और मन एवं मस्तिष्क को बल मिलता है। दुनिया की बुराइयाँ और रोग उस पर स्पष्ट होते हैं। अल्लाह की दी हुई अन्तर्दृष्टि से रोगो के वास्तविक इलाज और उनके दूर करने के उपाय को भी वह समझ जाता है। उसके द्वारा लोगों मे सुधार होता है। फिर ऐसे व्यक्ति पर अल्लाह की विशेष कृपा यह होती है कि वह उसे 'ईमान' और 'इस्लाम' की सलामती के साथ इस दुनिया से उठाता और उसे 'जन्नत' मे जगह प्रदान करता है। जहाँ हर तरह की सलामती और कुशलता है जहाँ किसी प्रकार का भय और दुख नही पाया जाता।

३१. अर्थात् अल्लाह के विशेष बन्दो की निगाह मे तो 'आखिरत' का जीवन होता है वे उसी के निर्माण मे लगे होते हैं। वे ससार के भोग विलास मे नही लगे रहते। वे दुनिया पर मोहित नही होते। हर समय 'आखिरत' की चिन्ता बनी रहती है। यदि वास्तविक रूप से मनुष्य को 'आखिरत' की चिन्ता हो जाये, तो स्वभावत: विलासता के लिए उसके पास समय ही नही रहेगा। उसका सारा ध्यान 'आखिरत' की तैयारी मे लग जायेगा। वह अल्लाह की प्रदान की हुई चीज़ो से फायदा उठायेगा किन्तु उस तरह नही जिस तरह एक दुनियादार व्यक्ति उठाता है बल्कि वह उस से फायदा उठायेगा जिस तरह एक ज़िम्मेदार और अमानतदार व्यक्ति किसी चीज़ से फायदा उठाता है उसे हर समय इसका खटका रहेगा कि एक दिन उसे अल्लाह की दी हुई तमाम नेमतो का हिसाब देना है।

तुम्हारे हाथ मे हो उस से अधिक भरोसा और विश्वास तुम्हे उस पर हो जो अल्लाह के हाथ में है और यह कि जब तुम मुसीबत मे हो तो उस मुसीबत (और विपत्ति) का सवाब(फल) तुम्हें इतना प्रिय हो कि तुम इस की इच्छा करो कि काश यह मुसीबत बाकी रहे [३२]। —तिरमिज़ी, इब्नमाजा

२८. अबू हुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . हे अल्लाह ! मुहम्मद के सम्बन्धी लोगों की रोज़ी उतनी हो जितने से उन का काम चल जाये [३३]। —बुख़ारी, मुस्लिम

३२. कुछ लोग भ्रम से यह समझते हैं कि 'ज़ुहद' और परहेज़गारी (त्याग, और सयम) इस चीज़ का नाम है कि मनुष्य अल्लाह की दी हुई नेमतो और सुख-सामग्री से किनारा खींच ले। नबी सल्ल० ने 'ज़ुहद', त्याग और उदासीनता की इस कल्पना का सुधार किया और बताया कि त्याग अपने आशय की दृष्टि से किसी प्रत्यक्ष वस्तु का नाम नही है बल्कि 'ईमान' के इस भाव का नाम है कि मनुष्य का वास्तविक भरोसा उन चीज़ो से अधिक जो उसके हाथ मे हैं उस चीज पर हो जो अल्लाह के हाथ मे है जिसका उसने अपने बन्दो से वादा किया है। उसी की अधिक-से-अधिक इच्छा मनुष्य को होनी चाहिए जिसका वादा अल्लाह ने अपने वफादार बन्दो से किया है। यदि यह बात आदमी के अन्दर पैदा हो जाये, तो स्वभावतः वह दुनिया के मोह-माया और विलासता से छुटकारा पा लेगा। उसकी ज्यादा-से-ज्यादा कोशिश इसके लिए होगी कि वह उस चीज का अधिकारी बन सके जो अल्लाह के हाथ मे है। उसका भरोसा सदैव अल्लाह की कृपा और उसके अक्षय कोष पर होगा न कि नाशवान चीज़ो पर। 'ज़ुहद' और त्याग की दूसरी निशानी इस 'हदीस' मे यह बताई गई है कि मनुष्य पर जब कोई मुसीबत और सकट आ जाये तो अल्लाह ने उस मुसीबत के कारण जो 'सवाब' और प्रतिकार बन्दे के लिए नियत किया है उसकी चाहत वह अपने मन मे इस इच्छा की अपेक्षा कि वह मुसीबत और सकट उस पर न आया होता, ज्यादा महसूस करे। यह बात आदमी के अन्दर उसी समय पैदा हो सकेगी जबकि सासारिक सुख-सामग्री के मुकाबले मे वह कही ज्यादा 'आखिरत' के लिए चिन्तित हो। 'आखिरत' की चिन्ता ही वास्तव मे 'ज़ुहद' और त्याग का आधार है। इस 'हदीस' का अर्थ कदापि नही है कि मनुष्य तकलीफ और मुसीबत की कामना करे बल्कि इस 'हदीस' का वास्तविक अभिप्राय यह है कि मनुष्य के लिए सब से अधिक प्रिय वस्तु वह 'सवाब' और प्रतिकार हो जो 'आखिरत' मे मिलने वाला है।

३३ अर्थात् उनके लिए इतनी रोज़ी प्रदान करे कि जितने मे उनका काम चल

२९. महमूद बिन लबीद रजि० स उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा दो चीजे ऐसी है, जो आदम के बेटे (मनुष्य) को अप्रिय है। मृत्यु उसे अप्रिय है हालाँकि मृत्यु 'ईमान' वाले के लिए 'फितना' से अच्छी है। उसे धन की कमी और (निर्धनता) अप्रिय है हालाँकि धन की कमी ('आखिरत' के) हिसाव को वहुत सक्षिप्त कर देती है [३४]। —अहमद

३०. इब्न मसऊद रजि० से उल्लिखित है कि (एक बार) अल्लाह के रसूल सल्ल० चटाई पर सोये जब उठे तो आप के शरीर पर उस (चटाई) के निशान पडे हुये थे, तो इब्न मसऊद रजि० ने कहा : हे अल्लाह के रसूल ! काश आप हमें हुक्म दे तो हम आप के लिए बिस्तर बिछा दे और कोई काम करे। आप ने कहा मुझे दुनिया से क्या मतलब ? मेरा और इस दुनिया का सम्बन्ध तो बस ऐसा है जैसे कोई सवार किसी वृक्ष के नीचे छाया लेने को ठहरे और फिर उसे छोड कर (अपनी मंजिल की ओर) चल दे [३५]।

—अहमद, तिरमिजी, इब्नमाजा

सके। इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि इस दुनिया मे यदि मनुष्य को आवश्यकतानुसार रोजी हासिल है, तो उसे अल्लाह का आभारी होना चाहिए।

३४ किसी 'फितना' और आपत्ति मे पडने से अच्छा यह है कि मनुष्य का जीवन समाप्त हो जाये और वह हर तरह के 'फितनो' से सुरक्षित हो जाये। निर्धन व्यक्ति को धन-दौलत की कमी का एहसास सताता है हालांकि उसे सोचना चाहिए कि माल अपने साथ बडी जिम्मेदारियाँ और आजमाइशें लेकर आता है। माल यदि कम है तो 'कियामत' मे उसका हिसाव भी थोडा ही होगा। और 'कियामत' मे बहुत जल्द वह हिसाब की कठिन समस्या से निवृत्त हो जायेगा।

३५ मतलब यह है कि जब दुनिया हमारी असल मजिल नही है तो फिर यहाँ के सुख-वैभव के लिए हम अधिक चिन्तित क्यो हो। क्या वह सवार जो छाया के लिए किसी वृक्ष के नीचे थोडी देर के लिए ठहरता है, वृक्ष के नीचे विश्राम गृह बनाने की कोशिशे करता है या आगे अपनी मजिल की ओर बढने की कोशिश करता है। बुद्धिमानी की बात तो यह है कि मनुष्य सासारिक सुख और भोग-विलास की सामग्री जुटाने मे अपने अधिक समय और शक्ति को नष्ट करने के बजाय अपने समय और शक्ति को अधिक-से-अधिक 'आखिरत' के निर्माण मे लगाए।

३३ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा · जो व्यक्ति दुनिया की हलाल (वैध) नेमतों को इस ध्येय से प्राप्त करना चाहे कि उसे दूसरों से माँगना न पडे और अपने घर वालों के लिए रोजी और सुविधा-सामग्री सचित हो सके और अपने पडोसियों के साथ एहसान और मेहरबानी का बरताव कर सके, तो वह 'कियामत' के दिन सर्वोच्य अल्लाह् से इस अवस्था मे मिलेगा कि, उस का चेहरा पूर्णिमा के चन्द्र के समान कान्तिवान होगा। और जो व्यक्ति दुनिया की हलाल नेमतों (वैध सुख सामग्री) इस ध्येय से प्राप्त ,करना चाहे कि वह बहुत बड़ा धनवान हो जाये और दूसरो के मुकाबले में अपनी शान ऊँची दिखा सके और (लोगो की दृष्टि मे बडा बनने को लिए) दिखावे और प्रदर्शन कब कार्य कर सके, तो ('कियामत' के दिन) वह सर्वोच्च अल्लाह् से इस अवस्था में मिलेगा कि अल्लाह् उस पर क्रुद्ध होगा [३८]। —बैहकी-शोबुल ईमान

यह है कि मनुष्य को वास्तव मे चिन्ता इस की होनी चाहिए कि उसे दुनिया और 'आखिरत मे अल्लाह' की प्रसन्नता कैसे प्राप्त हो, उसे ऐसे काम मे दिल खोल कर हिस्सा लेना चाहिए जिस से अल्लाह् राज़ी होता है। यदि इस से दूसरे लोग अप्रसन्न होते हैं तो हुआ करें ऐसे अवसर पर जब की लोगो की खुशी अल्लाह ,की खुशी से टकरा रही है, मनुष्य को अल्लाह की ही खुशी का पालन करना चाहिए, यदि वह ऐसा करता है, तो अल्लाह् उसे बेपरवा कर देगा, उस की आवश्यकताओ की पूर्ति का स्वय प्रबन्ध करेगा, उस की ज़रूरते इस तरह पूरी होगी कि वह पहले से उस की कल्पना भी नही कर सकता, लेकिन यदि उसे अल्लाह की प्रसन्नता की कोई चिन्ता नही है,बल्कि वह मनुष्य को राज़ी करने मे सारी सफलता समझता है तो ऐसे व्यक्ति का ज़िम्मेदार अल्लाह नही होता वह उसे लोगो के ही हवाले कर देता है और वह उनकी दासता से कभी छुटकारा नही पा सकता अल्लाह् के सरक्षण से वचित हो कर वह ऐसे लोगो के हवाले कर दिया जाता है जो उसी की तरह निर्बल और विवश होते है।

३८ मालूम हुआ नीयत यदि ठीक और उद्देश्य अच्छा है, तो वैध रूप से माल-दौलत प्राप्त करने मे कोई दोष नही है बल्कि ऐसा व्यक्ति अल्लाह् के यहाँ सफल होगा लेकिन यदि धनोपार्जन के पीछे केवल यह भावना है कि वह ससार का धनी व्यक्ति बन जाये और लोगो पर अपनी बडाई जनाये और दिखावे और प्रदर्शन मात्र कार्य करे, तो चाहे वह वैध रूप से ही दौलत हासिल करे 'क़ियामत' के दिन वह अल्लाह् के प्रकोप से बच नही सकता। और यदि वह

३४. अबू बकरा रज़ि० से उल्लिखित है कि एक व्यक्ति ने कहा : हे अल्लाह के रसूल ! लोगों में उत्तम कौन है ? आप ने कहा : वह जिस की आयु दीर्घ हुई और कर्म उस का अच्छा रहा । उस ने कहा : लोगों में बुरा कौन है ? कहा : जिस की आयु दीर्घ हुई और कर्म उस का बुरा रहा [३९]। —अहमद

३५. हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : 'क़ियामत' के दिन दर्जे की दृष्टि से सब से बुरा आदमी वह है जिस ने अपनी 'आख़िरत' को दूसरे की दुनिया के पीछे नष्ट कर दिया । —इब्नमाजा

३६. हज़रत उस्मान रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा : इन चीज़ों के अतिरिक्त आदम के बेटे का किसी चीज़ पर कोई हक़ नहीं है : रहने के लिए घर, शरीर ढकने को कपड़ा, सूखी रोटी और जल [४०]। —तिरमिज़ी

३७. हज़रत अम्र रज़ि० कहते हैं कि नबी सल्ल० ने एक दिन 'ख़ुतबा' (भाषण) दिया । आप ने अपने ख़ुतबे में कहा : सावधान ! दुनिया एक अस्थिर पूँजी है उस में से नेक भी खाता है और बुरा भी और निश्चय ही आख़िरत एक सच्चा निश्चित समय है [४१]। जिस में सामर्थ्यवान सम्राट (ईश्वर) फ़ैसला करेगा । सावधान ! समस्त भलाइयाँ

हराम और अवैध रूप से धन एकत्र करता है तो ऐसी दशा में उसके लिए भी अधिक रुसवाई और तबाही है ।

३९ आयु का दीर्घ होना एक नेमत और ईश्वरीय प्रसाद है शर्त यह है कि इसके साथ कर्म भी अच्छे हों । यदि कर्म अच्छे नहीं हैं तो नेमत होने के बजाय उस की आयु उसके लिए घाटा और संताप का ही कारण बनेगी ।

४० अर्थात् मनुष्य की यदि बुनियादी ज़रूरतें पूरी हो रही हैं, तो यह उसके लिए काफ़ी है । उसे चिन्ता अधिक-से-अधिक जिस बात की होनी चाहिए वह यह कदापि नहीं है कि वह अधिक-से-अधिक अपने जीवन को सासारिक सुख-सामग्री से सम्पन्न करे बल्कि उसे अधिक-से-अधिक अपनी उस ज़िम्मेदारी के पूरा करने में लग जाना चाहिए जो ज़िम्मेदारी अल्लाह की ओर से उस पर डाली गई है ।

४१ अर्थात् 'आख़िरत' का दिन निश्चित है वह अपने समय पर आकर रहेगा । यह बात प्रमाणिक रूप से भी सिद्ध है और मनुष्य का अन्तरात्मा भी इसी

अपने तमाम पहलुओं और दिशाओं के साथ 'जन्नत' में हैं [४२]। सावधान! समस्त बुराइयाँ अपनें तमाम पहलुओं और दिशाओं के साथ (जहन्नम की) आग में हैं [४३] अत सावधान हो कर तुम जान लो और अल्लाह से डरते रहो और इस बात को याद रक्खो कि तुम्हें तुम्हारे कर्मों के साथ (अल्लाह के समक्ष) पेश किया जायेगा, तो जो व्यक्ति कण भर भी भलाई करेगा उसे देख लेगा और जो कण भर भी बुराई करेगा उसे देख लेगा [४४]। —शाफिई

३८. हज़रत अब्दुल्लाह बिन अम्र रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा चार चीजे है यदि वे तुम में पाई जाये तो दुनिया (ससारिक वैभव) के नष्ट होनें की तुम्हे कोई परबाह न होनी चाहिए: अमानत की हिफाजत (रक्षा) करना, सत्य बात कहना, स्वभाव का अच्छा होना और खाने में सयम का ध्यान रखना [४५]।

—अहमद, अल-बैहकी-शोबुलईमान

बात का साक्षी है।

४२. यहाँ एक बडी वास्तविकता की ओर संकेत किया गया है। आध्यात्मिक दृष्टि से 'जन्नत' भलाई, नेकी, सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् का केन्द्र और उद्गम है। सारी भलाइयो की वह चरम सीमा और लक्ष्य है। बाह्य और आतरिक हर प्रकार की भलाइयो का पूर्ण रूप 'जन्नत' है। भलाई के अतिरिक्त मनुष्य वहाँ और कुछ नही देखेगा। जो भलाई और नेकी से भागता हैं वह वास्तव मे उस 'जन्नत' से भागता है जो उसकी आत्मा की परम स्थिति है। जिसकी खोज उसकी आत्मा को है। जिसकी प्राप्त की कोशिश और साधना उसकी आत्मा को करना है। जिसमे प्रवेश पाने योग्य यहाँ अपने को बनाना है। 'जन्नत' ईश्वर का सामीप्य पाने का वास्तविक स्थान है। 'जन्नत' के वातावरण मे निवास करना वास्तव मे ईश्वर की अनन्त दयालुता की प्राप्ति है।

४३. 'जहन्नम' मनुष्य की अधमता और बिगाड की अन्तिम स्थिति हैं। 'जहन्नम' समस्त बुराइयो का केन्द्र और मजिल है। 'जहन्नम' से बढकर किसी असुन्दर और दुखदायिनी चीज की कल्पना नही की जा सकती। जो व्यक्ति बुराइयो मे लिप्त रहता है वह वास्तव मे 'जहन्नम' की ओर बढता और अपने को तबाही के गड्ढे मे गिराता है।

४४. दे० सूरा ९९ आयत ७-८।

४५. यह बात जीवन की पवित्रता और 'आखिरत' के दृष्टिकोण से कही गई है।

ईमान और इस्लाम

ईमान का प्रतिफल और उसके लक्षण

عَنْ اَبِیْ ھُرَیْرَۃَ رض قَالَ، قَالَ رَسُوْلُ اللّٰہِ صَلَّی اللّٰہُ عَلَیْہِ وَسَلَّمَ اَلْاِیْمَانُ بِضْعٌ وَّ
سَبْعُوْنَ شُعْبَةً فَاَفْضَلُھَا قَوْلُ لَآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰہُ وَاَدْنَاھَا اِمَاطَةُ الْاَذٰی عَنِ الطَّرِیْقِ
وَالْحَیَآءُ شُعْبَةٌ مِّنَ الْاِیْمَانِ ——— بخاری، مسلم

१. अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'ईमान' की सत्तर से ऊपर कुछ शाखाये है उनमे सबसे उत्तम तो यह कहना है कि अल्लाह के सिवा कोई इलाह (पूज्य) नही और (इसके मुकाबले में) उनमे सबसे छोटी (शाखा) तकलीफ देने वाली चीजो का रास्ते से हटा देना है और लज्जा भी ईमान की एक शाखा है[1]। —बुखारी, मुस्लिम

२ अबू उमामा रजि० कहते हैं कि एक व्यक्ति ने अल्लाह के रसूल सल्ल० से पूछा 'ईमान' क्या है ? आप ने कहा जब तुम्हे अपने शुभ कर्म से प्रसन्नता और अपने बुरे कर्म से तकलीफ और खेद हो, तो तुम 'ईमान' वाले हो[2]। —अहमद

---

१ ईमान अपने विस्तृत रूप मे जीवन के सभी क्षेत्रो और अंगो से सम्बन्ध रखता है। मनुष्य की धारणाओ और विचारो से लेकर उसके छोटे बडे हर कर्म में उसकी अभिव्यक्ति होती है। ईमान से मनुष्य का एक विशेष प्रकार का स्वभाव बनता है और उससे विशेष प्रकार के जीवन का निर्माण होता है। 'ईमान' की हैसियत एक ऐसे बीज की है जो मनुष्य के हृदय मे अपनी जड जमाता है फिर उसके अनुसार व्यवहारिक जीवन का वृक्ष अपनी शाखाओ और पत्तियों के साथ बढता और फलता-फुलता है। 'इस्लाम' ने 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) की जो शिक्षा दी है उसका सम्बन्ध जीवन के किसी सीमित भाग से नही है, बल्कि उसकी अभिव्यक्ति जीवन के प्रत्येक पहलू और उसके व्यक्तिगत और सामाजिक समस्त क्षेत्रो मे होती है। 'इस्लाम' मे 'ईमान', स्वभाव और कर्म का ऐसा समन्वय पाया जाता है जिसके सौन्दर्य और पूर्णता को हर सूझ-बूझ रखने वाला व्यक्ति स्वीकार करता है।

यह 'हदीस' बताती है कि 'ईमान' का मनुष्य के कर्म से गहरा सम्पर्क है। यह मनुष्य के ईमान का ही फल है कि जब उसे अच्छे कर्म करने का सौभाग्य प्राप्त होता है, तो उसे प्रसन्नता होती है और यदि उससे कोई

३. हज़रत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि तीन चीजे ऐसी है कि जिस व्यक्ति मे वे हो उसे 'ईमान' की मिष्ठता प्राप्त होगी . यह कि अल्लाह और उसका 'रसूल' उसे अन्य सभी चीजों से अधिक प्रिय हों। उसे जिस व्यक्ति से प्रेम हो अल्लाह के लिए प्रेम हो, और 'कुफ़्' की ओर पलटना उसे उतना ही अप्रिय हो जितना अप्रिय उसे यह बात है कि उसे आग में डाल दिया जाये [3]। —बुख़ारी, मुस्लिम

४. हज़रत अब्बास (रज़ि०) बिन अब्दुल मुत्तलिब से उल्लिखित है, उन्होने अल्लाह के रसूल सल्ल० से सुना, आप कहते थे 'ईमान' का रसास्वादन उसने कर लिया जो अल्लाह के 'रब' होने, 'इस्लाम' के 'दीन' होने और मुहम्मद के 'रसूल' होने पर राज़ी हो गया [4]। —मुस्लिम

गलत काम हो जाता है तो उसे पछतावा होता हैं।

३. इस हदीस से मालूम होता है कि ईमान सर्वदा आनन्द और सुस्वाद वस्तु है। इस हदीस मे जिन तीन मौलिक बातो का उल्लेख हे वे वास्तव मे ईमान के लक्षण हैं। ईमान वाले व्यक्ति को अल्लाह और 'रसूल' की प्रियता की पहचान होती है इस लिए उसे अल्लाह और उसका रसूल सबसे अधिक प्रिय होते है। वह बस एक अल्लाह का सेवक एव दास होता है। उसके जीवन का एकमात्र लक्ष्य ईश-प्रसन्नता की प्राप्ति होती है । अल्लाह की प्रसन्नता मे ही उसे वास्तविक आनन्द मिलता है। जिस किसी से भी उसकी मित्रता होगी अल्लाह ही के लिए होगी, ज़िस किसी से उसका वैर होगा, अल्लाह ही के लिए होगा। जिस से वह कटेगा अल्लाह ही के लिए कटेगा, जिस से जुडेगा अल्लाह ही के लिए जुडेगा। अल्लाह ही के आदेशो पर उसके सारे प्रोग्राम आधारित होते है। 'ईमान' के बाद 'कुफ़' ग्रहण करना उसे उतना ही अप्रिय होता है जितना आग मे डाला जाना। सासारिक जीवन मे भी कुफ़ मानव-प्रकृति के लिए विनाश के अतिरिक्त और कुछ नही है। 'आख़िरत' मे इसका परिणाम दोज़ख की आग के ही रूप मे सामने आयेगा।

४. यह हदीस बताती है कि 'ईमान' कोई बेमज़ा चीज़ नही है बल्कि मनुष्य के लिए वह अत्यन्त सुखद एव सुस्वाद वस्तु है। सुस्वाद वस्तु हम उसी को कहते है जिससे हमारी उमगो और हमारी प्राकृतिक आवश्यकताओ और इच्छाओ की पूर्ति होती हो जिनसे हम आनन्दित होते हो। 'ईमान' वास्तव मे वास्तविक आनन्दो का स्रोत है। ईमान मानव-जीवन की एक आवश्यकता है। इसके

५ मआज बिन जबल रजि० से उल्लिखित है, उन्होने अल्लाह के रसूल सल्ल० से उत्तम ईमान के बारे मे पूछा। आपने कहा "यह कि अल्लाह ही के लिए तुम किसी से प्रेम करो, और अल्लाह ही के लिए तुम किसी से द्वेष रक्खो और अपनी जिह्वा को अल्लाह के जिक्र में लगाये रहो।" (हजरत मआज ने) कहा. और क्या हे अल्लाह के रसूल! आप ने कहा : और यह कि दूसरो के लिए भी वही पसन्द करो जो अपने लिए पसन्द करते हो और उनके लिए भी उसको नापसन्द करो जो अपने लिए नापसन्द करते हो[१]।" —अहमद

६ हजरत अबू उमामा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिसने अल्लाह ही के लिए प्रेम किया, और अल्लाह ही के लिए द्वेष रक्खा, अल्लाह ही के लिए दिया और अल्लाह ही के

बिना मनुष्य एक बडी नेमत से वंचित रहता है। यह दूसरी बात है कि उसे इसका ज्ञान न हो। जिस व्यक्ति को वास्तविक 'ईमान' प्राप्त होगा वह ईमान के स्वाद से अनभिज्ञ नही रह सकता। वास्तविक एव पूर्ण ईमान मनुष्य को उसी समय प्राप्त होगा जब कि उसे अपने 'रब' (पालनकर्त्ता प्रभु) की और उसके उतारे हुये दीन (धर्म) और रिसालत की पहचान हो। फिर तो यह सम्भव ही नही है कि अल्लाह को वह दिल से अपना 'रब' न माने या इस्लाम को स्वेच्छापूर्वक अपना धर्म स्वीकार न करे। और हजरत मुहम्मद सल्ल० को अपना 'रसूल' और मार्गदर्शक न माने। अल्लाह की प्रभुता और बडाई का इकरार मानव-प्रकृति की पुकार है। इस्लाम जीवन का वह सहज और सरल मार्ग है जिस पर चलने के बाद ही मनुष्य की समस्त बाह्य एव आतरिक आवश्यकताओ की पूर्ति होती है और उसके व्यक्तित्व को पूर्णता मिलती है। हजरत मुहम्मद सल्ल० ऐसे मार्ग-दर्शक हैं जो हमे जीवन का स्वाभाविक मार्ग दिखाते हैं।

५ मतलब यह है कि ईमान की सबसे अच्छी स्थिति यह है कि मनुष्य का सम्बन्ध अल्लाह और उसके बन्दो के साथ ठीक हो। उसका दिल अल्लाह के प्रेम से परिपूर्ण हो, उसकी जबान पर अल्लाह का जिक्र हो। उसके समस्त कार्य और सकल्प के पीछे केवल अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्त करने का ध्येय काम कर रहा हो। उसकी दोस्ती और दुश्मनी, प्रेम और द्वेष सब कुछ अल्लाह के हुक्म और उसके फैसले के ही अधीन हो। उसके जीवन मे ईश्वर इस प्रकार प्रवेश पा चुका हो कि उसके जीवन का अर्थ प्रसन्नता की प्राप्ति के अतिरिक्त और कुछ न हो।

लिए देने से रोका, उसनें (अपनें) ईमान को पूर्ण कर लिया ।

—अबू दाऊद

७ अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'ईमान' वालों में सबसे पूर्ण 'ईमान' वाला वह व्यक्ति है जिस का स्वभाव उन में सब से अच्छा हो[७]। —अबू दाऊद, दारमी

८ हजरत अब्दुल्लाह बिन अम्र रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा : 'मुस्लिम' वह है जिस की ज़बान और जिस के हाथ से मुसलमान सुरक्षित रहें[८]। और 'मुहाजिर' (त्याग कर्त्ता) वह है जिस नें उन चीज़ों को छोड दिया जिन से अल्लाह ने वर्जित किया है[९]। ये शब्द बुख़ारी के हैं मुस्लिम (की 'हदीस') मे है कि एक व्यक्ति ने नबी सल्ल० से पूछा कि उत्तम 'मुस्लिम' कौन है ? आप ने कहा · वह व्यक्ति जिस की जबान और हाथ से मुसलमान सुरक्षित रहे । —बुख़ारी, मुस्लिम

९. हजरत अबू हुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मुस्लिम वह है जिस की ज़बान और हाथ से मुसलमान सुरक्षित रहे[१०]। यह तिरमिजी और नसई की

---

६. मालूम हुआ कि आदमी के 'ईमान' को पूर्ण उसी समय कहा जा सकता है जब कि उसका व्यवहारिक जीवन 'ईमान' के साँचे मे ढल गया हो । यह सम्भव ही नही है कि मनुष्य के 'ईमान' मे तो कोई कमज़ोरी और त्रुटि न हो, परन्तु उस के जीवन पर 'ईमान' की कोई छाप न पडे ।

७. आदमी के स्वभाव और चरित्र से उसका ईमान प्रदर्शित होता है । यदि किसी के ईमान ने नैतिक दृष्टि से उसे ऊँचा नही उठाया तो यह इस बात का प्रमाण है कि अभी उसके ईमान मे त्रुटि है । उसकी ईमानी हालत जितनी अच्छी होगी उसका स्वभाव और चरित्र भी उतना ही उच्च और महान होगा ।

८. अर्थात् जो न तो अपनी ज़बान से किसी मुसलमान को दु ख या हानि पहुँचाए और न अपने हाथो से किसी मुसलमान को कष्ट दे वही वास्तव मे मुस्लिम है।

९. अर्थात् 'हिजरत' केवल यही नही है कि आदमी अल्लाह की राह मे घरबार छोड दे वल्कि वास्तविक हिजरत तो यह है कि मनुष्य उन सभी चीज़ो को त्याग दे जो अल्लाह को नापसन्द है, जिन से उसने हमे रोका है ।

१० अर्थात् न वह लोगो का नाहक रक्तपात करे और न उनकी समपत्ति आदि को

'रिवायत' है और बैहकी ने शोबुल ईमान में फुज़ाला से जो रिवायत की है उस में ये शब्द भी हैं : और 'मुजाहिद, वह है जिस ने अपने-आप से 'जिहाद' (संघर्ष) किया और 'मुहाजिर' (त्याग कर्त्ता) वह है जिसने खताओं और गुनाहों को छोड़ दिया [११]।

—तिरमिजी, नसई, बैहकी-शोबुलईमान

१०. अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस रजि० का बयान है कि मैं ने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि उस (अल्लाह) की क़सम जिस के हाथ में मुहम्मद के प्राण हैं कि 'मोमिन' (ईमान वाले) की मिसाल सोने के टुकड़े की-सी है जिस के मालिक नें उसे तपाया फिर न तो उस में कोई परिवर्तन हुआ और न उस में कोई कमी हुई। उस (अल्लाह) की क़सम जिस के हाथ में मुहम्मद के प्राण हैं 'मोमिन' की मिसाल उस मधु-मक्खी की-सी है जिस ने उत्तम पुष्प का रस चूसा और उत्तम मधु बनाया। और जिस शाखा पर बैठी न तो उसे तोड़ा और न खराब किया [१२]।

—अहमद

११. अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : यह बात मनुष्य के इस्लाम के सौन्दर्य में से है कि वह व्यर्थ बातों को छोड़ दे [१३]।

—इब्नमाजा, तिरमिज़ी, बैहकी-शोबूलईमान

हानि पहुँचाए, लोगों को उस से किसी प्रकार का भय न हो।

११. अर्थात् वास्तव मे 'जिहाद' उसका है जो अपनी वासनाओ और इच्छाओ पर क़ाबू पाये और उन्हे अल्लाह के आदेशो के अधीन रक्खे। अल्लाह की बन्दगी और आज्ञापालन से कभी विमुख न हो। मालूम हुआ कि 'जिहाद' का अवसर रण-क्षेत्र ही मे नही बल्कि प्रत्येक समय इसका अवसर रहता है।

१२. अर्थात् 'मोमिन' (ईमान वाला) असली सोने की तरह खरा होता है तपाने से न तो उसके रग मे कोई अन्तर आता है और न भार मे। 'मोमिन' व्यक्ति का आहार शुद्ध होता हैं। भलाई और कल्याणकारी बातो के अतिरिक्त और कोई चीज़ उस से व्यक्त नही होती। वह किसी को हानि नही पहुँचाता।

१३. मनुष्य का 'दीन' और 'ईमान' जितना अधिक पूर्ण होगा उतना ही अधिक उस के स्वभाव और कर्म मे शुद्धता और सौन्दर्य पाया जायेगा। आदमी यदि व्यर्थ बातो को छोड देता है, तो वह अपने इस अमल से इस बात का प्रमाण सचित

१२ हजरत अनस रजि० कहते है कि बहुत कम ऐसा हुआ कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने हमें 'खुतबा' (भाषण) दिया हो और यह न कहा हो कि उस व्यक्ति में 'ईमान' नही जिस में अमानतदारी नही और उस में 'दीन' (धर्म) नही जो प्रतिज्ञा का पाबन्द नही [१४]।

—बैहकी-शोबुलईमान

१३. अम्र बिन अबसा रज़ि० कहते है कि मैं ने कहा . हे इल्लाह के रसूल ! 'इस्लाम' क्या है ? कहा · सुभाषता और भोजन कराना। मैं ने कहा · 'ईमान' क्या है ? कहा . धैर्य्य और उदारहृदयता। मैं ने कहा : कौन सा 'इस्लाम' उत्तम है ? आप ने कहा (उस का) जिस की

करता है कि उसकी दीनी हालत अच्छी है। 'दीन' व 'ईमान' की माँगो को पूरा करके मनुष्य वास्तव मे अपनी प्रकृति ही की माँगो को पूरा करता है। और अपने 'इस्लाम' को ठीक रखने का अर्थ इसके सिवा कुछ और नही है कि इस तरह मनुष्य अपने जीवन को सँवारता और उसे अच्छे-से-अच्छा बनाने की कोशिश करता है। अपने इस्लाम की सुन्दरता को नष्ट करके मनुष्य वास्तव मे अपने जीवन को असुन्दर करता है। अल्लाह की बन्दगी और उसके आदेशो के पालन मे ही मनुष्य को वास्तविक और सुखद जीवन प्राप्त होता है। मनुष्य को अल्लाह के आदेशो के पालन मे वास्तविक उत्तम एव पवित्रतम जीवन प्राप्त होता है। "मनुष्य केवल रोटी से जीवित नही रहता बल्कि उस 'कलमा' (*Word*) से जीवित रहता है जो प्रभु की ओर से आता है" (लूका की इजील ११ . १३)। अर्थात् अल्लाह के आदेश ही मनुष्य को जीवन प्रदान करते है। यह बात कुरआन मे इन शब्दो मे कही गई है . "क्या जो मुरदा हो फिर हमने उसे जीवन प्रदान किया हो जिसे लेकर वह लोगो मे चलता-फिरता हो, क्या उसकी तरह होगा जो अँधेरो मे हो उन से निकलने वाला न हो।" कुरआन की इस आयत मे 'ईमान' को जीवन और अल्लाह के आदेशो के अनुपालन को प्रकाश लेकर चलने की सज्ञा दी गई है। दोनो चीज़ो मे गहरा सम्बन्ध है।

१४ अर्थात् यह मनुष्य के 'ईमान' ही की माँग है कि वह अमानतदार हो और अपने वचन का पक्का हो। विश्वासघात, छल-कपट आदि का वास्तव मे ईमान' के साथ कोई जोड नही है। ऐसे व्यक्ति का 'ईमान' अत्यन्त कमजोर और अपूर्ण है जो अल्लाह पर और जीवन की उन वास्तविकताओ पर विश्वास भी रखता हो जिनकी सूचना अल्लाह के रसूल ने दी है और इसी के साथ न उसे अमानत का खयाल रहता है और न वह अपने वचनों का आदर करता है।

जवान और हाथ से मुसलमान बचे रहे। मैं ने कहा. कौन सा 'ईमान' उत्तम है? कहा: उत्तम स्वभाव[१५]। मैं ने कहा. कौन सी 'नमाज़' उत्तम है? जो दीर्घ विनयभाव एवं दासता लिए हुये हो[१६]। मैं ने कहा: कौन सी 'हिजरत' उत्तम है? कहा उन चीजो को छोड देना जिन को तेरा 'रब' नापसन्द करता हो। उस के वाद मैं ने कहा. कौन सा 'जिहाद' उत्तम है? कहा उस का जिस का घोडा ('जिहाद' में) मारा जाये और स्वय उस का भी रक्त वहाया जाये। मैं ने कहा: कौन सी वेला उत्तम है? आप ने कहा रात्रि का अन्तिम अर्ध भाग। —अहमद

१४. अबू उमामा रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा: लज्जा और कम बोलना 'ईमान' की दो शाखाएँ हैं और दुर्वचन और वाचालता 'निफाक' (कपटाचार) की दो शाखाएँ है[१७]।

--तिरमिजी

१५. हज़रत इब्न अब्बास रजि० कहते है कि मैं ने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि वह व्यक्ति 'मोमिन' (ईमान वाला) ही नही जो पेट भर खाये और उस का पडोसी उस के पहलू में भूखा रह जाये[१८]। —अहमद,वैहकी

---

१५ दूसरी 'हदीसों' की तरह यह 'हदीस' भी बताती है कि 'इस्लाम' और 'ईमान' का सम्बन्ध मनुष्य के केवल विचार और दृष्टिकोण से ही नही है बल्कि मनुष्य के व्यावहारिक जीवन से भी उनका गहरा सम्पर्क है। मनुष्य का 'दीन' (धर्म) और उसका 'ईमान' उसके स्वभाव एव चरित्र के माध्यम से प्रदर्शित होता है। मनुष्य का 'दीन' और 'ईमान' यदि ठीक है, तो उसका जीवन उत्तम चरित्र एव स्वभाव का प्रतीक होगा।

१६. अर्थात वह 'नमाज़' जिसमे देर तक वन्दा अल्लाह के सामने खडा रहे, जिसमे देर तक कुरआन पढा जाये और जिसमे विनयभाव और ईश-भय भी अधिक पाया जाये जो नमाज का वास्तविक तत्व है.

१७. ईमान' वाला व्यक्ति कभी दुर्भाषी और वाचाल नही हो सकता, दुराचार, अश्लीलता, असभ्यता आदि वातें 'मुनाफिक' (कपटाचारी) को ही शोभा दे सकती है। लज्जा, दूसरो का आदर, वात-चीत और व्यवहार मे सभ्यता और मर्यादा का ध्यान रखना ये 'ईमान' के लक्षण हैं। 'ईमान' वास्तव मे समस्त मानवीय विशेषताओ और गुणो का सार है। इस से वञ्चित रहना विनाश के सिवा और कुछ नही है।

१८ 'ईमान' का मनुष्य के स्वभाव और चरित्र से गहरा सम्पर्क है। यह मनुष्य के

१६ हजरत इब्न मसऊद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा सर्वोच्च अल्लाह ने तुम्हारे बीच स्वभाव को इस प्रकार विभक्त किया है जिस प्रकार उस ने तुम्हारी आजीविका को तुम्हारे बीच विभक्त किया है। सर्वोच्च अल्लाह दुनिया उस व्यक्ति को भी देता है जिस से वह प्रेम करता है और उसे भी जिस से प्रेम नही करता किन्तु 'दीन' (धर्म) केवल उस को देता है जिस से वह प्रेम करता है [१६]। तो जिस किसी को अल्लाह नें दीन' दिया है उस से उसे प्रेम है। और कसम है उस (अल्लाह) की जिस के हाथ में मेरे प्राण है बन्दा उस समय तक मुस्लिम नही होता जब तक उस का दिल और उस की जबान मुस्लिम न हो [२०]। और वह उस समय तक 'मोमिन' नही होता जब तक कि उस का पडोसी उस की बुराईयो से सुरक्षित न हो।

—अहमद, बैहकी

१७ हजरत इब्न अब्बास रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने अबूजर रज़ि० से कहा : हे अबूजर ! 'ईमान' की कौन सी शाखा अधिक मजबूत है ? उन्हो ने कहा . अल्लाह और उस के रसूल ज्यादा जानते है। आप नें कहा . लोगो से अल्लाह के लिए मित्रता का सम्बन्ध रखना, अल्लाह के लिए प्रेम करना और अल्लाह के लिए द्वेष रखना [२१]।

—बैहकी-शोबुलईमान

ईमानी तकाज़ो के सर्वथा प्रतिकूल है कि वह स्वयं तो पेट भर कर खाये परन्तु उसके पहलू ही मे उसका पडोसी भूखा रह जाये।

१९. इस 'हदीस' मे 'दीन' (धर्म) शब्द स्वभाव के स्थान पर प्रयुक्त हुआ है इस से मालूम हुआ कि 'दीन' वास्तव मे स्वभाव ही का दूसरा नाम है। 'दीन' और अच्छा स्वभाव जिसे मिल जाये समझ लीजीए उस पर अल्लाह की विशेष कृपा है।

२० मनुष्य का इस्लाम उसी समय पूर्ण होता है जब कि उस का दिल और उस की ज़बान भी मुस्लिम हो, उस के दिल मे अल्लाह की बन्दगी और उस के प्रेम-भाव के सिवा कोई दूसरा भाव न हो, उसकी ज़बान से सत्य के सिवा कोई दूसरी बात न निकलती हो, उस की ज़बान अल्लाह की बडाई और उस की प्रभुता को स्वीकार करती हो और दिल असत्य भावनाओ और विचारो से सर्वथा निर्लिप्त हो

२१ मालूम हुआ कि 'ईमान' का स्वभाव, चरित्र और मनुष्य के व्यावहारिक जीवन

१८. हज़रत अबूहुरैरा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : लज्जा 'ईमान' का एक हिस्सा है और 'ईमान' का स्थान 'जन्नत' है और निर्लज्जता बदी मे से है और बदी का ठिकाना ('जहन्नम' की) आग है [२२]। —अहमद, तिरमिजी

१९. हजरत इब्न उमर रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा : लज्जा और 'ईमान' को एक साथ रक्खा गया है। इन मे से जब एक उठाया जाता है, तो दूसरा भी उठा लिया जाता है । इब्न अब्बास रजि० की 'रिवायत' मे है कि जब इन मे से एक छीन लिया जाता है, तो दूसरा भी उसी के साथ जाता रहता है [२३]।

—बैहकी-शोबुलईमा

से गहरा सम्बन्ध है । 'ईमान' को यदि मनुष्य के नैतिक एव व्यावहारिक जीवन मे अलग कर दिया जाये तो वह केवल निष्प्राण कल्पना होकर रह जायेगा ।

२२. 'ईमान' वालो का शाश्वत निवास स्थान 'जन्नत' और बुरे लोगो का ठिकाना 'जहन्नम' है । लज्जा 'ईमान' की अनिवार्य मांग है । जिस व्यक्ति को अपने 'ईमान' की अनिवार्य मांग है । जिस व्यक्ति को अपना 'ईमान' प्रिय हो उसके लिए आवश्यक है कि वह निर्लज्जता और अश्लील कर्मो से दूर रहे क्योकि इस से यही नही कि 'ईमान' को आघात पहुँचता है वल्कि इस की भी आशका रहती है कि कही उस का ईमान' ही न छिन जाये ।

२३. अर्थात् जिस प्रकार यह आवश्यक है कि जहाँ दीप हो वहाँ प्रकाश भी हो उसी प्रकार लज्जा और 'ईमान' मे भी गहरा सम्बन्ध है । इसी तरह यदि 'ईमान' नही तो किसी लज्जा की आशा करनी मूर्खता है । इसी तरह यदि किसी के पास लज्जा नही तो समझ लेना चाहिए कि या तो वह 'ईमान' से वंचित है या फिर उसका 'ईमान' इतना निर्बल है कि जीवन मे वह कोई प्रभावकारी शक्ति सिद्ध नही हो सकता ।

ईमान की प्र रणाएं

عَنْ جَابِرٍ قَالَ قَالَ رَجُلٌ لِلنَّبِيِّ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ يَوْمَ أُحُدٍ أَرَأَيْتَ إِنْ قُتِلْتُ فَأَيْنَ أَنَا؟ قَالَ: فِي الْجَنَّةِ فَأَلْقَى تَمَرَاتٍ فِي يَدِهِ ثُمَّ قَاتَلَ حَتَّى قُتِلَ ——— بخاري، مسلم

१. हजरत जाबिर रजि० से उल्लिखित है कि उहुद (की लडाई) के दिन एक व्यक्ति ने नबी सल्ल० से कहा : कहिए यदि मै मारा जाऊँ तो कहाँ हूँगा[१] ? आप ने कहा 'जन्नत' में। यह सुन कर उस ने अपने हाथ की खजूरे फेक दी फिर लडा यहाँ तक कि वीरगत को प्राप्त हुआ[२]। —बुखारी, मुस्लिम

२. हजरत अबू मूसा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'जन्नत' तलवारों की छाया तले है[३]। यह सुनकर एक क्षीणस्थिति व्यक्ति खडा हुआ और कहा हे अबूमूसा ! क्या तुम ने स्वय अल्लाह के रसूल सल्ल० को यह कहते सुना है ? उन्हों ने कहा हाँ। इस के बाद वह अपने साथियों के पास आया और कहा : मेरा सलाम लो। फिर उस ने अपनी तलवार का म्यान तोड कर फेक दिया और अपनी तलवार ले कर शत्रु पर आक्रमण कर दिया और लडा यहाँ तक कि शहीद हो गया[४]। —मुस्लिम

---

१ अर्थात् मैं कहाँ जाऊँगा, मेरा ठिकाना कहाँ होगा ?

२ यह सुनने के पश्चात् कि यदि वह सत्य और असत्य के युद्ध मे सत्य की ओर से लडता हुआ मारा गया, तो 'जन्नत' मे जायेगा, वह रण-भूमि मे कूद पडा और लडता हुआ शहीद हो गया। उसके हाथ मे कुछ खजूरे थी उनको उस ने पहले ही फेंक दिया था। उसे जिस चीज की आशा दिलाई गई थी उस ने उसे खजूरो के रसास्वादन से बेपरवा कर दिया था।

३ अर्थात उन लोगो को 'जन्नत' अवश्य मिलेगी जो अल्लाह की राह मे लडें और अपनी तलवारो और हथियारो से असत्य का डट कर मुकावला करे चाहे इस युद्ध मे उन्हे अपने प्राण तक निछावर करने पडें।

४. जब उस व्यक्ति को विश्वास हो गया कि यह सूचना नबी सल्ल० ने दी है कि 'जन्नत' तलवारो की छाँव मे है तो इसके सत्य होने मे उसे कोई सन्देह नही

३. हज़रत अनस रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल और आपके 'असहाब' (सहचरवृन्द) निकले[५] यहाँ तक कि वे 'बद्र' मे 'मुश्रिको' से (अनेकेश्वरवादियों) से पहले जा पहुँचे फिर 'मुश्रिक' लोग भी आ गये तो आप ने (अपने साथियो से) कहा · उस 'जन्नत' के लिए खडे हो जाओ जिस की चौडाई आकाशों और धरती की चौडाई के समान है[६]। उमैर विन हुमाम वोले खूब खूब ! आप ने कहा तुम ने ये शब्द क्यो कहे ? उन्हो ने कहा अल्लाह की कसम हे अल्लाह के रसूल ! केवल इस आशा से कि शायद 'जन्नत' वालो में मै भी हो जाऊँ। आप ने कहा तुम उन्ही 'जन्नत' वालो में से हो। उल्लेखकर्त्ता का बयान है कि इस के

रहा। फिर तो कोई भी चीज कर्तव्य पालन के मार्ग मे वाधक न वन सकी। वह शत्रुओ पर टूट पडा और अपने प्राण अल्लाह के मार्ग मे निछावर कर दिये।

५ यह वद्र-सग्राम के अवसर की वात है जैसा कि आगे के शब्दो से स्पष्ट होता है। वद्र की लडाई शावान सन् २ हिं० मे हुई है। मुसलमानो की सेना मे ३१६ सैनिक थे, मुकावले मे एक हजार की सेना थी। मुसलमानो के पास लडाई का सामान भी ठीक तौर से न था। नवी सल्ल० परिस्थिति को समझते थे। आपने अपने दोनो हाथ फैला दिये और उच्च स्वर से प्रार्थना करने लगे "हे अल्लाह ! तूने जो वादा मुझ से किया था उसे पूरा कर, हे अल्लाह ! यदि तू 'इस्लाम' के इस छोटे से गरोह को नष्ट कर देगा, तो इस धरती पर तेरी पूजा और वन्दगी न होगी।" आप निरन्तर इसी तरह हाथ फैलाये हुये उच्च स्वर मे प्रार्थना करते रहे यहाँ तक कि आपके कन्धो से चादर नीचे गिर पडी। —मुस्लिम-उल्लेखकर्त्ता उमर विन खत्ताव रजि०

इस युद्ध मे अल्लाह की सहायता से मुसलमानो की विजय हुई। 'काफिरो' और 'मुश्रिको' को मुख की खानी पडी। वे बुरी तरह परास्त हुये और उनके सत्तर सरदार मारे गये।

६ आपने मुसलमानों को 'जिहाद' के लिए उभारा और उन्हे बताया कि इस युद्ध के लिए वढना वास्तव मे अल्लाह की उस विस्तृत 'जन्नत' की ओर वढना है। कुरआन मजीद मे भी कहा गया है वढो अपने 'रव' की क्षमा और उस 'जन्नत' की ओर जिसका विस्तार आकाशो और धरती के विस्तार के सदृश है, जो उन लोगो के लिए तैयार की गई है जो अल्लाह पर और उसके 'रसूलो' पर 'ईमान' लाए।" —अल-हदीद आयत २१।

बाद उमैर बिन हुमाम ने अपने निषग से कुछ खजूरें निकाली और उन्हे खाने लगे। फिर बोले : यदि मैं इतनी देर तक जीवित रहा कि अपनी खजूरों को खा लूँ तो यह तो दीर्घ जीवन होगा"। (हज़रत अनस) कहते है कि यह कह कर जो खजूरे उन के पास थी फेंक दी और 'मुश्रिकों' (अनेकेश्वरवादियों) से लड़ने लगे यहाँ तक कि शहीद हो गये। —मुस्लिम

७. अर्थात् वे इतने विलम्ब का भी सहन न कर सके कि खजूरो को खा कर दुश्मन के मुकाबले मे निकलें। 'जन्नत' की कामना मे ससार मे थोडी देर रुकना उन्हे असह्य प्रतीत हुआ। इतना विलम्ब कि खजूरें खा सकें उन्हे एक दीर्घ आयु जैसा लगा। अतएव उन्होने खजूरें फेंक दी और 'मुश्रिको' पर टूट पड़े और अल्लाह के मार्ग मे वीरगति को प्राप्त हुये।

यहाँ केवल कुछ 'रिवायतो' का उल्लेख किया गया जिनसे अनुमान किया जा सकता है कि जब विश्वास दिलो मे घर जाता है, तो मनुष्य की क्या दशा होती है। 'सहाबा' रजि० के इस प्रकार के कितने ही वृतान्त हैं जिनसे पता चलता है कि उन्होने 'ईमान' का रसास्वादन किया था। मनुष्य को 'ईमान' प्राप्त हो और जीवन का वास्तविक उद्देश्य उसके समक्ष हो, तो उसकी भावनाएँ साधारण लोगो से अत्यन्त भिन्न हो जाती है। जिस परिश्रम के कार्य को लोग बोझ समझते हैं उसे वह जीवन की प्राप्ति समझता है और उसके लिए अत्यन्त भावुक हो जाता है। उद्देश्य से हार्दिक एवं विमुग्धतापूर्ण सम्बन्ध का प्रदर्शन यो तो ज्ञान एव विद्या, और व्यापार आदि के लोक मे भी हुआ है, परन्तु इसका सबसे गढ कर प्रदर्शन धर्म एव चरित्र-लोक मे हुआ है। जिन लोगो ने धर्म और नैतिकता को जीवन का उद्देश्य समझा और अल्लाह के वादे पर 'ईमान' लाए उनका जीवन बदल गया। धूल और रक्त से निर्मित मानव किसी और लोक का प्राणी मालूम होने लगा। उन्होने अपने चरित्र से ससार को वह प्रकाश प्रदान किया जिसकी ससार को हर क्षण आवश्यकता है। उनके 'ईमान' ने उन्हे ऐसा स्वतन्त्र, आनन्द और परितोष प्रदान किया था जिसकी कल्पना से आत्माएँ विमुग्ध हो जाती है। तबूक-सग्राम के अवसर पर हजरत अबू बक्र सिद्दीक रजि० अपना सारा माल ला कर नबी सल्ल० के चरणो पर निछावर कर देते है। नबी सल्ल० के पूछने पर कि घर वालो के लिए क्या छोड आए हो ? कहते है "घर पर अल्लाह और 'रसूल' को छोडा है।" मतलब यह कि हमारे घर की आबादी धन-दौलत से नही, अल्लाह और उसके रसूल से है। अल्लाह और उसके रसूल से कुछ बचा कर रखना हमारे लिए सम्भव ही नही। जिस चीज ने हज़रत सिद्दीक

रज़ि० को इतना ऊँचा उठाया था वह 'ईमान' की उच्चतम प्रेरणाओ की चेतना थी। हज़रत इब्न अब्बास रज़ि० उनके बारे मे कहते हैं : "अबू बक्र रजि० ने नमाज और रोज़े की अधिकता के कारण अग्रसरता प्राप्त नही की बल्कि एक चीज के कारण जो उनके मन मे घर कर गई।"

हज़रत खुबैब रजि० को उनके शत्रु कत्ल करने के लिए 'हरम' की सीमा से बाहर ले गए तो उन्होने दो 'रकअत' नमाज पढने की इजाजत चाही। नमाज़ अदा करने के बाद कहा मन तो चाहता था कि देर तक नमाज पढ़ूँ लेकिन तुम समझते कि मैं मृत्यु से डर गया। फिर उन्होंने कविता पढी जिस के एक छन्द का अर्थ यह है "जब मैं 'इस्लाम' के लिए कत्ल किया जा रहा हूँ तो मुझे इसकी चिन्ता नही कि मैं किस पहलू पर कत्ल किया जाता हूँ। यह जो-कुछ है बस अल्लाह के लिए है। यदि वह चाहे तो इन टुकडो पर बरकत उतारेगा।"

हजरत खुबैब रजि० अल्लाह की राह मे प्राण निछावर करके अपने बाद आने वालो को मज़िल का पता दे गये। उनके पदचिह्नो पर चलने वाले सफल हैं चाहे वे हसनुल बन्ना हो या अब्दुल कादिर ऊदह या सैयद कुतुब और उनके साथी। जीवन का अभिलाषी प्रत्येक व्यक्ति है। अल्लाह जिसे जीवन प्रदान करना चाहता है उसे यो जीवन प्रदान करता है। तुच्छ उद्देश्य तो मनुष्य को विनष्ट कर डालते है। उनके पीछे पड कर मनुष्य चाहे जो-कुछ प्राप्त कर ले किन्तु व्यक्तित्व और आत्मसम्मान नाम की कोई चीज उस के पास नही रह सकती। व्यक्तित्व और चरित्र के अधिकारी तो वही लोग होते है जो किसी उच्च उद्देश्य के लिए जीने और उसके लिए मरने का साहस रखते है। दुर्गों पर विजय प्राप्त करना और शत्रुओ को परास्त करना सरल है किन्तु मन की इच्छाओ को नियन्त्रित रखना और स्थायी रूप से अपने-आपको एक मार्ग पर लगा देना अत्यन्त कठिन कार्य है। लेकिन यह मुश्किल उन लोगो के लिए आसान हो जाती है जो ऊँचे सोच-विचार के अधिकारी और किसी मजिल के जिज्ञासु होते है। 'ईमान' की शक्ति उनको है तो वह हर चीज पर काबू पा लेती है। मनुष्य यदि उस स्थान को अपने सामने रक्खे जो मानवीय कल्याण का सबसे उच्च स्थान है, तो इससे उसे चरित्र-बल प्राप्त होता है और उसके सकल्प मे दृढता आ जाती है। जब हमारी निगाह मजिल के सिवा दूसरी ओर बहकी हो और हमारा दिल वास्तविक उद्देश्य के अतिरिक्त कही और अटका हुआ हो तो सत्य की ओर हमारा एक कदम भी उठाना कठिन है। मज़िल से दृष्टि न हटे और मनुष्य 'ईमान'

मोमिन का चित्र

عَنْ اَبِىْ هُرَيْرَةَ رض اَنَّ النَّبِىَّ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ: اَلْمُؤْمِنُ مَأْلَفٌ وَلَا خَيْرَ
فِيْمَنْ لَا يَأْلَفُ وَلَا يُؤْلَفُ ———— احمد، البيهقى فى شعب الايمان

१ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा 'मोमिन' (ईमान वाला व्यक्ति) प्रेम एव स्नेह का आगार होता है। उस व्यक्ति मे कोई भलाई नही जो न किसी से प्रेम करे और न जिस से कोई प्रेम करे [1]।

—अहमद, बैहकी-शोबुलईमान

२ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा 'मोमिन' भोला-भाला और सुशील होता है [2]। और दुस्साहसी एव अवज्ञाकारी व्यक्ति चालाक, कृपण और दुराचारी होता है।

—अहमद, तिरमिजी, अबूदाऊद

३, हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . 'ईमान' मे सब से पूर्ण 'मोमिन' वे लोग है जो स्वभाव मे सब

का रसास्वादन कर चुका हो, तो वह उस चीज का आज ही अभिलाषी हो जाए जिसकी अभिलाषा वह कल मृत्यु के पश्चात् करेगा। मोमिन की निगाह सतही चीजो पर नही टिकती उसे उन चीजो की जिज्ञासा होती हैं जो अपना स्थायी मूल्य (*Value*) रखती हैं।

१ 'मोमिन' को सब से सहानुभूति होती है। वह स्वार्थी नही होता। उसका हृदय विशाल और उसकी दृष्टि विस्तृत होती है। उसको सभी से प्रेम होता है। सारे मनुष्य उसकी दृष्टि मे ईश्वर का परिवार है। ऐसा व्यक्ति स्वभावत सबका प्रिय बन जाता है। वह व्यक्ति जिसको न किसी से प्रेम और सहानुभूति हो और न दूसरो को ही उस से प्रेम हो 'ईमान' के आस्वादन से अनभिज्ञ होता है। उसका अस्तित्व ही निरर्थक है। वह एक ऐसे पुष्प के समान है जिसमे न कोई रग है और न गन्ध।

२. 'मोमिन' सज्जन और सरल स्वभाव का होता है। वह बुराइयो और लोगो के दोषो की टोह मे नही रहता। वह अज्ञानता के कारण नही बल्कि अपनी सुशीलता के कारण लोगो के दोषो पर दृष्टि नही डालता बल्कि क्षमा से काम लेता है। छल-कपट और झूठ या विश्वासघात से उसका कोई सम्बन्ध नही होता।

से अच्छे है [3]। —अबूदाऊद, दारमी

४. हजरत अबू सईद खुदरी रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'मोमिन' का पेट भलाई से कभी नही भरता वह उसे सुनता रहता है यहाँ तक कि 'जन्नत' में पहुँच जाता है [4]। —तिरमिजी

५ हजरत सुहैब रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'मोमिन' का अजीब हाल है उस के सभी कार्य अच्छे है और यह विशेषता केवल 'मोमिन' की है। यदि उसे प्रसन्नता प्राप्त हो तो (अल्लाह के आगे) कृतज्ञता दिखलाये यह उस के लिए अच्छा है और जब उसे कोई तकलीफ पहुँचे तो धैर्य से काम ले यह भी उस के लिए अच्छा है [5]। —मुस्लिम

६. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'मोमिन' अल्लाह की दृष्टि मे कतिपय 'फिरिश्तो से

---

३ ईमान' का मनुष्य के स्वभाव और कर्म से वह सम्बन्ध है जो सम्बन्ध बीज और वृक्ष मे होता है। 'ईमान' से एक विशेष प्रकार के स्वभाव और चरित्र का निर्माण होता है, फिर इस से इस्लामी जीवन का निर्माण सम्भव होता है। हम किसी व्यक्ति के दिल मे झाँक कर यह नही मालूम कर सकते कि उसमे 'ईमान' की मात्रा क्या है ? मनुष्य के 'ईमान' और धारणाओ के विषय मे हमे जो-कुछ अनुमान होता है वह उसकी व्यावहारिक नीति और उसके स्वभाव और चरित्र को देखकर ही होता है। यदि किसी 'मोमिन' का स्वभाव अच्छा है, तो हम कह सकते है कि उसके 'ईमान' की दशा अच्छी है।

४ मतलब यह है कि 'मोमिन' नेकी और भलाई और ज्ञान और तत्वदर्शिता (*Wisdom*) की बातो से कभी तृप्त नही होता। वह ज्ञानार्जन मे लगा रहता है यहाँ तक कि उसकी आयु पूरी हो जाती है और ज्ञान और कर्म के कारण वह 'जन्नत' मे प्रवेश पा लेता है।

५. कृतज्ञता प्रकाशन और धैर्य्य दोनो ही मनुष्य के चरित्र की महानता के प्रतीक होते है। 'मोमिन' खुशी की हालत मे यदि अपने 'रब' को धन्यवाद देता है, तो वह सफल है। इसी प्रकार सकट और मुसीबत मे यदि वह अधीर नही होता बल्कि धीरज से काम लेता है, तो उस समय भी वह सफल है। 'मोमिन' के जीवन से जो चीज़ अभीष्ट है वह यही कि वह विभिन्न परिस्थितियो मे उत्तम नीति अपनाए और उसके जीवन से उच्च चरित्र का प्रदर्शन हो। धैर्य्य और कृतज्ञता प्रकाशन से उच्च चरित्र ही का प्रदर्शित होता है।

भी श्रेष्ठ है [६]।

—इब्नमाजा

७ हजरत इब्न मसऊद रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'मोमिन' ताना देने वाला नही होता, न वह लानत करने वाला होता है, न अश्लील बाते बकता है और न वाचाल होता है [७]।

—तिरमिजी, बैहकी

८. हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कसम है उस सत्ता की जिस के हाथ में मेरे प्राण हैं, बन्दा उस समय तक 'मोमिन' नही होता जब तक कि अपने भाई के लिए उसी चीज को पसन्द न करे जिसे वह अपने लिए पसन्द करता है [८]।

—बुखारी, मुस्लिम

९. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह की कसम वह 'ईमान' नही रखता, अल्लाह की कसम वह 'ईमान' नही रखता। कहा गया . हे अल्लाह के रसूल! कौन व्यक्ति 'ईमान' नही रखता? कहा वह व्यक्ति जिस का पड़ोसी उस की बुराइयों से सुरक्षित न हो [९]।

---

६. मनुष्य को अल्लाह ने ऊँचा पद प्रदान किया है। 'फिरिश्तो' तक को उसकी सेवा मे लगाया। सामान्य दृष्टि से 'ईमान' वाले मुस्लिम बन्दो का दर्जा 'फिरिश्तो' से बढकर है। साधारण मोमिनों का दर्जा भी अल्लाह की दृष्टि मे कम नही है और 'नबियो' का दर्जा तो महान एव श्रेष्ठ 'फिरिश्तो' से भी बढा हुआ है।

७ मतलब यह है कि 'मोमिन' का जीवन अत्यन्त पवित्र होता है। वह स्वभाव एव चरित्र के उच्च पद पर होता है।

८. 'मोमिन' व्यक्ति की एक मौलिक विशेषता यह होती है कि वह उदार होता है। उसकी दृष्टि सकीर्ण नही होती। वह दूसरो के लिए भी वही बात पसन्द करता है जो उसे स्वय अपने लिए पसन्द है। वह यदि अपना अहित नही चाहता। आज मुसलमान यदि अपने 'नबी' की इसी शिक्षा का पालन करने लग जाएँ तो कितने ही झगडो और कलह से छुटकारा मिल जाये। इसलिए कि अधिकतर झगडों और बिगाड के पीछे स्वार्थ, सकीर्ण दृष्टिता और अगम्भीरता ही काम करती है।

९. अर्थात् उस व्यक्ति का 'ईमान' से कोई सम्बन्ध नही है वह व्यक्ति अपने 'ईमान' के दावे मे झूठा है जिसकी बुराई से उसका पडोसी तक सुरक्षित नही। उस 'ईमान' का अल्लाह के यहाँ क्या मूल्य हो सकता है जिसका कर्म

इस्लाम की विशेषताएं

عَنْ اَبِیْ هُرَیْرَةَ رض قَالَ: قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّی اللّٰهُ عَلَیْهِ وَسَلَّمَ مِنْ حُسْنِ اِسْلَامِ
الْمَرْءِ تَرْكُهٗ مَا لَا يَعْنِيْهِ ــــــــ ترمذی، ابن ماجه

१. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि आदमी के 'इस्लाम' की एक खूबी यह है कि वह व्यर्थ बातों को छोड दे[1]। —तिरमिजी, इब्नमाजा

२ हजरत अबू हुरैरा रजि० नबी सल्ल० से रिवायत करते हैं कि आप ने कहा जब तुम में से कोई व्यक्ति अपने 'इस्लाम' मे खूबी और सौन्दर्य पैदा कर लेता है, तो जो नेकी वह करता है वह उस के लिए दस गुना से सात सौ गुना तक लिखी जाती है[2] और जो बुराई करता है

से कोई नाता ही दीख नही पडता। उस वृक्ष को वृक्ष कहना ही व्यर्थ है जिसमे हरियाली नाममात्र को भी नही पाई जाती। उस दीप को दीप कौन कहेगा जो न स्वय प्रकाशमान हो और न अपने वातावरण को प्रकाशित कर सके।

१ इस्लाम वास्तव मे हमारे जीवन को सँवारता और उसे सौन्दर्य और निर्माल्य से सुसज्जित करता है। यह 'इस्लाम' की विशेषता है कि मनुष्य व्यर्थ कामो से दूर रहे और अपने समय को अच्छे कामो मे लगाये। कोई व्यक्ति यदि अपने समय को व्यर्थ कामो मे नष्ट करता है, तो इसका अर्थ यह है कि या तो वह 'इस्लाम' से बिल्कुल अपरिचित है या फिर 'इस्लाम' को अभी वह पूर्ण रूप से अगीकृत नही कर सका है। 'इस्लाम' तो मानव-जीवन का उत्तम उपयोग सचित करता है। उसकी उपेक्षा विवेक और 'ईमान' के प्रतिकूल है।

मालिक और अहमद ने इसे अली बिन हुसैन से रिवायत की है। तिरमिज़ी और बेहकी ने दोनो से रिवायत की है।

२ मतलब यह है कि जब कोई व्यक्ति अपने 'ईमान' और 'इस्लाम' को सँवार लेता है, तो उसकी एक-एक नेकी का दर्जा बढ जाता है। दुनिया मे भी उस की नेकियो की बरकतें बढ जाती है और 'आमाल नामे' (कर्मपत्र) मे भी एक एक नेकी दस गुना से लेकर सौ गुना तक अ कित की जाती है। कर्म के पीछे जितनी अधिक हृदय की शुद्धता काम कर रही होगी उतना ही अधिक उसका दर्जा और महत्व बढता चला जायेगा। कभी समय पर जरूरत का एहसास भी एक नेकी को अगणित नेकियाँ बना देता है। फिर नेकी के बढने

वह उतनी ही लिखी जाती है [३]। एक 'रिवायत' में है सिवाय इस के कि अल्लाह उसे क्षमा कर दे (तो उतनी बुराई भी नही लिखी जाती)।

—बुख़ारी, मुस्लिम

३ अबू सईद ख़ुदरी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . जब 'काफिर' व्यक्ति ('इस्लाम' कबूल कर लेता है और उस) के 'इस्लाम' में ख़ूबी और सौन्दर्य आ जाता है तो उस की समस्त नेकियाँ जो शिर्क के समय मे की गई थी इस्लाम के पश्चात् लिख दी जाती है [४]।

—दारक़ुतनी

४ अब्दुल्लाह इब्न मसऊद से उल्लिखित है कि कुछ लोगो ने अल्लाह के रसूल सल्ल० से पूछा हे अल्लाह के रसूल ! क्या हमारे उन कर्मो के बारे में पकड होगी जो हम ने अज्ञान (काल में इस्लाम से पहले) मे किये है ? आप ने कहा तुम मे से जिस किसी ने 'इस्लाम' मे अच्छे

का नियम सात सौ पर समाप्त नही हो जाता बल्कि उस से भी अधिक नेकियाँ मिल सकती है। "दस गुना मे सात सौ गुना तक" कहकर वास्तव मे बरकतो और वृद्धि के नियम की ओर सकेत किया गया है। कुरआन मजीद मे सामान्य नियम यह बयान किया गया है "जो नेकी लेकर आयेगा उसको उसका दस गुना मिलेगा" (सूरा अल-अनआम १६०) लेकिन इसी के साथ यह भी कहा गया है "और यदि नेकी हो, तो उसको बढाता है और उसको अपने पास से बडा प्रतिदान प्रदान करता है।" (अन-निसा ४०)

३ कुरआन मे भी कहा गया है "और जो कोई बुराई लेकर आया, उसे उसका उतना ही बदला दिया जायेगा और उन पर जुल्म नही किया जायेगा।"

(अल-अनआम १६०)

४ मतलब यह है कि मनुष्य जब सही तौर पर 'इस्लाम' को अपना लेता है, तो उसकी वे नेकियाँ भी नष्ट नही होती जो उसने 'कुफ्र' और 'शिर्क' के समय मे की होती है, बल्कि वे भी उसके हिसाब मे लिख ली जाती है। इसलिए कि अपनी धारणा और कर्म को सँवार कर मनुष्य जहाँ अपने पिछले बुरे कर्मो के दागो से अपने जीवन को स्वच्छ करता है वही उसकी नेक अमली से उसके अच्छे कर्मो को स्थायित्व मिल जाता है। सही तौर पर 'इस्लाम' कबूल करने के पश्चात् नेकियो के नष्ट होने का कोई सवाल पैदा नही होता। 'इस्लाम' के द्वारा तो नेकियो और भलाइयो को पूर्णता प्राप्त होती है। 'इस्लाम' अच्छे कर्मों के लिए सही और दृढ आधार और प्रेरक वस्तु भी सचित करता है।

कर्म किये उस की तो पकड न होगी लेकिन जिस ने बुरे कर्म किए उससे उस के अज्ञान और 'इस्लाम' दोनो समय के कर्मो के बारे में पकड होगी [५]।

—बुखारी, मुस्लिम

५ हकीम बिन हिज़ाम रजि० से उल्लिखित है कि उन्हो ने अल्लाह के रसूल सल्ल० से कहा हे अल्लाह के रसूल ! बताइए वे कर्म जो मै अज्ञान काल मे किया करता था जैसे 'सदका', गुलाम आजाद करना, नातेदारो के साथ अच्छा व्यवहार करना क्या उन का भी प्रतिदान है ? अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम जो नेकिया कर चुके हो, उन सब के साथ ही 'ईमान' लाये हो [६]। —बुखारी, मुस्लिम, हाकिम-मुस्तदरक

६. अबूसईद खुदरी रजि० से उल्लिखित है कि उन्हो ने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि जब कोई बन्दा 'इस्लाम' कबूल कर लेता है और उस के 'इस्लाम' मे खूबी और सौन्दर्य पैदा हो जाता है, तो जितनी बुराइयां वह पहले कर गुजरा था अल्लाह सब क्षमा कर देता है [७]। और उस के बाद हिसाब यह रहता है कि एक नेकी के बदले मे दस नेकियो से सात सौ गुना तक नेकियां मिल सकती है बल्कि उस

---

५ 'इस्लाम' कबूल करने के पश्चात् यदि कोई बुरे कर्मो को नही छोडता, तो इस के सिवा और क्या हो सकता है कि अभी उसका आचरण पहले ही जैसा है। जब उसने अपनी नीति ही नही बदली, तो फिर वह कौन सी चीज होगी जो उसके दामन को उसके पिछले बुरे कर्मो के धब्बो को धो सके। हां यदि कोई सच्चे दिल से 'इस्लाम' कबूल करके अपने को सुधार लेता है। अपने पिछले गुनाहो और त्रुटियो के लिए अल्लाह से क्षमा याचना करता है तो फिर उस का 'इस्लाम' समस्त गुनाहो का 'कफ्फारा' (प्रायश्चित) बन जाता है। पिछले गुनाहो की कोई गन्दगी बाकी ही नही रहती कि उसकी पकड हो सके।

६ अर्थात् तुम्हे पहले की नेकियो का बदला क्यो न मिलेगा, 'इस्लाम' कबूल करके उन नेकियो को त्याग तो दिया नही है कि वे नेकियाँ नष्ट हो जाएँ। 'इस्लाम, कबूल करने का अर्थ तो नेकियो को पूर्णता प्रदान करना ही होता है।

७ आदमी जब सच्चे दिल से 'इस्लाम' कबूल करता और अपने-आप को 'इस्लाम' के साँचे में ढालता है, तो फिर उसे एक नवीन और पवित्र जीवन प्राप्त होता है। पिछले गुनाहो की मलीनता और बुरे प्रभाव जो उसके मन-मस्तिष्क और आत्मा पर पडे हुये होते है मिट जाते है और उसे पूर्ण शुद्धता प्राप्त होती है। ईश्वरीय नियम के अनुसार भी उसके पिछले गुनाह क्षमा कर दिये जाते है।

से भी अधिक, और बुराई के वदले में केवल एक बुराई यह और वात है कि अल्लाह उसे क्षमा कर दे (तो अब बुराई के वदले एक बुराई भी नही लिखी जायगी) । —बुख़ारी

७. हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह किसी 'ईमान' वाले पर उस की किसी नेकी के वारे में जुल्म नही करता। उस का वदला दुनिया मे भी दिया जाता है और 'आखिरत' मे भी दिया जाता है, रहा काफिर तो जो नेकियाँ उस ने (जानते-बूझते) अल्लाह के लिए की थी उन का वदला उसे दुनिया ही में दे दिया जाता है यहाँ तक कि जव वह 'आख़िरत' में पहुँचता है, तो उस के पास ऐसी कोई नेकी वाकी नही रहती जिसका वदला दिया जाए[८]। —मुस्लिम

८. अव्बुल्लाह इब्न उमर रज़ि० से उल्लिखित है कि नवी सल्ल० ने कहा : 'मुस्लिम' वह है जिस की जवान और जिस के हाथ से मुसलमान सुरक्षित रहे[९] और 'हिजरत' करने वाला ('मुहाजिर') वह है जो उन बातों को छोड दे जिन से अल्लाह ने रोका ह[१०]। —बुख़ारी, मुस्लिम

९ अव्दुल्लाह इब्न उमर रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल ने कहा वृक्षो में एक वृक्ष ऐसा है जिस के पत्ते कभी नही झडते

---

८. 'काफिर' और 'मुश्रिक' की यदि कुछ नेकियाँ होती हैं तो उनका वदला उसे सासारिक जीवन ही मे दे दिया है। यदि किसी कारण उसे ससार मे अपनी नेकियो का वदला न मिल सका, तो ज्यादा-से-ज्यादा यह हो सकता है कि उसकी यातना मे कुछ कमी कर दी जाए। 'जहन्नम' से छुटकारा दिलाने वाली चीज़ तो केवल 'इस्लाम' है।

९ अर्थात् सही अर्थों मे 'मुस्लिम' वही है जिसकी जवान या हाथ से किसी मुसलमान को तकलीफ या हानि न पहुँचे।

१० अर्थात् 'हिजरत' केवल इसका नाम नही है कि मनुष्य अल्लाह के 'दीन' के लिए अपना घरवार छोडकर किसी दूसरी जगह चला जाए। बुराइयो और उन चीज़ो को छोड देना भी 'हिजरत' है जो अल्लाह को अप्रिय है। यदि कोई अप्रिय वातो को नही छोडता तो इसका अर्थ यह है कि अभी 'हिजरत' के मूल तत्व और आशय से वह अपरिचित ही है, भले ही वह अल्लाह के मार्ग मे अपने घरबार और स्वदेश को छोड चुका हो।

और यही वृक्ष 'मुस्लिम' की मिसाल है । अच्छा बताओ वह कौन सा वृक्ष है ? लोगो का ख्याल तो जगल के वृक्षो की ओर गया, अब्दुल्लाह इब्न उमर रजि० कहते है कि मेरे दिल में आया कि यह खजूर का वृक्ष है, लेकिन मुझे अपने बडों के सामने बोलते हुये शर्म आई । इस के बाद लोगो ने कहा हे अल्लाह के रसूल ! आप ही बताये कि वह कौन सा वृक्ष है ? आप के कहा वह खजूर का वृक्ष है [११] ।

—बुखारी, मुस्लिम

१० जैद बिन सलाम से उल्लिखित है कि उन से अबू सलाम नें कहा कि उन से हारिस अशअरी नें बयान किया कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह ने यहया (अ०) को पाँच बातो के बारे में आदेश दिया था कि स्वय भी उन का पालन करे और 'बनी इस्राईल' से कहे कि वे भी उन का पालन करे । यहया (अ०) को इस मे (अर्थात् बनी इस्राईल से कहनें में) कुछ विलम्ब होनें लगा, तो ईसा (अ०) नें कहा अल्लाह ने आप को पाँच बातो के बारे मे आदेश दिया था कि आप स्वय भी उन का पालन करे और 'बनी इसराईल' से भी उन का पालन करनें को कहे, तो या तो आप उन से कह दीजिए या फिर मैं ही उन से कह दूँ । यहया (अ०) नें कहा कि (आदेश मुझे दिया गया है इस लिए) मुझे भय है कि यदि इस सिलसिले में आप मुझ से अग्रसर रहे, तो कही मै धरती में धँसा न दिया जाऊँ या किसी यातना मे ग्रस्त न हो जाऊँ [१२]। इस के बाद उन्हो ने लोगो को 'बैतुलमकदिस' में एकत्र किया जब वह खूब भर गया और लोग गेलरियों तक बैठ गये, तो कहा अल्लाह नें मुझे पाँच बातों के बारे मे आदेश दिया है कि स्वयं भी उन का पालन करूँ और तुम्हे भी उन का पाल करनें की ताकीद करूँ । पहली बात यह है कि तुम अल्लाह ही की 'इबादत' करो और किसी

---

११ अर्थात् जिस प्रकार खजूर का वृक्ष सदैव हरा-भरा रहता है पतझड उसके निकट नही आती ठीक यही दशा 'इस्लाम' के कारण मुस्लिम की होती है । सदैव वह लोगो को लाभ ही पहुँचाता है । भलाई और बरकत के अतिरिक्त उस से कोई दूसरी चीज़ प्रकट नही होती ।

१२ इस से अनुमान लगाया जा सकता है कि नबियो और महान् व्यक्तियों की हृदयगत भावनाएँ कैसी होती हैं । उन्हे अल्लाह की महानता का कितना एहसास होता है । वे सदैव अल्लाह से डरते रहते हैं कभी गाफिल नही होते ।

चीज को उस का सहभागी न वनाओ क्योंकि जो व्यक्ति अल्लाह का सहभागी ठहराये उस की मिसाल ऐसी है जैसे एक व्यक्ति केवल अपने सोने-चाँदी के माल से एक गुलाम खरीदे और उसे वता दे कि देख यह मेरा घर है और यह मेरा कार्य है तो कार्य करना और उजरत मुझे देते रहना। वह कार्य तो करे परन्तु उजरत अपने स्वामी के वजाय किसी और व्यक्ति को दे दे। भला तुम मे कौन यह पसन्द करेगा कि उस का गुलाम ऐसा हो। और यह कि अल्लाह ने तुम्हे 'नमाज' का हुक्म दिया है अत जव तक 'नमाज' मे रहो इधर-उधर न देखो क्योंकि अल्लाह अपने वन्दे की ओर पूरी तरह मुख किये रहता है, जव तक वह इधर-उधर नही देखता [१३]। और उस ने तुम्हे रोजे का आदेश दिया है। इस की मिसाल ऐसी है जैसे किसी जमात मे एक व्यक्ति हो जिस के पास एक थैली हो जिस मे कस्तूरी हो और प्रत्येक व्यक्ति को उसकी सुगन्ध अच्छी मालूम होती हो और अल्लाह की दृष्टि मे रोजेदार की गन्ध कस्तूरी की सुगन्ध से अधिक प्रिय होती हैं [१४]। और उस ने तुम्हे 'सदके' का आदेश दिया है। उस की मिसाल ऐसी है जैसे एक व्यक्ति को शत्रु ने कैद कर लिया हो और उस के हाथ उस की गर्दन से वाँध दिये हो। और उस की गर्दन मारने के लिए उसे ले जा रहे हों। वह कहे कि मैं अपने प्राण के वदले थोडा और वहुत (जो कुछ भी मेरे पास है) सव देता हूँ और इस प्रकार 'फिदया' (मुक्ति प्रतिदान) दे कर उन से अपने प्राण छुडा ले [१५]। और उसने तुम्हे अल्लाह के 'जिक्र' का आदेश दिया

१३ 'नमाज़' मे इधर-उधर देखने का अर्थ यह है कि वन्दा अल्लाह की ओर अभी पूर्णरूप से प्रवृत नही हो सका है। ऐसी दशा मे अल्लाह की कृपादृष्टि का भागी वह कैसे बन सकता है ?

१४ 'रोजे' से हमे आध्यात्मिक और आशययुक्त जीवन प्राप्त होता है। 'रोजे' को सुगन्ध की उपाधि देना वास्तविकता के सर्वथा अनुकूल है। सुगन्ध भौतिक जगत मे एक सूक्ष्म और पवित्रतम वस्तु है। आध्यात्मिक एव आतरिक जीवन के लिए इस से उत्तम उपमा क्या हो सकती थी। रोज़ेदार का अस्तित्व मानो सुगन्ध से सुरभित होता है, परन्तु वह सुगन्ध ऐसी होती है जिसके मुकावले मे ससार की कोई सुगन्ध नही लाई जा सकती। कस्तूरी की सुगन्ध भी नही लाई जा सकती। कस्तूरी की सुगन्ध भी इसके मुकावले मे तुच्छ है।

१५ 'सदका' से वास्तव मे मनुष्य की आत्मा और उसके मन को वास्तविक स्वातन्त्र्य और विकास प्राप्त होता है। 'सदके' के द्वारा मनुष्य की आत्मा

है क्योकि उस की मिसाल ऐसी है जैसे एक व्यक्ति हो जिस का पीछा शत्रु तेजी से कर रहा हो, यहाँ तक कि यह व्यक्ति (दौडते-दौडते) किसी दृढ दुर्ग के भीतर आ जाए और (उस मे आ कर) अपने प्राण को शत्रु से बचा ले। इस प्रकार बन्दा अल्लाह के 'जिक्र' के सिवा किसी प्रकार भी अपने-आप को 'शैतान' से नही बचा सकता [१६]।

—तिरमिजी

अनुचित बन्धनो और विनाश से मुक्त हो जाती है। भौतिक और वासना सम्बन्धी लिप्सा से मुक्ति प्राप्त करने का उत्तम उपाय 'सदका' है। 'सदका' के द्वारा मानवीय आत्मा भौतिक बन्धनो एव वासनाओ से छुटकारा पा लेती है और उसे विकास का अवसर मिलता है। यही बात कुरआन मे इन शब्दो मे कही गई है "(हे नबी !) तुम उनके मालो मे से 'सदका' लेकर उन्हे स्वच्छता प्रदान करो, उसके द्वारा उनकी आत्मा को शुद्ध करके उसके विकसित होने का अवसर दो।" (अत-तौबा : १०३)। अर्थात् वे 'सदका' करेंगे तो उन्हे शुद्धता प्राप्त होगी और इस प्रकार उनकी आत्मा विकसित होगी। धन-दौलत के मोह मे ग्रस्त व्यक्ति जीवन के वास्तविक मूल्यो से अपरिचित रह जाता है। इस से बढकर दुर्भाग्य की बात और क्या हो सकती है। कुरआन मे है · "तो जहाँ तक हो सके अल्लाह का डर रक्खो, और (उस का हुक्म) सुनो और मानो और खर्च करो कि तुम्हारा भला हो और जो कोई अपने मन के लोभ से बचा रहे, तो ऐसे ही लोग सफलता प्राप्त करने वाले हैं।" (अत-तगाबुन . १६) मनुष्य के मन से जब तक कृपणता और लोभ निकल न जाए नैतिक एव आध्यात्मिक दृष्टि से उसे उच्चता प्राप्त नही हो सकती। यह बात इजील मे इन शब्दो मे बयान की गई है : "मैं तुम से सच कहता हूँ कि (कजूस) धनवान का स्वर्ग के राज्य *(The Kingdom of heaven)* मे प्रवेश करना कठिन है। और मैं फिर तुम से कहता हूँ कि ऊँट का सूई के नाके से निकल जाना इस से सहज है कि (कजूस) धनवान परमेश्वर के राज्य मे प्रवेश करे।" (मत्ता १९ २३-२४) 'सदका' देने से धन दौलत का मोह मन से निकल जाता है। मनुष्य जीवन के वास्तविक मूल्यो से परिचित होता है। दुनिया और 'आखिरत' की पकड और यातना से सुरक्षित रहता है।

१६ इस फितना भरी दुनिया मे अल्लाह की याद ही वह सब से मजबूत किला है है जिसमे शरण लेकर मनुष्य 'शैतान' के छल से बच सकता है। जीवन के कोलाहल मे अल्लाह को भूलकर मनुष्य कभी भी विनाश से बच नही सकता।

११. हज़रत ज़ैद बिन तलहा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : प्रत्येक 'दीन' (धर्म) का एक स्वभाव (प्रकृति एवं गुणा) होता है इस्लाम का स्वभाव लज्जा है [१७]। —मालिक

१२. हज़रत अबू सईद रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा : मैं सोया हुआ था, देखा कि लोगों को मेरे समक्ष लाया जा रहा है और वें कुरते पहनें हुये थे जिन में से कुछ लोगों के कुरते इतनें लम्बे थें जो सीनें तक पहुंचते थे और कुछ लोगों के इस से नीचे तक पहुंचे हुए थे। मेरे सामनें उमर बिन खत्ताब को लाया गया उनका कुरता इतना लम्बा था कि वे उसे घसीटते हुये चलते थे। लोगों नें कहा : हे अल्लाह के रसूल ! इस का अर्थ आप नें क्या लगाया ? कहा : 'दीन' (धर्म) [१८]।

---

१७. इस हदीस से दो बातें मालूम होती हैं। एक यह कि इस्लाम का सम्बन्ध मनुष्य से अत्यन्त निकट का है। इसीलिए लज्जा को इस्लाम का स्वभाव बताया जो वास्तंव मे मनुष्य का स्वभाव या गुण होता है। इस्लाम वास्तव मे मानव का अपना स्वभाव है। अपने स्वभाव से बढकर निकट की वस्तु क्या हो सकती है। दूसरी महत्वपूर्ण बात जो इस हदीस से मालूम होती है वह यह कि इस्लाम की प्रकृति अत्यन्त पवित्र, सुन्दर एवं शुद्ध है। स्वभाव मे लज्जा से बढकर सुन्दर कोमल और पवित्र स्वभाव क्या हो सकता है।

यह हदीस इब्नमाजा और बैहकी-शोबुल ईमान मे अनस रज़ि० और इब्न अब्बास रज़ि० से उल्लिखित है।

१८. इस हदीस से मालूम हुआ कि 'दीन' (धर्म) वास्तव मे मानव-हित के लिए है। क्या कोई इस बात को पसन्द करेगा कि वह नग्न और वस्त्रहीन हो या उसका वस्त्र अत्यन्त छोटा और ज़रूरत से इतना कम हो कि वह न शरीर की शोभा बन सके और न उसकी रक्षा कर सके। आदर्श पुरुष वह नही है जो धर्म से वंचित हो या जिसके जीवन मे धर्म का बहुत थोडा अंश सम्मिलित हो सका हो बल्कि पूर्ण व्यक्ति वही है जिसके व्यक्तित्व पर पूर्णतः धर्म की छाप हो, जिसके जीवन का कोई अंश धर्म से वंचित न हो।

अध्यात्म और 'इबादतें'

इस्लामी इबादतें

मनुष्य को सदैव एक ऐसे इष्ट आराध्य की खोज रही है जिसे वह अपना जीवनोद्देश्य और अपनी अभिलाषाओं और कामनाओ का केन्द्र बना सके। जिस के आगे वह अपने विनय एवं दास्य-भावों का प्रदर्शन कर सके। आराध्य की तलाश और खोज में मनुष्य ने तरह-तरह की ठोकरे खाईं और वह विभिन्न प्रकार की धारणा-सम्बन्धी और व्यावहारिक गुमराहियों में पड़ता रहा लेकिन फिर भी वह कभी भी अपने दास्य-भाव और अपने अन्दर पाये जाने वाली अस्पष्ट विकलता एवं वेदना को जो एक उपास्य एव आराध्य को पा लेने के बाद ही दूर हो सकती थी, कभी विनिष्ट न कर सका। अल्लाह के 'नबियो' ने सदा मनुष्य को सही मार्ग दिखाया। उन्हों ने बताया कि मनुष्य का उपास्य या आराध्य केवल अल्लाह है जो इस विश्व का सृष्टिकर्ता और 'रब' है प्रत्येक 'नबी' का सन्देश यही था:

"हे मेरी जाति वालो · अल्लाह की 'इबादत' करो उस के सिवा तुम्हारा कोई 'इलाह' (आराध्य) नही"। —कुरआन सूरा अल-आराफ आयत ५९

अल्लाह के अन्तिम रसूल सल्ल० ने भी ससार को यही आमन्त्रण दिया .

"हे लोगो ! अपने 'रब' को 'इबादत' करो" —सूरा २ आयत २१
क़ुरआन मजीद ने स्पष्ट शब्दों मे बताया कि 'इबादत' ही मानव-सृष्टि का वास्तविक अभिप्राय है। जो जीवन अल्लाह का आज्ञापालन और 'इबादत' न बन सका, वह नष्ट हुआ।

"मैं ने जिन्नो और मनुष्यों को केवल इस लिए पैदा किया है कि वे मेरी 'इबादत' करे। —सूरा अज-ज़ारियात आयत ५६

'इबादत' शब्द अपने अर्थ की दृष्टि से अत्यन्त व्यापक है। 'इबादत' का मूल अर्थ है विनयशीलता, अन्तिम हद तक झुक जाना, बिछ जाना। फिर इसमें प्रेम, पूजा और आज्ञापालन और दासता का अर्थ भी

सम्मिलित है। 'इस्लाम' में 'इबादत' का सम्पर्क मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन से है। अल्लाह की 'इबादत' का अर्थ यह है कि मनुष्य केवल अल्लाह का उपासक हो, उसी के आगे सिर झुकाए, उसी को सजदा करे, अपनी सूक्ष्म एवं पवित्रतम भावनाओं उसी की सेवा में प्रस्तुत करे और अपना सम्पूर्ण जीवन उसी की बन्दगी और आज्ञापालन में व्यतीत करे जीवन के किसी क्षेत्र को भी अल्लाह की बन्दगी से स्वतन्त्र न रक्खे; जीवन के प्रत्येक मामले में अल्लाह ही का आज्ञाकारी हो। राज-नीति, समाज, अर्थ आदि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अल्लाह के दिए हुए आदेशों का पालन करे। यहाँ तक कि उसका खाना-पीना, लोगों से मिलना-जुलना, सोना-जागना सब-कुछ अल्लाह के आदेश और उसकी इच्छा के अनुसार हो। इस तरह पूरे 'दीन' (धर्म) का पालन 'इबादत' मे सम्मिलित है। किसी कर्तव्य-पालन के विषय में भी हम यह नही कह सकते कि वह 'इबादत' में सम्मिलित नही है।

धार्मिक व्यवस्था में 'इस्लाम' के 'अरकान' (मौलिक स्तम्भों) नमाज़, रोज़ा, हज्ज, और ज़कात को बड़ा महत्व प्राप्त है। इन 'अरकान' का सम्बन्ध अपने बाह्य और आन्तरिक दोनों ही दृष्टि से प्रत्यक्षत अल्लाह से है। मनुष्य में दास्य भाव को जाग्रत करने और बन्दगी की भावना पैदा करने में 'इस्लाम' के 'अरकान' का बड़ा भाग है। इनको 'दीन' (धर्म) में एक विशेष स्थान प्राप्त है। इन्ही पर वास्तव मे 'दीन' (धर्म) का सम्पूर्ण भवन खड़ा होता है। ये मानो ऐसी विशेष 'इबादतें' हैं जिनके द्वारा मनुष्य में वह शक्ति आती है जिस से वह अपना सम्पूर्ण जीवन अल्लाह की बन्दगी और 'इबादत' में व्यतीत कर सके। यही कारण है कि साधारणतया नमाज़, रोज़ा, हज्ज ही को 'इबादत' कह दिया जाता हैं हालाँकि वास्तव में 'दीन' (धर्म) की कोई चीज़ भी 'इबादत' से अलग नही हैं।

'इबादत' केवल अल्लाह का हक़ है। अल्लाह के सिवा किसी दूसरे 'इबादत' करना 'शिर्क' है। शिर्क और अल्लाह के अलावा दूसरे की उपासना को प्राचीन ग्रन्थों में स्पष्ट रूप से ज़िना और व्यभिचार की संज्ञा दी गई है। कुरआन में कहा गया है : "जो कोई अल्लाह के साथ 'शिर्क' करे तो मानो वह आकाश से गिर पड़ा फिर चाहे उसको पक्षी उचक ले जाएं या हवा उसे दूरवर्ती स्थान पर (ले जा कर) फेंक दे।" —सूरा अल-हज्ज आयत ३१

'इस्लाम' जीवन की पूर्णता का एक मात्र मार्ग है। इसी के द्वारा प्रकृति-अभिप्राय तक हमारी पहुँच हो सकती है। अल्लाह् की दयालुता के चिह्न धरती से आकाश तक फैले हुए हैं। अल्लाह् अपने अनुग्रह और दयालुता का विस्तार हमारे संकल्प और अधिकार-क्षेत्र तक करना चाहता है। वह हमें जीवन के नियमों की शिक्षा देता है। हमारे जीवन को निर्मलता एव उच्चता प्रदान करना चाहता है। अल्लाह् के सिवा कोई नही जिस से इस विशेष अनुग्रह की आशा की जाए· "उन से कहो कि क्या उनमें जिन्हे तुम अल्लाह् के साथ शरीक ठहराते हो कोई ऐसा भी है जो हक की ओर मार्ग दिखा सके ? कहो हक की ओर तो अल्लाह् ही मार्ग दिखा सकता है।" —कुरआन सूरा यूनुस आयत ३५

अल्लाह् के आज्ञापालन और 'इबादत' के बिना मानव-जीवन का पूर्ण होना सम्भव नही है। अल्लाह् की बन्दगी और 'इबादत' के बिना जीवन वास्तविक अभिप्राय एव आशय से वंचित ही रह जाता है।

नमाज़

मनुष्य अल्लाह् का वन्दा और दास है। अल्लाह् ही उस का सृष्टिकर्त्ता, 'रब' और 'इलाह्' (पूज्य) है। अल्लाह् को अपना 'रब' पूज्य मानने का अर्थ यह होता है कि वन्दा अपना जीवन अल्लाह् के आज्ञा-पालन और वन्दगी में व्यतीत करे। उस के दिए हुए आदेश को अपने जीवन का कानून बनाए। उसी के आगे सिर झुकाए, उसी के आगे सजदा करे। उस के सिवा किसी की उपासना न करे। 'नमाज' वास्तव मे अल्लाह् की 'इबादत' और उस की उपासना का पूर्ण रूप है। 'नमाज़' मे बन्दा बार-बार अल्लाह् के सामने हाज़िर होता और उस के आगे अपनी दीनता, विनम्रता और दासता का प्रदर्शन करता है। उस के दिखाए हुए मार्ग पर चलने की प्रतिज्ञा करता है। उस से अपने गुनाहो और कोताहियों के लिए क्षमा चाहता है।

अल्लाह् और उस के, वन्दों के हक को पहचानना और उन्हे अदा करना यही धर्म का साराश है। नमाज़ और 'जकात' इस्लाम के दो ऐसे मौलिक आधारास्तम्भ हैं जो इन दोनों हकों के रक्षक और मनुष्य को सीधे रास्ते पर कायम रखने वाले हैं। 'नमाज़' अपनी वास्तविकता की दृष्टि से एक चेतना सम्वन्धित कर्म है। 'नमाज़, वास्तव में भय और प्रेम और विनीति भाव के साथ अल्लाह् की ओर आकृष्ट होने और उस से निकट होने का नाम है। 'नमाज' में बन्दे को अल्लाह् से वार्तालाप का श्रेय प्राप्त होता है। नमाज हमारी चेतना की प्रथम देन है। 'नमाज' वास्तव में अपने दिल, जबान और शरीर के द्वारा अपने 'रब' के सामने अपनी बन्दगी, दासता और उस की बडाई और महानता का प्रदर्शन है। नमाज़ अल्लाह् की याद, उस के उपकारों के प्रति आभार प्रदर्शन, और आदि-सौन्दर्य की प्रशसा ('हम्द') और गुणगान ('तस्बीह') है। यह हृदय-वीणा की झंकार, विकल आत्मा की की पुकार और हमारे जीवन का सारांश है।

शाह वलीवुल्लाह ने 'नमाज' की वास्तविकता पर प्रकाश डालते
 लिखा है. "जानना चाहिए कि 'नमाज' मे तीन चीज़े मौलिक हैं।

दिल से अल्लाह् के लिए विनम्र और विनयशील होना, जबान से अल्लाह् को स्मरण करना और अपने शरीर से अल्लाह् की अधिक-से-अधिक प्रतिष्ठा करना। —हुज्जतुल्लाहुल बालिगा

अत्यन्त प्रेम जिस मे अधिक-से-अधिक विनम्रता एव विनयशीलता हो अल्लाह् के सिवा किसी के साथ जायज़ नही है। यह् केवल अल्लाह् का हक है कि मनुष्य अपने-आपको उस के आगे बिल्कुल झुका दे। और अपनी समस्त भावनाओं और आन्तरिक भावो को उस की सेवा मे प्रस्तुत कर दे। कभी-कभी नबी सल्ल० 'नमाज' मे रो पड़ते थे, आखों से आँसू बहने लगते थे। एक 'सहाबी' कहते है कि मैं ने नबी सल्ल० को देखा कि आप 'नमाज' मे है, आँखो से आँसू बह रहे है, रोते-रोते हिचकियाँ बँध गई हैं। ऐसा लगता था मानो चक्की चल रही है। या हाँडी उबल रही है[1]।

नमाज़ एक विश्व व्यापी वास्तविकता है। 'नमाज' न केवल मनुष्य की बल्कि समस्त सृष्टि की प्रकृति एव स्वभाव है। 'नमाज़' के बिना किसी चीज के अस्तित्व और उस के बाकी रहने की कल्पना नही की जा सकती। कुरआन का बयान है कि सम्पूर्ण विश्व अल्लाह् को 'तस्बीह्' (गुणगान) मे लगा हुआ है क्या तुम ने नही देखा कि आकाशो और धरती मे जो भी है अल्लाह् को 'तस्बीह्' करता है, पख फैलाए पक्षी भी (उस की 'तस्बीह्' करते है)। हर एक अपनी 'नमाज़' और 'तस्बीह्' से परिचित है। और अल्लाह् जानता है जो-कुछ वे करते है। —अल-नूर आयत ४१

'कुरआन' मे 'नमाज़' के लिए 'सलात' शब्द प्रयुक्त हुआ है। अरबी में 'सलात' का अर्थ है किसी चीज की ओर बढना और उसमे प्रवेश करना। 'सलात' मे अत्यन्त सामीप्य का अर्थ पाया जाता है। 'नमाज़' पूर्ण अभिरूचि के साथ अल्लाह् की ओर आकृष्ट होने का प्रिय कर्म है। अल्लाह् की ओर मन का झुकाव ही 'नमाज' की वास्तविक आत्मा है। इसी को अरबी मे 'इबादत' कहा जाता है। इबादत का अर्थ है सारे दिल से अल्लाह् से प्रेम करना और उसकी ओर ध्यान देना। अल्लाह् के लिए एक स्वाभाविक प्यास और अभिलाषा प्रत्येक हृदय में पाई जाती है। मनुष्य जिस प्रकार रोजी प्राप्त करने में अल्लाह् की कृपा का मुहताज है उस से कही अधिक वास्तविक शान्ति और परितोष के

1. तिरमिज़ी, अबू दाऊद।

लिए उसे अल्लाह् की 'इबादत' और उस की उपासना की आवश्यकता है। 'नमाज' बन्दा और अल्लाह् के बीच सम्बन्ध एव सम्पर्क स्थापित करने का वास्तविक साधन है। 'नमाज' के माध्यम से मनुष्य को अल्लाह् की सेवा में पहूँच प्राप्त होती है। और उस की अन्तिम अभिलाषा पूरी होती है।'नमाज'मेंउसे इस का अवसर मिलता है कि वह अपने सूक्ष्मतम एव पवित्रम आंतरिक भावों को अल्लाह् की सेवा में प्रस्तुत करे और उस से उस की कृपाओं का इच्छुक हो । नबी सल्ल० कहते हैं · "मेरी आँख की ठण्ढक 'नमाज' में है" । 'नमाज से लगाव इस बात की पहिचान है कि बन्दे ने अल्लाह् को अपनी सारी आशाओं और कामनाओं का केन्द्र बना लिया। ऐसा व्यक्ति अल्लाह् का समीपवर्ती होता है। अतएव ऐसे व्यक्ति को जिस का मन मस्जिद से निकलने के बाद भी मस्जिद में लगा रहता है इस बात की शुभ सूचना दी गई है कि अल्लाह् उसे छाया में जगह् देगा।

अपने जीवन मे 'नमाज' को सम्मिलित करना वास्तव में अल्लाह् को अपना सरक्षक बनाना है। नबी सल्ल० कहते हैं . "जिस ने जान-बूझ कर नमाज' छोड़ दी, अल्लाह् उस की रक्षा से हाथ उठा लेता है ।" जो अल्लाह् के सरक्षण से वचित हो जाए उसे विनाशता और तबाही से कौन बचा सकता है। 'नमाज' अपने महत्व के कारण किसी समय भी छोड़ी नही जा सकती यदि कोई खड़ा हो कर 'नमाज' नही अदा कर सकता तो बैठ कर अदा करे और यदि यह भी सम्भव न हो तो लेट कर ही अदा करे। यदि मुँह से न बोल सके तो सकेतों से ही अदा करे[1] । और यदि विवशता के कारण रुक कर अदा न कर सकता हो, तो चलते हुए अदा करे[2] और यदि अत्यन्त भय की दशा में सवारी पर है, तो जिस तरफ मौका हो उसी तरफ अदा करे[3]।

फिर 'नमाज' को उन्ही प्राचीन और स्वाभाविक रीति के साथ अदा करने का आदेश है जो हजरत इबराहीम अ० के समय से चली आ रही हैं । इनसाइकलोपीडिया के संकलन कर्त्ताओ ने भी इसे स्वीकार किया है। वे लिखते हैं · "इस्लामी 'नमाज़' अपनी तरकीब में बडी हद तक 'यहूदियों' और 'ईसाइयों' की 'नमाज' के अनुरूप है ।"

१. दारकुतनी ।

२ अबू दाऊद अध्याय 'सलातुत तालिब' ।

३ बुखारी ।

'नमाज' पांच बार अदा करनी अनिवार्य है। इस तरह हमारे पूरे समय को 'नमाज़' मे घेर दिया गया है ताकि हम अल्लाह से किसी समय भी गाफिल न हो। और हमारा सम्पूर्ण जीवन अल्लाह की याद बन जाये। कुरआन मे कहा गया है "मेरी याद के लिए 'नमाज' कायम करो"—ता०हा० १४

फिर 'कुरआन' को भी 'नमाज' का एक आवश्यक अंग ठहरा दिया गया है। सूरा अल-फातिहा 'नमाज़' की प्रत्येक 'रकअत' मे पढी जाती है। सूरा अल-फातिहा पूरे कुरआन का साराश है। 'नमाज़' मे कुरआन को सम्मिलित करके कुरआन की हिकमत (तत्वदर्शिता), प्रकाश और उसकी बरकतो को भी 'नमाज' में समेट लिया गया है। कुरआन के आदेशो की याद-दिहानी भी 'नमाज' में होती रहती है।

नमाज 'कियामत' में अल्लाह की सेवा मे खडे होने का चित्र भी है। जब बन्दा 'नमाज' में खडा होता है, तो वह उस दिन को याद करता है जब वह 'आखिरत' मे अल्लाह के सामने हाजिर होगा। 'नमाज' मे हम अल्लाह की ओर लपकते और पक्तिबद्ध होकर उसकी प्रशंसा करते हैं। 'हश्र' के दिन भी हमारा यही हाल होगा। उस दिन अल्लाह हमें पुकारेगा तो हम उसकी प्रशंसा करते हुए कब्रों मे निकल कर उसकी ओर दौड पड़ेंगे[1]।

सत्य-मार्ग मे असत्य से लडना और इसके लिए हर समय तैयार रहना मुसलमान का कर्तव्य है। 'नमाज़' इस तैयारी का नक्शा भी पेश करती है। 'रिवायत' मे आता है कि अल्लाह को दो पक्तियाँ बहुत प्रिय है। एक 'नमाज़' की पक्ति और दूसरे 'जिहाद' के क्षेत्र में 'मुजाहिदों' की पक्ति। 'नमाज' और 'जिहाद' मे कुछ पहलुओं मे अनुरूपता भी पाई जाती है। अबू दाऊद की 'हदीस' है "नबी सल्ल० और आपके सेना-दल जब पहाडी पर चढ़ते, तो 'तकबीर' (अल्लाह की बड़ाई का वर्णन) और जब नीचे उतरते तो 'तस्बीह' (अल्लाह का गुणगान और उसकी महानता का वर्णन) करते थे, 'नमाज' इसी तरीके पर कायम की गई।"

'नमाज़' में नमाज़ियों का पंक्तिबद्ध होना, एक इमाम का अनुसरण, एक आवाज़ पर समस्त पंक्ति की हरकत से [illegible] [illegible] [illegible] सामाजिक जीवन में [illegible] [illegible] [illegible] 'नमाज़'

1 [illegible]

से जहाँ उस सम्बन्ध का प्रदर्शन होता है जो वन्दे और अल्लाह के बीच पाया जाता है वही 'नमाज' से अल्लाह के वन्दों के पारस्परिक सम्बन्ध और उनकी सामाजिकता पर भी प्रकाश पडता है। यह सामाजिकता ही की माँग थी कि हमें 'जमाअत' से (सामूहिक रूप से) 'नमाज़' पढ़ने का आदेश दिया गया। 'नमाज' हमें अल्लाह से ही नही- मिलाती वल्कि वह हमारे आपस के सम्बन्धो को भी ठीक रखती है और हमारे दिलो को भी जोड़ती है। लेकिन शर्त्त यह है कि हमारी 'नमाज' वास्तव में नमाज़ हो और वह अपने बाह्य और अतरिक प्रत्येक पहलू से ठीक हो। मुस्लिम में है: "अल्लाह के वन्दो! ('नमाज' मे) अपनी सफों (पक्तियों) को सोधा और ठीक रक्खो अन्यथा अल्लाह तुम्हारे रुख़ को एक दूसरे के विरुद्ध कर देगा।" —मुस्लिम

'नमाज' इस्लाम की समस्त घारणाओ को जाग्रत करती है जिन पर 'ईमान' लाए विना आत्मा की शुद्धता, आचरण की पवित्रता और व्यावहारिक जीवन का सुधार सम्भव नही है। धैर्य्य, अल्लाह पर भरोसा और शुद्धता और आत्मा की पवित्रता आदि नैतिक गुणों की प्राप्ति का उत्तम साधन 'नमाज़' है। 'नमाज़' में मनुष्य को पुण्यवान और धर्म-परायण बनाने की अपार शक्ति मौजूद है। 'नमाज़' हमें साहसी और उदार बनाती है। और एक पवित्रतम और आनन्दमय जीवन का हमें मार्ग दिखाती है। अल्लाह कहता है· "निस्सन्देह नमाज अश्लीलता और बुराई से रोकती है।" —अल-अनकबूत आयत ४५

नमाज वास्तव मे धर्म का एक ऐसा शीर्षक है जिसमें अत्यन्त व्यापकता पाई जाती है। नमाज मुस्लिम-जीवन आदि और अन्त सब कुछ है। नमाज मुस्लिम की नैतिक, आध्यात्मिक, और वास्तविक जीवन का प्रतीक है। नमाज की इसी मौलिक विशेषता के कारण कुरआन कभी अच्छे कर्मो मे केवल नमाज का नाम लेने को काफो समझता है। एक जगह कहा गया है "जो लोग किताब को मजबूती से पकडे हुए हैं और 'नमाज़' कायम कर रक्खी है। निश्चय ही हम ऐसे सुधार करने वालो के कर्म-फल को नष्ट नही करेंगे।" —अल-आराफ आयत १७०

एक जगह अल्लाह के विरोधी और सरकश का ज़िक्र इन शब्दों में किया गया है "इस ने न तो (अल्लाह और रसूल की) तस्दीक की और न 'नमाज' अदा की बल्कि उसने झुठलाया और मुख मोडा"।

—अल-कियमा आयत ३१-३२

नमाज की इसी मौलिक विशेषता के कारण नबी सल्ल० कहते हैं :
"दीन (धर्म) में नमाज का वही स्थान है जो शरीर में सिर का है।"

—अल-मोजमुस्सगीर

हजरत अबू मूसा अशअरी रजि० कहते है कि एक व्यक्ति को नबी सल्ल० ने 'नमाज़' पढते देखा जो न पूरा रुकू करता था और न पूरा 'सजदा' करता था। उसकी जल्द बाजी को देखकर आपने कहा यदि यह व्यक्ति इसी हालत में मर गया और अपनी 'नमाज' दुरुस्त न की तो मुहम्मद के पन्थ के अतिरिक्त किसी और पन्थ पर उसका अन्त होगा।

'नमाज़' के इसी महत्व के कारण हजरत उमर रजि० ने अपने गौरनरों को लिखा था "तुम्हारे समस्त कर्मों में सब से बढकर महत्व मेरी दृष्टि में 'नमाज' का है। जिस किसी ने इसकी रक्षा की और निगहबानी में लगा रहा उसने पूरे धर्म की रक्षा की और जिसने 'नमाज' को खो दिया वह दूसरी सारी चीज़ों को और अधिक खोने वाला होगा।"

सारांश यह कि 'नमाज' को मुस्लिम-जीवन मे मौलिक स्थान, प्राप्त है। 'नमाज' से केवल यही नही कि हमारे जीवन का सुधार होता है बल्कि 'नमाज़' हमे वास्तविक जीवन से परिचित कराती और अल्लाह से हमारा दृढ सम्बन्ध स्थापित करती है।

———

'नमाज़' की वास्तविकता और महत्व

عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ رض قَالَ: سَمِعْتُ رَسُولَ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ يَقُولُ: أَرَأَيْتُمْ لَوْ أَنَّ نَهَرًا بِبَابِ أَحَدِكُمْ يَغْتَسِلُ فِيهِ كُلَّ يَوْمٍ خَمْسَ مَرَّاتٍ هَلْ يَبْقَى مِنْ دَرَنِهِ شَيْءٌ؟ قَالُوا: لَا يَبْقَى مِنْ دَرَنِهِ شَيْءٌ، قَالَ: فَكَذٰلِكَ مَثَلُ الصَّلَوَاتِ الْخَمْسِ يَمْحُو اللهُ بِهِنَّ الْخَطَايَا ——— بخاری، مسلم، ترمذی، نسائی، ابن ماجه

१. हज़रत अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि मैं ने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना तुम्हारा क्या विचार है यदि तुम में से किसी के द्वार पर दरिया हो और वह प्रति दिन पाँच बार नहाए, तो क्या (उस के शरीर पर) कुछ भी मैल-कुचैल बाकी रहेगा ? ('सहाबा' ने) कहा : कुछ भी मैल बाकी न रहेगा। आप ने कहा . पाँचो नमाज़ों की यही मिसाल है। अल्लाह उन के द्वारा गुनाहों को मिटा देता है[1]।

—बुखारी, मुस्लिम, तिरमिज़ी, नसई, इब्नमाजा

२. अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने एक दिन 'नमाज़' के बारे में बात-चीत करते हुये कहा . जो व्यक्ति उस की रक्षा करता है तो वह उस के लिए 'कियामत' के दिन प्रकाश, प्रणाम और मुक्ति होगी और जो व्यक्ति उस की रक्षा न करे तो वह उस के लिए न प्रकाश होगी, न प्रमाण और न मुक्ति होगी और

---

१. अर्थात् जिस प्रकार पाँच बार नहाने से शरीर पर मैल बाकी नहीं रह सकती उसी प्रकार पाँचो वक्त की 'नमाज़' अदा करने से गुनाह बाकी नहीं रह सकते, अल्लाह उन्हे क्षमा कर देता है। गुनाहो और खताओं के बुरे प्रभाव दिल पर पड़ते हैं ये बुरे प्रभाव मिट जाते हैं। लेकिन शर्त्त यह है कि 'नमाज़' वास्तव मे नमाज़' हो, केवल दिखाने की 'नमाज़' न हो बल्कि पूर्णत विधिवत् रूप से हृदय के साथ अदा की गई हो। अल्लाह का सामीप्य और इस सामीप्य की जो आतरिक स्थिति मनुष्य को 'नमाज़' मे प्राप्त होती है उस की मौजूदगी मे गुनाह कैसे बाकी रह सकता है।

कुरआन मे इस वास्विकता पर इन शब्दो मे प्रकाश डाला गया है · "दिन के दोनो किनारो पर और रात के कुछ हिस्सो मे 'नमाज़' कायम किया करो, निस्सन्देह नेकियाँ बुराइयों को दूर कर देती हैं यह नसीहत है याद रखने वालो के लिए"। सूरा हूद आयत १०।

वह 'कियामत' के दिन कारून, फिरऔन, हामान और उबई बिन ख़ल्फ (जैसे अल्लाह के अवज्ञाकारी शत्रुओं) के साथ होगा [२]।

—अहमद, दारमी, बैहकी-शोबुलईमान

३. हज़रत अनस रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : स्त्रियाँ और सुगन्ध मेरे लिए प्रिय बनाई गई हैं और मेरी आँख की ठढक 'नमाज' में रक्खी गई है [३]।

—नसई

४ हज़रत आइशा रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा : 'फज्र' की दो 'रकअते' (सुन्नत) दुनिया और दुनिया की हर चीज़से उत्तम हैं [४]।

—मुस्लिम

२. मतलब यह है कि जब कोई व्यक्ति ठीक तौर से 'नमाज़' अदा करता है, 'नमाज़' मे तनिक भी असावधानी नही दिखाता. अपनी 'नमाज़' को उस के वाह्य और आतरिक दोनो ही दृष्टि से सँवारने की कोशिश करता है, तो उसकी यह 'नमाज' ससार में उस के लिए प्रकाश, दलील और प्रमाण सिद्ध होती है और 'आखिरत' मे भी उस के काम आएगी। ऐसी 'नमाज़' दुनिया मे आदमी को उन खराबियो से बचाती है जो उसे सीधे मार्ग से भटकाने वाली और उसके लिए विनाशक हैं। 'आखिरत' मे भी वह उसके द्वारा मुक्ति और अल्लाह की दयालुता का अधिकारी होगा। 'नमाज़' सर्वथा मुक्ति और प्रकाश है। जो लोग नमाज़ से गाफिल हैं वे वास्तव मे अन्धकार मे हैं। उनके न मस्तिष्क को प्रकाश प्राप्त है जिसे 'बुरहान' (कसौटी, प्रमाण) कहते हैं और न उनके हृदय को ही प्रकाश प्राप्त है। जब ससार मे उनकी यह हालत है, तो 'आखिरत' मे उनके लिए किसी भलाई की आशा कैसे की जा सकती है।

३ मतलब यह है कि दुनिया की नेमतो मे जहाँ पवित्र आचरण की स्त्री और सुगन्ध मुझे बहुत प्रिय है वही सब से बडी नेमत मेरे लिए 'नमाज़' है। नमाज़ मेरे लिए हृदय-शान्ति और परितोष की सामग्री है। मनुष्य का सम्बन्ध अपने 'रब' से जितना अधिक होगा उतना ही अधिक उसे नमाज़ मे आनन्द और शान्ति की प्राप्ति होगी।

४. मनुष्य को केवल रोटी ही नही चाहिए, उसे मानसिक शान्ति और आत्मिक आनन्द भी अभीष्ट है। और यह चीज वह 'नमाज़' द्वारा प्राप्त कर सकता है। यदि हृदय-शान्ति और मानसिक परितोष ससार की सारी नेमतो से बढकर है तो निश्चय ही नमाज़ की कुछ 'रकअतें' दुनिया की सारी नेमतो से ज्यादा क़ीमती हैं। कुरआन मे कहा गया है : "जान रक्खो ! अल्लाह की याद से

५. सालिम बिन अबी जअद कहते हैं कि मैं ने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना हे बिलाल ! 'नमाज' कायम करो ताकि हम उस से आनन्द प्राप्त करें । —अबूदाऊद

६ इब्न उमर रजि० कहते हे कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · 'नमाज' पढने वाला (नमाज़ में) अपने 'रब' से सरगोशी करता है, इस लिए उसे यह देखना चाहिए कि वह अपने 'रब' से क्या सरगोशी कर रहा है ? तुम में से कोई इस तरह ऊँचे स्वर से 'कुरआन' न पढे कि दूसरों को असुविधा हो[५] —अहमद

७ इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अपने घरो मे भी अपनी 'नमाजो में से कुछ हिस्सा पढा करो और उन को क़ब्रिस्तान न बनाओ[६]। —अबुदाऊद

ही दिलो को इतमीनान हासिल होता हैं" । नमाज़ अल्लाह की याद ही का दूसरा नाम है ।

५. बन्दा 'नमाज़' मे अपने 'रब' से बात-चीत करता है इसलिए उसे ज्यादा-से-ज्यादा अपने 'रब' की ओर ध्यान देना चाहिए । उसे इसका ज्ञान होना चाहिए कि वह अपने 'रब' से क्या कह रहा है ? यह हालत तो अत्यन्त अप्रिय है कि मनुष्य देखने मे तो 'नमाज़' मे हो लेकिन वास्तव में वह कही और ही हो। नमाज़ पढने वालो का पूरा ख्याल रखना भी आवश्यक है। ऐसी हालत में जबकि नमाज हो रही हो ऊँचे स्वर मे कुरआन पढना सही न होगा क्योकि इस से नमाज पढने वाले का मन बँटेगा वह एकाग्रता के साथ अपनी नमाज़ न अदा कर सकेगा। एक 'हदीस' मे है कि आपने कहा : "नमाज़ मे व्यस्तता होती है (बुखारी, मुस्लिम) । मतलब यह है कि नमाज़ मे आदमी अल्लाह की याद मे लगा होता है ऐसी हालत मे उसे किसी व्यक्ति से बात-चीत नहीं करनी चाहिए और न किसी की बातों का उत्तर देना चाहिए उसे एकाग्रचित होकर नमाज़ अदा करनी चाहिए ।

६. अर्थात् अपने घरो मे भी 'सुन्नत' और 'नफ़ल' नमाज पढा करो। घरो की आबादी और शोभा वास्तव मे अल्लाह के स्मरण और उसकी याद ही से है। और नमाज अल्लाह की याद का पूर्ण रूप है। एक 'हदीस' मे है जिसके रावी हज़रत जाबिर रज़ि हैं कि आपने कहा · जब तुम मे से कोई व्यक्ति मस्जिद मे नमाज़ अदा करे तो उसे चाहिए कि अपनी नमाज़ का कुछ हिस्सा अपने घर के लिए रख ले। इसलिए कि अल्लाह उसकी 'नमाज़' के द्वारा उसके

८. हजरत आइशा रजि० कहती है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० जब भी इशा की 'नमाज' पढ कर मेरे पास आए, तो आप ने चार या छ रकअते पढी[७] । —अबूदाऊद

९ हजरत अबू उमामा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह बन्दे के किसी कर्म मे भी बन्दे की ओर उतना अधिक ध्यान नही देता जितना कि दो रकअतों पर जिन को बन्दा अदा करता है। नेकी बन्दे के सिर पर छिडकी जाती है जब तक वह 'नमाज' में रहता है। और बन्दा अल्लाह का सामीप्य जितना उस चीज से प्राप्त करता है जो अल्लाह से निकली हुई है (अर्थात् कुरआन से) किसी दूसरी चीज से नही[८] । —अहमद, तिरमिज़ी

घर मे भलाई प्रदान करता हैं ।

इसमे सन्देह नही कि 'नमाज' जीवन की वास्तविक सम्पत्ति और घर की शोभा है। जिस घर मे नमाज़ नही वह घर भलाई और बरकत से खाली है।

७ इस 'हदीस' से जहाँ यह मालूम होता है कि आप नमाज़ की सुन्नते घर पर अदा करते थे वही यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि 'नमाज' आपके जीवन मे पूर्ण रूप से प्रवेश कर चुकी थी। मस्जिद तक ही आप अल्लाह के उपासक न थे वल्कि अपने घर, और अपने घर वालो मे भी आप अल्लाह को याद करते और उसकी सेवा मे 'सजदे' किया करते थे। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे और जीवन के प्रत्येक मोड पर 'नमाज़' आपके साथ रहती थी। न नमाज़ आपके जीवन से अलग हो सकती थी और न आपका जीवन नमाज से वंचित रह सकता था। नमाज़ जीवन की वास्तविक सम्पत्ति है।

८ अर्थात् कुरआन के द्वारा जितना बन्दा अपने 'रब' का सामीप्य प्राप्त कर सकता है किसी दूसरी चीज के द्वारा नही प्राप्त कर सकता। और कुरआन 'नमाज़' का विशेष और महत्वपूर्ण भाग है।

'नमाज' मे समय लगाना समय को नष्ट करना नही है बल्कि यह तो अपने समय को अत्यन्त उपयोगी और लाभदायक बनाना है। आदमी जब तक 'नमाज़' मे होता है उस पर नेकी छिडकी जाती है। नमाज सत्य की परिचायक है। वह मनुष्य को नेक और सुकर्मी बनाती है। वह उसके जीवन को बुराइयो से पाक कर के अल्लाह के रंग मे रंग देती है। यह एक ऐसा बपतिस्मा (*Baptism*) है जिसके समान कोई बपतिस्मा नही हो सकता।

१०. रबीआ बिन कअ्‌ब असलमी रजि० से उल्लिखित है, वे कहते हैं कि मैं रात को अल्लाह के रसूल सल्ल० की सेवा में रहता था। मैं आप के 'वज़ू' का पानी और जरूरत की चीज़े लाता था। आप ने कहा मुझ से माँगों। मैं ने कहा : मैं तो आप से यह माँगता हूँ कि मुझे 'जन्नत' में आप का साहचर्य प्राप्त हो। आप ने कहा इस के सिवा कुछ नही चाहते ? मैं ने कहा बस यही (आप का साथ मुझे चाहिए)। आप ने कहा : अच्छा तो अपने मामले में 'सजदों' की अधिकता के द्वारा मेरी सहायता करो[९]। —मुस्लिम, अबूदाऊद

११. शुबरा बिन माबद कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . जब लड़का सात वर्ष का हो जाये तो उसे 'नमाज़' का आदेश दो और जब दस वर्ष का हो जाए, तो 'नमाज़' के लिए उसे मारो[१०]। —अबूदाऊद

१२. हज़रत जाबिर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा आदमी और 'कुफ़्' के बीच 'नमाज' का छोड़ देना है[११]। —अहमद, मुस्लिम

---

९. अर्थात् यदि यह चाहते हो कि 'जन्नत' मे तुम्हे मेरा साहचर्य प्राप्त हो तो अल्लाह को आगे अधिक-से-अधिक 'सजदे' करो। इसी तरह तुम इसके अधिकारी हो सकते हो कि तुम्हे मेरा साहचर्य प्राप्त हो। यदि ऐसा करोगे तो फिर तुम्हे मेरा साहचर्य प्राप्त करने मे कोई कठिनाई न होगी। यह 'हदीस' बताती है कि 'आखिरत' मे नबी सल्ल० का विशेष सामीप्य उन लोगों को प्राप्त होगा जिनके सिर अधिकतर अल्लाह के आगे 'सजदो' मे होते है और जो 'नमाज़' का विशेष ध्यान रखते हैं। वह विशेष कर्म जो इस उच्च स्थान तक पहुँचाने मे सहायक होता है वह अल्लाह की सेवा मे 'सजदो' की अधिकता है। सजदो की अधिकता स्पष्ट निशानी होती है कि बन्दे को अल्लाह से गहरा सम्पर्क है और अल्लाह के रसूल के अनुसरण का पूरा ध्यान है।

१०. अर्थात् यदि 'नमाज' नही पढता तो इसके लिए तुम उसे सज़ा भी दे सकते हो।

११ अर्थात् 'इस्लाम' से 'कुफ' तक पहुँचने के लिए बीच मे एक दर्जा है और वह है नमाज का छोड देना। यदि किसी ने नमाज़ छोड़ दी तो मानो वह इस्लाम और 'कुफ़्' के बीच लटक रहा है। एक कदम यदि आगे बढे तो 'कुफ' की सीमा मे पहुँच जाए। 'नमाज़ 'इस्लाम' का विशेष चिह्न है। उसे छोडने का

१३. इब्न उमर रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिस व्यक्ति की अस्र की 'नमाज' जाती रही, तो मानो उस के लोग और उस का माल सब नष्ट हो गया[12] ।

—बुखारी, मुस्लिम

१४. हजरत जुन्दुब बिन सुफयान रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो व्यक्ति सुबह की 'नमाज़' पढ़ता है वह अल्लाह के ज़िम्मे और उस के सरक्षण में होता है, तो हे आदम के बेटे ! देख अल्लाह कही तुझ से अपने सरक्षण के प्रति कोई पूछ-गच्छ न करे[13] ।

—मुस्लिम

अर्थ यह है कि मनुष्य इस्लाम की रीति को त्याग कर 'कुफ़्र' की नीति अपना रहा है ।

१२. कारबार और दूसरे कामो के कारण अस्र की 'नमाज़' के कज़ा होने का अधिक भय रहता है इस लिए आप ने इस के लिए विशेष रूप से सचेत किया, यो तो हर 'नमाज़' का अपना महत्व है । इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि 'नमाज' का कज़ा होना कोई साधारण बात नही है । 'नमाज़' यदि जाती रही तो मानो मनुष्य लुट गया । जिस प्रकार परिवार धन, दौलत सम्पत्ति आदि के विनष्ट होने से आदमी का घर उजड़ जाता है ठीक उसी तरह 'नमाज़ के बिना मानव का जीवन बिल्कुल उजाड है । भले ही देखने मे वह आनन्द और सुख से जीवन क्यो न व्यतीत कर रहा हो । इसे एक मिसाल से समझिए । एक व्यक्ति के पास माल-दौलत भी है, कोठी और बाग भी उसके पास हैं । आप कल्पना कीजिए यदि उसका अकलौता बेटा मर जाए तो उसका क्या हाल होगा । वह समझेगा कि अब उससे पास कुछ भी नही रहा । उसे अपना घर बिल्कुल उजाड मालूम होगा । उसकी सम्पत्ति, उसका बाग और मकान सब-कुछ मौजूद होगा लेकिन उसकी दृष्टि मे इन चीज़ो का कुछ भी मूल्य न होगा । वह सोचेगा कि जिसके लिए ये सारे सामान थे जब वही नही रहा, तो ये सब व्यर्थ है । ठीक इसी तरह 'नमाज़' जो मुस्लिम के जीवन की प्राप्ति और उसकी सुख-सामग्री है यदि वही न रहे, तो उसके जीवन मे क्या रह जाएगा । जब कोई अल्लाह की सेवा मे उपस्थित होने से वचित रहा तो मानो वह हर चीज से वचित रहा ।

१३ मतलब यह है कि जब मनुष्य फज्र की 'नमाज' अदा करता है, तो मानो वह अपने को अल्लाह के सरक्षण मे दे देता है । लेकिन यदि कोई व्यक्ति 'नमाज़'

१५. अबू दरदा रजि० कहते है कि मेरे मित्र (अल्लाह के रसूल ल्ल०) ने मुझे यह वसीयत की कि अल्लाह के साथ किसी चीज को रीक न करना भले ही तुम्हारे टुकडे-टुकडे कर दिए जाएँ तुम्हे जला दया जाए। और न जानते-बूझते फ़र्ज नमाज छोडना क्योकि जो व्यक्ति जानते-बूझते 'नमाज' छोड बैठता है अल्लाह उस की रक्षा से हाथ उठा लेता है। और शराब न पीना क्योंकि वह समस्त बुराइयों का द्वार ोलने वाली है। —इब्नमाजा

१६ हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते है कि मैं ने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना 'कियामत' के दिन बन्दे के जिस कर्म का सब से पहले हिसाब होगा वह उस की 'नमाज' है। तो यदि 'नमाज' ठीक अदा की गई हैं, तो सफलता और मुक्ति प्राप्त हो जाएगी और यदि ठीक अदा नही की गई है, तो असफलता और घाटा है। यदि 'फर्ज' नमाज में कोई कमी होगी तो अल्लाह कहेगा देखो मेरे बन्दे के पास 'नफ्लें' है ? फर्ज में जो कमी हो उसे 'नफलों से पूरा करो। फिर इस प्रकार उसके दूसरे सारे कर्मों का हिसाब होगा[१४]। —अबू दाऊद, अहमद

१७ हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिस ने 'अस्र' की 'नमाज' छोड दी, उस का किया-धरा

त्याग देता और उस प्रतिज्ञा को भुला देता है जो उसके और अल्लाह के बीच नमाज के द्वारा वजूद मे आती है, तो वह अल्लाह के सरक्षण और रक्षा से वंचित हो जाता है। ऐसे व्यक्ति को जो अल्लाह की बडाई और महानता का आदर नही करता न अल्लाह की सहायता मिलती है और न उसके कामो मे अल्लाह का सहयोग और समर्थन प्राप्त होता है। अल्लाह उसे उसकी अवज्ञा का अवश्य दण्ड देगा।

१४ इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि मुस्लिम के जीवन मे 'नमाज़' को मौलिक महत्व प्राप्त है। इसलिए सब से पहले 'कियामत' मे बन्दे की 'नमाज़' देखी जाएगी। यदि किसी के पास नमाज़ नही है तो इसका अर्थ यह है कि उसने वास्तव मे उस पवित्र और अभीष्ट जीवन को अपनाने का फैसला ही नही किया जिसका प्रतीक 'नमाज़' होती है। इस 'हदीस' से यह भी मालूम होता हैं कि 'मोमिन' के जीवन मे 'नफ्लें' सुन्नतें आदि इबादतें फर्ज से भिन्न चीजें नही हुआ करती बल्कि नफ़्ल आदि से वास्तव मे फर्ज ही को पर्ण बनाना अभीष्ट होता है।

अकारथ हुआ[१५] । —बुखारी, नसई

१८. इब्न उमर रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : 'नमाज' का आरम्भिक समय अल्लाह की प्रसन्नता का है और अन्तिम समय अल्लाह की क्षमा का है[१६] । —तिरमिज़

१९. हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० कहते हैं कि मैं ने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि अल्लाह कहता है कि मेरे और मेरे बन्दे के बीच 'नमाज' आधी-आधी विभक्त है। आधी 'नमाज़' मेरे लिए और आधी मेरे बन्दे के लिए है। और मेरे बन्दे को वह मिलेगा जो वह माँगेगा । जब बन्दा कहता है : "प्रशसा अल्लाह के लिए है जो सारे संसार का रब है" तो प्रतापवान एव तेजोमय अल्लाह कहता है मेरे बन्दे ने मेरी प्रशसा की। और जब वह कहता है : "जो कृपाशील और दयावान् है", अल्लाह कहता है कि मेरे बन्दे ने मेरी सराहना की। और जब वह कहता है "उस दिन का मालिक है जब कर्मों का बदला दिया जाएगा" तो (अल्लाह) कहता है कि मेरे बन्दे ने मेरी बडाई और महानता का प्रदर्शन किया[१७] । और जब वह कहता है : "हम तेरी ही 'इबादत

---

१५. 'नमाज़' त्याग देने का अर्थ यह हुआ कि उसके समस्त कार्य और उसकी सारी कोशिशे व्यर्थ हो गई । उसका जीवन ही 'नमाज़' के बिना निरर्थक है ।

१६ आरम्भिक समय पर 'नमाज़' पढनी इस बात की पहिचान है कि बन्दे को 'नमाज़' से हार्दिक लगाव है। वह उसे अपने लिए बोझ नही समझता अन्तिम समय मे 'नमाज़' पढने से फर्ज़ तो अदा हो जाता है लेकिन उस मे वह विशेषता कैसे पैदा हो सकती है जो उसे आरम्भ समय मे पढने मे है। जब 'नमाज़' का वह समय आ जाए जिसे नबी सल्ल० ने उत्तम कहा है तो 'नमाज़' अदा कर लेनी चाहिए। उस समय अकारण नमाज़' को टालना इस बात की निशानी होगी कि नमाज़ से जैसा लगाव और प्रेम होना चाहिए था वह नहीं है।

१७ इस से मालूम हुआ कि 'आखिरत' और अल्लाह की उस अदालत का जो 'कियामत' मे कायम होगी, इन्कार करने वाले वास्तव मे अल्लाह की महानता का इन्कार करते हैं। यह अल्लाह की महानता के प्रतिकूल है कि वह एक ऐसा दिन न लाए जिसमे लोगो को उनके भले-बुरे कर्मों का बदला दिया जा सके।

करते हैं और तुझ से ही मदद माँगते है", तो वह कहता है यह मेरे और मेरे बन्दे के बीच (सम्मिलित) है और मेरे बन्दे को वह चीज मिलेगी जिस की उस नें प्रार्थना की। और जब वह कहता है हमे सीधा मार्ग दिखा, उन लोगों का मार्ग जिन पर तू नें कृपा की, उन का नही जिन पर तेरा प्रकोप हुआ और न गुमराहो का", तो कहता है कि यह मेरे बन्दे के लिए है और मेरे बन्दे को वह चीज प्राप्त होगी जिस की उस ने प्रार्थना की[१८]।

---

१८ इस 'हदीस' से साफ जाहिर है कि 'नमाज़' मे बन्दा अपने 'रब' से बातें करता है और उसका 'रब' उसकी समस्त बातो को सुनता और उसका उत्तर देता है। वह अपने बन्दे के प्रस्तुत किए हुए सूक्ष्मतम भावो और भावनाओ और प्रशसा एव गुणगान को स्वीकार करता और उसकी प्रार्थना को स्वीकृति प्रदान करता है। बन्दे नें यदि उस से सहायता की याचना की है और उस से धर्म के सीधे और स्वाभाविक मार्ग पर चलने मे मदद चाही है, तो वह वादा करता है है कि वह अपने बन्दे की अवश्य सहायता करेगा।

एक दूसरी 'हदीस' से भी मालूम होता है कि 'नमाज' मे बन्दा अपने 'रब' से बातें करता है। हज़रत इब्न उमर रज़ि० कहते है कि एक दिन नबी सल्ल० मस्जिद मे आए। देखा कि लोग उच्च स्वर मे 'नमाज' पढ रहे है। आपनें कहा : "नमाज़ पढने वाला अपने 'रब' से सरगोशी करता है। इसलिए उसे यह देखना चाहिए कि वह अपने 'रब' से क्या सरगोशी कर रहा है ? तुम मे से कोई इस तरह ऊँची आवाज़ मे कुरआन न पढे कि दूसरो को असुविधा हो।

—मुसनद अहमद

नमाज को संख्या और समय

عَنْ عَبْدِاللهِ بْنِ عَمْرٍو قَالَ: قَالَ رَسُوْلُ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ. وَقْتُ الظُّهْرِ
إِذَا زَالَتِ الشَّمْسُ وَكَانَ ظِلُّ الرَّجُلِ كَطُوْلِهِ مَالَمْ يَحْضُرِ الْعَصْرُ وَوَقْتُ
الْعَصْرِ مَالَمْ تَصْفَرَّ الشَّمْسُ وَوَقْتُ الصَّلٰوةِ الْمَغْرِبِ مَالَمْ يَغِبِ الشَّفَقُ
وَوَقْتُ صَلٰوةِ الْعِشَاءِ إِلٰى نِصْفِ اللَّيْلِ الْأَوْسَطِ وَوَقْتُ صَلٰوةِ الصُّبْحِ
مِنْ طُلُوْعِ الْفَجْرِ مَالَمْ تَطْلُعِ الشَّمْسُ ——— مسلم

१. हजरत अब्दुल्लाह विन अम्र रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . 'जुह्र' का समय वह है जवकि सूर्य ढल जाये और आदमी की छाया उसके कद के वरावर हो जव तक कि 'अस्र' का समय न आ जाए। और 'अस्र' का समय वह है (जो इसके वाद हो और उस समय तक) जव तक कि सूर्य पीला न हो जाए। और 'मगरिब' की नमाज का समय (उस समय तक रहता है) जव तक कि सान्ध्य अरुणिमा लुप्त न हो जाये। 'इशा' की नमाज का ससय आधी रात तक है और 'फज्र' की नमाज का समय अरुणोदय से लेकर सूर्य उदय होने तक है[1]।
—मुस्लिम

---

१ ज़ुह्र, अस्त्र, मगरिव, इशा और फज्र की पाँच समय की नमाज़ें हर मुसलमान के लिए अनिवार्य हैं। इस 'हदीस' मे उनके समय निश्चित किये गये हैं। कुरआन मे कहा गया है "निस्सन्देह 'नमाज़' ईमान वालो पर समय की पावन्दी के साथ अनिवार्य की गई है" —सूरा अननिसा आयत १०३।

नमाज़ के समय क्या हो ? क़ुरआन मे विभिन्न स्थानो पर इसका उल्लेख किया गया है। उदाहरणार्थ एक जगह कहा गया है "नमाज़ कायम करो जब सूर्य ढले रात के अँधेरे तक और फज्र के कुरआन को भी ज़रूरी ठहरा लो। निस्सन्देह 'फज्र' का कुरआन (पढना) साक्षात होता है।" —सूरा बनी इसराइल आयत ७८। सूर्य ढले से रात के अँधेरे तक मे चार वक्तो की नमाज़ें आ जाती हैं। सूर्य पहली वार दोपहर के बाद ढलता है वह 'ज़ुह्र' की नमाज़ का समय होता है। सूर्य का दूसरा ढलना पहाडो और ऊँचे टीलो आदि से होता है और 'अस्र' की नमाज़ का समय आरम्भ हो जाता है। फिर इसके पश्चात् सूर्य पृथ्वी की सतह से ढलता हुआ अस्त हो जाता है जो 'मगरिव' की नमाज़ का समय है। सूर्य का एक ढलना इसके बाद भी होता है

नमाज़ और शुद्धता

عَنْ أَبِي مَالِكٍ الْأَشْعَرِيِّ رض قَالَ. قَالَ رَسُولُ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ. الطُّهُورُ شَطْرُ الْإِيمَانِ، وَالْحَمْدُ لِلّٰهِ تَمْلَأُ الْمِيزَانَ، وَسُبْحَانَ اللهِ وَالْحَمْدُ لِلّٰهِ تَمْلَآنِ أَوْ تَمْلَأُ مَا بَيْنَ السَّمٰوٰتِ وَالْأَرْضِ وَالصَّلٰوةُ نُورٌ وَالصَّدَقَةُ بُرْهَانٌ وَالصَّبْرُ ضِيَاءٌ وَالْقُرْآنُ حُجَّةٌ لَكَ أَوْ عَلَيْكَ. كُلُّ النَّاسِ يَغْدُوا فَبَائِعٌ نَفْسَهُ فَمُعْتِقُهَا أَوْ مُوبِقُهَا ——— مسلم

१. अबू मालिक अशअरी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : स्वच्छता एवं पवित्रता 'ईमान' का अंश है[1] और "अलहम्दुलिल्लाह" मीज़ान को भर देता है और "सुबहानल्लाह" व

जबकि क्षितिज पर उसकी लालिमा और उसके चिह्न शेष नही रहते और बिल्कुल अन्धकार छा जाता है और 'इशा' की नमाज़ का समय शुरू हो जाता है। पाँचवी नमाज 'फज्र' की है जिसका समय पौ फटने से लेकर सूर्य निकलने तक है। इस 'नमाज' का ज़िक्र भी इस 'आयत' मे आ गया है।

नमाज के समय हमारी दुनिया मे जाहिर होने वाले महत्वपूर्ण परिवर्तनों और निशानियो की दृष्टि से नियुक्त किए गये है। ये निशानियाँ अल्लाह के सामर्थ्य और उसकी महानता को प्रदर्शित करती हैं। मुस्लिम भी इन निशानियों के जाहिर होने के समय अल्लाह के आगे 'सजदे' मे गिरकर अपने को विश्व की महान निशानियो के अनुरूप बनाता है।

१. अर्थात् ईमान के जहाँ और बहुत से तकाज़े हैं वही उसका एक तकाज़ा यह भी है कि मनुष्य अपने शरीर और वस्त्र को शुद्ध रक्खे। 'ईमान' केवल दिल मे रहने वाली चीज़ नही हैं, बल्कि मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन से 'ईमान' का प्रदर्शन होना चाहिए। एक 'हदीस' मे है कि आप (सल्ल०) ने कहा : "और स्वच्छता, आधा 'ईमान' है"—तिरमिज़ी। मतलब यह है कि यह 'ईमान' ही की माँग है कि मनुष्य का शरीर और मन दोनो स्वच्छ और पवित्र हो। जिस ने अपने शरीर और वस्त्र को स्वच्छ रक्खा उसने 'ईमान' ही के तकाज़े पूरे किए। पूरी स्वच्छता और पवित्रता तो उस समय प्राप्त हो सकती है जब कि हमारा वाह्य अस्तित्व और हमारा अन्तर दोनो ही स्वच्छ हो। जिसने अपने शरीर और वस्त्र को स्वच्छ रक्खा उसने 'ईमान ही की माँग को पूरा

"अलहम्दुलिल्लाह्" आकाशों और धरती के बीच जो कुछ है सब को

किया। पूर्ण स्वच्छता और पूर्ण 'ईमान' तो उस समय प्राप्त हो सकता है जबकि हमारा शरीर और मन दोनो ही स्वच्छ और शुद्ध हो। हम मे 'शिर्क' और 'कुफ्र' और किसी बुराई की गन्दगी न हो बल्कि उसमे प्रेम और मन की शुद्धता हो। अल्लाह् की महानता और बडाई का एहसास हो। उसके बन्दो के लिए सहानुभूति, करुणा और वेदना हो।

'दीन' (धर्म) और 'शरीअत' मे स्वच्छता और पवित्रता का बडा महत्व है। केवल यही नही कि 'नमाज़', कुरआन का पढना और 'काबा' के 'तवाफ' के लिए ही स्वच्छ रहना आवश्यक है वल्कि स्वच्छता स्वय धार्मिक दृष्टि से अभीष्ट है। कूरआन मे कहा गया है "निस्सन्देह अल्लाह् 'तौबा' करने वालो से प्रेम करता है और उन लोगो से प्रेम करता है जो पाक-साफ रहने वाले हैं"—सूरा अल-बकरा आयत २२२।

इस 'आयत' से मालूम होता है कि जिस प्रकार स्वच्छता का ध्यान रखने से मनुष्य का शरीर और वस्त्र दोनो शुद्ध और स्वच्छ रहते है उसी प्रकार 'तौबा' और अल्लाह् की ओर पलटने से मनुष्य के हृदय और उसकी आत्मा को निर्मलता प्राप्त होती है। और वह गुनाह की मलिनता और उसके बुरे प्रभावो से छुटकारा पा लेता है। 'रिवायतो' मे 'वज़ू' के पश्चात् शहादत का कलमा और यह दुआ पढने का उल्लेख किया गया है . "हे अल्लाह् तू मुझे तौबा करने वालो मे से कर दे और उन लोगो मे से कर दे जो स्वच्छता और पवित्रता अपनाने वाले है।" इस से मालूम हुआ कि पूर्ण स्वच्छता और पवित्रता उसी समय प्राप्त होती है जबकि शरीर, वस्त्र आदि को स्वच्छ रखने के साथ-साथ बन्दा अपने 'ईमान' को ताज़ा करता रहे और अल्लाह् की सेवा मे 'तौबा' और क्षमायाचना के द्वारा अपने गुनाहो की माफी माँगता रहे।

एक दूसरी जगह कहा गया है "उसमे ऐसे लोग हैं जो पाक-साफ रहना पसन्द करते है। और अल्लाह् पाक-साफ रहने वालो से प्रेम करता है"। —अत-तौबा आयत १०८।

'हदीस' मे स्वच्छता और पवित्रता को ईमान का अश ठहराया जा रहा है। एक 'हदीस' मे स्वच्छता को आधा 'ईमान' कहा गया। शरीर और वस्त्र की स्वच्छता और सुथराई का मनुष्य के मन और उसकी आत्मा पर गहरा प्रभाव पडता है। यदि शरीर और वस्त्र स्वच्छ है तो अवश्य ही मन मे विशेष प्रकार का आनन्द और प्रसन्नता की अनुभूति होगी और मनुष्य का मन विकसित पुष्प के समान खिल उठेगा। स्वच्छता अपनी वास्तविकता की दृष्टि मे मन और

भर देते है[२] । और 'नकाज' प्रकाश है[३] । 'सदका' दलील और प्रमाण है[४]।

आत्मा का विकास और आनन्द है । और अपवित्रता अपनी वास्तविकता की दृष्टि से मन के विकार, सकुचित अवस्था और तिमिरता का नाम है। नापाकी या पेशाब, पाखाने के पश्चात् आदमी जब नहाता या 'वजू' कर लेता है और साफ-सुथरे कपडे पहनता और सुगन्ध का प्रयोग करता है, तो उसके मन की मलिनता दूर हो जाती है । और उसे एक प्रकार की प्रसन्नता प्राप्त होती है और वह इस योग्य होता है कि अल्लाह के आज्ञापालन और 'इबादत' के पवित्रतम कर्तव्य का पालन कर सके । उसे 'फिरिश्तो' से एक प्रकार की समानता प्राप्त हो जाती है जो सदैव पाक-साफ रहते और पवित्रतम एव सूक्ष्मतम भावो को मन मे धारण किए रहते है ।

जिस व्यक्ति को पाकी और नापाकी की चिन्ता नही होती, जो सदा नापाकी की ही दशा मे रहना पसन्द करता है उसकी आत्मा अन्धकार मे घिरी रहती है । वह पवित्रतम अन्तरभावो और 'ईमान' के रसास्वादन से वचित ही रह जाता है । उसकी आत्मा नाना प्रकार के वसवसो मे जकडी रहती है । तत्व-दर्शिता (*Wisdom*) और बुद्धि-विवेक के द्वार उसके लिए नही खोले जाते ।

२　अर्थात् "अलहम्दुलिल्लाह" (प्रशसा अल्लाह ही के लिए है), सुबहानल्लाह व अलहम्दुलिल्लाह" (महिमावान् है अल्लाह, प्रशंसा अल्लाह ही के लिए है) इन पवित्रतम 'कलमो' की बरकत से धरती और आकाश का वातावरण परिपूर्ण हो जाता है । ये पवित्र कलमे आदमी के नेकी के पल्ले को झुकाने वाले हैं । 'आखिरत' मे इनका असीम बदला मिलेगा । इन 'कलमो' को यदि मनुष्य समझकर बढे, तो अवश्य ही उसके जीवन मे क्रान्ति आ जाए । वह दुनिया मे कभी अल्लाह से गाफिल नही हो सकता ।

३　मुस्लिम के जीवन का प्रारम्भ और अन्त 'नमाज़' ही है । नमाज मनुष्य के जीवन को अर्थमय बनाती और मानवीय आत्मा को अन्धकार और तुच्छ इच्छाओ से छुटकारा दिलाती है । 'नमाज़' अपनी वास्तविकता की दृष्टि से अल्लाह का स्मरण और उसकी 'तस्बीह' और गुणगान है । अल्लाह के स्मरण से बढकर जीवन का प्रकाश कहाँ पाया जा सकता है ।

४　'सदका' मनुष्य के सच्चे 'मोमिन' होने का प्रत्यक्ष प्रमाण है । 'मोमिन' अल्लाह के मार्ग मे अपना माल खर्च करके इस बात का प्रमाण सचित करता है कि वह अल्लाह और उसकी उतारी हुई 'शरीअत' पर 'ईमान' रखता है । सदका 'आखिरत' मे भी मनुष्य के अल्लाह का उपासक होने का प्रमाण बनेगा

'सब्र' ज्योति है[५]। और 'कुरआन' या तो तर्क है तुम्हारे हक में या तुम्हारे विरुद्ध[६]। हर व्यक्ति सुबह करता है तो अपनी आत्मा का सौदा करता है फिर या तो उसे छुडा लेता है या तो उसे विनष्ट कर देता है[७]। —मुस्लिम

और इस प्रकार सदका देने वाला अल्लाह् के पुरस्कार का अधिकारी होगा।

५ 'मोमिन' के जीवन मे सब्र का स्थान अत्यन्त उच्च है। सब्र वास्तव मे 'ईमान' और अल्लाह पर भरोसा करने का आवश्यक परिणाम है। सब्र के बिना मानवीय जीवन का विकास सम्भव नही। सब्र 'मोमिन' का आवश्यक गुण है। अधैर्य सदैव 'ईमान' के अभाव या उसके कमजोर होने का प्रमाण होता है। जिस व्यक्ति की दृष्टि परिणाम पर होगी वह कभी धैर्य को हाथ से जाने नही देगा। कितने ही सकट क्यो न आएँ वह कभी सत्य-मार्ग से विचलित नही हो सकता। धर्म-विरोधी उसे कितना ही प्रलोभन क्यो न दें वह कभी भी अपनी अन्तरात्मा और 'ईमान' की माँगो की उपेक्षा नही कर सकता। उसके आचरण को भ्रष्ट करने वाले सामान कितने ही अधिक क्यो न हो। नग्नता और अश्लीलता का कितना ही जोर क्यो न हो वह इन सबके मुकाबले के लिए जो हथियार इस्तेमाल करता है वह सब्र का हथियार है। वह अल्लाह् की निश्चित की हुई सीमाओ का सदैव और प्रत्येक अवस्था मे ध्यान रखता है। सब्र के इस मौलिक महत्व के कारण उसे कुरआन मे 'नमाज़' के अर्थ मे भी प्रयोग किया गया है। कुरआन मे है "हे 'ईमान' लाने वालो! सब्र और 'नमाज़' से सहायता लो। निस्सन्देह अल्लाह् सब्र करने वालो के साथ है।"—सूरा अल-बकरा आयत १५३। इस 'आयत' मे 'नमाज' शब्द सब्र के पर्याय के रूप मे प्रयुक्त हुआ है। 'सब्र' की इन्ही विशेषताओ के कारण उसे प्रकाश या ज्योति की सज्ञा दी गई है।

६ अर्थात् यदि तुम्हारा जीवन कुरआन के आदेशो और उसके पेश किए हुये आदर्श के अनुसार व्यतीत होगा, तो 'कुरआन' तुम्हारे लिए साक्षी और प्रमाण वनेगा परन्तु यदि तुम्हारी नीति इसके विरुद्ध है, तो कुरआन की गवाही तुम्हारे विरुद्ध होगी।

७ मतलव यह है कि दुनिया मे प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह किसी अवस्था मे हो और किसी काम मे हो वास्तविकता की दृष्टि से वह प्रतिदिन अपने प्राण का सौदा करता है। या तो उसे छुटकारा दिलाता है या उसे विनष्ट करता है। मनुष्य का जीवन एक व्यापार है। वह यदि अपना जीवन अल्लाह् के आज्ञापालन मे व्यतीत करता है, तो वह अपनी मुक्ति का प्रयास करता है। इसके विपरीत

२ शुबैब बिन अबी रौह नबी सल्ल० के एक सहाबी से रिवायत करते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने एक दिन 'फ़ज्र' की 'नमाज़' पढ़ी और उस में आपने 'सूरा' अर-रूम पढी उस में आप को सदेह हो गया। जब आप 'नमाज़' से पढ चुके तो कहा : कुछ लोगों की यह क्या दशा है कि हमारे साथ 'नमाज' अदा करते हैं और स्वच्छता का भली-भाँति ध्यान नही रखते बस यही लोग हमारे 'कुरआन' पढने में सन्देह पैदा कर देते हैं[८] ।

—नसई

३ हजरत आइशा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा . दतुवन मुँह को अधिक साफ रखनें वाली और अल्लाह को अधिक प्रसन्न करनें वाली चीज़ है[९]।

—मुसनद इमाम शाफई, अहमद , नसई, बुखारी

४ हजरत आइशा रजि० कहती हैं कि नबी सल्ल० का नित्यकार्य था कि दिन या रात में जब भी आप सोते तो उठने के पश्चात् दतुवन

यदि वह जीवन मे अल्लाह को भुला देता है, तो वह स्वयं अपने विनाश में लगा हुआ है । ससार उसे नैतिक एव आध्यात्मिक मृत्यु और 'आखिरत' मे 'जहन्नम' की यातना से उसे बचाने वाला कोई नही ।

८. इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि 'इबादत' के लिए स्वच्छता और 'वजू' आदि का ध्यान रखना कितना आवश्यक है । 'वजू' और स्वच्छता एवं शुद्धता का भली-भाँति ध्यान न रखने का बुरा प्रभाव दूसरो पर भी पड़ता है । यहाँ तक कि इसके प्रभाव से 'कुरआन' पढने मे भी गडबडी हो सकती है ।

९. दतुवन से मनुष्य को दोहरा लाभ पहुँचता है । इससे मुँह की सफाई भी हो जाती है और यह एक प्रिय कार्य है इसलिए इस से अल्लाह भी प्रसन्न होता है । इसी तरह की एक 'हदीस' है "जो व्यक्ति अपनी रोजी कमाने के लिए काम करे और अपने काम मे अल्लाह की प्रसन्नता को सामने रक्खे उसकी मिसाल हजरत मूसा की माता की-सी है कि उन्होने अपने ही बेटे को दूध पिलाया और उसकी मजदूरी भी ली" अर्थात् रोजी कमाने मे भी मनुष्य दोहरा लाभ उठाता है रोजी भी कमाता है और अल्लाह से बदला भी पाता है । शर्त यह है कि वह अल्लाह की प्रसन्नता को सामने रक्खे और ईमानदारी के साथ काम करे । दोहरे लाभ की बात दतुवन और रोजी कमाने तक ही सीमित नही है बल्कि धर्म के समस्त आदेश ऐसे है जिनमे मनुष्य के वर्तमान जीवन और आखिरत की भलाई और कल्याण अपेक्षित हैं ।

अवश्य करते ।

—अहमद, अबूदाऊद

५. शुरैह बिन हानि रज़ि० कहते हैं कि मैं ने हज़रत आइशा रज़ि० से पूछा कि अल्लाह के रसूल सल्ल० जब बाहर से घर मे आते, तो सब से पहले क्या काम करते थे ? कहा सब से पहले आप दतुवन करते थे[10] ।

—मुस्लिम

६ हज़रत अबू अय्यूब से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा चार चीज़ें 'रसूल' की 'सुन्नतो' (रीतियो) मे से है लज्जा[11], सुगन्ध लगाना, दतुवन करना[12] । और विवाह करना[13] ।

—तिरमिजी

---

१०. इन 'हदीसों' से मालूम हुआ कि नबी सल्ल० दतुवन का कितना ध्यान रखते थे । इस से यह मालूम हुआ कि दतुवन 'वज़ू' ही के साथ नही है बल्कि जब भी आवश्यकता हो दतुवन कर लेनी चाहिए । पांच अवसरो पर विशेष रूप से दतुवन का महत्व है 'वज़ू' मे नमाज़' के लिए खडे होते समय (यदि 'वज़ू' और 'नमाज' के बीच अधिक समय हो गया हो), कुरआन मजीद पढने के समय, सोकर उठने के समय, मुँह मे दुर्गन्ध पैदा हो जाने पर और दांतो का रग बदल जाने के समय ।

११. लज्जा मनुष्य के चरित्र का सौन्दर्य है । नबी सल्ल० की एक 'हदीस' है "जिसमे लज्जा होगी उसमे एक विशेष प्रकार की शोभा ही सिद्ध होगी ।" एक 'हदीस' मे है "लज्जा 'ईमान' ही की एक शाखा है ।" अल्लाह के नबी चरित्र की दृष्टि से एक उच्च स्थान पर होते है इसलिए उनके यहाँ यह अभीष्ट चीज़ न पाई जायेगी, तो कहाँ पाई जायेगी ।

१२ सुगन्ध और दतुवन दोनो ही चीजें बहुत ही प्रिय है दतुवन से मुँह की सफाई होती है, सुगन्ध से हमारी आत्मा और हृदय को एक विशेष प्रकार का आनन्द प्राप्त होता है । उपासना-आनन्द मे सुगन्ध और पवित्रता दोनो ही चीजे सहायक होती हैं ।

१३ विवाह समाज की आधारशिला है । अल्लाह के नबी मानव-समाज के लिए पूर्ण आदर्श बनकर आते हैं इसलिए वे विवाह को कैसे घृणित ठहरा सकते हैं । सासारिक जीवन मे अच्छी पत्नी एक बडी नेमत है । विवाह वह चीज है जिस से दृष्टि और हृदय की पवित्रता की रक्षा होती है । 'नबी' न तो इसकी शिक्षा देने आते हैं कि मनुष्य ससार को त्याग दे और न उन्होने विवाह और मनुष्य के पारस्परिक सम्बन्धो को ईश-भक्ति के उच्च आदर्शों के प्रतिकूल ठहराया ।

७ हजरत आइशा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : वह 'नमाज' जिस के लिए दतुवन की जाए उस 'नमाज़' की अपेक्षा सत्तर गुना श्रेष्ठ है जो बिना दतुवन के अदा की जाए[१४]। —बैहकी-शोबुलईमान

८. हजरत उस्मान रजि० उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि जिस व्यक्ति ने 'वजू' किया और अच्छी तरह से 'वजू' किया उस के सारे गुनाह निकल जायेंगे यहाँ तक कि उस के नखों के नीचे से भी[१५]। —बुखारी, मुस्लिम

९ अबू मालिक अशअरी से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल

इस तरह की चीज़ें तो वास्तव मे रोगग्रस्त मस्तिष्क की उपज हुआ करती हैं।

१४ अर्थात् जो 'नमाज' दतुवन करके अदा की जाएगी वह उस 'नमाज' की अपेक्षा जो बिना दतुवन किये पढी जाये श्रेष्ठतम होगी। इस से मालूम हुआ कि बाह्य शुद्धता एव पवित्रता का धर्म मे कितना महत्व है। बाह्य शुद्धता का मनुष्य के कर्मो पर बाह्य और अन्तरिक दोनो ही दृष्टि से प्रभाव पडता है।

१५ अर्थात् 'वजू' से केवल बाह्य शुद्धता ही प्राप्त नही होती वलिक इस से आदमी के गुनाह भी धुल जाते हैं। इसलिए कि हर 'वजू' वास्तव मे अल्लाह की वन्दगी की नये सिरे से प्रतिज्ञा भी है इसीलिए 'हदीसो' मे 'वजू' के पश्चात् कलमा-ए-शहादन अशहदु अन ला इलाह इल्लल्लाह व अन्न मुहम्मदन अब्दुहू व रसूलुहू (मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई 'इलाह' नही और यह कि मुहम्मद अल्लाह के बन्दे और उसके 'रसूल' है) पढने का जिक्र भी आता है। इस 'शहादत' (गवाही) प्रतिज्ञा, और ईमान के पुनरावृति के बिना आन्तरिक पवित्रता प्राप्त नही होती। इस कलमा से मानो पवित्रता पूर्ण हो जाती हैं। बन्दगी की प्रतिज्ञा और 'ईमान' की पुनरावृति के परिणाम स्वरूप मनुष्य के गुनाहो को क्षमा कर दिया जाता है। एक 'हदीस' मे आता है कि उसके लिए 'जन्नत' के सभी दरवाज़े खुल जाते है।

'वजू' से छोटे गुनाह तो अवश्य ही क्षमा हो जाते है, वडे गुनाहो के क्षमा होने की भी राह निकलती है। किसी व्यक्ति से यदि वडे गुनाह हुए हो, तो 'तौबा' और 'कफ्फोर' (प्रायश्चित) के दूसरे तरीके भी अपनाए ताकि अल्लाह उसके सभी गुनाहो को क्षमा कर दे और उसे पवित्र जीवन प्राप्त हो।

सल्ल० ने कहा : शुद्धता एव पवित्रता 'ईमान' का अर्ध भाग है[१६]।

—मुस्लिम

१०. कअ़्ब बिन उजरा रज़ि० का बयान है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा · जब तुम में से कोई अच्छी तरह 'वज़ू' करे फिर मस्जिद के इरादे से निकले तो 'तशबीक' न करे क्योंकि वह 'नमाज' में होता है[१७]।

—अबूदाऊद

---

१६ 'इस्लाम' ने जहां आध्यात्मिक और शुद्धता एव पवित्रता की शिक्षा दी है वही वह हमे बाह्य शुद्धता एव पवित्रता और शिष्टाचार आदि की शिक्षा भी देता है इसीलिए बाह्य शुद्धता एव पवित्रता को आधा ईमान कहा गया। ईमान की समस्त मांगें तो उस समय पूरी हो सकती हैं जब कि मनुष्य अपने बाह्य और अन्तर दोनो को पवित्र रक्खे। दोनो मे गहरा सम्पर्क है और दोनो की पूर्णता से मानव के व्यक्तित्व को पूर्णता प्राप्त होती है।

१७. एक हाथ की उँगलियो को दूसरे हाथ की उँगलियो मे यों ही अकारण डालना या के चटखाने के लिए डालना 'तशबीक' है। यह एक फज़ूल हरकत है या सुस्ती और गफलत का चिह्न है। इससे रोका गया। जब किसी व्यक्ति ने अच्छी तरह 'वज़ू' कर लिया, तो वह सामान्य और बेखबर लोगो जैसा नही रहा, बल्कि उसे बाह्य पवित्रता के साथ आत्मा की शुद्धता भी प्राप्त हो गई। अब वह उस अल्लाह् की ओर प्रवृत्त हो गया जिसकी ओर रुख करना मन की समस्त मलिनता को दूर करता और मनुष्य को पवित्र बनाता है। वास्तविकता की दृष्टि से अब वह 'नमाज' की दशा मे है। और यदि मस्जिद आने के इरादे से वह घर से निकल पडा तो फिर उसके 'नमाज' की दशा मे कोई सन्देह नही रहा। मस्जिद का मार्ग तै करने मे उसे 'नमाज़' ही का सवाब मिलेगा। इसलिए उसे अकारण कोई ऐसा काम नही करना चाहिए जो 'नमाज़' के प्रतिकूल हो। हज़रत अबू सईद से भी एक 'हदीस' मे उल्लिखित है कि अल्लाह् के 'रसूल' सल्ल० ने कहा · 'जब तुममे से कोई मस्जिद के भीतर हो, तो उसे अपने हाथो की उंगलियो को एक-दूसरे के भीतर न डालना चाहिए। तुममे से कोई व्यक्ति जब तक मस्जिद मे रहता है वह 'नमाज़' ही मे होता है यहाँ तक कि वह मस्जिद से चला जाए।

—मुसनद अहमद

———

नमाज के अधिनियम

عَنْ اَبِیْ ذَرٍّ قَالَ، قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّی اللّٰهُ عَلَیْهِ وَسَلَّمَ لَا یَزَالُ اللّٰهُ مُقْبِلًا عَلَی الْعَبْدِ وَ
هُوَ فِیْ صَلَاتِهٖ مَا لَمْ یَلْتَفِتْ فَاِذَا الْتَفَتَ انْصَرَفَ عَنْهُ ——— ابوداود نسائی

१ अबूजर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा बन्दा जब 'नमाज' मे होता है तो अल्लाह अवश्य ही उसकी ओर ध्यान देता है जब तक कि वह इधर-उधर न देखे और जब वह इधर-उधर देखने लगता है तो अल्लाह उस की ओर से मुख फेर लेता है[1]।
—अबूदाऊद, नसई

२ अब्दुल्लाह बिन मुहम्मद बिन अबू बक्र से उल्लिखित है, वे कहते है कि हम हजरत आइशा रजि० के पास थे इतने मे उनका भोजन आया तो कासिम बिन मुहम्मद 'नमाज' पढने के लिए खडे हो गये तो (हजरत आइशा रजि० ने) कहा मैने अल्लाह के रसूल सल्ल० को यह कहते सुना है कि जब खाना सामने आ जाये तो उस समय 'नमाज' नही (पढनी चाहिये) और न उस समय ('नमाज' पढनी चाहिए) जब कि पेशाब-पाखाने की जरूरत हो[2]। —मुस्लिम, अबूदाऊद

---

१ अर्थात् अल्लाह उस समय तक उस व्यक्ति की ओर ध्यान देता और उस पर कृपा-दृष्टि डालता है जब तक वह 'नमाज' मे अल्लाह की ओर ध्यान देता है, और इधर-उधर नही देखता। लेकिन जब वह दूसरी ओर ध्यान देता है तो अल्लाह भी उसकी ओर से अपना रुख फेर लेता है। उसके आत्म-गौरव को यह कब स्वीकार हो सकता है कि वह उस व्यक्ति की ओर ध्यान दे जो उस की महानता और बडाई का आदर नही करता।

२ मतलब यह है कि भूख हो और खाना आ जाये तो उसे खा कर 'नमाज' के लिए जाना चाहिए अन्यथा 'नमाज' मे पूरी एकाग्रता प्राप्त न हो सकेगी। इसी तरह पेशाब-पाखाना की जरूरत है तो उस समय भी 'नमाज' मे जी नही लग सकता। इसलिए ऐसी दशा मे मनुष्य को चाहिए कि पेशाब-पाखाने से निवृत्त हो कर 'नमाज' अदा करे। 'शरीअत' ने मनुष्य की विवशता का ध्यान रक्खा है। कुरआन मे है "अल्लाह ने धर्म मे तुम्हारे लिए तगी और मुश्किल नही रक्खी"—अल-हज्ज आयत ७८। एक 'हदीस' मे है कि आपने कहा "जब तुममे से किसी के सामने रात का खाना रक्खा जाये और 'नमाज' की तकबीर कही जाने लगे तो पहले खाना खाये, खाने मे जल्दी न

३ अबू हुरैरा रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब तुम में कोई व्यक्ति लोगों को 'नमाज' पढ़ाये तो उसे हल्की (नमाज) पढानी चाहिए इसलिए कि उनमें कमज़ोर, बीमार और आवश्यकता रखने वाले सब सम्मिलित होते है और जब अकेले 'नमाज' पढे तो जितनी चाहे लम्बी करे [3]। —बुखारी, मुस्लिम

४ हजरत अनस रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि (कभी ऐसा होता है कि) मैं 'नमाज' शुरू करता हूँ और मैं चाहता हूँ कि उसे लम्बी करूँ इतने मे बच्चे के रोने की आवाज सुन लेता हूँ तो मै अपनी 'नमाज' को सक्षिप्त कर देता हूँ इसलिए कि मैं उस तकलीफ को जानता हूँ जो उसकी माता को उसके रोने से होगी [4]। —बुखारी, मुस्लिम, इब्नमाजा, नसई, तिरमिजी

५. हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल

करे यहाँ तक कि वह उससे निवृत हो जाये।" —मुस्लिम, बुखारी

हजरत इब्न उमर रजि० के सामने खाना रक्खा जाता और 'नमाज़' शुरू हो जाती तो वे 'नमाज़' को न जाते जब तक कि खाना खा न लेते हालाँकि 'नमाज' मे 'इमाम' के कुरआन पढने की आवाज सुनते होते थे।

३. अर्थात् 'इमाम' को चाहिए कि वह 'नमाज' पढने वालो का ख्याल रक्खे। 'नमाज' बहुत लम्बी न करे ताकि हर व्यक्ति आसानी से अदा कर सके। अकेले नमाज पढ रहा हो तो उसे अधिकार है, जितनी देर चाहे 'नमाज' मे खडा रहे। हजरत अनस रजि० का बयान है कि मैने कभी किसी इमाम के पीछे 'नमाज' नही पढी जो नबी सल्ल० की नमाज़ की तरह हल्की और पूर्ण हो। —बुखारी

४. बच्चे के रोने की आवाज़ आती तो नबी सल्ल० इस ख्याल से 'नमाज' को सक्षिप्त कर देते थे कि सम्भव है बच्चे की माँ नमाज मे सम्मिलित हो और उसे बच्चे के कारण परेशानी हो। इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि अच्छी 'नमाज' के लिए यह आवश्यक नही कि मनुष्य इतना लीन हो जाये कि उसे 'नमाज' के अतिरिक्त किसी चीज़ की खबर ही न हो सके। अच्छी और आदर्श नमाज के लिए मौलिक रूप से जो चीज अभीष्ट है वह है अल्लाह की महानता का एहसास और उसकी ओर दिल का झुकाव, भय और विनयशीलता। 'नमाज़' मे यह चीज़ जितनी अधिक होगी उतनी ही हमारी 'नमाज़ें' अच्छी हो सकेगी।

सल्ल० ने कहा : जब तक आनन्द और तत्परता के साथ 'नमाज़' पढ सको पढो और सुस्त हो जाओ तो बैठ जाओ [५]।

६. हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . जब तुम मे कोई व्यक्ति 'नमाज़' में ऊँघने लगे तो फिर उसे सो रहना चाहिए यहाँ तक कि उसकी नीद जाती रहे इसलिए कि ऊँघते हुए तुम मे कोई 'नमाज' पढ़ेगा तो वह नही जान सकता (कि क्या कह रहा है) सम्भव है कि क्षमा का इच्छुक हो और अपने हक में बुरे शब्द निकालने लगे । —बुखारी, मुस्लिम

७. इमरान इब्न हुसैन रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा खड़े होकर 'नमाज़' पढो । खड़े हो कर न पढ सको तो बैठकर पढ़ो और बैठ कर भी न पढ सको तो लेट कर पढ़ो [६]।

—बुखारी

८ हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल०

५. अर्थात् 'नमाज़' का आदेश देकर अल्लाह ने तुम्हे किसी मशक्कत मे नही डाला है। 'नमाज़' तो तुम्हारा आध्यात्मिक आहार है। इसलिए उसे अधिक-से-अधिक तत्परता और आनन्द-स्थिति मे अदा करो ताकि तुम उससे अधिक-से-अधिक शक्ति प्राप्त कर सको और तुम 'नमाज़' से पूरा लाभ उठा सको ।

यह बात ध्यान मे रहे कि यहाँ खास-तौर से 'नफ्ल' नमाज का जिक्र किया गया है :

जीवन मे 'नमाज' का इतना महत्व है कि उसे किसी दशा मे नही छोडा जा सकता। जिस तरह भी हो सके उसे अदा करते रहो। खडे हो कर न पढ सको तो बैठ कर पढो और यदि बैठ कर पढ़ना भी सम्भव न हो तो लेट कर ही 'नमाज़' अदा कर लो ।

'शरीअत' के आदेश मनुष्य के लिए मुसीबत कदापि नही हैं। 'हदीसो' से इसकी बहुत सी मिसालें प्रस्तुत की जा सकती है। 'सहाबा' इस रहस्य से भली-भाँति परिचित थे कि 'शरीअत' के आदेश मनुष्य को मुश्किल मे डालने के लिए कदापि नही हैं। हजरत अबूजर रजि० का कथन है . 'मनुष्य के धर्म के विषय मे समझ रखने की एक पहिचान यह है कि यदि उसे 'नमाज' के समय कोई बडी जरूरत पेश आ जाये तो पहले वह अपनी जरूरत पूरी कर ले ताकि जब वह नमाज़ की ओर आये तो एकाग्रचित्त होकर आये ।—बुखारी

ने हमें हुक्म दिया : जब तुम मस्जिद में हो और 'नमाज़' के लिए 'अजान' दी जाये, तो तुम मे से कोई उस समय तक मस्जिद से बाहर न निकले जब तक कि 'नमाज' न पढ ले[७]। —अहमद

९ हजरत इब्न अब्बास रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तीन व्यक्ति ऐसे हैं कि उनकी 'नमाज' उनके सिर से एक बालिश्त भी ऊपर नही उठती[८] वह इमाम जिसे लोग नापसन्द करते हों और वह स्त्री जो इस दशा मे रात गुजारे कि उसका पति उससे अप्रसन्न हो और वे दो भाई जो आपस मे क्रुद्ध हों और सम्बन्ध तोड ले[९]। —इब्न माजा

१० हजरत अनस रजि० मे उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो व्यक्ति 'नमाज' (पढनी) भूल जाये या 'नमाज़' से गाफिल हो कर सो जाये तो इसका बदला यह है कि जिस समय याद आ जाये 'नमाज' पढ ले और एक 'हदीस' में ये शब्द हैं कि उसका वदला इसके सिवा और कुछ नही कि जिस समय याद आ जाये अदा कर ले।

—बुखारी, मुस्लिम

११ हज़रत अबू कतादा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : सो जाने से ('नमाज़' मे विलम्ब होने पर) कोई

७ अर्थात् जब 'अजान' हो गई तो 'नमाज' पढकर ही मस्जिद से निकलना चाहिए। विना किसी वास्तविक विवशता के 'नमाज' अदा किये बिना मस्जिद से निकल जाना इस बात की पहिचान है कि आदमी के मन मे 'नमाज' का आदर और अल्लाह की महानता का सही एहसास नही है, अन्यथा 'मुवज्जिन' की पुकार को रद्द करने का साहस उसे कभी नही हो सकता था।

८ अर्थात् वह तनिक भी स्वीकार नही होती।

९ यह 'हदीस' बताती है कि अल्लाह का हक भी उस समय अदा होता है जब कि बन्दो का हक भी अदा हो। भाई यदि भाई के हक को भूल जाये, इसी प्रकार स्त्री यदि पति को अप्रसन्न रक्खे या 'इमाम' यदि लोगो की इच्छा और उनकी उचित मागो को न पहिचाने तो उसकी 'नमाज' वास्तव मे 'नमाज' नही हो सकती। 'नमाज' तो उच्च चरित्र है जिसका प्रदर्शन बन्दा अल्लाह के हक को अदा करके करता है लेकिन यदि दूसरे हकदारो के हक अदा करने मे उसमे कोताही होती है तो इसका अर्थ यह है कि अभी उसके चरित्र ही मे त्रुटि या दोष है।

दोष नही, दोष तो जागने की दशा में ('नमाज' में विलम्ब करने पर) है। अत. जब तुम मे कोई (नमाज पढनी) भूल जाए या 'नमाज' से गाफिल होकर सो जाये, तो जिस समय याद आए तुरन्त पढ ले क्योकि सर्वोच्च अल्लाह ने कहा है 'नमाज' कायम करो मेरी याद के लिए।[१०]

—मुस्लिम

१२ हजरत इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है। उन्होने एक अत्यन्त ठण्ठ और आँधी वाली रात मे 'नमाज' की 'अजान' दी फिर कहा सुनलो ! अपने-अपने घरो मे 'नमाज' अदा कर लो। उसके बाद कहा कि अल्लाह के रसूल सल्ल० उस समय जबकि कडाके की सर्दी और वर्षा की रात होती 'मुवज्जिन' (अजान देने वाले) को हुक्म देते कि वह ('अजान मे) कह दे कि सुन लो ! अपने-अपने घरों मे 'नमाज' पढ लो।

—बुखारी, मुस्लिम

१३. हजरत अम्मार रजि० कहते है कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना किसी व्यक्ति की 'नमाज' लम्बी होनी और 'खुतबा' सक्षिप्त होना उसके समझदार होने का प्रमाण है। अत 'नमाज' को लम्बी और 'खुतबा' को सक्षिप्त करो निस्सन्देह कुछ 'खुतबे' जादू होते है [११]।

१४ उकबा बिन आमिर रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो मुसलमान अच्छी तरह 'वजू' करे फिर खडे होकर

---

१० अर्थात् यदि कोई व्यक्ति भूल गया और उसने 'नमाज़' अदा नही की या उस पर ऐसी नीद छा गई कि वह 'नमाज' अदा किये बिना सो गया तो इस पर उसकी पकड न होगी। जब उसे याद आ जाए या जब वह जाग जाए तो तुरन्त 'नमाज' पढ ले। 'नमाज़' का सम्बन्ध मनुष्य की चेतना और उसकी याद से है यदि मनुष्य किसी कारण से गाफिल हो गया या उसे याद नही रहा कि उसने अभी 'नमाज' अदा नही की है, तो वह विवश समझा जायेगा। परन्तु यदि कोई व्यक्ति जान-बूझ कर विना किसी विवशता के 'नमाज छोड देता है तो उसका दिल गुनहगार है, अवश्य ही उसकी पकड होगी।

११ अर्थात् वे जादू का असर दिखाते है। वे अत्यन्त प्रभावकारी सिद्ध होते हैं। खुतबा या भाषण प्रभावकारी हो इसके लिए यह आवश्यक नहीं कि वह लम्बा भी हो। सक्षिप्त भाषण लम्बे भाषण की अपेक्षा कही अधिक प्रभावकारी हो सकते है।

अपनी पूरी हार्दिक एकाग्रता के साथ एक चित्त हो कर दो 'रकात' 'नमाज' अदा करे तो 'जन्नत' उसके लिए अनिवार्य हो जायेगी [१२]। —मुस्लिम

नमाज जमाअत के साथ

عَنْ اَبِي هُرَيْرَةَ رض قَالَ قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ مَنْ تَوَضَّأَ فَاَحْسَنَ وُضُوْءَهُ ثُمَّ رَاحَ فَوَجَدَ النَّاسَ قَدْ صَلَّوْا اَعْطَاهُ اللّٰهُ مِثْلَ اَجْرِ مَنْ صَلَّاهَا وَحَضَرَهَا لَا يَنْقُصُ ذٰلِكَ مِنْ اُجُوْرِهِمْ شَيْئًا ——— رواه ابوداؤد

[१] हजरत अबू हुरैरा रजि॰ कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल॰ ने कहा जिस व्यक्ति ने 'वजू' किया और अच्छी तरह 'वजू' किया फिर वह (नमाज के लिए) गया और देखा कि लोग 'नमाज' अदा कर चुके है तो उसे उन लोगों के बराबर बदला मिलेगा जो वहाँ 'नमाज' में उपस्थित हुए और नमाज अदा की और इस मे उन के सवाब मे कुछ भी कमी न होगी [१]। —अबूदाऊद, नसई

---

१२ अर्थात् ऐसी 'नमाज' मनुष्य को इस योग्य बना देती है कि वह जन्नत मे जगह पा सके। भावात्मक दृष्टि से वह सासारिक जीवन मे ही 'जन्नत' मे प्रवेश पा चुका होता है। 'आखिरत' मे तो उसका ठिकाना 'जन्नत' ही है। शर्त्त यह है कि अपनी असावधानी और कोताहियो से वह अपने को इस हक से वचित न कर ले। इस बात को इमाम इब्न तैमिया ने इन शब्दो मे कहा है "दुनिया मे एक ऐसी 'जन्नत' है कि जो उसमे दाखिल न हुआ आखिरत मे भी दाखिल न होगा।"

१ एक व्यक्ति नियमपूर्वक 'नमाज़' पढता है और पाबन्दी के साथ जमाअत मे शरीक होता है, यदि सयोग से किसी दिन उसे जमाअत से नमाज न मिल सकी तो भी अल्लाह उसे पूरा-पूरा सवाब प्रदान करेगा। उसके सवाब मे किसी प्रकार की कमी न होगी। अल्लाह केवल बाह्य को नही देखता उसके यहाँ निर्णय लोगो की नीयतो और उनकी शुद्ध हृदयता के आधार पर होता है। एक रिवायत मे है कि आपने कहा। "जिसने एक रकअत (जमाअत के साथ) पा ली उसने पूरी 'नमाज़' पा ली" (अबू दाऊद)। उसे पूरी नमाज का सवाब मिलेगा। लेकिन शर्त्त यह है कि उसकी नीयत और शुद्ध हृदयता मे कोई दोष न हो।

२. हज़रत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : (नमाज़ में) अपनी 'सफो (पंक्तियों) को सीधी और बराबर रक्खो क्योंकि 'सफो को सीधा और बराबर रखना 'नमाज़' कायम करने का हिस्सा है[२]। —बुख़ारी, मुस्लिम

३. हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . कसम उस की जिस के हाथ में मेरे प्राण हैं मैं ने इरादा किया कि हुक्म दूँ कि लकड़ियाँ एकठ्ठा की जाये फिर नमाज का हुक्म दूँ और उस के लिए अज़ान दी जाये फिर एक व्यक्ति को लोगो का 'इमाम' नियुक्त करूँ फिर उन लोगो की ओर जाऊँ (जो नमाज़ में हाजिर नही होते) और उन के घरों को आग लगा दूँ[३]।

—बुख़ारी, मुस्लिम

४. उबई बिन कअब रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : आदमी का 'नमाज़' जो वह किसी दूसरे आदमी के साथ की अदा करता है उस 'नमाज़' के मुक़ाबले में अधिक उत्तम है जो वह अकेले अदा करे और जो 'नमाज' दो आदमियों के साथ अदा की वह उस 'नमाज़' से उत्तम है जो उस ने एक आदमी के साथ अदा की और फिर जितने अधिक आदमी हो तेजोमय एव प्रतापवान् अल्लाह को प्रिय है[४]। —अहमद, अबूदाऊद, नसई

---

२. अर्थात् 'नमाज़' को पूरे तौर पर अदा करने मे यह बात भी सम्मिलित है कि जमाअत की सफें (पंक्तियाँ) ठीक और सीधी हो। कर्म के बाह्य और आन्तरिक दोनो पहलुओ की ओर ध्यान देना चाहिए। दोनो के ठीक होने पर मानव-व्यक्तित्व का विकास और पूर्णता अवलम्बित है।

३. जमाअत के साथ 'नमाज़' पढने का जो महत्व है उसका अनुमान इस 'हदीस' से पूर्णत. किया जा सकता है। 'नमाज़' जमाअत सहित एक ओर हमारा सम्बन्ध हमारे अल्लाह से बढाती है, दूसरी ओर उसके द्वारा एक सुदृढ सामाजिकता वजूद मे आती है। शर्त्त यह है कि हमे 'नमाज' के तकाज़ो और उसके सभी नियमो और अधिनियमो का ज्ञान हो और हम उनका पालन करते हो।

४. अर्थात् जमाअत जितनी बडी होगी उतनी ही अधिक अल्लाह को प्रिय होगी और उतना ही अधिक वह हमारे नैतिक एव आध्यात्मिक विकास का कारण बन सकेगी। बुख़ारी और मुस्लिम मे हज़रत इब्न उमर रज़ि० से भी एक रिवायत आती है कि नबी सल्ल० ने कहा 'जो नमाज़ जमाअत के साथ

५. अबू बरदा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : किसी बस्ती या 'बादिया'[५] में तीन आदमी हों और वहाँ जमाअत के साथ नमाज कायम न की जाती हो, तो उन पर शैतान काबू पा लेता है, तो तुम जमाअत की पाबन्दी को अपने ऊपर अनिवार्य कर लो क्योंकि भेड़िया उसी भेड को खाता है जो गल्ले से दूर रहती है[६]।

—अहमद, अबूदाऊद, नसई

'इमामत'

عَنْ عَبْدِ اللهِ بْنِ عُمَرَ رض قَالَ : قَالَ رَسُوْلُ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ ، اِجْعَلُوْا اَئِمَّتَكُمْ خِيَارَكُمْ فَاِنَّهُمْ وَفْدُكُمْ فِيْمَا بَيْنَكُمْ وَبَيْنَ رَبِّكُمْ ——— بيهقى، دارمى

१ अब्दुल्लाह इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम में जो अच्छे हों उन्हे अपना 'इमाम' बनाओ क्योंकि वे तुम्हारे और तुम्हारे 'रब' के बीच तुम्हारे प्रतिनिधि हैं[१]।

—बैहकी, दारकुतनी

अदा की जाये उसे अकेला पढने की अपेक्षा सत्ताईस दर्जा अधिक श्रेष्ठता प्राप्त है।"

५. जहाँ कोई स्थायी रूप से बस्ती न हो बल्कि कुछ दिनो के लिए कोई वहाँ ठहर गया हो।

६. इस 'हदीस' से एक दृष्टान्त के द्वारा यह बात समझाने की कोशिश की गई है कि जमाअत से नमाज़ अदा करने और जमाअत से सम्बद्ध रहने के फायदे अगणित है। जमाअत की ताकत मनुष्य के सुधार और उसे सत्य पर कायम रखने मे सहायक होती है। शैतान की उकसाहटो और हस्तक्षेपो से मनुष्य सुरक्षित रहता है। कुछ लोग इरादे के कमज़ोर होते हैं। व्यक्तिगत रूप से 'नमाज़' का पाबन्द होना उनके लिए कठिन होता है। जमाअत की व्यवस्था के कारण वह भी सरलतापूर्वक 'नमाज़' के पाबन्द हो सकते हैं। जमाअत के साथ 'नमाज़' अदा करने से एक ऐसी आध्यात्मिक वातावरण पैदा हो जाता है जिसका मनुष्य के मन और मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव पडता है।

१. जब इमाम अल्लाह के समक्ष पूरी जमाअत का प्रतिनिधित्व करता है, तो उसे जमाअत का निर्वाचित व्यक्ति होना ही चाहिए। नबी सल्ल० स्वय 'इमामत' करते थे। अन्त समय मे जब बीमार हुए तो उस व्यक्ति (हज़रत अबू बक्र रज़ि०) को 'इमामत' पर नियुक्त किया जो मुस्लिम समुदाय मे श्रेष्ठ था।

मस्जिद का आदर

عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ رض قَالَ، قَالَ رَسُوْلُ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ: أَحَبُّ الْبِلَادِ إِلَى اللهِ
مَسَاجِدُهَا وَأَبْغَضُ الْبِلَادِ إِلَى اللهِ أَسْوَاقُهَا ——— مسلم

१ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · अल्लाह की दृष्टि में सारी आबादी में प्रिय स्थान मस्जिदे हैं और अल्लाह की दृष्टि मे सब से बुरे स्थान बाज़ार हैं [1]।
—मुस्लिम

२. हजरत अबू हुरैरा रज़ि० कहते हैं कि मैं ने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि जो व्यक्ति मेरी इस मस्जिद में केवल नेकी के ध्येय से आयेगा कि वह उसे सीखेगा और सिखायेगा उस का दर्जा अल्लाह के मार्ग में 'जिहाद' करने वाले के बराबर होगा। और जो व्यक्ति इस के अतिरिक्त किसी और ध्येय से आये, तो वह उस व्यक्ति के समान होगा जो दूसरे के माल को तकता है [2]। —इब्नमाजा, अल-बैहकी-शोबुलईमान

३ हजरत अबू हुररा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मेरी इस मस्जिद में एक 'नमाज' दूसरी मस्जिदों की

१ सारे स्थानो और आबादियो मे सब से प्रिय स्थान अल्लाह की दृष्टि मे मस्जिदे है। धरती मे इन से बढकर पवित्र स्थान दूसरे नही हो सकते। मस्जिदें अल्लाह की महानता और पवित्रता की यादगार हैं। इसीलिए उन्हे अल्लाह का घर कहा जाता है। वे हमारी 'इबादत गाह' (उपासना गृह) है। है। उनमे एक अल्लाह की 'इबादत' और उपासना की जाती है। इस 'हदीस' मे बाज़ार को सब से बुरा स्थान कहा गया है। बाज़ार वास्तव मे फितना और फसाद की जगह होता है। बिगडे हुए वातावरण के बाज़ार तो धोखा, छल आदि हर प्रकार की बुराइयो के अड्डे होते है। आज के बाज़ारो मे नग्नता, अश्लीलता और निर्लज्जता का बाज़ार जैसा गर्म दीख पडता है उसे बयान करने की आवश्यकता नही। किसी भले व्यक्ति के लिए बाज़ार में निगाह बचा कर निकलना मुश्किल है।

२. अर्थात् ऐसा व्यक्ति जो किसी अच्छे ध्येय से मेरी मस्जिद मे न आये। वह बिल्कुल ही बे-नसीब है। उसके हिस्से मे पश्चाताप और दुख के अतिरिक्त और कुछ नही आ सकता।

हज़ार 'नमाजों' से उत्तम है सिवाय 'मस्जिदे हराम ('कावा') के[3]।

—बुखारी, मुस्लिम

४. हज़रत हसन से 'मुरसल' तरीके से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा लोगों पर ऐसा समय आने वाला है कि वे अपनी दुनिया की बातें अपनी मस्जिदो में करेंगे। उस समय तुम उन लोगों मे न बैठना, अल्लाह को ऐसे लोगों की आवश्यकता नही[4]।

—अल-बैहकी-शोबुल ईमान

---

३ अर्थात् 'काबा' के सिवा दूसरी मस्जिदो मे 'नमाज' पढने का जो सवाब है उस के हज़ार गुना सवाब से भी अधिक नबी सल्ल० की 'मस्जिद नववी' मे 'नमाज' पढने का सवाब है। नवी सल्ल० की मस्जिद मे जब ईमान वाले पहुँचते है और वहाँ 'नुबूवत' की यादगार चीज़ो को देखते है, तो मन के कितने ही पर्दे उठ जाते हैं। वहाँ आदमी को अपनी दो 'रकअतें' दुनिया की प्रत्येक चीज़ मे अधिक प्रिय प्रतीत होती हैं। जीवन का समस्त अभिप्राय दो 'सजदो' मे सिमट आता है। ऐसी 'नमाज़ें' अल्लाह के यहाँ जो स्थान भी पा लें वह कम ही है।

४ अर्थात् 'मस्जिद' मे आने के बाद भी उनकी दुनिया की बात-चीत समाप्त न हो सकेगी। मस्जिद मे दाखिल होकर भी वे अल्लाह की याद से गाफिल रहेंगे। अल्लाह को ऐसे लोग कदापि पसन्द नही है। ऐसे लोगो के पास बैठकर अपने समय को नष्ट करना या ऐसे लोगो की बात-चीत मे सम्मिलित होकर अपनी नेकियो को नष्ट करना बडी ही नादानी की बात होगी। इसलिए ऐसे लोगो से दूर ही रहना चाहिए। 'शरहुलहिदाया' मे है कि मुबाह' (वैध) बात-चीत भी 'मस्जिद' मे 'मकरूह' है, वह नेकियो को खा जाती है।

'नफ़्ल' नमाज़ और 'तहज्जुद'

عَنِ الْمُغِيْرَةِ بْنِ شُعْبَةَ رض قَالَ: قَامَ النَّبِيُّ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ حَتّٰى تَوَرَّمَتْ قَدَمَاهُ فَقِيْلَ لَهٗ لِمَ تَصْنَعُ هٰذَا وَقَدْ غُفِرَ لَكَ مَا تَقَدَّمَ مِنْ ذَنْبِكَ وَمَا تَأَخَّرَ؟ قَالَ: اَفَلَا اَكُوْنُ عَبْدًا شَكُوْرًا۔ ——— بخاری، مسلم

१. मुगीरा रजि० कहते हैं कि नवी सल्ल० ने (रात को) इतनी देर तक (नमाज में) खडे रहे कि आप के पाँव सूज आये। आप से कहा गया कि हे अल्लाह् के रसूल ! आप ऐसा क्यों करते हैं जव कि आप के अगले-पिछले सब गुनाह् क्षमा किये जा चुके हैं। आप ने कहा क्या मैं कृतज्ञ बन्दा न बनूँ [1]? —बुख़ारी, मुस्लिम

२. अबू हुरैरा रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल के कहा अल्लाह् उस व्यक्ति पर दया करे जो रात को उठा और 'नमाज़' पढी और अपनी स्त्री को जगाया और उस ने भी 'नमाज़' पढ़ी और यदि वह् स्त्री न उठे तो उस के मुँह पर पानी के छींटे मारे। अल्लाह् उस स्त्री पर दया करे जो रात को उठे और 'नमाज़' पढ़े और अपने पति को ('नमाज़' के लिए) जगाए और वह भी 'नमाज़' पढे और न उठे तो उस के मुँह् पर पानी के छींटे मारे [2]। —अबूदाऊद, नसई

---

१. अर्थात् यह अल्लाह् के उपकारो ही की माँग होती है कि बन्दा अधिक-से-अधिक अपने 'रब' की 'इबादत' और वन्दगी मे लग जाए। अल्लाह् का कृतज्ञ बन्दा बनने का उत्तम तरीका यही है। वे लोग बड़े तग दिल हैं जो अल्लाह के उपकारो का आभार स्वीकार नही करते। ऐसे लोग उन भावनाओ और उन कोमल अनुभूतियो से परिचित नही होते जो 'मोमिन' के आतरिक जीवन के सौन्दर्य का आशय होते है। जिनके बिना मनुष्य की दशा ऐसे पुष्प की होती है जो रग से वचित और गन्धहीन हो या फिर वह ऐसी मदिरा के सदृश हैं जो मादकता से वचित हो।

२ इस 'हदीस' से रात मे 'नमाज' पढने के माहात्म्य पर प्रकाश पड़ता है। रात मे जब दुनिया सो रही होती है बिस्तर छोड़कर 'नमाज़' मे अल्लाह के आगे खडा होना इस बात का पता देता है कि आदमी को अपने 'रब' से असाधारण सम्बन्ध प्राप्त है। यह चीज उसे अल्लाह से अधिक-से-अधिक निकट करने वाली है।

३. असमा बिन्त यजीद रजि० कहती हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : 'कियामत' में सारे लोग एक साथ उठाए जायेंगे फिर एक पुकारने वाला पुकारेगा कहाँ हैं वे लोग जो रात को 'इबादत' करने के कारण अपने बिस्तरो को खाली छोड दिया करते थे। यह सुन कर 'तहुज्जुद' पढने वाले बन्दे एक जगह इक्ठ्ठा हो जायेंगे और उन्हे बिना हिसाब 'जन्नत' मे दाखिल कर दिया जायेगा इस के बाद और लोगो का हिसाब लिया जायेगा [3]। —बैहकी-शोबुलईमान

४. अबू हुरैरा रजि से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · 'फर्ज' नमाज के बाद सब से श्रेष्ट मध्य रात्रि की 'नमाज है [4]। —मुस्लिम

५. अबू उमामा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . तुम अवश्य रात में (नमाज के लिए) खडा हुआ करो क्योकि वह तुम मे पूर्व नेक लोगो का तरीका रहा हे और वह तुम्हारे 'रब' का सामीप्य (प्राप्त करने का साधन) है और बुराइयो (के प्रभावों को) मिटाने वाली और गुनाहो से रोकने वाली चीज हे [5]। —तिरमिजी

---

३ इस 'हदीस' से एक बडी वास्तविकता खुल कर सामने आती है। रात को जब दुनिया आराम कर रही होती है, तो वे अपने बिस्तर छोडकर अल्लाह के आगे खडे होते हैं। अल्लाह के आगे रुकूअ और सजदे करते हे, उससे अपने गुनाहो के लिए क्षमा की प्रार्थनाएँ करते और उस से उसकी कृपा-दृष्टि की याचना करते हैं। अल्लाह के ऐसे बन्दो का जीवन इतना पवित्र होता है कि उनका हिसाब दुनिया ही मे माफ हो जाता है। वे किसी प्रकार की मलिनता लेकर अल्लाह की सेवा मे उपस्थित नही होते। 'आखिरत' मे वे बिना हिसाब के 'जन्नत' मे दाखिल कर दिए जायेंगे।

४. इस 'हदीस' से 'तहुज्जद' की 'नमाज' का महत्व और माहात्म्य का अनुमान किया जा सकता है। 'तहुज्जुद' की 'नमाज' अल्लाह से विशेष सम्बन्ध पैदा करने का साधन है।

५ इस 'हदीस' मे 'तहुज्जुद' की 'नमाज' की बरकतो और उस की विशेषताओ का उल्लेख किया गया है। इस मे सन्देह नही कि 'तहज्जुद' की नमाज मे वे सारी विशेषताएँ मौजूद होती है जिन का उल्लेख इस 'हदीस' मे हुआ है। लेकिन शर्त्त यह है कि उसे सही तरीके से, पूरी शुद्धहृदयता के साथ अदा किया जाये और उस के नियमो आदि का पूरा आदर किया जाए। तहज्जुद का समय ऐसा

६ हजरत इब्न अब्बास रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मेरे समुदाय के श्रेष्ट पौर (उच्च पद वाले) कुरआन के वाहक और रात (मे अल्लाह की सेवा में जागने) वाले लोग है[६]।

—वैहकी-शोवुलईमान

७ अबू मालिक अशअरी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने 'जन्नत' में ऐसे वाला खाने है जिन के भीतर से बाहर की चीजे दीख पडती है और बाहर से भीतर की चीजे दिखाई देती है अल्लाह ने उन को उन लोगो के लिए तैयार कर रक्खा है जो नर्मी से बाते करते है, खाना खिलाते है, लगातार 'रोजे रखते है और रात को नमाज' पढते है जब कि लोग सो रहे होते है[७]। —बैहकी-शोवुलईमान

होता है कि उस मे बडी ही शान्ति और पूर्ण एकाग्रता प्राप्त होती है फिर मनुष्य का आराम छोड कर 'नमाज 'पढना दीक्षा का वडा ही प्रभावपूर्ण साधन है। कुरआन मे कहा गया है "रात का समां जो है वह अत्यन्त अनुकूलता रखता है और उस की वात अत्यन्त सधी हुई होती है"। —सूरा ६३, आयत ६। नबी सल्ल० को सम्बोधित करते हुए कहा गया "और कुछ रात इस (कुरआन) के साथ जागते रहो, वह तुम्हारे लिए तद्-अधिक ('नफ़्ल') है करीब है कि तुम्हारा 'रब, तुम्हे प्रशसापूर्ण स्थान पर खडा करे"। —सूरा १७ आयत ७९।

६ अर्थात् मेरे समुदाय मे विशेष हैसियत वाले उच्च श्रेणी के लोग वे है जो कुरआन पढते और उसके आदेशो का पालन करते है और रातो मे जब कि लोग सो रहे होते हे, वे अपने 'रब' की सेवा मे सजदे करते और नमाजे पढते है। अल्लाह के यहाँ ऐसे कुरआन के भारवाहक और जाग्रत व्यक्ति को उच्च-से-उच्च स्थान मिलना ही चाहिए।

७ यह मनुष्य के स्वभाव की कोमलता और उस की चेतना के निर्माण की बात है कि उस की बात-चीत रसमय और माधुर्य लिए हुये हो, उसे दूसरो के दुखों और भूख का ख्याल हो, उसे खाना-पीना ही नही अल्लाह के लिए अपने को खाने-पीने से अलग रखना भी प्रिय हो, वह एकान्त और रात के सन्नाटे मे जब कि दुनिया आराम कर रही हो मन की विकलता और आकुलता लिए हुये अल्लाह की सेवा मे हाजिर हो और उस ने उस की प्रसन्नता और क्षमा का इच्छुक हो। अल्लाह के यहाँ ऐसे लोगो के लिए बदला भी अत्यन्त पवित्र प्रदान किया जायेगा यहाँ तक कि उन्हे जो वालाखाने मिलेंगे वे भी अत्यन्त पवित्रतम, उज्जवल और प्रकाशमय होगे।

ईदुल फित्र को नमाज़

عَنْ اَبِیْ سَعِیْدِ الْخُدْرِیِّ رض قَالَ كَانَ النَّبِیُّ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ يَخْرُجُ يَوْمَ الْفِطْرِ
وَالْاَضْحٰى اِلَى الْمُصَلّٰى فَاَوَّلُ شَیْءٍ يَبْدَاُ بِهِ الصَّلٰوةُ ثُمَّ يَنْصَرِفُ مُقَابِلَ النَّاسِ
وَالنَّاسُ جُلُوْسٌ عَلٰى صُفُوْفِهِمْ فَيَعِظُهُمْ وَيُوْصِيْهِمْ وَيَاْمُرُهُمْ وَاِنْ كَانَ يُرِيْدُ اَنْ
يَقْطَعَ بَعْثًا قَطَعَهُ اَوْ يَاْمُرَ بِشَیْءٍ اَمَرَ بِهٖ ثُمَّ يَنْصَرِفُ ——— بخاری، مسلم

१. अबू सईद ख़ुदरी रजि० कहते है कि नबी सल्ल० 'ईदुलफित्र और 'ईदुल अजहा के दिन ईदगाह की ओर निकलते और सब मे पहले 'नमाज' शुरू करते फिर नमाज से निवृत्त होकर लोगो की ओर रुख करके खडे होते और लोग अपनी सफो (पक्तियो) मे बैठे रहते फिर आप उन्हे उपदेश देते, वसीयत करते और आदेश देते और कही आपको कोई सेना भेजनी होती, तो उसे भेजते या कोई विशेष आदेश देना होता तो वह भी देते फिर वापस होते[1] । —बुख़ारी, मुस्लिम

---

१ यह है इस्लामी त्योहार मनाने का स्वाभाविक तरीका जो इस 'हदीस' मे हमारे सामने पेश किया गया है । त्योहार के दिन आप और आप के 'सहाबा' रजि० अपनी जिम्मेदारियो से गाफिल नही हो जाते थे और न वे किसी प्रकार के खेल-तमाशो मे पडते थे । 'ईद' का दिन मुसलमानो की ख़ुशी और प्रसन्नता मुस्लिम का दिन होता है । मुसलमान रमजान मे निरन्तर एक महीना 'रोज़ा' रखकर अल्लाह के आदेश का पालन करते है । ईद के दिन उन्हे आशा होती है कि अल्लाह उन के कर्म को अवश्य स्वीकार करेगा और हर प्रकार की बुराइयो से पाक कर के उन्हे पवित्रतम जीवन प्रदान करेगा । 'ईद' का दिन 'आख़िरत' की असाधारण प्रसन्नता और सफलता की आशा दिलाता है । ईद की प्रसन्नता कोई साधारण प्रसन्नता नही होती । यह प्रसन्नता मुसलमानो के जीवन और उन के जातीय और धार्मिक जीवन का लक्षण है । ईद की प्रसन्नता मुस्लिम समुदाय को ससार की दूसरी जातियो के मुकाबले मे एक विशेषता प्रदान करती है । ससार ने ख़ुशी मनाने के जो तरीके निकाले है उन मे मौलिक रूप से इस का ख़याल रक्खा गया है कि वह मनुष्य के लिए आनन्द और रसास्वादन के साधन बन सके । इसके लिए साधारणतया गुमराही ध्येय और ओछेपन के कारण ससार ने राग-रग और गाने-बजाने का सहारा लिया । 'इस्लाम' ने ईद मनाने का जो तरीका सिखाया है वह यही नही कि हर तरह की बुराइयो और दोषो से पाक है बल्कि सौन्दर्य सत्यता, निर्मल्य

श्रोर श्रानन्द का उच्चतम सुदर्शक भी वही है। खुशी श्रौर श्रानन्द के प्रदर्शन का इस से उत्तम श्रौर पूर्ण नरीका सम्भव नही। 'इस्लाम' का सिखाया हुश्रा तरीका उच्चतम सभ्यता का प्रतीक है। इस्लाम ने मानव-जीवन के लिए वही तरीका पसन्द किया जो मानवीय स्वभाव के श्रनुकूल श्रौर स्वस्थ जीवन का प्रदर्शक है।

मनुष्य श्रल्लाह् का बन्दा है यह एक ऐसी वास्तविकता है जिस को इन्कार नही किया जा सकता वल्कि जीवन का मादक पहलू भी यही है, इस्लामी सभ्यता की विशेषता यह है कि उस मे ईश-भक्ति के भावो की पूरी रिश्रायत पाई जाती है। भक्ति-भाव मनुष्य की सब से वहुमूल्य निधि है। इस भाव मे मालूम नहीं जीवन के कितने मनोरम सगीत निहित हैं। बन्दे श्रौर श्रल्लाह् का नाता एक ऐसा नाता है जिस पर ससार का सम्पपूर्ण सौन्दर्य श्रौर कोमलता निछावर की जा सकती है। मनुष्य के लिए गौरव श्रौर वास्तविक श्रानन्द की चीज़ वह सम्बन्ध श्रौर सम्पर्क है जो उस के श्रौर श्रल्लाह् के बीच पाया जाता है।

'इस्लाम' ने ईद मनाने का जो तरीका सिखाया है उस से उस सम्बन्ध का जो श्रल्लाह् श्रौर वन्दे के बीच पाया जाता है पूर्णत प्रदर्शन होता है। ईद मे खुशी का प्रदर्शन विशेष रूप से 'नमाज' श्रौर 'तकवीर' के द्वारा किया जाता है। श्रानन्द-प्रदर्शन के श्रतिरिक्त यह श्रल्लाह् की सेवा मे बन्दे की श्रोर से कृतज्ञता प्रकाशन भी है। 'मोमिन' की दृष्टि मे सब से श्रधिक प्रिय श्रौर श्रानन्ददायक स्थिति वही है जिस मे उस सम्बन्ध का प्रदर्शन पूर्णतः होता हो जो श्रल्लाह् श्रौर उसके बीच पाया जाता है। 'रुकूश्र' श्रौर 'सजदो से बढ कर दूसरी कोई श्रवस्था नही हो सकती है जिस को यह विशेषता प्राप्त हो। नमाज़' श्रपनी वन्दगी श्रौर श्रल्लाह् के स्वामित्व श्रौर उस की महानता के प्रदर्शन का उत्तम श्रौर पूर्ण माध्यम है। श्रल्लाह् श्रौर बन्दे के बीच पाये जाने वाले सम्बन्ध का प्रदर्शन जीवन का सब से मधुर सगीत है।

जकात

अल्लाह् के वाद हम पर उस के वन्दो का हक है । 'दीन' या धर्म वास्तव मे अल्लाह् और उस के वन्दों के हक को अदा करने का ही दूसरा नाम है । 'नमाज़' और 'जकात' हमें इन ही दोनों प्रकार के हक को याद दिलाते हैं । मौलाना हमीदुद्दीन फराही जिन्हे कुरआन का विशेष ज्ञान प्राप्त था लिखते हैं : "नमाज की वास्तविकता वन्दे का अपने 'रव, की ओर प्रेम और भय से झुकना है और 'ज़कात' की वास्तविकता बन्दे का वन्दे की ओर प्रेम और ममत्त्व भाव से प्रवृत्त होना है"
—तफसीर निजामुल करआन पृष्ठ ६ ।

'दीन' (धर्म) के इस मौलिक तथ्य की ओर कुरआन मे विभिन्न स्थानो पर सकेत किया गया है । 'तौरात' और इन्जील मे भी इस मौलिक तथ्य पर प्रकाश डाला गया है[1]। कुरआन नमाज़ और 'ज़कात' को विशेष महत्त्व देते हुये इन को मूल धर्म निर्धारित करता है "और उन्हे हुक्म इसी का तो दिया गया था कि अल्लाह् की 'इबादत' करे दिन को उसी के लिए खालिस कर के, एकाग्र हो कर और 'नमाज' कायम करे और 'जकात' दें और यह है ठोस और सिद्ध वाला 'दीन' (धर्म)" ।

—सूरा अल-बैयना ५

१ "एक धर्मज्ञाता ने परीक्षा के लिए उस से पूछा हे गुरु ! तौरेत मे कौन सा आदेश सव से बडा है ? उस ने उस से कहा कि परमेश्वर अपने प्रभु से अपने सारे मन और अपने सारे प्राण और अपनी सारी बुद्धि के प्रेम रख । बडा और मुख्य आदेश यही है । और इसी के समान यह दूसरा भी है कि अपने पडोसी से अपने समान प्रेम रख । इन ही दो आदेशो पर सम्पूर्ण 'तौरात' और 'नबियो' के 'सहीफें' आधारित है"—मत्ता २२ : ३५-४० ।

एक दूसरी जगह है "परमेश्वर हमारा प्रभु एक ही परमेश्वर है और तू परमेश्वर अपने प्रभु से अपने सारे मन और अपने सारे प्राण और अपनी सारी बुद्धि से पेम रख । दूसरा यह कि तू अपने पडोसी से अपने समान प्रेम रख । इन से वडा और कोई आदेश नही" । —मुरकुस १२ २८ ।

'दीन' वास्तव में अल्लाह और उस के बन्दो 'दोनों के हक़ को अदा करने का नाम है। इस की पुष्टि हदीस से भी होती है उदाहरणार्थ यहाँ "एक हदीस प्रस्तुत की जाती है : "हजरत इब्न अब्बास रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा" : तीन व्यक्ति ऐसे है कि उन की 'नमाज' उन के सिर से एक बालिश्त भी उपर नही उठती "एक वह 'इमाम' जिस को लोग नापसन्द करते हो, दूसरे वह स्त्री जिस ने रात इस तरह गुजारी कि उस का पति उस से रुष्ठ हो और तीसरे वे दो भाई जो परस्पर सम्बन्ध-विच्छेद कर ले"। इस 'हदीस' से ज्ञात हुआ कि बन्दे के लिए आवश्यक है कि वह अल्लाह और उस के बन्दो दोनो का हक पहचाने और अदा करे अल्लाह का हक भी वास्तव मे उस समय तक अदा नही हो सकता जब तक कि कोई अल्लाह के बन्दो का हक अदा न करे।

'जकात' अदा कर के मनुष्य केवल एक कर्तव्य के पालन से ही निवृत्त नही होता बल्कि इस से उस के व्यक्तित्व को भी पूर्णता प्राप्त होती है। पूर्णता, विकास एव निर्माल्य ही 'शरीअत' के (और कर्मकाण्ड सम्बन्धी) आदेशो का मौलिक उद्देश्य है। जिस चीज का नाम 'दीन' (धर्म) मे 'हिकमत' (*Wisdom*) है वह इस के अतिरिक्त कुछ नही कि ज्ञान और अन्तर्दृष्टि के साथ मनुष्य की आत्मा का विकास और शुद्धिकरण हो। 'जकात' का वास्तविक उद्देश्य ही यह है कि उस से मनुष्य की आत्मा शुद्ध और विकसित हो। 'ज़कात' का अर्थ है पवित्रता और विकास। जकात 'देने' से आदमी स्वार्थपरता, तंगदिली और धन के लोभ से छुटकारा पाता है। उस की आत्मा को शुद्धता एवं विकास प्राप्त होता है। अतएव कुरआन में कहा गया है : "और उस ('जहन्नम') से बचा लिया जायेगा वह व्यक्ति जो अल्लाह का बड़ा डर रखने वाला है जो अपना माल दूसरों को देता है कि अपने को निखारे"

—सूरा ९२ आयत १७-१८

एक दूसरी जगह नबी सल्ल० को सम्बोधित करते हुए कहा गया है. "उन के मालों मे से 'सदका' लो जिस के द्वारा उन्हे शुद्ध करोगे और उन (की आत्मा) को विकसित करोगे" —अत-तौबा. १०४

'जकात' का यह मौलिक उद्देश्य उसी समय प्राप्त हो सकता है जबकि जकात देने के साथ-साथ इस उद्देश्य के प्राप्त करने की सच्ची तलब भी पाई जाती हो। आदमी 'जकात' केवल अल्लाह की

प्रसन्नता के लिए दे। इस के पीछे कोई और ध्येय काम न कर रहा हो। उस की 'जकात' न दिखाने के लिए हो और न दीन-दुखियों को दुख पहुँचाने और उन पर अपना एहसान जताने के लिए हो।

कुरआन में यह बात बार-बार कही गई है कि आदमी का 'दीन' (धर्म) और उस का 'ईमान' उसी समय पूर्ण होगा और उसे वास्तविक और आध्यात्मिक जीवन उसी समय प्राप्त होगा जब कि अल्लाह का प्रेम सब से बढ कर हो और ससार की अपेक्षा मनुष्य 'आखिरत' को प्राथमिकता देने लग जाए। 'नमाज' यदि मनुष्य का नाता अल्लाह से जोड़ती है, तो 'जकात' उसे सासारिक और धन सम्बन्धी लोभ और मोह को उस के मन से निकालती है। 'जकात' दे कर मनुष्य इस बात का प्रमाण सचित करता है कि वह जीवन के वास्तविक उद्देश्य से बेखबर नही है। उस के पास जो-कुछ है उसे वह अल्लाह की सम्पत्ति समझता है। वह उस मे से गरीबो और मुहताजों का भी हक निकालता है और अल्लाह ही के हुक्म से वह उसे प्रयोग मे भी लाता है। अल्लाह का डर रखने वालो की यह विशेष पहचान है कि वे अपने माल की 'जकात' अदा करते है उन के बारे मे कहा गया है "तो मैं अपनी दयालुता उन लोगों के लिए लिख दूँगा जो डर रखते है और 'जकात' देते है और हमारी 'आयनो' पर 'ईमान' रखते है"। —सूरा अल-आराफ १५६।

'जकात' अदा करने से मनुष्य की आत्मा भी शुद्ध होती है और उस का माल भी शुद्ध हो जाता है। लेकिन यदि वह इतना बडा स्वार्थी है कि वह अल्लाह के प्रदान किये हुये धन में से अल्लाह का हक अदा नही करता, तो उस का माल भी अशुद्ध रहता है और उस की आत्मा भी अशुद्ध रहती है। आत्मा के लिए सकीर्णता, कृतघ्नता और स्वार्थपरता से बढकर घुटन और अशुद्धता की बात और क्या हो सकती है। 'जकात' उन लोगो की समस्या का हल है जो मुहताज हैं। मुसलमानो का कर्तव्य है कि वे अपने भाई की सहायता करे। कोई भाई नगा, भूखा और अपमानित न होने पाये। ऐसा न हो कि जो धनवान् हैं वे तो अपने भोग-विलास मे पडे रहे और समुदाय के यतीमो, मुहताजों और विधवा स्त्रियों की खबर लेने वाला कोई न हो। उन्हे यह बात महसूस करनी चाहिए कि उन के धन मे दूसरो का भी हक है। उस में उन लोगों का भी हक है जो निर्धनता के कारण कोई कार्य नही कर सकते हालाँकि उन मे कार्य की क्षमता पाई जाती है। उन के धन मे उन गरीब बच्चों का भी हक है

जो गरीबी के कारण शिक्षा प्राप्त नही कर सकते। और उन के धन मे उन कमजोरी और विवशताग्रस्त लोगों का भी हक है जो किसी कार्य के योग्य नही हैं।

फिर जो धन भी समुदाय और समाज के हित के लिए व्यय किया जाता है वह नष्ट नही होता। जो रुपया भी सामूहिक एव सामाजिक कल्याण के लिए व्यय किया जाता है वह अगणित लाभ का कारण बनता है। जिन से स्वयं व्यय करने वाले व्यक्ति को भी अगणित लाभ पहुँचते हैं। इस के विपरीत जो व्यक्ति अपने धन को अपने पास सुरक्षित रखना चाहता है या लोगों से ब्याज ले कर उसे बढाना चाहता है वह वास्तव में अपने धन के मूल्य (*Value*) को घटाता और स्वय अपने विनाश की सामग्री जुटाता है। कुरआन मे कहा गया है· "अल्लाह ब्याज का मठ मार देता है और 'सदकों' को बढाता है" —अल-बकरा २७६

दूसरे स्थान पर कहा· "तुम जो ब्याज इस ध्येय से देते हो कि लोगों के माल को बढाये तो अल्लाह की दृष्टि में उस से धन नहीं बढता हाँ जो 'जकात' तुम अल्लाह की प्रसन्नता के लिए दो वह बढता चला जायेगा"। —अर-रूम · ४

'जकात' का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य 'दीन' (धर्म) की सहायता और उस की रक्षा भी है। अल्लाह के 'दीन' (धर्म) के लिए जो कोशिश की जा रही हो और जो लडाइयाँ लडी जा रही हों उन के सिलसिले मे भी 'जकात' का धन खर्च किया जा सकता है (दे० सूरा अत-तौबा आयत ६०)।

माल की जो थोडी सी मात्रा 'ज़कात' के रूप मे अनिवार्य की गई है उस का अर्थ यह कदापि नही होता कि धनवान् बस उतना ही खर्च करे उस के पश्चात् यदि कोई अपनी जरूरत ले कर आ जाये या धर्म की सेवा का कोई अवसर आ जाये तो खर्च करने से साफ इन्कार कर दे। बल्कि इस का अर्थ वास्तव में यह है कि कम-से-कम निश्चित धन तो हर धनवान् व्यक्ति को खर्च करना ही चाहिए। उस से अधिक जितना भी हो सके खर्च करे। इसी प्रकार यदि 'ज़कात' एक निश्चित मात्रा से कम माल पर अनिवार्य नही है तो इस का अर्थ यह नही होता कि जिन लोगों के पास इस निश्चित मात्रा से कम माल है वे अल्लाह के मार्ग मे कुछ खर्च ही न करे। अल्लाह के मार्ग मे जिस किसी से जो भी हो सके वह व्यय करे, इस मे स्वय उस का अपना हित है।

'जकात' के लिए एक महत्व की वात यह भी है कि लोगों की 'जकात' एक केन्द्र पर एकत्र की जाये। फिर वहाँ से एक व्यवस्था के अन्तर्गत उसे खर्च किया जाये। जिस तरह 'फर्ज' (अनिवार्य) 'नमाज' जमाअत के साथ एक 'इमाम' की अध्यक्षता मे अदा की जाती है उसी तरह 'जकात' की भी एक सामूहिक व्यवस्था हो जिस के अन्तर्गत 'जकात' भी दी जाये और फिर उसे व्यवस्थित रूप में खर्च किया जाए। इस प्रकार 'ज़कात' से समाज को अधिक-से-अधिक लाभ पहुँच सकता है।

———

जंकात का महत्व

عَنِ ابْنِ عَبَّاسٍ أَنَّ رَسُولَ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ بَعَثَ مُعَاذًا إِلَى الْيَمَنِ فَقَالَ
إِنَّكَ تَأْتِي قَوْمًا أَهْلَ كِتَابٍ فَادْعُهُمْ إِلَى شَهَادَةِ أَنْ لَا إِلٰهَ إِلَّا اللّٰهُ وَأَنَّ مُحَمَّدًا
رَسُولُ اللّٰهِ. فَإِنْ هُمْ أَطَاعُوا لِذَالِكَ فَأَعْلِمْهُمْ أَنَّ اللّٰهَ قَدْ فَرَضَ عَلَيْهِمْ
خَمْسَ صَلَوَاتٍ فِي الْيَوْمِ وَاللَّيْلَةِ فَإِنْ هُمْ أَطَاعُوا لِذَالِكَ فَأَعْلِمْهُمْ أَنَّ
اللّٰهَ قَدْ فَرَضَ عَلَيْهِمْ صَدَقَةً تُؤْخَذُ مِنْ أَغْنِيَائِهِمْ فَتُرَدُّ عَلَى فُقَرَائِهِمْ
فَإِنْ هُمْ أَطَاعُوا لِذَالِكَ فَإِيَّاكَ وَكَرَائِمَ أَمْوَالِهِمْ وَاتَّقِ دَعْوَةَ الْمَظْلُومِ
فَإِنَّهُ لَيْسَ بَيْنَهَا وَبَيْنَ اللّٰهِ حِجَابٌ ——— بخاری، مسلم

१. हजरत इब्न अब्बास रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने मुआज रजि० को यमन (हाकिम) बना कर भेजा तो कहा तुम ऐसे लोगों के पास जा रहे हो जो किताब वाले है तो तुम उन्हें इस बात की गवाही की ओर आमन्त्रित करना कि अल्लाह के सिवा कोई 'इलाह' (इष्ट पूज्य) नही और मुहम्मद अल्लाह के रसूल है। यदि वे इस को मान ले तो उन को बताना कि अल्लाह ने उन पर दिन-रात में पाँच 'नमाजे' फर्ज (अनिवार्य) की है। यदि वे इस को भी मान ले तो उन्हे बताना कि अल्लाह ने उन पर 'सदका' (जकात) फर्ज किया है जो उन के धनवान लोगों से लिया जायेगा और उन के गरीबो को लौटा दिया जायेगा[१]। यदि वे इस बात को भी मान ले तो सावधान ! उन के

१. इस 'हदीस' से कुछ महत्वपूर्ण बातो पर प्रकाश पडता है। जो व्यक्ति इस्लामी राज्य की ओर से राज्यपाल (*Governor*) या हाकिम बनाया जाये उसका प्रथम कर्तव्य लोगो को एक अल्लाह की ओर आमन्त्रित करना है दूसरे समस्त उद्देश्यो की हैसियत गौण हे। गैर इस्लामी राज्य मे राज्यपाल का मौलिक दायित्व राज्य की व्यवस्था बनाये रखना है। इसके विपरीत इस्लामी राज्य छोटे-बडे प्रत्येक कार्यकर्त्ता या कर्मचारी का पहला काम लोगो को अल्लाह के मार्ग को ओर बुलाना है। जिस राज्य का पहला काम लोगो को सत्य की ओर बुलावा देना हो वह राज्य ससार को दयालुता और सुख-शान्ति से भर देगा, उस राज्य मे अत्याचार और अन्याय को फलने-फूलने का अवसर नही मिल सकता।

उच्च कोटि के माल (छाँट-छाँट) न लेना[२] और पीडित की पुकार से बचना

इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि लोगो के सामने 'दीन' (धर्म) को प्रस्तुत करने मे सदैव उचित ढग अपनाना चाहिए। जिस जाति को भी हम 'दीन' (धर्म) की ओर आमन्त्रित करें उसकी जातीय विशेषताओ का पूरा ध्यान रखना आवश्यक है। फिर 'दीन' को पूरा-पूरा एक साथ पेश करने के बदले पहले मौलिक बातें क्रम से पेश करनी चाहिएँ। इससे 'दीन' को समझने और उसे मानने मे सुविधा होगी। 'तौहीद', 'रिसालत' पर 'ईमान' लाने के पश्चात् सर्व प्रथम चीज 'नमाज' है। नमाज का समय आ जाने पर साफ ज़ाहिर हो जाता है कि कौन व्यक्ति इसको मानता और इसकी घोषणा करता है कि वह अल्लाह का है और अल्लाह ही की वन्दगी और आज्ञापालन मे अपना जीवन व्यतीत करना चाहता है। और कौन अल्लाह से मुख मोड़ता है। 'नमाज' के बाद दूसरी चीज़ ज़कात है। 'ज़कात' के दो रूप हैं। एक तो सामान्य 'सदका' या 'ज़कात' है जिसे 'ईमान' वाले अपने मालो मे से हर समय अदा करते रहते हैं। और यथा सम्भव मुहताजो की सहायता करते रहते हैं। 'ज़कात' का दूसरा रूप यह है कि मुसलमान अपने मालो मे से कानून के अनुसार एक निश्चित मात्रा निकालते है इस 'हदीस' मे इसी 'ज़कात' के बारे मे कहा कि वह समाज के मालदारो से ली जाती है और समाज ही के गरीबो और मुहताजो पर खर्च की जाती है। गरीबो और मुहताजो की सहायता 'जन्नत' के महत्वपूर्ण उद्देश्यो मे से है। अल्लाह ने मालदारो के मालो मे गरीबो का हक रक्खा है। गरीबो का हक उन तक पहुँचाना मालदारो पर वाजिब है। कुरआन में भी कहा गया है: "उनके मालो मे एक जाना-बूझा हक है माँगने वाले का और जो पाने से रह गया हो उसका।"—सूरा ७० आयत २३-२४।

२ नबी सल्ल० ने यह आदेश दे दिया कि 'ज़कात' लेते समय ऐसा न हो कि अच्छे-अच्छे माल छाँट कर ले लिए जायें बल्कि औसत दर्जे का माल लिया जाए। इस आदेश का नतीजा यह था कि 'सहाबा' और 'ताबईन' अपना सबसे अच्छा माल 'ज़कात' मे पेश करते लेकिन लेने वाला लेने से इन्कार करता यहाँ तक कि यह मामला खलीफा के सामने लाया जाता। आदेश का अभिप्राय यह है कि कर्मचारी अपने तौर से छाँट कर न लें हाँ यदि 'ज़कात' देने वाला अपनी खुशी से अच्छा माल छाँट कर पेश करे, तो उसके क़बूल करने मे कोई दोष नहीं।

क्योंकि उस के और अल्लाह् के बीच में कोई परदा नही है[3]।

—बुखारी, मुस्लिम

२. हज़रत आइशा रजि० कहते है कि मैं ने अल्लाह् के रसूल० सल्ल० को कहते सुना 'सदका' जब किसी माल में मिला हुआ होगा (निकाला न जायेगा) तो वह उस को तबाह् कर के छोडेगा[4]।

मुहम्मद शाफई, तारीख कबीर बुखारी, मुसनद हुमैदी।

३ हज़रत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा जिस व्यक्ति को अल्लाह् ने माल दिया फिर उस ने उस की 'ज़कात' नही अदा की तो उस का माल 'कियामत' के दिन ज़हरीले गंजे साँप का रूप धारण कर लेगा जिस(के सिर) पर दो काले बिन्दु होंगे[5] और वह 'कियामत' के दिन उस (के गले) का तौक़ बन जायेगा। फिर वह साँप उस के दोनो जबड़ो को पकड़ेगा और कहेगा : मैं तेरा माल हूँ, मैं तेरा खज़ाना हूँ। फिर आप ने पढा · "वे लोग जो उस चीज मे कजूसी करते है जो अल्लाह् ने अपने अनुग्रह से उन्हे दी है वे यह न समझे कि यह उन के लिए अच्छा है बल्कि यह उन के हक में बुरा है। जो कुछ उन्हों ने कजूसी की वही आगे वही 'कियामत' के दिन उन (के गले) का तौक बन जायेगा[6]"।

---

३. पीड़ित की पुकार और श्राप से बचो अर्थात् लोगो पर ज्यादती न की जाए, अल्लाह् उनकी पुकार को जल्द सुनता है।

४. अर्थात् यदि माल से 'ज़कात' का हिस्सा मिला हुआ होगा, निकाल कर हक-दारो को न दिया जाएगा, तो यह चीज़ आदमी के 'दीन' और 'ईमान' को तबाह् करने वाली है ही, साथ ही उसकी पूरी सम्पत्ति भी उसके अत्याचार के कारण विनष्ट हो सकती है। 'ज़कात' न अदा करने के कारण आदमी का सारा माल नापाक रहता है। इससे बडी तबाही की बात क्या हो सकती है। इसी प्रकार वह व्यक्ति भी अपने माल को नापाक और तबाह् करता है जो 'ज़कात' लेने का हकदार न होने के बावजूद 'ज़कात' ले कर अपने माल मे सम्मिलित करता है।

५. यह साँप के अत्यन्त ज़हरीले होने की पहचान है।

६. 'ज़कात' देने से जो माल 'कियामत' के दिन उसके आराम का कारण बन सकता था, उस दिन मुसीबत बन कर उसकी जान को लागू होगा। कजूस

४. हज़रत अब्दुल्लाह इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि नबी ल्ल० ने कहा जो भूमि वर्षा के जल से या बहते स्रोत से सिंचित ोती हो या नदी के निकट होने के कारण पानी देने की आवश्यकता होती हो उस की पैदावार का दसवाँ भाग ('जकात' के रूप में) निकाला ायेगा और जिस को मजदूर लगा कर सींचा जाये उस में बीसवा भाग ़ । —बुखारी

५ इब्न अब्बास रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल० ने 'सदका-ए-फ़ित्र' को वाजिब किया ताकि व्यर्थ और अश्लील बातो का जो 'रोज़े' े हो ंई हो कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) बने और मुहताजों के खाने की व्यवस्था हो जाए[७]। —अबू दाऊद

६ हजरत उम्मे सलमा रज़ि० कहती हैं कि मैं सोने के 'अवजाह, (एक विशेष ज़ेवर) पहनती थी। मैं ने पूछा हे अल्लाह के रसूल ! क्या यह भी 'कंज़' (सचय) है ? आप ने कहा जो इस मात्रा को पहुँच जाये जिस मे 'जकात अदा करने का आदेश है, और उस की 'ज़कात अदा की जाए तो "क़ंज़" नही है[८]।

और धन का लोभी अपनी दौलत से लिपटा रहता है। अपने माल और खज़ाने पर सांप बना बैठा रहता है, दूसरो को उससे फायदा उठाने का मौका ही नही देता। इसका परिणाम इस रूप मे उसके सामने आएगा कि उसकी दौलत और उसका खज़ाना उसके लिए सांप बन जाएगा और उसे डसता रहेगा।

७ रमज़ान के एक मास के 'रोज़े' रखने के बाद 'सदका-ए-फित्र' अदा करने का आदेश दिया गया। ताकीद की गई कि घर के सभी लोगो की ओर से 'ईद' की नमाज़ से पहले-पहल 'सदका-ए-फित्र' अदा किया जाए। इस 'सदका' के वाजिब होने के दो कारण इस 'हदीस' मे बयान किए गए है। एक यह कि रोज़ेदार से 'रोज़े' की हालत मे कोशिश के बावजूद जो कोताही या कमज़ोरी जाहिर हुई हो 'सदका' के द्वारा उसकी क्षतिपूर्ति हो सके। दूसरे यह कि जिस दिन सारे मुसलमान 'ईद' की खुशी मनाने जा रहे हो उस दिन समाज के गरीब लोगो के खाने-पीने का भी प्रबन्ध हो जाए ताकि वे भी ईद की खुशी मे शरीक हो सकें।

८ कुरआन म कहा गया है "जो लोग सोना और चाँदी एकत्र करके ं रते हैं और उन्हे अल्लाह के मार्ग मे खर्च नही करते उन्हे दुखदायिनी या ा की

७. समरा बिन जुन्दुब रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० आदेश दिया करते थे कि जिस चीज को विक्रय (व्यापार) के लिए तैयार किया हो उस में से 'सदका' (जकात) निकाले[९]। —अबू दाऊद

८. अता बिन यसार 'मुरसल' तरीके से बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . सदका मालदार के लिए वैध नही है सिवाय उस के 'जिहाद' में हो या मुसाफिर हो या एक मुहताज पड़ोसी हो उसे कोई चीज़ 'सदका' मे मिली वह 'हदया' (उपहार, भेट) के रूपमे तुम्हे पेश करे या तुम्हे आमंत्रित करे[१०]। —अबू दाऊद

९ अबू सईद खुदरी रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . 'सदका लेना धनवान् के लिए वैध नही सिवाय उसके जो 'जिहाद' मे हो या मुसाफिर हो या एक मुहताज पड़ोसी हो उसे कोई चीज सदका में मिली वह 'हदया' (उपहार) के रूप में तुम्हे पेश करे या तुम्हे आमत्रित करे। —अबू दाऊद

मंगल सूचना दे दो।"—९ ३४। इस आयत मे सोने-चाँदी की जिस 'तखज़ीन' (संचय) पर यातना की धमकी दी गई है इस 'रिवायत' मे हज़रत उम्मे सलमा का सकेत उसी की ओर था। प्रश्न का अभिप्राय यह था कि क्या इस ज़ेवर की गणना भी उस सचय मे होगी जिस पर कुरआन मे धमकी दी गई है। आपने कहा कि यदि ज़ेवरो की 'ज़कात' अदा की जाती रहे, तो फिर वह 'कंज़' (संचय) नही है जिस पर यातना की धमकी दी गई है।

९ मालूम हुआ कि कारबार के माल पर 'ज़कात' वाजिब (अनिवार्य) है।

१० इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि 'ज़कात' का माल जिहाद' करने वालो पर खर्च किया जा सकता है, और उसमे से 'ज़कात' वसूल करने वाले को वेतन भी दिया जा सकता है। यदि किसी व्यक्ति को तावान भरना है या कोई ऋण के बोझ से लदा हुआ है, तो 'ज़कात' से उसकी सहायता की जा सकती है। यह भी वैध है कि किसी मुहताज मे 'जकात' के माल को कोई मालदार खरीद कर अपने काम मे ले आए। इसी प्रकार उस 'हदया' या उपहार को स्वीकार करने मे भी कोई दोष नही जो मुहताज व्यक्ति 'ज़कात' या सदका के माल मे से पेश करे।

दान की श्रेष्ठता

عَنْ اَبِیْ هُرَیْرَةَ رض قَالَ: قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّی اللّٰهُ عَلَیْهِ وَسَلَّمَ قَالَ اللّٰهُ تَعَالٰی
اَنْفِقْ یَا ابْنَ اٰدَمَ اُنْفِقْ عَلَیْكَ ——— بخاری، مسلم

१. हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि सर्वोच्च अल्लाह कहता है हे आदम के बेटे ! तू (मेरे बन्दो पर) खर्च कर, मैं तुझ पर खर्च करूँगा[1] । —बुखारी, मुस्लिम

३. हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा सदका (दान) 'रब' के प्रकोप को ठण्डा करता है और बुरी मृत्यु को हटाता है[2] । —तिरमिजी

२. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह रसूल सल्ल० ने कहा : 'सदका' (दान) से, माल में कमी नही आती[3] और कामा कर देने मे अल्लाह इज्जत ही बढाता है और जो व्यक्ति अल्लाह के लिए

---

१ अर्थात् यदि तू लोगो पर खर्च करेगा तो मैं तुझे निर्धन न होने दूँगा बल्कि मैं तुझे और अधिक प्रदान करूँगा ।

२ किसी व्यक्ति ने यदि किसी भूल-चूक और गुनाह से अपने को अल्लाह के प्रकोप का भागी बना लिया है, तो 'सदका' (दान) अल्लाह के प्रकोप को शान्त कर सकता है, 'सदका' दे कर बन्दा अल्लाह की दयालुता और उसकी क्षमा का अधिकारी बन जाता है । इसके अतिरिक्त 'सदका' की वरकत से मनुष्य बुरी मृत्यु से सुरक्षित रहता है । 'सदका' की बरकत से अच्छे और नेक कामों की रूचि बढती है । 'ईमान' दृढ और पूर्ण हो जाता है । मनुष्य को सत्य पर चलने का सौभाग्य प्राप्त होता है अत 'सदका' करने वाले का परिणाम अच्छा ही होगा । कुरआन मजीद मे भी कहा गया है " और अच्छा परिणाम 'तकवा' (अल्लाह का डर रखने) के लिए है ।"—(२० १३२) ।

३ साधारणतया लोग सदका इस भय से नही देते कि इससे माल मे कमी आ जाएगी । आपने कहा कि यह विचार सत्य नही है । सदका से माल घटता नही, उसमे बरकत आती है । सदका के कारण ससार मे भी अल्लाह और अधिक प्रदान करता है । 'आखिरत' मे जो-कुछ देगा वह अलग है जैसा कि एक 'हदीस' है "खर्च करो तुम पर खर्च किया जाएगा ।"—(बुखारी, मुस्लिम) कुरआन मजीद मे भी कहा गया है : "तुम जो-कुछ खर्च करते हो

नम्रता अनपाता है अल्लाह उसे उच्चता ही प्रदान करता है[४]। —मुस्लिम

४. मुसअब बिन सअद रजि० कहते हैं कि सअद ने अपने बारे में यह ख्याल किया कि उन्हे अपने से छोटे पर श्रेष्ठता प्राप्त है। अल्लाह के रसूल० ने कहा तुम्हे (अल्लाह की ओर से) सहायता और रोज़ी तुम्हारे इन्ही कमजोरो (और मुहताजो) के कारण मिलती है[५]"। —बुख़ारी

५. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा बहुत से लोग ऐसे है जो बहुत ही परेशान और धूल-धूसरित हैं और जिन्हे दर्वाज़ो से धक्के दे कर हटा दिया जाता है और वे अल्लाह पर कसमे खाये तो अल्लाह उन की कसमो को अवश्य पूरी कर दे[६]। —मुस्लिम

(अल्लाह) उसकी जगह तुम्हे और देता है।"—सबा ३९।

४ किसी को क्षमा कर देने से आदमी छोटा नही हो जाता बल्कि नैतिक दृष्टि से वह बहुत ऊँचा हो जाता है। लोगों मे अल्लाह उसे आदर और सम्मान प्रदान करता है। इसी तरह यदि कोई व्यक्ति अल्लाह की प्रसन्नता के लिए विनम्रता अपनाता हैं तो इससें वह अपने को नीचे नही गिराता बल्कि अपने प्राकृतिक स्वभाव की माँग पूरी करके उच्चता प्राप्त करता है। अल्लाह इसे ऐसा सम्मान प्रदान करता है जिसे प्राप्त करने का कोई और साधन नही है। एक रिवायत मे है कि आपने कहा "बन्दे का माल सदका से कम नही होता और जिस बन्दे पर ज़ुल्म और अत्याचार किया जाए और वह उस पर सब्र कर जाए, तो अल्लाह अवश्य ही उसका सम्मान बढाता है और जिस बन्दे ने सवाल का दर्वाज़ा खोला अल्लाह उसके लिए मुहताजी का दर्वाजा खोल देता है।"

५ अर्थात् किसी व्यक्ति को कमजोरो और गरीबो के मुकाबले मे अपने को उच्च समझना नादानी है। अल्लाह कितने ही लोगो को केवल कमज़ोरो और मुहताजो के कारण और उनकी दुआओ की बरकत से रोज़ी देता है और 'इस्लाम के शत्रुओ के मुकाबले मे विजय प्रदान करता है। इसलिए कमज़ोरो और गरीबो की प्रतिष्ठा को घटाना ठीक नही है। मालदारो का कर्तव्य है कि वे कमज़ोरो और मुहताजो के हको को पहचाने और उनके साथ अच्छा व्यवहार करे।

६ अर्थात् कितने ही लोग ऐसे होते हैं जो देखने मे परेशान होते हे कोई उनका ख्याल नही करता हालाँकि अल्लाह से उनका गहरा सबन्ध होता है। वे यदि अल्लाह

६. हज़रत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है किअल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कजूस और 'सदका' देनें वालों की मिसाल उन दो आदमियों की - सी है जिन्हो ने लोहे के कवच पहन रक्खे हो। उन दोनों के हाथ सीने और गले तक जकडे हुये हैं[७]। 'सदका' देनें वाला जब भी सदका देता है तो वह कवच कुशादा हो जाता है। और कजूस 'सदका' देने का ख्याल करता है, तो वह कवच और अधिक तग हो जाता है और कवच का प्रत्येक कु डल अपने स्थान पर बैठ जाता है[८]।

—मुस्लिम, बुखारी

७. अदी बिन हातिम रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा · आग से बचो आधे छुआरे के द्वारा ही सही। दूसरी रिवायत मे है कि जो व्यक्ति तुम मे से इस का सामर्थ रखता हो कि बच

के भरोसे पर किसी बात पर कसम खा लें, तो अल्लाह उनकी कसम को पूरा कर के रहेगा। उनकी बात और प्रार्थना रद्द नही हो सकती।

एक रिवायत मे है कि आपने 'जन्नत' मे दाखिल होते अधिक सख्या मुहताजो की देखी, और मालदारो को देखा कि उन्हे रोक लिया गया है।

—बुखारी, मुस्लिम

७ कवच की तगी के कारण उनके हाथ ऊपर से नीचे तक बिल्कुल शरीर से चिमट गए हैं।

८. अर्थात् दानशील व्यक्ति जब 'सदका' देने का निश्चय करता है तो उसका सीना कुशादा हो जाता है। वह खुले दिल से 'सदका' (दान) देता है। वह तग दिल नही होता है। इसके विरीत कजूस व्यक्ति जब कुछ देने को सोचता है, तो उसका सीना और तग हो जाता है। मानो उसका शरीर किसी तग कवच मे ऐसा कसा हुआ है कि वह हाथ बाहर निकालकर किसी को कुछ देने का सामर्थ्य नही रखता। पैसा देने हुये ऐसा लगता है कि पैसे के साथ उसके प्राण भी निकल जायेंगे।

कवच शरीर की रक्षा के लिए होता है। जब वह कुशादा हो जाती है, तो पूरा शरीर सुरक्षित हो जाता है, अर्थात् 'सदका' के कारण मनुष्य पूर्ण रूप से अल्लाह के सरक्षण मे आ जाता है। रहा कजूस व्यक्ति तो वह सदैव तगदिली मे ग्रस्त रहता है। न वह सुरक्षित होता है और न उसे वास्तविक आराम और शान्ति प्राप्त होती है।

सके आधे चुआरे के द्वारा ही सही, उसे अवश्य बचना चाहिए[९]।
—बुखरी, मुस्लिम नसई

८ इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब कि आप मिंबर पर थे और 'सदके' का और माँगने से बचने का जिक्र करते थे ऊपर का हाथ नीचे के हाथ से उत्तम है। ऊपर का (हाथ) देने वाला है और नीचे का माँगने वाला।—बुखारी, मुस्लिम आदि

९ इब्न मसऊद से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम में किस को अपने माल से बढ कर अपने वारिस का माल अधिक प्रिय है ? (लोगों) ने कहा हे अल्लाह के रसूल ! हम में तो प्रत्येक को अपना ही माल सब से अधिक प्रिय है आप ने कहा : उस का माल तो वही है जो उस ने आगे भेजा और वह उस के वारिस का माल है जो उस ने पीछे छोडा[१०]। —बुखारी, मुस्लिम

१० हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है कि एक बकरी जब्ह की गई (और उस का मास बाँट दिया गया)। आप ने कहा उस मे से क्या बाकी रहा ? (हजरत आइशा ने) कहा उस की केवल एक रान बची है। आप ने कहा सब बाक़ी है सिवाय उस रान के (जो बाँटी नही गई)[११]।

---

९ अर्थात् 'सदका' अवश्य दो। यह अल्लाह के प्रकोप को शान्त करने वाली और 'जहन्नम' की आग से बचाने वाली चीज़ है। यदि अधिक देने का सामर्थ न हो तो जो भी हो सके यद्यपि वह अत्यन्त थोडा हो, 'सदका' दो।

१० अर्थात् यदि तुम्हे अपना माल प्यारा है तो तुम्हारा माल तो वह है जो तुम अल्लाह के मार्ग मे खर्च करके अपने शाश्वत जीवन के लिए भेजते हो। जो-कुछ एकत्र करके तुम अपने पीछे दुनिया मे छोडते हो वह तुम्हारा अपना नही तुम्हारे वारिसो का माल है। यदि तुमने अपने लिए आगे कुछ नही भेजा है या बहुत कम भेजा है, तो तुम निर्धन हो भले ही ससार मे तुमने कारून का खजाना ही क्यो न एकत्र कर रक्खा हो। परन्तु यदि तुमने आगे के लिए प्रबन्ध कर रक्खा है और प्रबन्ध करते रहते हो, तो तुम्हे निर्धन और कगाल कदापि नही कहा जा सकता। दुनिया तुम्हे निर्धन समझती है तो यह उसकी दृष्टि का दोष है।

११ अर्थात् जो मास बाँट दिया गया वास्तव मे वही बाकी और काम आने वाला है, सदैव का लाभ उसी से उठाया जा सकता है। जो भाग अपने लिए रोक

११. अबूज़र रज़ि० कहते हैं कि मैं अल्लाह के रसूल सल्ल० की सेवा में हाज़र हुआ, आप 'काबा' की छाया मे बैठे हुये थे। मुझे देखा तो कहा : काबा के 'रब' की कसम वे लोग बड़े घाटे में है ? मै ने कहा मरे मेरे माता-पिता आप पर निछावर हों ! वे कौन लोग है। कहा : वे लोग जो बड़े धनवान् हैं, सिवाय उन लोगो के जिन्होने अपने आगे-पीछे और दाये बाये (हर भलाई के काम में)खर्च किया और ऐसे लोग कम है[१२]।

—बुखारी, मुस्लिम

१२. हज़रत सौबान रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · उत्तम दीनार (एक सिक्का का नाम) वह है जिसको आदमी अपने बाल-बच्चों पर खर्च करता है और वह दीनार उत्तम है जिसे वह अल्लाह के मार्ग में सवारी के लिए खर्च करता है[१३]। और वह दीनार उत्तम है जिसे वह अल्लाह के मार्ग में अपने साथियो पर खर्च करता है[१४]।

—मुस्लिम

१३. हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा एक दीनार वह है जो तू अल्लाह के मार्ग मे खर्च करता है, एक दीनार वह है जो तू किसी गुलाम को आजाद कराने मे खर्च करता है। एक वह दीनार है जो तू किसी मुहताज पर खर्च करता है और एक दीनार वह है जो तू अपने घर वालो पर खर्च करता है। इन मे बदला (पाने) की दृष्टि से सब से बढकर वह दीनार है जिसे तू अपने घर वालों पर खर्च करता है[१५]। —मुस्लिम

लिया गया वह समाप्त होने वाला है।

१२. मतलब यह है कि माल-दौलत बडी परीक्षा की चीज है। इस परीक्षा मे सफल वही हो सकते है जिनके मन मे माल का मोह न हो, जो अपने माल को खुले दिल से अच्छे कामो मे खर्च करते है। जो ऐसा नही करते वे धन पाकर भी घाटा उठाते हैं।

१३. अर्थात् 'जिहाद' के लिए घोडा आदि खरीदने मे व्यय करता है।

१४. अर्थात् अपने उन साथियो पर खर्च करता है जो अल्लाह की राह मे 'जिहाद' कर रहे होते हैं।

१५. मालूम हुआ कि नबी सल्ल० ने जिस 'दीन' (धर्म) की शिक्षा दी हैं उसमे अत्यन्त सन्तुलन हैं। उसमे असन्तुलित नीति अपनाने से रोका गया है। सब से

१४ फातिमा बिन्त कैस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा माल में 'जकात' के अतिरिक्त भी (अल्लाह का) हक है। फिर आप ने पढा ,'नेकी और वफादारी यह नही है कि बस तुम अपने चेहरे को पूर्व या पश्चिम की ओर कर लो, बल्कि वफादारी है जो अल्लाह पर, अन्तिम दिन पर, 'फिरिश्तो पर' अल्लाह की, किताब पर और 'नबियों' पर' ईमान' लाये' और माल उस का (स्वाभाविक,) मोह के होने पर भी नातेदारो और यतीमो और मुहताजो और माँगने वालो को दे और गरदनें छुडाने (गुलाम आजाद कराने मे) खर्च करें। और 'नमाज़' कायम करे और 'जकात' दे। .. ।"१६ — तिरमिजी, इब्न माजा, दारमी

१५ अबू सईद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिस मुसलमान ने किसी मुसलमान को जिस के पास कपडा नही था कपडा पहनाया अल्लाह उस को'जन्नत' को हरा वस्त्र पहना देगा और जिस मुस्लिम ने किसी ही मुस्लिम को भूख की दशा में खाना खिलाया अल्लाह उस को 'जन्नत' के फल खिलाएगा और जिस मुस्लिम ने किसी मुस्लिम को प्यास की दशा में पानी पिलाया अल्लाह उस को ('जन्नत' की) खालिस शराब पिलायेगा जो मुहर-बन्द होगी।

—अबू दाऊद, तिरमिजी

अधिक महत्व इस बात को दिया गया कि करीबी लोगो की खबर ली जाए। घर के लोगो और परिवार का हक अदा करना 'फर्ज़' (अनिवार्य) है। इस कर्तव्य को पूरा करके ही 'नफ्ल' की ओर ध्यान देना चाहिए। हर एक के हक को समझना चाहिए और हर एक के हक और दर्जे का ध्यान रखते हुए हको को अदा करना चाहिए।

१६ 'ज़कात' देने के पश्चात् भी लोगो की ज़िम्मेदारियाँ बाकी रहती है। 'जकात' देने के पश्चात् आदमी को अपना हाथ बिल्कुल खीच नही लेना चाहिए। और न सामाजिक माँगो और मुहताजो और गरीबो को भूलना चाहिए। 'ज़कात' देने के बाद भी यदि कोई मुहताज और मुसीबत का मारा आ जाये या समाज की कोई बडी आवश्यकता सामने आ जागे तो आदमी को इस सिलसिले मे भी माल खर्च करना चाहिए। नबी सल्ल० ने प्रमाण के रूप मे सूरा अल-बकरा की 'आयत' पेश की। इस 'आयत' मे नेकी के कामो के अन्तर्गत 'ईमान' के पश्चात् नातेदारो, अनाथो, यात्रियो, माँगने वालो आदि की माली सहायता का उल्लेख हुआ है। इसके पश्चात् 'नमाज़' कायम करने और

१६ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा यदि मेरे पास उहद के बराबर सोना हो, तो मेरे लिए बडी खुशी की बात यही होगी कि तीन रातें गुजरने से पहले -पहले मेरे पास उस में से कुछ भी न रहे सिवाय इस के कि ऋण चुकाने के लिए उस मे से कुछ बचा लूँ[१७]। —बुखारी

१७. अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा दीनार और दिरह्म का बन्दा तिरस्कृत है[१८]।

—तिरमिजी

१८ अबू सईद खुदरी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा दो आदतें किसी 'ईमान' वाले व्यक्ति में इकट्ठी नही

'जकात' अदा करने का उल्लेख भी किया गया है। इसलिए मालूम हुआ कि मुहताजो, मुसाफिरों आदि की माली सहायता का जो जिक्र यहाँ किया गया है वह 'जकात' के अतिरिक्त है ।

१७. अर्थात् मेरे लिए खुशी की बात यह नही है कि माल मेरे पास इकट्ठा हो बल्कि खुशी की बात मेरे लिए यह है कि मेरे पास जो-कुछ हो मैं उसे जल्द-से-जल्द अल्लाह् के मार्ग मे खर्च कर दूँ। यहाँ तक कि अपने पास कुछ न रहने दूँ। यही 'नबियो' का गौरव है। उनका जीवन इसका प्रत्यक्ष साक्षी होता है कि वे सच्चे हैं, वे जो-कुछ कहते है सत्य है। सत्यता का जो आन्दोलन वे दुनिया मे चलाते है उसके पीछे कदापि उनका कोई व्यक्तिगत सासारिक और भौतिक लाभ नही होता। वे जो-कुछ करते है सत्य के लिए करते हैं।

१८ अर्थात् जो लोग धन के पुजारी हैं, जिन्हे अल्लाह् के मार्ग मे अपना माल खर्च करना अत्यन्त कठिन होता है वे अल्लाह् की दयालुता से दूर है। उनके हिस्से मे फिटकार और तिरस्कार के अतिरिक्त और कुछ नही आ सकता।

धन-दौलत का उपासक बनना बहुत ही बुरा है। इसीलिए 'सदका' केवल उसे लेना चाहिए जो मुहताज हो। मुहताज व्यक्ति भी यदि स्वस्थ है, तो उसे भी यथासम्भव 'सदका' और 'जकात' लेने से बचना चाहिए। उसे परिश्रम करके अपना जीवन निर्वाह करना चाहिए। एक 'हदीस' मे आता है : "मालदार के लिए 'सदका' (जकात) हलाल नही है और न उस व्यक्ति के लिए जो बलिष्ठ और स्वस्थ हो"। —तिरमिज़ी, अबूदाऊद, दारमी, नसई, अहमद, इब्न माजा।

हो सकती कंजूसी और दुःशीलता[१९]। —तिरमिज़ी

२० हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा दान-शील व्यक्ति निकट है अल्लाह से निकट है 'जन्नत' से, निकट है लोगों से, दूर है ('जहन्नम, की') आग से और कंजूस व्यक्ति दूर है अल्लाह से, दूर है 'जन्नत' से, दूर है लोगो से, निकठ है ('जहन्नम' की) आग से[२०]। और जाहिल दानशील व्यक्ति अल्लाह को कजूस उपासक से अधिक प्रिय है। —तिरमिजी

२१ हजरत बरीदा कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब भी किसी ने 'ज़कात' रोक ली अल्लाह ने उसे अकाल ग्रस्त कर दिया[२१]। ——तबरानी-अवसत

२२ इब्न अमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब भी किसी जाति ने अपने मालो की 'जकात' रोक

---

१९ अर्थात् कजूसी और कृपणता का 'ईमान' से कोई सम्पर्क नही है 'ईमान' तो आदमी को उदार, साहसी और विशाल हृदय बनाता है जबकि कजूसी और दु शीलता वास्तव मे सकीर्ण दृष्टिता और सकीर्ण हृदयता की उपज है।

२० दानशीलता से मनुष्य को अल्लाह की प्रसन्नता और उसका सामीप्य प्राप्त होता है। दानशील व्यक्ति से लोग भी प्रसन्न रहते है और ऐसा व्यक्ति परिणाम की दृष्टि से भी सफल होता है। 'जन्नत' उसका शाश्वत ठिकाना है। इसके विपरीत कजूस से न अल्लाह खुश होता है और न दुनिया के लोग उसे आदर की दृष्टि से देखते हैं और परिणाम उसका यह होता है कि 'जन्नत' के स्थान पर वह 'जहन्नम' का अधिकारी होता है।

दानशीलता दुर्गुणो के निदान मे अत्यन्त सहायक होती है। मनुष्य इसके द्वारा नैतिकता एव आध्यात्मिकता के उच्च स्तर को पहुँच जाता है। वह इस योग्य हो जाता है कि उसमे अल्लाह की बडाई और महानता की अनुभूति जाग्रत हो सके। कजूस व्यक्ति स्वार्थपरता और तगदिली मे कुछ इस प्रकार ग्रस्त होता है कि उसे आध्यात्मिक एव नैतिक उच्चता प्राप्त ही नही होती। उसका दिल भौतिक लाभ-हानि की चिन्ताओ मे ही उलझा रहता है जीवन के उच्चतम अर्थ और मूल्य से वह परिचित ही नही हो पाता।

२१ इसलिए अकाल को दूर करने के लिए केवल यही काफी नही है कि अधिक-से अधिक नहरें निकाली जाएँ और ट्यूब वेल और पम्पिग सेट आदि सिंचाई के साधनो को जुटाया जाए बल्कि इसके साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि माल की 'ज़कात' भी निकाली जाए।

ली उस से आकाश की वर्षा रोक ली गई और यदि जानवर न हों तो (बिल्कुल) वर्षा न हो[२२]। —तबरानी

सदका (दान) का व्यापक अर्थ

عَنْ أَبِي مَسْعُودٍ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ. إِذَا أَنْفَقَ الْمُسْلِمُ نَفَقَةً عَلَى أَهْلِهِ وَهُوَ يَحْتَسِبُهَا كَانَتْ لَهُ صَدَقَةً ـــــــ بخاری مسلم

१. हज़रत अबू मसऊद से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब कोई मुस्लिम व्यक्ति अपने घर वालो पर पुण्य के ध्येय से खर्च करता है, तो इसकी गणना भी उसके लिए 'सदका' (दान) में होती है[१]। —बुखारी, मुस्लिम

२ सुलेमान बिन आमिर रज़ि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा किसी मुहताज को सदका देना केवल 'सदका' है और किसी करीबी नातेदार को देने मे दो पहलू हैं वह 'सदका' भी है और नाता-रिश्ता जोडना भी है[२]। —अहमद, तिरमिज़ी, नसई इब्न माजा, दारमी

२२ अर्थात अल्लाह कभी बेगुनाह जानवरो के कारण वर्षा कर देता है हालांकि मनुष्यो के अपराध और अवज्ञा का परिणाम तो यह होना चाहिए था कि वर्षा बिल्कुल न हो।

१ अर्थात् इस पर भी वह ईश्वर के यहाँ शुभ फल, पुरस्कार और पारिश्रमिक का अधिकारी होता है। मुस्लिम व्यक्ति जब दूसरो पर अपना धन खर्च करता है उस समय भी वास्तव मे ईश-प्रसन्नता की प्राप्ति ही उसका मुख्य ध्येय होता है और जब वह अपने बाल-बच्चों और अपने घर वालो पर खर्च करता है उस समय भी वह ईश-प्रसन्नता का ही इच्छुक होता है। एक ही चरित्र और स्वभाव (*Character*) है जिस का प्रदर्शन 'मुस्लिम' व्यक्ति के जीवन मे विभिन्न अवस्थाओ मे होता है। अपनी मूल प्रकृति की दृष्टि से उसका प्रत्येक कर्म 'सदका' कहलाने योग्य ही है

२ अर्थात् किसी निकटतम नातेदार पर खर्च करने से सदका के अतिरिक्त नाते-रिश्ते के आदर करने का शुभ फल भी उसे प्राप्त होगा, क्योकि अपने नातेदार की सेवा कर के उसने सदका का पुण्य ही नही कमाया बल्कि उसे अपने नातेदार के साथ अच्छा व्यवहार करने का श्रेय भी प्राप्त हुआ।

३ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है, उन्होंने कहा हे अल्लाह के रसूल ! कौन सा 'सदका' उत्तम है ? आपने कहा जो गरीब अपने परिश्रम की कमाई से करे[3] । और शुरू उन लोगों से करो जिनके तुम जिम्मेदार हो[4] ।
—अबुदाऊद

४ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि एक व्यक्ति अल्लाह के रसूल सल्ल० की सेवा मे उपस्थित हुआ और कहा कि मेरे पास एक दीनार है । आपने कहा अपने ऊपर खर्च करो । उसने कहा कि मेरे पास और है । आपने कहा . उसे अपने बच्चों पर खर्च करो । उसने कहा : मेरे पास और है । आपने कहा इसे अपनी पत्नी पर खर्च करो उसने कहा कि मेरे पास और है । आपने कहा फिर इसको अपने सेवक पर खर्च करो । उसने कहा कि मेरे पास और है । आपने कहा तुम अधिक जानते हो[5] ।
--अबू दाऊद, नसई

५ हजरत सुराका बिन मालिक रजि० कहते है कि नबी सल्ल० ने कहा क्या मै तुम्हे उत्तम सदका से परिचित कराऊँ ? वह अपनी उस बेटी के साथ अच्छा व्यवहार करता है जो तेरी ओर लौटा दी गई हो और तेरे सिवा उसका कोई कमाने वाला न हो[6] । –इब्न माजा

६ अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल

---

३. अर्थात् गरीब और निर्धन व्यक्ति जब अपने परिश्रम से कमा कर खर्च करता है, तो अल्लाह के निकट उसके दान और सदके का बडा महत्व होता है। इसलिए कि 'सदका' देना उसके लिए कठिन कार्य है, फिर भी वह सदका देता है ।

४ खर्च करने मे सबसे पहले उन लोगो का ध्यान रखना चाहिए जिनकी मनुष्य पर विशेष रूप से जिम्मेदारी होती है । यदि कोई व्यक्ति अपने बाल-बच्चो और घर के लोगो से बेपरवा होकर इधर-उधर 'सदका' बाँटता फिरता है, तो उसकी यह नीति धार्मिक दृष्टि से कदापि सराहनीय नही हो सकती ।

५ इस 'हदीस' से विदित है कि इस्लामी आदेश बुद्धि और प्रकृति के सर्वथा अनुकूल है, इस्लामी आदेशो का उल्लघन वास्तव मे बुद्ध और प्रकृति का उल्लघन है ।

६. अर्थात् उस के पति ने उसे तलाक दे दिया हो या उस की मृत्यु हो गई हो और उस का खर्च चलाने वाला तेरे सिवा कोई और न हो ।

सल्ल० नें कहा उत्तम 'सदका' ज्यादा दूध देनें वाली ऊटनी है जो किसी को दूध पीनें के लिए मगनी दे दी जाये, और वह अधिक दूध देनें वाली बकरी जो दूध पीने के लिए किसी को दे दी जाये कि वह प्रात.काल बरतन भर कर दूध देती हो और सन्ध्या को एक और बरतन भर कर[७]।

—बुखारी, मुस्लिम

७ हजरत अनस रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो मुस्लिम कोई वृक्ष लगाये या खेती करे और उसमें से मनुष्य पक्षी और जानवर खाये, तो यह भी उसके लिए 'सदका' है[८]। मुस्लिम की एक 'हदीस' मे हजरत जाबिर से उल्लिखित है की उसमे से जो चोरी चला जाये वह भी उसके लिए 'सदका' है[९]। —बुखारी, मुस्लिम

८ सअद बिन उबादा कहते है कि मैंने कहा हे अल्लाह के रसूल ! सअद की माता (अर्थात् मेरी माता) मर गई, तो कौन स 'सदका' उत्तम होगा ? आपने कहा पानी, सअद ने कुआँ खोदा और कहा यह सअद की माता के लिए है[१०]। —अबू दाऊद, नसई

---

७ ऐसे सदका से एक 'तरफ' सदका करने वाले व्यक्ति की उदारता का पता चलता है,दूसरी तरफ इससे लोगो की आवश्कता भी पूरी होती है इसीलिए आपने इस शुभ कार्य की प्रशसा की। अरबो मे इसका रिवाज था कि लोग दूध पीनो के लिए बकरी और उॅटनी दूसरो को दे देते थे आपने इसे सराहनीय ठहराया।

८ उसके द्वारा सृष्टि के जीव आदि को जो लाभ भी पहुॅचे उसमे उसके लिए शुभ प्रतिफल है।

९ चोर ने यदि उसको हानि पहुॅचाई, तो इसमे भी उसके लिए शुभ प्रतिफल है। ईमान वाला व्यक्ति किसी दशा मे भी घाटे मे नही रहता। चोरी करने वाला वास्तव मे अपने को हानि पहुॅचता है किसी मुस्लिम व्यक्ति को वह वास्तविक हानि नही पहुँचा सकता।

१० अर्थात् इसका पुण्य सअद की माता को मिले। कुआँ की गणना सचारित सदके (सदका-ए-जारिया) मे होती है जब तक कुआँ बाकी रहता है और लोग उससे फायदा उठाते रहते है। उसका सवाब पहूँचना रहता है। यहाँ कुछ बाते समझ लेने की है।

पुण्य और सबाब केवल उस कर्म के बदले मिलता है जो 'शरीअत'

९: अबू हुरैरा रजि कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा· मनुष्य की हड्डी के जितने जोड है हर एक पर 'सदका' जरुरी है, प्रत्येक दिन जिसमे सूर्य उदय हो। दो व्यक्तियों के बीच न्याय करना सदका है। किसी व्यक्ति को सवारी पर सवार होने में या उसका सामान उस पर लादने में सहायता करना सदका है। और एक अच्छी बात भी सदका है और नमाज के लिए जो पग भी उठाता है वह भी सदका है और तकलीफ देने वाली चीज़ रास्ते से दूर करना भी 'सदका' है[11]।

—बुखारी, मुस्लिम

१०. हज़रत जाबिर रजि० और हजरत हुजैफा रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा हर नेकी सदका है। —बुखारी, मुस्लिम

(धर्म शास्त्र) के अनुसार और अल्लाह ही के लिए किया गया हो। दूसरी बात यह है कि पुण्य-पुरस्कार का उपहार केवल उन ही लोगो को पहुँच सकता है जिन्होंने ईमान की हालत मे ससार से प्रस्थान किया हो' जिसकी हैसियत अल्लाह के यहाँ मेहमान की होती है। अल्लाह के विद्रोहियो को पुण्य और सवाब का उपहार कदापि नही पहुँच सकता।

शुभ कार्य के दो लाभ होते है। एक उसके वे परिणाम जो कर्म करने वाले व्यक्ति की आत्मा और उसके स्वभाव पर अ कित होते हैं, जिनके कारण वह ईश्वर के यहाँ प्रतिफल का अधिकारी होता है। दूसरे उसका वह बदला जो अल्लाह की ओर से उसे पुरस्कार के रूप मे मिलता है। पुण्यपुरस्कार के उपहार के भेजने का सम्बन्ध केवल दूसरी चीज़ से है पहली चीज से उसका सम्बन्ध नही है। अच्छे कर्म के आध्यात्मिक और नैतिक लाभ और उनका प्रतिफल किसी दूसरे व्यक्ति को प्रदान नही किया जा सकता हाँ उनके पुण्यपुरस्कार के लिए वह ईश्वर से प्रार्थना कर सकता है कि वह उसके अमुक नातेदार या उपकारी व्यक्ति को प्रदान कर दिया जाये।

११ शरीर का प्रत्येक जोड और अवयव वास्तव मे ईश्वर की एक कृपा और उपकार है। ईश्वर के हर उपकार के प्रति कृतज्ञता दिखलाने के लिए जरुरी है कि मनुष्य दान और 'सदका' करे। 'सदका' केवल इसका नाम नहीं है कि कोई व्यक्ति अल्लाह की राह मे रुपये-पैसे ही खर्च करे बल्कि अपनी वास्तविकता की दृष्टि से सदके के विभिन्न रूप हो सकते है जैसा कि आगे इस 'हदीस' से भी इसकी पुष्टि होती है। जिन चीज़ो को इस 'हदीस' मे 'सदका' कहा गया है वह केवल नाममात्र को 'सदका' नही हैं, बल्कि वास्तव मे उनमे सदके का भाव और आत्मा विद्यमान है।

११. हजरत जाबिर कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा हर भलाई 'सदका' है और यह बात भी भलाई और नेकी में से है कि तुम हर्षित चेहरे के साथ अपने भाई से मिलो और अपने डोल से अपने भाई के बरतन में पानी डाल दो[१२]। —अहमद, तिरमिजी

१२. अबू मूसा रज़ि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : अमानतदार मुस्लिम खजानची (कोषाध्यक्ष) जब प्रसन्नता पूर्वक वह चीज देता है जिसके देने का उसे आदेश दिया जाता है, तो वह 'सदका करने में से एक होता है'[१३]। —बुखारी, मुस्लिम

१२ अर्थात् वास्तविकता की दृष्टि से सदके का अर्थ इस्लाम मे अत्यन्त व्यापक है, इसमे हर भलाई और नेकी सम्मिलित है। विचार करने से मालूम होता है कि 'सदका' ही नही इस्लाम के दुसरे मौलिक आधार और कर्म भी अपना महान् मूल्य (*Values*) रखते हैं और उनमे बडी व्यापकता और गहराई पाई जाती है।

एक व्यक्ति 'सदके' मे रूपये-पैसे तो खर्च कर देता है परन्तु वही व्यक्ति दूसरी भलाई और नेकी के कामो से दूर रहता है। न वह अवसर पडने पर इन्साफ की बात कहता है, न भाइयो से हँसी-खुशी से मिलता है और न मुहताजो और असहायो से उसका व्यवहार सहानुभूति लिये हुये होता है। लोगों को उस से कष्ट ही पहुँचता रहता है। ऐसी अवस्था मे इसके अतिरिक्त और क्या कहा जायेगा कि वह अभी वास्तव मे 'सदका' देने वालो मे सम्मिलित नही हो सका। यह कैसे सम्भव है कि एक व्यक्ति एक ओर तो गरीबो और निर्धनो के प्रति सहानुभूति दिखाने और ईश्वर की प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए अपना माल खर्च करे दूसरी ओर वह लोगो को कष्ट पहुँचाये और भलाई और नेकी के कामो से उसका दूर का सम्बन्ध भी न हो। ऐसे व्यक्ति का 'सदका' वास्तव मे 'सदका' नही केवल दिखावा है। एक आत्महीन कर्म है जिसके पीछे कोई वस्तिविक चेतना और सच्ची और हार्दिक प्रेरणा नही पाई जाती। या फिर वह धर्म सम्बन्धी सूझ-बूझ से रहित है कि अपनी समस्त घिनावनी हरकतो के बावजूद अपने सदके को 'सदका' ही समझता रहता है, हालाँकि उस का 'सदका' उस रोज़ेदार के रोज़े से भिन्न नही है जो रोजा रखते हुये भी ईश्वर की अवज्ञा से नही बचता और न तुच्छ इच्छाओ के वशीभूत होने और ज़ुल्म और अत्याचार से अपने आप को बचाता है। रोज़े से उसके पल्ले भूख-प्यास के अतिरिक्त और कुछ नही पडता।

१३ वह 'बैतुलमाल' (राज्य कोष) से जो धन निकाल कर पेश करता है वह

१३. हजरत अबू सईद खुदरी रजि० कहते है एक व्यक्ति (मस्जिद) में आया। अल्लाह के रसूल सल्ल० नमाज पढ चुके थे। आपने कहा तुममें कोई व्यक्ति है जो उस पर 'सदका करे, (अर्थात्) उसके साथ नमाज पढे। एक व्यक्ति उठा उसने उसके साथ नमाज पढी[१४]।

—तिरमिज़ी, अबू दाऊद

१४. हज़रत अबू मूसा अशअरी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा हर मुसलमान के जिम्मे 'सदका' है। लोगों ने कहा. यदि किसी के पास (देने को) कुछ न हो ? आप ने कहा अपने हाथो से काम करे और कमाये इस तरह खुद भी फायदा उठाये और 'सदका' भी करे। लोगो ने कहा यदि वह इस का सामर्थ्य न

उस की कोई निजी सम्पत्ति नही होती, फिर भी उसकी गणना 'सदक़ा' करने वालो मे होती है। इसलिए कि माल पेश करते हुये वह अपने अन्दर किसी प्रकार की तगी नही पाता, बल्कि जो-कुछ कहा जाता है खुशी दिल से पेश कर देता है अमानतदारी, उदारता मन की प्रसन्नता और आनन्द 'सदका' और दान के अनिवार्य लक्षणो मे से है इसलिए ऐसा कोषाधिकारी या खज़ानची जो तग दिल न हो 'सदके' के प्रतिफल से कैसे वचित रह सकता है।

१४ इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि यदि कोई देर से आये और 'जमात' हो चुकी हो (लोग सामूहिक रूप से नमाज़ पढ चुके हो) कोई व्यक्ति भी ऐसा न हो जिसे नमाज़ अदा करनी हो, तो उसके अकेले नमाज़ पढने से अच्छा वह होगा कि जो लोग नमाज़ पढ चुके है उनमे से कोई उसका साथ दे ताकि वह 'जमाअत' की बरकत और सवाव से वचित न रहे। नवी सल्ल० इसको सदका' कह रहे हैं जिससे सदके के व्यापक अर्थ की पुष्टि होती है। दूसरो के लिये जो त्याग और कुरबानी भी की जाये वह 'सदका' ही है यह याद रहे कि यह 'सदका' केवल 'जुह्र मगरिब और इशा कि नमाज़ मे हो सकता है, 'फज्र' और 'अस्र' की नमाज़ो के बाद यह 'सदका' नही हो समता इस लिये कि 'फज्र' और 'अस्र' की नमाज़ के बाद 'नफ्ल' नमाज़ नही पढी जाती। नमाज़ मे स,दका' करने वाले के लिये वह नमाज़ 'नफ्ल' हो जाती है, फर्ज़ तो वह अदा कर चुका होता है। इस नमाज मे 'इमामत' नफ्ल पढने वाला भी कर सकता हैं और फर्ज़ अदा करने वाला भी जैसा कि नबी सल्ल० के समय मे होता रहा हैं। हदीसो से मालूम होता है कि ऐसा 'सदका' हज़रत अबूबक्र रज़ि० ने भी किया है।

रखता हो या वह भी न कर सके ? आपने कहा किसी गम के मारे हुये जरुरत वाले व्यक्ति की सहायता करे[१५]। लोगो ने कहा यदि यह भी न कर सके ? आप ने कहा (लोगो को) नेकी का हुक्म दे। लोगो ने कहा यदि यह भी न कर सके ? कहा अपने-आप को बुराई से बचाये क्योकि यह भी 'सदका' है"। —बुखारी मुस्लिम

---

१५ सदका प्रत्येक मुस्लिम का आवश्यक गुण है। यदि 'सदका करने के लिए माल नही है तो, मनुष्य को मेहनत-मजदूरी कर के यह धन प्राप्त करने की कोशिश करनी चाहिए। यदि वह किसी कारण से यह भी नही कर सकता, तो किसी जरूरत वाले और विपन्न व्यक्ति की सेवा ही करे। यह भी एक प्रकार का 'सदका' है। यदि यह भी नही कर सकता, तो जबान से लोगो के काम आये उन्हें भलाई का हुक्म दे। 'ईमान' के कारण मनुष्य को एक प्रकार का मानसिक, हार्दिक और आत्मिक आनन्द और विशालता प्राप्त होती है उस का यह आनन्द स्वभावत जीवन मे विभिन्न शैलियो में प्रदर्शित होता है। और उसे प्रदर्शित होना भी चाहिए क्योकि यह उसके 'ईमान' की एक बडी माँग है। इस आनन्द का एक विशेष प्रमुख सूचक चीज 'सदका' है। 'ईमान' और आत्मिक आनन्द का सूचक होने कारण 'सदका' हमारे अन्तर को शुद्ध और विकसित करने मे भी सहायक होता है इन ही कारणो से 'सदका' मुस्लिम के लिए अनिवार्य ठहराया गया है। आत्मिक दृष्टि से 'सदका (दान) 'ईमान' का माधुर्य, हृदय की विशालता और मानसिक एव आत्मिक आनन्द है जो रुपए-पैसे से दूसरो की सहायता करने के अतिरिक्त लोगो की दूसरी सेवाओ का प्रेरक भी बनाता है। यही कारण है कि उन सब को 'सदका शब्द से अभिव्यजित किया गया है। यहाँ तक कि इस चीज को भी 'सदका कहा गया कि मनुष्य इस बात का ध्यान रक्खे कि उस मे किसी को किसी प्रकार का कष्ट न पहुँचे।

१६ इस मे 'सदका' की और भी व्यापक व्याख्या होती है। इस से ज्ञात हुआ कि 'सदका' स्वीकारात्मक रूप मे केवल माली और शारीरिक चीज ही नही है और न वह केवल वचन और कर्म तक सीमित है, बल्कि सदके का निषेधात्मक रूप भी होता है। जिस व्यक्ति ने अपने आप को बुराई से बचाया उस ने नेकी ही के पक्ष को दृढ करने मे अपना योग दान दिया इसे भी एक प्रकार का 'सदका' कहा जायेगा।

दान के कुछ अधिनियम

عَنْ اَسْمَاءَ رض قَالَتْ. قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ اَنْفِقِيْ وَلَا تُحْصِيْ فَيُحْصِيَ
اللّٰهُ عَلَيْكِ وَلَا تُوْعِيْ فَيُوْعِيَ اللّٰهُ عَلَيْكِ اِرْضَخِيْ مَا اسْتَطَعْتِ ــــ بخاری مسلم

१ हजरत असमा रजि० कहती हैं कि कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा खर्च करती रहो गिनो मत, यदि तुम इस तरह हिसाब कर के दोगी तो अल्लाह भी तुम्हे हिसाब ही से देगा। और माल को रोको मत नही तो अल्लाह भी तुम से माल को रोक लेगा। खुले हाथ तुम से जितना हो सके देती रहो। —बुखारी, मुस्लिम

२ अबू उमामा से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा हे आदम के बेटे! जो तेरी आवश्यकता से अधिक हो उसका खर्च करना तेरे लिए अच्छा है और उस का रोकना तेरे लिए बुरा है। और हाँ गुज़ारे और आवश्यकता की मात्रा मे रखने पर तुम्हारे लिए कोई निन्दा की बात नही और सबसे पहले उन पर खर्च करो जिन की तुम पर जिम्मेदारी हैं[1]। —मुस्लिम

---

१. 'इस्लाम' मे उचित रूप से माल खर्च करने को पसन्द किया गया है। अकारण माल एकत्र करने को पसन्द नही किया गया है। कृपणता और माल के लोभ से एक ओर धन का फैलाव और, गर्दिश रुक जाती है, जिस धन से बहुत से लोगो की जरूरते पूरी हो सकती थी वह अकेले एक व्यक्ति की तिजोरियो मे बन्द रह कर अपनी उपयोगता खो देता है, दूसरी ओर दान और खर्च के द्वारा मनुष्य को आत्मिक और नैतिक उन्नति प्राप्त होती है। उसकी आत्मा विकसित होती है। धन-दौलत का लोभ मन से निकल जाता है। वह जीवन के उन उच्चतम मूल्यो से परिचित होता है जिनका ज्ञान कृपणता और लोभ की दशा मे उसे कदापि नही हो सकता था। 'सदके' का आत्मा को निखारने और शुद्ध करने मे बडा योग होता है। इस बात का हर वह व्यक्ति स्वीकार करेगा जिसे 'दीन' (धर्म) के विषय मे कुछ भी सोच-विचार और चिन्तन करने का अवसर मिला होगा।

खर्च करनें मे मनुष्य को सब से पहले उन लोगो की आवश्यकताओ को देखना चाहिए जिनके सरक्षण और भरण-पोषण का दायित्व स्वय उस पर आता है। इसके पश्चात् वह दूसरो पर खर्च करे। ऐसा न हो कि वह दूसरो

३. अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि नबी सल्ल० एक वार बिलाल रजि० के पास आये उन के पास छुहारो का ढेर लगा हुआ था, आप ने कहा हे बिलाल यह क्या है? कहा मै ने इसे कल के लिए एकत्र कर रक्खा है। आप नें कहा : क्या तुम इस से नही डरते कि 'कियामत' के दिन तुम 'जहन्नम' की आग में उस की आँच देखो। हे बिलाल! खर्च करो और अर्श के मालिक से कम देनें का भय न करो[2]।

—बैहकी-शोबुलईमान

४ अबू हुरैरा नबी सल्ल० से 'रिवायत' करते है कि (आप नें कहा अर्श को छाया मे होगा) वह व्यक्ति जिस ने 'सदका' दिया और उसे इतना छिपाया कि उस का बायाँ हाथ नही जानता कि उस के दाये हाथ ने क्या खर्च किया[3]। —बुखारी

ने लिए तो बडा दानशील हो और अपने परिवार आदि के जरूरी हकों का भी उसे ध्यान न हो।

२ इस 'हदीस' का यह अर्थ कदापि नही है कि कल के लिए कुछ रखने की 'शरीअत' मे कोई गु जाइश ही नही है बल्कि वास्तव मे आपने यह बात मन मे बिठानी चाही है कि मनुष्य का असल भरोसा धन-दौलत पर नही बल्कि अल्लाह पर होना चाहिए। जिस अल्लाह ने आज रोजी का प्रबन्ध किया है वह कल भी करेगा। यदि हमारा भरोसा अल्लाह को छोडकर किसी भौतिक पदार्थ पर हुआ और हम अल्लाह की दयालुता और उसकी शक्ति को भूल गए, तो यह चीज़ हमारे हक मे यातना का कारण बन सकती है।

३ अर्थात् वह बहुत ही छिपाकर 'सदका' करता है। इसलिए कि वास्तविक उद्देश्य तो अल्लाह को प्रसन्न करना है न कि लोगो को यह दिखाना कि हम बडे दाता हैं। यदि वह दुनिया को दिखाने के लिए खर्च करता है, तो वह न केवल यह कि 'सदका' के 'सवाब' से वचित रह जायेगा बल्कि उलटे एक बडे गुनाह का भागी होगा। इसलिए कि जो काम उसे अल्लाह के लिए करना चाहिए था उसको उसने दुनिया को दिखाने के लिए किया। यह एक प्रकार का 'शिर्क' हुआ।

यदि लोगों को दिखाने की नीयत न हो तो खुले रूप से खर्च करने मे कोई दोष नही है; परन्तु छिपाकर देना अधिक उत्तम है। कुरआन मे कहा गया है . "यदि खुले रूप से 'सदका' दो तो यह भी अच्छा है और यदि छिपा कर गरीबो को दो, तो यह तुम्हारे लिए ज्यादा अच्छा है और इस मे तुम्हारी

५. अम्र बिन शुऐब अपने पिता और दादा से 'रिवायत' करते है कि नबी सल्ल० ने लोगों के बीच 'खुतवा' (भाषण) दिया और कहा सावधान ! जो व्यक्ति किसी यतीम (अनाथ) का सरक्षक हो और उस यतीम के पास माल हो तो उस सरक्षक को चाहिए कि वह उस माल को व्यापार में लगाये और उसे छोड न दे कि 'जकात' उसे खा जाये[४]।

—तिरमिजी

६ जरीर बिन अब्दुल्लाह रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब तुम्हारे पास कोई 'जकात' की वसूली के लिए आये तो चाहिए कि वह तुम्हारे पास से इस हाल में लौटे कि वह तुम से प्रसन्न हो[५] । —मुस्लिम

७ अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा एक दिरहम (सिक्के का नाम) लाख दिरहम से अग्रसर रहा। कहा गया यह कैसे ? हे अल्लाह के रसूल ! आप ने कहा एक व्यक्ति के पास दो दिरहम है जो उन दोनो में खरा है उस को उस ने 'सदका' कर दिया। दूसरा व्यक्ति अपने (फैले हुए अधिक) माल के एक गोशे में गया वहाँ से एक लाख दिरहम निकाल कर 'सदका' कर दिया (तो पहले व्यक्ति का एक दिरहम उस के लाख दिरहम से उत्तम है[६] । —नसई

बुराइयाँ धुलती हैं"—२ २७१

४ यतीमो और अनाथो का माल यदि तुम्हारे पास है और तुम ने उसकी रक्षा और निगरानी की जिम्मेदारी स्वीकार की है, तो उस माल को व्यापार मे लगाओ उनके माल को यो ही न छोड दो क्योकि यदि तुमने उनके माल को यो ही छोड दिया और उसे व्यापार मे नही लगाया, केवल उसकी 'जकात' ही निकालते रहे, तो इसका परिणाम इसके सिवा और क्या हो सकता है कि उनका माल धीरे-धीरे समाप्त होकर रह जाएगा। इसलिए यतीमो का हित इसमे है कि तुम उनके माल की रक्षा करो उसे बढाओ न कि उनके हानि-लाभ की तुम्हे कोई चिन्ता ही न हो।

५ अर्थात् तुम अपनी 'जकात' सहर्ष पूरी-पूरी अदा करो।

६ ऐसे व्यक्ति के लिए जिसके पास धन-दौलत का भण्डार है एक लाख खर्च कर देना कुछ भी मुश्किल नही है जबकि एक दूसरे व्यक्ति का एक दिरहम खर्च करना भी एक बडी कुरबानी हो सकती है। जो 'सदका' तगी की हालत मे किया जाता है उसका महत्व अल्लाह की दृष्टि मे उस 'सदका' के मुकाबले मे

८ जैद बिन असलम से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा माँगने वाले को दो यद्यपि वह घोडे पर सवार होकर आये। मालिक ने इस को 'रिवायत' किया है। अबू दाऊद हजरत अली से रिवायत करते हैं कि माँगने वाले का हक है यद्यपि वह घोडे पर चढ कर आये[७]।

९ हजरत जाबिर रजि० कहते है कि एक व्यक्ति अण्डे के बराबर सोना लाया और कहा हे अल्लाह के रसूल ! इस को मै ने एक मकान मे पाया है आप इसे ले लें। यह 'सदका' है। इस के अतिरिक्त मेरी मिलकियत में कुछ नही है। आप ने उस की ओर से मुँह फेर लिया। फिर वह दाहिनी ओर से आया और यही बात कही। आप ने उस से फिर मुँह फेर लिया। फिर वह बाईं ओर से आया और वही बात कही फिर आप ने उस से मुँह फेर लिया। फिर वह पीछे से आया और वैसी ही कही। फिर आप ने उस को ले लिया और उस से उस व्यक्ति को खीच कर मारा. यदि उस को लग जाता, तो उसे तकलीफ पहुँचती। आप ने कहा तुम में से कोई अपनी सारी मिलकियत लाता है और कहता है कि यह 'सदका' (दान) है। फिर इस के पश्चात् वह बैठ कर लोगो से भिक्षा माँगता है। सब से उत्तम 'सदका' वह है जो बेपरवाई के साथ हो[८]।

—अबूदाऊद

कही अधिक है जो खुशहाली की दशा मे मनुष्य करता है।

७ 'हदीस' से मालूम होता है कि जिसके पास खाने को हो या जो इसका सामर्थ रखता हो कि कमा सके उसका काम यह नही है कि वह माँगे या 'जकात' ले, यह साहस की शिक्षा है। रहा कानून तो जो व्यक्ति हिसाब से कम माल रखता है उसे 'जकात' दी जा सकती है। नबी सल्ल० ने एक ओर तो लोगो में यह भावना जाग्रत की कि वे यथासम्भव माँगने से बचें। आपने यहाँ तक कहा कि जिस व्यक्ति को सुबह शाम की रोटी की सामग्री प्राप्त हो वह यदि माँगने के लिए हाथ फैलाता है, तो वह अपने हक मे आग सचित करता है, दूसरी ओर आपने मुसलमानो मे पूर्णत दानशीलता का गुण पैदा किया और यह शिक्षा दी कि माँगने वाले को दो यद्यपि घोडे पर सवार होकर (अर्थात् अच्छी दशा मे) आये।

८ इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि हाकिम या जिम्मेदार व्यक्ति को 'सदका' वसूल करते समय देने वाले व्यक्ति की परिस्थिति और उसकी दूसरी आवश्यक

१० अबू हुरैरा रजि० बयान करते है मैं ने कहा हे अल्लाह् के रसूल ! कौन सा 'सदका' उत्तम है ? आप ने कहा थोड़े माल वाले की कोशिश और मशक्कत[९] और 'सदका' देने मे आरम्भ उन लोगो से करो जिनकी तुम पर जिम्मेदारी है[१०] । —अबूदाऊद

११ हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा उत्तम 'सदका यह है कि तू भूखे जिगर का पेट भर दे। —बैहकी शोबुलईमान

१२. सईद से उल्लिखित है कि सअद नबी सल्ल० के पास आये और पूछा कौन सा 'सदका' आप को अधिक प्रिय है ? आप ने कहा पानी पिलाना[११] । —अबू दाऊद

१३ अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा मुहताज वह नही है जो लोगो से माँगता फिरता है और उस को एक दो ग्रास या दो खजूरे दे दी जाती है, बल्कि मुहताज वह है जिस के पास अपनी आवश्यकता पूरी करने की सामग्री भी नही है और किसी को उस की मुहताजी का एहसास भी नही हो पाता कि उस को 'सदका' दिया जाए और न वह लोगो से माँगने के लिए जाता है[१२] । —बुखारी, मुस्लिम

बातो को ध्यान मे रखना चाहिए । 'सदका' देने वाले को भी चाहिए कि वह 'सदका' देते समय इस पहलू से अवश्य देख ले कि वह यदि अपनी सारी मिलकियत या अपनी सम्पत्ति का अधिक भाग अल्लाह् के मार्ग मे 'सदका' कर रहा है, तो उसके नतीजे मे कल वह लोगो से भिक्षा नही माँगेगा बल्कि वह कमा कर खायेगा । यदि वह इसका साहस अपने मे नही पाता तो उसके लिए यही अच्छा है कि बस उतना ही 'सदका' करे जितना वह आसानी से कर सकता है ।

९ अर्थात् परिश्रम करके जो कुछ थोडा-बहुत प्राप्त किया उसमे से तकलीफ और मशक्कत उठाकर अल्लाह् के मार्ग मे खर्च भी करे ।

१० इसलिए कि उनका हक सबसे अधिक है ।

११ भूखे को खाना खिलाना और प्यासे के लिए पानी का प्रबन्ध करना सब से बढकर नेकी और 'सदका' है । इस प्रकार के 'सदके' से लोगो को तत्काल ही आराम मिलता है ।

१२ मतलब यह है कि ऐसे लोगो की खबर लेनी सबसे पहले जरूरी है जो अपनी

१४. अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि एक व्यक्ति ने कहा : हे अल्लाह के रसूल ! किस 'सदका' का सवाब अधिक है ? आप ने कहा तेरा इस हाल में 'सदका' करना कि तू स्वस्थ हो और तुझे माल की चाहत और इच्छा हो, निर्धनता से डरता और धनवान होने की आशा रखता हो[13] और ऐसा न हो कि तू सोचता और टालता रहे यहाँ तक कि जब प्राण गले में पहुँच जाए, तो कहने लगो कि इतना अमुक व्यक्ति के लिए है और इतना अमुक व्यक्ति के लिए है हालाँकि अब तो वह अमुक व्यक्ति ही को मिलेगा[14] । —बुखारी, मुस्लिम

१५. हजरत हसन रजि० से 'मुरसल' तरीके से उल्लिखित है कि

तकलीफ लोगो से बयान नही करते और न लोगो के सामने हाथ फैलाते है जिसके कारण साधारणतया लोगो को इसका अनुमान नही हो पाता कि वे किस हालत मे हैं। ये सब से बढकर इसके हकदार है कि इनकी सहायता की जाए। और इस तरह से सहायता की जाए कि इनके मान प्रतिष्ठा आदि को क्षति न पहुँचे। इसकी शिक्षा कुरआन मे भी दी गई है "यह 'सदका' उन मुहताजो के लिए है जो अल्लाह के मार्ग मे ऐसे घिर गये है कि (रोजी कमाने के लिए) धरती मे दौड-भाग नही कर सकते। उनके (माँगने से) बचने के कारण अनजान व्यक्ति उन्हे मालदार समझता है। तुम उनके चेहरो से उन की भीतरी दशा पहचान सकते हो, वे लोगो से चिमट-चिमट कर नही माँगते। तुम (उनकी सहायता के लिए) जो माल भी खर्च करोगे, निस्सन्देह अल्लाह उसका जानने वाला है।"—२ २७३

१३ मतलब यह है कि 'सदका' तो वही अल्लाह के यहाँ महत्व रखता है जो स्वस्थ अवस्था मे दिया जाये जबकि मनुष्य के सामने अपनी बहुत सी समस्याएँ होती हैं। उसका अपना भविष्य होता है। उसे माल की आवश्यकता और इच्छा होती है। इस सब के बावजूद यदि वह अल्लाह के मार्ग मे खर्च करता है, तो निश्चय ही वह अल्लाह के यहाँ प्रतिदान का अधिकारी है। ऐसे ही लोगो के बारे मे कुरआन मे कहा गया है "और जो लोग अपने मन के लोभ से बचे रहे, वही सफलता प्राप्त करने वाले है।"—५९ ९

१४ अर्थात् मनुष्य जब जीवन से निराश हो जाए और समझ ले कि माल-दौलत सब-कुछ अब छिन जाने को है उस समय यदि वह 'सदका' करता है और वसीयत करता है, तो उसका अल्लाह के यहाँ कोई मूल्य नही है, अब तो उस का माल दूसरो के हाथ मे स्वय ही पहुँच जाएगा।

अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'जकात' के द्वारा अपने मालो की रक्षा करो[१५] और अपने बीमारो का इलाज 'सदका' के द्वारा करो[१६]। दुआ और गिडगिडाहट के द्वारा मुसीबतो का स्वागत करो[१७]। —अबूदाऊद

१६ हजरत उमर बिन खत्ताब रजि० कहते है कि मैं ने एक व्यक्ति को अल्लाह की राह मे घोडे पर सवार किया[१८]। उस ने उसे खराब कर दिया[१९]। मेरा इरादा हुआ कि उसे खरीद लूँ, मेरा ख्याल था कि उसे सस्ता बेचेगा, मै ने नबी सल्ल० से पूछा (कि क्या मै उसे खरीद लूँ), आप ने कहा, कदापि उसे न खरीदो और अपने 'सदके' को लौटाओ नही चाहे वह तुम्हे एकही दिरहम में दे क्योकि अपने दिये 'सदके' को लौटाने वाला ऐसा ही है जैसे कुत्ता जो कै कर के उसे चाट ले। एक 'रिवायत' के शब्द ये है "अपने 'सदके' को न लौटाओ क्योकि 'सदके' को लौटाने वाला उस व्यक्ति की तरह है जो कै कर के उसे चाट ले[२०]। —बुखारी, मुस्लिम

---

१५ अर्थात् तुम माल की 'जकात' दोगे तो अल्लाह तुम्हारे माल की रक्षा करेगा, यदि तुम 'जकात' नही निकालते तो किसी भी समय तुम्हारा यह अपराध विनाश का कारण बन सकता है और तुम्हारा माल तबाह हो सकता है।

१६ अर्थात् रोगियो के इलाज मे डाक्टरो और चिकित्सको पर ही भरोसा न करो बल्कि उस सब से बडे चिकित्सक की ओर भी रुजू करो जिसके कब्जे मे दुख-सुख, जीवन और मृत्यु सब-कुछ है। उसे खुश करने और उस की सहायता प्राप्त करने का उत्तम उपाय 'सदका' है। तुम 'सदका' करके गरीबो की सहायता करोगे, तो अल्लाह मुसीबत मे तुम्हारी मदद करेगा।

१७ अर्थात् मुसीबत आने पर दुआ करो और अल्लाह के सामने गिडगिडाओ, अल्लाह तुम्हारी मुसीबत को टाल देगा।

१८ अर्थात् अल्लाह के मार्ग मे उन्होने एक घोडा दिया।

१९ अर्थात् उसने उस घोडे की देख-भाल ठीक से नही की जिसके कारण वह घोडा दुबला और कमजोर हो गया।

२० हजरत इब्न उमर रजि० का अमल यह था कि यदि वह कोई ऐसी चीज खरीदते भी जिसे उन्होने 'सदका' किया होता तो उसे वे अपने पास न रखते बल्कि उसे फिर तुरन्त 'सदका' कर देते। (बुखारी)

'सदका' की हुई चीज को वापस लेना बडी ही घिनावनी हरकत है। इसी

१७ हज़रत अबू हुरैरा रजि० और हकीम बिन हिज़ाम रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : "उत्तम 'सदका' वह है जो अपने पीछे बेपरवाई छोड़ जाये, और 'सदका' देने में आरम्भ उन लोगों से करो जिन की ज़िम्मेदारी तुम पर हो"। —बुख़ारी, मुस्लिम

कारण इसको मैं साहब से उपमा दी गई है। 'सदके' में दिये हुए दान को खरीदने (ऐसा यद्यपि वास्तविक अर्थ में वापस 'सदके' को रद्द नहीं करता) फिर भी जाहिर में उसी चीज को लौटा लेना होता है जिसे वह अल्लाह की राह में दे चुका होता है। इस्लामी स्वभाव के लिए यह जाहिरी एकरूपता भी पसन्द है। क्योंकि इस चीज को पसन्द नहीं किया कि कोई उस चीज को खरीदने की कोशिश करे जिसको वह अल्लाह की राह में निकाल चुका है।

२१ बेपरवाई छोड़ जाने का अर्थ यह है कि 'सदका' देने के पश्चात मनुष्य दिल में किसी प्रकार की घुटन और तंगी महसूस न करे। 'सदका' देने में यह देखना चाहिए कि या तो इतना बच रहा हो कि स्वयं उसे 'सदका' लेने की आवश्यकता न होगी या फिर मनुष्य को अल्लाह पर इतना भरोसा हो कि अपने दिल में कुछ भी तंगी महसूस न करे। अर्थात् मनुष्य का दिल बेपरवा हो। 'सदका' करने के बाद अल्लाह पर भरोसा करने की सबसे अच्छी मिसाल हज़रत अबू बक्र सिद्दीक रजि० की है। वे घर की सारी सामग्री नबी सल्ल० के कदमों में डाल देते हैं और कहते हैं कि घर में अल्लाह और उसका रसूल बाकी है, परन्तु सामान्य नियम यही है कि 'सदका' देने के पश्चात् इतना शेष रहे कि मनुष्य की अपनी आवश्यकताएँ पूरी हो जाएँ और वह तंगी महसूस न करे।

इस 'हदीस' में दूसरी बात यह बताई गई है कि अपने नातेदारों और सगे-सहोदरों से निवृत्त होने के पश्चात् बाहर के लोगों को देना चाहिए। घर में किसी के बच्चे और दूसरे लोग मुहताज हों और वह बाहर 'सदका' बाँटता फिरता है, तो यह 'सदका' के आशय के सर्वथा प्रतिकूल होगा।

———

मॉगने से परहेज़

عَنْ ثَوْبَانَ رض قَالَ قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ ، مَنْ تَكَفَّلَ لِيْ اَنْ
لَّا يَسْاَلَ النَّاسَ شَيْئًا فَاَتَكَفَّلُ لَهٗ بِالْجَنَّةِ . فَقَالَ ثَوْبَانُ . اَنَا فَكَانَ لَا
يَسْاَلُ اَحَدًا شَيْئًا ——— ابوداود نسائی

१ हजरत सौबान रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो व्यक्ति मुझ से इस बात की प्रतिज्ञा करे कि वह लोगों से न मागेगा तो मैं उस के लिए 'जन्नत' की ज़मानत लेता हूँ। सौबान रज़ि० ने कहा मैं यह प्रतिज्ञा करता हूँ। इसी लिए वे किसी से माँगते नही थे। —अबूदाऊद, नसई

२ हजरत इब्न उमर रज़ि० से उल्लिखित है कि तुम में से जो व्यक्ति (अकारण) मॉगेगा वह सर्वोच्च अल्लाह से ('कियामत' के दिन) इस दशा मे मिलेगा कि उस के चेहरे पर मास न होगा[२]।
—बुखारी, मुस्लिम, नसई

३. हब्शी बिन जुनादा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मॉगना धनवान् के लिए वैध नही है और न वलबान स्वस्थ के लिए वैध है हॉ ऐसे व्यक्ति के लिए वैध है जिसे निर्धनता ने भूमि पर गिरा दिया हो, या जो तावान अथवा ऋण के बोझ से

---

१ 'इस्लाम' मे इस बात को वहुत ही नापसन्द किया गया है कि कोई व्यक्ति भिक्षा माँगे। इस्लाम चाहता है कि मनुष्य यथासम्भव अपने-आपको अपमान से वचाये। इस्लाम की इस शिक्षा के परिणाम स्वरूप 'सहाबा' यदि ऊँट पर बैठे होते और ऊँट की नकेल गिर जाती, जो स्वय उतर कर उसे उठाते किसी दूसरे से उठाने के लिए न कहते। लेकिन अफसोस कि आज इस्लाम पर 'ईमान' रखने वालो मे ऐसे वर्ग भी पैदा हो गये है जिन्होने अपने रसूल सल्ल० की शिक्षा को भुला कर भिक्षा को ही अपना धन्धा और जीवन निर्वाह का साधन बना लिया है।

२ दुनिया मे वह लोगो के आगे हाथ फैलाकर आत्मसम्मान और स्वाभिमान को धूल मे मिलाता था उस दिन उसका अपमान और आबरू की बरबादी इस रूप मे जाहिर होगी कि उसके चेहरे पर मास न होगा। नहूमत और कुरूपता अत्यन्त बढी होगी।

लइ गया हो³ और जो व्यक्ति अपने माल को बढ़ाने के लिए लोगो से माँगे तो यह माँगना 'क़ियामत' के दिन उस के चेहरे पर एक घाव होगा, और 'जहन्नम का गर्म पत्थर होगा जिस को वह खायेगा'⁴, तो अब जिस का जी चाहे कम माँगे और जिस का जी चाहे अधिक माँगे। —तिरमिज़ी

४. हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : जो व्यक्ति अधिक माल प्राप्त करने के लिए लोगो से माँगता है तो वह वास्तव मे आग का अंगारा माँगता है अब चाहे उस मे कमी करे या अधिक माँगे। —मुस्लिम

५. समरा बिन जुन्दब रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : माँगना घाव है जिस से मनुष्य अपने चेहरे को आघात पहुँचाता है, तो अब जो व्यक्ति चाहे अपने चेहरे पर बाकी रक्खे और जो चाहे नष्ट कर दे यह और बात है कि कोई व्यक्ति हाकिम से माँगे या किसी चीज़ को माँगे जिस के सिवा कोई उपाय न हो⁵।

—अबू दाऊद, तिरमिज़ी, नसई

---

३ अर्थात् अत्यन्त विवशता की दशा मे माँगने की इजाज़त है।

४ उस दिन यह वास्तविकता खुलकर सामने आ जायेगी कि बिना आवश्यकता के दुनिया मे लोगो से भिक्षा माँगकर वह अपनी आबरू और चेहरे के तेज को खो चुका है। उस दिन उसके चेहरे पर कोई सौन्दर्य और आकर्षण न होगा बल्कि उसका चेहरा छिला हुआ और आहत होगा। दुनिया मे वह सब से अधिक अप्रिय और कष्टदायक चीज (अर्थात् लोगो के सामने हाथ फैलाने) को अंगीकार किये हुये था। इसके परिणामस्वरूप उस दिन उसे गर्म पत्थर खाना पड़ेगा। मानो यह इस बात का प्रदर्शन होगा कि जब तुम ने अपने लिए दुखदायक और अप्रिय चीज को अंगीकार किया है तो तुम्हारे लिए वही चीज सचित की गई है जो तुम्हे प्रिय है। जब दुनिया मे तुम ने अत्यन्त भयावह चीज़ को अपना रखा था तो यहाँ उस मे क्यो भागते हो। जब सासारिक जीवन मे तुमने अपने स्वभाव के विरुद्ध नीति अपनाई है, तो उसके परिणाम स्वरूप तुम्हे उस चीज को कबूल कर लेना चाहिए जो तुम्हारी प्रकृति के विरुद्ध और तुम्हारे लिए अत्यन्त कष्टदायक है।

५ अर्थात् हाकिम या अधिकारी व्यक्ति से यदि वह अपने किसी जायज हक की माँग करता है, तो यह ठीक है। इसी प्रकार अत्यन्त विवशता की दशा मे यदि कोई लोगो से माँगता है, तो उसे निन्दनीय नही समझा जायेगा। साधा-

६. जुबैर बिन अवाम रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम मे से कोई व्यक्ति अपनी रस्सी ले और लकड़ियों का एक गट्ठा अपनी पीठ पर लाद के लाये और बेचे और अल्लाह उस के द्वारा उस के सम्मान को बाकी रक्खे यह उस से अच्छा है कि वह लोगो से भिक्षा माँगे वे उसे दे या न दे[६]। —बुखारी

७ अबू राफेअ रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने बनी मखजूम के एक व्यक्ति को 'जकात' वसूल करने के लिए नियुक्त किया उस ने अबू राफेअ से कहा कि तुम भी मेरे साथ चलो ताकि तुन्हे भी उस में से कुछ मिल जाए। अबू राफेअ रजि० ने कहा कि जब तक मैं अल्लाह के रसूल सल्ल० से पूछ न लूँ, तुम्हारे साथ नही चल सकता। अबू राफेअ अल्लाह के रसूल सल्ल० की सेवा मे उपस्थित हुए और आप से उस के बारे में पूछा। आप ने कहा 'ज़कात' और 'सदका' हम लोगो (अर्थात् हमारे घर और हमारे घराने) के लिए वैध नही है। और किसी घराने के गुलाम भी उन ही मे से हैं[७]।

—तिरमिजी अबू दाऊद, नसई०

रण अवस्था मे मनुष्य की कोशिश यह होनी चाहिए कि वह लेने के बदले देने वाला बने।

६ अर्थात् लकडी बेचकर अपनी आवश्यकताएँ पूरी करे और लोगो के सामने अपनी प्रतिष्ठा भग करे। माँगना खुद अपमान की बात है माँगने के बाद कोई तो उसे कुछ देगा और कोई इन्कार करेगा इस प्रकार उनके हिस्से मे अपमान के अतिरिक्त कुछ और न आ सकेगा।

७ इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि नबी सल्ल० ने अपनी औलाद और घराने वालो के लिए 'सदका' और 'जकात' लेने को वैध नही रक्खा इसमे दूसरे उद्देश्यो के अतिरिक्त एक बडा उद्देश्य यह है कि यदि आपके वश और आपकी औलाद के लिए 'ज़कात' का लेना वैध होता तो लोग अपने नबी से प्रेम और सम्बन्ध के कारण अपनी 'ज़कात' आप ही की औलाद और घराने के लोगो को देने की कोशिश करते और समुदाय के दूसरे मुहताज वचित रह जाते। 'कियामत' तक के लिए अपने घराने और औलाद को 'जकात' और 'सदका' से वचित करके नबी सल्ल० ने अपने सच्चे नबी होने का प्रमाण दिया है। आपकी 'नुबूवत' के दावे के पीछे यदि कोई सासारिक हित और लाभ प्राप्त करने की इच्छा काम कर रही होती, तो कभी भी आप अपनी औलाद और

८. हज़रत इब्न मसऊद रज़ि० कहते है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा . जिस व्यक्ति को कोई सख्त जरूरत पेश आये और उस ने उसे लोगो के सामने रक्खा, तो उसे उस मुसीवत से स्थायी रूप से छुटकारा नही मिलेगा और जिस व्यक्ति ने उसे अल्लाह् के सामने रक्खा तो अल्लाह जल्द ही उस की ज़रूरत पूरी कर देगा या तो जल्द मृत्यु दे कर (यदि उस की मृत्यु का समय आ गया हो) या कुछ विलम्ब से सम्पन्नता प्रदान कर के[८]। —अबु दाऊद, तिरमिजी

घराने वालो को 'ज़कात' से वचित न करते। इस त्याग और कुरबानी के पीछे सत्यता ही की शक्ति कार्यशील थी। अन्यथा अधिकतर देखा यह जाता है कि महात्मा और गुरु कहलाने वाले और उच्च कुटव के लोग 'सदका' और दान लेने का वास्तविक अधिकारी अपने आपको ही को समझते हैं।

इस 'हदीस' से इसका भी अनुमान किया जा सकता है कि उस युग मे जबकि गुलामो की कोई हैसियत नही थी आपने अपने गुलाम को अपने कुटुम्ब का एक सदस्य बताया। अबू राफेअ आपके आजाद किये हुये गुलाम थे।

८: मनुष्य को अपनी आवश्यकता अल्लाह् ही के सामने रखनी चाहिए। अल्लाह् ही उसका वास्तविक सरक्षक है। वही उसकी ज़रूरतो को पूरी करने वाला है। हज़रत मूसा अ० ने विवशता की दशा मे अल्लाह् ही को पुकारा था : "रब ! जो अच्छी चीज़ भी तू मेरी ओर उतार दे मैं उसका मुहताज हूँ।" (कुरआन ४ : २८) अल्लाह् ने उन्हे ठिकाना दिया।

जो व्यक्ति अल्लाह् को छोडकर दूसरो पर भरोसा रखता है वह कभी भी सकट से छुटकारा नही पा सकता। उसका जीवन लोगो से माँगते ही बीतेगा। जिस व्यक्ति को स्वय अपनी प्रतिष्ठा का ध्यान नही रहता, अल्लाह को भी उसकी कोई परवा नही होती। एक 'हदीस' मे है कि नबी सल्ल० ने कहा . मैं तीन चीज़ो पर कसम खाता हूँ। एक यह कि 'सदका' से किसी माल मे कमी नही आती, दूसरे यह कि किसी पर अत्याचार किया जाए और वह उस पर सब्र करे, तो सर्वोच्च अल्लाह् उस पर इज़्ज़त का दर्वाज़ा खोल देता है। तीसरे यह कि जो व्यक्ति अपने ऊपर भिक्षा माँगने का दर्वाज़ा खोलता है, सर्वोच्च अल्लाह् उस पर तगदस्ती का दर्वाजा खोल देता है। —तिरमिज़ी

रोज़ा

मनुष्य की प्राकृतिक एव स्वाभाविक क्षमता और शक्ति के उभरने और उस के विकास पाने के लिए शिक्षा-दीक्षा की आवश्यक्ता होती है। इस के अतिरिक्त साधारणतया मन और मस्तिष्क पर लौकिकता का पहलू इतना छाया रहता है कि मनुष्य के लिए यह अत्यन्त कठिन होता है कि वह चीजों को उन की प्राकृतिक पवित्रता मे देख सके और जीवन के महत्व-पूर्ण मूल्यों (*Values of life*) और वास्तविकताओं को समझ सके। ,रोजा एक' 'इबादत' (उपासना) और हमारी आध्यात्मिक एव नैतिक दीक्षा का एक उत्तम उपाय है। 'रोजा' का वास्तविक उद्देश्य यह है कि हमे मन की शुद्धता प्राप्त हो, हम में सयम पैदा हो सके और हम अल्लाह का डर रक्खे। कुरआन में कहा गया है . "हे 'ईमान' लाने वालो! तुम पर रोज़े अनिवार्य किये गये हैं जैसे तुम से पहले लोगों पर अनिवार्य किये गये ताकि तुम डर रखने वाले बन सको" (अल-बकरा आयत १८३)।

जब तक मनुष्य मे आत्म नियत्रण न हो उसे न तो मन की शुद्धता प्राप्त हो सकती है और वह न अल्लाह की अवज्ञा से बच सकता है। जो व्यक्ति अपनी तुच्छ इच्छाओं का वशवर्ती हो उसे न अल्लाह की महानता का एहसास हो सकता है। और न उसे जीवन की अनुभूति हो सकती है। बढ़ी हुई पाशविक भावना उसे इस का अवसर ही कब देगी कि वह अपनी प्रकृति की वास्तविक माँगों की ओर ध्यान न दे सके। रोज़ा इस बात का क्रियात्मक प्रदर्शन है कि खाना-पीना और स्त्री-प्रसग के अतिरिक्त भी कोई चीज है जिस की ओर ध्यान देने की आवश्यकता है। 'रोज़ा' बन्दे को ईश्वर की ओर और जीवन के उन महत्व पूर्ण मूल्यों की ओर आकृष्ट करता है जो मानव जीवन की वास्तविक निधि हैं। वह बन्दे को ऐसे उच्च स्थान पर पहुँचाता है जहाँ बन्दा अपने ईश्वर से अत्यन्त समीप हो जाता है। जहाँ अन्धकार छँट जाता है और सारे आवरण उठ जाते हैं। इसीलिए विद्वानो ने कहा है "कितने ही लोग रोजे से नही होते फिर भी वास्तविकता की दृष्टि से वे रोजेदार होते है, और कितने ही लोग रोजा रखते हुये भी रोज़ेदार नही होते"।

'रोजा' जाहिर मे तो इस चीज का नाम है कि मनुष्य उषाकाल से ले कर सूर्यास्त तक खाने-पीने और विषय भोग से रुका रहे किन्तु अपने आशय और आंतरिक उद्देश्य की दृष्टि से रोजा जिस चीज का नाम है वह यह है कि मनुष्य अपनी इच्छाओ पर नियन्त्रण रख सके, वह अल्लाह से डरता और उस को उपेक्षा से बचता हो। कभी ऐसा होता है कि मनुष्य देखने में तो रोज़े से होता है लेकिन वास्तव में उस का रोजा नही होता। न उस की आँखे सयमी होती है और न उस का जीवन पवित्रता और ईश-भय के अन्तर्गत व्यतीत होता है।

'रोजे' के लिए कुरआन ने जो शब्द प्रयोग किया है वह 'सौम' है। 'सौम' का शब्दार्थ है : बचना, पार्थक्य और मौन। इमाम रागिब कहते हैं:

"सौम का वास्तविक अर्थ है किसी काम से रुक जाना, चाहे उस का सम्बन्ध खाने-पीने से हो या बात-चीत करने और चलने-फिरने से हो इसी कारण घोडा चलने-फिरने या चारा खाने से रुक जाये तो उसे 'सायम' (रोजेदार) कहा जाता है। थमी हुई वायु और दोपहर के समय को भी 'सौम' कहते है। इस विचार से कि उस समय सूर्य मध्य आकाश मे रुक जाता है"।

इस व्याख्या से मालूम हुआ कि वास्तव मे किसी चीज से रुक जाने की स्थिति का नाम 'सौम' (रोजा) है। 'रोजा' वास्तव में उसी व्यक्ति का है जो रोजे की हालत में तो खाने-पीने और विषयभोग से रुक जाये लेकिन गुनाहो और अप्रिय कार्य को सदैव के लिए छोड दे।

'रोजा' अपने-आप को अल्लाह के लिए हर चीज से निवृत कर लेने औह पूर्ण रूप से अल्लाह की ओर आकृष्ट होने का नाम है। इस पहलू से 'रोजे' और 'एतकाफ' (सब से अलग होकर अल्लाह की याद और उस 'इबादत' के लिए एकान्तवास करना) मे बडी अनुकूलता पाई जाती है। यही कारण है कि 'एतकाफ' के साथ 'रोजा' रखना जरूरी समझा गया है। बल्कि पौराणिक धर्म विधान में तो रोजे की हालत में बात-चीत से भी बचा जाता था। कुरआन में आता है कि हजरत मसीह अ० के जन्म के अवसर पर हजरत मरयम बहुत परेशान हुई और उन्होंने यहाँ तक कहा कि क्या अच्छा होता कि मै इस से पहले मर जाती और लोग मुझे भूल जाते। उस समय उन्हे तसल्ली देते हुये कहा गया था "फिर यदि तू किसी आदमी को देखे तो (इशारे से) कह देना : मैं ने तो रहमान (कृपाशील ईश्वर) के लिए रोजे की नज्र मानी है, मैं आज किसी आदमी से न बोलूँगी" —मरयम आयत २६।

'रोज के कारण मनुष्य और 'फिरिश्तों' से बडी समानता आ जाती है। फिरिश्तो के खाने-पीने की आवश्यकता नही होती उन का आहार अल्लाह की 'हम्द' (ईश-प्रशसा) और 'तस्बीह' (ईश-गुणगान) है। रोजे की हालत में मुस्लिम भी खाने-पीने और कामवासना आदि से दूर रह कर अल्लाह की 'इबादत' और बन्दगी मे व्यस्त दीख पडता है।

'रोजा' रख कर बन्दा अपनी इच्छाओं पर काबू पाता है। उस यक्ति से जो अपनी इच्छाओ का दास हो उससे इस बात की आशा नही की जा सकती कि वह सत्य के समर्थन ओर असत्य एवं अनैतिकता के उन्मूलन के लिए जान-तोड़ कोशिश कर सकेगा। 'जिहाद' के लिए सब्र और साहस दोनो अभीष्ट है। सब्र और साहस रोजे की विशेषताओं मे से हैं। इसी लिए नबी सल्ल० ने 'रोजे' के महीनो को 'सब्र का महीना कहा है। रोजे के महीने में निरन्तर एक मास तक सब्र, आत्मनियत्रण और अल्लाह के आज्ञापालन का अभ्यास कराया जाता है।

साधारण अवस्था में मनुष्य को दूसरों की तकलीफ और भूख-प्यास का एहसास नही हो पाता। 'रोजे मे भूख-प्यास का तजुर्बा मनुष्य मे स्वाभावत यह एहसास उभारता है कि वह दीन-दुखियों और ज़रूरत-मदो के साथ सहानुभूति का मामला करे और उन्हे परेशानी की हालत में न रहने दे। नबी सल्ल० 'रमजान' के महीने को 'मवासात' का महीना (भाइ चारा एव सहानुभूति का मास) कहते थे। और इस महीने मे आप अत्यन्त दानशील होते थे।

'रोजा' एक प्रकार से विनय एव नम्रता का प्रदर्शन भी है। इसी लिए गुनाहों के क्षमा कराने मे रोजा सहायक सिद्ध होता है। इसीलिए 'शरीअत' (धर्म शास्त्र) में 'कफ्फारा' (प्रायश्चित) के रूप मे भी 'रोजा' रखने का आदेश दिया गया है। 'रोजा' न केवल यह कि गुनाह के प्रभाव को दिल से मिटाता है बल्कि वह दुआओ (प्राथनाओं) की स्वीकृति और अल्लाह कि दयालुता को अपनी ओर आकृष्ट करने में भी सहायक होता है। पौराणिक ग्रन्थो मे भी रोजे की इस विशेषता का उल्लेख मिलता है

"ईश-दिवस (अय्यामुल्लाह) महान् और अति भयानक है। कौन उस का सहन कर सकता है ? लेकिन ईश्वर कहता है अब भी पूरे मन मे 'रोजा' रख कर रुदन और क्रन्दन करते हुये मेरी ओर फिर कर आ जाओ और कपड़ो को नही बल्कि दिलों को चाक कर के (फाड कर,) प्रभु

अपने ईश की ओर फिरो क्योकि वह दयाशील और अनुग्रहकारी, विलम्ब से क्रोध करने वाला और करुणानिधान है और यातना उतारने से बाज रहता है ?

—योएल २ : ११-१२

'रोजा' पवित्रतम 'इबादत' (उपासना) है। रोजा अल्लाह की बडाई का प्रदर्शक और बन्दे की कृतज्ञता विज्ञप्ति भी है। रोजे' के सिलसिले मे कुरआन मजीद मे जहाँ कहा गया है · "ताकि तुम 'तकवा' (ईश भय और धर्म परायणता) हासिल करो" वही यह भी कहा गया है "ताकि उस मार्गदर्शन पर जो तुम्हे प्रदान किया गया है अल्लाह की बडाई करो और ताकि तुम (उस के आगे) कृतज्ञता दिखाओ"।

—सूरा अल-बकरा आयत १८५।

मानव जाति पर यो तो अल्लाह के अगणित उपकार हैं लेकिन उस का सब से बड़ा उपकार यह है कि उस ने हमे करआन जैसा उत्तम ग्रन्थ प्रदान किया कुरआन ने मानव को मुक्ति और शाश्वत कल्याण का मार्ग दिखाया। मनुष्य को नैतिकता के उस उच्च पद से परिचित किया जिस की साधारण अवस्था मे कल्पना भी नही की जा सकती थी। 'रोजा' रख कर मनुष्य अल्लाह की इस विशेष दयालुता पर प्रसन्नता प्रकट करता और उस का आभार स्वीकार करता है। मनुष्य अल्लाह का बन्दा और उसका सेवक है। अल्लाह ही उस का स्वामी और इष्ट पूज्य है। मनुष्य के लिए आनन्द का उत्तम साधन वही है जिस के माध्यम से वह सम्बन्ध और नाता प्रर्दशित होता हो जो वास्तविक नाता उसका अपने ईश्वर से है

हम उसके हैं हमारा पूछना क्या।

ईश-सम्बन्ध का यह प्रदर्शन स्वभावत अल्लाह के समक्ष कृतज्ञता व्यक्त करना भी है। 'रमजान' का महीना विशेष रूप से रोजे के लिए इस लिए नियत किया गया कि यही वह शुभ मास है जिस मे कुरआन अवतारित होना आरम्भ हुआ था। कुरआन के अवतरण-उद्देश्यो और 'रोजे' मे बड़ी समानता पाई जाती है। कुरआन जिन उद्देश्यो के अन्तर्गत अवतारित हुआ है उस को प्राप्ति मे रोजा सहायक होता है।

'रमजान' मे एक साथ रोजा रखने से नेकी और आध्यात्मिकता का एक वातावरण पैदा हो जाता है जिसका दिलो पर गहरा प्रभाव पडता है। कम हिम्मत और कमजोर इरादे के व्यक्ति के लिए भी नेकी की राह पर चलना सरल हो जाता है। सफलता उसी के लिए है जिस ने

इस रहस्य को समझ लिया कि उसकी ज़िम्मेदारी केवल 'रोज़े' के बाह्य नियमों के पालन तक सीमित नही है बल्कि उसका यह कर्त्तव्य भी है कि वह 'रोजे' के वास्तविक उद्देश्य के प्रति असावधानी न दिखाए। रोज़े का आशय केवल रोज़े के समय तक ही अपेक्षित नही है बल्कि उसका सम्बन्ध मनुष्य के पूरे ज़ीवन-काल से है। पौराणिक ग्रन्थों में भी ऐसे रोज़ो को व्यर्थ कहा गया है जिनका सम्बन्ध मन की शुद्धता, ईश-भय और उच्च नैतिकता से न हो। निम्नलिखित पक्तियाँ कितनी प्रभावकारी है.

"तुम इस प्रकार का 'रोज़ा' नही रखते हो कि तुम्हारी आवाज़ ऊपरी लोक में सुनी जाये।"

"क्या वह रोज़ा जो मैं चाहता हूँ यह नही कि ज़ुल्म की ज़जीरे तोडें और जुए के बन्धन खोले और पीड़ितों को आजाद करे, बल्कि प्रत्येक जुए को तोड़ डाले? क्या वह यह नहीं कि तू अपनी रोटी भूखो को खिलाए और मुहताजो को जो इधर-उधर मारे-मारे फिरते हैं अपने घर में लाये ओर जब किसी को नगा देखे तो उसे पहनाए और तू अपने सह-जातिक से मुँह न छिपाए? तब तेरा प्रकाश प्रात काल की भाँति फूट निकलेगा। और तू शीघ्र चंगा हो जायेगा तेरी सत्यता तेरे आगे-आगे चलेगी और प्रभु का तेज तेरे पीछे रक्षा करता चलेगा। और यदि तू अपने दिल को भूखे की ओर झुकाए और दुखी मन को सन्तुष्ट करे तो तेरा प्रकाश अन्धकार में चमकेगा और तेरा अन्धकार दोपहर का-सा प्रकाशमान हो जायेगा।" —यशायाह ५८. ४, ६, ७, ८, १०

यदि रोजे से वास्तविक रूप से फायदा उठाया जाये, तो वह मनुष्य को उस स्थान पर खडा कर देता है कि उसे सदैव अपनी जिम्मेदारी का एहसास रहता है। वह किसी समय भी अपने को अनुत्तरदायी नही समझेगा। वह हमेशा गुनाहों और बुरे कामो से बचेगा और अपने जीवन-लक्ष्य को सामने रक्खेगा।

———

रोज़ा की वास्तविकता

عَنْ سَلْمَانَ الْفَارِسِيِّ رض قَالَ خَطَبَنَا رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ فِيْ اٰخِرِ يَوْمٍ مِّنْ شَعْبَانَ فَقَالَ يَآ اَيُّهَا النَّاسُ قَدْ اَظَلَّكُمْ شَهْرٌ عَظِيْمٌ شَهْرٌ مُّبَارَكٌ شَهْرٌ فِيْهِ لَيْلَةٌ خَيْرٌ مِّنْ اَلْفِ شَهْرٍ جَعَلَ اللّٰهُ صِيَامَهٗ فَرِيْضَةً وَّقِيَامَ لَيْلِهٖ تَطَوُّعًا. مَنْ تَقَرَّبَ فِيْهِ بِخَصْلَةٍ مِّنَ الْخَيْرِ كَانَ كَمَنْ اَدّٰى فَرِيْضَةً فِيْمَا سِوَاهُ وَمَنْ اَدّٰى فَرِيْضَةً فِيْهِ كَانَ كَمَنْ اَدّٰى سَبْعِيْنَ فَرِيْضَةً فِيْمَا سِوَاهُ وَهُوَ شَهْرُ الصَّبْرِ وَالصَّبْرُ ثَوَابُهُ الْجَنَّةُ وَشَهْرُ الْمُوَاسَاةِ وَشَهْرٌ يُّزَادُ فِيْهِ رِزْقُ الْمُؤْمِنِ مَنْ فَطَّرَ فِيْهِ صَائِمًا كَانَ لَهٗ مَغْفِرَةً لِّذُنُوْبِهٖ وَعِتْقَ رَقَبَتِهٖ مِنَ النَّارِ. وَكَانَ لَهٗ مِثْلُ اَجْرِهٖ مِنْ غَيْرِ اَنْ يَّنْتَقِصَ مِنْ اَجْرِهٖ شَيْءٌ قُلْنَا يَا رَسُوْلَ اللّٰهِ لَيْسَ كُلُّنَا يَجِدُ مَا يُفَطِّرُ بِهِ الصَّائِمَ. فَقَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ يُعْطِي اللّٰهُ هٰذَا الثَّوَابَ مَنْ فَطَّرَ صَائِمًا عَلٰى مَذْقَةِ لَبَنٍ اَوْ تَمْرَةٍ اَوْ شَرْبَةٍ مِّنْ مَّآءٍ وَمَنْ اَشْبَعَ صَائِمًا سَقَاهُ اللّٰهُ مِنْ حَوْضِيْ شَرْبَةً لَا يَظْمَاُ حَتّٰى يَدْخُلَ الْجَنَّةَ وَهُوَ شَهْرٌ اَوَّلُهٗ رَحْمَةٌ وَّاَوْسَطُهٗ مَغْفِرَةٌ وَّاٰخِرُهٗ عِتْقٌ مِّنَ النَّارِ وَمَنْ خَفَّفَ عَنْ مَّمْلُوْكِهٖ فِيْهِ غَفَرَ اللّٰهُ لَهٗ وَاَعْتَقَهٗ مِنَ النَّارِ ——— بيهقى فى شعب الايمان

१ हजरत सलमान फारसी रजि० कहते है कि शाबान की अन्तिम तिथि को अल्लाह के रसूल सल्ल० ने हमें सम्बोधित किया आप ने कहा "हे लोगो ! तुम पर एक महान् और बरकत वाला महीना छाया डाल रहा है[1] । इस में एक रात हजार महीनो से उत्तम है[2] । इस महीने के रोजे को अल्लाह ने अनिवार्य किया है और उस की रातो मे (अल्लाह की सेवा मे)

---

१ अर्थात् 'रमज़ान' का शुभ महीना आ गया है ।

२ यह सकेत 'शबे कद्र' (दिव्य रात्रि) की ओर है । कुरआन इस दिव्य रात्रि से उतरना आरम्भ हुआ है । यह वह रात है जिसमे उन बातो का फैसला होता है जो ज्ञान एव तत्वदर्शिता पर अवलम्बित होती है । और जिनमे समार का कल्याण और भलाई होती है । दुनिया के मामलो का निर्णय इस रात मे होता है । वह रात जिसमे कुरआन उतरना शुरू हुआ कोई साधारण रात

खडा होने को 'नफ्ल' (तद अधिक) ठहराया है[३]। जो व्यक्ति इस महीने में कोई 'नफ्ल' नेकी अल्लाह की प्रसन्नता और सामीप्य प्राप्त करने के ध्येय से करेगा तो वह ऐसा होगा जैसे इस महीने के सिवा दूसरे महीने में किसी ने 'फर्ज' (अनिवार्य कर्म) अदा किये[४]। और वह सब्र का महीना है[५] और सब्र का बदला 'जन्नत' है और वह सहानुभूति एव सवेदना का महीना है[६]।

नही हो सकती। यह रात हजार महीनो से उत्तम है। कभी हजार महीनो मे भी मानव-कल्याण के लिए वह काम नही हुआ जो इस एक रात मे हुआ। इस रात को 'फरिश्ते' और रूहुल अमीन (हज़रत जिबरील अ०) अपने 'रब' के आदेश से उतरते है (दे० सूरा अल-कद्र और सूरा अद-दुखान आयत ३-५)।

३ रमजान के महीने मे दिन को 'रोज़ा' रखना फर्ज़ (आवश्यक) है और रात मे 'तराबीह' पढना और ज्यादा-से-ज्यादा 'नमाज़' मे अल्लाह के आगे खडा होना फर्ज (अनिवार्य) तो नही लेकिन यह अल्लाह को अत्यन्त प्रिय है।

४ 'रमजान' का महीना 'रोज़े' के लिए विशिष्ठ है। इस महीने मे समस्त 'मुस्लिम' लोग मिल कर एक साथ 'रोजा' रखते है। इस तरह व्यक्तिगत 'इबादत' एक सामूहिक 'इबादत' बन जाती है। लोगो के अलग-अलग 'रोजा' रखने से जो आध्यात्मिक एव नैतिक लाभ हो सकते थे, सबके मिल कर रोज़ा रखने से वे लाभ असीमित रूप से बढ जाते है। 'रमज़ान' का यह महीना सम्पूर्ण वातावरण को नेकी और परहेजगारी से भर देता है। मनुष्य को रोजा रख कर गुनाह करते हुये लज्जा आती है। लोगो मे नेकी और शुभ कर्मों की अभिरुचि बढ जाती है। और उनके मन मे यह इच्छा होती है कि वे दीन-दुखियो के काम आये और अच्छे कामो मे हिस्सा ले। नेकियो का प्रभाव और उसकी बरकते बढ जाती है।

५ इस महीने में मनुष्य भूख-प्यास की तकलीफ उठा कर अपनी इच्छाओ पर काबू पाने और अपने को अल्लाह के आदेशो का पाबन्द बनाने की कोशिश करता है। वह अपने मे ऐसी क्षमता और शक्ति उत्पन्न करने का प्रयास करता है जिससे वह अल्लाह के मार्ग से धैर्य और दृढता के साथ आगे बढ सके और उन तकलीफो और कष्टो का दृढता और साहस के साथ मुकाबला कर सके जिनसे उसे सत्य-मार्ग मे सामना करना पडे।

६ 'रोजे मे अपने दूसरे भाइयो के प्रति सहानुभूति अधिक-से-अधिक पैदा होनी चाहिए। भूख-प्यास मे पड कर मनुष्य को इसका पूर्णत अनुभव हो जाता

और वह महीना है जिस में 'ईमान' वालों की रोजी मे वृद्धि की जाती है[७]। जिस किसी ने इस में किसी रोजेदार को (रोजे के उपरान्त सन्ध्या को) जलपान कराया, तो उस के लिए गुनाहो के प्रति क्षमादान और ('जहन्नम' की) आग से आज़ादी का कारण होगा। और उसे उस रोजेदार के बराबर दिया जायेगा बिना इसके कि उस रोजेदार के 'सवाब' (प्रतिदान) में कोई कमी की जाये"।

आप से कहा गया 'हे अल्लाह के रसूल ! हम मे प्रत्येक को सामान प्राप्त नही होता जिस से वह रोजेदार को 'रोजे' के उपरान्त जलपान आदि करा सके। अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह यह 'सवाब' (प्रतिदान) उस व्यक्ति को भी प्रदान करेगा जो दूध की थोडी लस्सी या एक खजूर पर या पानी ही के एक घूँट पर किसी रोजेदार का (सन्ध्या को) 'रोजा' खुला दे और जो कोई किसी रोजेदार को पेट भर कर खाना खिला दे उसे ('क़ियामत' में) अल्लाह मेरे हौज से ऐसा पिलायेगा कि उसे प्यास ही नही लगेगी यहाँ तक कि वह 'जन्नत' में दाखिल हो जायेगा। यह ('रमजान') का महीना है जिस का आरम्भिक भाग दयालुता, मध्य भाग क्षमादान और अन्तिम भाग ('जहन्नम' की) आग से आजादी है[८]। और जो व्यक्ति इस महीने में अपने अधिकृत (दास, सेवक) के काम को हल्का कर देगा अल्लाह उसे क्षमा कर देगा और उसे ('जहन्नम' की) आग से आजाद करेगा"। —बैहकी—शोबुल ईमान

है कि मुहताजी और गरीबी मे आदमी पर क्या कुछ गुज़रती होगी। स्वय नबी सल्ल० इस महीने मे अत्यन्त दयालु और दयाशील हो जाते थे। कोई सवाली द्वार से खाली नही जाता था और न कोई कैदी कैद मे रहता था।

७ अर्थात् बाह्य एव आतरिक, नैतिक एव अध्यात्मिक हर प्रकार की सम्पन्नताएँ और बरकतें इस महीने मे प्राप्त होती है।

८ यह महीना नेकियो की बहार ले कर आता है। 'ईमान' वाले लोग इस महीने मे अधिक-से-अधिक अल्लाह की 'इबादत और आज्ञापालन मे लग जाते है जिसके कारण लोगो पर अल्लाह की विशेष दयालुता और कृपा होती है यहाँ तक कि 'रमजान' का आरम्भिक भाग व्यतीत हो जाने के पश्चात् मुस्लिमो और आज्ञाकारी बन्दो की हालत ऐसी जाती है कि अल्लाह उनकी पिछली खताओ और गुनाहो को क्षमा कर दे। इस महीने के आखिरी दिनों तक पहुँचने-पहुँचते इस शुभ महीने से फायदा उठाने वालो के जीवन मे ऐसी पवि-

२. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० नें कहा . आदम के बेटे के प्रत्येक कर्म की नेकी दस गुनें से सात सौ गुने तक बढाई जाती है सर्वोच्च अल्लाह् कहता है कि 'रोज़ा उस से अलग है क्योंकि वह मेरे लिए है और मै ही उस का बदला दूँगा[९]। मनुष्य अपनी काम-वासना और अपना खाना मेरे ही लिए छोड देता है[१०]। रोजेदार के लिए दो हर्ष है। एक हर्ष 'रोजा' खोलने के समय और दूसरा हर्ष अपनें 'रब' (पालन कर्ता स्वामी) से मिलने के समय[११]। और रोज़े-दार के मुँह की गन्ध अल्लाह् की दृष्टि मे कस्तूरी की सुगन्ध से उत्तम

त्ता आ जाती है और उनमे ऐसा ईश-भय की भावना पैदा हो जाती है कि वे अल्लाह् की ओर से मुक्त और मोक्षप्राप्त समझे जायें। अल्लाह 'जहन्नम' से उनकी रिहाई और आजादी का फैसला कर देता है।

९ अर्थात् अल्लाह् लोगो के शुभ कर्मों का प्रतिकार और बदला उनकी नीयतों और उनके हृदय की शुद्धता के अनुसार दस गुणा से सात सौ गुणा तक देता है किन्तु रोज़े का मामला इस सामान्य नियम से भिन्न है। रोजा खास अल्लाह् के लिए होता है। दूसरी 'इबादतो' और नेकियो मे कोई-न-कोई बाह्य गतिविधि सम्मिलित होती है इसलिए उनको दूसरे लोगो से छिपाना अत्यन्त कठिन है किन्तु 'रोज़ा' ऐसा खामोश और अव्यक्त कर्म है जिसको रोज़ेदार और अल्लाह् के सिवा कोई दूसरा नही जान सकता। इसलिए अल्लाह् उसका बदला भी बेहिसाब प्रदान करेगा। इसके अतिरिक्त 'रमज़ान' मे नेकी और धर्म परायणता एव ईश-भय का सामान रूप से शुद्ध वातावरण प्राप्त हो जाता है जिसमे भलाई शुभ कार्य के फलने-फूलने का अधिक अवसर मिलता है। आदमी जितनी ज्यादा नेक नीयती और मन की शुद्धता के साथ इस महीने मे अमल करेगा और जितना अधिक 'रमज़ान' की बरकतो से फायदा उठाने की कोशिश करेगा और वर्ष के शेष ग्यारह् महीनो मे जितना 'रमजान' के प्रभाव को बाकी रखने का प्रयास करेगा उतना ही अधिक उसके शुभ कर्म फूलते-फलते रहेगे, जिसकी कोई सीमा निश्चित नही की जा सकती। यह विशेपता साधारण अवस्था मे दूसरे कर्मों को प्राप्त नहीं है।

१० अर्थात् 'रोजे' मे न अपनी काम वासनाओ को पूरा करता है और न कुछ खाता-पीता है।

११ अर्थात् एक खुशी उसे दुनिया ही मे सन्ध्या को 'रोज़े' के उपरान्त जलपान करने समय प्राप्त होती है। दिन भर भूखा-प्यासा रहने के पश्चात् जब वह

है"। और 'रोजा' ढाल है जब तुम मे से किसी का 'रोजा' हो, तो वह न अश्लील बातें करे और न शोर मचाये और न दगा और फसाद करे और यदि कोई उसे गाली दे या उस से लड़े तो कह दे कि मैं 'रोजे' से हूँ (मैं तुम्हारे इस कार्य मे साथ नही दे सकता)"। —बुखारी, मुस्लिम

३, हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : जो व्यक्ति 'रमजान' के रोजे 'ईमान' और चेतना के साथ रक्खे उन के सब पिछले गुनाह क्षमा कर दिये जायेगे और इसी (प्रकार) जो 'रमजान' (के महीने) मे 'ईमान' और चेतना के साथ (रातो मे अल्लाह के आगे) खड़ा होगा उस के भी सब पिछले गुनाह क्षमा कर दिये जायेंगे और (इसी तरह) जो 'शबेकद्र' (दिव्य रात्रि) में 'ईमान' और चेतना के साथ ('नमाज' मे अल्लाह की सेवा मे) खडा होगा उस के भी सब पिछले गुनाह क्षमा कर दिये जायेगे"।

—बुखारी, मुस्लिम

शाम को 'रोजा' खोलता है, तो उसे जो स्वाद और आनन्द मिलता है वह साधारण अवस्था मे कभी भी प्राप्त नहीं हो सकता। उसकी भूख-प्यास भी दूर हो जाती है और उसे यह खुशी भी हासिल होती है कि उसे अल्लाह के आदेश के निभाने का सुअवसर प्राप्त हुआ। दूसरी खुशी उसे आखिरत मे प्रभु-दर्शन से प्राप्त होगी।

१२. 'रोजे' की हालत मे मुँह की गन्ध खराब हो जाती है (इसलिए बार-बार दतुवन करने की आवश्यकता होती है) लेकिन अल्लाह की निगाह मे वह कस्तुरी की सुगन्ध से भी बढकर मूल्यवान है इसलिए कि वह गन्ध उस भूख-प्यास के कारण है जिसके पीछे अल्लाह के आदेश के पालन और उसकी प्रसन्नता की प्राप्ति के सिवा और कोई भावना काम नही कर रही होती है।

१३. अर्थात् जिस प्रकार ढाल के द्वारा मनुष्य शत्रु के आघातो से अपने को बचाता है उसी प्रकार 'रोजा' शैतान और अपनी तुच्छ इच्छाओ के आक्रमणो से से बचने के लिए है। 'रोजे' के नियमो और मर्यादाओ का मनुष्य यदि ध्यान रक्खे, तो वह 'रोजे' के कारण बहुत से गुनाहो से बच सकता है और 'आखिरत' मे 'जहन्नम' की आग से छुटकारा पा सकता है।

१४ 'ईमान' का अर्थ यह है कि अल्लाह और 'आखिरत' के बारे, मे जो धारणा 'इस्लाम' ने दी है वह ताज़ा रहे। चेतना के लिए वास्तव मे यहाँ 'इहतिसाब' शब्द प्रयुक्त हुआ है। इहतिसाब का अर्थ यह है कि वह अल्लाह की खुशी और प्रसन्नता का इच्छुक हो। हर समय अपने विचारो और कर्मों पर निगाह

४ हजरत इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने एक व्यक्ति को डकार लेते सुना तो कहा . अपनी डकार को कम कर इस लिए कि 'कियामत' के दिन सब से बढ कर भूखा वह व्यक्ति होगा जो दुनिया में खूब पेट भर कर खाता है[१५]।

५ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा हर चीज की 'जकात' होती है और शरीर की 'जकात' रोजा है[१६]। —इब्न माजा

रक्खे कि कही वह अल्लाह की इच्छा के प्रतिकूल तो नही जा रहा है। उसके कर्म और विचार के पीछे कोई गलत भावना तो काम नही कर रही है। 'ईमान' और 'इह्तिसाब' के साथ 'रोज़ा' रखने से अल्लाह उसके पिछले गुनाहो को क्षमा कर देता है। इसलिए कि वह कभी गुनहगार था भी तो अब वह अवज्ञा से बाज आ गया और उसने अल्लाह की ओर रुजू कर लिया।

१५. अर्थात् 'आखिरत' मे तृप्ति और सुख-चैन तो उसी व्यक्ति के लिए है जिसे 'आखिरत' की चिन्ता के कारण दुनिया मे सुख भोगने का अवसर ही न मिल सका हो। इतना अधिक खाना कि आदमी लम्बी-लम्बी डकारें लेता फिरे आदमी को आलसी और अकर्मण्य बना देता है। गाफिल व्यक्ति अपने मन को अन्धकारमय होने से बचा नही सकता। मन का अन्धकार सब से बडी महरूमी है और असफलता है। 'रोज़ा' मनुष्य को इस बात की शिक्षा देता है कि वह उदर-पोषण को जीवन का एकमात्र ध्येय न समझे, जीवन का मूल्य इस से कही बढकर है। एक 'रिवायत' मे है कि नबी सल्ल० ने कहा "मनुष्य ने कोई बरतन पेट से बुरा नही भरा (जबकि पेट को इस तरह भरा जाये कि मनुष्य केवल चरने-चुगने वाला पशु बनकर रह जाये। और जीवन एव धर्म की माँगो और तकाज़ो को समझने मे असमर्थ ही रहे)। मनुष्य के लिए कुछ लुकमे काफी है जो उसकी कमर को सीधी रख सके और यदि पेट भरना ज़रूरी हो तो पेट के तीन हिस्से करे, एक हिस्सा खाने के लिए एक पीने के लिए, और एक हिस्सा अपने लिए (अर्थात् सास आदि लेने के लिए।)" —तिरमिजी, इब्न माजा

१६. अर्थात् जिस प्रकार माल और दूसरी चीजो की 'जकात' देने से मनुष्य का माल और उसकी चीज़े शुद्ध हो जाती है और उन्हे प्रयोग मे लाने का अधिकार मनुष्य को मिल जाता है, ठीक उसी प्रकार शरीर की 'ज़कात' अदा करने से मनुष्य का अस्तित्व और उसका व्यक्तित्व शुद्ध और पवित्र हो जाता

६ हज़रत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा : जिस व्यक्ति ने (रोजे की हालत मे) झूठ बोलना और उस पर अमल करना न छोडा, तो अल्लाह् को इस की कोई आवश्यकता नही कि वह (रोजा रख कर) अपना खाना-पीना छोड दे[१७]।
—बुखारी

७. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा . कितने ही रोजेदार ऐसे है जिन्हे अपने 'रोजे' से भूख-प्यास के अतिरिक्त कुछ पल्ले नही पडता और कितने ही (रातो में 'नमाज' मे) खडे होने वाले ऐसे है कि उन्हे (अल्लाह् की सेवा मे) अपने खडे होने से रतजगे के अतिरिक्त कुछ पल्ले नही पडता[१८]। —दारमी

८. कबीला बनी सुलैम के एक ('सहाबी') व्यक्ति का बयान है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने हाथ पर गिन कर कहा 'तस्बीह'[१९] अर्धतुला को भर देती है और 'अल-हम्दुलिल्लाह'[२०] उसे पूर्ण रूप से भर देता है और

है और उसे विकास का पूरा अवसर प्राप्त होता है। 'रोजा' रखकर मनुष्य इसी बात का प्रमाण सचित करता है कि वह अल्लाह् का विद्रोही और अवज्ञाकारी नही बल्कि अल्लाह् का आज्ञाकारी है और बजा तौर पर उसे जीवित रहने और अल्लाह् की नेमतो से लाभान्वित होने का हक पहुँचता है।

१७ इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि 'रोज़े' मे भूखा-प्यासा रहना स्वय कोई उद्देश्य नही है बल्कि 'रोज़े' का वास्तविक उद्देश्य यह है कि उसके द्वारा मनुष्य मे धर्मपरायणता, सयम और ईश-भय पैदा हो और वह एक उत्तरदायित्वपूर्ण जीवन व्यतीत कर सके।

१८ मतलब यह है कि जब किसी ने 'रोज़े और रात मे 'इबादत' करने के वास्तविक उद्देश्य को समझा ही नही और न उसे प्राप्त करने का प्रयास किया, तो फिर इसकी आशा कैसे की जा सकती है कि 'रोज़े' और रात्रि-जागरण से उसे कोई लाभ हो सकेगा।

१९ अर्थात् 'सुबहानल्लाह' कहना। अल्लाह् की महानता और उच्चता का प्रदर्शन ऐसा शुभ कर्म है जो अर्ध तुला अर्थात् आधी मीजान को भर देने के लिए पर्याप्त है, शर्त यह है कि यह प्रदर्शन सच्चे मन से हुआ हो। सच्चे मन से अल्लाह की महानता का इकरार मनुष्य के जीवन को बदल सकता है फिर उसका पल्ला या तुला नेकियो से क्यो न भरेगी।

२० अर्थात् अल्लाह की प्रशसा करना और उसका आभार स्वीकार करना। जो

'तकबीर'[२१] जो-कुछ आकाश और धरती के बीच है सब को भर देती है। और 'रोजा' आधा सब्र[२२] और सुथराई एव शुद्धता आधा 'ईमान' है।
—तिरमिज़ी

९ हजरत इब्न अब्बास रजि० कहते है कि दो रोजेदारो ने 'जुह्र' या 'अस्र' की नमाज पढी। जब नबी सल्ल० नमाज अदा कर चुके तो आपने कहा . तुम दोनो दोबारा वजू कर के 'नमाज पढो और अपना 'रोजा' पूरा कर के दूसरे दिन कजा रोजा रक्खो। उन्होने कहा : क्यो ? हे अल्लाह के रसूल ! आप ने कहा तुम ने अमुक व्यक्ति की गीबत (परोक्ष निन्दा)

जीवन अल्लाह की 'तस्बीह' और 'हम्द' (महानता का वर्णन, गुणगान एव कृतज्ञाप्रकाशन) का प्रतीक बन जाये वही वास्तव मे पूर्ण जीवन है। इसलिए 'तस्बीह' और 'हम्द' करने के कारण मीजान अथवा कर्म-तुला का भर जाना स्वाभाविक सी बात है।

२१ अर्थात् 'अल्लाहु अकबर' कहना। जिन को वास्तविक श्रवण शक्ति प्राप्त है उन्हे विश्व मे हर ओर जमीन मे भी और अतरिक्ष और सितारो आदि मे भी 'तकबीर' (अल्लाह की बडाई) ही की ध्वनि सुनाई देती है। धरती और आकाश का प्रत्येक कण अल्लाह की बडाई और कुशलता की ही कहानी सुनाता है। जब कोई व्यक्ति अल्लाह की बडाई का गान गाता है तो उसकी सगति धरती और आकाश के कण-कण करते है, मानो उसकी वीणा के तारो की ध्वनि विश्व-वीणा के ध्वनि मे मिल जाती है।

२२. 'ईमान' वालो के सम्पूर्ण जीवन को हम "सब्र" से अभिव्यजित कर सकते है। 'मोमिन' एक जीवन-प्रणाली का पाबन्द होता है। उसका वास्तविक उद्देश्य 'आखिरत' की सफलता है। वह ससार मे इसलिए जीवित होता है कि अल्लाह के मार्ग पर चल सके। इसके लिए बडे सब्र और साहस की आवश्यकता होती है। धैर्य्य के बिना मनुष्य अल्लाह के मार्ग मे एक कदम भी नही चल सकता और न इसके बिना उसके चरित्र का निर्माण ही सम्भव है। इस "हदीस' मे 'रोजा' को 'सब्र' कहा गया है। मतलब यह है कि जिस व्यक्ति ने 'रोजा' रख लिया उसने सब्र, धैर्य और दृढ सकल्प की दीक्षा प्राप्त कर ली। अब वह इस दीक्षा से अपने पूरे जीवन मे लाभ उठाये और अपने सम्पूर्ण जीवन को सब्र के ढाँचे मे ढाले। जिस दिन उसका जीवन सब्र के ढाँचे मे ढल गया उस दिन हम कह सकते है कि उसने अपने 'सब्र' को पूर्ण कर लिया। उस समय उसे आधा सब्र नही बल्कि पूरा सब्र प्राप्त होगा।

की है"। —बैहकी

१०. हज़रत जाबिर रज़ि० कहते हैं कि नबी सल्ल० सफर मे थे, आप ने एक व्यक्ति को देखा जिस के पास लोग एकत्र थे और उस परछाया कर रक्खा था। आपने कहा, उसे क्या हुआ है ? लोगो ने कहा यह रोजेदार है। इस पर अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा यह नेकी नही है कि सफर मे रोज़ा रक्खो। एक रिवायत मे है कि (आप ने कहा.) सफर मे रोज़ा रखना नेकी नही है"। --बुखारी, मुस्लिम आदि

---

२३ इस से मालूम हुआ कि 'नमाज़' और 'रोज़े' उस समय पूर्ण होते हैं जब मनुष्य हर तरह की बुराइयो से अपने को बचाये, यहाँ तक कि न तो किसी की निन्दा करे और न किसी दूसरे गुनाह मे लिप्त हो।

२४ मतलब यह है कि सफर मे 'रोज़ा' रखना तुम्हारे लिए कठिन है, तो सफर मे 'रोज़ा' क्यो रखते हो। 'रोज़े' का अर्थ अपनी जान को विनष्ट करना कदापि नही है। 'रोज़े' को अल्लाह ने केवल इसलिए अनिवार्य किया है कि बन्दे उस के द्वारा शुद्धता, कर्तव्य परायणता और ईश-भय प्राप्त करें। हज़रत जाबिर रज़ि० का बयान है कि मक्का की विजय के वर्ष जब नबी सल्ल० मक्का की ओर निकले तो आपके साथ दूसरे लोगो ने 'रोज़ा' रक्खा। जब आप कुराउल ग़मीम के स्थान पर पहुँचे तो आपको सूचना मिली कि लोगो को 'रोज़ा' रखना कठिन हो गया है। और वे आपके अमल को देख रहे हैं। आपने 'अस्र' के बाद पानी का एक प्याला मँगा कर पिया। लोग आपकी ओर देख रहे थे। कुछ लोगो ने 'रोज़ा' तोड़ दिया और कुछ उसी तरह रोजा रक्खे रहे। फिर आपको सूचना मिली कि कुछ लोग (सख्त तकलीफ के बावजूद) 'रोज़े' से है। आपने कहा 'यही लोग अवज्ञाकारी है,।" —मुस्लिम, तिरमिजी नसई

एक 'हदीस' मे जिसके 'रावी' (उल्लेखकर्त्ता) हज़रत अब्दुर्रहमान बिन औफ रज़ि० है नबी सल्ल० ने यहाँ तक कहा है. "सफर मे 'रोज़ा' रखना ऐसा ही है जैसा कि घर पर 'रमज़ान' का 'रोज़ा' न रखना"—इब्न माजा। मतलब यह है कि आदमी मे यदि इसकी शक्ति नही है कि वह सफर मे 'रोज़े' रख सके, फिर भी वह 'रोज़ा' रखता है तो वास्तव मे वह 'रोज़ा' नही रखता बल्कि 'शरीअत' (धर्म शास्त्र) को अपने लिए मुसीबत ठहराता और अल्लाह की अवज्ञा करता है। वह धर्म के स्वाभाविक मार्ग से हटा हुआ है। इसी कठिनाई और मुश्किल के कारण नबी सल्ल० कहते हैं "रोज़े मे 'विसाल' से बचो।" विसाल से अभिप्रेत यह है कि इस प्रकार दिन-रात निरन्तर 'रोज़ा' रक्खा जाये कि बीच मे न 'सहरी' (अरुणोदय से पहले का जलपान) खाई जाये और न (सन्ध्या को 'रोज़े' के उपरान्त) 'रोज़ा' खोला जाये। नबी

'नफ्ल' रोजे

عَنْ عَبْدِ اللّٰهِ بْنِ عَمْرِو بْنِ الْعَاصِ قَالَ قَالَ لِي رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ يَا عَبْدَ اللّٰهِ، أَلَمْ أُخْبَرْ أَنَّكَ تَصُوْمُ النَّهَارَ وَتَقُوْمُ اللَّيْلَ؟ قُلْتُ بَلَى يَا رَسُوْلَ اللّٰهِ قَالَ فَلَا تَفْعَلْ، صُمْ وَأَفْطِرْ وَقُمْ وَنَمْ فَإِنَّ لِجَسَدِكَ عَلَيْكَ حَقًّا وَإِنَّ لِعَيْنِكَ عَلَيْكَ حَقًّا وَإِنَّ لِزَوْجِكَ عَلَيْكَ حَقًّا وَإِنَّ لِزَوْرِكَ عَلَيْكَ حَقًّا لَا صَامَ مَنْ صَامَ الدَّهْرَ، صَوْمُ ثَلَاثَةِ أَيَّامٍ مِنْ كُلِّ شَهْرٍ صَوْمُ الدَّهْرِ كُلِّهِ صُمْ كُلَّ شَهْرٍ ثَلَاثَةَ أَيَّامٍ وَاقْرَأِ الْقُرْآنَ فِي كُلِّ شَهْرٍ قُلْتُ إِنِّي أُطِيْقُ أَكْثَرَ مِنْ ذٰلِكَ، قَالَ صُمْ أَفْضَلَ الصَّوْمِ صَوْمِ دَاوٗدَ صِيَامُ يَوْمٍ وَإِفْطَارُ يَوْمٍ وَاقْرَأْ فِي كُلِّ سَبْعِ لَيَالٍ مَرَّةً وَلَا تَزِدْ عَلٰى ذٰلِكَ ——— بخاری مسلم

१ हजरत अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें मुझ से कहा हे अब्दुल्लाह ! क्या मुझे यह सूचना नही मिली है कि तुम दिन में 'रोजा' रखते और रात को ('इबादत') मे खडे रहते हो ? मैं नें कहा हाँ, हे अल्लाह के रसूल ! मैं ऐसा ही करता हूँ । आप नें कहा ऐसा न करो, रोजा भी रक्खो और खाओ, पियो भी, रात मे खडे भी रहो और सोओ भी क्योकि तुम्हारे शरीर का भी तुम पर हक है, तुम्हारी आँख का भी तुम पर हक है, तुम्हारी पत्नी का भी तुम पर हक है, और तुम्हारे मिलने-जुलने वालों (अतिथि आदि) का भी तुम पर हक है[1] । जिस व्यक्ति ने सदैव 'रोजा'

सल्ल० को अल्लाह ने विशेष शक्ति प्रदान की थी इसलिए आप 'रोज़े' मे 'विसाल' भी कर लेते थे किन्तु दूसरो को आपने इसकी अनुज्ञा नही दी (बुखारी, मुस्लिम, अहमद)।

१ अर्थात् 'रोज़े' और 'इबादत' का अर्थ यह नही होता कि मनुष्य जीवन की दूसरी आवश्यकताओ और माँगो को भूल जाये । उसे हर मामले मे सन्तुलित नीति अपनानी चाहिए । वह 'नफ्ल' भी रक्खे किन्तु सदैव 'रोज़ा' रखना सही नही है । वह 'रोजा' भी करे और आराम के लिए भी वक्त निकाले ।

रक्खा उसने 'रोजा' ही नही रखखा[2]। हर महीने के तीन दिन के 'रोज़े' हमेशा के रोजों को हैसियत रखते है[3]। हर महीने में तीन दिन के 'रोज़े' रक्खो और हर महीने में एक कुरआन पढो। मैं ने कहा मैं इस से अधिक की शक्ति रखता हूँ। आप ने कहा (हजरत) दाऊद की तरह 'रोजें' रख लिया करो, यह रोज़े की उत्तम रीति है। एक दिन 'रोजा' रक्खो और एक दिन खाओ-पिओ सप्ताह मे एक कुरआन पढ लिया करो।

—बुख़ारी, मुस्लिम

---

२. हमेशा 'रोज़ा' रखना अकारण अपने को कष्ट देना है। 'इस्लाम' मे जिस तरीके को पसन्द किया गया है वह सन्तुलित तरीका है। निरन्तर 'रोज़े' रखने से रोज़े का महत्व घट जाता है। 'रोज़े' से जो फायदे अपेक्षित है वे पूर्ण रूप से प्राप्त नही होते। जो व्यक्ति सदा 'रोज़े' से रहे उसके समस्त दिन समान रहते हैं। रोज़े के दिन की विशेषता ग़ैर रोज़े के दिनो के द्वारा ही मालूम होती है। जिम व्यक्ति के यहाँ ग़ैर रोज़े के दिन ही न आयें उसके 'रोज़ो' को कोई विशेपता कैसे प्राप्त हो सकती है।

कुछ लोगो को नवी सल्ल० ने लगातार 'रोज़े' रखने की इजाज़त दे दी थी। लगातार रोज़े रखने से अभिप्रेत अधिकता के साथ 'रोजा' रखना है, न कि सदैव 'रोज़ा' रखना।

३. मनुष्य यदि 'ईमान' और चेतना के साथ हर महीने मे तीन दिन 'रोज़े' रख ले तो मानो वह सदैव रोज़े से रहता है। महीने के तीन रोज़े उसके पूरे महीने को पवित्र और प्रकाशमान रखने के लिए काफी हैं। महीने के इन तीन 'रोज़ो' के अतिरिक्त जो अरबी महीनो की १३, १४, १५ तारीख को रक्खे जाते हैं और भी दूसरे 'नफ्ल' रोज़ो' का जिक्र 'हदीसो' मे मिलता है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी शक्ति और परिस्थिति के अनुसार उनमे से अपने लिए चुन सकता है।

रोजे के स्वाभाविक नियम

عَنْ سَهْلِ بْنِ سَعْدٍ قَالَ. قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ، لَا يَزَالُ النَّاسُ بِخَيْرٍ مَا عَجَّلُوا الْفِطْرَ ——— بخاری، مسلم

१. हज़रत सह्ल बिन सअ़द रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : लोग जब तक (सन्ध्या को) 'रोज़ा' खोलने में जल्दी करते रहेंगे उत्तम अवस्था मे रहेंगे[१] ।

१. मुसनद अहमद की एक 'रिवायत' मे है कि लोग उस समय तक उत्तम अवस्था मे रहेंगे जब तक (सन्ध्या समय) 'रोज़ा' खोलने ('इफतार' करने मे) जल्दी करेंगे और 'सहरी' (अरुणोदय से पूर्व का जलपान जो दिन मे 'रोज़ा' रखने के लिए किया जाता है) खाने मे विलम्ब करेंगे ।

तिरमिज़ी की एक 'रिवायत' मे है प्रतापवान तेजोमय अल्लाह कहता है · "मेरा सब से प्रिय बन्दा वह है जो ('रोज़े' के उपरान्त सन्ध्या समय) रोज़ा खोलने ('इफतार' करने) मे जल्दी करता है ।" अबूदाऊद की 'रिवायत' मे है "दीन को उस समय तक प्रभावकारी शक्ति प्राप्त रहेगी जब तक लोग (सन्ध्या समय) 'रोज़ा' खोलने मे जल्दी करेंगे ।" रोज़ा खोलने (इफतार करने) मे जल्दी करना और 'सहरी' (अरुणोदय से पूर्व समय का जलपान) मे विलम्ब करना इस बात की निशानी है कि लोगो की दृष्टि धर्म के आशय और उसके मूल उद्देश्य से हटी हुई नही है बल्कि वे वास्तविकता से भली-भाँति परिचित हैं उनके यहाँ जिस चीज़ का वास्तव मे महत्व है वह धार्मिक आदेशो का अभिप्राय और उनके उद्देश्य है । मनुष्य की दृष्टि जब धर्म के वास्तविक अभिप्राय और आशय से हट जाती है, तो अवश्य ही इसका परिणाम यह होता है कि वह धार्मिक आदेशो के बाह्य रूप को ही अधिक महत्व देने लगता है और उसके प्रति अनुचित सावधानी और अतिश्योक्ति दिखाने लगता है । उसकी यह सावधानी एक बडी बीमारी का पता देती है वह यह कि उस की दृष्टि मे जिस चीज़ का महत्व होना चाहिए था वह उस से गाफिल हो गया है । जिस काम को जिस प्रकार करने का आदेश दिया गया है उसे उसी प्रकार करना अपना धर्म होता है । मनुष्य को अपनी रुचि और ख्याल का पाबन्द होने के बजाय खुद को अल्लाह के आदेश का पाबन्द बनाना चाहिए । यही वास्तविक धर्म परायणता और ईश-भक्ति है ।

२ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा जब स्त्री का पति मौजूद हो, तो वह बिना उस की अनुमति के 'रोज़ा' न रक्खे[२]। —बुखारी, मुस्लिम

३. बनी अल्दुल्लाह बिन कअ्ब बिन मालिक कबीला के एक व्यक्ति जिन का नाम अनस बिन मालिक है, बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा सर्वोच्च अल्लाह ने मुसाफिरों के लिए आधी 'नमाज' कर दी है और उसे 'रोजा' न रखने की अनुज्ञा दी है । जिस तरह उस औरत को अनुज्ञा दी है जी बच्चे को दूध पिलाती हो या गर्भवती हो जब कि उसे अपने गर्भ या बच्चे को किसी प्रकार की तकलीफ पहुँच का भय है[३] । —असहाब सुनन

४. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · जब किसी रोजेदार नें भूल कर खा-पी लिया तो वह अपना 'रोजा' (तोडने के बजाय) पूरा करे क्योंकि उसे अल्लाह नें

---

२ पति के मौजूद होने पर यदि 'नफ़्ल' 'रोज़ा' (रमज़ान के अतिरिक्त दूसरे रोज़े) रखना हो, तो उसकी अनुमति ले लेनी चाहिए अन्यथा हो सकता है कि पति को समागम की इच्छा हो और पत्नी के 'रोज़े' से होने के कारण उसकी इच्छा पूरी न हो और इस प्रकार परस्पर अप्रियता की कोई भावना उभर आये । इसके अतिरिक्त इसमे और दूसरे उद्देश्य भी हैं । इस से अन्दाजा किया जा सकता है कि धार्मिक आदेशो मे मानवीय रुचि और आवश्यक्ताओ का कितना अधिक ख्याल रक्खा गया है ।

३. सफर मे मुसाफिर के लिए यह आसानी पैदा की गई है कि वह पूरी 'नमाज़' पढने के बजाय 'कस्र' करे अर्थात् सक्षिप्त 'नमाज़' पढे । चार 'रकअत' की 'नमाज़' है तो दो ही 'रकअत' अदा करे । इसी तरह यदि 'रमज़ान' का महीना है, तो सफर की हालत मे उसे यह इजाज़त हासिल है कि वह 'रोज़ों' न रक्खे । जितने 'रोज़े' छूट गये हो सफर के बाद उन्हे पूरा कर ले । स्त्री को यदि गर्भ है और 'रोज़ा' रखने से किसी हानि का भय है, तो वह भी 'रोज़ा' न रक्खे बाद मे छूटे हुये 'रोज़ो को पूरा कर ले । इसी तरह यदि बच्चा दूध पी रहा है और माँ के 'रोज़ा' रखने से इस बात की आशका है कि बच्चे को तकलीफ होगी, तो वह उस समय 'रोज़ा' न रक्खे । यह 'हदीस' भी इसका स्पष्ट प्रमाण है कि 'इस्लाम' मे मानवीय आवश्यकताओ और हितो का कितना ख्याल रक्खा गया है ।

खिलाया-पिलाया (उस ने जान-बूझ कर 'रोज़ा' नही तोड़ा)[४]।

—बुख़ारी, मुस्लिम, अबूदाऊद, तिरमिज़ी

५. हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के 'रसूल' सल्ल० ने कहा : 'रोजा' उसी दिन है जिस दिन तुम 'रोजा' रक्खो और 'रोजा' खोल देने का दिन वही है जिस दिन तुम 'रोजा' खोलो कुरबानी उसी दिन है जिस दिन तुम कुरबानी करो[५]। —अबूदाऊद, तिरमिज़ी

---

४. मतलब यह है कि अल्लाह तो आदमी की नीयत और धर्मपरायणता को देखता है चूँकि उस व्यक्ति ने जान-बूझ कर नही बल्कि भूलकर खाया-पिया है इस लिए उसके इस खाने-पीने से उसकी धर्म परायणता और ईश्वरीय आदेश के आदर मे कोई अन्तर नही आया। वास्तविकता की दृष्टि से खाने-पीने के बावजूद वह रोज़ेदार है।

५. 'रोज़े' का आरम्भ और अन्त और 'कुरबानी' के दिन का निश्चय सामूहिक निर्णय के अन्तर्गत होगा। जब अरबी महीने की दृष्टि से 'रोज़े' और 'कुरबानी' का समय आ जाये, तो मनुष्य 'रोज़ा' रक्खे और 'कुरबानी' करे, किन्तु उसका ध्यान विशेष रूप से इस ओर रहना चाहिए कि उसके कर्मों और 'इबादतो' मे अधिक-से-अधिक धार्मिकता और शुद्धता पाई जाये। इसलिए कि अल्लाह के यहाँ वास्तविक महत्व इसका नही है कि किसी ने 'रोज़ा' कब रक्खा, और उसे समाप्त कब किया और 'कुरबानी' किस दिन की, बल्कि उसके यहाँ महत्व 'रोज़े', 'कुरबानी' आदि 'इबादत' और सत्कर्मों की है। और इन कर्मों मे भी उसकी दृष्टि विशेष रूप से उस आशय और भाव पर होती है जो कर्मों के पीछे काम कर रहा होता है। वह 'कुरबानी, ही क्या है जिसके पीछे आत्मसमर्पण की भावना न छिपी हो और वह 'रोजा' ही क्या हुआ जो ससार मे मनुष्य को उन चीजो के विषय मे उदासीन न बना सके जो वास्तविक दृष्टि से अभीष्ट नही।

एतकाफ़

عَنْ عَائِشَةَ رض قَالَتْ إِنَّ النَّبِيَّ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ كَانَ يَعْتَكِفُ الْعَشْرَ الْأَوَاخِرَ مِنْ رَمَضَانَ حَتَّى تَوَفَّاهُ اللهُ ثُمَّ اعْتَكَفَ أَزْوَاجُهُ مِنْ بَعْدِهِ ——— بخاری مسلم

१ हजरत आइशा रज़ि० कहती हैं कि नवी सल्ल० 'रमज़ान' के अन्तिम दस दिनों में 'एतकाफ' करते थे यहाँ तक कि अल्लाह ने आप को उठा लिया फिर इसके बाद आप पत्नियाँ 'एतकाफ करती थी'[1]।

—बुख़ारी-मुस्लिम

२ हजरत आइशा रज़ि० से उल्लिखित है कि नवी सल्ल० का हाल यह था कि जव 'रमजान' के अन्तिम दस दिन का समय आ जाता, तो ज्यादा-से-ज्यादा रात्रि-जागरण करते और अपनी पत्नियो को जगाते (ताकि वे भी ज्यादा-से-ज्यादा अल्लाह की 'इवादत' करे) और आप तहमत कस लेते[2]।

—मुस्लिम, बुख़ारी

१. 'रमज़ान' मे नवी सल्ल० की 'इवादत' की रुचि वढ जाती थी। 'रमज़ान' के अन्तिम दिनो मे तो विशेष रूप से आप अल्लाह की 'इबादत' मे लग जाते थे। रमजान के अन्तिम दस दिन तो विल्कुल अल्लाह के लिए खाली कर लेते थे और मस्जिद मे 'एतकाफ' करते थे। 'एतकाफ' का आशय यह है कि मनुष्य हर ओर से एकाग्रचित होकर अल्लाह से लौ लगाए और उसकी चौखट पर (अर्थात् मस्जिद मे) पड जाये। और उसकी याद और 'इवादत' मे लग जाये 'एतकाफ' करके वन्दा यह प्रदर्शित करता है कि उसका वास्तविक सम्बन्ध अपने 'रव' के सिवा' किसी और से नही है। उसका अन्तर और बाह्य अस्तित्व दोनो अल्लाह के लिए हैं। वह प्रत्येक दशा मे अल्लाह की प्रसन्नता का इच्छुक होता है। 'एतकाफ' का आशय वास्तव मे यही है कि वन्दा अपने को अल्लाह के लिए हर चीज़ से निवृत्त कर देने का सामर्थ प्राप्त कर सके।

'रोज़े' और 'एतकाफ' मे उद्देश्य और कर्म दोनो ही दृष्टि से बडी अनुरूपता और एकता पाई जाती है। इसी कारण 'रोज़े' को 'एतकाफ' का आवश्यक अ ग ठहराया गया है। और 'रमजान' को 'एतकाफ' का उत्तम समय समझा गया है। 'रोज़े' की विशेषता को और अधिक वढ़ाने के लिए पौराणिक धर्म शास्त्र मे मौन रहने को भी 'रोज़े' का अ ग वनाया गया था और इस प्रकार से 'रोज़ा' रखने का आदेश दिया गया था जिस मे मनुष्य अल्लाह के अतिरिक्त किसी से बात-चीत नही कर सकता था।

२ अर्थात् 'इबादत' मे लग जाते।

हज्ज

'हज्ज' का मुल अर्थ है 'ज़ियारत' (दर्शन) का निश्चय करना। 'हज्ज' में हर तरफ से लोग 'काबा' की 'ज़ियारत' का इरादा करते हैं, इसी लिए इस' का नाम हज्ज रक्खा गया। 'हज्ज' को धर्म में मौलिक महत्व प्राप्त है। कुरआन में है "लोगों पर अल्लाह का यह हक है कि जो व्यक्ति इस घर ('काबा') तक पहुँच सकता हो वह उस का 'हज्ज' करे, और जिस किसी ने 'कुफ्र' की नीति अपनाई तो (वह जान ले कि) अल्लाह सारे संसार से बेपरवाह है"। —आले इमरान ९७

'हज्ज' के लिए जाना वास्तव में अल्लाह की पुकार पर दौडना है। अल्लाह के आमंत्रण पर उस की सेवा में हाजिरी देना है । इसलिए सामर्थ्य रखने पर भी जो व्यक्ति 'हज्ज' नही करता वह वास्तव में अल्लाह मुँह फेरे हुये है । अल्लाह से मुख मोड कर मनुष्य स्वय अपने साथ अन्याय करता है, इस से अल्ला ह का कुछ नही 'बिगडता'।

अल्लाह ने 'काबा को सर्वथा भलाई, बरकत और सारे ससार के मार्ग-दर्शन का उद्गम बनाया है। यह 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) का केन्द्र है। हज़रत इबराहीम अ० और उन के बेटे हजरत इस्माईल अ० ने इस घर का निर्माण अल्लाह के आदेश से किया था। इस निर्माण का स्थान भी अल्लाह ही ने निश्चित किया था। इस घर को अपना घर कह कर अल्लाह ने इस की महानता और महत्व बढा दिया है। और ससार में इसे केन्द्रीयता प्रदान की है।

हजरत इबराहीम अ० वह पहले नबी है जिन्हे अल्लाह ने सारे ससार का इमाम बनाया। हजरत इबराहीम अ० को आदेश दिया कि वे लोगो मे सामान्य रूप से हज्ज की घोषणा कर दे ताकि जो लोग एक अल्लाह की बन्दग और दासता स्वीकार करे वे सब-के-सब इस केन्द्र से सम्बन्ध स्थापित कर ले। साल में एक बार 'हज्ज' के लिए यहाँ एकत्र हों और इस घर का 'तवाफ' (परिक्रमा) करे। सब मिल कर अल्लाह की 'इबादत' करे। कुरबानी

करे, खुद भी खाये और मुहताजों को भी खिलाएँ। काबा एक ओर वास्तविक उपासनागृह और वास्तविक मस्जिद है, दूसरी मस्जिदे इस की प्रतिनिधि-मात्र हैं, दूसरी ओर इस घर के निर्माण के मौलिक उद्देश्यो में कमजोरों, मुहताजों और निर्धनों की खबर लेना भी सम्मिलित है। इस प्रकार 'काबा' सम्पूर्ण 'दीन' (सम्पूर्ण धर्म) का केन्द्र सिद्ध होता है। इस के साथ किसी का सम्बन्ध वास्तव में अल्लाह के 'दीन' (धर्म) के साथ सम्बद्ध होने का अर्थ रखता है। इस घर का 'हज्ज' कर के मनुष्य विशुद्ध 'तौहीद' का सन्देशवाहक बन कर लौटता है। उस मे यह भावना जाग्रत होती है कि वह 'तौहीद' के सन्देश को सारे ससार मे फैलाए।

'हज्ज' एक पहलू से सब से बडी 'इबादत' है। अल्लाह के प्रेम में मनुष्य अपना कारबार और अपने परिवार-मित्रो आदि को छोडकर लम्बी यात्रा पर निकलता है। फिर उस की यह यात्रा साधारण यात्रा की तरह नही होती। इस यात्रा में वह अल्लाह की ओर ध्यान देता है। जैसे-जैसे अल्लाह का घर निकट आता जाता है उत्सुकता एवं प्रेम की अग्नि और अधिक भडकती जाती है। वह अपने गुनाहो पर लज्जित होता है सच्चे दिल से 'तौबा' करता और अल्लाह से प्रार्थनाएँ करता है कि उसे अच्छे कर्म करने का सौभाग्य प्राप्त हो। हिजाज के भूभाग में प्रवेश करता है तो 'इस्लाम' की सच्चाई और महानता का एहसास अत्यन्त बढ जाता है। इस्लामी इतिहास निगाहों के सामने फिर जाता है। हृदय पर अल्लाह, उस के धर्म की महानता और प्रेम ऐसा अंकित हो जाता है कि मरते दम तक मिट नही सकता।

'हज्ज' से सम्बन्धित जितने कार्य हैं उन सब से मनुष्य के हृदय पर 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) की ही छाप पडती है। 'हज्ज' के सिलसिले मे सब से पहला काम 'इहराम' बाधना है। 'इहराम' एक अत्यन्त फकीराना वस्त्र है, जिसमे मनुष्य बस एक तहमद बाँध लेता है, कन्धो पर एक चादर डाल लेता है, सिर को नगा रखता है। कोई राष्ट्रपति हो या साधारण नागरिक सब-के-सब एक स्तर पर दीख पडते है। सारे अन्तर मिट जाते है। 'इहराम' की दशा मे मनुष्य भोग-विलास और सज्जा और श्रृंगारिक वस्तुओ से परहेज करता है इस 'इहराम' की 'हज्ज' मे वही हैसियत है जो नमाज मे 'तकबीर तहरीमा' की है। 'तकबीर तहरीमा' के द्वारा नमाजी एक नवीन वातावरण मे पहुँच जाता है और कुछ समय के लिए वह अपने ऊपर कुछ प्रतिबन्ध लगा लेता

है। जिस प्रकार 'सलाम' के द्वारा मनुष्य नमाज़ से निवृत हो जाता है इसो प्रकार वह सिर का मुण्डन कराके 'इहराम' सम्बन्धी प्रतिबन्धनों से निवृत हो जाता है। 'इहराम' बांधने के पश्चात् उस के मुख से ये शब्द निकलते है

"हाजिर हूँ, हे अल्लाह! मैं तेरी सेवा में हाज़िर हूँ, हाज़िर हूँ, तेरा कोई सहभागी नही। मै तेरी सेवा मे हाजिर हूँ। निश्चय ही प्रशसा तेरे ही लिए है। सारी कृपाएँ एव उपकार तेरे ही हैं, राज्य तेरा ही है, तेरा कोई सहभागी नही है"।

ये शब्द वताते है कि गुलाम अपने स्वामी की पुकार पर दौड़ता और स्वामी के गुणगान करता हुआ चला आ रहा है। प्रत्येक 'नमाज़' के पश्चात्, हर ऊँचाई पर चढते और हर नीचाई की ओर उतरते हुये और प्रत्येक प्रात काल जागने के पश्चात् उच्च स्वरो में इन ही शब्दो को दुहराता है। मक्का मे प्रवेश कर के 'कावा' पहुँचता है। हज्र असवद को चूमता और 'कावा' का 'तवाफ' (परिक्रमा) करता है। 'कावा' का सात चक्कर लगाता है। फिर मकाम इब्राहीम पर या 'मस्जिदे हराम' मे किसी स्थान पर दो 'रकअत'-'नमाज' अदा करता है। फिर सफा की पहाडी पर जो कावा के निकट ही है चढता है। 'काबा' पर दृष्टिपात करता है। पुकार उठता है: अल्लाहु अकबर! "अल्लाह सब से बड़ा है" ला इलाह इल्लल्लाह। "अल्लाह के सिवा कोई 'इलाह' नही"। इस के बाद नबी सल्ल० पर 'दरूद' और सलाम भेजता है, और हाथ फैला कर जो कुछ माँगना होता है अल्लाह से माँगता है। फिर नीचे आता है और सामने की दूसरी पहाडी 'मरवा' की ओर तेज कदमो से चलता है जिसे 'सई' कहते है इस पर भी पहुँच कर वह 'तकबीर' 'तहलील', दरूद और दुआ मे लग जाता है। इसी प्रकार वह सात बार 'सई' करता है। जिलहिज्जा की सुबह को 'हरम' की सीमा से बाहर जा कर अरफात के मैदान मे लोग पडाव डालते है[1] फिर उसी सन्ध्या को समस्त लोग मुजदलफा जा कर

१ अरफात का सम्मेलन हश्र के मैदान मे अल्लाह की सेवा मे हाजिरी की याद दिलाता है। कुरआन मे भी है ('हज्ज' सम्बन्धी कार्य-क्रम का उल्लेख करते हुए कहा) और गिनती के कुछ दिनो मे (मिना मे) अल्लाह को याद करो। फिर जो कोई दो ही दिन मे जल्दी कर ले (और लौट आए) तो उस पर कोई गुनाह नही और यदि कोई ठहर जाए, तो उस पर भी कोई गुनाह नही। ये बातें उसके लिए है जो डरता है और अल्लाह का डर रक्खो और जान रक्खो कि तुम सब उसके पास एकत्र किये जाओगे।" —अल-बकरा २०३

ठहरते है। फिर १० जिलहिज्जा को मिना लौट आते है। वहाँ दो या तीन दिन ठहरते हैं। इन दिनों मे प्रत्येक दिन तीन जमरों पर सात-सात बार 'तकबीर' के साथ ककडियाँ मारते है। तीसरे दिन उन खम्भो पर ककड़ियाँ मार कर मक्का लौट आते है। और सात बार 'काबा' का 'तवाफ' (परिक्रमा) करते है। यह 'तवाफ विदा' कहलाता है। इस 'तवाफ' के बाद 'हज्ज' से मनुष्य निवृत्त हो जाता है। 'हज्ज' के समय मे कभी इमाम के खुतबे (भाषण) सुनते है, कभी लब्बेक अल्लाहुम्मा लब्बैक "हाजिर हूँ, हे अल्लाह! मैं तेरी सेवा में हाजिर हूँ" कहते हुये एक स्थान से दूसरे स्थान को प्रस्थान करते है। कभी नमाजे जमा कर के पढते है अर्थात् शीघ्रता की नमाज अदा करते है। 'हज्ज' का यह कार्य-क्रम एक सैन्य जीवन का नक्शा पेश करता है. पाँच, छ दिन तक लोगों को कैम्प का जीवन व्यतीत करना पडता है। हज्ज में यों समस्त 'इबादतों' की विशेषताएँ पाई जाती है, परन्तु हज्ज और 'जिहाद' में बडी समानता पाई जाती है, हजरत उमर रजि० ने अपने एक 'खुतबे' में कहा है. "जब 'जिहाद' से निवृत्त हो तो 'हज्ज' के लिए कजावे कसो क्योंकि 'हज्ज' भी एक 'जिहाद' है"। —बुखारी।

'हज्ज' की एक-एक चीज हृदय पर 'तौहीद' और अल्लाह के प्रेम को अकित करती और मनुष्य को और प्राणोत्सर्ग बलिदान की भावना से परिपूर्ण करती है। 'काबा' मुस्लिम व्यक्ति को याद दिलाता है कि उस का सम्बन्ध उस गरोह से है जिस के प्रकट होने की दुआ हजरत इबराहीम ने की थी। और जिसके प्रकट होने का उद्देश्य यह है कि वह अल्लाह और उस के धर्म के लिए अर्पण हो हज्र असवद पर हाथ रख कर उसे चुम्बन देना एक ओर इस वात का प्रदर्शन है कि आदमी अल्लाह के हाथ मे हाथ दे कर अल्लाह से बन्दगी की प्रतिज्ञा को पुनरावृति कर रहा है दूसरी ओर यह चुम्बन वास्तव मे प्रियतम के द्वार-शिला का चुम्बन है। 'काबा' का 'तवाक' (परिक्रमा) अपने को अर्पण और निछावर करने की उस स्वाभाविक भावना का प्रदर्शन है जो मुस्लिम व्यक्ति के हृदय मे अपने प्रिय स्वामी के लिए पाई जाती है। अल्लाह तो इस से उच्च है कि कोई उस के गिर्द घूम सके, अल्लाह ने हमें यह आदेश दिया है कि हम अपनी स्वाभाविक इच्छा इस घर का 'तवाफ' कर के पूर्ण करे। इसी प्रकार अल्लाह तो इस से उच्च से है कि कोई उस के दामन से लिपट कर

प्रार्थनाएँ कर सके। हमारी दुर्बलताओं पर तरस खा कर उसने हमारे परितोष के लिए यह प्रबन्ध किया है कि हम उस के दामन से लिपट कर अपनी कामनाओ को प्रस्तुत करने की कामना उसके घर की चौखट से लिपटकर पूरी कर ले अतएव 'तवाफ' और मकाम इब्राहीम पर दो रकअत नमाज से निवृत होने के पश्चात् 'मुलतज़म' से चिपट कर दुआएँ मागते हैं।

सफा और मरवा के बीच 'सई' करना इस बात का प्रदर्शन है कि इसी प्रकार अपने स्वामी की सेवा और उस की प्रसन्नता के लिए कार्यशील रहेगे। हजरत इबराहीम अ० और हज़रत इस्माईल अ० का मार्ग ही हमारा मार्ग है। खम्भों पर कंकडियाँ मारना वास्तव में अबरहा की सेना की तबाही की यादगार है जो खास 'हज्ज' के अवसर पर 'काबा' को ढाने के लिए आया था जिसे ककडों और पत्थरो की वर्षा से अल्लाह ने विनष्ट कर के रख दिया।

कुरबानी वास्तव में कुरआन के शब्दों मे "जब्ह अजीम" है, जो हज़रत इस्माईल का फिदया निश्चित हुआ था। अल्लाह के मार्ग में जानवर कुरबान करना अपने-आप को कुरबान करने के प्रतिनिधित्व का अर्थ रखता है। यह वास्तव में इस बात का इकरार करना है कि हमारे प्राण अल्लाह की 'नज्र' (भेंट) है। जब वह माँगेगा हम दे देंगे। जब भी अल्लाह के मार्ग में खून बहाने की आवश्यकता होगी, अपना खून बहायेंगे। अन्यथा केवल जानवर को कुरबान कर देने की कोई वास्तविकता नही है जब तक कि उसके पीछे कोई बडा उद्देश्य और पवित्र भावना काम न कर रही हो। कुरआन में भी कहा गया है

न उन (कुरबानी के जानवरों) के मांस अल्लाह को पहुँचते हैं और उस के रक्त, परन्तु तुम्हारा 'तकवा' (ईश-भय और धर्मनिष्ठा) उस तक पहुँचाता है"। —अल-हज्ज · ३७

कुरबानी का हुक्म केवल मक्का में 'हज्ज' के अवसर पर अदा करने के लिए नही है बल्कि कुरबानी करने का सामर्थ्य रखने वाले मुसलमान जहाँ भी हो, इस अवसर पर उन्हे कुरबानी करनी चाहिए। नबी सल्ल० जब तक मदीना मे रहे हर वर्ष कुरबानी करते रहे।

———

'हज्ज' की वास्तविकता

عَنْ اَبِیْ هُرَیْرَةَ ؓ قَالَ خَطَبَنَا رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَیْهِ وَسَلَّمَ فَقَالَ: يَا اَيُّهَا
النَّاسُ قَدْ فُرِضَ عَلَيْكُمُ الْحَجُّ فَحُجُّوْا ـــــــــــ مسلم، نسائی

१ हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने हम लोगो को सम्बोधित करते हुये कहा हे लोगो ! तुम पर 'हज्ज' अनिवार्य किया गया है, तो तुम 'हज्ज' करो[1] ।

—मुस्लिम, नसई

२ हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० से पूछा गया कि कौन सा कर्म उत्तम है ? आप ने कहा . अल्लाह

१ 'हज्ज' इस्लाम के पाँच अरकान (आधार स्तम्भ) मे से एक है। जो लोग 'हज्ज' करने का सामर्थ्य रखते हैं उनके लिए हज्ज' करना अनिवार्य है। एक कथन के अनुसार 'हज्ज' के अनिवार्य होने का आदेश सन् ९ हि० मे आया है। १० हि० मे नबी सल्ल० ने 'सहाबा' रज़ि० की एक बडी जमात के साथ अपनी मृत्यु के केवल तीन मास पूर्व 'हज्ज' किया था। यह 'हज्ज' हज्जतुल-विदाअ के नाम से प्रसिद्ध है। इस 'हज्ज' के अवसर पर अरफात के मैदान मे आप पर कुरआन की यह 'आयत' अवतीर्ण हुई "आज मैंने तुम्हारे लिए 'दीन' (धर्म) को पूर्ण कर दिया और तुम पर अपनी नेमत पूरी कर दी, और मैंने पसन्द किया कि तुम्हारा दीन इस्लाम हो" ।- अल-माइदा ३ ·

'हज्ज' इस्लाम का अन्तिम स्तभ है। किसी व्यक्ति को यदि सही 'हज्ज' नसीब हो जाए, तो मानो उसे सौभाग्य का उच्चतम स्थान प्राप्त हो गया और उसे ऐसी नेमत मिल गई जिससे बडी नेमत की कल्पना इस ससार मे नही की जा सकती।

हज़रत इब्न अब्बास रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा : लोगो ! अल्लाह ने तुम पर 'हज्ज' अनिवार्य कर दिया है। इब्न जास रज़ि० खडे हुये और कहा हे अल्लाह के रसूल ! क्या प्रत्येक वर्ष ? आपने कहा "यदि मैं हाँ कह देता, तो प्रत्येक वर्ष वाजिब हो जाता और यदि वाजिब (आवश्यक) हो जाता, तो तुम इसे अदा न कर सकते और न अदा करने का सामर्थ्य रखते। 'हज्ज' (जीवन मे) एक बार अनिवार्य है, जो इससे अधिक करे वह 'नफल' है।"

और उस के 'रसूल' पर 'ईमान' लाना, पूछा गया फिर कौन सा ? कहा: अल्लाह के मार्ग मे 'जिहाद' करना। पूछा गया : फिर कौन सा ? आप ने कहा "हज्ज मबरूर"[२]।

३. अबू सईद खुदरी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि तेजोमय एव प्रतापवान अल्लाह कहता है : मैंने बन्दे को शारीरिक स्वास्थय दिया और उसे जीविका मे कुशादगी प्रदान की, पॉच वर्ष व्यतीत हो गये और वह मेरी ओर नही आया, तो वह बेनसीब है।

—इब्न हब्बान, बैहकी

४ हजरत इब्न उमर रजि० कहते हैं कि एक व्यक्ति नबी सल्ल० की सेवा में आया और कहा कि हे अल्लाह के रसूल ! क्या चीज 'हज्ज' को आवश्यक करती है ? आप ने कहा सफर खर्च और सवारी[३]।

—तिरमिजी, इब्नमाजा

५ हजरत जाबिर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · 'अरफा' के दिन अल्लाह संसार के आकाश पर उतरता है[४] और 'फिरिश्तो' के बीच 'हज्ज' करने वालो पर गर्व करता है। कहता है . मेरे बन्दों को देखो जो परेशान हाल धूल में अटे हुये रास्तों मैं चीखते-पुकारते हुये मेरे पास आये हैं। मैं तुम्हे गवाह बनाता हूँ कि मैंने उन्हे क्षमा कर दिया। इस पर फिरिश्ते कहते हैं कि रब ! उनमें अमुक व्यक्ति भी है जिसके बारे में कहा जाता है कि वह बुरा है, गुनहगार है, अमुक पुरुष और अमुक स्त्री भी है (जो गुनहगार है)। तेजोमय एव

---

२. प्रत्येक कर्म को कोई न कोई विशेषता प्राप्त होती है। 'हज्ज' कुछ पहलुओ से न केवल यह कि सबसे बडी और व्यापक 'इबादत' है बल्कि जीवन के समस्त प्रयासो का साराश भी है। 'हज्ज' मे बन्दा अपने 'रब' की सेवा मे 'हाजिर होता है और कदम-कदम पर उस पर अपने को निछावर करता है। एक बन्दे के लिए इससे बढकर सौभाग्य की बात क्या हो सकती है। यह नसीब अल्लाहु अकबर लूटने की जाय है !

३ अर्थात यदि उसके पास इतना धन है कि वह अपने घर वालों के खाने पीने का प्रबन्ध कर सके और सफर खर्च का बोझ उठा सके, तो उस पर 'हज्ज' वाजिब है। यदि वह 'हज्ज' नही करता तो गुनहगार होगा।

४. अर्थात् दुनिया वालो पर 'अरफा' के दिन वह विशेष कृपा-दृष्टि डालता है। 'अरफा' का दिन जिलहिज्जा की नवी तिथि है। जिस दिन समस्त 'हज्ज' करने वाले अरफात के मैदान में एक साथ एकत्र होते हैं।

प्रतापवान अल्लाह् कहता हैं . उन्हे भी मैंने क्षमा कर दिया। अल्लाह् के रसूल सल्ल० कहते हैं कि लोग किसी दिन 'अरफा' के दिन से अधिक आग से छुटकारा नही प्राप्त करते[५]। —शरहुस्सुन्ना

६ अबू उमामा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा जिस को न किसी स्पष्ट आवश्यकता ने रोका हो और न किसी रोकने वाले रोग ने और न किसी अत्याचारी शासक ने और उसने 'हज्ज' न किया हो और इसी दशा मे उस की मृत्यु आ जाये तो उसे अधिकार है चाहे 'यहूदी' बन कर मरे या 'ईसाई' बन कर[६]। —बैहकी

७ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा : 'हज्ज' और 'उमरा' करने वाले अल्लाह् के (पास पहुँचने वाले) मडल हैं (जो उसकी सेवा मे जा रहे है)। यदि वे उससे प्रार्थना करे तो वह

---

५. अल्लाह् की सेवा मे बन्दे की यह हाज़िरी अपने अन्दर इतना असर रखती है कि इससे दिल की बडी-से-बडी स्याही भी दूर हो सकती है यह अलग बात है कि कोई इस से फायदा न उठाए और 'हज्ज' से लौटकर फिर उन्ही गुनाहो और गन्दगियो मे अपने को डाल दे जिनसे 'हज्ज' की बरकत से छुटकारा प्राप्त कर सका था।

६ सामर्थ्य के बावजूद 'हज्ज' से गाफिल रहना इस बात की पहिचान है कि बन्दे का ध्यान अल्लाह की ओर होने के बदले किसी दूसरी ओर है। जो लगाव और सम्बन्ध उसे "तौहीद" (एकेश्वरवाद) और 'तौहीद' के केन्द्र से होना चाहिए, नही है। इसलिए अल्लाह् को भी ऐसे अवज्ञाकारी और कृतघ्न व्यक्ति की कोई चिन्ता नही, वह जो चाहे करे और जिस हालत मे चाहे मरे' कुरआन मे भी कहा गया है और लोगो पर अल्लाह् का हक है कि जो उस (काबा') तक पहुँचने का सामर्थ्य रखता हो वह उस घर का 'हज्ज' करे और जिसने 'कुफ्र' किया तो अल्लाह् सारे ससार वालो से बेपरवा है।"—आले इमरान ९६।

यहूदी और ईसाई 'हज्ज' नहीं करते थे इसलिए 'हदीस' मे 'हज्ज' न करने वालो को यहूदी और ईसाई से उपमा दी गई है। 'हज्ज' से बेपरवाई वास्तव मे 'कुफ्र' की नीति है। इसीलिए हज़रत उमर रज़ि० कहते है जो लोग सामर्थ्य रखने के बावजूद 'हज्ज' नही करते, मेरा जी चाहता है कि उन पर जिज़या (एक विशेष कर) लगा दूँ"।

उन की प्रार्थना स्वीकार करे और यदि वे उस से क्षमा की प्रार्थना करे तो वह उन्हे करे[७]।

हज्ज से सम्बन्धित इबादतें

عَنْ عَائِشَةَ رض قَالَتْ. قَالَ رَسُوْلُ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ إِنَّمَا
جُعِلَ الطَّوَافُ بِالْبَيْتِ وَالسَّعْيُ بَيْنَ الصَّفَا وَالْمَرْوَةِ وَرَمْيُ الْجِمَارِ
لِإِقَامَةِ ذِكْرِ اللهِ تَعَالَىٰ ——————— ابوداود، ترمذی

१ हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा. 'काबा' का 'तवाफ' (परिक्रमा) करना, सफा और मरवा के बीच 'सई' करनी और ककडियाँ मारना, ये सब सर्वोच्च अल्लाह के स्मरण की स्थापना के लिए है[१]। —अबूदाऊद, तिरमिजी

---

७ इस 'हदीस' से हज्ज और 'उमरा' की वास्तविकता पर प्रकाश पडता है। 'हज्ज' और 'उमरा' अल्लाह की सेवा मे बन्दे की हाज़िरी है। ऐसी दशा मे अल्लाह की दयालुता के प्रतिकूल है कि वह लोगो की प्रार्थनाओ को रद्द कर दे जो उसके द्वार पर पवित्र कामनाएँ और आशाएँ लिये हुए पहुँचे हो। अत अल्लाह निश्चय ही उनकी प्रार्थनाओ को स्वीकार करेगा और यदि वह क्षमा के इच्छुक होगे, तो उन्हे क्षमा कर देगा।

'हज्ज' की तरह 'उमरा' भी एक 'इबादत' है जो 'काबा' की ज़ियारत के साथ अदा की जाती है, 'उमरा' किसी भी समय कर सकते हैं। 'हज्ज' का समय निश्चित है, 'उमरा' अकेले करते है। 'हज्ज' को सामूहिक रूप मे अदा किया जाता है, 'उमरा' मे हज्ज ही के कुछ कार्य किये जाते है। इसके अतिरिक्त 'हज्ज' को अल्लाह ने उन लोगो का कर्तव्य ठहराया जो 'हज्ज' करने का सामर्थ रखते है लेकिन उमरा अनिवार्य (फर्ज़) नही हैं।

नसई, बैहकी की 'हदीस' है कि नबी सल्ल० ने कहा . "तीन व्यक्ति अल्लाह के मडल (अथवा मेहमान) है . 'जिहाद' करने वाला, हज्ज करने वाला 'उमरा' करने वाला।"

१ मतलब यह है कि 'तवाफ', सई और ककडियाँ मारना आदि 'हज्ज' से सम्बन्धित कार्य स्वय अभीष्ट नही है बल्कि ये सब एक महत्वपूर्ण उद्देश्य की प्राप्ति का साधन है। वह उद्देश्य है अल्लाह के स्मरण की स्थापना, अल्लाह की 'तौहीद' और उसकी महानता का प्रदर्शन। यह बात ठीक उसी प्रकार की है

२. हज़रत अम्र बिन अहवज़ रज़ि० कहते है कि मैंने 'हज्जतुलविदा'[२] मे अल्लाह के रसूल सल्ल० को यह कहते सुना यह कौन सा दिन है ? लोगो ने कहा कि बड़े हज्ज का दिन है । आपने कहा . तुम्हारे खून, तुम्हारे माल, तुम्हारी आबरू तुम्हारे बीच उसी प्रकार 'हराम' हैं जिस प्रकार तुम्हारे इस दिन और तुम्हारे इस नगर मे हराम है[३] । सावधान ! कोई ज़ालिम ज़ुल्म करता है, तो अपने-आप पर ही करता है[४] । सावधान ! कोई बाप अपनी औलाद पर और कोई बेटा अपने बाप पर ज़ुल्म नही करता । सावधान ! 'शैतान' सदैव के लिए इस बात से निराश हो गया कि तुम्हारे इस नगर मे उसकी 'इबादत' कीजाए, परन्तु तुम अपने उन कर्मों मे उसका आज्ञापालन करोगे जिन्हे तुम साधारण समझोगे तो वह उन ही पर राज़ी होगा[५] । —इब्न माजा, तिरमिज़ी

जैसे कुरबानी के बारे में कुरआन मे कहा गया है "इन (कुरबानियो) के न मास अल्लाह को नही पहुँचते है और न इनके रक्त परन्तु तुम्हारा 'तकवा' (धर्म निष्ठा एव ईश-भय) पहुँचता है ।" अत वास्तविक उद्देश्य सदैव और प्रत्येक कर्म मे हमारे समक्ष रहना चाहिए ।

२. अपने अन्तिम 'हज्ज' के अवसर पर जब आप सब से रुखसत हुए और अपना महत्वपूर्ण ऐतिहासिक 'खुतबा' (भाषण) दिया ।

३ अर्थात् जिस प्रकार तुम आज के दिन और इस नगर मक्का मे लोगो की जान, माल और उनकी इज़्ज़त और आबरू का आदर करते हो और किसी को किसी प्रकार की हानि नही पहुँचाते, ठीक इसी तरह तुम्हारे लिए आवश्यक है कि तुम अपने बीच भी इन चीज़ो का आदर करो और किसी को किसी तरह की हानि न पहुँचने दो । आज का दिन तो इसीलिए आया है, और यह पवित्र भू-भाग तो इसीलिए है कि तुम पुण्यात्मा, सत्यवादी और अल्लाह के आज्ञाकारी बन सको और प्रत्येक के हक को पहचानो । और तुम से एक ऐसा आदर्श समाज का निर्माण हो जिसमे किसी को किसी से हानि पहुँचाने की आशका न हो, बल्कि प्रत्येक दूसरे के अधिकारो का पूरा-पूरा आदर करता हो ।

४ अर्थात् जब कोई व्यक्ति किसी पर ज़ुल्म करता है, तो वास्तव मे वह अपना बुरा करता और अपनी 'आखिरत' खराब करता है चाहे उसे इसका ज्ञान हो या न हो ।

५ अर्थात् अब तो ऐसा न होगा कि यहाँ मूर्ति-पूजा हो और 'शिर्क' 'कुफ्र' फैले

३ हजरत इब्न अब्बास रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : जो व्यक्ति 'हज्ज' का इरादा कर ले, तो फिर जल्द उसे पूरा करे[६]। —अबूदाऊद, दारमी

४. हजरत इब्न उमर रज़ि० कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को तलबिया कहते हुये सुना जबकि आपके सिर के बाल जमे हुए क्रम से थे[७]। आप कहते थे : "हाज़िर हूँ, हे अल्लाह ! तेरी सेवा में, हाज़िर हूँ। तेरा कोई साझी नही, मैं तेरी सेवा में हाज़िर हूँ। निस्सन्देह प्रशसा तेरे ही लिए है। सारे एहसान तेरे ही हैं। राज्य तेरा ही है, तेरा कोई सहभागी नहीं[८]।" आप इन शब्दों से अधिक न कहते।

—बुखारी-मुस्लिम

हाँ यह खराबी तुम मे पैदा हो सकती है कि तुम बहुत से गुनाह के कामो को साधारण और हल्का समझने लगो और उनसे बचने की कोशिश न करो और 'शैतान' इसी से प्रसन्न हो।

नबी सल्ल० के इस कथन से ज्ञात हुआ कि किसी भी गुनाह को छोटा और हल्का समझना सही नही है। हज़रत आइशा रज़ि० से एक 'हदीस' मे उल्लिखित है कि आपने कहा : "हे आइशा ! अपने-आप को उन गुनाहो से बचाओ जिन्हे तुच्छ और साधारण समझा जाता है क्योकि इन गुनाहो के सिल-सिले मे अल्लाह की ओर से एक माँग करने वाला ('फ़िरिश्ता') भी है।" (इब्न माजा, दारमी, बैहकी : शोबुल ईमान) हज़रत अनस रज़ि० कहते हैं "तुम ऐसे कर्म करते हो जो तुम्हारी दृष्टि मे बाल से बारीक हैं (अर्थात् साधारण हैं) हम उनकी गणना अल्लाह रसूल सल्ल० के समय मे विनाशकारी चीज़ो मे करते थे।" —बुखारी

६ नेक काम मे अकारण विलम्ब नही होना चाहिए। जीवन-अवकाश मालूम नही कब समाप्त हो जाए। और जीवन शेष भी रहा, तो क्या खबर आगे 'हज्ज' की यात्रा करने की परिस्थिति रहती है या नही।

७ बिल्कुल इस तरह जैसे स्नान के पश्चात् सिर के बाल क्रम से और जमे हुये होते हैं, बिखरे हुए नही होते।

८ अ...ाह ने हज़रत इबराहीम अ० के द्वारा अपने बन्दो को अपनी सेवा मे उपस्थित होने का आमन्त्रण दिया था (सूरा अल-हज्ज २७) यह तलबिया के शब्द वास्तव मे अल्लाह के उस बुलावे का उत्तर हैं। मानो बन्दा अल्लाह के बुलावे के उत्तर मे यह कहता हुआ उसकी ओर बढता है कि हे अल्लाह मैं जान और दिल से तेरी सेवा मे हाज़िर हूँ, मुझे आप जहाँ बुलाएँ मैं तेरी

५ हज़रत आइशा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा "कोई दिन ऐसा नहीं है जिसमें अल्लाह 'अरफा' के दिन से अधिक (अपने) बन्दों को ('जहन्नम' की) आग से छुटकारा देता हो, (उस दिन) वह बहुत ही निकट हो जाता है और उन पर गर्व करते हुये 'फ़िरिश्तों' से कहता है "ये लोग क्या चाहते हैं" ? —मुस्लिम

६ हज़रत इब्न अब्बास रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा, "'काबा' के गिर्द 'तवाफ़' (परिक्रमा) करना 'नमाज़' के सदृश है, अन्तर केवल इतना है कि तुम 'तवाफ' में बात-चीत करते हो"। तो जो कोई 'तवाफ़' की हालत में बात-चीत करे तो वह [illegible]।

---

९ 'ज़िलहिज्जा' की नवीं तिथि को अरफ़ात के मैदान में जब लाखों की संख्या में अल्लाह के बन्दे अपने अल्लाह के आमन्त्रण पर एकत्र होते हैं और उसके सामने विनम्रता का प्रदर्शन करते और उसकी कृपा के इच्छुक होते हैं, तो अल्लाह की दयालुता उन से अत्यन्त निकट होती है। अरफ़ात के मैदान का यह महान् सम्मेलन इतनी बरकतें और विशेषताएँ लिए हुए होता है कि उन की गणना नहीं की जा सकती। कितने ही अल्लाह के बन्दे इस शुभ सम्मेलन की बरकतों से लाभ उठाते हैं और अल्लाह उनके गुनाहों को क्षमा कर देता है। कितने ही लोगों के जीवन को यह सम्मेलन तौहीद के रग मे रग देता है और अल्लाह उनके बारे में 'जहन्नम' से छुटकारे का निर्णय उसी तरह करता है जिस तरह 'हश्र' के मैदान मे वह बहुत से लोगो के बारे मे क्षमा का निर्णय करेगा। इसमें सन्देह नही कि 'हज्ज' के इस महान सम्मेलन का 'आख़िरत' से घनिष्ठ सम्बन्ध है। यह सम्मेलन हश्र के मैदान मे हमारे खड़े होने का चित्र प्रस्तुत करता है।

१० यह महान् सम्मेलन जो अल्लाह की ओर पलटने और अल्लाह की सेवा मे लोगों के उपस्थित होने का दृश्य प्रस्तुत कर रहा होता है अल्लाह को अत्यन्त प्रिय है। अल्लाह अपनी प्रसन्नता का प्रदर्शन 'फिरिश्तो' के बीच इन शब्दो मे करता है कि ये मेरे बन्दे किस उद्देश्य से यहाँ एकत्र हुए है। मेरी दयालुता और क्षमा की इच्छा और मेरे आदेश के पालन करने की भावना ही है जो उन्हे यहाँ खीच कर लाई है।

११. अर्थात् 'तवाफ' मे तुम्हे इसकी इजाज़त है कि तुम आपस मे बात चीत करो लेकिन 'नमाज़' मे इसकी इजाज़त नही है।

अच्छी और भलाई ही की बात करे[१२]। —तिरमिज़ी, नसई

हज्ज और उमरा

عَنْ اَبِیْ هُرَیْرَةَ رض قَالَ، قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ جِهَادُ الصَّغِيْرِ وَ الْكَبِيْرِ وَالضَّعِيْفِ وَالْمَرْاَةِ اَلْحَجُّ وَالْعُمْرَةُ ——— نسائی

१ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . बच्चे, बूढे, निर्बल और स्त्री के लिए 'हज्ज' और 'उमरा' ही जिहाद है[१]। —नसई

२. हज़रत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल

१२. 'काबा' का 'तवाफ' (परिक्रमा) अपनी आत्मा और उद्देश्य का दृष्टि से 'नमाज़' के सदृश है। 'नमाज़' अपनी वास्तविकता की दृष्टि से अल्लाह की याद और बन्दे की 'रब' के प्रति आसक्ति, विमुग्धता और विनम्रता क प्रदशन के अतिरिक्त और क्या है ? 'तवाफ' की वास्तविकता भी यही है। 'तवाफ' भी अल्लाह की याद के लिए है। 'तवाफ' मे भी बन्दा आसक्ति, अनुराग और प्राणोत्सर्ग के उसी भाव का प्रदर्शन करता है जो उसके मन मे अपने 'रब' के लिए पाया जाता है। इसलिए 'तवाफ' मे व्यर्थ बातो से बचना चाहिए। नसई की एक रिवायत मे हज़रत इब्न उमर का यह कौल भी मौजूद है "तवाफ की हालत मे बहुत ही कम बात-चीत करो इसलिए कि (तवाफ करते हुए वास्तव मे) तुम 'नमाज़' मे होते हो।"

१ मतलब यह है कि जो लोग विवशता के कारण 'जिहाद' नही कर सकते उन्हे 'जिहाद' का सवाब 'हज्ज' और 'उमरा' ही से प्राप्त हो जायेगा। यह कोई आश्चर्य की बात नही कि उन्हे आत्मा का वह विकास, स्वच्छता और उच्चता जो 'जिहाद' के द्वारा प्राप्त होती है 'हज्ज' और 'उमरा' के द्वारा ही प्राप्त हो जाए। 'हज्ज' और 'उमरा' अपनी कुछ विशेषताओ की दृष्टि से 'जिहाद' की भूमिका है। इसलिए यदि कोई व्यक्ति अपनी विवशता के कारण 'जिहाद' मे सम्मिलित न हो सका तो 'हज्ज' और 'उमरा' ही से जिहाद' के सवाब का हकदार होगा जिस प्रकार वह व्यक्ति अल्लाह के यहाँ 'जिहाद' के सवाब का हकदार होता है जो अपने घर से जिहाद के इरादे से निकल पडा था लेकिन मृत्यु ने उसे रण मे शत्रुओ से लडने का मौका न दिया।

सल्ल० ने कहा : जो व्यक्ति 'हज्ज' या 'उमरा' या 'जिहाद' के इरादे से निकला फिर मार्ग ही में उसे मृत्यु आ गई, तो अल्लाह उस के लिए 'जिहाद', 'हज्ज' और 'उमरा' करने वाले का सवाब लिख देता है[२]।

—बैहकी शोबुलईमान

३. हजरत इब्न अब्बास से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा एक-दूसरे के पश्चात् 'हज्ज' और 'उमरा' करो क्योकि ये दोनो गुनाहो को इस तरह नष्ट कर देते है जिस तरह भट्टी लोहे के मैल-कुचैल को नष्ट कर देती है[३]।

—नसई

४ हजरत अम्र बिन आस रजि० कहते है कि जब अल्लाह ने मेरे दिल मे 'इस्लाम' स्वीकार करने का ख्याल डाला, तो मै नबी सल्ल० की सेवा मे हाजिर हुआ और कहा अपना हाथ बढाइए ताकि मै आप से 'बैअत' करूँ[४], तो आपने अपना हाथ बढा दिया, मैंने अपना हाथ खीच लिया,

---

२ सच्चे दिल से मनुष्य जब अल्लाह के मार्ग मे निकल पडा, तो वह कर्म-फल का अधिकारी हो गया, भले ही घर से निकलते ही मृत्यु आ जाए और उसे अमल का मौका न मिले। कर्म के बदले उसकी आत्मा की शुद्धता और सत्यप्रियता ही उसके लिए काफी है। अल्लाह तो लोगो के इरादो और उनके दिलो को देखता है। उसके यहाँ तो कुरबानी का खून भूमि पर गिरने से पहले ही कबूल हो जाता है (तिरमिजी)। कुरआन मे भी कहा गया है "और जो कोई अपने घर से अल्लाह और उसके 'रसूल' की ओर 'हिजरत' करके निकले, फिर उसकी मृत्यु आ जाए, तो उसका बदला अल्लाह के जिम्मे हो गया और अल्लाह बडा क्षमाशील और दयावान् है।" —अन-निसा · १००

३ अर्थात् जिस तरह भट्ठी की गर्मी से लोहे का मोरचा और उसका मैल-कुचैल नष्ट हो जाता है उसी प्रकार 'हज्ज' और 'उमरा' मनुष्य के गुनाहो को मिटाते और उनके बुरे प्रभाव को मनुष्य के मन और मस्तिष्क से दूर करते हैं। और उसका सम्बन्ध उस अल्लाह से जोडते है जो समस्त भलाइयो और पवित्रता का स्रोत हैं। इस 'हदीस' से यह भी मालूम हुआ कि गुनाह और गुनाह का मनुष्य के मन और मस्तिष्क पर जो प्रभाव पडता है मनुष्य की आत्मा के लिए उसकी हैसियत मैल-कुचैल और मोरचे की है जिसे दूर किये बिना मनुष्य का व्यक्तित्व और उसके जीवन मे निखार नही आ सकता।

४ अर्थात् आपके हाथ पर 'इस्लाम' की 'बैअत' करूँ, आपके हाथ पर २.. आऊँ।

आप ने कहा . अम्र तुम्हे क्या हुआ ? मैं ने कहा : मैं एक शर्त्त करनी चाहता हूँ, कहा : तुम क्या शर्त्त करनी चाहते हो ? मैं ने कहा : यह कि मेरे गुनाहो को क्षमा कर दिया जाए[५]। आप ने कहा . क्या तुम नही जानते कि 'इस्लाम' पिछले सभी गुनाहों को ढा देता है और 'हिजरत' भी पिछले गुनाहो को ढा देती है और 'हज्ज' भी पिछले गुनाहो को ढा देता है[६]। —मुस्लिम

---

५. अर्थात् मुझ से जो खताएँ और गुनाह के काम 'इस्लाम' से पहिले हो चुके हैं उन्हे क्षमा कर दिया जाए।

६. मतलब यह है कि जब मनुष्य 'कुफ़्र' या 'शिर्क' को छोडकर सच्चे दिल से 'इस्लाम' स्वीकार कर लेता है, तो उसके पिछले गुनाह अपने-आप नष्ट हो जाते है। वह अँधेरे से उजाले मे आ जाता है। उसे एक नवीन और पवित्रतम जीवन प्राप्त होता है। 'शिर्क' और 'कुफ़्र' या उस से पैदा होने वाले दूसरे विकार उस से दूर हो जाते हैं। कुरआन मे भी कहा गया है उन से कह दो जिन्होने 'कुफ़्र' किया है कि यदि वे बाज़ आ जाएँ, तो उनके पिछले गुनाह क्षमा कर दिए जाएँगे।" —अल-अनफाल ३८।

यह 'हदीस' बताती है कि गुनाहो से पाक-साफ कर देने की जो विशेषता 'इस्लाम' स्वीकार करने मे है वह विशेषता 'हिजरत' और 'हज्ज' मे भी पाई जाती है। 'हिजरत' और 'हज्ज' जैसे कर्म एक पहलू से 'ईमान' की पुनरावृत्ति की हैसियत रखते है इसलिए अवश्य ही इनमे वही विशेषता होनी चाहिए जो 'इस्लाम' कबूल करने मे है। आदमी 'हिजरत' उसी समय कर सकता है जब कि वह घर बार और धन-दौलत की अपेक्षा 'ईमान' और 'इस्लाम' को प्रमुखता दे। इसी प्रकार अपने नातेदारो, मित्रो और अपने कारबार को छोडकर 'हज्ज' के लिए प्रस्थान करना इस बात की पहिचान है कि आदिमी ने अपनी इच्छाओ के मुकाबले मे अल्लाह के आदेश का आदर किया। इसी प्रकार 'हिजरत' या 'हज्ज' करने वाले व्यक्ति के 'ईमान' मे यदि कोई कमज़ोरी भी आ गई थी, तो 'हिजरत' और 'हज्ज' जैसा अमल 'ईमान' की पुनरावृत्ति की हैसियत रखता है। मानो बन्दा नये सिरे से अपने 'रब' से बन्दगी की प्रतिज्ञा कर रहा है और उस जीवन प्रणाली को अपनाने का निश्चय कर रहा है जिसे अल्लाह ने उसके लिए पसन्द किया है। इस से पहिले यदि उसने गुनाह के काम किये भी है जो वास्तव मे अब उसने अल्लाह की ओर रुजू कर लिया। आदमी मे सत्यनिष्ठा आ ही नही सकती जब तक कि वह अल्लाह की ओर रुजू न हो।

५, अब्दुल्लाह् बिन जराद रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा · 'हज्ज' करो क्योंकि हज्ज गुनाहो को इस तरह धो देता है जैसे पानी मैल को धो देता है[७]। —तबरानी:अवसत

६. हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा जिस व्यक्ति ने इस घर (काबा) के दर्शन किये और किसी कामेच्छा सम्बन्धी बात में नही पडा और न किसी अवज्ञा में, तो वह इस तरह पलटा जिस तरह उस की माता ने उसे जना था[८]।
—मुस्लिम

७ हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा एक 'उमरा' दूसरे उमरा तक उन सभी गुनाहो के लिए 'क़फ़्फ़ारा' (प्रायश्चित) है जो उन के बीच हुए हो और 'हज्ज मबरूर का बदला तो बस 'जन्नत' है[९]। —बुखारी, मुस्लिम

इसलिए उसका रुजू गुनाहो के क्षमा होने के लिए काफी है · "गुनाहो से 'तौबा' करने वाला ऐसा है जैसे उसने गुनाह किया ही नही था।" यदि किसी की 'हिजरत' या 'हज्ज' केवल लोगो को दिखाने के लिए है या उसके पीछे केवल भौतिक स्वार्थ काम कर रहा है, तो ऐसी 'हिजरत' या ऐसे 'हज्ज' का यहाँ उल्लेख नही किया गया है।

७ यही विशेषता एक 'हदीस' मे 'नमाज़' की बताई गई है जिसमे नमाज़ के लिए स्नान की उपमा प्रस्तुत की गई है।

८. अर्थात् वह गुनाहो से बिलकुल पाक-साफ होकर लौटता है। इस 'हदीस' मे जिन बातो से बचने का ज़िक्र किया गया है उनका ज़िक्र क़ुरआन मे भी मिलता है "हज्ज के कुछ जाने-पहिचाने महीने हैं। तो जिस किसी ने उनमे 'हज्ज' का इरादा कर लिया तो (उसे यह ध्यान रहे कि) 'हज्ज' मे न तो कामेच्छा की कोई बात जायज़ है और न अवज्ञा और न लडाई-झगडा।"
— अल-बकरा १९७।

यो तो प्रत्येक कर्म की यह विशेषता है कि उसके कारण आदमी के गुनाह क्षमा होते है और गुनाहो के बुरे प्रभाव दिलो से दूर होते है मनुष्य की नैतिक दशा ठीक हो जाती है और उसे शुद्धता और आत्म-विकास प्राप्त होता है, लेकिन 'हज्ज' मे यह विशेषता विशेष रूप से पाई जाती है। 'हज्ज' एक बडी 'इबादत' है उसे यदि उसके पूरे नियम और शर्तों के साथ अदा किया जाय तो निश्चय ही यह 'इबादत' आदमी के जीवन को बदलने और उसे नेकी, परहेज़गारी और ईश-भक्ति के साँचे मे ढाल देने के लिए काफी है।

९ 'हज्ज मबरूर' से अभिप्रेत वह 'हज्ज' है जिसमे हज्ज के समस्त नियमो और

'हज्ज' के स्वाभाविक आदेश

عَنْ أُسَامَةَ بْنِ شَرِيكٍ قَالَ خَرَجْتُ مَعَ رَسُولِ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ حَاجًّا
وَكَانَ النَّاسُ يَأْتُونَهُ فَمِنْ قَائِلٍ يَا رَسُولَ اللهِ سَعَيْتُ قَبْلَ أَنْ أَطُوفَ
وَأَخَّرْتُ شَيْئًا أَوْ قَدَّمْتُ شَيْئًا فَكَانَ يَقُولُ لَا حَرَجَ إِلَّا رَجُلٌ اقْتَرَضَ عِرْضَ
رَجُلٍ مُسْلِمٍ وَهُوَ ظَالِمٌ فَذَالِكَ الَّذِي حَرِجَ وَهَلَكَ ——— ابوداؤد

१ उसामा बिन शरीक रजि० कहते हैं कि मैं अल्लाह के रसूल सल्ल० के साथ 'हज्ज' के लिए निकला, तो लोग आप के पास आते थे (और आप से 'हज्ज' के बारे में पूछते थे) तो कोई कहता कि हे अल्लाह के रसूल ! 'तवाफ़' (परिक्रमा) करने से पहले मैं ने (सफा और मरवा के बीच) सई कर ली या किसी काम को बाद मे कर लिया (जिसे पहले करना चाहिए था) या पहले कर लिया (जिसे बाद मे करना चाहिए था)। आप (प्रत्येक व्यक्ति को) यही उत्तर देते थे कि कोई दोष नही है, दोष की बात तो इस मे है कि कोई व्यक्ति जुल्म मे किसी 'मुस्लिम' व्यक्ति की आबरू को आघात पहुँचाए तो ऐसा व्यक्ति दोषी है और वह विनष्ट हुआ[१]। —अबूदाऊद

अधिनियमो आदि का पूरा ध्यान रक्खा गया हो, जो पाक और शुद्धहृदयता के साथ हो। इस 'हदीस' मे उसी वास्तविकता को प्रदर्शित किया गया है जिस का प्रदर्शन पिछली 'हदीस' मे हुआ है। उमरा' पिछले गुनाहो के लिए 'कफ्फारा' (प्रायश्चित) बन जाता है। इस नेक अमल के कारण अल्लाह पिछले गुनाहो को क्षमा कर देता है। 'उमरा' गुनाहो के बुरे प्रभावो को मन मे दूर करता और मनुष्य को पवित्रता प्रदान करता है। उमरा न केवल यह है कि अल्लाह के घर की आबादी और शोभा का कारण बनता है बल्कि इसके द्वारा मानव-हृदय की भी शोभा बढ जाती है। 'हज्ज' इतनी बडी 'इबादत' और मनुष्य की शुद्धहृदयता, सत्यनिष्ठा और 'ईमान' का महान् प्रदर्शन है कि 'हज्ज' करने वाला अल्लाह के यहाँ 'जन्नत' का अधिकारी ठहरता है शर्त यह है कि 'हज्ज' के पश्चात् वह अपने जीवन में कोई ऐसी नीति न अपनाए, जो अल्लाह की बन्दगी के प्रतिकूल हो।

१ मतलब यह है कि 'हज्ज' सम्बन्धित कर्मो मे कुछ विलम्ब या जल्दी हो गई'

कोई कार्य पहिले करने का था उसे गल्ती से बाद मे कर लिया या कोई कार्य बाद मे करना चाहिए था उसे पहिले कर लिया तो यह कोई ऐसी बात नही है कि जिस से आदमी के धर्म और 'ईमान' मे कोई दोष पैदा हो जाए या इस से कोई ऐसी हानि पहुँच जाए कि क्षतिपूर्ति सम्भव ही न हो। हानि और दोष की बात तो यह है कि मनुष्य उस चरित्र को क्षति पहुँचाए जो 'ईमान' वाले व्यक्ति की वास्तविक निधि है। 'हज्ज' सम्बन्धी कार्यों मे कुछ विलम्ब या जल्दी हो जाये तो यह कोई ऐसी परेशानी की बात नही, हाँ यदि कोई व्यक्ति 'ईमान' वालो के चरित्र को भग्न जाता है तो अवश्य ही यह परेशानी की बात होगी। विशेष रूप से यदि 'हज्ज' के बीच मे वह किसी के साथ ज्यादती करता और उसकी आबरू पर हमला करता है, तो यह घोर अन्याय बल्कि इस्लामी जीवन की तबाही का खुला प्रमाण होगा।

दुआ

'दुआ' बन्दे की पुकार और अल्लाह की सेवा में उस की याचना है। एक मुस्लिम व्यक्ति अल्लाह को छोड कर किसी दूसरे को नही पुकारता। उस की जबान पर अल्लाह ही का ज़िक्र होता है। एक अल्लाह की महानता और बड़ाई के वर्णन के लिए उस की जिह्वा अर्पित होती है। उस के इस कर्म में सारी सृष्टि उस के साथ होती है। मुस्लिम माँगता केवल अपने 'रब' से है। वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उसी को पुकारता है। उस की फरियाद उसी से होती है। वह उसी के मार्ग-दर्शन का इच्छुक होता है। उसी को शरणदाता और अपना कार्यसाधक समझता है। यही उसका 'दीन' (धर्म) और 'ईमान' है, जिस 'दीन' का वह अनुयायी है, वास्तव मे वही सम्पूर्ण जगत का 'दीन' है। कुरआन मे कहा गया है . "हर वह चीज जो आकाशो और धरती मे है अल्लाह की 'तस्बीह' करती है और वह प्रभुत्वशाली और तत्वदर्शी है" —अल-हदीद १

एक दूसरी जगह कहा गया "आकाशो और धरती मे जो भी है सब उस के भिक्षुक है" —अर-रहमान २९

एक मुस्लिम को इसी बात का आदेश दिया गया है कि वह केवल एक अल्लाह को पुकारे। और केवल उसी से आशाएँ रक्खे (अल-आराफ ५५), अस-सजदा १६)। एक अल्लाह को पुकारना अल्लाह की बन्दगी और 'इबादत' मे सम्मिलित है। जब बन्दा अपने 'रब' के सामने अपनी जरूरते पेश करता और विवशता की दशा मे उसे आवाज देता है, तो इस प्रकार वास्तव मे वह अल्लाह के प्रभुत्व और उच्चता और अपनी बन्दगी और दुर्बलता को स्वीकार करता है, वह अल्लाह के समक्ष अपनी विवशता और विनम्रता को पेश करके उससे उसकी कृपा का अभिलाषी होता है। बन्दगी और विनम्रता का प्रदर्शन स्वय 'इबादत' बल्कि 'इबादत' का मूल तत्व है[1]। इसी लिए

१ इब्न तैमिया ने लिखा है "बन्दगी अत्यन्त विनम्रता और प्रेम का नाम है" (रिसालतुल उबूदियत पृ० २८)। इब्न कय्यिम लिखते है 'इबादत के दो विशेष मूलतत्व है अत्यन्त प्रेम अत्यन्त विनय एव विनम्रता और झुकाव के

नबी सल्ल० ने दुआ को 'इबादत' का सत कहा है और इसी लिए अल्लाह को छोडकर किसी दूसरे को पुकारने वाले को कुरआन 'शिर्क' और पथ-भ्रष्टता कहता है। कुरआन की विभिन्न 'आयतों' मे 'दुआ' और पुकार से आशय अल्लाह की 'इबादत' ही है उदाहरणार्थ एक जगह कहा गया : "हर 'इबादत' में अपना रुख ठीक रक्खो और 'दीन' को खालिस उसी के लिए रख कर उसे पुकारो" —अल-आराफ २८

एक दूसरी जगह कहा गया . " वह सजीव है, उस के सिवा कोई 'इलाह' (पूज्य प्रभु) नही तो 'दीन' को उसी के लिए खलिस कर के उसे पुकारो —अल-मोमिन ६५

एक स्थान पर कहा गया "सजदे अल्लाह ही के लिए है तो तुम अल्लाह के साथ किसी और को न पुकारो" —अल-जिन्न . १८

मनुष्य के लिए यह चीज सब से बड़ी आनन्ददायक है कि वह अपने 'रब' की ओर एकाग्रचित्त हो कर आकृष्ट हो। 'दुआ' मे याचना, ईश प्रशसा, प्रेम, मन का झुकाव, विनयभाव और अल्लाह की ओर ध्यानाकृष्टि आदि वे सभी चीजे सम्मिलित होती है जो ईमान वालो के लिए जीवन को बहुमूल्य निधि है। कुरआन करीम मे कहा गया है "अपने 'रब' को विनम्र भाव के साथ गिड़गिडाते हुए गुप्त रूप से पुकारो, निस्सन्देह हद से आगे बढ़ने वाले उसे प्रिय नही है और धरती मे सुधार के पश्चात् बिगाड न पैदा करो और उसे भय और लोभ (दोनो प्रकार के मिले-जुले भावो) के साथ पुकारो, निस्सन्देह अल्लाह की दयालुता उत्तमकार लोगों के समीप है" —अल-आराफ ५५-५६

इसी विशेषता को दूसरी जगह यों स्पष्ट किया गया "निश्चय ही वे (अल्लाह के नबी) नेकियो मे अग्रसरता दिखाते थे और हमे चाह और भय (के मिले-जुले भावो) के साथ पुकारते थे और वे हमारे सामने विनम्रता अपनाने वाले थे" —अल-अबिया : ९०

एक दूसरी जगह है "उनके पहलू बिस्तरो से अलग हो जाते है। वे भय और लालसा के साथ अपने 'रब' को पुकारते है और जो-कुछ हम

साथ। यदि तुम किसी से प्रेम करो परन्तु उस से तुम्हारा विनयपूर्ण सम्बन्ध न हो, तो तुम उसकी 'इबादत' नही करता, इसी प्रकार विनय भाव एव विनम्रता हो और प्रेम न हो, तो उस समय भी तुम 'आबिद' (इबादत और बन्दगी करने वाले) नही कहे जाओगे जब तक विनययुक्त प्रेम करने वाले न बन जाओ।

ने उन्हे दिया है उस मे से (हमारी राह मे) खर्च करते हैं"

—अस-सजदा १६

'दुआ' का हमारे जीवन से गहरा सम्बन्ध है। वह व्यक्ति जो अल्लाह के मार्ग-दर्शन के अनुसार जीवन-व्यवस्था को सुदृढ करना चाहता है उसे हर समय इसकी आवश्यकता होती है कि उसे अल्लाह का योग और सहायता प्राप्त हो। इस के बिना वह एक कदम भी नही चल सकता और न इस के बिना वह उन शैतानों और मक्कारो का मुकाबला कर सकता है जो उसे सत्य से फेरने के लिए हर समय अपना जोर लगाते रहते है।

मुस्लिम की सब से बहुमूल्य पूँजी और शक्ति वह भक्ति भाव और दासता की प्रेरणा है जिस के सहारे वह सत्य-मार्ग पर अविचलित रुप से चलता और असत्य की प्रत्येक चाल का दृढतापूर्वक मुकाबला करता है। उसकी कोशिश यह होती है कि एक ओर वह जीवन मे बन्दगी की माँगो को पूरा करे, अल्लाह की निश्चित की हुई सीमाओ का आदर करे, हर प्रकार के गुनाहो और अल्लाह की अवज्ञा से अपने जीवन को दूर रक्खे, दूसरी ओर हर श्वास के साथ अल्लाह की दयालुता से अपना सम्बन्ध बनाये रक्खे। मुस्लिम अपनी याचना का दामन हर समय अल्लाह की सेवा मे फैलाए रहता है। अकेला हो या लोगो के साथ, मस्जिद हो या बाजार, सफर मे हो या घर में, बीमार हो या स्वस्थ, प्रत्येक अवस्था में उस का यह अमल जारी रहता है। वह सदा अल्लाह से सहायता का इच्छुक होता है। अल्लाह की सेवा मे दुआएँ और विन्ती करने को वह बडे सौभाग्य की बात समझता है।

दास्यभाव मानव का स्वाभाविक भाव है। यही वह भाव है जो हमारे मन में तरगित होने वाले विभिन्न भावो और प्रेरणाओ को अर्थमय और आशययुक्त बनाता है। उन्हे अनुकूलता एव एकात्मकता प्रदान करता है। भावनाओं और अत प्रेरणाओ की अनेकता मे एकता की विशेषता पैदा करता है। दास्यभाव के वास्तविक अर्थ और उस की माँगों का पूर्ण परिचय केवल अल्लाह के 'रसूलो' द्वारा प्राप्त होता है। दास्ता की अनुभूति वह शान्ति एव आनन्द निधि है जिस से हृदयो को परितोष और दिव्य सुख प्राप्त होता है। यही मार्ग है जो बन्दे को उस के 'रब' से मिलाता है। दास्यभाव वास्तव मे जीवन की उच्चतम एव मनोरम उमगो का मूलाधार है। यह एक ऐसे व्यक्तितत्व से सम्बन्ध जोडने की अभिलाषा

है जो अत्यन्त दयालु और स्वय हमारे जीवन का वास्तविक आशय है। विनय भाव, ब्रह्म-ज्ञान का मूल और सामीप्य-स्थिति का नाम है, कहा भी गया है "सजदा करो और करीब हो जाओ" —अल़-अलक १९।

विनय भाव और 'सजदा' ही वास्तविक रूप से ऐसी महान् और प्रिय सत्ता के सामीप्य का आशय हो सकता है। प्रेम और विनय भाव के साथ अल्लाह् की ओर अपना ध्यान बनाये रखना हमारे आन्तरिक जीवन का सौन्दर्य है। प्रेम, विनय भाव और विनम्रता का दुआवो मे पूर्णत प्रदर्शन होता है। नबी सल्ल० का जीवन विनय भाव का जीवन था। आप बन्दगी के उच्चतम स्थान पर थे। इसका अनुमान विशेष रूप से उन दुआओ से किया जा सकता है जो आपने अपने 'रब' से माँगी है। आप की दुआओ से मालूम होता है कि आप की आत्मा कितना अधिक अपने 'रब' से सम्बद्ध थी और आप को कितनी अधिक अपने 'रब' की महानता और तेज की अनुभूति प्राप्त थी। और अपनी और सम्पूर्ण विश्व की विवशता और अल्लाह् की शक्ति, सामर्थ्य और उस की व्यापक दयालुता पर आप को कितना विश्वास था। इस मे सन्देह नही किया जा सकता कि आप की दुआएँ तत्वदर्शिता और ज्ञान की महान कृत है, ईश-ज्ञान और अल्लाह से आपके सच्चे और गहरे सम्बन्ध का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

———

दुआ का महत्व

عَنِ النُّعْمَانِ بْنِ بَشِيْرٍ رض قَالَ. قَالَ رَسُوْلُ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ اَلدُّعَاءُ
هُوَ الْعِبَادَةُ ثُمَّ قَرَأَ وَقَالَ رَبُّكُمُ ادْعُوْنِيْ اَسْتَجِبْ لَكُمْ اِنَّ الَّذِيْنَ
يَسْتَكْبِرُوْنَ عَنْ عِبَادَتِيْ سَيَدْخُلُوْنَ جَهَنَّمَ دَاخِرِيْنَ.

——— ابوداود، ترمذی، احمد، نسائی، ابن ماجہ

१ हजरत नोमान बिन बशीर कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : दुआ 'ईबादत' है । फिर आप ने (कुरआन से यह) पढा "तुम्हारे रब ने कहा मुझसे दुआ माँगो मैं कबूल करूँगा । जो लोग मेरी 'इबादत' से गर्व करते हुये मुख मोडते है, जल्द ही वे अपमानित होकर 'जहन्नम' मे प्रवेश करेंगे"[1] ।

—अबू दाऊद, तिरमिजी, अहमद, नसई, इब्नमाजा

२ हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के 'रसूल' सल्ल० ने कहा 'दुआ' (प्रार्थना) 'इबादत' की मज्जा (सार) है[2] । —तिरमिजी

---

१ इस 'हदीस' मे जो आयत पेश की गई है उसमे 'दुआ' को 'इबादत' शब्द से अभिव्यजित किय गया है । ईश्वर से विनय और प्रार्थना करना बन्दगी और दास्यभाव ही का प्रदर्शन है । 'दुआ' से मुँह मोडने और प्रार्थना न करने का अथ इसके सिवा और क्या हो सकता है कि आदमी को किसी प्रकार का गर्व है और वह अपने रब के समक्ष अपनी दासता को स्वीकार करने से कतरा रहा है । बन्दा जब अपने सृष्टिकर्त्ता से अपनी आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए प्रार्थनायें करता है तो वास्तव मे वह इस तरह अपने रब की प्रभुता, बडाई और सर्वोच्चता के साथ ही अपनी दासता और दुर्बलता का इकरार करता है । उसका यह दास्यभाव-प्रदर्शन स्वय एक उत्तम उपासना है । अत यह इसके पुण्य और प्रतिफल से वचित नही हो सकता, भले ही उसे किसी कारण दुनिया मे वह वस्तु न मिले जिसके लिए उसने प्रार्थना की थी ।

२ 'इबादत' का अथ इसके सिवा और क्या हो सकता है कि मनुष्य ईश्वर की महानता और बडाई के आगे झुक जाये और उसके समक्ष अपनी दुर्बलता और बन्दगी का इकरार करे । 'दुआ' और विनय मे एक ओर मनुष्य की मुहताजी, विवशता और दासता की अभिव्यक्ति होती है, दूसरी ओर वह

३. हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . ईश्वर की दृष्टि मे 'दुआ' से बढ़ कर कोई चीज़ उत्तम और श्रेष्ठ नहीं[३]।
—तिरमिज़ी, इब्न माजा

४ हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · जो अल्लाह से नही मांगता, अल्लाह उस पर क्रुद्ध होता है[४]।
—तिरमिज़ी

५. इब्न उमर रज़ि०· कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिस व्यक्ति के लिए दुआ का द्वार खुल गया उसके लिए 'रहमत' (दयालुता) के द्वार खुल गये[५] और ईश्वर से जो चीजें मांगी जाती हैं उनमे उसकी दृष्टि मे सबसे प्रिय वस्तु यह है कि कुशल-क्षेम की याचना की जाये[६]।
—तिरमिज़ी

ईश्वर की प्रभुता और उसकी सर्वोच्चता का इकरार करता है। इसलिए इसमे किसी प्रकार का सन्देह नही हो सकता कि 'दुआ' या प्रार्थना 'इबादत' ही है। इसके शुभ फल से वह वंचित नही हो सकता।

३ अर्थात् 'दुआ' कोई साधारण चीज नहीं है। यह एक शक्ति है, बल है। 'दुआ' बन्दे को अल्लाह से करीब करती और अल्लाह से उसका सम्बन्ध जोडती है।

४ अर्थात् जिस तरह अल्लाह को यह प्रिय है कि कोई उस से 'दुआएँ' मांगे और अपनी ज़रूरतो के लिए उसको पुकारे उसी तरह अल्लाह को यह बात बहुत ही नापसन्द है कि कोई उससे मांगना छोड दे। उसके सामने अपनी ज़रूरतें पेश न करे। यह बेपरवाही न किसी बन्दे के लिए उचित है और न ईश्वर कभी इसको पसन्द कर सकता है।

५ अर्थात् जिसे 'दुआ' करने का सौभाग्य प्राप्त हो गया उसके हिस्से मे समस्त भलाइयाँ आ सकती हैं। 'दुआ' के द्वारा मनुष्य ईश्वर की विशेष कृपा का पात्र हो जाता है। 'दुआ' अथवा प्रार्थना अपनी वास्तविकता की दृष्टि से मानव-हृदय की विकलता और उसकी आत्मा की सुन्दर याचना का दूसरा नाम है। जब किसी बन्दे को सच्ची याचना, तडप और मन की विकलता प्राप्त हो गई तो, उसके लिए ईश-दयालुता के द्वार कभी बन्द नही हो सकते।

६ कुशल-क्षेम मे सासारिक एव पारलौकिक, बाह्य एव आन्तरिक हर प्रकार की कुशलता और क्षेम सम्मिलित है। जिस किसी ने ईश्वर से कुशल-क्षेम की प्रार्थना की उसने वास्तव मे ईश्वर से बडी चीज़ मांगी। कुशल-क्षेम की

६ इब्न मसऊद रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह से उसकी कृपा चाहो क्योकि अल्लाह को यह बात पसन्द है कि उससे माँगा जाये और उत्तम 'इबादत' तगी दूर होने की प्रतीक्षा है[७]।
— तिरमिजी

७. उबादा बिन सामित रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा दुनिया मे कोई भी मुस्लिम अल्लाह से 'दुआ' करता है तो या तो अल्लाह उसको वही चीज देता है (जिसकी वह 'दुआ' करता है) या उस दर्जे की किसी बुराई (बला या मुसीबत) को उससे दूर कर देता है, शर्त्त यह है कि वह किसी गुनाह या नाते-रिश्ते के तोडने की 'दुआ' न करे[८]।
--तिरमिजी

८ हजरत सलमान रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम्हारा रब बडा लज्जाशील और दाता है उसको इस से लज्जा आती है कि जब उसका बन्दा दोनो हाथ उठाकर उससे 'दुआ' करे तो वह उन्हे खाली लौटा दे[९]।
—अबूदाऊद, तिरमिजी

याचना करके मनुष्य इस बात का इकरार करता है कि ईश्वर की रक्षा और उसकी कृपा के बिना मनुष्य कदापि शान्ति और कुशलता प्राप्त नही कर सकता। ईश्वर ही है जो मनुष्य को कष्ट और सकट से बचाता और सीधे मार्ग पर चलने का सौभाग्य प्रदान करता है। इस प्रकार की दुआओ से ईश्वर के समक्ष मनुष्य की पूर्ण विवशता, मुहताजी और दासता का प्रदर्शन होता है।

७ लोगो के माँगने और दुआ करने से अल्लाह की दयालुता को प्यार आता है। जो उससे नही माँगता ईश्वर उस से प्रसन्न नही होता। ईश्वर की कृपा की आशा करते हुये इसकी प्रतीक्षा करना कि वह कष्टो और दुखो को निवारेगा और सुविधा प्रदान करेगा, उच्च कोटि की उपासना है क्योकि इसमे मनुष्य भय और विनयभाव के साथ ईश्वर की ओर झुका रहता है और उससे उसकी कृपा की आस लगाये रहता है।

८ बन्दे की 'दुआ' किसी भी दशा मे अकारथ नही जाती या तो उसकी माँगी हुई चीज ही उसे दे दी जाती है या उसके बदले मे आने वाली किसी बला और सकट को उस से दूर कर दिया जाता है। 'दुआ' के कबूल होने की एक बडी शर्त्त यह है कि 'दुआ' किसी पाप और गुनाह के लिए न हो और न नाते-रिश्तेदारो मे फूट और सम्बन्ध विच्छेद के लिए हो।

९. अर्थात् बन्दे की दुआ नष्ट नही होती। ईश्वर अत्यन्त लज्जाशील और कृपालु

९ हज़रत सलमान फारसी रज़ि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · ईश्वरीय निर्णय को कोई चीज टाल नही सकती सिवाय 'दुआ' के" और आयु को कोई चीज बढा नही सकती सिवाय नेकी के"[11] ।

—तिरमिज़ी

१०. हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'दुआ' (प्रत्येक दशा में) लाभदायक है उन बलाओ मे भी जो आ चुकी हैं और उनके मामले मे भी जो अभी नही आई हैं। अत. हे अल्लाह के बन्दो ! 'दुआ' को अपने लिए ज़रूरी ठहरा लो[12] ।

—तिरमिज़ी, अहमद

है। वह खाली हाथ किसी को कैसे लौटा सकता है। इन्जील मे है : "जबकि तुम बुरे होकर अपने बच्चो को अच्छी चीजें देना जानते हो तो तुम्हारा बाप जो आसमान पर है अपने मांगने वालो' को अच्छी चीज क्यो न देगा।"

(मत्ता ७ ११)

१० मतलब यह है कि 'दुआ न करने पर ईश्वर का जो फैसला लागू होने वाला होता है, 'दुआ' करने से अल्लाह अपनी दया से उसे बदल देता है। किसी मे शक्ति यह नही है कि वह अल्लाह के फैसले को बदल सके परन्तु अल्लाह स्वय अपने फैसले को बदल सकता है और यह उस समय होता है जब मनुष्य उस से दुआ करे। यह बात सूरा नूह के इन शब्दो से भी सिद्ध होती है "(नूह ने अपनी जाति वालो से कहा :) तुम लोग अल्लाह की बन्दगी करो और उसका डर रखो और मेरी आज्ञा का पालन करो। यदि तुम ऐसा करोगे तो अल्लाह तुम्हारे गुनाहो को क्षमा कर देगा और एक नियत समय तक तुम्हे मुहलत देगा।" इस आयत से मालूम हुआ कि 'कुफ़ और 'शिर्क' पर जमे रहने पर ईश्वर का यह फैसला था कि इस जाति के लोगो को विनष्ट कर दिया जाये परन्तु यदि ये लोग अल्लाह की बन्दगी, ईश-भय और रसूल के आज्ञापालन को अंगीकार कर लेते तो, उन्हे विनष्ट कर देने का फैसला बदल जाता और उन्हे कर्म का और भी अवसर प्रदान किया जाता।

११ नेकी और शुभ कर्म से आदमी की आयु और कर्म मे बरकत होती है। दे० अध्याय तकदीर पर ईमान ।

१२ अल्लाह आने वाली मुसीबत को आने से रोक सकता है और उस सकट को जो आ चुका हो दूर कर सकता है, इसलिए आदमी को प्रत्येक दशा मे उसको पुकारते रहना चाहिए।

११ हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा तुम मे से प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिऐ अपने रब से माँगना चाहिए यहाँ तक कि जूती का तस्मा भी माँगे, यदि वह टूट जाये[13] । —तिरमिज़ी

१२. अबू सईद ख़ुदरी से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा · एक मुस्लिम व्यक्ति जब भी 'दुआ' माँगता है, शर्त्त यह है कि वह किसी गुनाह् और रिश्ता-नाता तोडने की दुआ न हो, तो अल्लाह उसे तीन रूपों में से किसी भी रूप में कबूल कर लेता है · या तो उस की 'दुआ' दुनिया ही में कबूल कर ली जाती है या उसे आख़िरत के प्रतिफल के लिए सुरक्षित कर लिया जाता है या उसी दर्जे की किसी बुराई (बला, मुसीबत) को उस पर आने से रोक दिया जाता है । 'सहाबा' ने कहा अब तो हम बहुत दुआयें करेंगे । आपने कहा ईश्वर की कृपा भी बहुत अधिक है[14] ।

---

१३. अर्थात् ऐसे मामले जो देखने मे हमारे अपने अधिकार मे होते हैं, उपाय के साथ-साथ ईश्वर से उसकी सहायता की प्रार्थना भी करनी चाहिये । उसके सहयोग और समर्थन के बिना किसी मामले मे भी हमारा कोई उपाय सफल नही हो सकता । 'दुआ' का अर्थ यह है कि मनुष्य प्रत्येक दशा मे अपनी दुर्बलता और अधीनता और ईश्वर की शक्ति, सामर्थ्य और सर्वोच्चता को मान रहा है । अपनी अधीनता और मुहताजी और ईवश्र की बडाई का इकरार मनुष्य को अल्लाह् की मदद का हकदार बना देता है ।

१४. अर्थात् 'दुआ' करने वाला किसी भी रूप मे घाटे मे नही रहता या तो उसकी माँगी हुई चीज़ उसे दे दी जायेगी या यदि किसी कारण उसकी माँगी हुई चीज़ उसे न दी गई तो उसकी 'दुआ' उसके लिए आख़िरत की सामग्री बना दी जायेगी उस पर आने वाले किसी सकट को दूर कर दिया जायेगा । तिरमिज़ी मे हज़रत जाबिर रजि० से उल्लखित है कि आप ने कहा "जो व्यक्ति भी दुआ माँगता है अल्लाह् या तो उसकी माँगी हुई चीज़ उसे दे देता है या उस के सदृश उस से कोई बुराई रोक देता है जब तक कि किसी गुनाह या नाते-रिश्ते के विच्छेद की दुआ नही माँगता ।

दुआ के कुछ अधिनियम

عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ إِذَا دَعَا أَحَدُكُمْ
فَلَا يَقُلِ اللّٰهُمَّ اغْفِرْ لِي إِنْ شِئْتَ، ارْحَمْنِي إِنْ شِئْتَ، ارْزُقْنِي إِنْ شِئْتَ
وَلْيَعْزِمْ مَسْأَلَتَهُ إِنَّهُ يَفْعَلُ مَا يَشَاءُ وَلَا مُكْرِهَ لَهُ ——— بخاري

१. हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : जब तुम मे से कोई व्यक्ति दुआ माँगे तो यो न कहे कि हे अल्लाह ! मुझे क्षमा कर दे यदि तू चाहे, मुझ पर दया कर यदि तू चाहे, मुझे रोज़ी दे यदि तू चाहे बल्कि उसे निश्चय रूप से अपनी मांग रखनी चाहिए। निस्सन्देह वह करेगा वही जो चाहेगा। कोई उस पर दवाव डालने वाला नही है[1]। —बुखारी

२. हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : अल्लाह से दुआ मांगो तो इस विश्वास के साथ कि वह कबूल करेगा और जान रक्खो कि अल्लाह गाफिल और अनुपस्थित हृदय की 'दुआ' स्वीकार नही करता[2]। —तिरमिज़ी

३ हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि तुम में से जब कोई 'दुआ' करे, तो यह न कहे कि हे अल्लाह ! यदि तू चाहे तो मुझे क्षमा कर दे बल्कि दुआ निश्चय रूप से और पूरी रुचि के साथ मांगे इसलिए कि अल्लाह जो चीज प्रदान करता है उसका प्रदान करना उस के लिए कुछ भी दुष्कर नही होता। —मुस्लिम

---

१ अर्थात् दुआ मे किसी प्रकार की बेपरवाई नही होनी चाहिए। बन्दे को अपनी जरूरत निश्चय रूप मे अपने 'रब' के सामने पेश करनी चाहिए ताकि अल्लाह के सामने बन्दे की अधिक-से-अधिक विनम्रता और मुहताजी का प्रदर्शन हो सके।

२. अर्थात् 'दुआ' मांगते समय तुम्हे पूर्णरूप से अल्लाह की ओर ध्यान देना चाहिए। तुम्हे विश्वास हो कि अल्लाह दुआओ का कबूल करने वाला है। वह हमारी दुआओं को अकारथ नही जाने देगा। 'दुआ' यदि दुविधा और सन्देह की दशा मे माँगी गई, तो वह बिल्कुल बेजान होगी। ऐसी निष्प्राण 'दुआ' का क्या प्रभाव हो सकता है।

४. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० नें कहा बन्दे की दुआ कबूल की जाती है शर्त्त यह है कि वह किसी गुनाह की दुआ न करे, और जल्द बाजी से काम न ले। कहा गया जल्द बाजी क्या है ? हे अल्लाह के रसूल ! कहा यह है कि कोई कहे मैं ने बहुत 'दुआ' की, परन्तु देखता हूँ कि मेरी दुआ कबूल ही नही होती। और इस के पश्चात् वह थक जाए और दुआ माँगनी छोड दे[3]। —मुस्लिम

५. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : लोगो ! अल्लाह पवित्र एव उत्तम है, वह केवल पवित्र और उत्तम वस्तु को स्वीकार करता है। और अल्लाह ने इस मामले मे जो आदेश अपने 'रसूलो' को दिया है वही ईमान वालो को भी दिया है। उसनें कहा है "हे रसूलो ! पाक चीजे खाओ और अनुकूल (अच्छे) कर्म करो, तुम जो-कुछ करते हो मै भली-भाँति जानता हूँ"। और कहा है "हे लोगो जो 'ईमान' लाये हो खाओ पाक चीजे जो कुछ कि हम ने तुम्हे दी हैं"। इस के बाद आप ने एक ऐसे व्यक्ति का जिक्र किया जो लम्बा सफर कर के (किसी पवित्र स्थान पर) इस दशा में जाता है कि उस के बाल बिखरे हुए है और धूल से अटा हुआ है। आकाश की ओर हाथ उठा कर 'दुआ' करता है हे रब ! हे रब !... . .. और हालत यह है कि उस का खाना हराम है, उस का पीना हराम है, उस का वस्त्र हराम है, और हराम अहार से वह पला-बढ़ा है, फिर उस की दुआ कैसे क़बूल हो सकती है[4]। —मुस्लिम

३ बन्दे को 'दुआ' छोडनी नही चाहिए। उसे क्या मालूम कि अल्लाह को उसकी दुआ कब और किस रूप मे कबूल करना अभीष्ट है। कभी बन्दे ही के हितो के लिए उसकी 'दुआ' कबूल नही की जाती। ऐसी दशा मे उसे अपने अल्लाह से निराश नही होना चाहिए। जल्द बाजी से काम लेकर वह स्वय अपना ही काम बिगाड देगा। निरन्तर अपने स्वामी के द्वार का भिक्षुक बना रहना क्या उसके लिए कम श्रेय की बात है।

४. आज हम देखते है कि एक व्यक्ति इस बात की शिकायत कर रहा है कि उस की दुआएँ कबूल नही हुई और वह यह नही देखता कि वह जो-कुछ खा पी रहा है और जो कुछ पहन रहा है वह कहाँ तक हलाल है। ऐसी दशा मे उस की शिकायत को ठीक नही कहा जा सकता। पुरातन ग्रन्थो से भी यही मालूम होता है कि यदि कोई चाहता है कि उस की बात सुनी जाए तो वह गुनाहो से

६. हज़रत मुआज रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : जो मुस्लिम व्यक्ति पवित्रता की दशा में अल्लाह का ज़िक्र करता हुआ सो जाए फिर रात को जब वह जागे और सर्वोच्च अल्लाह से दुनिया और 'आख़िरत' की भलाई की याचना करे, तो अल्लाह उसकी इच्छित वस्तु उसे अवश्य प्रदान करता है[५]। —अबू दाऊद

७ हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा हमारा 'रब' हर रात को जब रात का अन्तिम तिहाई भाग शेष रहता है, तो दुनिया के आकाश[६] पर उतरता है[७] और कहता है . कौन व्यक्ति है जो मुझ से दुआ करे और मैं उस की दुआ कबूल करूँ ? कौन व्यक्ति है जो मुझ से माँगे मै उसे प्रदान करूँ ? कौन है जो मुझ से क्षमा की प्रार्थना करे मैं उसे क्षमा कर दूँ ?

—बुख़ारी, मुस्लिम, अबू दाऊद, तिरमिज़ी, इब्न माजा

८. अबू उमामा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० से पूछा गया कौन सी दुआ ज्यादा कबूल होती है ? अल्लाह के रसूल ! आपने कहा जो रात के अन्तिम घड़ियों में की जाए[८] और जो 'फ़र्ज़' नमाज़ों के पश्चात् की जाए[९]। —तिरमिज़ी

बाज आ जाए। यसायाह (*Isaih*) मे एक स्थान पर कहा गया है . "तुम्हारी बदकारी ने तुम्हारे और खुदा के बीच जुदाई कर दी है और तुम्हारे गुनाहो ने उसे तुम से छिपा दिया ऐसा कि वह नही सुनता। —५९ : २

५ रात का यह समय विशेष रूप से दुआ के कबूल होने का समय होता है। इस तनहाई और शान्ति के वातावरण मे यदि बन्दा अल्लाह की ओर रुजू होता है और उसके सामने अपनी जरूरते पेश करता है, तो अल्लाह की दयालुता निश्चय ही उस की ओर आकृष्ट होकर रहेगी और उसकी दुआएँ कबूल होगी।

६ निकटतम आकाश जिसे ससार के लोग देखते है।

७ अर्थात् विशेष रूप से दुनिया वालो की ओर उस की दयालुता आकृष्ट होती है। उस समय जो भी 'दुआ' माँगी जाए उसके कबूल होने की अधिक सम्भावना होती है।

८ इसलिए कि उस समय बिस्तर का आराम छोड कर अल्लाह को याद करना और उससे 'दुआएँ' माँगना शुद्ध हृदयता के बिना सम्भव नही और जो 'दुआ' मन की शुद्धता के साथ माँगी जाएगी अवश्य कबूल होगी।

९. 'नमाज़' और विशेष रूप से 'फ़र्ज़' नमाज़ 'रब' की प्रसन्नता का कारण बनती

९. हजरत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . 'अजान' और 'इकामत' के बीच मे जो दुआ की जाती है वह कभी रद्द नही की जाती[10] । कहा गया . उस समय हम क्या माँगे ? हे अल्लाह के रसूल ! कहा . सर्वोच्च अल्लाह से दुनिया और 'आख़िरत' का कुशल क्षेम माँगो । —अबू दाऊद, तिरमिज़ी

१०. सह्ल बिन सअद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . दो समय ऐसे हैं जिन में 'दुआ' रद्द नही की जाती । अज़ान के समय, और युद्ध के समय जब लोग एक दूसरे से चिमट जाएँ[11] ।
—अबू दाऊद, मालिक

११. हजरत इब्न अब्बास से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा . पाँच 'दुआएँ' ऐसी है कि वे क़बूल कर ली जाती है पीडित की 'दुआ' जब तक कि वह (जालिम से) बदला न ले ले, 'हज्ज' करने वाले कि 'दुआ' जब तक कि वह घर वापस न आ जाए, 'जिहाद' करने वाले की दुआ जब तक कि 'जिहाद' से निवृत न हो जाए, बीमार की दुआ जब तक कि अच्छा न हो जाए (या उस की मृत्यु न हो जाए) भाई की अपने

है । इसलिए 'नमाज़' के पश्चात् 'दुआ' के कबूल होने की अधिक सम्भावना होती है । यह 'दुआ' माँगने का एक उत्तम समय भी होता है । 'फर्ज' अदा करने के बाद बन्दे को अल्लाह का विशेष सामीप्य प्राप्त होता है । अल्लाह की दयालुता उस से अत्यन्त निकट होती है । ऐसे अवसर पर 'दुआ' का कबूल होना एक स्वाभाविक बात है ।

१०. अबू दाऊद की एक रिवायत से मालूम होता है कि वर्षा के समय भी 'दुआ' रद्द नही की जाती । मुवत्ता की एक 'रिवायत' मे आया है "दो समय ऐसे है कि जिन मे आकाश के द्वार खुल जाते हैं और बहुत कम ऐसे 'दुआ' माँगने वाले होते हें जिन की दुआएँ इन अवसरो पर रद्द की जाती है, उस 'अज़ान' के समय जो 'नमाज़' के लिए दी जाए और जब अल्लाह की राह मे लोग पक्तबद्ध हो ।"

'रिवायतो' मे दुआवो के कबूल होने के जिन समयो का उल्लेख किया गया है, वे विशिष्ट दयालुता के अवतरण के समय हे । इन समयो मे विशेष रूप से लोग अल्लाह की ओर ध्यान देते है इसलिए अल्लाह भी इन समयो मे माँगी हुई दुआवो को रद्द नही करता ।

११. अर्थात् युद्ध छिड जाए ।

भाई के हक में परोक्ष दुआ । फिर आप ने कहा कि दुआओ में सब से जल्द कबूल होने वाली भाई की परोक्ष दुआ है । —अल-बैहकी दावातुल कबीर

१२. हज़रत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा · बन्दा सजदे की दशा मे अपने 'रब' से सब से अधिक निकट होता है, अत (सजदे की दशा मे) अधिकतम 'दुआ' किया करो[12] । —मुस्लिम

१३ हज़रत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तीन 'दुआएँ' ऐसी हैं जो कबूल हो कर रहती है उन के कबूल होने मे कोई सन्देह नही पीडित की दुआ, मुसाफिर की दुआ, वह दुआ जो बाप अपने बेटे के लिए करे[13] । —अबू दाऊद, नसई

१२. 'सजदे' की दशा मे बन्दा अल्लाह से सब से अधिक निकट होता है । 'सजदा' सर्वथा सामीप्य है । यह बन्दे के लिए अपने 'रब' से दुआ करने का समय होता है ।

१३. इन दुआओ मे हृदय की शुद्धता विद्यमान होती है, ये दुआएँ दिल से निकली हुई होती है इसलिए ये सीधे 'अर्श' तक पहुँचती है । माता-पिता के दिलो मे अपनी औलाद के लिए जो हित-कामना होती है वह विदित है । मुसाफिर और पीडित व्यक्ति के दिल टूटे हुए होते हैं । यह दिल की विनयशीलता अल्लाह की दयालुता को अपनी ओर आकृष्ट करने की बड़ी शक्ति रखती है । पीडित व्यक्ति 'काफिर' ही क्या न हो उसकी सुन ली जाती है । इसीलिए पीडित की आह से बचने की ताकीद की गई है । और कहा गया है कि पीडित की 'दुआ' और अल्लाह के बीच कोई आवरण नही होता । फिर पीडित व्यक्ति जिस चीज़ की याचना करता है अल्लाह की 'सुन्नत' (विधान, नियम) की माँग भी वही होती है । दोनो की एकता अपना नतीजा दिखाकर रहती है ।

एक 'रिवायत' मे है कि आपने कहा तीन आदमी की दुआ रद्द नही होती रोज़ेदार की 'दुआ' जबकि वह रोज़ा 'इफतार' करे । न्यायशील नायक (हाकिम) की दुआ और पीडित की दुआ । उस (पीडित) की दुआ को अल्लाह बादल के ऊपर उठाता है और उसके लिए आकाश के द्वार खोले जाते हैं और 'रब' कहता है "कसम है मेरी इज्ज़त (प्रभुत्व) की, मैं अवश्य तेरी सहायता करूँ ।"

एक दूसरी 'रिवायत' से मालूम होता है कि पाँच व्यक्तियो की दुआ विशेष रूप से कबूल होती है पीडित की दुआ जब तक कि वह बदला न ले

१४. इब्न अम्र बिन आस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : कोई 'दुआ' उस दुआ से ज्यादा कबूल नही होती जो अनुपस्थित व्यक्ति किसी अनुपस्थित व्यक्ति के लिए करता है[१४]।

—अबू दाऊद, तिरमिजी

१५. उबैय बिन कअब रजि० कहते हैं कि नबी सल्ल० जब किसी व्यक्ति के लिए 'दुआ' करते, तो पहले अपने लिए 'दुआ' करते[१५]।

—तिरमिज़ी

१६. हजरत जाबिर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : तुम अपने हक में या अपनी औलाद के हक मे या अपने सेवकों के हक में या अपने माल और सम्पति के हक में बददुआ (शाप) न करो, कहीं ऐसा न हो कि वह घडी 'दुआ' के कबूल होने की हो और तुम्हारी 'दुआ' कबूल हो जाए[१६]। —अबू दाऊद

हज्ज करने वाले की दुआ जब तक वह लौटकर वापस न आ जाए, 'जिहाद' करने वाले की दुआ जब तक कि वह शहीद होकर दुनिया से लापता न हो जाए। बीमार की दुआ जब तक कि वह स्वस्थ न हो जाए, और एक भाई की दूसरे भाई के लिए परोक्ष रूप मे दुआ। (बैहकी)

१४. मुस्लिम और अबू दाऊद की एक 'रिवायत' मे हजरत अबू दरदा रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा "जब भी कोई मुस्लिम बन्दा अपने भाई के लिए परोक्ष रूप से दुआ करता है तो 'फ़िरिश्ता' कहता है कि तेरे लिए भी ऐसा ही हो (जैसा तू ने अपने भाई के लिए माँगा)"। परोक्ष रूप से माँगी हुई दुआ मे मन की शुद्धता काम कर रही होती है इसलिए ऐसी दुआ मे स्वीकृति और बरकत की विशेष गरिमा पाई जाती है।

१५. अल्लाह को बन्दे की विनयशीलता, बन्दगी और दासता अत्यन्त प्रिय है। बन्दगी और विनम्रता का पूर्ण प्रदर्शन इस बात मे है कि बन्दा दूसरो के लिए दुआ माँगने से पहले अल्लाह के सामने अपनी मुहताजी और जरूरत पेश करे।

१६. जिसके परिणाम स्वरूप तुम मुसीबत मे पड जाओ और फिर पश्चाताप करो। इसके अतिरिक्त यो भी बददुआ या शाप कोई अच्छी चीज नही है। तिरमिज़ी की एक 'रिवायत' मे जो हज़रत आइशा रज़ि० से उल्लिखित है ये शब्द आए हैं : "जिस किसी ने उस पर बददुआ की जिसने उस पर ज़ुल्म किया हो उस ने अपना बदला ले लिया।

१७ हजरत अबू हुररा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम में से कोई मृत्यु की कामना न करे और न शीघ्र मृत्यु आने की 'दुआ' करे क्योंकि जब मृत्यु आ जायेगी तो उस के कर्म का सिलसिला टूट जायेगा और 'ईमान' वाले व्यक्ति के लिए उस की आयु भलाई ही में वृद्धि का कारण बनती है[१७]। —मुस्लिम

१८ हज़रत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : मृत्यु की दुआ न करो और न उसकी कामना करो। यदि किसी व्यक्ति के लिए ऐसी 'दुआ' जरूरी ही हो गई हो, तो वह यों कहे : हे अल्लाह ! मुझे जीवित रख जब तक मेरे लिए जीना अच्छा हो और मुझे (दुनिया से) उठा ले जब मरना मेरे लिए अच्छा हो। —नसई

१९ हजरत उमर बिन ख़त्ताब रजि० कहते है कि एक बार मैं ने 'उमरा' के लिए 'नबी' सल्ल० से इजाजत चाही[१८]। आप ने इजाजत दी और कहा . मेरे छोटे भाई हमें भी अपनी 'दुआ' में सम्मिलित करना और हमे भूल न जाना। हजरत उमर रजि० कहते है कि इस बात के बदले सारी दुनिया मुझे दे दी जाए, तो मुझे कोई प्रसन्नता नही हो सकती (मुझे आप की यह बात सारी दुनिया से बढ कर प्रिय है)। —अबू दाऊद, तिरमिजी

२०. हजरत आइशा रज़ि० कहती हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० व्यापक दुआएँ पसन्द करते थे और उस के अतिरिक्त को छोड देते थे[१९]। —अबू दाऊद

---

१७ कुछ लोग दुखो से तग आकर मृत्यु की कामना और 'दुआ' करने लगते है, इस से रोका जा रहा है। बुख़ारी और मुस्लिम की एक 'रिवायत' मे स्पष्ट शब्दो मे कहा गया है "तुम मे से कोई किसी पेश आ जाने वाली तकलीफ के कारण मृत्यु की कामना न करे।"

मृत्यु की 'दुआ' और कामना करना एक तो 'ईमान' वालो के धैर्य और सहनशीलता के प्रतिकूल है दूसरे जब मनुष्य जीवित है तो वह 'तौबा', मन के झुकाव और अनुकूल कर्मों के द्वारा 'आख़िरत' के लिए ज्यादा-से-ज्यादा सामग्री जुटा सकता है जिसका मृत्यु के पश्चात् अवसर नही रहता। 'मोमिन' यदि वास्तव मे 'मोमिन है, तो जीवन की घडियाँ उसके लिए भलाई का ही कारण बनेंगी।

१८ अर्थात् 'उमरा' करने के लिए मक्का जाने की इजाजत चाही।

१९ नबी सल्ल० की दुआओ की व्यापकता का अनुमान आपकी उन दुआओ से

२१ हजरत इब्न मसऊद रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० को तीन बार दुआ माँगना और तीन बार क्षमा याचना करना बहुत पसन्द था[२०] । —अबू दाऊद

२२. फुजाला बिन अब्दुल्लाह कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने सुना कि एक व्यक्ति 'नमाज' के बाद 'दुआ' माँग रहा है लेकिन उस ने नबी सल्ल० पर 'दरूद' नही भेजा । आप ने कहा इस व्यक्ति ने (दुआ माँगने मे) जल्दी की । फिर आप ने उस व्यक्ति को बुला कर कहा तुम मे से जब कोई व्यक्ति 'नमाज' पढ़ चुके, तो पहले उसे अल्लाह की 'हम्द' और प्रशसा करनी चाहिए फिर नबी सल्ल० पर 'दरूद' भेजना चाहिए, फिर इस के पश्चात् जो 'दुआ' चाहे माँगे[२१] ।

—तिरमिजी, अबू दाऊद, नसई, इब्न माजा

२३. हजरत अनस रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने 'दुआ' मे अपने दोनो हाथो को इतना उठाया कि मैं ने आप की बगलो की सफैदी देख ली[२२] । —बुखारी

किया जा सकता है जो 'हदीस' की किताबो मे उल्लिखित हुई है। आपकी कुछ दुआएँ हम आगे दे रहे हैं ।

२० दुआओ को कई बार दोहराने मे खास फायदा यह महसूस होता हैं कि इस प्रकार बन्दे की ओर से अधिक-से-अधिक विनय भाव का प्रदर्शन होता है जो बन्दगी का मूल तत्व है । इसके अतिरिक्त 'दुआ' के शब्दो को एक से अधिक बार दोहराने से दिल अवश्य जबान के साथ हो जाता है और फिर 'दुआ' शक्तिहीन नही रहती ।

२१ अर्थात् आपने 'दुआ' माँगने का तरीका बताया कि आदमी दुआ माँगने से पहले अल्लाह की 'हम्द' और गुणगान करे और उसके रसूल पर 'दरूद' और सलाम भेजे उसके बाद अल्लाह से दुआएँ करे । यह तो बहुत अशिष्टता की बात होगी कि मुँह खोलते ही कोई झट अपना मतलब पेश करने लग जाए । सभ्यता की बात यह है कि जिस से दुआ माँगी जा रही है पहले उसके गुणो का वर्णन हो और उसका आभार स्वीकार किया जाए फिर इस अवसर पर यह भी आवश्यक है कि आदमी अपने महान् उपकारकर्ता नबी सल्ल० को न भूले । आप से हार्दिक और आत्मिक सम्बन्ध की माँग है कि आप पर 'दरूद' और सलाम भेजा जाए और आपके हक मे अल्लाह से 'दुआ' की जाए ।

२२ सह्ल इब्न सअद रज़ि० की एक 'रिवायत' से मालूम होता है कि आप दोनो

२४. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिसे यह वात पसन्द हो कि कठिनाइयो के समय अल्लाह उस की 'दुआ' को कबूल करे तो उसे चाहिए कि आराम और खुशहाली में 'दुआ' माँगे[२३]। ---तिरमिजी

२५. हजरत उमर रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० जब 'दुआ' में दोनो हाथ उठाते थे, तो उन को उस समय तक न लौटाते जब तक अपने मुँह पर न फेर लेते[२४]। —तिरमिजी

हाथो की उँगलियों के सिरो को दोनो मूँढो के बराबर करते, फिर 'दुआ' माँगते थे। (बैहकी)।

२३. जो लोग केवल परेशानी और कठिनाई मे अल्लाह मे 'दुआ' माँगते है उनका अल्लाह से सम्बन्ध कमज़ोर होता है। इसके विपरीत जो लोग खुशहाली और तगी प्रत्येक दशा मे अल्लाह से 'दुआ' करते रहते हैं उनका सम्बन्ध अपने 'रब' से अत्यन्त दृढ होता है। उन्हे अपने 'रब' पर विश्वास और भरोसा भी अधिक होता है इसलिए उनकी दुआएँ दूसरो की दुआओ के मुकावले मे ज्यादा प्रभावकारी होती हैं।

२४ दूसरी 'रिवायतो' से मालूम होता है कि नवी सल्ल० जव किसी आपत्ति और मुसीवत के समय 'दुआ' करते, तो हाथ फैलाकर माँगते जिस प्रकार कोई भिक्षुक किसी दाता के सामने हाथ फैलाता है। 'दुआ' के वाद हाथो को अपने चेहरे पर फेरने मे इस वात की ओर सकेत है कि अल्लाह के समक्ष फैले हुए ये हाथ खाली नही लौटे हैं। अल्लाह की दयालुता और वरकतो का कुछ-न-कुछ अश इन्हे अवश्य प्राप्त हुआ है।

'हदीस' से यह भी मालूम होता है कि दुआ को 'आमीन' (अर्थात् हे अल्लाह मेरी यह 'दुआ' कबूल कर!) कह कर समाप्त करना चाहिए।

———

नमाज की कुछ दुआएँ

१ हजरत अली रज़ि० से उल्लिखित है कि जब अल्लाह के रसूल सल्ल० 'नमाज' के लिए खड़े होते और एक 'रिवायत' मे है कि जब आप नमाज आरम्भ करते तो 'तकबीर' (अल्लाहु अकबर अर्थात् अल्लाह सबसे बडा है) कहते और फिर कहते .

وَجَّهْتُ وَجْهِيَ لِلَّذِي فَطَرَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ حَنِيْفًا وَّمَا اَنَا مِنَ الْمُشْرِكِيْنَ
اِنَّ صَلَاتِيْ وَنُسُكِيْ وَمَحْيَايَ وَمَمَاتِيْ لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَمِيْنَ، لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَبِذٰلِكَ
اُمِرْتُ وَاَنَا مِنَ الْمُسْلِمِيْنَ. اَللّٰهُمَّ اَنْتَ الْمَلِكُ لَا اِلٰهَ اِلَّا اَنْتَ، اَنْتَ رَبِّيْ وَاَنَا
عَبْدُكَ ظَلَمْتُ نَفْسِيْ وَاعْتَرَفْتُ بِذَنْبِيْ فَاغْفِرْ لِيْ ذُنُوْبِيْ جَمِيْعًا اِنَّهٗ لَا يَغْفِرُ
الذُّنُوْبَ اِلَّا اَنْتَ. وَاهْدِنِيْ لِاَحْسَنِ الْاَخْلَاقِ لَا يَهْدِيْ لِاَحْسَنِهَا اِلَّا اَنْتَ وَ
اصْرِفْ عَنِّيْ سَيِّئَهَا لَا يَصْرِفُ عَنِّيْ سَيِّئَهَا اِلَّا اَنْتَ. لَبَّيْكَ وَسَعْدَيْكَ وَالْخَيْرُ
كُلُّهٗ فِيْ يَدَيْكَ وَالشَّرُّ لَيْسَ اِلَيْكَ، اَنَا بِكَ وَاِلَيْكَ تَبَارَكْتَ وَتَعَالَيْتَ
اَسْتَغْفِرُكَ وَاَتُوْبُ اِلَيْكَ

"मैंने एकाग्र होकर अपना मुख उसकी ओर कर लिया जिस नें आकाशों और धरती को पैदा किया ओर मैं 'मुश्रिकों' में से नही हूँ[1] निश्चय ही मेरी नमाज और मेरी कुरबानियाँ ओर और मेरा जीना और मेरा मरना अल्लाह, सारे संसार के 'रब' के लिए है[2] —उसका कोई शरीक नही—मुझे इसी का हुक्म दिया गया है और मैं 'मुस्लिमो' (अल्लाह के आज्ञाकारी लोगों) में से हूँ[3] ।"

---

१. दे० सूरा अल-अन आम आयत ७९ ।

२. दे० सूरा अल-अनआम आयत १६२ ।

३ अर्थात् मैं अल्लाह ही को अपना 'इलाह' (पूज्य प्रभु) मानता हूँ, झूठे 'इलाहो' से मेरा कोई नाता नही । मैं उन लोगो मे से नही हूँ जो अल्लाह के सिवा दूसरो को अपना आराध्य बनाते और दूसरों को प्रभुत्व मे शरीक ठहराते है । 'इलाह' और प्रभु तो वही एक है जो आकाश और धरती सब का सृष्टि-कर्ता है । अत मेरा सम्पूर्ण जीवन उसी एक प्रभु की सेवा मे अर्पण है जो हम सब का स्वामी और पालनकर्त्ता है । मेरी नमाज और कुरबानियाँ भी उसी के लिए हैं और जीना और मरना भी । जीवन का यह मार्ग मैंने यो ही अटकल से नही ग्रहण किया

"हे अल्लाह ! तू सम्राट है, तेरे सिवा कोई 'इलाह' (पूज्य) नहीं, तू मेरा 'रब' है , मै तेरा बन्दा हूँ मैंने अपने-आप पर जुल्म किया है, मुझे अपने गुनाह स्वीकार है, तू मेरे सारे गुनाहों को क्षमा कर दे। निस्सन्देह तेरे सिवा कोई गुनाहो को क्षमा करने वाला नहीं[४] ।"

है कि इसमे भूल-चूक की सम्भावना हो, बल्कि इस पथ का ज्ञान हमे स्वय हमारे स्वामी ने दिया है। उसी के आदेशानुसार हम ने शिर्क (अनेकेश्वर वाद) को छोड कर 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) को अपनाया है।

इस हदीस मे नमाज के मुकाबले मे 'जीना' और कुरबानी के मुकाबले मे 'मरना' शब्द आया है। इसमे इस बात की ओर सकेत है कि नमाज़ हमारे जीवन मौर कुरबानी हमारी मृत्यु की व्याख्या है। नमाज़ इस बात की प्रतिज्ञा है कि हम अपने सम्पूर्ण जीवन मे अल्लाह ही की बन्दगी करेंगे। हमारा पूरा जीवन उसी के आज्ञापालन मे व्यतीत होगा। और 'कुरबानी' इसका प्रत्यक्ष प्रदर्शन और इस बात की प्रतिज्ञा है कि हमारी जान अल्लाह की राह मे कुरबान है। ऋग्वेद मे भी आया है : "जिसने जीवन तथा शक्ति दी है तथा जिसकी आज्ञा का सारे देवता (फिरिश्ते) पालन करते हैं, तथा अमरता जिसकी छाया एव मृत्यु जिसकी दासी है उसके अतिरिक्त इस यज्ञ का बलि किसे अर्पित करे।"

४. इसका अर्थ यह नही कि नबी सल्ल० से कोई गुनाह हो गया था जिसके लिए आप अल्लाह से क्षमा की प्रार्थना कर रहे हैं बल्कि बात यह है कि दोष और कसूर का सम्बन्ध आदमी के अपने पद से होता है। नबी सल्ल० से कोई गुनाह नही हुआ फिर भी आप (सल्ल०) अल्लाह के आगे गिडगिडा रहे है और उस से क्षमा की प्रार्थनायें कर रहे हैं कि प्रभु ! मेरी खताओ को क्षमा कर मैं खताकार हूँ। आप सल्ल० समझते थे कि जो कुछ हमे करना चाहिये था वह हम से नही हो सका, अल्लाह की राह मे जितनी कोशिश करनी चाहिये थी वह हम नही कर सके। आप अपना तन-मन-धन सब कुछ अल्लाह की राह मे लगा कर भी समझ रहे हैं कि अल्लाह का हक हमसे अदा नही हुआ। यह बन्दगी अथवा दास्यभाव का सबसे उच्च सोपान है। अल्लाह की महानता और उसकी बडाई का जब आदमी को पूरा एहसास हो जाता है तो उसका यही हाल होता है कि सब कुछ करने के बाद भी उसे अपना कसूर ही दीख पडता है। अल्लाह के आगे झुक कर मनुष्य वास्तव मे अपने को ऊँचा उठाता है। नबी सल्ल० बन्दगी के उच्च पद पर थे, इसका अनुमान भली-भाँति आप की दुआओ और प्रार्थनाओ से होता है। अल्लाह के मार्ग में अपने को थका कर

"और उत्तम स्वभाव की ओर मेरा मार्ग-प्रदर्शन कर तेरे सिवा कोई उस की ओर मेरा पथ-प्रदर्शन करने वाला नही है[५]। और बुरे स्वभाव को मुझसे दूर रख, तेरे सिवा कोई बुरे स्वभाव को मुझसे दूर नही कर सकता[६]।"

"मै तेरी सेवा में उपस्थित हूँ, और तेरा हुकम वजा लाने को तैयार हूँ। भलाई सब-की सब तेरे ही हाथ में है और बुराई तेरी ओर नही। मैं तेरे ही बल पर हूँ और तेरी ही ओर रुजू हूँ[७]। तू बरकत वाला और उच्च है। मैं तुझ से क्षमा की प्रार्थना करता हूँ और तेरे आगे 'तौबा' करता हूँ।"

और जब रुकू में जाते तो कहते .

اَللّٰهُمَّ لَكَ رَكَعْتُ وَبِكَ اٰمَنْتُ وَلَكَ اَسْلَمْتُ خَشَعَ لَكَ
سَمْعِيْ وَبَصَرِيْ وَمُخِّيْ وَعَظْمِيْ وَعَصَبِيْ

भी समझाते थे कि उसकी बन्दगी का हक अदा नही हो रहा है। जब मनुष्य का हृदय इतना शुद्ध और निर्मल हो जाता है जभी अल्लाह उसके बारे मे कह सकता है कि अपने बन्दे का हमने सब कुछ क्षमा किया। नबी सल्ल० के बारे मे कुरआन ने स्पष्ट शब्दो मे बता दिया है कि अल्लाह ने आपका सब कुछ क्षमा कर दिया है (दे० सूरा अल-फतह आयत २) फिर भी आप अपने रब से ग़ाफिल नही हुये आपको इसी की चिन्ता लगी रहती थी कि अपने रब से अपने गुनाहो और ईमान वालो के गुनाहो को क्षमा करायें। भक्ति एव दास्यभाव के सरल एवं कोमल स्वभाव मे कितना सौदर्य पाया जाता है!

दूसरी 'हदीसो' मे मालूम होता है कि नबी सल्ल० प्रत्येक दिन सत्तर-सत्तर और सौ-सौ बार अल्लाह से क्षमा की प्रार्थना करते थे।

५ इस्लाम कहते ही इसे है कि आदमी अपने स्वभाव और चरित्र की दृष्टि से उत्तम और पूर्ण बन सके। इस्लाम मे मनुष्य से किसी ऐसी बात की माँग नही की गई है जो उसकी प्रकृति के विरुद्ध या उसके वास्तविक स्वभाव के प्रतिकूल हो। यदि मनुष्य का स्वभाव ठीक हो और वह विकृत और दूषित न हो तो आदमी अल्लाह का भी हक अदा करेगा और अल्लाह के बन्दो के प्रति उसका जो दायित्व होता है उसे भी वह न भूलेगा उसका व्यवहार सभी के साथ अच्छा होगा।

६ यदि तेरी कृपा न हो तो अच्छे स्वभाव और शालीनता की रक्षा न हो सके फिर तो मनुष्य का सत्यानाश ही होकर रहे।

७ अर्थात् मेरा भरोसा तुझी पर है और मैं तुझ से भलाई ही की आशा रखता हूँ।

"हे अल्लाह ! मैं तेरे आगे झुक गया, तुझ पर ईमान ले आया, और अपने को तेरी सेवा मे अर्पण किया । विनम्रतापूर्वक झुक गये तेरे आगे मेरे कान, मेरे नेत्र मेरी मज्जा, मेरी हड्डियाँ और मेरे पट्ठे"

और जब सिर उठाते तो कहते :

اَللّٰهُمَّ رَبَّنَا لَكَ الْحَمْدُ مِلْأَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَمَا بَيْنَهُمَا
وَمِلْأَ مَا شِئْتَ مِنْ شَيْءٍ بَعْدُ.

"हे अल्लाह ! हमारे 'रब' । तेरे ही लिए प्रशसा (हम्द) है आकाशों और धरती को भर देने वाली[८], और इनके सिवा जो तू चाहे उसे भर देने वाली ।"

और जब सजदा करते तो कहते

اَللّٰهُمَّ لَكَ سَجَدْتُ وَبِكَ اٰمَنْتُ وَلَكَ اَسْلَمْتُ، سَجَدَ وَجْهِيَ لِلَّذِيْ
خَلَقَهٗ وَصَوَّرَهٗ وَشَقَّ سَمْعَهٗ وَبَصَرَهٗ تَبَارَكَ اللّٰهُ اَحْسَنُ الْخَالِقِيْنَ.

"हे अल्लाह ! मैंने तेरे ही लिए सजदा किया' मैं तुझ पर 'ईमान' लाया और अपने को तेरी सेवा मे अर्पण किया । मेरा चेहरा उसके आगे सजदे में गिरा जिसने उसे पैदा किया, उसे रूप प्रदान किया और उसमें कान और नेत्र बनाये । बहुत बरकत वाला है अल्लाह उत्तम सृष्टि कर्ता !"

फिर 'तशहहुद' और सलाम के बीच पढते

اَللّٰهُمَّ اغْفِرْ لِيْ مَا قَدَّمْتُ وَمَا اَخَّرْتُ وَمَا اَسْرَرْتُ وَمَا اَعْلَنْتُ وَمَا اَسْرَفْتُ
وَمَا اَنْتَ اَعْلَمُ بِهٖ مِنِّيْ، اَنْتَ الْمُقَدِّمُ وَاَنْتَ الْمُؤَخِّرُ لَا اِلٰهَ اِلَّا اَنْتَ.

---

८ अर्थात् समस्त प्रशसा का एकमात्र अधिकारी तू ही है । आकाश और धरती तेरी ही प्रशसा की ध्वनि से गूंज रहे है । तेरी जितनी भी प्रशसा की जाये वह कम ही है ।

हे अल्लाह ! क्षमा कर दे मेरा वह गुनाह जो मैंने पहले किया और जो बाद मे किया, जिसे मैंने छिप कर किया और जिसे मैंने प्रत्यक्षत किया, और जो कुछ मैंने ज्यादती की और जिसे तू मुझसे ज्यादा जानता है। तू ही आगे बढाने वाला है और तू ही पीछे हटाने वाला है कोई 'इलाह' नही सिवाये तेरे[९] । —मुस्लिम

यहाँ यह बात भा सामने रहनी चाहिए कि अल्लाह ने हम पर जो उपकार किये है उनके प्रति आभार-प्रदर्शन का उत्तम ढग भी उसका गुणवान अथवा उसकी प्रशसा ही है ।

९. इस हदीस मे नबी सल्ल० की जिन दुआओ का उल्लेख हुआ है उन पर विचार करने से साफ मालूम होता है कि ये शब्द किसी पवित्र हृदय से ही निकले हैं। ये बोल उस आत्मा के हैं जिसे सत्य का पूर्ण ज्ञान प्राप्त है। जो ईश-प्रेम में डूबी हुई है जिसे यह चिन्ता चैन लेने नही देती कि स्वामी की जैसी सेवा करनी चाहिये थी वह सेवा नही हो सकी। प्रभु का जैसा गुणगान होना चाहिये था वह हुआ नही। इस 'हदीस' से जहाँ नबी सल्ल० की अन्तर्वेदना जाग्रत रूप मे लक्षित होती है और हमे ज्ञान होता है कि हमारी मनोभावना और आन्तरिक दशा क्या होनी चाहिये वही इस हदीस से यह भी मालूम होता है कि इस्लाम मे 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) का अर्थ कितना व्यापक है। इस 'हदीस से पता चलता है कि अल्लाह न केवल यह कि सारे ससार का सृष्टिकर्ता, पालनकर्ता और पूज्य है बल्कि वही हमारा शासक और स्वामी भी है, हमे अपने जीवन मे उसी के आदेशो का पालन करना है और यही जीवन की सफलता का एकमात्र साधन है। हृदय की कोमलता और हृदय मे पाई जाने वाली प्रेरणाओ का कोई अर्थ ही नही बन पाता जब तक कि हम उन्हे अपने वास्तविक स्वामी की सेवा मे अर्पण न कर दे। दास्यभाव और भक्ति भावना से ही हमे आत्मिक तृप्ति मिल सकती है। हमारे जीवन को एक ऐसे अमर ज्योति की तलाश है जो उसके पथ को आलोकित कर सके। यह अमर ज्योति अपने को ईश्वर के अर्पण करने के बाद ही प्राप्त होती है। यह हमारी आत्मा का स्वभाव है कि वह अपनी ही सीमा मे पूर्ण नही हो सकती। उसकी पूर्णता आत्म समर्पण मे है। ईश्वर के लिए मन मे पाया जाने वाला दास्यभाव या विनयशीलता और दिल का झुकाव, ये जीवन की उच्चतम उमगो का सार है और प्रिय एव महान् सत्ता के सामीप्य का वास्तविक अभिप्राय भी। हमारे जीवन मे वास्तविक सौन्दर्य इन्ही से आता है। नबी सल्ल० ने अपनी 'नमाज' मे विभिन्न समयो मे विभिन्न चीजे पढी है। किसी ने उनमे से किसी चीज को अपने लिए

२. हज़रत आइशा रज़ि० कहती हैं कि एक रात (मेरी आँख खुली तो) मैं ने अल्लाह् के रसूल सल्ल० को बिस्तर पर न पाया, मैं आप को ढूंढने लगी मेरा हाथ आप के पाँव के तलवों पर पड़ा, उस समय आप 'सजदे' में थे और आप के दोनो पांव खड़े थे (जैसे कि सजदे की दशा में होते हैं) और आप कह रहे थे :

اَللّٰهُمَّ اِنِّیْ اَعُوْذُ بِرِضَاكَ مِنْ سَخَطِكَ وَبِمُعَافَاتِكَ مِنْ عُقُوْبَتِكَ
وَاَعُوْذُ بِكَ مِنْكَ لَا اُحْصِیْ ثَنَاءً عَلَيْكَ اَنْتَ كَمَا اَثْنَيْتَ عَلٰی نَفْسِكَ

"हे अल्लाह् ! मैं तेरी अप्रसन्नता से तेरी प्रसन्नता की शरण लेता हूँ, और तेरे दण्ड से तेरी क्षमा की शरण लेता हूँ, और तेरी पकड़ से तेरी शरण लेता हूँ। पूर्ण रूप से तेरी प्रशंसा करने का मुझे सामर्थ्य नहीं, तू वैसा ही है जैसा कि तू ने अपनी प्रशंसा स्वयं की है"[10]। —मुस्लिम

३ हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० 'तकबीर' और 'तिलावत' (कुरआन-पाठ) के बीच में कुछ मौन रहते थे। मैंने एक दिन कहा : हे अल्लाह् के रसूल ! मेरे माता-पिता आप पर निछावर ! आप 'तकबीर' और कुरआन पाठ के बीच में मौन रह कर क्या पढ़ते हैं ? आप ने कहा मैं यह पढ़ता हूँ

खास कर लिया किसी ने किसी चीज़ को यदि कोई व्यक्ति आपकी सभी दुआओ को याद कर ले और उन्हे बदल-बदल कर पढ़ता रहे तो ज्यादा अच्छा है। जिस प्रकार विभिन्न समयो मे लोग कुरआन की विभिन्न 'सूरतें' और 'आयतें' पढ़ते हैं उसी तरह यदि हम अपनी नमाज़ो मे विचित्र समयो मे नबी सल्ल० की सिखाई हुई विभिन्न दुआएँ भी पढ़ें तो हमारी 'नमाज़ें' और अधिक स्वभाविक 'इबादत' बन सकती है। नमाज़ो के केवल प्रथा मात्र बन जाने का दूसरी बातो के साथ यह भी एक कारण है कि हम ने नबी सल्ल० की दुआओ मे से एक पर बस कर लिया है।

लम्बी दुआएँ नबी सल्ल० अधिकतर रात की नफ्ल नमाज़ो मे पढ़ते थे।

१० यह 'हदीस' बताती है कि नबी सल्ल० किसी हालत मे भी बन्दगी के हक को नही भूलते थे। अल्लाह् की महानता और बड़ाई की जो माँग होती है उसकी ओर से कभी असावधान नही होते थे।

اَللّٰهُمَّ بَاعِدْ بَيْنِيْ وَبَيْنَ خَطَايَايَ كَمَا بَاعَدْتَ بَيْنَ الْمَشْرِقِ وَ
الْمَغْرِبِ اَللّٰهُمَّ نَقِّنِيْ مِنَ الْخَطَايَا كَمَا يُنَقَّى الثَّوْبُ الْاَبْيَضُ مِنَ
الدَّنَسِ اَللّٰهُمَّ اغْسِلْ خَطَايَايَ بِالْمَاءِ وَالثَّلْجِ وَالْبَرَدِ

"हे[11] अल्लाह ! मेरे और मेरी खताओ के बीच इतनी दूरी कर दे जितनी दूरी तू ने पूर्व और पश्चिम के बीच रक्खा है[12]। हे अल्लाह ! मुझे खताओं से इस तरह पाक कर दे जिस तरह सफेद कपडे को मैल से पाक किया जाता है। हे अल्लाह ! मेरी खताओं को पानी, वर्फ और ओले से धो दे[13]।"

—बुखारी, मुस्लिम

४ हजरत आइशा रजि० कहती हैं कि नबी सल्ल० 'नमाज' में यह दुआ करते थे

११ नबी सल्ल० ने अपनी 'नमाज' मे विभिन्न समयो मे विभिन्न दुआएँ पढी है, साधारणतया लोग 'तकबीर' और 'किरअत' (कुरआन-पाठ) के बीच

سُبْحَانَكَ اللّٰهُمَّ وَبِحَمْدِكَ وَتَبَارَكَ اسْمُكَ وَتَعَالٰى جَدُّكَ وَلَا اِلٰهَ غَيْرُكَ.

पढते हैं "हम तेरी 'तसबीह' करते हैं हे अल्लाह ! तेरी 'हम्द' (प्रशसा) के साथ, बरकत वाला है तेरा नाम उच्च है तेरा गौरव, तेरे सिवा कोई 'इलाह' (इष्ट पूज्य) नही।"

यह भी उन्ही 'ज़िक्रो' मे से है जो नबी सल्ल० अपनी 'नमाज़' मे पढते थे, यदि कोई आपकी पढी हुई सारी दुआएँ याद कर ले और उन्हे बदल-बदल कर पढ़े तो ज्यादा अच्छा है।

१२ अर्थात् जिस तरह पूर्व से पश्चिम दूर है और पश्चिम से पूर्व, उसी प्रकार मुझे भी खताओ से दूर रख।

१३. अर्थात् जिस तरह कपडे का मैल विभिन्न चीजो से धोया जाता है। उसे पानी से धोते हैं, पानी मौजूद न हो तो बर्फ से और वह न मिले तो ओलो से धोते हैं उसी तरह तू मेरी खताओ और गुनाहो को अपनी विभिन्न प्रकार की रहमतो और दयालुताओ से धो दे। इसका यह अर्थ भी निकलता है कि खताओ से आदमी 'जहन्नम' का भागी बनता है और 'जहन्नम' मे आग और आँच है, तो

اللّٰهُمَّ إِنِّي أَعُوذُ بِكَ مِنْ عَذَابِ الْقَبْرِ وَأَعُوذُ بِكَ مِنْ فِتْنَةِ الْمَسِيحِ الدَّجَّالِ وَأَعُوذُ بِكَ مِنْ فِتْنَةِ الْمَحْيَا وَالْمَمَاتِ. اللّٰهُمَّ إِنِّي أَعُوذُ بِكَ مِنَ الْمَأْثَمِ وَمِنَ الْمَغْرَمِ

"हे अल्लाह ! मैं तेरी पनाह लेता हूँ कब्र की यातना से, मसीह दज्जाल के फितने से और जीवन और मृत्यु के सभी फितने से । हे अल्लाह ! मैं तेरी पनाह लेता हूँ गुनाह और कर्ज से[१४] ।"

५ हजरत अबू बक्र रज़ि० कहते हैं कि मैं ने कहा हे अल्लाह के रसूल ! मुझे कोई दुआ सिखाइए जिस को मैं अपनी 'नमाज' में माँगू । आप ने कहा कहो :

اللّٰهُمَّ إِنِّي ظَلَمْتُ نَفْسِي ظُلْمًا كَثِيرًا وَلَا يَغْفِرُ الذُّنُوبَ إِلَّا أَنْتَ فَاغْفِرْ لِي مَغْفِرَةً مِنْ عِنْدِكَ وَارْحَمْنِي إِنَّكَ أَنْتَ الْغَفُورُ الرَّحِيمُ.

"हे अल्लाह ! मैंने अपने-आप पर बड़ा जुल्म किया, गुनाहो को तेरे सिवा कोई क्षमा करने वाला नहीं, अपनी विशेष कृपा से मुझे क्षमा

इसी आँच के सम्बन्ध से पानी बर्फ और ओले का जिक्र किया गया । अर्थात् मेरी खताओ को अपनी रहमतो से धो दे जो 'जहन्नम' की आग को ठंढी कर कर देने वाली हैं ।

१४ मुस्लिम की एक 'रिवायत' मे जिसके रिवायत करने वाले हजरत अबूहुररा रज़ि० हैं, नबी सल्ल० ने कहा है "जब तुम मे से कोई आखिरी 'तशहहुद' पढकर निवृत्त हो, तो उसको चार चीजो से अल्लाह की पनाह माँगनी चाहिए 'जहन्नम' की यातना से, कब्र की यातना से, जिन्दगी और मौत के फितनो से और 'दज्जाल' की बुराई से, इस रिवायत से मालूम हुआ कि इस दुआ के पढने का खास मौका नमाज के अन्तिम 'कअदा' मे तशहहुद के बाद सलाम से पहले है । यह दुआ अत्यन्त व्यापक अर्थ लिये हुये है । इस मे दुनिया और 'आखिरत' के समस्त दुखो और आपत्तियो से सुरक्षा की अल्लाह से प्रार्थना की गई है ।

कर दे और मुझ पर दया कर, तू क्षमा शील और दयावान है"[१५]।

६ शद्दाद बिन औस रज़ि० कहते है कि नबी सल्ल० 'नमाज़' मे भी कहते थे :

اَللّٰهُمَّ اِنِّیْ اَسْئَلُكَ الثَّبَاتَ فِی الْاَمْرِ وَالْعَزِیْمَةَ عَلَی الرُّشْدِ وَ اَسْئَلُكَ شُكْرَ نِعْمَتِكَ وَحُسْنَ عِبَادَتِكَ وَاَسْئَلُكَ قَلْبًا سَلِیْمًا وَلِسَانًا صَادِقًا وَاَسْئَلُكَ مِنْ خَیْرِ مَا تَعْلَمُ وَاَعُوْذُ بِكَ مِنْ شَرِّ مَا تَعْلَمُ وَاَسْتَغْفِرُكَ لِمَا تَعْلَمُ.

"हे अल्लाह ! मैं माँगता हूँ तुझ से 'दीन' (धर्म) मे स्थिरता और भलाई और मार्ग-दर्शन पर दृढता, साहस और माँगता हूँ तुझ से तेरी (प्रदान की हुई) नेमतों के प्रति कृतज्ञता व्यज्ञप्ति और तेरी अच्छी 'इबादत' और माँगता हूँ तुझ से चगा दिल, सच्ची जबान और माँगता हूँ तुझ से वह भलाई जिसका तुझे ज्ञान है और तेरी पनाह लेता हूँ उस बुराई से जिसका तुझे ज्ञान है और क्षमा याचना करता हूँ तुझ से उन गुनाहो की जो तू जानता है। —नसई

७ अब्दुल्लाह इब्न मसऊद रज़ि० कहते हैं कि नबी सल्ल० 'तहशहुद' के बाद हमें यह दुआ सिखाते थे

اَلِّفْ اَللّٰهُمَّ عَلَی الْخَیْرِ بَیْنَ قُلُوْبِنَا وَاَصْلِحْ ذَاتَ بَیْنِنَا وَاهْدِنَا سُبُلَ السَّلَامِ وَنَجِّنَا مِنَ الظُّلُمٰتِ اِلَی النُّوْرِ وَجَنِّبْنَا الْفَوَاحِشَ مَا ظَهَرَ مِنْهَا وَ بَطَنَ وَبَارِكْ لَنَا فِیْ اَسْمَاعِنَا وَاَبْصَارِنَا وَقُلُوْبِنَا وَاَزْوَاجِنَا وَذُرِّیَّاتِنَا وَتُبْ عَلَیْنَا اِنَّكَ اَنْتَ التَّوَّابُ الرَّحِیْمُ وَاجْعَلْنَا شَاكِرِیْنَ لِنِعْمَتِكَ قَابِلِیْهَا وَاَتِمَّهَا عَلَیْنَا

१५. नमाज़ मे 'दुआ' का खास मौका 'नमाज़' के अन्त मे सलाम से पहले है इसलिए अवश्य ही हज़रत अबू बक्र रज़ि० ने इसी मौके के लिए 'दुआ' सिखाने के

"जोड दे हे अल्लाह हमारे दिलों को भलाई पर और हमारे आपस के सम्बन्धों को ठीक कर। और हमें सलामती की राहों पर चला और हमें अँधेरों से मुक्ति दे कर प्रकाश की ओर ले आ और खुले-छिपे अश्लील कर्मों से हमें दूर रख और हमारे कानों, हमारी आँखो, हमारे दिलो, हमारी पत्नियो और हमारी सन्तति में बरकत दे और हम पर कृपा दृष्टि बनाये रख, तू बडा कृपा करने वाला दयावान है। हमें तू अपनी नेमतों और एहसानों के प्रति कृतज्ञ और उचित रूप से उनका स्वागत करने वाला बना और नेमते हम पर पूरी कर"[१६]। —अबू दाऊद।

८ हज़रत ज़ैद बिन अरक़म रज़ि० कहते हैं कि नबी सल्ल० हर 'नमाज़' के बाद कहते थे

اَللّٰهُمَّ رَبَّنَا وَرَبَّ كُلِّ شَيْءٍ اَنَا شَهِيْدٌ اَنَّكَ اَنْتَ الرَّبُّ وَحْدَكَ لَا شَرِيْكَ لَكَ. اَللّٰهُمَّ رَبَّنَا وَرَبَّ كُلِّ شَيْءٍ اَنَا شَهِيْدٌ اَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُكَ وَرَسُوْلُكَ. اَللّٰهُمَّ رَبَّنَا وَرَبَّ كُلِّ شَيْءٍ اَنَا شَهِيْدٌ اَنَّ الْعِبَادَ كُلَّهُمْ اِخْوَةٌ. اَللّٰهُمَّ رَبَّنَا وَرَبَّ كُلِّ شَيْءٍ اِجْعَلْنِيْ مُخْلِصًا لَّكَ وَاَهْلِيْ فِيْ كُلِّ سَاعَةٍ مِّنَ الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ يَاذَا الْجَلَالِ وَالْاِكْرَامِ اِسْمَعْ وَاسْتَجِبْ اَللّٰهُ اَكْبَرُ الْاَكْبَرُ اَللّٰهُ نُوْرُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ.

लिए नबी सल्ल० से निवेदन किया होगा और नबी सल्ल० ने इसी मौक़े के लिए उन्हे यह दुआ सिखाई होगी। इस दुआ से मालूम हुआ कि आदमी अल्लाह का कितना ही आज्ञाकारी क्यो न हो उसे अपने आपको खताकार ही समझना चाहिए। और अल्लाह से क्षमा याचना करते रहना चाहिए। बन्दा कितनी ही बन्दगी क्यो न करे बन्दगी का हक़ कहाँ अदा होता है।

१६ अर्थात् हम तुझ से हर भलाई के अभिलाषी हैं। हमे वाह्य एव आन्तरिक हर प्रकार की नेमते प्रदान कर, हमे अपना कृतज्ञ बन्दा बना। ऐसा न हो कि तेरी ओर से तो उपकारो की वर्षा हो और हमारी ओर से कृतघ्नता का प्रदर्शन हो। इससे वढकर अन्धता और पथ-भ्रष्टता की वात और क्या हो सकती है कि बन्दा अपने वास्तविक उपकारकर्ता के उपकारो को भुला दे और उसके हक़ का कुछ आदर न करे।

"हे अल्लाह ! हे हमारे 'रब' ! और हर चीज के 'रब' ! मैं इस बात की गवाही देता हूँ कि अकेला तू ही 'रब' है, तेरा कोई सहभागी नही, हे अल्लाह ! हमारे 'रब' ! और हर चीज के 'रब' ! मैं गवाह हूँ सब बन्दे भाई-भाई है। हे अल्लाह ! हमारे 'रब' ! और हर चीज के 'रब' ! मुझे और मेरे घर वालो को दुनिया और 'आखिरत' की एक-एक घडी के लिए (सदैव के लिए) अपना विश्वासपात्र और वफादार बना ले[१७], हे प्रतापवान और उदार ! मेरी प्रार्थना सुन ले और स्वीकार कर, अल्लाह सब से बडा है, अल्लाह आकाशो और धरती का प्रकाश है[१८]।—अबू दाऊद

९ मुआज बिन जबल रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने मेरा हाथ पकड कर कहा . हे मुआज ! अल्लाह की कसम मुझे तुम से प्रेम है मैं तुम्हें वसीयत करता हूँ[१९] कि हर 'नमाज' के बाद यह दुआ अवश्य पढो

اَللّٰهُمَّ اَعِنِّيْ عَلٰى ذِكْرِكَ وَشُكْرِكَ وَحُسْنِ عِبَادَتِكَ.

'हे अल्लाह ! अपने 'जिक्र' और अपनी अच्छी 'इबादत' के सिलसिले मे मेरी सहायता कर[२०]।" —अहमद, अबूदाऊद, नसई

१७ अर्थात् तू हमे अपना, केवल अपना और हमेशा के लिए अपना बना ले। मेरी निष्ठा और वफादारी मे कभी कोई अन्तर न हो।

१८ अर्थात् सम्पूर्ण विश्व अल्लाह ही के प्रकाश से प्रकाशमान और स्थिर है। इस विस्तृत विश्व मे जहाँ-कही कोई सुन्दरता और प्रकाश पाया जाता है वह किसी भी रूप मे क्यो न हो उसका वास्तविक स्रोत और उदगम अल्लाह के अतिरिक्त और कोई नही है। —सूरा अन-नूर ३५

१९ अर्थात् विशेष रूप से मैं उस प्रेम के कारण जो मुझे तुम से है तुम को यह वसीयत और ताकीद करता हूँ।

२०. यह 'दुआ' अत्यन्त सक्षिप्त होने के बावजूद बडी महत्व पूर्ण और सुन्दर है। इस दुआ मे अल्लाह से उन चीज़ो की प्रार्थना की गई है जो जीवन का सार है, जिन के बिना जीवन का कोई अर्थ नही रहता और न उसमे कोई आकर्षण शेष रहता है।

एक रिवायत मे "हे अल्लाह !' के बजाय "हे रब !" आया है।

१० हज़रत सौबान रज़ि० कहते है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० सलाम फेरते तो तीन बार क्षमा याचना करते[21] फिर प्रार्थना करते

اَللّٰهُمَّ اَنْتَ السَّلَامُ وَمِنْكَ السَّلَامُ تَبَارَكْتَ وَتَعَالَيْتَ يَاذَا الْجَلَالِ وَالْاِكْرَامِ

"हे अल्लाह ! तू 'सलाम' (शान्ति-स्वरूप) है और तेरी ही ओर सलामती है। तू बरकत वाला और उच्च है, हे प्रतापवान उदारता वाले !"
—मुस्लिम, अबूदाऊद, तिरमिजी, नसई, इब्नमाजा

११ हज़रत मुगीरा बिन शोबा रज़ि० कहते है कि नबी सल्ल० हर फर्ज 'नमाज़' के बाद 'दुआ' करते थे

لَا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ لَهُ الْمُلْكُ وَلَهُ الْحَمْدُ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ اَللّٰهُمَّ لَا مَانِعَ لِمَا اَعْطَيْتَ وَلَا مُعْطِيَ لِمَا مَنَعْتَ وَ لَا يَنْفَعُ ذَا الْجَدِّ مِنْكَ الْجَدُّ.

'अल्लाह् के सिवा कोई 'इलाह' (पूज्य) नहीं, वह अकेला है कोई उसका सहभागी नही, उसी का राज्य है। वही प्रशंसा का अधिकारी है और उसे हर चीज का सामर्थ्य प्राप्त है। हे अल्लाह ! तू जो-कुछ प्रदान करे उसे कोई रोक नही सकता, और जिस चीज के न देने का तू फैसला करे उसे कोई दे नही सकता। और किसी प्रतापशाली को उसका प्रताप तेरे मुकाबले में कुछ लाभदायक नही हो सकता[22]। —बुख़ारी, मुस्लिम

२१ अर्थात् तीन बार "मैं क्षमा की इच्छुक हूँ" कहते।

२२ अमीर मुआविया रज़ि० ने हज़रत मुगीरा बिन शोबा रज़ि० को पत्र लिखा था कि आप मुझे कोई ऐसी बात लिखे जो आप ने अल्लाह के रसूल सल्ल० से सुनी हो इसके उत्तर मे हज़रत मुगीरा रज़ि० ने यह दुआ लिख कर भेजी। एक रावी (उल्लेख कर्त्ता) का बयान है कि मैंने अमीर को मिंबर पर बैठकर लोगो को इस दुआ की शिक्षा देते और उन्हे इसकी ओर प्रेरित करते सुना।

१२. हज़रत अब्दुल्लाह इब्न अब्बास रज़ि० कहते हैं कि जब नबी सल्ल० रात में 'तहज्जुद' पढ़ने खड़े होते, तो यह 'दुआ' करते

اَللّٰهُمَّ لَكَ الْحَمْدُ اَنْتَ قَيِّمُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَمَنْ فِيْهِنَّ وَلَكَ الْحَمْدُ
اَنْتَ نُوْرُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَمَنْ فِيْهِنَّ، وَلَكَ الْحَمْدُ اَنْتَ مَلِكُ السَّمٰوٰتِ
وَالْاَرْضِ وَمَنْ فِيْهِنَّ. وَلَكَ الْحَمْدُ اَنْتَ الْحَقُّ وَوَعْدُكَ الْحَقُّ وَلِقَاءُكَ
حَقٌّ وَقَوْلُكَ حَقٌّ وَالْجَنَّةُ حَقٌّ وَالنَّارُ حَقٌّ وَالنَّبِيُّوْنَ حَقٌّ وَمُحَمَّدٌ حَقٌّ وَ
السَّاعَةُ حَقٌّ، اَللّٰهُمَّ لَكَ اَسْلَمْتُ وَبِكَ اٰمَنْتُ وَعَلَيْكَ تَوَكَّلْتُ وَاِلَيْكَ
اَنَبْتُ وَبِكَ خَاصَمْتُ وَاِلَيْكَ حَاكَمْتُ فَاغْفِرْ لِيْ مَا قَدَّمْتُ وَمَا اَخَّرْتُ
وَمَا اَسْرَرْتُ وَمَا اَعْلَنْتُ وَمَا اَنْتَ اَعْلَمُ بِهٖ مِنِّيْ. اَنْتَ الْمُقَدِّمُ وَاَنْتَ
الْمُؤَخِّرُ لَا اِلٰهَ اِلَّا اَنْتَ وَلَا اِلٰهَ غَيْرُكَ.

"हे अल्लाह ! प्रशंसा (हम्द) तेरे ही लिए है, तू ही कायम रखने वाला है आकाशों और धरती का और उन सब का जो उन मे है और प्रशंसा का अधिकारी तू ही है। तू ही प्रकाश है आकाशों और धरती का और उन सबका जो उनमें हैं और प्रशंसा तेरे ही लिए है, तू ही आकाशो और धरती का सम्राट है और जो उनमें हैं उन सबका। प्रशसा तेरे ही लिए है, तू हक (सत्य) है, तेरा वादा हक है, (मरने के पश्चात्) तेरी मुलाक़ात हक है, तेरा कहा हुआ हक है, 'जन्नत' हक है, ('जहन्नम' की) आग हक है, सारे 'नबी' हक हैं, मुहम्मद हक हैं, और वह घडी ('कियामत') हक है। हे अल्लाह ! मैंने अपने-आप को तुझे सौंपा, तुझ पर 'ईमान'-लाया, तुझ पर भरोसा किया, तेरी ओर रुजू किया, और तेरे ही बल पर मैं (सत्य के विरोधियो से) लडा और तुझ से ही फैसला चाहता हूँ। अत तू क्षमा कर दे वे सब गुनाह जो मुझ से पहले हुये हो और जो पीछे हुये, जो मैंने छिप कर किये, जो मैंने खुल कर किये और जिन के बारे में तू मुझ से अधिक जानता है, तू ही आगे बढाने वाला है, और तू ही पीछे डालने वाला है। तू ही 'इलाह' (पूज्य) है तेरे

सिवा कोई 'इलाह' नहीं[२३]। —बुख़ारी, मुस्लिम

१३. हज़रत अबू मूसा अशअरी रज़ि० का बयान है कि नबी सल्ल० 'दुआ' किया करते थे

اَللّٰهُمَّ اغْفِرْ لِيْ خَطِيْئَتِيْ وَجَهْلِيْ وَإِسْرَافِيْ فِيْ أَمْرِيْ وَمَا أَنْتَ أَعْلَمُ بِهٖ مِنِّيْ، اَللّٰهُمَّ اغْفِرْ لِيْ جِدِّيْ وَهَزْلِيْ وَخَطَائِيْ وَعَمْدِيْ وَكُلُّ ذٰلِكَ عِنْدِيْ. اَللّٰهُمَّ اغْفِرْ لِيْ مَا قَدَّمْتُ وَمَا أَخَّرْتُ وَمَا أَسْرَرْتُ وَمَا أَعْلَنْتُ وَمَا أَنْتَ أَعْلَمُ بِهٖ مِنِّيْ، أَنْتَ الْمُقَدِّمُ وَأَنْتَ الْمُؤَخِّرُ وَأَنْتَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ.

"हे अल्लाह ! क्षमा कर मेरी ख़ता को, नादानी को, कामों में ज्यादती को और उस (गुनाह) को जिस का ज्ञान तुझे मुझ से बढ़ कर है। हे अल्लाह ! क्षमा कर मेरी उस ख़ता को जिसे मैंने गभीरता से किया हो और जिस को मैंने हँसी-मज़ाक में किया हो और जिस को भूल-चूक में किया हो और जिसे जानते-बूझते किया हो और ये सब ख़ताएँ मेरे पास हैं। हे अल्लाह ! क्षमा कर वे सब गुनाह जो मैंने छिप कर किये और जो मैंने खुल कर किये, और जिस के बारें मे तू मुझ से ज्यादा जानता है। तू ही आगे बढ़ाने वाला है, और तू ही पीछे डालने वाला है, और तुझे हर चीज़ का सामर्थ्य प्राप्त है —बुख़ारी, मुस्लिम

२३. इमाम नौवी बयान करते है कि नबी सल्ल० की रात की दुआओ की विशेषता यह होती थी कि आप उसमे अल्लाह के हको को स्वीकार करते, उसके सच्चा होने का इकरार करते और उसकी शुभ सूचनाओ और डराओ को याद करते, मृत्यु के पश्चात् जीवित होने को और 'जन्नत' और 'जहन्नम' के सत्य होने की पुष्टि करते थे। इस तरह की एक दुआ मोजम कबीर और मुस्तदरक मे हज़रत ज़ैद बिन साबित से भी उल्लिखित है। हज़रत ज़ैद रज़ि० का बयान है कि नबी सल्ल० ने यह 'दुआ' सिखाई थी और उन्हे हुक्म दिया था कि उसे अपने घर वालो को सिखाओ और प्रत्येक दिन उन्हे इस की ओर प्रेरित करते रहो।

प्रातः समय और सायंकाल की दुआएँ

१ हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० अपने 'असहाब' (साथियो) को सिखाते थे कि जब तुम में से किसी की सुबह हो, तो उसे कहना चाहिए

اَللّٰهُمَّ بِكَ اَصْبَحْنَا وَبِكَ اَمْسَيْنَا وَبِكَ نَحْيَا وَبِكَ نَمُوْتُ وَاِلَيْكَ الْمَصِيْرُ

"हे अल्लाह तेरी सहायता से हम ने सुबह की, और तेरी ही सहायता से हम ने शाम की, और तेरी ही सहायता से हम जीवित है और तेरे ही आदेश के अधीन हमारी मृत्यु है और तेरी ही ओर पहुँचना है।" और इसी तरह जब वह शाम करे तो कहे .

اَللّٰهُمَّ بِكَ اَمْسَيْنَا وَبِكَ اَصْبَحْنَا وَبِكَ نَحْيَا وَبِكَ نَمُوْتُ وَاِلَيْكَ النُّشُوْرُ

"हे अल्लाह ! तेरी ही मदद से हम ने शाम की, और तेरी ही सुबह की और तेरी ही सहायता से हमने सहायता से हम जीवित हैं और फैसले के अधीन हमारी मृत्यु तेरे ही है और तेरे ही पास फिर उठ कर हाजिर होना है[1]" । —अबूदाऊद, तिरमिजी

---

१ मानव-जीवन से सुबह और शाम का आना बडा महत्व रखता है । समय की विभिन्नता जीवन को उकताहट से छुटकारा दिलाती है । मानव को अल्लाह की इस कृपा की अनुभूति होनी आवश्यक है । फिर इसी के साथ ध्यान को इस ओर भी जाना चाहिए कि सुवह और शाम की तरह हमारे जीवन की सुवह और शाम भी अल्लाह के हुक्म के अधीन है । एक दिन दुनिया से हमे प्रस्थान करना है और अल्लाह के पास हाजिर होना है, कहने के लिए तो यह एक छोटी सी दुआ है जिसे सुवह और शाम पढने की शिक्षा नवी सल्ल० ने दी है, लेकिन देखिए किस प्रकार जीवन की वास्तविकताओ को इस मे समेट लिया गया है । जीवन को सही दिशा पर रखने के लिए इस दुआ का पढते रहना एक उत्तम उपाय है । यही विशेषता नबी सल्ल० की सिखाई हुई सभी दुआओ मे पाई जाती है ।

२ हजरत हुजैफा रजि० का बयान है कि नबी सल्ल० जब रात को अपने बिछौने पर जाते तो अपना हाथ कपोल के नीचे रख लेते फिर कहते

اللهم باسمك اموت واحيى

"हे अल्लाह ! तेरे ही नाम से मेरी मृत्यु भी सम्बद्ध है और जीवन भी" और जब सो कर उठते तो कहते

الحمد لله الذي احيانا بعد ما اماتنا واليه النشور

"हम्द' (प्रशसा) उस अल्लाह के लिए है जिस ने हमे मृत्यु मे ग्रस्त लेने के पश्चात् हमे जीवन दिया और उसी की ओर (मरने के पश्चात्) दोबारा उठ कर उपस्थित होना है[२] । —बुखारी, मुस्लिम

३ हजरत बरा बिन आजिब कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने मुझ से कहा जब तुम अपने बिस्तर पर जाओ तो पहले 'वजू करो' जिस तरह 'नमाज' के लिए 'वजू' करते हो, फिर अपने दाहिने पहलू लेट जाओ और कहो ·

---

२ अर्थात् जिस तरह अल्लाह हमे सोने मे जगाता है उसी तरह वह हमे मृत्यु के पश्चात् दोबारा जीवन प्रदान करेगा । हमे उसके समक्ष अपने भले-बुरे कर्मों के साथ उपस्थित होना है । मृत्यु और निद्रा मे बडा साम्य पाया जाता है, इसीलिए निद्रा को मृत्यु कहा गया ।

बुखारी और मुस्लिम मे हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है कि हर रात को नबी सल्ल० जब बिस्तर पर आते, तो दोनो हथेलियो को जोड लेते और सूरा अल-इखलास, अल-फलक और अन-नास पढकर उनको फूँकते और अपने शरीर पर जहाँ तक हो सकता उन्हे फेर लिया करते थे । इसका आरम्भ सिर, चेहरे और शरीर के अगले भाग से करते । ऐसा आप तीन बार करते थ

اللّٰهُمَّ اَسْلَمْتُ نَفْسِىْ اِلَيْكَ وَوَجَّهْتُ وَجْهِىْ اِلَيْكَ فَوَّضْتُ اَمْرِىْ اِلَيْكَ وَاَلْجَأْتُ ظَهْرِىْ اِلَيْكَ رَهْبَةً وَّرَغْبَةً اِلَيْكَ لَا مَلْجَا وَلَا مَنْجَا مِنْكَ اِلَّا اِلَيْكَ، اٰمَنْتُ بِكِتَابِكَ الَّذِىْ اَنْزَلْتَ وَنَبِيِّكَ الَّذِىْ اَرْسَلْتَ.

"हे अल्लाह मैंने अपने-आप को बिल्कुल आपके समर्पण कर दिया, अपने मुख को आप की ओर प्रवृत किया, अपने सब कार्य आप को सौंपे, आप ही को अपना पृष्टपोषक बनाया, आप से डरते और आशा करते हुए। आप के सिवा कोई शरणगार और बचाव नही जहाँ आप (की पकड) से बच कर कोई निकल सके। मैं 'ईमान' लाया आप की किताब पर जिसे आप ने अपने 'नबी' पर उतारा और ('ईमान' लाया) आप के 'नबी' पर जिसे आपने भेजा"।[3] सो यदि तुम्हारी मृत्यु आ गई तो वह 'दीने फितरत' (स्वाभाविक धर्म) पर होगी। इन शब्दों को (सोने से पहले) अपना अन्तिम बोल बनाओ[4]। —बुखारी, मुस्लिम

३ नबी सल्ल० की इस शिक्षा ने आराम और विश्राम को भी किस प्रकार 'नमाज़' की तरह पवित्र बना दिया। नमाज़ के लिए 'वज़ू' ज़रूरी है। बिस्तर पर जाने के लिए 'वज़ू' की शिक्षा दी जा रही है। जिस तरह 'नमाज़' की आत्मा और वास्तविकता अल्लाह की ओर प्रवृत्ति और अल्लाह की याद है उसी तरह इस दुआ मे निद्रा और विश्राम को भी अल्लाह की ओर ध्यान और आत्म समर्पण से अभिव्यजित किया गया है।

४ किसी व्यक्ति ने यदि अपने-आप को एक अल्लाह के आगे डाल दिया, और उसी को अपना सरक्षक और शरणदाता बना लिया और उसके उतारे हुए मार्ग-दर्शन पर ईमान' लाया, वो वास्तव मे उसने उस 'दीन' (धर्म) को अपना लिया जो सही और उस का स्वाभाविक 'दीन' है। जिससे विमुख होना वास्तव मे अपनी प्रकृति और स्वभाव से विमुख होना है। इस 'हदीस' मे जिस 'दुआ' की शिक्षा दी गई है उसमे उस हृदय-स्थिति और मनोभाव का प्रदर्शन हुआ है जो एक ईश-भक्त व्यक्ति का मनोभाव होना चाहिए। यदि उसी पर मनुष्य की मृत्यु आ जाए तो निश्चय ही उसकी मृत्यु उसके अपने स्वाभाविक धर्म पर होगी।

मजलिस की दुआ

१ हजरत अब्दुल्लाह इब्न उमर कहते है कि बहुत कम ऐसा होता था कि नवी सल्ल० किसी मजलिस से उठे और अपने 'असहाब' (साथियो), के लिए यह दुआ न करे

اَللّٰهُمَّ اَقْسِمْ لَنَا مِنْ خَشْيَتِكَ مَا تَحُوْلُ بِهٖ بَيْنَنَا وَبَيْنَ مَعْصِيَتِكَ
وَمِنْ طَاعَتِكَ مَا تُبَلِّغُنَا بِهٖ جَنَّتَكَ وَمِنَ الْيَقِيْنِ مَا تُهَوِّنُ بِهٖ عَلَيْنَا مُصِيْبَاتِ
الدُّنْيَا وَمَتِّعْنَا بِاَسْمَاعِنَا وَاَبْصَارِنَا وَقُوَّتِنَا مَا اَحْيَيْتَنَا وَاجْعَلْهُ
الْوَارِثَ مِنَّا وَاجْعَلْ ثَارَنَا عَلٰى مَنْ ظَلَمَنَا وَانْصُرْنَا عَلٰى مَنْ عَادَانَا
وَلَا تَجْعَلْ مُصِيْبَتَنَا فِيْ دِيْنِنَا وَلَا تَجْعَلِ الدُّنْيَا اَكْبَرَ هَمِّنَا وَلَا مَبْلَغَ
عِلْمِنَا وَلَا تُسَلِّطْ عَلَيْنَا مَنْ لَّا يَرْحَمُنَا.

"हे अल्लाह हमें नसीव कर अपना डर इतना कि जिस से तू हमारे और अपनी अवज्ञा के बीच आडे आये और अपना आज्ञापालन इतना कि जिस से तू हमें अपनी 'जन्नत' में पहुँचा दे। और विश्वास इतना कि जिस से तू दुनिया की मुसीबतो को हमारे लिए तुच्छ बना दे। ओर जब तक हमे जीवित रख हमें हमारे काना, हमारी आँखों, और हमारी शक्ति से सम्पन्न रख और इन्हे अन्त तक बाकी रख। और हमारे बदला लेने के आवेश के रुख को उन्ही की ओर रख जो हम पर जुल्म करे। और जो हमारी दुश्मनी के तत्पर हों उस पर हमें प्रभुत्व प्रदान कर और हमारे 'दीन' (धर्म) को हानि पहुँचाने वाली चीजो से हमें सुरक्षित रख और ससार को हमारी सब से बडी चिन्ता और हमारे ज्ञान की पहुँच न बना। और हम पर ऐसे व्यक्ति को नियुक्त कर जो हम पर दया न करे"[५]।

—तिरमिजी

---

५ एक 'रिवायत' मे है कि जब अल्लाह के रसूल सल्ल० किसी मजलिस से उठने का इरादा करते तो अन्त मे कहते थे

"महिमावान है तू हे अल्लाह! 'हम्द' (प्रशसा) है तेरे लिए। मै गवाही देता हूँ कि तेरे सिवा कोई 'इलाह' (पूज्य) नही। मैं तुझ से क्षमा का इच्छुक

सफ़र की दुआ

१ हजरत अब्दुल्लाह इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० जब सफर पर जाते समय ऊँट पर सवार होते, तो तीन बार "अल्लाहु अकबर" (अल्लाह सब से बडा है)[1] कहते, इस के पश्चात् कहते

سُبْحَانَ الَّذِي سَخَّرَ لَنَا هٰذَا وَمَا كُنَّا لَهُ مُقْرِنِينَ وَإِنَّا إِلَى رَبِّنَا لَمُنْقَلِبُونَ، اللّٰهُمَّ إِنَّا نَسْأَلُكَ فِي سَفَرِنَا هٰذَا الْبِرَّ وَالتَّقْوَى وَمِنَ الْعَمَلِ مَا تَرْضَى اللّٰهُمَّ هَوِّنْ عَلَيْنَا سَفَرَنَا هٰذَا وَاطْوِ لَنَا بُعْدَهُ اللّٰهُمَّ أَنْتَ الصَّاحِبُ فِي السَّفَرِ وَالْخَلِيفَةُ فِي الْأَهْلِ وَالْمَالِ. اللّٰهُمَّ إِنِّي أَعُوذُ بِكَ مِنْ وَعْثَاءِ السَّفَرِ وَكَآبَةِ الْمَنْظَرِ وَسُوءِ الْمُنْقَلَبِ فِي الْمَالِ وَالْأَهْلِ

'महिमावान है वह जिस ने हमारे लिए इस (सवारी) को काम मे लगाया, और हम इसे वश मे करने की शक्ति नही रखते थे, और निश्चय ही हम अपने 'रब' की ओर लौटने वाले है[2]। हे अल्लाह ! अपने इस सफर मे हम तुझ से नेकी, 'तकवा' (ईश-भय) और उस कर्म के लिए प्रार्थना करते है जो तेरी प्रसन्नता का कारण हो। हे अल्लाह ! इस सफर को हमारे लिए आसान कर दे और इस की दूरी को कम कर दे। हे अल्लाह ! तू ही इस सफर मे साथी है और हमारे पीछे तू ही हमारे घर

हूँ और तेरे आगे 'तौबा' करता हूँ। किसी मजलिस से उठने पर आदमी यदि लम्बी दुआ न पढ सके तो यह सक्षिप्त दुआ ही पढ ले। नबी सल्ल० की सिखाई हुई दुआएँ यदि कोई समझ बूझ कर पढे, तो वे उसके जीवन को बदलने और सुधारने के लिए काफी है।

१ इसमे इस बात की ओर सकेत मिलता है कि मनुष्य को हर ऊँचाई पर अल्लाह की उच्चता और उसकी बडाई का ध्यान होना चाहिए। ऊँट क्या इस समय तो कितने ही लोग तेज़ रफ्तार वायुयान मे सवार होकर आकाश मे तैरते है लेकिन ऐसे लोग बहुत कम है जो इस अवसर पर अल्लाह की बडाई और उसकी उच्चता का स्मरण करते हो।

२ अर्थात् जिस प्रकार आज हम सफर कर रहे है उसी तरह एक दिन हमे एक

वाला और माल के लिए हमारा स्थानापन्न है"। हे अल्लाह ! मै सफर की मशक्कत और कष्ट से और दुखद दृश्य से और इस बात से कि लौट कर मैं माल और परिवार को बुरी दशा मे देखूँ तेरी पनाह चाहता हूँ"।

और जब आप (सफर से) वापस होते उस समय भी ये शब्द कहते और इन में इतना और बढाते

آيِبُونَ تَائِبُونَ عَابِدُونَ لِرَبِّنَا حَامِدُونَ.

"हम वापस लौटने वाले हैं, 'तौबा' करने वाले हैं, 'इबादत' करने वाले हैं और अपने 'रब' की 'हम्द' (प्रशसा) करने वाले हैं"। —मुस्लिम

२ इब्न उमर से उल्लिखित है कि 'नबी' सल्ल० जब किसी व्यक्ति को रुखसत करते तो कहते

أَسْتَوْدِعُ اللهَ دِينَكَ وَأَمَانَتَكَ وَاخِرَ عَمَلِكَ.

दूसरा सफर भी करना है और वह है ससार से अल्लाह की ओर हमारा प्रस्थान। इस महत्वपूर्ण सफर से आदमी को किसी हालत में भी गाफिल नही रहना चाहिए।

३. अर्थात् तू ही उनका सरक्षक है।

४ हजरत अब्दुल्लाह इब्न उमर रजि० का बयान है कि नबी सल्ल० जब किसी युद्ध या 'हज्ज' और 'उमरा' के सफर से वापस होते तो मार्ग के प्रत्येक उच्च स्थान पर से गुजरते हुए तीन बार 'अल्लाहु अकबर (अल्लाह सबसे बडा है) कहते और यह 'दुआ' पढते थे (बुखारी, मुस्लिम,)। हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि एक व्यक्ति ने आकर कहा हे अल्लाह के रसूल ! मैं सफर के लिए बिल्कुल तैयार हूँ। आप मुझे कुछ वसीयत कर दे। आप ने कहा। 'अल्लाह का डर रखना और जब किसी ऊँचे स्थान पर चढना तो 'तकबीर' (ईश महानता का वर्णन) कहना।" —अहमद, तिरमिजी

कअब बिन मालिक की एक 'रिवायत' से मालूम होता है कि आप (सफर से) वापस आकर मस्जिद मे दो 'रकअत' 'नफ्ल' नमाज अदा करते।

"मैंने तुम्हारे 'दीन' (धर्म), तुम्हारी अमानत, और तुम्हारे अन्तिम कर्म को अल्लाह् को सौंपा"[१]।

—तिरमिजी, अबूदाऊद, इब्नमाजा

खाने की दुआ

३, हजरत अबू सईद रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० जब कुछ खाते-पीते तो कहते

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِیْ اَطْعَمَنَا وَسَقَانَا وَجَعَلَنَا مِنَ الْمُسْلِمِیْنَ ۔

करते तो उस का हाथ अपने हाथ मे ले लेते और उस समय तक न छोड़ते जब तक स्वय वह व्यक्ति न छोडता। (तिरमिजी)

सफर मे साधारणतया आदमी बेइतमिनानी की हालत मे होता है, लेकिन सफर मे नबी सल्ल० की जो हृदय-स्थिति होती थी उसका अनुमान किसी हद तक उन शब्दो के द्वारा लगाया जा सकता है जो सफर मे आपके मुख से निकले हैं।

हज़रत इब्न उमर रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० जब किसी लडाई से या 'हज्ज' या 'उमरा' से वापस होते, तो हर ऊँची ज़मीन पर तीन बार 'अल्लाहु अकबर' (अल्लाह् सबसे बडा है) कहते और फिर कहते ·

لَا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِیْكَ لَهٗ لَهُ الْمُلْكُ وَلَهُ الْحَمْدُ وَهُوَ عَلٰی كُلِّ شَیْءٍ
قَدِیْرٌ اٰئِبُوْنَ تَائِبُوْنَ عَابِدُوْنَ سَاجِدُوْنَ لِرَبِّنَا حَامِدُوْنَ صَدَقَ اللّٰهُ وَعْدَهٗ
وَنَصَرَ عَبْدَهٗ وَهَزَمَ الْاَحْزَابَ وَحْدَهٗ ۔ ١

"अल्लाह् के सिवा कोई 'इलाह' (पूज्य) नहीं वह एक है उसका कोई सहभागी नही। राज्य उसी का है, प्रशसाएँ उसी के लिए हैं और उसे हर चीज़ का सामर्थ्य प्राप्त है। हम लौटने वाले हैं, 'तौबा' करने वाले हैं, 'इबादत' (बन्दगी) करने वाले है 'सजदा' करने वाले है, अपने 'रब' की 'हम्द' (प्रशसा) करने वाले हैं। अल्लाह् ने अपना वादा सच्चा कर दिखाया और अपने बन्दे की मदद की और अकेले ही जत्थे को परास्त किया।"

५ एक 'रिवायत' मे आता है कि नबी सल्ल० जब किसी मुसाफिर को रुखसत

"हम्द' (प्रशसा) का अधिकारी वह अल्लाह है जिस ने हमें खिलाया-पिलाया और हमें मुसलमानो मे से बनाया[६]। —अबू दाऊद, तिरमिजी

दुख के समय की दुआ

४. इब्न अब्बास रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० परेशानी (दुख) के समय यह कहते थे

لَا إِلٰهَ إِلَّا اللّٰهُ الْعَظِيْمُ الْحَلِيْمُ. لَا إِلٰهَ إِلَّا اللّٰهُ رَبُّ الْعَرْشِ الْعَظِيْمِ

لَا إِلٰهَ إِلَّا اللّٰهُ رَبُّ السَّمٰوٰتِ وَرَبُّ الْأَرْضِ رَبُّ الْعَرْشِ الْكَرِيْمِ

"कोई 'इलाह' (इष्ट पूज्य) नही अल्लाह के सिवा जो महिमावान और सहनशील है, कोई 'इलाह' (इष्ट पूज्य) नही अल्लाह के सिवा जो महान् सिंहासन का स्वामी है, कोई 'इलाह' नही अल्लाह के सिवा जो आकाशो का 'रब' है, धरती का 'रब' है और प्रतिष्ठित सिंहासन का स्वामी है"[७]। —बुखारी, मुस्लिम

कुछ व्यापक दुआएं

१ हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० अधिकतर यह 'दुआ' करते थे

اَللّٰهُمَّ اٰتِنَا فِي الدُّنْيَا حَسَنَةً وَّفِي الْاٰخِرَةِ حَسَنَةً وَّقِنَا عَذَابَ النَّارِ.

---

६ जाहरी नेमतो के साथ इस सबसे बडी आत्मिक नेमत को भी याद किया कि अल्लाह ने 'इस्लाम' जैसी दौलत प्रदान की है। इस नेमत पर अल्लाह के आगे कृतज्ञता युक्त भावनाएं भरे रूप मे प्रस्तुत न की जाएं, तो यह सब से बडी अकृतज्ञता है।

७ ग़म और परेशानी की हालत मे अल्लाह की बडाई और महिमा को याद करना समयानुकूल है। एक दूसरी 'रिवायत' मे भी आया है कि जब आपको कोई चिन्ता होती थी, तो आकाश की ओर सिर उठाकर कहते ·

سُبْحَانَ اللّٰهِ الْعَظِيْمِ

'सुबहानल्लाहिल अजीम' "महिमावान है अल्लाह बडाई वाला।" और जब दुआ और रुदन मे तल्लीनता बढ जाती तो कहते · या हैयो या क़य्यूम

يَا حَيُّ يَا قَيُّوْمُ.

'हे 'सजीव ! हे चिरस्थायी !"

"हे अल्लाह ! हमें प्रदान कर दुनिया में भलाई और 'आखिरत' में भलाई और हमें ('जहन्नम' की) आग की यातना से बचा"[1]।

—बुख़ारी, मुस्लिम, अबू दाऊद

२. हज़रत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० कहते थे :

اَللّٰهُمَّ اِنِّیْ اَعُوْذُ بِكَ مِنَ الْعَجْزِ وَالْكَسَلِ وَالْجُبْنِ وَالْهَرَمِ وَالْبُخْلِ وَ اَعُوْذُ بِكَ مِنْ عَذَابِ الْقَبْرِ وَاَعُوْذُ بِكَ مِنْ فِتْنَةِ الْمَحْیَا وَالْمَمَاتِ۔

"हे अल्लाह ! मैं तेरी पनाह लेता हूँ असमर्थता और आलस्य, कायरता और अत्यन्त बुढ़ापे, और निर्बलता से और कृपणता से और तेरी पनाह माँगता हूँ क़ब्र की यातना से और तेरी पनाह माँगता हूँ जीवन और मृत्यु के फितने से[2]" ।

—बुख़ारी, मुस्लिम

३. हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० कहा करते थे :

اَللّٰهُمَّ اَصْلِحْ لِیْ دِیْنِیَ الَّذِیْ هُوَ عِصْمَةُ اَمْرِیْ وَاَصْلِحْ لِیْ دُنْیَایَ الَّتِیْ فِیْهَا مَعَاشِیْ وَاَصْلِحْ لِیْ اٰخِرَتِیَ الَّتِیْ فِیْهَا مَعَادِیْ وَاجْعَلِ الْحَیٰوةَ زِیَادَةً لِّیْ فِیْ كُلِّ خَیْرٍ وَاجْعَلِ الْمَوْتَ رَاحَةً لِّیْ مِنْ شَرٍّ۔

—तिरमिज़ी, । एक 'रिवायत' मे है कि विकलता और दुख की दशा मे कहते : या हैयो या कय्यूमो बिरहमते का अस्तग़ीसो'

يَا حَيُّ يَا قَيُّوْمُ بِرَحْمَتِكَ اَسْتَغِيْثُ

"हे सजीव ! हे जगत को सम्भालने वाले तेरी रहमत (दयालुता) से मेरी फ़रियाद है ।"

१. यह दुआ कुरआन मजीद से उद्धृत है । (दे० सूरा अल-बकरा) २०१ । यह 'दुआ' अत्यन्त व्यापक है इसमे दुनिया और आखिरत की समस्त भलाइयों को समेट लिया गया है ।

२. मतलब यह है कि हर फितना और परीक्षा मे तू मेरी सहायता कर और मुझे

"हे अल्लाह ! ठीक कर 'दीन' (धर्म) को जो मेरे कामों और मामलों क संरक्षक है[3], और ठीक कर मेरी दुनिया को जिस में मेरा रहना-सहना, और ठीक कर मेरी 'आखिरत' को जहाँ मुझे लौट कर जाना है, और मेरे जीवन को हर नेकी में बढा और मृत्यु के लिए प्रत्येक बुराई से आराम का कारण बना[4] ।" —मुस्लिम

४. हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि० नबी सल्ल० से 'रिवायत' करते हैं कि आप कहा करते थे :

اَللّٰهُمَّ اِنِّیْ اَسْئَلُكَ الْهُدٰی وَالتُّقٰی وَالْعَفَافَ وَالْغِنٰی.

"हे अल्लाह ! मैं तुझ से माँगता हूँ मार्ग-दर्शन, 'तकवा (ईश-भय) सयम और निरपेक्षता ।" —मुस्लिम

५. हज़रत इब्न अब्बास रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० 'दुआ' किया करते थे :

رَبِّ اَعِنِّیْ وَلَا تُعِنْ عَلَیَّ وَانْصُرْنِیْ وَلَا تَنْصُرْ عَلَیَّ وَامْكُرْ لِیْ وَلَا تَمْكُرْ
عَلَیَّ وَاهْدِنِیْ وَیَسِّرِ الْهُدٰی لِیْ وَانْصُرْنِیْ عَلٰی مَنْ بَغٰی عَلَیَّ رَبِّ اجْعَلْنِیْ
لَكَ شَاكِرًا لَكَ ذَاكِرًا لَكَ رَاهِبًا لَكَ مِطْوَاعًا لَكَ مُخْبِتًا اِلَیْكَ اَوَّاهًا مُنِیْبًا
رَبِّ تَقَبَّلْ تَوْبَتِیْ وَاغْسِلْ حَوْبَتِیْ وَاَجِبْ دَعْوَتِیْ وَثَبِّتْ حُجَّتِیْ وَ
سَدِّدْ لِسَانِیْ وَاهْدِ قَلْبِیْ وَاسْلُلْ سَخِیْمَةَ صَدْرِیْ.

गुमराही और विनाश से बचा ।

३. 'दीन के द्वारा हमारे अस्तित्व, माल आदि हर चीज़ की रक्षा होती है । हमारा 'दीन' स्वय हमारा रक्षक है । 'दीन' ने हर एक के हक निर्धारित किये हैं । 'दीन' (धर्म) के ठीक होने से आदमी हर प्रकार की तबाही और बरबादी से सुरक्षित रहता है । किसी का यह कथन कितना सही है कि जितनी रक्षा मुसलमानो ने 'इस्लाम' की की है उससे कही अधिक स्वय इस्लाम ने उनको की है ।

४ अर्थात् मेरी मृत्यु मेरे हक मे अच्छी सिद्ध हो । मृत्यु मेरे लिए हर प्रकार के

" 'रब' ! मेरी सहायता कर, मेरे विरुद्ध किसी की सहायता न कर, मुझे विजय प्रदान कर और मेरे विरुद्ध किसी को विजय प्रदान न कर, मेरे लिए गुप्त उपाय कर और मेरे विरुद्ध किसी के लिए गुप्त उपाय न कर, और मुझे मार्ग दिखा और सीधे मार्ग पर चलना मेरे लिए सुगम कर दें, और उस के विरुद्ध मेरी सहायता कर जिस ने मुझ पर ज्यादती की है। 'रब' बना मुझे अपना कृतज्ञ, अपना जिक्र करने वाला, अपने से ('रब' से) डरने वाला, अपना आज्ञाकारी, अपनी विनम्रता प्रकट करने वाला और अधिक आहे भरने वाला और प्रवृत होने वाला। 'रब' ! मेरी 'तौबा' कबूल कर, मेरे गुनाह को धो डाल, मेरी दुआ कबूल कर, मेरी दलील और हुज्जत (तर्क) को बाकी रख, मेरी जिह्वा को ठीक रख और मेरे हृदय को मार्ग दिखा और मेरे सीने (दिल) की कालिमा को निकाल दे[५]" ।

—तिरमिजी, अबूदाऊद, इब्नमाज

६. इब्न अम्र बिन आस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० दुआ करते थे

اللّٰهُمَّ اِنِّيْ اَعُوْذُ بِكَ مِنْ قَلْبٍ لَّا يَخْشَعُ وَمِنْ دُعَاءٍ لَّا يُسْمَعُ وَمِنْ نَفْسٍ لَّا
تَشْبَعُ وَمِنْ عِلْمٍ لَّا يَنْفَعُ اَعُوْذُ بِكَ مِنْ هٰؤُلَاءِ الْاَرْبَعِ.

"हे अल्लाह ! मैं तेरी पनाह माँगता हूँ ऐसे दिल से जिस में विनम्रता न हो और ऐसी 'दुआ' से जो सुनी न जाए और ऐसे जी से जो तृप्त न हो और ऐसे ज्ञान से जो लाभदायक न हो, मैं इन चारों से तेरी पनाह माँगता हूँ"[६] ।

—तिरमिज़ी, नसई

७. हजरत अबू हुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० कहते थे

फितनो और बुराइयो से बचने का साधन बने और वह हमे शास्वत सुख और शान्ति से परिचित करा सके ।

५. अर्थात् मुझ मे वे समस्त बाह्य और आंतरिक गुण पैदा कर दे जो तुझे प्रिय हैं। मुझे जीवन की वह सभी पावनता प्राप्त हो जो तेरे आज्ञाकारी बन्दो की सबसे मूल्यवान निधि है ।

६. मालूम हुआ कि सफल व्यक्ति वही है जो व्यर्थ बातो से दूर रहता है। जो व्यर्थ

اَللّٰهُمَّ اِنِّیْ اَعُوْذُبِكَ مِنَ الشِّقَاقِ وَالنِّفَاقِ وَسُوْءِ الْاَخْلَاقِ.

"हे अल्लाह ! मैं तेरी पनाह माँगता हूँ विरोध से, 'निफाक' (कपट नीति) से और बुरे स्वभाव से" । —अबू दाऊद, नसई

८. हज़रत अबू दरदा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा दाऊद, उन पर (अल्लाह की) दयालुता और सलामती हो की दुआओ में से एक दुआ यह है :

اَللّٰهُمَّ اِنِّیْ اَسْئَلُكَ حُبَّكَ وَحُبَّ مَنْ يُّحِبُّكَ وَالْعَمَلَ الَّذِیْ يُبَلِّغُنِیْ حُبَّكَ اَللّٰهُمَّ اجْعَلْ حُبَّكَ اَحَبَّ اِلَیَّ مِنْ نَّفْسِیْ وَمَالِیْ وَ اَهْلِیْ وَمِنَ الْمَاءِ الْبَارِدِ.

"हे अल्लाह ! मैं इच्छुक हूँ तेरे प्रेम का जो तुझ से प्रेम करते हैं और हम उस कर्म का जो मुझे तेरे प्रेम तक पहुँचाए, हे अल्लाह ! तू अपने प्रेम को मेरे लिए प्रिय बना दे मेरे अपने प्राण से बढ कर, मेरे माल से बढ कर, मेरे अपने लोगो से बढ कर और शीतल जल से बढ कर७"

कामो मे अपना समय नष्ट नही करता । जिसका दिल नर्म, अल्लाह के आगे झुका हुआ हो । जिस का मन अधीर न हो । जो धैर्यवान और अल्लाह के फैसले पर राजी हो ।

७ बन्दे का अल्लाह से नाता केवल शासक और शासित का नही है बल्कि अल्लाह की सत्ता बन्दे के लिए एक पूज्य और प्रिय और अभीष्ट सत्ता भी है । कुरआन मे भी 'ईमान' वालो की यह विशेषता बयान की गई है कि वे अल्लाह से अत्यन्त प्रेम करते हैं । कहा गया "और जो ईमान वाले है उन्हे तो सबसे बढकर प्रेम अल्लाह ही से होता है" (अल-बकरा आयत १६५) । एक दूसरी जगह कहा गया है "हे ईमान लाने वालो ! जो कोई तुम मे से अपने 'दीन' से फिरेगा तो (वह जान ले कि) जल्द ही अल्लाह ऐसे लोगों को लायेगा जिनसे उसे प्रेम होगा और उससे उन्हे प्रेम होगा । वे 'ईमान' वालो के लिए नम्र और 'काफिरो' के लिए सख्त होगे । अल्लाह की राह मे 'जिहाद' करेंगे और किसी मलामत करने वाले की मलामत से न डरेंगे" (अल-माइदा आयत ५८) । 'ईमान' और इस्लामी शिक्षा का अन्तिम अभिप्राय अल्लाह से प्रेम है । यही

और नबी सल्ल० जब हज़रत दाऊद अ० की चर्चा करते थे तो कहते थे कि वे बहुत ही बड़े इबादत गुज़ार (उपासक) व्यक्ति थे[८]।

—तिरमिज़ी

६. हज़रत अब्दुल्लाह इब्न यज़ीद ख़तमी कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० दुआ करते थे :

اَللّٰهُمَّ ارْزُقْنِي حُبَّكَ وَحُبَّ مَنْ يَّنْفَعُنِي حُبُّهُ عِنْدَكَ، اَللّٰهُمَّ مَا رَزَقْتَنِي مِمَّا اُحِبُّ فَاجْعَلْهُ قُوَّةً لِّي فِيْمَا تُحِبُّ، اَللّٰهُمَّ مَا زَوَيْتَ عَنِّي مِمَّا اُحِبُّ فَاجْعَلْهُ فَرَاغًا لِّي فِيْمَا تُحِبُّ.

"हे अल्लाह ! मुझे अपना प्रेम और उस व्यक्ति का प्रेम प्रदान

वह चीज़ है जिसे इंजील और कुरआन में "जीवन" कहा गया है। हम हृदय से अल्लाह से प्रेम करें जीवन वास्तव मे यही है। हज़रत मसीह अ० से पूछा गया कि तौरात के आदेश मे सबसे उच्च आदेश क्या है, कहा . "अल्लाह का प्रेम सम्पूर्ण हृदय सम्पूर्ण प्राण, सम्पूर्ण बुद्धि से करना यही सबसे प्रथम और महान आदेश है" (मत्ता : २२)।

इंजील बरनबास मे है . "तो उस समय यूहन्ना ने कहा हम ने जान लिया कि 'ईमान' क्या है ? अल्लाह से प्रेम करना" (८६ : १६)।

८ ज़बूर में उनके जो गीत दिये गये हैं उनसे भी यही बात ज़ाहिर होती है कि हज़रत दाऊद अ० को अपने 'रब' से अत्यन्त प्रेम था और वे बड़े इबादत-गुज़ार थे । उदाहरणार्थ ज़बूर (*Psalms*) के इन वाक्यो को देखिए "हे ख़ुदा तू मेरा ख़ुदा है। मैं दिल से तेरा इच्छुक हूँगा। शुष्क और प्यासी भूमि मे जहां पानी नही मेरी जान तेरी प्यासी और मेरा शरीर तेरा लालायित है। इस तरह मैंने मक़दिस मे तुझ पर निगाह की ताकि तेरे सामर्थ्य और वैभव को देखूँ क्योंकि तेरी अनुकम्पा जीवन से उत्तम है। मेरे होठ तेरी प्रशंसा करेंगे। इसी तरह मैं जीवन भर तुझे मुबारक कहूँगा। और तेरा नाम लेकर अपने हाथ उठाया करूँगा। मेरे प्राण मानो मज्जा और चरबी से तृप्त होंगे और मेरा मुख प्रसन्न होठो से तेरी प्रशंसा करेगा जब मैं बिस्तर पर तुझे याद करूँगा और रात के एक-एक पहर मे तुझ पर ध्यान करूँगा" (ज़बूर ६२ : १—६)।

कर जिस का प्रेम तेरी दृष्टि में मेरे लिए लाभदायक हो। हे अल्लाह ! जो कुछ तू ने मुझे मेरी प्रिय चीजो मे से दिया है उसे अपने प्रिय कार्यों में मेरा सहायक बना दे। हे अल्लाह ! जो कुछ तू ने मेरी प्रिय चीज़ों मे से रोक रक्खा है उसे तू मेरी हक में उन चीजों के लिए निवृति का कारण बना जो तुझे प्रिय है[९]।
—तिरमिज़ी

१०. अता बिन साइब रजि० अपने पिता से 'रिवायत' करते हैं कि उन्हों ने कहा कि अम्मार बिन यासिर ने हमें 'नमाज' पढाई। उन्हों ने 'नमाज' को सक्षिप्त किया। कुछ लोगो ने उन से कहा कि तुम ने 'नमाज़' हल्की पढी और 'नमाज' को सक्षिप्त कर दिया। उन्हों ने कहा मुझे इस से कुछ भी हानि नही क्योंकि मैंने इस 'नमाज' में ऐसी दुआएँ की हैं जिन को मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० से सुना है फिर जब वे खडे हुए तो लोगों में से एक व्यक्ति उन के पीछे हो लिया और वह मेरे पिता थे अम्मार रजि० से वह दुआ पूछी और फिर आये और लोगों को उस से सूचित किया (वह दुआ यह है)।

اَللّٰهُمَّ بِعِلْمِكَ الْغَيْبَ وَقُدْرَتِكَ عَلَى الْخَلْقِ اَحْيِنِيْ مَا عَلِمْتَ الْحَيٰوةَ خَيْرًا
لِّيْ وَتَوَفَّنِيْ اِذَا عَلِمْتَ الْوَفَاةَ خَيْرًا لِّيْ. اَللّٰهُمَّ وَاَسْئَلُكَ خَشْيَتَكَ فِي الْغَيْبِ
وَالشَّهَادَةِ وَاَسْئَلُكَ كَلِمَةَ الْحَقِّ فِي الرِّضَا وَالْغَضَبِ وَاَسْئَلُكَ الْقَصْدَ فِي
الْفَقْرِ وَالْغِنٰى وَاَسْئَلُكَ نَعِيْمًا لَّا يَنْفَدُ وَاَسْئَلُكَ قُرَّةَ عَيْنٍ لَّا تَنْقَطِعُ وَ
اَسْئَلُكَ الرِّضَاءَ بَعْدَ الْقَضَاءِ وَاَسْئَلُكَ بَرْدَ الْعَيْشِ بَعْدَ الْمَوْتِ وَاَسْئَلُكَ
لَذَّةَ النَّظَرِ اِلٰى وَجْهِكَ وَالشَّوْقَ اِلٰى لِقَائِكَ فِيْ غَيْرِ ضَرَّاءَ مُضِرَّةٍ وَّلَا فِتْنَةٍ
مُّضِلَّةٍ، اَللّٰهُمَّ زَيِّنَّا بِزِيْنَةِ الْاِيْمَانِ وَاجْعَلْنَا هُدَاةً مُّهْتَدِيْنَ.

"हे अल्लाह ! अपने परोक्ष ज्ञान के वसीले से और अपने सामर्थ्य के वसीले से जो तुझे अपनी सृष्टि पर प्राप्त है मुझे उस समय तक जीवित रख जब तक जीवन तेरे ज्ञान में मेरे लिए अच्छा हो और मुझे मृत्यु दे जब

९ अर्थात् इस दूरी का यह प्रभाव हो कि तेरी इच्छाएँ मुझे प्रिय हो जाएँ। जो तुझे पसन्द है वही मैं भी पसन्द करने लगूँ।

फिर मृत्यु तेरे ज्ञान में मेरे लिए अच्छी हो। हे अल्लाह! मैं तुझ से खुले-छिपे हर दशा में तेरा भय माँगता हूँ और मैं तुझ से इस का सवाल करता हूँ कि मुझे सत्य बात कहने का सुयोग प्राप्त हो खुशी मे भी और क्रोध की दशा में भी। और मैं तुझ से इस का इच्छुक हूँ कि मध्य मार्ग (सन्तुलित-नीति) पर क़ायम रहूँ निर्धनता में भी और सम्पन्न एव निरपेक्ष अवस्था में भी[10]। और मैं तुझ से ऐसी नेमत का इच्छुक हूँ जो कभी समाप्त न हो और मैं तुझ से तेरे फ़ैसले के बाद (तेरी) रज़ामन्दी का इच्छुक हूँ,[11] मैं तुझ से मृत्यु के पश्चात् जीवन-शीतलता का इच्छुक हूँ[12], तुझ से दर्शनानन्द का इच्छुक हूँ कि तेरे मुख की ओर देखूँ और मुझे तुझ से मिलने की ऐसी उत्कट अभिलाषा है जो हानिकारक न हो और न फ़ितना में डालने वाली है[13], हे अल्लाह! हमें 'ईमान' की शोभा से सुशोभित कर[14] और हमें उन लोगों की सीधी राह पर लगा जो (सीधा) मार्ग पाये हुये हैं"।

---

१०. अर्थात् तगी और खुशहाली प्रत्येक अवस्था मे मेरा जीवन सन्तुलित रहे। मैं अनुचित नीति किसी दशा मे भी न अपनाऊँ।

११ अर्थात् तेरे हुक्म और फ़ैसले पर मैं हर हाल मे राज़ी रहूँ। वास्तव मे जिसकी मुझे इच्छा हो वह तेरी खुशी और प्रसन्नता के अतिरिक्त कुछ और न हो।

१२. अर्थात् मृत्यु के पश्चात् वह आराम और आनन्द मेरे हिस्से मे आए जिस का तू ने अपने 'ईमान' वाले बन्दो से वादा किया है।

१३ अर्थात् यह उत्कट अभिलाषा ऐसा न हो कि मुझे किसी फितना और गुमराही मे डाल दे और मैं तेरे आदेशो से गाफिल हो जाऊँ। मुझे वह उत्सुकता और इच्छा चाहिए जिस के कारण मैं ज्यादा से ज्यादा तेरे आदेशो का पालन कर सकूँ।

१४. मालूम हुआ कि 'ईमान' जीवन की शोभा है। 'ईमान' को एक नीरस और शुष्क धारणा वही लोग कह सकते है जिन्हो ने कभी 'ईमान' का रसास्वादन न किया हो। कुरआन से भी इसकी पुष्टि होती है कि 'ईमान' दिलो की शोभा और सौन्दर्य है। एक जगह कहा गया है 'लेकिन अल्लाह ने तुम्हारे लिए 'ईमान' को प्रिय बना दिया और उसे तुम्हारे दिलो मे रचा-बसा दिया और 'कुफ्र' और पापाचार और अवज्ञा को तुम्हारे लिए अप्रिय बना दिया। यही लोग सीधे मार्ग पर चलने वाले हैं" (सूरा ४९ आयत ७)।

तौबा और क्षमा याचना

१. हजरत अग़र्रुल मुज़नी रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मेरे दिल पर एक पर्दा-सा आ जाता है यहाँ तक कि मैं अल्लाह से प्रत्येक दिन सौ बार क्षमा की प्रार्थना करता हूँ। मुस्लिम और अबूदाऊद इसके रावी (उल्लेखकर्ता) हैं। मुस्लिम की एक रिवायत में है कि आपने कहा 'तौबा' करो, मैं अपने 'रब' के आगे अल्लाह की कसम खाने वाले और उसके 'रब' की सेवा में सौ बार 'तौबा' करता हूँ[1]।

२. हजरत अबू हुरैरा रज़ि० बयान करते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना, अल्लाह की कसम मैं दिन में सत्तर बार से अधिक अल्लाह से क्षमायाचना करता हूँ और उस की सेवा में 'तौबा' करता हूँ[2]।
—बुखारी

३. इब्न मसऊद रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि जिसने कहा :

أستغفر الله الذي لا إله إلا هو الحي القيوم وأتوب إليه.

"मैं अल्लाह से क्षमा चाहता हूँ कि उसके सिवा कोई 'इलाह' (इष्ट पूज्य) नहीं वह सजीव एवं नित्यवासी है और उसके आगे 'तौबा' करता हूँ।"
उसके गुनाह क्षमा कर दिये गये यद्यपि वह युद्ध से (पीठ फेर कर) भागा हो[3]।
—अबूदाऊद, तिरमिज़ी, हाकिम

---

१. इससे मालूम हुआ कि 'तौबा' और क्षमायाचना में आत्मा की घुटन और मलिनता दूर करने की शक्ति पाई जाती है। मनुष्य कितनी ही कोशिश क्यों न करे सामाजिक सम्पर्कों और कार्यों में मन की स्थिति एक समान नहीं रहती। 'तौबा' और क्षमायाचना द्वारा क्षतिपूर्ति की जाती है और वह बादल जो हृदय-आकाश पर आ जाता है छट जाता है।

२ मनुष्य जितना ज्यादा अल्लाह का करीबी होता है उतना ही अधिक उसे अल्लाह की बड़ाई का ध्यान रहता है और उतना ही अधिक उसे अपने में त्रुटियाँ दिखाई देती हैं। अपने समस्त अच्छे कर्मों और शुद्ध हृदयता के बावजूद वह अल्लाह के सामने अपने को खताकार ही समझता है।

३. सच्चे दिल से जब कोई व्यक्ति अपने गुनाहों पर लज्जित होता और अल्लाह से

४. हज़रत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कसम है उसकी जिसके हाथ मे मेरे प्राण है यदि तुम गुनाह न करो तो सर्वोच्च अल्लाह तुम्हे विनष्ट कर दे और (तुम्हारी जगह) ऐसे लोगों को पैदा करे जो गुनाह करके अल्लाह से क्षमा चाहें और अल्लाह उन्हे क्षमा कर दे[४] । —मुस्लिम

क्षमा चाहता है, तो अल्लाह उसके बडे-से-बडे गुनाहो को भी क्षमा कर देता है । वल्कि एक 'हदीस' मे तो यहाँ तक कहा गया है । "गुनाह से 'तौबा' करने वाला ऐसा है जैसे उसने कोई गुनाह किया ही न था ।" (तिरमिज़ी, बैहकी शोबुल ईमान) । गुनहगारो के लिए इस 'हदीस' मे बडी तसल्ली है । यहाँ यह बात भूलनी नही चाहिए कि यदि किसी ने किसी व्यक्ति को किसी प्रकार की हानि पहुँचाई है तो 'तौबा' और क्षमायाचना के साथ-साथ उसने जो हानि पहुँचाई है उसकी क्षतिपूर्ति की भी पूरी-पूरी कोशिश करे ।

४ इस 'हदीस' से ऊपर की 'हदीस' की पुष्टि होती है । इस 'हदीस' मे उन लोगो के लिए बडी तसल्ली है जो मानवीय दुर्बलता के कारण कोई गुनाह कर बैठें हो और अपने किये पर पश्चाताप कर रहे हो । इस 'हदीस' से विदित होता है कि मनुष्य के लिए उच्चता की बात यह नही है कि उससे कभी गुनाह न हो, यह विशेषता तो अल्लाह ने 'फ़िरिश्तो' को प्रदान की है । मनुष्य के लिए जो चीज़ अभीष्ट है वह यह कि जब कभी उस से कोई भूल हो जाए तो उसे पछतावा हो और वह जल्द-से-जल्द सँभल जाए । उससे जो हानि स्वय उसे या दूसरो को पहुँची हो वह उसकी क्षतिपूर्ति की कोशिश करे और अपने सुधारने मे लग जाए । मनुष्य यदि अपनी गलती पर सँभल जाता है और अपने को सुधारने और अपनी आत्मा को निखारने की कोशिश मे लगा रहता हैं तो यह इस बात का प्रमाण है कि उसकी मूल प्रकृति गन्दी नही हुई है । गन्दगी यदि लगी है तो ऊपर ही लगी है । मनुप्य के लिए विनाश और मृत्यु तो यह है कि उसकी प्रकृति और उसके स्वभाव को ही गन्दगी लग जाए और सैकडों गुनाहो और अवज्ञा के बावजूद उसे इसका एहसास भी न हो सके कि वह कितना गिर चुका है ।

मनुष्य को अल्लाह ने नेकी और गुनाह दोनो की क्षमता के साथ पैदा किया है । विदित है ऐसे प्राणी से जिसमे नेकी और गुनाह दोनो का सामर्थ्य पाया जाता हो बेगुनाही (*Sinlessness*) अभीष्ट नही हो सकती । ऐसे प्राणी के लिए बडा स्थान यही है कि जब मानवीय दुर्बलता के कारण उससे कोई गलती हो जाए तो वह उस पर अडा न रहे बल्कि लज्जित हो और अल्लाह

५. हज़रत इब्न अब्बास से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . जो व्यक्ति क्षमायाचना को अपने ऊपर अनिवार्य कर ले तो अल्लाह उस के लिये हर तंगी से निकलने का मार्ग निकाल देता है और हर गम और परेशानी से उसे मुक्ति देता है और उसे ऐसी जगह से और इस तरह रोजी पहुँचाता है जिसके बारे में वह सोच नही सकता था[५]।

—अहमद, अबूदाऊद, इब्नमाजा

६. हजरत अनस रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा हर मनुष्य खताकार है और उत्तम खताकार 'तौबा' करने वाले हैं[६]।

—तिरमिजी, इब्नमाजा, दारमी

७ बिलाल इब्न यसार रजि० कहते हैं कि मुझसे मेरे पिता ने बयान किया और उनसे उनके दादा ने बयान किया कि उन्होंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि जो व्यक्ति कहे

"मैं क्षमायाचना करता हूँ उस अल्लाह से जिसके सिवा कोई 'इलाह'(पूज्य) नही जो सजीव एवं चिरस्थायी है और सारे ससार का क़ायम रखने वाला है और उसी की ओर पलटता हूँ।"

उसके गुनाह क्षमा कर दिये जाते हैं यद्यपि वह 'जिहाद' से भागा हुआ हो[७]।

—तिरमिजी, अबूदाऊद

८. हज़रत इब्न उमर रजि० कहते हैं कि हम गिनते थे कि अल्लाह के रसूल सल्ल० एक-एक बैठक में सौ बार कहते ·

"हे रब ! मुझे क्षमा कर दे और मझ पर मेहरबानी कर निस्सन्देह तू सबसे बढकर 'तौबा' कबूल करने वाला और क्षमाशील है।

—अहमद, तिरमिजी, अबूदाऊद, इब्नमाजा

से क्षमा की प्रार्थना करे।

५. मालूम हुआ कि क्षमायाचना बहुत-सी परेशानियो और मुसीबतो से मुक्ति पाने का साधन है। कितनी ही परेशानियो का कारण मनुष्य के अपने कर्म ही होते हैं। क्षमायाचना से अल्लाह उसके गुनाहो को क्षमा कर देता है। और इसके परिणामस्वरूप उस की परेशानियाँ भी दूर हो जाती हैं।

६. खता और गलती मनुष्य से होती ही रहती है लेकिन सबसे अच्छे लोग वे हैं जो अपनी खताओ को स्वीकार करते रहते हैं और सदैव अल्लाह से अपनी खताओ की माफी माँगा करते है।

७ 'तौबा' यदि दिल से की जाए, तो बड़े-से-बड़े गुनाह भी क्षमा हो सकते हैं

यहाँ तक कि उस व्यक्ति की भी मुक्ति हो सकती है जो 'जिहाद' के मैदान से शत्रु को पीठ दिखाकर भागा हो।

अबू दाऊद की रिवायत मे बिलाल यसार की जगह हिलाल बिन यसार आया है।

अल्लाह का 'ज़िक्र'

अल्लाह की याद और उस का 'ज़िक्र' वास्तव में 'इस्लाम' का मूल आधार है, इस के बिना मनुष्य को वह जीवन प्राप्त ही नही होता जो इस्लाम को अभीष्ट है। अल्लाह का स्मरण और उस का ख्याल ही है जो मानव-जीवन को स्थायी रूप से अल्लाह और उस की बन्दगी के साथ जोडे रखता है। जिस प्रकार शारीरिक अस्तित्व के लिए आवश्यक है कि साँस लेने की क्रिया का क्रम निरन्तर चलता रहे ठीक उसी प्रकार हमारे नैतिक और आध्यात्मिक अस्तित्व के लिए आवश्यक है कि हम हर क्षण अल्लाह की ओर प्रवृत रहे। हमारी जिह्वा सदैव उस के नाम से पावन होती रहे। अल्लाह का ख्याल मन मे कुछ इस तरह बस जाए कि वह हमारी चेतना से आगे अचेतना और अचेतन मन तक मे उतर जाए। और फिर हमारी गति-विधि, हमारी चाल-ढाल, हमारी बात-चीत और हमारी खामोशी, तात्पर्य यह कि हमारी हर चीज से इस बात का सकेत हो कि हम एक अल्लाह के बन्दे और उस के गुलाम है। उस की महानता का एहसास हमें गाफिल और वेपरवा होने से बाज रक्खे और उस की खुशी पाने की कामना हर क्षण हमे इस बात का जिज्ञासु बनाए रक्खे कि किस प्रकार से हम ज्यादा-से-ज्यादा अच्छे कर्म कर सकते है। हम कोई अच्छा काम करे तो हम अल्लाह के आभारी हो और कृतज्ञता दिखलाये। दुख और सकट के समय हम उस की दयालुता के अभिलाषी हो। हर मुसीबत के समय उसी की ओर रुजू करे, गुनाह और बुराई का कोई मौका सामने आये, तो हम अल्लाह से डर जाएँ। हम से कोई अपराध हो जाए तो तुरन्त उस से क्षमा चाहे। हर आवश्यकता और ज़रूरत के समय उस से दुआ माँगे। हर काम अल्लाह के नाम से करे। खाना खाये तो अल्लाह का नाम ले कर खाये, सोने जाएँ तो अल्लाह को याद कर के सोये, सो कर उठे तो अल्लाह का नाम लेते हुए उठें। साधारण अवस्था में भी किसी-न-किसी बहाने से अल्लाह का नाम ज़बान पर आता रहे। यही वास्तव में इस्लामी ज़िन्दगी की जान है।

इस्लामी जीवन की यह माँग है कि अल्लाह की याद आदमी की रग-रग में रच-बस गई हो। इस चिर स्मरण के बिना हमारी वे 'इबादतें' और उपासनाएँ भी जो विशेष समय में अदा की जाती हैं कोई विशेष प्रभाव नही दिखा सकती। इस लिए क़ुरआन में केवल 'ज़िक्र' की नही बल्कि "ज़िक्रकसीर" (अधिक स्मरण) की ताकीद की गई है। कहा गया है: "हे ईमान लाने वालो! अल्लाह को अधिक याद करो"। (अल-अहज़ाब आयत ४१)

एक दूसरी जगह कहा: "और अल्लाह को बहुत ज़्यादा याद करते रहो ताकि तुम सफल हो"। (अल-जुमआ आयत १०)

अल्लाह के 'ज़िक्र' के इसी महत्व के कारण पूरे 'दीन' (धर्म) को "ज़िक्र रब" कहा गया, क़ुरआन में है: "और यह कि यदि वे मार्ग पर ठीक-ठीक लग जाते तो हम उन्हे भली-भाँति जलसम्पन्न कर देते ताकि हम उस में उन की परीक्षा करे, और जो कोई अपने 'रब' के 'ज़िक्र' से मुँह मोड़ेगा तो वह उसे यातना में चढ़ाता चला जायेगा"। (अल-जिन्न: १६-१७)

'ज़िक्र' के इसी महत्व के कारण क़ुरआन में 'ईमान' वालों को हुक्म दिया गया है कि वे अल्लाह को याद करते रहें: "और अपने 'रब' को प्रात. काल और सन्ध्या समय याद करते रहो, अपने जी में गिड-गिड़ाते और डरते हुए और धीमी आवाज़ के साथ और उन लोगों में से न हो जाओ जो गफिल हैं"। (अल-आराफ आयत २०५)

अल्लाह के 'जिक्र' से गफिल होने को हानि एवं घाटे का कारण बताया गया "हे ईमान वालों! तुम्हारे माल तुम्हें अल्लाह की याद से गाफिल न करे और न तुम्हारी औलाद। और जो कोई ऐसा करेगा, तो ऐसे ही लोग घाटा उठाने वाले है"। (अल-मुनाफ़िक़ून: ६)

'ईमान' वालों के गुणों का उल्लेख करते हुए कहा गया. "और अल्लाह का बहुत अधिक 'जिक्र' करने वाले पुरुष और बहुत अधिक 'ज़िक्र' करने वाली स्त्रियाँ, अल्लाह ने उन के लिए क्षमा और बड़ा प्रतिदान तैयार कर रक्खा है"। (अल-अहज़ाब · ३५)

कहा गया जो बन्दे मुझ को याद करेंगे मैं भी उन को याद रक्खूँगा. "(मेरे बन्दो!) मुझे याद करो मैं तुम को याद करूँगा और मेरे कृतज्ञ बनो और कृतघ्नता न दिखाओ"। (अल-बक़रा १५२)

'ज़िक्र' को हृदय-परितोष का कारण बताया गया और बताया गया

कि जो 'ईमान' वाले हैं उन की आत्मा को अल्लाह् के 'ज़िक्र' से ही शान्ति और सन्तुष्टि प्राप्त होती है . "ये वे लोग हैं जो 'ईमान' लाये और जिन के दिलों को अल्लाह् के 'ज़िक्र' से इतमीनान हासिल होता है। सुन रक्खो! अल्लाह् की याद से ही दिलों को शान्ति मिलती है"। (अर-रअद · २८)

'इबादत' से निवृत्ति के पश्चात् विशेष रूप से अल्लाह् के 'ज़िक्र' की ताकीद की गई। इस मे इस बात की ओर सकेत है कि अल्लाह् का 'ज़िक्र' एक ऐसी 'इबादत' है जिस से किसी दशा में निवृत्ति या अवकाश अपेक्षित नही। यह 'इबादत' हर समय जारी रहनी चाहिए : "जब तुम 'नमाज़' अदा कर लो तो अल्लाह् का 'ज़िक्र' करो (हर दशा में) खड़े, बैठे और अपने पहलुओं के बल लेटे"। (अन-निसा १०३)

'जुमआ' कि नमाज़ के बारे में कहा गया : "फिर जब (जुमआ की) नमाज़ समाप्त हो जाए तो धरती में फैल जाओ और अल्लाह् का फ़ज़्ल (रोज़ी) तलाश करो, और अल्लाह् को अधिक याद करो ताकि तुम सफल हो जाओ"। (अल-जुमआ . १०)

'हज्ज' के बारे में कहा गया . फिर जब तुम अपने हज्ज सम्बन्धी कर्मों से निवृत्त हो जाओ, तो अल्लाह् का 'ज़िक्र' करो जैसे कि तुम (गर्व से) अपने बाप-दादा का 'ज़िक्र' करते थे बल्कि उस से भी अधिक अल्लाह् का 'ज़िक्र' करो"। (अल-बक़रा . २००)

कुरआन की कतिपय 'आयतों' से ज्ञात होता है कि ऊँचे-से-ऊँचे कर्म और 'इबादतों' का मूल तत्व और अभिप्राय अल्लाह् का 'ज़िक्र' और उस की याद ही है। उदाहरणार्थ 'नमाज़' के बारे में कहा : "मेरी याद के लिए 'नमाज़' क़ायम करो"। (ता, हा. : १४)

'हज्ज' सम्बन्धी इबादतों और कर्मों के बारे में नबी सल्ल० कहते हैं : "अल्लाह् के घर ('काबा') का 'तवाफ़' और सफा और मरवा के बीच 'सई' और जमरात की रमी, ये सब चीजे अल्लाह् के 'ज़िक्र' के लिए निश्चित हुई है"। (अबूदाऊद, तिरमिज़ी)

'जिहाद' के बारे में क़ुरआन करीम में कहा गया : "हे 'ईमान' लाने वालो! जब तुम्हारी मुठ भेड़ किसी (दुश्मन के) गरोह से हो जाए तो (लड़ाई में) जमे रहो और अल्लाह् को अधिक याद करो ताकि तुम सफल हो"। (अल-अनफाल . ४५)

सूझ-बूझ रखने वालों के बारे में बताया गया कि उन का सोच-विचार अल्लाह् की याद से ख़ाली नही होता। वे किसी दशा में अल्लाह्

से गफिल नही होते, ब्रह्माण्ड की प्रत्येक वस्तु उन्हे अल्लाह् की महानता और उस के न्याय की याद दिलाती रहती है "निस्सन्देह् आकाशों और धरती की बनावट में और रात-दिन के एक-दूसरे के बाद बारी-बारी से आने में बुद्धि रखने वालो के लिए निशानियाँ है। वे (बुद्धि रखने वाले) जो खडे, बैठे और लेटे (प्रत्येक दशा में) अल्लाह् को याद करते है, और आकाशों और धरती की बनावट में सोच-विचार करते है, (और कहते हैं) : हमारे रब ! तू ने ये सब व्यर्थ नही बनाया है। महिमा हो तेरी ! तो (हे रब !) तू हमे आग ('जहन्नम') की यातना से बचा ले"। (आले इमरान १९०-१९१)

अल्लाह् का 'जिक्र' और उस की याद सारे अमल की जान है, इस के बिना सारे अमल बेजान हो जाते है। इसी बात को एक 'हदीस' में इस प्रकार स्पष्ट किया गया है. "मुआज बिन अनस जुहनी कहते है कि एक व्यक्ति ने नबी सल्ल० से पूछा कि हे अल्लाह् के रसूल ! 'जिहाद' करने वालो मे सब से बढ कर बदला पाने वाला कौन है ! आप ने कहा. जो उन मे सब से ज्यादा अल्लाह् को याद करने वाला है। उस ने कहा 'रोजा' रखने वालो मे सब से ज्यादा बदला पाने वाला कौन है ? कहा : जो उन मे सब से अधिक अल्लाह् को याद करने वाला है। फिर उस व्यक्ति ने इसी प्रकार 'नमाज', 'हज्ज' और 'सदका' अदा करने वालो के बारे में पूछा और अल्लाह के रसूल सल्ल० ने हर एक का यही उत्तर दिया कि जो उन मे सब से अधिक अल्लाह को याद करने वाला हो" (मुसनद अहमद)

———

अल्लाह के 'जिक्र' का महत्व

عَنْ اَبِيْ سَعِيْدٍ اَنَّ رَسُوْلَ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ سُئِلَ اَيُّ الْعِبَادِ اَفْضَلُ وَ
اَرْفَعُ دَرَجَةً عِنْدَ اللهِ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ؟ قَالَ. اَلذَّاكِرُوْنَ اللهَ كَثِيْرًا وَالذَّاكِرَاتُ
قِيْلَ يَا رَسُوْلَ اللهِ وَمِنَ الْغَازِيْ فِيْ سَبِيْلِ اللهِ؟ قَالَ لَوْ ضَرَبَ
بِسَيْفِهٖ فِي الْكُفَّارِ وَالْمُشْرِكِيْنَ حَتّٰى يَنْكَسِرَ وَيَخْتَضِبَ دَمًا فَاِنَّ الذَّاكِرَ
لِلّٰهِ اَفْضَلُ مِنْهُ دَرَجَةً۔

१. हज़रत अबूसईद ख़ुदरी रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० से पूछा गया कि कौन-स बन्दा अल्लाह की दृष्टि में 'कियामत' के दिन श्रेष्ठ और उच्च होगा ? आपने कहा अल्लाह का अधिक जिक्र करने वाले पुरुष और अधिक जिक्र करने वाली स्त्रियाँ। कहा गया. हे अल्लाह के रसूल ! क्या उस व्यक्ति से भी उनका दर्जा बढा हुआ होगा जो अल्लाह के मार्ग मे 'जिहाद' करे ? आपने कहा. (हाँ) यद्यपि कोई अपनी तलवार 'काफिरो' और मुश्रिको मे चलाये यहाँ तक कि उसकी तलवार टूट गई और वह स्वय रक्त से रजित हो गया फिर भी अल्लाह का 'जिक्र' (स्मरण) करने वाला उससे दर्जे में बढ कर है[1]।

—अहमद, तिरमिज़ी

---

१ 'जिक्र' या अल्लाह की याद वास्तव मे इस्लाम की आत्मा और उस का अन्तिम अभिप्राय है। यही कारण है कि किसी भी बडे-से-बडे कर्म मे यदि अल्लाह की याद, उसका प्रेम और उसकी प्रसन्नता प्राप्त करने की भावना सम्मिलित न हो तो उस कर्म का अल्लाह की दृष्टि मे कुछ भी महत्व नही है। इसके विपरीत थोडा अमल भी यदि पूर्णत अल्लाह के लिए है और उसका वास्तविक प्रेरक अल्लाह की याद और उसका प्रेम हो तो इस्लामी दृष्टि से उस अमल का बडा महत्व है। अल्लाह के 'जिक्र' को हर चीज़ के मुकाबले मे श्रेष्ठता प्राप्त है। कुरआन मे कहा गया है अल्लाह की याद बडी चीज़ है (अल-अनकबूत : ४५) इस्लाम मे ऊँचे-से ऊँचे कर्मों का सार और अभिप्राय अल्लाह का 'जिक्र' ही है। उदाहरणार्थ 'नमाज़' के बारे मे कहा गया है 'मेरी याद के लिए 'नमाज़' कायम करो' (ता०हा० १४)। 'जिहाद' के बारे मे कहा गया है 'हे ईमान वालो ! जब किसी गरोह से तुम्हारी मुठभेड हो तो (लडाई में)

२. हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० मक्का के रास्ते पर जा रहे थे, आप एक पर्वत पर से गुज़रे जिसे जुम्दान[२] कहते थे, आप ने कहा : चलो यह जुम्दान है, "मुफर्रिदून" अग्रसर रहे। लोगों ने कहा : हे अल्लाह के रसूल ! ये मुफर्रिदून कौन लोग हैं ? आप ने कहा : अल्लाह को अधिक याद करने वाले पुरुष और अधिक याद करने वाली स्त्रियाँ[३]।

३. हज़रत अब्दुल्लाह इब्न बुस्र रज़ि० कहते हैं कि एक 'आराबी' (ग्रामीण) नबी सल्ल० की सेवा में आया और कहा : कौन सा आदमी उत्तम है ? आप ने कहा : आनन्द (और शुभ सूचनाएँ) उसके लिए जिसने लम्बी आयु पाई और अच्छे कर्म किये। उसने कहा : हे अल्लाह के रसूल ! कौन-सा कर्म उत्तम है ? आपने कहा : यह कि तू संसार से इस

जमे रहो और अल्लाह को अधिक याद करो कदाचित् तुम सफल हो जाओ' (अल-अनफाल : ४५)।

हज़रत अबू दरदा रज़ि० कहते हैं कि आपने कहा : "क्या मैं तुम्हे बताऊँ तुम्हारे वे कर्म जो उत्तम और पवित्रतम हैं तुम्हारे बादशाहो की दृष्टि मे और उच्च हैं तुम्हारे दर्जों मे और तुम्हारे लिए उत्तम हैं सोना और चाँदी खर्च करने से और तुम्हारे लिए उत्तम हैं इस से कि तुम्हारी अपने दुश्मन से मुठभेड़ हो और तुम उनकी गरदनें मारो और वे तुम्हारी गरदनें मारें। 'सहाबा' ने कहा : हाँ, हे अल्लाह के रसूल ! आपने कहा : वह अल्लाह का 'ज़िक्र' है।

—मालिक, अहमद, तिरमिज़ी, इब्नमाजा

अर्थात् सदका, जिहाद आदि से अल्लाह की याद और 'ज़िक्र' का दर्जा बढ़ा हुआ है।

२. यह एक पहाड़ी का नाम है जो मदीना के निकट एक दिन की दूरी पर है।

३. 'मफर्रिदून' का शाब्दिक अर्थ है अपने आपको सबसे अलग, अकेला और हल्का-फुलका कर लेने वाले। इस से अभिप्रेत वे लोग हैं जिनकी आत्मा का आहार अल्लाह की याद है। जो सब ओर से कटकर एक अल्लाह के हो गए हो। जिनका उद्देश्य अपने 'रब' की प्रसन्नता के अतिरिक्त कोई दूसरी चीज़ नहीं। व्यर्थ कामो से जिन्होने अपने को आज़ाद कर लिया हो। यही 'तफरीद' का सोपान है। इसी को कुरआन ने "तबत्तुल" की संज्ञा दी है। कुरआन मे है : और अपने 'रब' का नाम लो और सब कुछ छोडकर उसी की ओर लग जाओ'।

—सूरा अल-मुज़म्मिल आयत ८।

दशा में विलग हो कि तेरी ज़बान अल्लाह के ज़िक्र से तर हो[४]।

—अहमद, तिरमिज़ी

४. हज़रत अबू हुरैरा कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि अल्लाह कहता है . मैं अपने बन्दे के साथ हूँ जब वह मुझे याद करता है और उसके दोनों होंठ मेरे ज़िक्र से हिलते हैं[५]। —बुख़ारी

५. अबू हुरैरा रज़ि० और अबूसईद ख़ुदरी रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : जब भी लोग अल्लाह का ज़िक्र करते हैं तो अवश्य ही 'फ़िरिश्ते' उन्हें घेर लेते हैं[६] और 'रहमत' (ईश-दयालुता) उन पर छा जाती है और शान्ति अवतरित होती है[७] और अल्लाह उन 'फ़िरिश्तों' में उनका ज़िक्र करता है जो उसके निकट हैं[८]। —मुस्लिम

---

४. अर्थात् तू अल्लाह की याद और उसके 'ज़िक्र' से कभी ग़ाफ़िल न हो यहाँ तक कि तेरी मृत्यु आ जाए।

५ अर्थात् कोई बन्दा मुझे याद करता है तो उसे मेरा प्रेम, मेरा सामीप्य और मेरा सहयोग प्राप्त होता है। मैं अपने ऐसे बन्दे की ओर से ग़ाफ़िल नहीं होता।

६ कुछ रिवायतों से मालूम होता है कि अल्लाह की ओर से कुछ 'फ़िरिश्ते' इसी काम के लिए नियुक्त हैं कि वे उन लोगों की खोज मे रहें जो अल्लाह का 'ज़िक्र' करते हो। जब वे किसी जगह 'ज़िक्र' करने वालो को पालेते हैं तो अपने साथियो को पुकारते है कि आओ जिस चीज़ की हमे तलाश थी वह यहाँ मौजूद है। फिर वे 'ज़िक्र' करने वालो को अपने परों से ढक लेते हैं और दुनिया के आकाश (निकटवर्ती आकाश) तक फैल जाते हैं।

७. अल्लाह की दयालुता उन्हे घेर लेती है, वे अल्लाह की विशेष दयालुता के अधिकारी हो जाते हैं और अल्लाह उन्हे शान्ति, परितोषनिधि प्रदान करता है। सन्देह और मन की खटक आदि उनके दिल से निकल जाते हैं। यह अल्लाह की ओर से उनके लिए विशेष उपहार होता है। क़ुरआन मे भी इस विशेष उपकार का उल्लेख हुआ है देखिए सूरा अत-तौबा : २६; अल-फ़त्ह : ४, २६।

८. यह बन्दे के लिए कितने श्रेय की बात है कि उसका 'रब' उसका 'ज़िक्र' अपने करीबी 'फ़िरिश्तो' के बीच करे।

६. हजरत अब्दुल्लाह् इब्न उमर रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह् के 'जिक्र' के बिना अधिक बात न किया करो क्योंकि बिना अल्लाह् के 'जिक्र' के बात-चीत की अधिकता कठोर हृदयता है और लोगों में अल्लह् से अधिक दूर वह व्यक्ति है जो हृदय का कठोर है[९]। —तिर्मिजी

७ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा जिस व्यक्ति ने एक बैठक ऐसी गुजारी जिसमें उसने अल्लाह् को याद न किया उस पर अल्लाह् की ओर से तबाही छा गई और जो व्यक्ति कही लेटा और उसमें उसने अल्लाह् को याद न किया उस पर अल्लाह् की ओर से तबाही छा गई[१०]। —अबू दाऊद,

९ नम्रता, कोमलता, वेदनशीलता, अनुभूति की सूक्ष्मता आदि वास्तव मे हृदय के मौलिक गुण हैं। इन गुणो की सुरक्षा और विकास के लिए आवश्यक है कि मनुष्य अल्लाह् की याद से कभी गाफिल न हो। उसकी बात-चीत अल्लाह् के 'ज़िक्र' से वञ्चित न हो। मनुष्य के हृदय पर उसके प्रत्येक कथन और कर्म का प्रभाव पडता है। यदि कोई व्यक्ति अल्लाह् से ग़ाफिल होकर उसके 'ज़िक्र' के बिना ज़बान चलाता रहेगा तो उसके हृदय पर अवश्य ही बुरा प्रभाव पडेगा। उसका हृदय कठोर और प्रकाशहीन हो जायेगा। विदित है ऐसा हृदय जो कठोर और शून्य हो जाये अल्लाह् की कृपा का कैसे अधिकारी हो सकता है। मनुष्य के लिए आवश्यक है कि वह अपनी बात-चीत मे अल्लाह् के 'ज़िक्र' को सम्मिलत कर ले।

१० अर्थात् अल्लाह् की ओर से असावधान और गाफिल होना वास्तव मे आदमी के लिए तबाही और बरबादी के अतिरिक्त कुछ नही है। जो व्यक्ति अल्लाह की याद से गाफिल हो गया वह मानो लुट गया। 'मुस्लिम' के जीवन की सारी शोभा और बहार अल्लाह् के 'ज़िक्र' और उसकी याद से है। अल्लाह् के भय, उसकी याद और प्रेम से वह अपने दिल की दुनिया को आबाद रखता है। अल्लाह् की महानता के एहसास से उसे इस बात की प्रेरणा मिलती रहती है कि वह हर समय ईश्वर के आगे झुका रहे और उसके आदेशो का आदर करे। उसके प्रभु की प्रियता उसे हर समय अपनी ओर आकर्षित करती रहती है। अल्लाह को भूल जाने का अर्थ इसके सिवा और क्या हो सकता है कि मनुष्य ने अपना सब कुछ नष्ट कर दिया। उसने अपने उद्यान को उजाड डाला। आज यदि उसे इसका एहसास नही होता है तो कल 'कियामत' मे उसे इसका

८ हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा जो लोग किसी ऐसी मजलिस से उठे जिसमें उन्होंने अल्लाह् को याद नही किया तो मानो ये लोग मुरदार गदहे का शव छोड कर उठे हैं और यह उनके लिए 'क़ियामत' के दिन सन्ताप होगा"[11]।

—अबू दाऊद, हाकिम

९ हज़रत अबू मूसा रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा जो व्यक्ति अपने 'रब' को याद करता है और जो याद नही करता उनकी मिसाल ज़िन्दा और मुरदा की सी है"[12]। —बुख़ारी, मुस्लिम

१०. हज़रत आइशा रज़ि० कहती है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० सब समयो मे अल्लाह् को याद करते थे (किसी समय भी आप अल्लाह् को भूलते नही थे)। —अबूदाऊद

एहसास अवश्य होगा। उस समय वह कहेगा कि क्या अच्छा होता कि जीवन के किसी क्षण को भी नष्ट न करता।

११ मतलब यह है कि अल्लाह् की याद और उसके 'ज़िक्र' के बिना यदि कोई मजलिस समाप्त हो गई तो मानो मनुष्य अशुभ और अमगलकारी स्थान से उठा है। उसने वहाँ से अपने लिए सन्ताप ही सचित किया है। आनन्द की सामग्री नही जुटाई है।

१२ इस 'हदीस' मे एक महान् वास्तविकता का उल्लेख हुआ है। इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि अल्लाह् की याद और उसका स्मरण ही वास्तविक जीवन है। अल्लाह् से ग़ाफ़िल मनुष्य वास्तव मे जीवन से वचित है। अल्लाह् ही जीवन का उद्गम है, उसकी याद से मनुष्य को वास्तविक जीवन प्राप्त होता है। वास्तविक जीवन इसके सिवा और क्या है कि आदमी अपने ख़ुदा को पा ले और पूर्णत उस से प्रेम करने लगे। नबी जिस ज्ञान और धर्म से सम्मानित होते हैं उस से इसी जीवन का मार्ग-दर्शन मिलता है। 'तौरात' मे है: "मनुष्य केवल रोटी से नही जीवित रहता बल्कि उस 'कलिमा' से जीवित रहता है जो अल्लाह् की ओर से आता है।" अर्थात् अल्लाह् के उतारे हुए आदेश के द्वारा ही मनुष्य को वास्तविक जीवन का आभास हो सकता है। इजील बरनबास का यह वाक्य कितना मूल्यवान है. "शरीर भोजन से जीवित रहता है और आत्मा को ज्ञान और प्रेम से जीवन मिलता है" (११ : १०६)। यूहन्ना की इजील मे है: "अल्लाह् की रोटी वह है जो आकाश से उतरकर ससार को जीवन प्रदान करती है" (२७ ६)। हज़रत मसीह अ० दुआ करते है: हमारी प्रतिदिन की रोटी (*Daily*

bread) हमे प्रतिदिन प्रदान कर" (मत्ता ६ : १२)। हज़रत मसीह उपमाओं में बातें करते थे। रोटी से अभिप्रेत यहाँ वही चीज़ है जिस से मनुष्य को वास्तविक जीवन प्राप्त होता है।

क़ुरआन मे है "क्या वह व्यक्ति जो मुरदा था फिर हमने उसे जीवन प्रदान किया और उसके लिए प्रकाश कर दिया, जिसे लिये हुये वह लोगो मे चलता-फिरता है वह उस व्यक्ति की तरह हो सकता है जो अँधेरो मे पड़ा हुआ हो, उनसे निकलने वाला ही न हो" (अल-अनआम : १२२)। इस आयत से भी मालूम हुआ कि 'ईमान' वालो को जो जीवन प्राप्त होता है ईमान रहित लोग उस से वचित होते हैं।

अल्लाह का 'ज़िक्र' उसकी 'तस्बीह' और 'हम्द' वास्तविक जीवन का कारण बल्कि सर्वथा जीवन की हैसियत रखते हैं इसीलिए 'जन्नत' मे विशेष रूप से यह चीज़ 'जन्नत' वालो को आत्मिक आहार के रूप मे ठीक उसी प्रकार प्राप्त होगी जिस प्रकार बिना किसी कठिनाई और तकलीफ के हम सास लेते हैं। सास लेने की क्रिया मे दूसरी कोई चीज़ रुकावट नही बनती। हम कोई भी काम कर रहे होते हैं सास की क्रिया चलती रहती है। ठीक इसी प्रकार 'तस्बीह' और 'तहमीद' (ईश्वर का गुणगान) मे कोई भी चीज़ बाधक नहीं होगी। 'हदीस' मे है . "जन्नत वालो को 'तस्बीह' और 'तहमीद' (गुणगान एवं ईश प्रशसा) का 'इलहाम' (दैवी प्रेरणा) होता रहेगा जैसे सास का 'इलहाम' होता है।" —मुस्लिम, अबूदाऊद

जिक्र के कुछ पवित्र शब्द

१. सुमुरा बिन जुनदुब रजि० से उल्लित है कि अल्लाह के रसूल सल्‍ल० ने कहा : समस्त वाणी में चार सर्वश्रेष्ट हैं :

سُبْحَانَ اللّٰهِ وَالْحَمْدُ لِلّٰهِ وَلَا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَاللّٰهُ اَكْبَرُ

"सुबहानल्लाह, 'अलहमदुलिल्लाह,[2] 'लाइलाह इल्लल्लाह,[3] और

---

१. "सुबहानल्लाह" (महिमावान है अल्लाह !) 'तस्बीह' का 'कलिमा' है ।. इस से अभिप्राय अल्लाह की बडाई और उच्चता को स्वीकार करना है । कुरआन मजीद ने अपनी सात सूरतो को 'तस्बीह' के कल्मे से आरम्भ किया है । उदाहरणार्थ सूरा अल-हदीद इस आयत से शुरू होती है "अल्लाह की 'तस्बीह' की हर उस चीज़ ने जो आकाशो और धरती मे है और वह प्रभुत्व-शाली और तत्वदर्शी है" । ऐसा कल्मा जिस से अल्लाह की बड़ाई और महानता का प्रदर्शन होता हो श्रेष्ठ और उत्तम 'कल्मा' ही होगा ।

२. "अलहम्दुलिल्लाह" (हम्द अल्लाह के लिए है) 'तहमीद' अर्थात् अल्लाह प्रशसा और गुणगान और उसके आगे कृतज्ञा प्रकाशन का 'कलिमा' है । क़ुरआन करीम का प्रारम्भ 'तहमीद' ही के कल्मे से हुआ है । किसी बन्दे के लिए इस से बढकर श्रेष्ठता की बात और क्या हो सकती है कि उसकी ज़बान पर अपने 'रब' की 'हम्द' और प्रशसा का कल्मा हो । अल्लाह की दी हुई नेमतो और उसके उपकारो के प्रति कृतज्ञताप्रकाशन का भी इससे अच्छा उगाय दूसरा नही हो सकता कि हम दिल और ज़बान से उसके गुणो, को स्वीकार करें । इसीलिए नबी सल्ल० ने कहा है " 'हम्द' कृतज्ञा का आधार है ।" फिर 'तहमीद' के कल्मे को दुआ भी कहा गया है । 'हदीस' मे है श्रेष्ठतम दुआ 'अल हम्दु लिल्लाह' है । प्रत्यक्ष रूप मे इसमे याचना नही पाई जाती लेकिन अल्लाह का वादा है कि वह 'हम्द' और कृतज्ञाव्यज्ञिप्त पर बन्दे को और अधिक प्रदान करेगा (दे० सूरा इबराहीम ७) । इसलिए इस कल्मा को श्रेष्ठतम दुआ भी कह सकते है । फिर जिस प्रकार केवल अल्लाह की याद को 'ज़िक्र' नही कहते जब तक इसके साथ अल्लाह का प्रेम सम्मिलित न हो, ठीक उसी प्रकार केवल अल्लाह की प्रशसा को 'हम्द' नही कहा जा सकता । इसमे

'अल्लाहु अकबर,४" । —मुस्लिम

अल्लाह् का प्रेम भी सम्मिलित होना अनिवार्य है (दे० इब्ने कय्यम की किताब अलफ़वाइद पृ० १८३) । और प्रेम याचना के उच्चतम प्रकारो मे से है ।

'हम्द' के कलिमे की श्रेष्ठता और महत्व का अनुमान इस से भी किया जा सकता है कि विश्व की प्रत्येक वस्तु अल्लाह् की 'हम्द' और गुणगान मे लगी हुई है (दे० सूरा बनी इसराईल : ४४) । विश्व के निर्माण और विश्व के प्रत्येक नियम से अल्लाह के सौन्दर्य और प्रताप का ही प्रदर्शन होता है । 'जन्नत' वालो की भी अन्तिम पुकार 'तहमीद' (गुणगान) का कलमा ही होगा दे० सूरा यूनुस १० ।

३. "ला इलाह इल्लल्लाह्" (अल्लाह् के सिवा कोई 'इलाह' नही) । यह 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) का कलिमा है । यह कलिमा इस बात को व्यक्त करता है कि अल्लाह् के सिवा और कोई ईश्वर नही है और न ईश्वरत्व के गुणो से सम्पन्न है । उसके सिवा जो हैं उसी के पैदा किये हुए और उसी के दास हैं । अल्लाह् के सिवा कोई नही जिसे शासक और पूज्य एवं उपास्य स्वीकार किया जाए । मनुष्य का कर्तव्य है कि वह एक अल्लाह् का बन्दा बनकर रहे । अपनी बन्दगी की उमगो को उसी की सेवा मे प्रस्तुत करे । अल्लाह् के सिवा कोई ऐसी सत्ता नही है जिसे मनुष्य अपना आराध्य, अपनी समस्त कामनाओ का केन्द्र और अपना हाकिम और स्वामी बनाए ।

'तौहीद' की शिक्षा अगले धर्म ग्रन्थो मे भी मिलती है । उदाहरणार्थ : "सुन हे इसराईल की सन्तान ! प्रभु हमारा प्रभु एक ही प्रभु है । तू अपने सारे दिल और सारे प्राण और सारी शक्ति से प्रभु अपने ईश्वर से प्रेमभाव रख । और ये बातें जिनका आदेश आज मैं तुझे देता हूँ तेरे हृदय पर अकित रहे । और तू इन्हे अपनी सन्तान के हृदयाकित करना और घर बैठे और राह चलते और लेटे और उठते समय इनका ज़िक्र किया करना" (व्यवस्था विवरण] ६ ४-९) । एक दूसरी जगह आया है . "तुझको किसी दूसरे पूज्य की उपासना नही करनी होगी । इसलिए कि खुदावन्द (प्रभु) जिसका नाम "गैयूर' (स्वाभिमानी) है वह 'गैयूर' (स्वाभिमानी) प्रभु है भी" (निर्गमन ३४ १४) । एक दूसरी जगह कहा गया है "तू अपने लिए कोई गढी हुई मूर्ति न बनाना, न किसी चीज का रूप बनाना जो आकाश मे या धरती पर या धरती के नीचे जल मे है । तू उनके आगे सजदा न करना । और न उनकी 'इबादत' करना क्योकि मैं खुदावन्द तेरा 'गैयूर' (स्वाभिमानी) खुदा हूँ (निर्गमन २० . ४-५)

वेद मे है . य एक इत तमुष्टुहि कृष्टीना विचर्षणि ।

२. हज़रत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल एक वृक्ष के पास से गुज़रे जिसके पत्ते शुष्क थे, आपने उस पर अपनी लाठी मारी तो पत्ते झड़ पड़े, आपने कहा . 'अल्हम्दुलिल्लाह', 'सुबहान-

पतिर्जज्ञे वृषक्रतु ।

"जो ईश्वर एक ही है तू उसी की स्तुति कर, वह सब मनुष्यो का सर्वद्रष्टा सर्वज्ञ है, सुख की वर्षा करने वाला सम्पूर्ण ससार का एकमात्र अधिपति है।"

अयमेक इत्था पुरू उरु चष्टे विविश्पति

तस्य व्रतान्यनु वश्चरामसि। (ऋ० ८।२५।१६)

"वह एक ही ईश सारी प्रजा का स्वामी है। वही सबका कुशल निरीक्षक है हम सभी कल्याण के लिए उसकी आज्ञा का पालन करते है।"

न द्वितीयो न तृतीयश्चतुर्थो नाप्युच्यते ॥

न पञ्चमो न षष्ठः सप्तमो नाप्युच्यते ॥

नाष्टमो न नवमो दशमो नाप्युच्यते ॥

स सर्वस्मै विपश्यति यच्च प्राणति यच्च न ॥

तमिदं निगतं सहः स एष एक एकवृदेक एव ॥

सर्वे अस्मिन् देवा एकवृतो भवन्ति ॥

—अथर्व० १३।४।१६-२१

"यह ईश्वर न दूसरा है न तीसरा और न चौथा कहा जाता है, वह पाँचवाँ, छठा और सातवाँ भी नही कहा जाता है, वह आठवाँ, नवाँ, और दसवाँ भी नही कहा जाता है, वह समुच्चय ससारस्थ प्राणि वर्ग को विविध प्रकार से देखता है। उसे सब सामर्थ्य प्राप्त है। वह अकेला ही वर्तमान है। उसी मे पृथ्वी आदि समस्त देव वर्तमान है।"

'तौहीद' का प्रभाव वेदो के अतिरिक्त दूसरे हिन्दू ग्रन्थो मे भी मिलता है। उदाहरणार्थ शतपथ ब्रा० मे है

योन्या देवतामुपास्ते न स वेद यथा पशुरेव स देवानाम् ॥

(१४।४।२।२२)

"जो दूसरे मे ईश्वर बुद्धि करके उपासना करता है वह कुछ भी नही जानता इसलिए वह विद्वानो के बीच मे पशु के समान है।"

४. 'अल्लाहु अकबर' (अल्लाह सब से बड़ा है)। यह 'तकबीर' (ईश-महानता)

ल्लाह्' 'ला इलाह् इल्लल्लाह्' और 'अल्लाहु अकवर' गुनाहो को इस तरह झाड देते हैं जिस तरह इस वृक्ष के पत्ते झडते हैं[५]। —तिरमिज़ी

३. हजरत अबूजर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० से पूछा गया कि कौन सा कलाम (वाणी) सर्व श्रेष्ठ है ? आपने कहा जिसको अल्लाह् नें अपने 'फ़िरिश्तों' के लिए चुना है :

سُبْحَانَ اللّٰهِ وَبِحَمْدِهٖ ·

"सुबहानल्लाह् व बिहम्दिही[६]" —मुस्लिम

का कलिमा है। इस कलिमे से अल्लाह् की वडाई व्यक्त करते हैं। सव ईश्वर के पैदा किये हुए हैं। ईश्वर से बढकर किसी की सत्ता नही है। ये चारो कलिमे 'सुवहानल्लाह्' 'अलहम्दुलिल्लाह्', 'ला इलाह् इल्लल्लाह्', 'अल्लाहु अकवर' वास्तव मे ईशगुण गान है। इनके द्वारा अल्लाह् की महानता उसके प्रताप और उसके एक होने की उदघोषणा होती है। यही विशेप कारण है कि 'हदीसो' मे इन कलिमो की श्रेष्ठता का वर्णन हुआ है वल्कि यहाँ तक कहा गया है कि 'जन्नत' चटियल मैदान है उसके वृक्ष और उद्यान यही 'कलिमे' हैं।

एक 'रिवायत' मे है कि अल्लाह् के रसूल सल्ल० ने कहा "मेरा सुवहानल्लाहु अल हम्दुलिल्लाह, ला इलाह् इल्लल्लाह और अल्लाहु अकबर कहना मेरी दृष्टि मे उन सब चीज़ो से अधिक प्रिय है जिन पर सूर्य उदय होता है (अर्थात् ससार और उसकी सारी वस्तुओ से अधिक प्रिय मुझे ये कलिमे हैं)।"

५ मनुष्य यदि समझ-बूझकर चेतानावस्था मे इन कलिमो को पढे, तो उसके विचारो और कर्मों मे क्रान्ति आ सकती है। और उसके गुनाह क्षमा हो सकते हैं गुनाहो और खताओ के कारण जो भी उसे आध्यात्मिक और नैतिक हानि पहुँची होगी इन कलिमो के द्वारा उसकी क्षतिपूर्ति हो सकती है। मनुष्य के जीवन को बदलने और उसे निर्माल्य प्रदान करने के लिए ये कलिमे काफी हैं।

६. 'सुवहानल्लाह् व बिहम्दिही' (हम अल्लाह् की 'तस्बीह' और 'हम्द' (गुणगान) करते हैं का अर्थ वही है जो 'सुवहानल्लाह् व अलहम्दुलिल्लाह' का है। इस 'कलिमे' के महत्व और इसकी महानता के कारण इसकी गणना उत्तम कलिमों मे की गई है। और इसे विशेष रूप से 'फिरिश्तो' का जप ठहराया गया है। एक 'रिवायत' मे तो यहाँ तक आया है कि जिस व्यक्ति ने प्रतिदिन सौ बार

४. हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल अल्ल० ने कहा कि दो 'कलिमे' (शब्द) हैं जबान पर हल्के-फुल्के, 'मीज़ान' (तुला) में कृपानिधान (ईश्वर) को अत्यन्त प्रिय ·

سُبْحَانَ اللّٰهِ وَبِحَمْدِهٖ سُبْحَانَ اللّٰهِ الْعَظِيْمِ

"सुबहानल्लाह व बिहम्देही, सुब्हानल्लाहिल अज़ीम[६]"।
—बुखारी, मुस्लिम, तिरमिज़ी

५. हज़रत अब्दुल्लाह इब्न अम्र रज़ि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'हम्द' आधार है कृतज्ञता का, जिस बन्दे ने अल्लाह की 'हम्द' (प्रशंशा) नही की उसने उसके आगे कृतज्ञता नही दिखलाई।
—अल-बैहकी

६ हज़रत मुआज इब्न अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा कि अल्लाह ऐसे बन्दे से प्रसन्न रहता है जो खाना खाकर अल्लाह की 'हम्द' (प्रशंशा) करे और पानी पीकर अल्लाह की 'हम्द' करे। —मुस्लिम, तिरमिज़ी

७. हज़रत अबू मूसा अशअरी रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि मैं तुम्हे वह 'कलिमा' बताऊँ जो 'जन्नत' के खजानो में से है? मैंने कहा हाँ, अवश्य बताइये। आपने कहा .

لَا حَوْلَ وَلَا قُوَّةَ إِلَّا بِاللّٰهِ

"ला हौल व ला कूवता इल्ला बिल्लाह[८]" —मुस्लिम, बुखारी,

'सुबहानल्लाह व बिहम्दिही' कहा उसकी खताएँ माफ कर दी जायेंगी यद्यपि वह समुद्र के झाग के बराबर हो। समझकर चेतनावस्था मे जो व्यक्ति दिन मे कई बार यह पवित्र कलिमा पढ़ेगा सम्भव नही कि उसके जीवन पर इसका प्रभाव न पड़े और यह कलिमा उसके चरित्र को बदल न डाले।

७ ये कलिमे अल्लाह को बहुत ही पसन्द हैं। ये कलिमे नेकी के पलडे को अधिक झुकाने वाले होगे। फिर इन समस्त विशेषताओ के बावजूद न इन 'कलिमो' का पढना कुछ मुश्किल है और न इन्हे याद रखना कठिन है।

८ 'ला हौल वला कूवता इल्ला बिल्लाह' (कोई उपाय और शक्ति अल्लाह के बिना

८. हजरत अबू अय्यूब अनसारी रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा कि जिसने दस बार पढा

لَا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ لَهُ الْمُلْكُ وَلَهُ الْحَمْدُ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ۔

"अल्लाह के सिवा कोई 'इलाह' नही, वह अकेला है, उसका कोई सहभागी नही, राज्य उसी का ह, वह 'हम्द' (प्रशसा) का अधिकारी है और उसे हर चीज का सामर्थ्य प्राप्त है।"

वह उस व्यक्ति जैसा होगा जिस ने हजरत इस्माईल की औलाद के चार गुलाम आज़ाद किये[९]। —बुखारी, मुस्लिम

९. हजरत अबू मूसा अशअरी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा स्वच्छता एव शुद्धता आधा 'ईमान' है[१०], 'अल-हम्दु

प्रभावकारी नही हो सकती)। अल्लाह सहायक न हो तो किसी तरह मनुष्य गुनाहो से बच नही सकता। और यदि अल्लाह उसे शक्ति न दे तो मनुष्य के बस मे नही कि वह अल्लाह की बन्दगी और आज्ञापालन का कर्तव्य निभा सके। इस कलिमा का अभिप्राय यह है कि मनुष्य सारी शक्तियो का स्रोत अल्लाह ही को समझे। केवल अपने बल से मनुष्य किसी चीज पर भी काबू नही पा सकता। इस 'कलिमे' को यदि समझ कर पढ़ा जाए तो इस से आदमी को अपनी विवशता का ज्ञान होगा। गर्व और अभिमान उस से जाता रहेगा या किसी दूसरे पर भरोमा करने के बदले वह सदैव एक अल्लाह पर भरोसा करेगा। एक रिवायत' मे है कि बन्दा यह 'कलिमा' पढता है, तो अल्लाह कहता है . "मेरा बन्दा आज्ञाकारी बन गया, उसने 'इस्लाम' का मार्ग ग्रहण कर लिया" —अल-बैहकी।

९. गुलाम आज़ाद करना यो भी पुण्य कार्य है और यदि वे गुलाम किसी पैगम्बर की औलाद मे से हो, तो उन्हे स्वतन्त्र करने का जो बदला अल्लाह के यहाँ होगा वह अत्यन्त उत्कृष्ट होगा।

१०. अर्थात् सफाई-सुथराई 'ईमान' के तकाज़ो मे से है। मनुष्य का कर्तव्य है कि वह अपने वस्त्र और शरीर ही को नही बल्कि अपने अन्तर को भी शुद्ध और स्वच्छ रक्खे। हर प्रकार के बुरे विचारो और गलत धारणाओ से अपने को

लिल्लाह्' मीजान (तुला) को भर देता है और 'सुबहानल्लाह्' और 'अल-हम्दुलिल्लाह्' आकाश और धरती दोनों को के बीच भर देते हैं¹¹।

—मुस्लिम

१०. हज़रत सअद बिन वक्कास रज़ि० से उल्लिखित है कि एक ग्रामीण अरब अल्लाह् के रसूल सल्ल० की सेवा में उपस्थित हुआ और कहा (हे अल्लाह् के रसूल !) मुझे किसी ऐसे कलाम की शिक्षा दीजिए जिसे मैं पढ़ा करूँ, आपने कहा कहो

لَا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ، اَللّٰهُ اَكْبَرُ كَبِيْرًا وَالْحَمْدُ
لِلّٰهِ كَثِيْرًا، وَسُبْحَانَ اللّٰهِ رَبِّ الْعَالَمِيْنَ، وَلَا حَوْلَ وَلَا قُوَّةَ
اِلَّا بِاللّٰهِ الْعَزِيْزِ الْحَكِيْمِ

(अल्लाह् के सिवा कोई 'इलाह्' (इष्ट पूज्य) नही, वह अकेला है उसका कोई सहभागी नही, अल्लाह् सब से बडा है, ज्यादा-से-ज्यादा 'हम्द' (प्रशंसा) का अधिकारी अल्लाह् है, महान है, सारे ससार का पालन-कर्त्ता स्वामी ! किसी के पास कोई उपाय और कोई शक्ति नही है यह चीज केवल अल्लाह् के सहारे मिलती है जो प्रभुत्वशाली और 'हिकमत' वाला (तत्वदर्शी) है।" ग्रामीण ने कहा ये सब तो मेरे 'रब' के लिए हुए, मेरे लिए क्या है ? आपने कहा (कि यह दुआ)

اَللّٰهُمَّ اغْفِرْ لِيْ وَارْحَمْنِيْ وَاهْدِنِيْ وَارْزُقْنِيْ

बचाए। जिसने अपने बाह्य को स्वच्छ रक्खा उसने मानो 'ईमान' की आधी माँग को पूरी किया। जिसने अपने बाह्य और अन्तर दोनो को स्वच्छ रखने की कोशिश की उसने अपने 'ईमान' को पूर्ण कर लिया।

११ अर्थात् इन पवित्र कलिमो की बरकतो और इनके पारिश्रमिक का कोई अन्त नही है।

(हे अल्लाह ! मुझे क्षमा कर दे, मुझ पर दया कर, मेरा मार्गदर्शन कर और मुझे रोज़ी दे)"[१२] —मुस्लिम

सन्तुलित मार्ग

عَنْ عَبْدِاللّٰهِ بْنِ سَرْجِسَ اَنَّ النَّبِيَّ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ : اَلسَّمْتُ الْحَسَنُ وَالتُّؤَدَةُ وَالْاِقْتِصَادُ جُزْءٌ مِّنْ اَرْبَعٍ وَّعِشْرِيْنَ جُزْءًا مِّنَ النُّبُوَّةِ.

१. अब्दुल्लाह बिन सरजिस से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा अच्छा चरित्र, सहनशीलता और सन्तुलित नीति, 'नुबूवत' का चौबीसवाँ भाग है[१]। —तिरमिज़ी

२. हज़रत अबूहुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा · 'दीन' (सत्य धर्म) सहज है और 'दीन' से जब भी किसी ने ज़ोर आज़माई की और उस में सख्ती अपनाई, 'दीन' ने उसे हरा दिया। अत : सन्तुलित नीति अपनाओ और बीच का मार्ग ग्रहण करो, शुभ सूचना सुनो और प्रात काल और सन्ध्या समय और कुछ रात के भाग से सहायता प्राप्त करो[२]। —बुख़ारी

---

१२ अभिप्राय यह है कि तुम अल्लाह की 'हम्द' और गुणगान के साथ-साथ उससे अपने लिए दयालुता, क्षमा और हलाल रोज़ी की दुआ भी कर सकते हो। उस से प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष, बाह्य और आन्तरिक हर प्रकार की भलाई तलब की जा सकती है।

१ अर्थात् ये गुण साधारण और कम दर्जे के नही हैं। इन गुणो को 'नबियो' के चरित्र मे स्पष्ट स्थान प्राप्त रहा है। जो व्यक्ति जितना अधिक अपने जीवन मे इन गुणो को स्थान देगा वह उतना ही अधिक 'नुबूवत' की बरकतो से प्रकाश ग्रहण करेगा।

सन्तुलित नीति जीवन के प्रत्येक मामले मे अभीष्ट है। बुद्धिमान वही है जो जीवन के हर मामले मे बीच की नीति अपनाए।

२. अर्थात् 'दीन' (धर्म) मनुष्य के लिए सकट बन कर नही उतरा है। 'दीन' वास्तव मे जीवन के वास्तविक और स्वाभाविक नीति का नाम है। जीवन

३. हज़रत अबू अब्दुल्लाह जाबिर बिन समरा रज़ि० कहते है कि मैं नबी सल्ल० के साथ 'नमाज़' में शरीक था, आप की 'नमाज़' भी सन्तुलन के साथ थी और आप का 'ख़ुतबा' (भाषण) भी सन्तुलन के साथ था[3]।
—मुस्लिम

४. हज़रत अम्मार रज़ि० कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना . किसी व्यक्ति की 'नमाज़' का लम्बी होना और उस के ख़ुतबे का सक्षिप्त होना उस के 'फकीह' ('दीन' की समझ रखने वाला) होने का प्रमाण है। अत : 'नमाज़' को लम्बी करो और 'ख़ुतबे' को सक्षिप्त रक्खो। निस्सन्देह कुछ 'ख़ुतबे' जादू होते है[4]। —मुस्लिम

के स्वाभाविक मार्ग पर चलना ही मनुष्य के लिए सहज है यह और बात है कि कोई अपने स्वभाव और प्रकृति का ही वैरी हो जाए। बुद्धिहीनता, परिणाम की ओर से दृष्टि हटा लेने और दूसरी अनुचित प्रेरणाओ के कारण अधिकतर ऐसा हुआ है कि सहज और स्वाभाविक धर्म को लोगो ने अपने लिए दुस्साध्य बना लिया। और अपनी गढी हुई मुसीबतो को धर्म और मज़हब की सज्ञा दे ली।

इस 'हदीस' से जो बात मन मे बैठानी अभीष्ट है वह यही कि 'दीन' मे तुम्हारे लिए वही मार्ग पसन्द किया गया है जिसे तुम अपना सको। इसलिए 'दीन' मे अतिशयोक्ति से काम न लो। ऐसा न हो कि तुम अपनी ओर से कोई असन्तुलित नीति अपनाओ और जीवन को अपने लिए एक बोझ बना लो। प्रत्येक ज़िम्मेदारी को समझो। सुबह-शाम अल्लाह की 'इबादत' करो और रात के कुछ भाग मे भी उसके सामने खडे हो। इस प्रकार अपने लिए वह शक्ति सचित करते रहो जिसके द्वारा जीवन-यात्रा की सारी कठिनाइयाँ दूर हो जाएँ। और तुम सानन्द सफलता प्राप्त कर सको। क़ुरआन मे है : "अल्लाह तुम्हारे लिए आसानी चाहता है और तुम्हारे लिए सख़्ती नही चाहता।" २ : १८४

३. अर्थात् न तो आपने लम्बी 'नमाज़' पढाई और न बहुत सक्षिप्त। यही हाल आपके भाषण का भी था। ख़ुतबा ऐसा लम्बा न था कि सुनने वाले घबरा जाएँ।

४. मतलब यह है कि 'ख़ुतबा' बहुत लम्बा नही होना चाहिए। ख़ुतबा के मुकाबले मे 'नमाज़' लम्बी होनी चाहिए। यह बड़ी नासमझी की बात होगी कि आदमी 'नमाज़' तो बहुत छोटी पढाए परन्तु 'ख़ुतबा' उसका बहुत लम्बा हो।

५. हज़रत इब्न अब्बास रज़ि० कहते हैं कि नबी सल्ल० 'खुतबा' दे रहे थे, तो आप ने देखा कि एक व्यक्ति खड़ा हुआ है। आपने उस के बारे में पूछा। लोगों ने कहा वे अबू इसराईल हैं। उन्हों ने 'नज़्र' मानी है कि वे धूप में खडे रहेंगे, न बैठेंगे और न छाया लेंगे, न बात-चीत करेंगे और रोज़ा रक्खेंगे। आप ने कहा उन से कहो कि बात-चीत करे, छाया ले, बैठे और 'रोजा' पूरा करे[५] —बुखारी

६. हजरत आइशा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : अल्लाह की दृष्टि में उत्तम कर्म वह है जो सदैव किया जाए यद्यपि वह थोडा ही क्यों न हो[६] —मुस्लिम, बुखारी

७. हज़रत अनस रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल०

कुछ 'खुतबे' ऐसे मन मे उतर जाने वाले होते हैं जिनमे जादू का सा असर होता है। 'खुतबा' का छोटा होना उसके प्रभाव को कम नही करता बल्कि इससे उसका प्रभाव और बढ सकता है।

५ मतलब यह है कि 'दीन' और 'शरीअत' से अभीष्ट मनुष्य की शारीरिक यन्त्रणा और मनोदमन कदापि नही है। इस्लाम मे जो चीज़ अभीष्ट है वह मनोनिग्रह और मन का नियन्त्रण है न कि मनोदमन। मन की इच्छा पर क़ाबू पाने के लिए 'रोज़ा' काफी है।

इस 'हदीस' से यह भी मालूम हुआ कि यदि किसी ने गलत और धर्म-विरुद्ध कोई नज़्र या मन्नत मानी है तो उसका पूरा करना कदापि अनिवार्य नही है बल्कि उसे न पूरा करना ही आवश्यक है।

६. किसी कर्म पर निरन्तर जमे रहने का बडा महत्व है। मुस्लिम का प्रत्येक कर्म उस सम्बन्ध को व्यक्त करता है जो उसे अपने 'रब' से होता है। किसी नेक काम को ग्रहण करके उसे छोड देने का अर्थ केवल उस कर्म को छोड देना नही है बल्कि इस से उस सम्बन्ध को आघात पहुँचता है जो मनुष्य को अपने 'रब' से होता है। ज़ाहिर है यह चीज़ कभी भी प्रिय नही हो सकती कि मनुष्य के उस सम्बन्ध और सम्पर्क मे किसी प्रकार की कमी पैदा हो जो उसने अपने 'रब' से स्थापित किया हो। कर्म पर निरन्तर दृढ रहना उस समय सम्भव है जबकि मनुष्य की चेतना जाग्रत हो और वह 'इबादत' और कर्म मे सन्तुलित नीति अपनाए। उतना ही बोझ उठाए जितना वह उठा सकता हो। सन्तुलित नीति के द्वारा ही वह अपने जीवन मे भी सन्तुलन पैदा कर सकता है।

कहा करते थे कि अपने-आप पर सख्ती न करो अन्यथा फिर अल्लाह भी तुम पर सख्ती करेगा। एक जाति ने अपने-आप पर सख्ती की थी, तो अल्लाह ने भी उस पर सख्ती की। ये जो लोग 'सौमयो और 'दैरो' मे पाए जाते हैं ये उन्ही के स्मारक और अवशेष हैं। 'रुहबानियत' ('वैराग्य') उन्होंने स्वय निकाली थी हम ने (अल्लाह ने) उसे उन पर अनिवार्य नही किया था[7]।

८. हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है कि उन के पास एक स्त्री बैठी थी इतने मे नबी सल्ल० आए। आपने कहा : ये कौन हैं? कहा : ये अमुक स्त्री हैं और इन की 'नमाज' की बडी चर्चा है (कि ये 'नमाजें' सदा पढती है)। आप ने कहा : रुक जाओ, तुम पर उतना ही दायित्व है जितना तुम मे शक्ति हो। अल्लाह न उकताएगा जब तक तुम न उकताओ। अल्लाह को वही 'दीन' और आज्ञापालन अधिक प्रिय है जिस पर उस का ग्रहण करने वाला निरन्तर जमा रहे[8]। —बुखारी, मुस्लिम

९ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : तुम में से किसी को केवल उस का कर्म छुटकारा न दिलाएगा। लोगो ने कहा क्या आप को भी नही? हे अल्लाह के रसूल! आप ने कहा : मुझे भी नही सिवाय इस के कि अल्लाह मुझे अपनी दयालुता से ढक ले। अत बीच का मार्ग ग्रहण करो और सन्तुलित नीति अपनाओ और प्रात काल और सन्ध्या समय और कुछ रात के भाग में बीच की चाल चलते रहो, अभीष्ट स्थान पर पहुँच जाओगे[9]।

—बुखारी, मुस्लिम

---

७. दे० कुरआन सूरा अल-हदीद आयत २७। मतलब यह कि अल्लाह ने जितने भी आदेश दिये हैं वे स्वाभाविक और व्यवहार मे लाने योग्य हैं। तुम स्वय अपने लिए पाबन्दियाँ और कठिनाइयाँ न पैदा करो। इससे पहले एक जाति (यहूद और नसारा) ने स्वाभाविक धर्म की अवहेलना की और अपने लिए तरह-तरह के दुस्साध्य कर्म और मशक्कतें घढ ली, तो अल्लाह ने भी उसके साथ सख्ती की। यह वैराग्य की रीति ईसाइयो ने स्वय निकाली थी इसका आदेश उन्हें अल्लाह ने कदापि नही दिया था।

८ मनुष्य की वही वन्दगी, उपासना, 'इबादत' और कर्म अल्लाह को प्रिय और वास्तविकता की दृष्टि से विश्वास करने योग्य है जो जीवन मे सम्मिलित हो चुका हो, जो क्षणिक और सामयिक न हो।

९ अर्थात् मनुष्य को यह धोखा कदापि न होना चाहिए कि वह अपने कर्मों के

बल पर 'जन्नत' मे प्रवेश करेगा । बन्दगी का हक किस से ग्रदा हो सका है । मनुष्य के लिए उचित नीति यही हो सकती है कि वह जीवन मे सन्तुलित नीति ग्रपनाए ग्रौर ग्रल्लाह की दया ग्रौर उसकी कृपा पर भरोसा रक्खे । निश्चय ही उस पर ईश्वर की कृपा होगी । ग्रौर वह ग्रपने ग्रभीष्ट स्थान को पा लेगा ।

———

हदीस शास्त्र

हदीसो को जांच-परख और उन की रक्षा* के लिए 'मुहद्दिसीन' (हदीस के विशेषज्ञों) ने विभिन्न शास्त्रो की रचना की है उन में से कुछ का उल्लेख यहाँ किया जा रहा है :

१. अस्मार्उर्रिजाल (नाम शास्त्र)

इस मे 'रावियो' (हदीस के उल्लेखकर्ता) के वृत्तान्त का उल्लेख होता है। यह मानो 'हदीस' के रावियो की जीवनी है। इस शास्त्र के द्वारा यह मालूम किया जाता है कि कौन सा रावी किस दर्जे का है। और किसी रिवायत मे उन पर कहाँ तक भरोसा किया जा सकता है।

२. इल्मुर्रिवायत (उल्लेख एवं कथन शास्त्र)

इस में हदीस की 'रिवायत' और उसे सुरक्षित रखने के विषय पर विवेचन होता है।

३. इल्मुद्दरायत (मीमांसा शास्त्र)

इसमे हदीस के मौलिक शब्दो के बारे मे छान-बीन और उसके परखने के नियमो का वर्णन होता है।

४. तदवीनुल हदीस (संकलन शास्त्र)

इस में 'हदीस' के सगृहीत करने के विषय का वर्णन एवं विवेचन होता है।

५. अन-नासिख वलमंसूख (निवर्तन एव निरसन शास्त्र)

इस शास्त्र मे इस पर तर्क-वितर्क प्रस्तुत किया जा सकता है कि कौन सी हदीस 'नासिख' (मसूख करने वाली) है और कौन सी मसूख है और उसे किन कारणो से मसूख निर्धारित किया जा रहा है।

६. शानेनुज़ूल (अवतरण शास्त्र)

इस मे इस का उल्लेख होता है कि कौन सी हदीस किस समय और अवस्था की है। नबी सल्ल० ने कौन सी बात किस अवसर पर कही है।

७. अन-नज़र फिल असनाद (माध्यम व्यक्तियों की पड़ताल)

इस मे हदीस की सनद के सिलसिले का उल्लेख और उस पर बहस की जाती है।

८. कैफ़ियतु रिवायत (उल्लेख एवं कथन स्थिति)

इस में इस का उल्लेख होता है कि 'रावी' ने हदीस किस तरह रिवायत की है। और इस के दर्जे क्या है ?

९. अलफ़ाज़ुल हदीस (हदीस के शब्द)

मुहद्दिसों (हदीस के विशेषज्ञो) के पारिभाषिक शब्द क्या है ? और जिन शब्दों में हदीस रिवायत की गई है वे शब्द नवी सल्ल० के हो सकते हैं या नहीं ? इस में इसी विषय पर वहस की जाती है।

१०. तबक़ातुल हदीस (हदीस की श्रेणियाँ)

इस में इस पर बहस होती है कि कौन सी हदीस किस दर्जे की है ? और उस के रावी (उल्लेखकर्ता) किस तवके (श्रेणी) से सम्बन्ध रखते हैं ?

११. गरीबुल हदीस (अपरिचित हदीस)

अपरिचित शब्द यदि हदीस मे आये है तो उन का क्या अर्थ है और हदीस मे वे किस उद्देश्य से प्रयोग हुये हैं ?

१२. अल-जिर्ह वत्तादील (विवाद एवं न्याय निर्धारण)

इस में रावियों के विश्वसनीय या अविश्वसनीय होने के कारणो पर बहस की जाती है।

१३. तुरुक़ुल अहादीस (हदीस के विभिन्न सिलसिले)

कुछ हदीसे सनद के कई सिलसिले से रिवायत की गई है और विषय के अनुसार उन के टुकडे हदीस के ग्रन्थो के विभिन्न अध्यायों में उद्धृत किये जाते है। तुरुकुल अहादीस मे इस का विस्तृत उल्लेख होता है। बुख़ारी मे इस प्रकार की रिवायते बहुत मिलती हैं।

१४. अल-मौज़ूआत (मन गढ़न्त हदीसें)

मन गढन्त हदीसों को पहचानने का क्या उपाय है ? इस मे इसी पर बहस की जाती है।

१५. इलल हदीस (हदीस सम्बन्धी कुछ विशेष ध्यान देने योग्य बातें)

यह अत्यन्त कठिन शास्त्र है। इसमे इसका विस्तृत वर्णन होता है कि किसी हदीस के 'रावी' कब पैदा हुए। उन का देहान्त कहाँ हुआ ? जन्म

मृत्यु तक क्या हालत रही ? कहाँ निवास ग्रहण किया ? उन के नाम, उपाधि, उपनाम, कुन्नियत[1] क्या थी ? उन की स्मरण शक्ति कैसी थी ? सूझ-बूझ की दृष्टि से वे किस दर्जे के थे ?

१६. तसहीफुल असमा (नाम-उच्चारण की अशुद्धता)

इसमे परस्पर मिलते-जुलते नामो का स्पष्टीकरण और व्याख्या की जाती है ताकि उन मे अन्तर किया जा सके और नामो की एकरूपता के कारण रावी' के समझने मे किसी प्रकार का धोखा न हो।

१७. मुतशाबिह (नामो मे सादृश्य)

कभी ऐसा होता है कि रावियों के नाम और उन के उच्चारण मे एकरूपता पाई जाती है लेकिन उनके पिता के नाम लिपि मे एक होने के बावजूद उच्चारण मे विभिन्न होते हैं या इस के विपरीत रावियो के नामों मे एक रूपता हो और उन के पिता के नाम एक हो। इसे 'मुतशाबिह' कहते हैं। इस विषय पर खतीब बगदादी का एक ग्रन्थ है।

इस सिलसिले म 'मुहद्दिसो' ने अत्यन्त सूक्ष्म अन्तर की जाँच-पड़ताल की है और सन्देह की हर छोटी-बडी सम्भावना को दूर करने को सफल कोशिश की है।

१८. मोतलिफ व मुखतलिफ (अनुरूप और भिन्न)

इस मे उन रावियो मे अन्तर करते हैं जिन के नाम लिपि की दृष्टि से एक हो लेकिन उच्चारण मे भिन्न हो। इस विषय पर कई ग्रन्थ लिखे गये है जिन मे सब से प्रसिद्ध और उपयोगी 'तबसीरुल मुनतबिह बितहरीरिल मुशतबिह" है।

१९. मुत्तफिक व मुतर्फरिक (एक रूप और विभिन्न)

विभिन्न रावियो के नाम, कुन्नियत और वश एक हों तो उन में अन्तर करने के लिए विस्तार के साथ बताया जाता है कि इस नाम, 'कुन्नियत और वश के कितने 'रावी है, किन तबको (श्रेणियो) में है और

[1] वह नाम जो किसी नाते-रिश्ते पर आधारित होता है। 'कुन्नियत' का रिवाज अधिकतर अरबी नामो मे पाया जाता है। अरब के लोग एक-दूसरे को नाम लेने के बदले माता-पिता बेटा, बेटी से सम्बन्ध लगाकर पुकारते थे। जैसे अबू हाशिम अर्थात् हाशिम के बाप, उम्मे सल्मा अर्थात् सल्मा की माता।

हर एक ने किस-किस से रिवायत की है। परिभाषा मे इसे मुत्तफिक व मुतफरिक कहते हैं। खतीब बगदादी का इस पर एक ग्रन्थ है

२०. अल-वहदान (अल्प रिवायत वाले)

इस मे उन रावियों का उल्लेख किया जाता है जिन की रिवायत की हुई 'हदीसे' बहुत थोड़ी हैं।

२१. रिवायतुल आबा अन अबना (पिता की रिवायत पुत्र से)

इस में बेटे से पिता के रिवायत करने के सिलसिले में बहस की जाती है।

२२. रियतुस्सहाबा अनित्ताबिईन ('सहाबा' की रिवायत 'ताबई' से)

इस मे सहाबा के 'ताब्ईन' से 'रिवायत' करने के सिलसिले में वहस की जाती है। और इस के कारण आदि पर प्रकाश डाला जाता है।

२३. अल-जमा वत्तफरीक़ (एकता व अनेकता)

इस में अपरिचित रावियों के वृत्तान्त पर प्रकाश डाला जाता है।

२४. मारिफ़तुल हदीस (हदीस का ज्ञान)

इस में हदीस से सम्बन्धित विद्याओ की वास्तविकता पर प्रकाश डाला जाता है।

२५. अल-असबाब (कारण शास्त्र)

इस में हदीस के कारणो का उल्लेख होता है।

२६. तबक़ातुल मुदल्लिसीन (मुदिल्लसों की श्रेणियाँ)

'दल्स' का अर्थ है क्रय-विक्रय मे ऐब को छिपाना। प्रकाश और अन्धकार के परस्पर मिले-जुले होने को भी 'दल्स' कहते है। मुदल्लस रिवायत ऐसी रिवायत है जिस का रावी (उल्लेखकर्त्ता) ऐसे शब्द प्रयोग करता है जिस से यह भ्रम होता है कि वह जिस के माध्यम से रिवायत कर रहा है उस से उस ने प्रत्यक्ष रूप से सुना है हालांकि रिवायत प्रत्यक्ष उस की सुनी हुई नही होती बल्कि रिवायत उस तक किसी दूसरे व्यक्ति के द्वारा पहुँची हुई होती है। हदीस के विशेषज्ञो ('मुहद्दिसों') ने केवल झूठी हदीसें गढने वालों का ही पता नही लगाया बल्कि उन्हों ने अपने असाधारण परिश्रम से 'मुदल्लिसों' पर भी ग्रन्थ तैयार किये है। इब्न हजर की भी इस पर एक किताब है, जिस में १५२ मुदल्लिसो का उल्लेख किया गया है, जिन को पाँच तबको (श्रेणियो) में विभक्त किया है। पहले तबके मे कुल ३३ व्यक्ति हैं, दूसरी श्रेणी में भी ३३, तीसरे में ५०, चौथे में १२ और पाँचवे तबके मे २४ व्यक्ति हैं।

पारिभाषिक शब्दावली

हदीस सम्बन्धी पारिभाषिक शब्द :—

हदीस

यों तो 'हदीस' का अर्थ होता है बात परन्तु यह शब्द अत्यन्त व्यापक है। किसी के कथन, अभिप्राय, वृत्तान्त, घटना सब के लिए इस का प्रयोग हो सकता है। पारिभाषिक रूप मे नबी सल्ल० के कथन, कर्म और 'तकरीर[1]' को 'हदीस' कहते हैं।

सहाबी

उस सौभाग्यशाली व्यक्ति को सहाबी कहते हैं जिसे 'ईमान' की हालत मे 'नबी' सल्ल० से भेट का श्रेय प्राप्त हुआ हो और 'ईमान' ही की हालत मे उस का देहान्त हुआ हो।

ताबई

वह सौभाग्यशाली व्यक्ति जिसे 'ईमान' की दशा मे किसी 'सहाबी' से मिलने का श्रेय प्राप्त हुआ हो और 'ईमान' ही की दशा में संसार से उस ने प्रस्थान किया हो।

तबाताबईन

वे आदरणीय जन जिन्हो ने 'ईमान' की हालत में किसी 'ताबई' से भेंट की हो और 'ईमान' ही की दशा में उन का देहान्त हुआ हो।

असर

साधारणत 'सहाबा' (रजि०) के कर्म और कथन को 'असर' कहा जाता है। इस का बहुवचन 'आसार' है।

सनद

'हदीस' को 'रिवायत' करने वालो के सिलसिले को 'सनद' कहते हैं।

मत्न

'हदीस' के मूल शब्दो को 'मत्न' कहते हैं।

मौलिक रूप से हदीस के भेद :—

मौलिक रूप से 'हदीस' के दो भेद किये जाते हैं·

---

१ तकरीर का मूल अर्थ है किसी चीज को ज्यो का त्यो बाकी रखना। नबी सल्ल० के सामने कोई कार्य किया गया, या आपने कोई रीति प्रचलित देखी और उसे आपने रोका नही, परिभाषा मे इसे तक़रीर कहते हैं।

१. सरीही

वह 'हदीस' जिस मे स्पष्ट रूप से इस का उल्लेख हो कि वह नबी सल्ल० का कथन या किया हुआ कार्य है या 'तकरीर'[1] है।

(२) हुक्मी

वह 'हदीस' जिस का सम्बन्ध नबी सल्ल० से तो स्थापित न किया गया हो लेकिन उस मे जिन बातों का 'सहाबी' ने उल्लेख किया हो वे ऐसी हो कि नबी सल्ल० के सिवा कोई उन्हे बता नही सकता। जैसे 'कियामत' के लक्षण, कियामत से सम्बन्धित घटनाएँ, 'नबियो' के वृत्तान्त जिन मे इस बात का कोई सकेत न पाया जाता हो कि वे 'बनी इसराईल' से उद्धृत हैं।

हदीस क़ुदसी

जिस 'हदीस' को नबी सल्ल० अल्लाह के माध्यम से बयान करे, उसे हदीस कुदसी' कहते है।

सनद की दृष्टि से हदीस के भेद —

'सनद' की दृष्टि से हदीस के निमन्लिखित भेद हैं

१. मरफ़ूअ

जिस 'हदीस' की रिवायत का सिलसिला नबी सल्ल० तक पहुँचता हो।

२. मौक़ूफ़

जिस हदीस की रिवायत का सिलसिला 'सहाबी' पर पहुँच कर समाप्त हो जाता हो।

३ मक़तूअ

जिस 'हदीस' की 'सनद' 'ताबई' तक पहुँच कर समाप्त हो जाती हो।

कुछ लोग 'मौकूफ' और 'मकतूअ' को 'असर' कहते है अर्थात् वे 'सहाबा' और 'ताबई' के कौल और अमल (कथन और किये हुए कार्य) को क्रमश. 'मौकूफ' और 'मकतूअ' कहते है।

---

१ दे० पृष्ठ ५४३ फुटनोट १।

४. मुसनद

वह 'मरफूअ' हदीस जिस की सनद 'मुत्तसिल' (अविच्छिन्न) हो। मुसनद का यही अर्थ प्रसिद्ध है।

५. सलासियात

उन 'हदीसो' को कहते हैं जिन मे 'रावी' और नबी सल्ल० के बीच केवल तीन वास्ते (माध्यम व्यक्ति) पाये जाते हो।

रावियो ('हदीस' के उल्लेखकर्त्ताओ) के लिहाज़ से 'हदीसें' पाँच प्रकार की हैं :—

१. मुत्तसिल

वह हदीस जिस की सनद के सिलसिले मे आरम्भ से अन्त तक कही कोई रावी सकित न हो।

२. मुनक़तेअ

'मत्तसिल' के विपरीत अर्थात् वह हदीस जिस की सनद के सिलसिले में कही एक या ज्यादा 'रावी' साकित हो गये हो।

३. मोअजल

वह हदीस जिसकी सनद के सिलसिले में निरन्तर दो या दो से ज्यादा रावी गायब हो।

४. मुअल्लक

वह 'हदीस' जिस की सनद के आरम्भ से एक या कई एक रावी छोड दिये गये हो या पूरी सनद ही का विलोप (हज्फ) कर दिया गया हो। पारिभाषिक रूप मे इस विलोप को 'तालीक' कहते हैं।

५. मुरसल

वह हदीस जिस की सनद के सिलसिले मे 'ताबई' और नबी सल्ल० के बीच 'सहाबी' का जिक्र न हो।

विद्वानो का मत है कि 'मुरसल' हदीस के बारे मे 'तवक्कुफ' करना चाहिए (खामोश रहना चाहिए) क्योंकि मालूम नहीं कि साकित होने वाला रावी 'सिका' (विश्वसनीय) है या गैर सिका (अविश्वसनीय)। यह जरूरी नही है कि 'ताबई' ने किसी 'सहाबी' से ही रिवायत की हो। लेकिन इस की सम्भावना है कि उस ने किसी 'ताबई' से रिवायत की हो। लेकिन इमाम अबू हनीफा रह० और इमाम मालिक रह० की दृष्टि मे मुरसल

हदीस को नि.सकोच स्वीकृति प्राप्त है, क्योंकि 'इरसाल' करने वाले (मुरसल ढग से बयान करने वाले) ने पूर्ण विश्वास के कारण ही 'इरसाल' किया होगा। यदि उस की दृष्टि मे रिवायत विश्वास के योग्य न होती तो वह 'इरसाल' क्यो करता और उस का सम्बन्ध नवी सल्ल० से क्यों जोडता। इमाम शफई रह० की दृष्टि मे यदि उस की पुष्टि दूसरी किसी 'रिवायत' से होती हो—यद्यपि वह दूसरी रिवायत भी मुरसल ही क्यो न हो—तो उसे स्वीकृति प्राप्त होगी।

यदि 'रावी' (उल्लेखकर्त्ता) के बारे मे यह मालुम हो कि वह 'सिका' और 'गैर सिका' (विश्वसनीय और अविश्वसनीय दोनों प्रकार के व्यक्तियो) को साकित कर देता है तो सभी की दृष्टि में रिवायत के बारे मे 'तवक्कुक' किया जायेगा (खामोश रहा जायेगा)।

दर्जे और मरतबे की दृष्टि मे हदीस के भेद :—

दर्जे और मरतबे की दृष्टि से हदीसे तीन प्रकार की मानी जाती हैं

१. सही

वह हदीस जिस मे निम्नलिखित बाते मौजूद हों

(१.) 'सनद' की दृष्टि से मुत्तसिल हो। (२)'रावी' आदिल (न्यायशील) और चरित्र की दृष्टि से विश्वसनीय हो। (३) स्मरण शक्ति क्षीण न हुई हो और साथ ही विवेकशील भी हो। (४) रिवायत 'शाज' न हो। (५) 'मुअल्लल' भी न हो।

'शाज' और 'मुअल्लल' से अभिप्रेत क्या है ? आगे इसे स्पष्ट किया जा रहा है। यदि ये समस्त शर्तें पूरी होती हो तो रिवायत को 'सही लिजातिही' कहा जायेगी लेकिन रावी मे यदि कोई त्रुटि या कमी हो और वह कभी 'तुरुक' की अधिकता से पूरी हो जाती हो तो उस की रिवायत की हुई हदीस को 'सही लिगैरिही' कहेगे।

२. हसन

वह रिवायत जिस मे सही हदीस की समस्त शर्तें पूरी होती हों केवल स्मरण शक्ति या सुरक्षा (जब्त) की दृष्टि से हल्कापन हो। यदि इस तरह की 'हसन' रिवायत को दूसरी इसी प्रकार की रिवायतों का समर्थन प्राप्त हो तो उसे 'सही लिगैरिही' कहेगे।

जिस हदीस के रावी 'हसन' के रावी से कम दर्जे के हो परन्तु वह कई एक 'सनदो' से पहुँची हो उसे हसन लिगैरिही' कहेगे।

३. जईफ

ऐसी 'रिवायत' जिस मे 'सही' हदीस के समस्त गुणो और शर्तों में या कुछ मे स्पष्टत कमी पाई जाती हो।

कई 'जईफ' हदीसों के परस्पर मिलने से उनकी गणना 'हसन लिगैरिही' की श्रेणी में होता है लेकिन शर्त यह है कि यह 'जोफ' (कमज़ोरी) चरित्र की दृष्टि में न हो।

'सही हदीस' आदेश की दृष्टि से हुज्जत (दलील) है, इस पर सभी सहमत हैं। 'हसन लिजातिही' का हुक्म भी अधिकतर विद्वानो की दृष्टि मे हदीस सही जैसा है यद्यपि मरतबे मे उन से कम है। 'जईफ हदीस' यदि कई 'तुरुक' (सनदो के सिलसिले) कारण 'हसन लिगैरिही' के दर्जे को पहुँच जाए तो आदेश मे उनके हुज्जत (दलील) होने पर सभी सहमत हैं।

रावियो के अनेकता की दृष्टि से हदीस के भेद —

रावान (नानियों) की अनेकता की दृष्टि मे हदीसे तीन प्रकार की मानी जाती हैं :

१. मुतवातिर —वह हदीस जिनके रावी हर युग मे इतने अधिक पाये जाते हो कि उनका झूठ पर सहमत हो जाना सम्भव न हो।

'तवातुर' के कई भेद हैं :—

१. तवातुरे तवक़ा या तवातुरे लफ्ज़ी—एक युग से दूसरे युग तक पूर्ण फैलाव के साथ रिवायत का सिलसिला पाया जाता हो जैसे कुरआन मजीद अक्षरश इसी ढग से हम तक पहुँचा है।

२ तवातुरे अमल—नबी सल्ल० के समय से लेकर अब तक मुसलमानो का एक बड़ा गरोह निरन्तर किसी धार्मिक विषय मे अमल करता आ रहा हो जिसका झूठ पर एका करना असम्भव हो। उदाहरणार्थ पाँच वक्त की नमाजें, अजान, नमाज का मौलिक रूप, 'जकात', रोजा, हज्ज, कुरबानी आदि।

३ तवातुरे मानवी या तवातुरे कद्रेमुश्तरक —रावियो के शब्द यद्यपि विभिन्न हो परन्तु शब्दो का आशय और अर्थ एक हो और यह एक 'तवातुर' के दर्जे को पहुँचा हुआ हो। उदाहरणार्थ नबी सल्ल० के 'मोजजे' (चमत्कार), दुआ मे हाथ उठाना, गजवात (युद्ध जिसमे नबी सल्ल० शरीक हुये), आपका जीवन वृत्तान्त, इस्लाम के आवश्यक आदेश, वैधा-

'निक और निषेधात्मक आदेशों से सम्बन्ध रखने वाली 'रिवायतें'।

२. **ख़बर वाहिद या आहाद**—जिसके रावी संख्या की दृष्टि से 'तवातुर' के दर्जे को न पहुँचे हो।

'मुहद्दिसो' (हदीस के विशेषज्ञो) ने 'आहाद' के तीन भेद बताये हैं :—

१. **मशहूर**—वह 'हदीस' जिसके रावी 'सहाबा' के बाद किसी युग मे भी तीन से कम न हो बल्कि हर तबके मे 'रावियो' की संख्या तीन से अधिक हो। 'मशहूर' को कुछ लोग 'मुस्तफीज़' भी कहते है।

२. **अज़ीज़**—वह 'हदीस' जिसके 'रावी' हर युग मे दो से कम न हो।

३ **गरीब**—ऐसा 'हदीस' जिसका सनद' के सिलसिले मे किसी युग में एक ही 'रावी' हो। 'गरीब' को 'फर्द' भी कहते है।

'फर्द' अथवा 'गरीब' के दो भेद किए गये हैं :—

१. **फर्द मुतलक**—'सहाबी' से रिवायत करने वाला रावी केवल एक हो तो उस हदीस को 'फर्द मुतलक' कहते हैं।

२. **फर्द नसबी**—'सहाबी' से रिवायत करने वाले दो या कई हैं लेकिन उनके बाद के तबके मे 'रावी' केवल एक है तो उसे 'फर्द नसबी' कहेगे।

मुताबेयअ—'फर्द' हदीस के 'रावी' के बारे मे गुमान था कि उसकी 'रिवायत' केवल एक 'रावी' ने की है उसका कोई दूसरा 'रावी' मिल जाए तो उस 'हदीस' को 'मुताबेअ' कहेगे।

शाहिद--एक 'हदीस' किसी 'सहाबी' ने रिवायत की है। ऐसी दूसरी 'हदीस' किसी दूसरे 'सहाबी' से मिल जाए जिस से पहली 'हदीस' की पुष्टि होती हो तो उसे 'शाहिद' कहते है।

विरोध की दृष्टि से हदीस के भेद :—

विरोध की दृष्टि से 'हदीसे' चार प्रकार की मानी जाती है :—

१ **शाज़**—वह 'हदीस' जिसमे 'सिका' (विश्वसनीय) रावी अपने से बलशाली का विरोध करता हो।

२. **महफूज़**—वह 'हदीस' जिसका रावी 'सिका' (विश्वसनीय)

हो लेकिन उसका विरोध एक ऐसा 'सिका' (विश्वसनीय व्यक्ति) करता हो जिस से वह बलशाली हो।

३. मुनकर—वह 'हदीस' जिसका रावी (उल्लेखकर्त्ता) 'जईफ' (कमजोर) हो और वह 'सिका' (विश्वसनीय व्यक्ति) या बलशाली रावी का विरोध करता हो।

४. मारूफ—ऐसी 'हदीस' जिसका 'रावी' (उल्लेखकर्त्ता) बलशाली हो, उसका विरोध कमजोर रावी ने किया हो।

कुछ विशेष पारिभाषिक शब्द

१. मकबूल—वह 'हदीस' जिसे 'रिवायत' और 'दरायत' (सीमासा) की दृष्टि से हदीस के 'इमामो' (विशेषज्ञो) ने हुज्जत (दलील) के योग्य समझा हो।

२. मरदूद—ऐसी 'हदीस' जिसे 'रिवायत' और 'दरायत' की दृष्टि से हदीस के विशेषज्ञो ने हुज्जत (दलील) के योग्य न समझा हो।

३. मुहकम—ऐसी 'मकबूल' हदीस जिसका विरोध किसी दूसरी 'हदीस' से न होता हो।

४. मुखतलिफुल हदीस—किसी 'मकबूल' हदीस के विरुद्ध कोई दूसरी 'मकबूल' हदीस आजाए लेकिन सोच-विचार के पश्चात् दोनो में अनुकूलता की प्रतीत हो तो उसे 'मुखतलिफुल हदीस' कहेगे।

५. नासिख व मन्सूख—'मकबूल' हदीस के मुकाबले मे कोई दूसरी 'मकबूल' हदीस आ जाए और दोनों मे अनुकूलता सम्भव न हो तो जो हदीस पहले की ('मुकद्दम') होगी वह मन्सूख ठहरेगी और जो बाद की ('मुअख्खर') होगी उसे नासिख (मन्सूख करने वाली) ठहरायेंगे। शर्त्त यह है कि दोनों के उल्लेखकर्त्ता ('रावी') एक ही दर्जे के हो।

६. मुतवक्किफ फीह—जिन 'हदीसो' मे टकराव पाया जाता हो और दोनो मे अनुकूलता असम्भव हो और 'शाने नुजूल' की दृष्टि से उनमें से किसी को 'नासिख' या 'मन्सूख' ठहराना भी सम्भव न हो तो दोनो मे अमल करने मे 'तवक्कुफ' किया जायेगा (रुका जायेगा)।

७. मुअल्लल—वह 'हदीस' जिसमे कोई ऐसी गुप्त त्रुटि पाई जाती हो जिसे हदीस के विशेषज्ञ ही भाँप सकते हो उदाहरणार्थ

किसी भ्रम के कारण 'मरफूअ' को 'मौकूफ' ठहरा लिया गया हो आदि।

८. **मौजूअ**—वह 'हदीस' जो मन घडत हो, जिसकी सनद के सिलसिले मे ऐसा व्यक्ति मोजूद हो जो 'हदीसे घड़कर बयान करता हो।

९. **मतरूक**—जिसे किसी झूठे व्यक्ति ने रिवायत की हो।

१०. **मुदर्रज**—इसके दो भेद हैं :—

१ **मुदर्रजुल इसनाद**—जिसकी सनद में परिवर्तन कर दिया गया हो।

२ **मुदर्रजुल मत्न**—हदीस के 'मत्न' (मूल शब्दो) मे 'सहाबी' या 'ताबई' का कौल (कथन) सम्मिलित कर दिया गया हो। चाहे किसी शब्द का अर्थ बयान करने के लिए सम्मिलित किया गया हो या किसी अर्थ को स्पष्ट करने के लिए 'मुतलक' अर्थात् मुक्त आशय को निश्चित रूप देने (तकईद) के ध्येय से मिलाया गया हो वह हदीस 'मुदर्रज' होगी।

११ **मक़लूब**—वह हदीस जिसमें 'रावी' आगे-पीछे (मुकद्दम व मुअखखर हो गए हो या 'हदीस' के शब्द आगे-पीछे हो गये हो अर्थात् 'इस्नाद' (सनदो) या 'मत्न' (हदीस के मूल शब्दो) मे उलट-फेर हुआ हो।

१२. मुजतरिब

हदीस की सनदो के सिलसिले मे 'रावियो' का विभेद पाया जाता हो यह विभेद नामो के उलट-पलट (तकदीम व ताखीर) के कारण भी हो सकता है उदाहरणार्थ एक 'रावी' के स्थान पर दूसरा 'रावी' हो या 'सनदो' के सिलसिले के 'रावियो' के नामो में 'तसहीफ' (अनुरूपता), सक्षेप या विलोप हो या 'हदीस' के 'मत्न' (हदीस के मूल शब्द) मे भी उलट-फेर हुआ हो। अर्थात एक 'मत्न' की जगह दूसरा 'मत्न' हो। इसी प्रकार की दूसरी चीजो के कारण भी हदीस 'मुजतरिब' हो सकती है और यदि उनमे अनुकूलता सम्भव हो तो हदीस 'मकबूल' है अन्यथा उसके बारे मे 'तवक्कुफ करेंगे (खामोश रहेगे)।

१३. मुसहहफ़ या मुहर्रफ़

'रावियो' (हदीस के उल्लेखकर्त्ताओं) के नाम मे जिनके लिपि-रूप मे समानता पाई जाती हो परिवर्त्तन कर दिया गया हो।

१४. मुबहम

वह हदीस जिसके 'रावी' का नाम बयान न किया गया हो

१५. मस्तूर

वह हदीस' जिसे किसी ऐसे रावी ने रिवायत की हो जिसकी स्मरण शक्ति क्षीण हो गई हो और यह मालूम न हो सके कि यह 'हदीस' किस समय की है। उस समय की जब उसकी स्मरण शक्ति ठीक थी या उस समय की जब उसकी स्मरण शक्ति क्षीण हो गई थी।

१६. मुख़्तलत

जिसके 'रावी' (उल्लेखकर्त्ता) से भूल या गलती हो जाती हो।

१७. मुदल्लस

'रावी' जिससे रिवायत करे उस से उस की मुलाकात तो हो परन्तु 'रिवायत' उसने उससे स्वयं सुनी न हो परन्तु शब्द ऐसे प्रयोग करे जिससे यह भ्रम होता हो कि उसने उसे स्वय सुना है। 'रावी' के ऐसे शब्दों के प्रयोग करने को जिससे यह गुमान हो कि उसने स्वय 'रावी' से 'रिवायत' ली है हालांकि रिवायत उसने किसी दूसरे के द्वारा ली है, 'तदलीस' कहते हैं। 'तदलीस' करने वाले को 'मुदल्लिस' कहा जाता है।

मुदल्लिस' की 'रिवायत' स्वीकार की जाए या स्वीकार न की जाए इसमे मतभेद है। हदीस के विशेषज्ञों और 'फकीहो की एक जमात के दृष्टि मे 'तदलीस' ऐब है। जिस किसी के बारे यह मालूम हो कि वह 'तदलीस' करता है उसकी 'हदीस' कबूल न की जाए। लेकिन बाकी सभी के विचार में ऐसे व्यक्ति की 'तदलीस' को स्वीकार किया जाएगा जिसके बारे में यह मालूम हो कि वह 'सिकात' (विश्वसनीय) की ही 'तदलीस' करता है जैसे इब्न उमैना। उस व्यक्ति की तदलीस स्वीकार नही की जाएगी जो 'जईफ' और 'गैरजईफ', सिका (विश्वसनीय) और गैर सिका (अविश्वसनीय) सब की तदलीस करता है। जब तक वह 'समेअ्तु' (मैंने सुना) या 'हद्दसना' (हम से बयान किया) या'अखबरना' (हमें खबर दी) जैसे शब्दों के द्वारा 'सिमाअ' (सुनने) को स्पष्ट न करे उसकी 'रिवायत' स्वीकार नही की जाएगी।

'तदलीस' के विभिन्न कारण थे। कभी तो किसी बुरे ध्येय से मनुष्य 'तदलीस' करता है। कभी 'रावी' 'तदलीस' राजनीतिक कारणो से करता है। कुछ महान व्यक्तियों ने 'तदलीस' इस लिए भी की है कि उन्हे 'हदीस' के सत्य होने पर पूर्ण विश्वास प्राप्त था।

१८ मुरसल ख़फ़ी

'मुदल्लस' और 'मुरसल खफी' मे सूक्ष्म अन्तर है, 'तदलीस' मे तो 'रावी' से उस व्यक्ति की मुलाकात होती है जिस से वह रिवायत करता है लेकिन 'मुरसल' ख़फी' में 'इरसाल' करने वाला यद्यपि उस का समकालीन होता है जिस से वह 'रिवायत' करता है परन्तु उस से उस की मुलाकात साबित नही होती ।

१९. 'रिवायत मुअनअन'

'मुअनअन' उस रिवायत को कहते है जिसमे एक 'रावी' ऊपर के 'रावी' से 'अन' (से, *by*) शब्द द्वारा रिवायत करता है अर्थात् वह कहता है कि यह 'रिवायत' मुझ तक अमुक व्यक्ति मे पहुँची । इस से यह बात स्पष्ट नही होती कि उसने यह 'हदीस' स्वय सुनी है या बीच मे कोई 'रावी' और भी है जिस को उसने छोड दिया । इसीलिए 'मुअनअन' मे 'तदलीस' या 'इरसाल', अर्थात् हदीस के 'मुदल्लस' या 'मुरसल, होने का सन्देह होता है । लेकिन इससे इन्कार नही कि 'अन' (से) या 'काल' (कहा)शब्द का प्रयोग अधिकतर हदीस के शास्त्रियो की दृष्टि मे सामान्यत अनुज्ञा (मुतलक-इजाजत) और 'इत्तसाल' (प्रत्यक्ष सम्पर्क) के लिए होता रहा है

नोट :-

हदीस के विशेषज्ञो की कुछ अपनी निजी परिभाषाएँ भी है। उदाहरणार्थ इमाम तिरमिजी रिवायतो मे साधारणत यह स्पष्ट कर देते है कि यह हदीस 'हसन सही' है, 'हसन गरीब' है । कोई रिवायत 'हसन-लिजातिही' और सही लिगैरिही' हो सकती है । इस प्रकार उसका सही होना समझ मे आता है । इसी प्रकार किसी रिवायत का एक साथ 'गरीब' और सही होना भी सम्भव है । लेकिन किसी रिवायत का एक साथ 'हसन' और 'गरीब' दोनो होना समझ मे नही आता क्योकि जब इमाम तिरमिजी ने 'हसन' मे 'तुरुक' (सनद के सिलसिलो) की अनेकता को दृष्टि में रक्खा है तो कोई 'रिवायत' हसन' और 'गरीब' दोनों कैसे हो सकती है। 'हदीस' के विशेषज्ञो ने कहा है कि इमाम तिरमिजी ने केवल एक प्रकार के 'हसन' मे 'तुरुक' की अनेकता का विचार किया है, समस्त 'हसन' रिवायतों मे उन्हो ने इसका विचार नही किया है। कुछ लोगो का कहना है कि 'हसन गरीब' से अभिप्रेत यह है कि हदीस जिन सनदो से उल्लिखित हैं उनमे एक सनद की दृष्टि से उसे 'हसन' कहा जायेगा और दूसरी सनद की दृष्टि से उसे 'गरीब' कहेगे ।

सामान्य पारिभाषिक शब्दावली

अल्लाह—'अल्लाह' शब्द वास्तव मे 'अल-इलाह' था। इसमें 'अल' उसी प्रकार प्रयोग हुआ है जैसे अंग्रेजी में किसी शब्द से पहले *the* लगा कर उसे जातिवाचक से व्यक्ति वाचक बना लेते हैं। इस प्रकार 'अल-इलाह' या अल्लाह से अभिप्रेत एक विशिष्ट सत्ता है। अल्लाह का अर्थ हुआ एक प्रमुख और विशिष्ट 'इलाह' (इष्ट पूज्य)। 'इलाह' की व्याख्या इस शब्दावली मे 'इलाह' शब्द के अन्तर्गत देखें।

अल्लाह आरम्भ मे ही उस सत्ता का नाम रहा है जो समस्त गुणो से युक्त है। उस जैसा कोई नही। वह दोषरहित है। सम्पूर्ण विश्व उसी की रचना है और वह सम्पूर्ण विश्व का स्वामी तथा पालक है।

कुरआन के अवतरण से पूर्व भी अरब के लोग यह नाम इसी अर्थ में लेते थे।

अज़ान—'नमाज' की पुकार जो मस्जिदों मे होती है ताकि लोग निश्चित समय पर 'नमाज़' पढने के लिए मस्जिद में एकत्र हो सके। 'अज़ान' मे जिन शब्दों का उच्चारण किया जाता है उनमें इस्लामी धारणाओ को व्यक्त किया जाता है।

अनसार—१. 'नासिर' का बहुवचन है। सहायक, मददगार। २.मदीना के मुसलमान जिन्हों ने नबी सल्ल०, आपके मिशन और साथियों की हर प्रकार से सहायता की जो 'हिजरत' कर के मदीना पहुँचे थे।

अरफात—एक ऊँची जगह का नाम है जो मक्का से ६ मील की दूरी पर स्थित है। जिलहिज्जा (एक अरबी महीने का नाम जिसमें 'हज्ज' किया जाता है) की ६ वी तारीख को सब 'हज्ज' करने वालों के लिए यहाँ पहुँच कर ठहरना आवश्यक है।

अर्श—राज सिहासन (*throne*), ईश्वरीय सिहासन।

'अर्श' और उस पर अल्लाह के विराजमान होने की वास्तविकता का पूर्ण रूप से समझना हमारे लिए अत्यन्त कठिन है। सम्भव है किसी विशेष स्थान को अल्लाह ने अपने विशाल राज्य का केन्द्र बनाया हो और विश्व के प्रबन्ध एव व्यवस्था का सम्बन्ध उसी स्थान से हो और वही से सम्पूर्ण विश्व में शक्ति और सत्ता की व्यप्ति हो रही हो। यह भी सम्भव है कि 'अर्श' से

अभिप्रेत राज्य-सत्ता और शासन हो और उस पर विराजमान होने का अर्थ यह हो कि अल्लाह विश्व का केवल स्रष्टा ही नही है बल्कि सम्पूर्ण विश्व उसी के अधीन है, वही इस कारखाने को चला रहा है। वह विश्व की रचना कर के उससे विलग नही हो गया है।

अस्माउर्रिजाल—वह शास्त्र जिनमें उन व्यक्तियो के जीवन-वृतान्त और व्यक्तित्व आदि का वर्णन होता है जिनके द्वारा हजरत मुहम्मद सल्ल० की 'हदीसों' (अर्थात् आपके वचन एव कर्म) का ज्ञान हम तक पहुँच सका है। 'अस्माउर्रिजाल' के द्वारा लाखों व्यक्ति की जीवनी और चरित्र सदैव के लिए स्वरक्षित हो गई है। यह सब कुछ केवल एक व्यक्ति (हजरत मुहम्मद सल्ल०) की शिक्षाओं और उसके जीवन-आदर्श को प्रमाणिक रूप देने के लिए किया गया। आज नबी सल्ल० के किसी कर्म या वचन के विषय में यह मालूम किया जा सकता है कि वह जिन व्यक्तियो के माध्यम से हम तक पहुँचा है उनमें से प्रत्येक अपने चरित्र, बुद्धि, स्मरण शक्ति आदि की दृष्टि से कैसा था और उसकी उल्लिखित 'हदीसो' पर कहाँ तक भरोसा किया जा सकता है। हजरत मुहम्मद सल्ल० की जीवनी और आपकी शिक्षाओं को प्रमाणिक रूप में सुरक्षित रखने का जो कार्य हुआ है वह इतिहास में आज तक किसी भी व्यक्तित्व के लिए नही हुआ। इस पर पाश्चात्य देश के विद्वान भी आश्चर्यचकित हो कर रह गये हैं।

आखिरत (*Hereafter*)—परलोक। आखिरत से अभिप्रेत परलोक और पारलौकिक जीवन दोनो है। वर्तमान लोक की आयु सीमित और निश्चित है। एक समय ऐसा अवश्य आयेगा जब विश्व की वर्तमान व्यवस्था बिगड जायेगी। अल्लाह एक नये लोक का निर्माण करेगा जिसका नियम आज से भिन्न होगा। जो कुछ आज अप्रत्यक्ष है वह उस लोक में प्रत्यक्ष हो जायेगा। वास्तविकता (*Reality*) उस दिन आँखो से ओझल नही रहेगी। अल्लाह समस्त मनुष्य को पुन· जीवन प्रदान करेगा उन्हे इकट्ठा करके उनके जीवन के अच्छे-बुरे कर्मों का हिसाब लेगा, और अपने कर्मों के अनुसार लोगों को उस दिन पूरा-पूरा बदला मिल जायेगा। वह फैसले और निर्णय का दिन होगा। फैसले का पूरा अधिकार ईश्वर के हाथ मे होगा। अच्छे और अल्लाह के अज्ञाकारी बन्दे 'जन्नत' (*Paradise*) में जायेंगे बुरे लोगो का ठिकाना 'जहन्नम' (नरक) होगा। 'आखिरत' की तैयारी हमें आज ही करनी चाहिए ताकि हम 'जहन्नम' की आग से बच सके और

ईश्वर के यहाँ हमे उच्च-से-उच्च स्थान मिल सके।

श्रामिल—कार्यकर्ता अधिकारी, किसी स्थान पर या किसी कार्य के लिए राज्य की ओर से नियुक्त किया हुआ कार्यकर्त्ता या अधिकारी व्यक्ति।

आयत—'आयत' का मौलिक अर्थ होता है निशानी (*sign*), चिह्न, संकेत आदि। आयतो के द्वारा किसी चीज़ को प्रमाणित रूप दिया जाता है। 'आयतें' हमारी सोच-विचार की शक्ति को उभारती और हमारे मन में प्रश्न पैदा करती हैं। वे हमारे प्राकृतिक स्वभाव को जगाती और उस चीज़ का स्मरण कराती हैं जिसे हम भूले हुए होते हैं। कुरआन मे यह शब्द कई अर्थों मे प्रयुक्त हुआ है

प्राकृतिक लक्षण एवं प्राकृतिक वास्तविकताएँ (*facts*) और ऐतिहासिक घटनाएँ, इसलिए कि उनके द्वारा उन सच्चाइयो का पता चलता है जो इस भौतिक जगत के पीछे काम कर रही हैं, जिनकी झलक प्रकृति की विभिन्न लीलाओ और मानव-इतिहास के उत्थान-पतन में दिखाई देती है।

वे चमत्कार जिनको अल्लाह के नबी ने अपने नबी होने के प्रमाण स्वरूप प्रस्तुत किया हो।

कुरआन-अंश या कुरआन के वाक्य। कुरआन के वाक्य अपनी विभिन्न विशेषताओ के कारण इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण हैं कि कुरआन ईश्वरीय वाणी या अल्लाह का 'कलाम' है।

आसार—'आसार' असर का बहुवचन है। साधारणतया 'सहाबा' रजि० के कथन और उनके कर्म को 'असर' कहा जाता है।

इंजील—'इंजील' यूनानी शब्द है। मूल शब्द *euanggliow* है जिसका शाब्दिक अर्थ शुभ-सूचना है। ईसाई विचार-धारा के अनुसार इंजील को इंजील इसलिए कहा गया है कि हज़रत ईसा अ० ईश्वरीय राज्य की शुभसूचना देते थे। मुसलमानो के विचार मे इंजील 'शुभसूचना' इसलिए है कि उसमे हज़रत मुहम्मद सल्ल० के आगमन की शुभसूचना है। इंजील वह आसमानी किताब है जो हज़रत ईसा मसीह पर उतरी थी। इंजील वास्तव में हज़रत ईसा अ० के अन्तिम समय के ढाई-तीन वर्ष के उन कथनो, उपदेशो और भाषणो का संग्रह है जो उन्होने ईश्वर की ओर से दिये थे। आपके जीवन-काल मे उन्हे लिपिबद्ध किया जा सका था या

नही इसके बारे में निश्चय पूर्वक कोई बात नही कही जा सकती। एक समय के पश्चात् आपके जीवन-चरित्र पर विभिन्न पुस्तकें लिखी गई तो उनमे आपके उन भाषणों और कथनो को जगह-जगह सम्मिलित कर दिया गया जो उन पुस्तकों के लेखकों तक जन-श्रुतियो या स्मृति-पत्रो द्वारा पहुचे थे। आज जो इंजीलें मत्ता (*Mathew*), मरकुस (*Mark*), लूका (*Luka*) और यूहन्ना (*John*) के नाम से पाई जाती है वे वास्तव में इंजील नही हैं बल्कि इंजील हज़रत ईसा मसीह के उन कथनों और भाषणों मे कहेंगे जो इन इंजीलों मे जगह-जगह मिलते है

इंजीलों से पहले के आसमानी ग्रन्थों की पुष्टि होती है। इनसे कुरआन की भी पुष्टि होती है। हजरत मुहम्मद के आगमन के विषय मे प्रत्यक्ष सकेत भी इंजील मे मिलते है। इंजीलो में सबसे अधिक विश्व-सनीय इंजील 'इंजील बरनबास' है। जिसे कलीसा ने अवैध और सदिग्ध ठहराया है ईसाइयो ने इस इंजील को छिपाने का बड़ा प्रयत्न किया। सोलहवी शताब्दी मे इंजील बरनबास के अतालवी अनुवाद की एक प्रति पोप सिक्सटस (*Sixtus*) के पुस्तकालय में पाई जाती थी लेकिन उसे पढने की इजाज़त न थी। अट्ठारहवी शताब्दी के आरम्भ मे वह एक व्यक्ति जान टोलैंड के हाथ लगा। १९०७ ई० में उसका अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित हो गया। ईसाई-जगत ने इसे जाली इंजील घोषित किया है। लेकिन यह घोषणा ईसाई-जगत का अन्याय है। यह घोर अन्याय केवल इसलिए किया गया है कि इसमें प्रत्यक्षत हज़रत मुहम्मद के विषय में भविष्य वाणियाँ मिलती है और ईसाइयों की बहुत सी गलत धारणाओ का खण्डन होता है। हज़रत मुहम्मद सल्ल० के जन्म से ६५ वर्ष पूर्व इंजील बरनबास मौजूद थी इसलिए यह प्रश्न ही नही उठता कि यह किसी मुसलमान की मनगढन्त रचना हो।

इजतिहाद—जिन बातों और समस्याओं के विषय मे स्पष्ट रूप से कोई आदेश कुरआन या 'हदीस' मे न मिलता हो उनके बारे मे सोच-विचार करना, कुरआन व हदीस के प्रकाश में उनका कोई हल निकालना 'इजतिहाद' कहलाता है। 'इजतिहाद' करने का हक स्वय नबी सल्ल० ने मुस्लिमों को प्रदान किया है। 'इजतिहाद' एक शुभकार्य और धार्मिक सेवा है लेकिन यह कार्य उन्ही लोगों के द्वारा सम्पन्न होता है जो प्रतिभा-शाली और धर्म का गहरा ज्ञान रखने वाले होते हैं।

इजमा—किसी विषय में सब का सहमत होना। किसी मामले मे धार्मिक दृष्टिकोण एव धार्मिक निर्णय क्या हो? इस बारे में सब का एकमत होना 'इजमा' कहलाता है। 'इजमा' का आदर करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है। 'इजमा' धार्मिक विषयों में प्रमाण की हैसियत रखता है, यह कुरआन से भी सिद्ध है और स्वय नबी सल्ल० ने भी कहा है जिस चीज को ईमान वालों ने अच्छा समझा वह चीज अल्लाह की दृष्टि में भी अच्छी है।—मवत्ता इमाम मालिक

इबादत—'इबादत' का मौलिक अर्थ है दास्यभाव, विनम्रता, किसी के आगे पूर्ण रूप से झुक जाना, बिछ जाना आदि। फिर इसमें प्रेम का भाव भी मम्मिलित है। विनम्रता एव दास्यभाव मे जब तक प्रेमभाव न पाया जाता हो उसे 'इबादत' नही कह सकते। इबादत' के द्वारा उस सम्बन्ध एवं सम्पर्क की अभिव्यक्ति होती है जो मनुष्य और ईश्वर के मध्य पाया जाता है।

मनुष्य अल्लाह की 'इबादत' करे यह अल्लाह का हक है। अल्लाह के अतिरिक्त किसी और की 'इबादत' करने को इस्लाम ने अत्यन्त घृणित ठहराया है। यह उतना ही घृणित है जितना सामाजिक जीवन में व्यभिचार को घृणित समझा जाता है। 'इबादत' में बडी व्यापकता पाई जाती है। 'इबादत' शब्द जहाँ पूजा (*worship*), उपासना और विनय के अर्थ में प्रयोग होता है। वही यह शब्द कुरआन मे आज्ञापालन (*obedience*), भक्ति, वन्दगी और दासता आदि के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है।

अल्लाह की 'इबादत' करने वाला वास्तव मे वही है जो अल्लाह ही की पूजा करे और जीवन के प्रत्येक मामले में अल्लाह के दिये आदेशों का पालन करे।

इमाम—जमाअत के साथ (सामूहिक रूप से) नमाज़ पढते समय जो व्यक्ति इमामत अर्थात् नमाजियों का प्रतिनिधित्व करता और उन्हे नमाज़ पढाता है उसे 'इमाम कहा जाता है।

इलाह—पूज्य, ईश्वर, खुदा, प्रभु। धात्वर्थ की दृष्टि से 'इलाह' उसको कहा जायेगा जो रहस्यमय और सर्वोच्च हो। जिसे हमारे नेत्र देखने में असमर्थ हो और हमारी कल्पनाशक्ति जिसकी कल्पना न कर सकती हो। जिसके रहस्यो को पूर्ण रूप से समझ पाना हमारे लिए असम्भव हो।

जो हमारा शरणदाता हो। प्रबल अभिलाषा के साथ जिसकी ओर लपक सकें। जो हमारा अभीष्ट और प्रिय हो। जिस से हम शान्ति की आशा कर सकते हों, जिसे हम सकटों में पुकार सके जिसे हम अपना आराध्य बना सकें और उसे आराध्य बनाने मे ही हम अपने गौरव का अनुभव कर सकें।

'इलाह' के जो गुण ऊपर बयान हुए उनसे विदित है कि 'इलाह' ईश्वर के अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं हो सकना। प्रभुत्व के सारे अधिकार केवल एक ईश्वर ही को प्राप्त हैं। अल्लाह के अतिरिक्त किसी और को 'इलाह' बनाने से बढ कर गुमराही दूसरी कोई नही हो सकती।

इस्लाम—इस्लाम का प्रारम्भिक एव मौलिक अर्थ है विनम्रता, विनीति आदि। अरब साहित्य में शब्द विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। इसकेविशेष अर्थदा हैं। इस्लाम का एक अर्थ हैआज्ञापालन (*Obedience*), झुक जाना, आत्म समर्पण (*Complete submission*), त्याग, स्वेच्छा-पूर्वक अधीनता स्वीकार करना आदि। इस्लाम धर्म को इस्लाम इसलिए कहते हैं कि वह हमें इसकी शिक्षा देता है कि हम एक अल्लाह के हो जायें, उसके आगे झुक जायें और उसके आदेशों का पालन करे। अल्लाह के आगे अपने को डाल देने और उसके आदेशो के पालन करने ही का दूसरा नाम 'इस्लाम' है।

'इस्लाम' का दूसरा अर्थ है सुलह, शान्ति, कुशलता, सरक्षण, शरण आदि। नबी सल्ल० ने कहा है "इस्लाम लाओ (तबाही से) बच जाओगे।" आप (सल्ल०) ने यह भी कहा है: "जो व्यक्ति भी इस (इस्लाम) में आया सलामत रहा।"

इस्लाम ही उन सभी 'नबियो' का 'दीन' रहा है जो अल्लाह की ओर से लोगों के पथ-प्रदर्शन के लिए आये थे। चाहे वे किसी भी देश या समय में हुये हों। 'दीन' (धर्म) सबका एक ही रहा है। और यह 'दीन' उन सब व्यक्तियों ने अपनाया था जो सत्य प्रिय और ईश्वर के आज्ञाकारी रहे हैं।

इहराम—मक्का पहुँचने से पहले एक निश्चित स्थान पर पहुँच कर 'हज्ज'

करने वाले स्नान कर के एक फकीराना वस्त्र धारण करते हैं और तलबिया[1] कहते हैं यह 'इहराम' है। इस वस्त्र मे एक तहबन्द होता है और एक चादर जिसे ऊपर से ओढ लेते हैं। इस वस्त्र को 'इहराम' इस लिए कहा जाता है कि इस के धारण करने के पश्चात् बहुतसी चीजे आदमी पर हराम हो जाती है जो साधारण अवस्था में उस के लिए वैध होती है जैसे बाल कटवाना, सुगन्ध का प्रयोग, हर प्रकार की सुसज्जा और स्त्री-प्रसग आदि। इन पाबन्दियों के साथ एक पाबन्दी यह भी है कि 'इहराम' की हालत म किसी जीव का बध न किया जाये, न किसी जानवर का शिकार किया जाए और न किसी शिकारी को शिकार का पता बताया जाए। जिन स्थानो पर हज्ज करने वाले 'इहराम' बाँधते है उन को मीक़ात कहते हैं विभिन्न देशो से आने वालो के लिए विभिन्न मीकाते है।

'हज्ज' के सम्बन्ध में 'इहराम' की हैसियत वही है जो नमाज़ में 'तकबीर तहरीमा' की है। जिस प्रकार 'तकबीर तहरीमा' के बाद मनुष्य नमाज में दाखिल हो कर एक नवीन आध्यात्मिक एव पवित्र वातावरण मे पहुँच जाता है और स्वभावत वह कुछ बातों का पाबन्द हो जाता है, ठीक इसी प्रकार 'इहराम' बाँधने के पश्चात् मनुष्य एक नवीन स्थिति में प्रवेश करता है और स्वभावत उस पर कुछ पाबन्दियाँ लाजिम हो जाती हैं। फिर जिस प्रकार नमाज़ से बाहर निकलने के लिए सलाम फेरते हैं उसी प्रकार 'इहराम' की हालत से बाहर निकलने के लिए 'हल्क' (मुडन) का तरीका प्रचलित है।

ईद—बार-बार आने वाला, खुशी का त्योहार। इस्लाम ने दो त्योहार दिये है एक ईदुल फित्र दूसरा ईदल अजहा। इन दोनों ही त्योहारो का आधार 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) है। ईदुल फित्र का त्योहार रमज़ान के समाप्त होने पर आता है। इस अवसर पर मुस्लिम व्यक्ति अल्लाह के आगे कृतज्ञता की विज्ञप्ति करता है कि उस ने उसे इस का अवसर और सौभाग्य प्रदान किया कि वह रमज़ान के रोजे रख कर अपने को उस महान् जीवनयज्ञ के लिए तैयार करे जो उस के स्वामी की ओर से आयोजित किया गया है। मुस्लिम का सम्पूर्ण जीवन एक यज्ञ है उसे

१. तलबिया उस दुआ को कहते हैं जो इहराम बाँधने वाले इहराम बाँधने के समय से लेकर जब तक हज्ज समाप्त नही हो जाता उठते-बैठते और 'हज्ज' से सम्बन्धित विभिन्न कार्य करते हुए उच्च स्वरो मे पढते हैं।

अपने जीवन से एक महान् शुभ कार्य सम्पन्न करना है, वह शुभ कार्य है अपने आतरिक और बाह्य जीवन को ईश-ज्योति से उज्जवल बनाना और सम्पूर्ण मानव-जगत को ईश्वरीय-विधान की ओर प्रेरित करना। जिस प्रकार सूर्य अपनी ऊष्म शक्ति की आहुति देता है ठीक उसी प्रकार का कार्य एक मुस्लिम व्यक्ति या मुस्लिम समुदाय को भी करना पड़ता है।

ईदुल अजहा का त्योहार वास्तव मे एक महान कुरबानी की यादगार है। यह कुरबानी खुदा के विशेष पैगम्बर हजरत इबराहीम अ० नें अल्लाह की सेवा में पेश की थी। इस त्योहार के अवसर पर हम कुरबानी और अल्लाह की सेवा में अपने आत्मसमर्पण की भावना को जाग्रत करते हैं और इस बात को व्यक्त करते हैं कि हम अपनी भावनाओ के प्रति सदैव जागरूक और वफादार रहेगे।

ईमान—विश्वास, आस्था, मानना (*Belief of Faith*)।

'ईमान' उस विश्वास को कहते है जिसके साथ आस्था भी हो और भय भी, साथ ही भरोसा भी। ईमान वास्तव में समर्थन करने और दिल से मानने को कहते हैं। ईमान का विलोम है 'कुफ़्र', इन्कार, झुठलाना। यकीन और विश्वास का विलोम सन्देह और शंका है। यह ज़रूरी नहीं है कि मनुष्य जिस चीज़ पर विश्वास रखता हो वह उसे माननता भी हो। अबू जह्ल भलीभाँति जानता था कि नबी सल्ल० सच्चे हैं फिर भी उसने आपका इन्कार किया और ईमान न लाया। ईमान वास्तव में मन और मस्तिष्क दोनों के लिए शान्ति और परितोष का कारण है।

'इस्लाम' में जिन चीज़ों पर ईमान लाना आवश्यक है उनमें तीन चीज़े मौलिक हैं·

ईश्वर है और वह एक है। कोई उसका शरीक नही। उसी नें सब को पैदा किया। सबका स्वामी, प्रभु और पूज्य वही है।

उसने मानव जाति के मार्ग-दर्शन के लिए नबियों और रसूलों को भेजा। हजरत मुहम्मद सल्ल० पैगम्बरों के सिलसिले की अन्तिम कडी हैं और आप सारे ससार के मार्ग-दर्शन के लिए भेजे गये है।

'आख़िरत' आने वाली है। एक समय आयेगा जब वर्तमान लोक नष्ट-भ्रष्ट हो जायेगा। उसके पश्चात् अल्लाह एक नवीन ससार का निर्माण करेगा। सब लोग पुन. जीवित करके उठाये जायेगे। और उन्हें उनके भले-बुरे कर्मों का बदला प्रदान किया जायेगा। अच्छे और अल्लाह

के आज्ञाकारी लोगो के लिए सुख और आनन्द का स्थान होगा जिसका नाम 'जन्नत' है। बुरे और अल्लाह के अवज्ञाकारी लोगो का ठिकाना 'जहन्नम' होगा जो यातना, पीड़ा और ईश-प्रकोप का स्थान है।

उहुद-संग्राम—यह एक विशेष लडाई है जो मक्का के 'काफिरों' और मुसलमानो के बीच उहुद नामक पहाडी के दामन में हुई थी। इस सग्राम से पूर्व सब से महत्वपूर्ण सग्राम वह है जो बद्र सग्राम के नाम से प्रसिद्ध है। उहुद सग्राम के अवसर पर मक्का वालो ने तीन हजार की सेना लेकर मदीना पर आक्रमण किया था। नबी सल्ल० मुकाबले के लिए एक हजार की सेना लेकर निकले थे। रास्ते में 'मुनाफिकों' (कपटचारियो) के नायक अब्दुल्लाह इब्न उबई ने धोखा दिया वह अपने ३०० व्यक्तियो को लेकर अलग हो गया, जिसके कारण मुसलमान बहुत घबराये। बनूहारसा के लोगो ने पलटने का निश्चय कर लिया, परन्तु अल्लाह ने मुसलमानों के दिलों को मजबूत किया और वे अपने इरादे से बाज आगए।

नबी सल्ल० ने अपनी सेना उहुद के दामन मे खडी की। पीछे पहाड था सामने शत्रुओ की सेना थी। पहलू मे एक ऐसा दर्रा था जिस से होकर दुश्मन अचानक पीछे से मुसलमानों पर आक्रमण कर सकता था। नबी सल्ल० ने इस स्थान पर अब्दुल्लाह इब्न जुबैर को ५० तीर मारने वालो के साथ नियुक्त किया और उन्हे इसकी ताकीद कर दी कि वे किसी भी दशा में वहाँ से न हटे। लडाई में शत्रु के पॉव उखड गये। इस अवसर पर दस व्यक्तियो के अतिरिक्त दर्रे पर नियुक्त सभी लोग दुश्मन के छोडे हुए माल के लूटने मे लग गए। दर्रे को खाली पाकर दुश्मनो ने पीछे से आक्रमण कर दिया। जिस से मुसलमानो को अधिक नुकसान पहुँचा। मुस्लिम सेना तितर-बितर हो गई। नबी सल्ल० के चार दाँत शहीद हो गये। नबी सल्ल० एक गार मे गिर गए थे। हजरत फातमा रजि० ने अपने पिता के ज़ख़्मों को धोया। इस सग्राम में ७० सहाबी शहीद हुये। इसी सग्राम मे मुसइब बिन उमैर रजि० भी शहीद हुये थे। हजरत मुसइब बिन उमैर ही की कोशिश से मदीना के औस और खज़रज के कबीले मुसलमान हुये थे।

उमरा—'उमरा' मे निर्माण, शोभा और आबादी का अर्थ पाया जाता है। उमरा से अभीष्ट जहाँ अल्लाह के घर 'काबा' की आबादी है वही वह मनुष्य के लिए आत्मिक जीवन और जाग्रति का कारण भी है। 'हज्ज'

की तरह 'उमरा' भी एक ऐसी 'इबादत' है जो 'काबा' के दर्शन के साथ अदा की जाती है। लेकिन हज्ज और उमरा मे कुछ बातो में अन्तर पाया जाता है। उमरा अनिवार्य नही है जबकि 'हज्ज' को अल्लाह ने उन लोगों के लिए अनिवार्य कर दिया है जो हज्ज करने का सामर्थ्य रखते हैं। उमरा अकेले अदा करते है जबकि 'हज्ज' सामूहिक रूप मे अदा किया जाता है। हज्ज का समय निश्चित है जबकि उमरा किसी भी महीने मे किया जा सकता है। उमरा मे हज्ज की ही कुछ परिपाटियो का अनुपालन किया जाता है।

एहसान—सौन्दर्य-साधना। 'एहसान' शब्द 'हुस्न' से निकला है। 'हुस्न' का अर्थ है सुन्दरता एव उत्तमता। 'इबादत' और जीवन मे खूबी और सुन्दरता उसी समय पैदा होती है जबकि हमारा 'ईमान' और विश्वास ऐसा हो कि मानो अल्लाह हमारी आँखो से ओझल नही है बल्कि हम उसे अपनी आँखो से देख रहे हैं। हम नही तो वह तो हमे देख ही रहा है। इसी भावना और स्थिति को 'हदीस' मे एहसान कहा गया है। कुरआन मजीद मे इसी चीज़ को 'हिकमत' (तत्वदर्शिता, *wisdom*) की सज्ञा दी गई है।

क·ाम—वाणी (*words*)। कुरआन को अल्लाह का कलाम इसी लिए कहते है कि वह अल्लाह की वाणी है।

काफिर—१ 'कुफ्र' करने वाला, इन्कार करने वाला, अधर्मी। जो उन सच्चाइयों का इन्कार करे जिनकी शिक्षा इस्लाम ने दी है। २. कृतघ्न।

काबा—मक्का नगर मे स्थित वह पवित्र घर जिसका निर्माण अल्लाह के आदेश से हजरत इब्राहीम अ० और उनके बेटे हजरत इस्माईल अ० ने किया था। जिसकी ओर मुख करके नमाज पढी जाती है। जो मानव जाति के वास्तविक धर्म 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) का केन्द्र है।

किताब—'किताब' शब्द के कई अर्थ होते हैं:

१ अल्लाह का कलाम जो उसने अपने रसूलो पर उतारा। किताब से अभिप्रेत पूरी किताब भी होता है और उसका अ श भी।

२. अल्लाह का फैसला जो उसने स्वय जारी करने के लिए किये हो जैसे किसी को मिलने वाला अवकाश या उसके विनष्ट किए जाने का निर्णय।

३ आदेश हुक्म। अल्लाह की ओर से निर्धारित किया हुआ धर्म-विधान या 'शरीअत'।

४ वह किताब जिसमे उसके फैसले लिखे हो।

५ पत्र

६ वह विशेष ईश्वरीय अभिलेख (*Record*) जिसमें समस्त चीजे अंकित होती हैं।

'किताब वाले'—वे लोग जिन्हे अल्लाह की ओर से 'रसूल' के माध्यम से किताब मिली हो। 'किताब वालो' से सकेत यहूदियो और ईसाइयो की ओर होता है।

किब्ला—वह चीज जो मनुष्य के मुख के सामने हो और जिसकी ओर उसका ध्यान आकर्षित हो। पारिभाषिक रूप से इसमे अभिप्रेत वह दिशा है जिसकी ओर मुख करके नमाज पढी जाती है।

कियाम—खडा होना। नमाज मे खडे होने की स्थिति।

कियामत—(*Resurrection*), प्रलय, पुनरुत्थान।

एक दिन ऐसा आने वाला है जब अल्लाह वर्तमान लोक को नष्ट-भ्रष्ट कर देगा। सारे जीवधारी मर जायेंगे। इसके पश्चात् ईश्वर पुन सृष्टि का निर्माण करेगा। सब लोग दोबारा जीवित करके उठाये जायेंगे और अपने भले-बुरे कर्मो का फल पायेंगे।

किसास—(*Retaliation*) हत्या-दण्ड, प्रतिहत्या।

'किसास' का अर्थ है खून का बदला। अर्थात् मनुष्य के साथ वही कुछ किया जाना जो उसने दूसरे के साथ किया हो।

मनुष्य के प्राणो की रक्षा हो, यह मानव-समाज की बहुत बडी आवश्यकता है। किसी की अकारण हत्या करना वास्तव मे उस मर्यादा का उल्लघन है जिस म प्राणो की रक्षा होती है। वध करने वाले व्यक्ति का 'किसास' मे वध किया जा सकता है। मारे गये व्यक्ति के वारिस कुछ माल लेकर उसे क्षमा भी कर सकते हैं। यह सारी कार्यवाही न्यायालय के द्वारा होगी। वध करना या क्षमा कर देने के रूप मे मारे गये व्यक्ति के वारिसों को उस से कुछ धन दिलाना समाज के सभी प्राणियो के प्रणो का आदर करना है। कुरआन मे यही बात इन शब्दो मे कही गई

है "किसास में तुम्हारे लिए जीवन है।"

क़ुफ़्र.—१. अधर्म, इन्कार। २. कृतघ्नता।

'कुफ़्र' का मूल अर्थ होता है ढाँकना, छिपाना। 'इस्लाम' के इन्कार करने वाले को 'कुफ़्र' का अपराधी या 'काफिर' कहा जाता है, इसलिए कि वह अपनी सहज प्रकृति को छिपाता है जिसे लेकर वह ससार मे जन्म लेता है। ईश्वर के आज्ञापाल से विमुख होकर वास्तव मे वह ससार को प्रत्येक वस्तु का निषेध करता है इसलिए कि ससार की प्रत्येक वस्तु इसी बात की साक्षी है कि ईश्वर है और वही सारे ससार का पालनकर्त्ता और स्वामी है, मनुष्य को उसी के आदेशों का पालन करना चाहिए। इसी में उसका और सारे मानवों का कल्याण है।

क़ुरआन—कुरआन का अर्थ होता है पढना। इस से अभिप्रेत अल्लाह की वह किताब है जो हजरत मुहम्मद सल्ल० पर अवतीर्ण हुई। यह किताब इसीलिए उतरी है कि पढी जाये और अधिक-से-अधिक पढी जाये।

क़ुरबानी—बलिदान, जानवर को अल्लाह के नाम पर कुरबान करने की क्रिया। वह चीज जिसके द्वारा बन्दा अल्लाह से करीब हो। अल्लाह की प्रदान की हुई वस्तु को विनम्रता एवं कृतज्ञता के साथ उसके अर्पण करना। इस्लाम भी वास्तव में कुरबानी ही है। इसमे बन्दा अपने-आपको अर्पण करता है। जानवर कुरबान करके वास्तव में मनुष्य इस बात का प्रण करता है कि यदि अल्लाह के मार्ग में अपनी जान को कुरबान करने की आवश्यकता होगी तो वह इसमें तनिक भी संकोच न करेगा। दास्य-भाव और आत्मसमर्पण की पूर्ण अभिव्यक्ति कुरबानी मे होती है। अतः आत्मा के विकास और उसे ईश्वर की दासता में लाने का कुरबानी एक उत्तम साधन है। यही कारण है कि बलिदान या कुरबानी की रीति समस्त प्राचीन जातियो मे प्रचलित रही है। और इसे ईश-प्रसन्नता की प्राप्ति का एक उत्तम साधन समझा जाता रहा है।

कुरबानी हजरत इबराहीम अ० की यादगार भी है। हजरत इबराहीम अ० ने अल्लाह की प्रसन्नता के लिए अपने बेटे हजरत इस्माईल अ० को कुरबान करना चाहा था। बेटा भी इसके लिए तैयार हो गया। खुदा तो दिलों को देखता है। जब हजरत इबराहीम अ० ने अपनी वफा-

दारी सिद्ध कर दी तो अल्लाह् ने इस्माईल अ० को बचा लिया और दूसरे रूप में यह भेंट स्वीकार कर लिया (सूरा अस-साफ़्फ़ात आयत १००-१०६)। अल्लाह् ने इस्माईल अ० को 'काबा' की सेवा के लिए खास कर लिया। ठीक इसी प्रकार फिदया देकर अर्थात् अपने बदले जानवर कुरबान करके हम अपनी जानें छुडा लेते हैं, परन्तु हमारे प्राण हमे लौटाये नही जाते बल्कि अमानत के रूप हमे दे दिये जाते है ताकि उनका उपयोग उस समय हो सके जबकि अल्लाह के नाम पर उन्हे निछावर करने की आवश्यकता हो।

ख़बर मुतवातिर—दे० पारिभाषिक शब्दावली।

ख़बर वाहिद—दे० पारिभाषिक शब्दावली।

ख़लीफा—१ प्रतिनिधि, स्थानापन, नायब। २. किसी के बाद आने वाला, उत्तराधिकारी। खलीफा स्वामी और मालिक नही होता। उसका कार्य केवल मालिक के आदेशो का पालन करना और उसकी इच्छा को पूरा करना होता है। कुरआन मे एक जगह कहा गया है . "हे दाऊद! हमने तुम्हे जमीन मे खलीफा बनाया है तो तुम लोगो के बीच हक के साथ हुकूमत करो और इच्छा का अनुपालन न करो कि वह तुम्हे अल्लाह के मार्ग से भटका देगी।"—सूरा सॉद आयत २६।

खुतबा—भाषण, व्याख्यान। जुमा की नमाज अथवा ईद की नमाज के अवसर पर दिया जाने वाला भाषण।

खुलफा-ए-राशिदीन—नबी सल्ल० के बाद जिन व्यक्तियों ने इस्लामी शासन को रसूल सल्ल० तरीके के अनुसार चलाया और राज्य की व्यवस्था की वे खुलफा-ए-राशिदीन कहलाते है। खुलफा-ए-राशिदीन का अर्थ होता है राशिद अर्थात् सीधे और सही मार्ग पाने वाले खलीफा।

गज़वात—गजवा का बहुवचन, लड़ाइयाँ, वे लड़ाइयाँ जिनमें नबी सल्ल० स्वय शरीक हुये।

गुमान—अनुमान, अन्दाजा, ख्याल,

गुमान गालिब—पक्का ख्याल, वह अनुमान जिस के सत्य होने की बहुत अधिक सम्भावना हो।

गुलाम—दास, प्राचीन काल से १८वी शताब्दी के प्रारम्भ तक युद्ध मे जो लोग कैद होते थे उन्हे गुलाम बना कर रखने और बेचने का

प्रचलन था। इस्लाम ने यह नियम प्रस्तुत किया कि कैदियों को रिहा किया जाये। चाहे यह रिहाई उपकार के रूप मे हो या 'फिदया' ले कर हो। या अपने कैदियो के बदले मे दूसरे फरीक के कैदियों को छोड़ा जाये। परन्तु जब अमुस्लिम जातियाँ इसे स्वीकार न करे तो इस्लाम ने मुसलमानो को इस बात की इजाजत दी है कि विरोधी दल के कैदियो को गुलाम बनाया जाये। परन्तु इसके साथ इस पर बयबल दिया है कि गुलामों के साथ यथासम्भव अच्छे-से-अच्छा व्यवहार किया जाए। और ऐसी स्थिति पैदा न होने दिया जाये कि वे समाज का नीच वर्ग बन कर रह जाये। बल्कि ऐसे वातावरण का निर्माण करना चाहिए कि वे धीरे-धीरे इस्लामी समाज में विलीन हो जाएँ। इस्लामी कानून ने गुलामो को बहुत से हक प्रदान किये है। उनके माल को हड़प करने वालो, उन्हे कत्ल करने वालो और उन की स्त्रियो का सतीत्व भग करने वालो के लिए वही दण्ड है जो दण्ड स्वतन्त्र व्यक्ति के साथ इन अपराधो के करने वालो के लिए निर्धारित है। गुलामो की स्वतन्त्रता का इस्लाम सदैव समर्थक रहा है। लेकिन वह प्रत्येक मामले मे न्याय की नीति अपनाने का आदेश देता है।

जकात—अरबी भाषा मे 'जकात' का अर्थ होता है. १ पाक और शुद्ध होना, २ पाक और विकसित होना। परिभाषिक रूप से 'जकात' उस धन को कहते है जो अपनी कमाई या माल मे से निकाल कर अल्लाह के बताए हुए शुभकर्मों मे खर्च करना जरूरी है। जैसे मुसाफिरों और मुहताजो को सेवा करना, ऋणी व्यक्तियो को ऋण के बोझ से मुक्त करना, अल्लाह के 'दीन' के लिए की जाने वाली चेष्टाओ मे खर्च करना आदि। 'जकात' को जकात कहते ही इसलिए है कि इसके द्वारा मनुष्य के मन से माल का मोह निकलता और उसकी आत्मा को विकास पाने का अवसर मिलता है। और उसका माल भी शुद्ध हो जाता है।

'जकात' देना 'आखिरत' को याद रखने का उत्तम उपाय भी है। मनुष्य अपना माल खर्च कर के उसे दाता की ओर लौटाता है इसी प्रकार उसे अपने प्राण भी उसी की ओर लौटाना है। इसलिए जकात देने की क्रिया के साथ विनम्र भाव का होना भी आवश्यक है। इस पहलू से देखा जाए तो जकात मे नमाज की विशेषता पाई जाती है।

जन्नत—बाग, स्वर्ग (*Paradise*)। सुख और आनन्द का वह

स्थान जहाँ 'आखिरत' मे अल्लाह् के आज्ञाकारी और नेक बन्दे निवास करेंगे।

जहन्नम—नरक, दोजख (*Hell*)। वह स्थान जहाँ आखिरत मे अल्लाह् के अवज्ञाकारियों, काफिरों और मुश्रिको को यातना देने के लिए डाला जायेगा। यहाँ आग भडक रही होगी। आग मे जलने के अतिरिक्त उन्हें वहाँ और भी नाना प्रकार की यातनाएँ सहनी पडेगी।

जईफ—देखो पारिभापिक शब्दावली।

जामेअ—व्यापी। हदीस का वह ग्रन्थ जिस मे धर्म और जीवन के हर पहलू से सम्बन्धित हदीसे सगृहीत हो।

जिबरील (*Gabriel*)—यह इबरानी (*Hebrew*) भाषा का शब्द है जिस का अर्थ है "अल्लाह् का बन्दा"। जिबरील अल्लाह् के एक विशेष फिरिश्ते का नाम है जिन्हे कुरआन में "रूह" भी कहा गया है। हजरत जिब्रील का विशेष कार्य यह रहा है कि वे अल्लाह् का आदेश और उस का कलाम 'नबियो' तक पहुँचाने थे।

जिजया—रक्षाकर, वह टैक्स जो इस्लामी राज्य मे बसने वाले अमुस्लिम लोगो से उन की जान-माल आदि की रक्षा करने के बदले में लिया जाता था। यह कर उस राज्य के कामो में खर्च किया जाता था जो उन की रक्षा का उत्तरदायी होता है। इस के अतिरिक्त 'जिजया' इस बात की पहचान भी थी कि उन्हे इस्लामी राज्य की अधीनता स्वीकार है।

इस्लामी राज्य के मुसलमानो को भी अपने धन का एक भाग देना पडता है जिसे जिकात कहते है।

गरीब और निर्धन मुस्लिम व्यक्ति से न जकात ली जायेगी और न ऐसे गैर मुस्लिम से 'जिजया' लिया जायेगा जो स्वय मुहताज हो, बल्कि ऐसे लोगो की सेवा करना स्वय राज्य का कर्तव्य होता है।

जिन्न—'जिन्न' शब्द के धात्वर्थ मे गुप्त और छिपे होने का अर्थ पाया जाता है। जिन्न एक प्रकार की मखलूक है जो मनुष्यो और फिरिश्तों से भिन्न है। जिन्नो को हम आँखो से नही देख पाते इसी लिए उन्हे जिन्न कहा जाता है। कुरआन से पता चलता है कि जिन्न अग्नि से पैदा किए गए है जब कि मानव की शारीरिक रचना मिट्टी से हुई है।

जिहाद—किसी ध्येय की सिद्धि के लिए अपनी सम्पूर्ण शक्ति

लगा देने और जान तोड कोशिश करने को अरबी मे 'जिहाद' कहते हैं। जिहाद केवल युद्ध करने का नाम नही है। युद्ध के लिए तो कुरआन मजीद मे 'किताल' शब्द प्रयुक्त हुआ है। जिहाद का अर्थ किताल की अपेक्षा अधिक विस्तृत और व्यापक है। ऐसा व्यक्ति जो हर समय अपने उद्देश्य की धुन मे लगा रहता हो, अपने धन, अपनी वाणी और लेखनी आदि से उस के लिए प्रयत्नशील हो और अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अपने-आप को थका रहा हो, वह वास्तव मे जिहाद ही कर रहा है।

जिहाद मे हर उस विरोध और शत्रुता का मुकाबला करना होता है जिस से अभीष्ट की ओर बढने मे रुकावट पेश आती हो। उस के लिए 'किताल' (युद्ध) की नौबत भी आ सकती है।

यदि यह जिहाद अल्लाह के लिए हो तो इस का अर्थ यह होगा कि हमारी दौड-धूप और चेष्टाएँ केवल अल्लाह की प्रसन्नता, उस के नाम की प्रतिष्ठा और उस के उतारे हुए दीन (सत्यधर्म) के समर्थन और स्थापना के लिए होगी। किसी धन और वैभव आदि की प्राप्ति हमारा लक्ष्य कदापि न होगा। ससार को दुख और अल्लाह के अतिरिक्त दूसरो की दासता से मुक्त करना और सत्यधर्म के पालन मे जो रुकावटे पेश आती हो उन्हे दूर करना जिहाद के मुख्य उद्देश्यो मे से है।

जुहद—निस्पृहता, त्याग भावना, दिल को दुनिया से उठा रखना।

अल्लाह पर 'ईमान' रखने का स्वाभाविक परिणाम यही होता है कि मनुष्य का दुनिया मे जी बहुत कम लगता है उसकी आशाएँ तो आने वाले पारलौकिक जीवन से होती है फिर वह लोलुपता और ससार के मोह माया मे लिप्त हो कर सत्य और सत्य की माँगो की उपेक्षा कैसे कर सकता है।

तकबीर तहरीमा—नमाज आरम्भ करते समय 'अल्लाहु अकबर' (अल्लाह सब से महान है) कहना 'तकबीर तहरीमा' कहलाता है। 'तकबीर तहरीमा' के बाद मनुष्य नमाज़ मे दाखिल हो जाता है। अब जब तक वह नमाज अदा न कर ले नमाज़ के अतिरिक्त कोई कार्य नही कर सकता और न नमाज मे पढी जाने वाली दुआओं के अतिरिक्त वह कुछ बोल सकता है इस तकबीर के बाद सारी चीजे उस के लिए हराम और अवैध हो जाती हैं ताकि नमाज़ की प्रतिष्ठा का आदर हो सके।

तवातुर—देखिए पारिभाषिक शब्दावली।

तवाफ़—परिक्रमा। हज्ज करने वाले 'काबा' के चारों ओर चक्कर लगाते है इसे 'तवाफ' कहा जाना है। 'तवाफ' वास्तव में अपने को अल्लाह की सेवा में देने और उसके प्रति अपना प्रेमभाव प्रकट करने का नाम है। यदि हमारे मन में ईश्वर का प्रेम नही है या हमने अभी अपने को ईश्वर की सेवा मे वंचित रक्खा है तो ऐसी दशा में हमारे तवाफ का कोई मूल्य नही है।

तवाफ़ सद्र—मक्का पहुँचने पर सब से पहला तवाफ 'तवाफ सद्र' कहलाता है।

ताबईन—वे आदरणीय मुस्लिम व्यक्ति जिन्होंने 'सहाबा' को देखा है उन्हे 'ताबईन' कहते है।

तबअताबईन—वे आदरणीय मुस्लिम व्यक्ति जिन्होंने 'ताबईन' को देखा है।

तिलावत—(*Recitation*) पठन कुरआन का पढना।

तूर—१ पर्वत, २ एक विशेष पर्वत का नाम। सीना पर्वत, मूसा पर्वत जो कुरआन के अवतरण के समय तूर के नाम से प्रसिद्ध था। इस पर्वत की ऊँचाई ७, ३५९ फिट है। यह पर्वत प्रायद्वीप सीना के दक्षिण में पडता है।

तौरात—यह इबरानी शब्द है। तौरात का मूल अर्थ होता है आदेश, नियम और कानून। तौरात मे अधिकतर कानूनों और नियमों का उल्लेख हुआ है इसलिए उसका नाम 'तौरात' हुआ। तौरात वह आसमानी किताब है जो बनी इसराईल के प्रसिद्ध पैगम्बर हज़रत मूसा पर अवतरित हुई थी। हजरत मूसा अ० पर उनके नबी होने से लेकर उनके स्वर्गवास तक लगभग ४० वर्ष की अवधि में उन पर अल्लाह की ओर से जो आदेश उतरे हैं कुरआन उन्ही को 'तौरात' कहता है। इनमें दस आदेश तो वे थे जो पट्टिकाओं पर अंकित करके उन्हे प्रदान किये गए थे। तौरात ग्रन्थ के रूप में बैतुल-मकदिस की पहली तबाही के अवसर पर मौजूद थी। लेकिन इस तबाही मे तौरात की प्रतियाँ सदैव के लिए लुप्त हो गई। यह तबाही बाबिल (*Bable*) के सम्राट बख्त नस्र (**Nebuchad nezzar**) के हाथो आइ थी। इस सम्राट ने नगर की

ईंट-से-ईंट बजा दी थी और बनी इसराईल को बन्दी बनाकर बाबिल ले गया। बाद मे जब बनी इसराईल के बचे हुये लोग आज़ाद हुये और यूरुसलेम वापस आये और बैतुलमकदिस का पुन: निर्माण हुआ तो हज़रत उज़ेर ने कुछ महापुरुषों की सहायता से बनी इसराईल का इतिहास लिखा यही इतिहास आज बाइबिल की पहली १७ पुस्तकों के रूप मे मौजूद है।

इतिहास की चार पुस्तके निर्गमन (*Exodus*), लैव्यवस्था (*Leviticus*), गिनती (*Numbers*) और व्यवस्थाविवरण (*Deuteronomy*), हज़रत मूसा अ० की जीवनी से सम्बन्ध रखती हैं। इन किताबों में हज़रत उज़ेर और उनके साथियों ने जगह-जगह "तौरात" की उन आयतों को लिख दिया है जो उन्हे प्राप्त हो सकी थी। इन किताबों में जहाँ कही यह लिखा मिलता है कि ख़ुदा ने मूसा से कहा या मूसा ने कहा कि ख़ुदावन्द तुम्हारा ख़ुदा कहता है, वहाँ से तौरात का एक एक टुकड़ा बयान होता है। तौरात के यही वे बिखरे हुए अ श हैं जिन्हे क़ुरआन "तौरात" कहता है और इन्ही का वह समर्थन करता है।

तौहीद (*Divine Unity*)—एकेश्वरवाद। ईश्वर को एक मानना और किसी को उसका साझी और सहभागी न ठहराना। इस्लाम का मूल आधार तौहीद ही है। समस्त 'नबियों' की शिक्षाएँ 'तौहीद' पर आधारित हैं। तौहीद का सम्बन्ध हमारे पूरे जीवन से है। तौहीद को केवल एक धारणा समझना भूल है। अल्लाह को एक मानने का अर्थ यह है कि मनुष्य अल्लाह को अपना सृष्टिकर्त्ता, स्वामी, शासक और सब कुछ समझे। उसी की बन्दगी को अपना कर्तव्य जाने। उसके आदेशों का पालन करे, उसी पर भरोसा रक्खे। उसी को सहायता के लिए पुकारे। संकट में उसी से फरियाद करे। प्रत्येक दशा में उसी का ध्यान रक्खे। सच्चे दिल से उस से प्रेम करे। अल्लाह के हक में किसी को शरीक न करे। तौहीद धर्म का कोई अ'श नही बल्कि तौहीद ही सम्पूर्ण धर्म है। तौहीद से हट किसी सत्य धर्म की कल्पना नही की जा सकती। तौहीद की पुष्टि सम्पूर्ण विश्व से होती तौहीद के विरुद्ध कोई प्रमाण नही प्रस्तुत किया जा सकता।

तौबा (*Repentance*)—१. पश्चाताप, क्षमायाचना, गुनाह और अनुचित कर्मों को भविष्य में न करने का दृढ़ संकल्प करना। बुरे कामों और अल्लाह की अवज्ञा से बाज़ आना। "तौबा" का मूल अर्थ है

लौटना, पलटना। बन्दे की ओर से तौबा का अर्थ यह होता है कि मनुष्य अल्लाह् की अवज्ञा से बाज आकर आज्ञापालन में लग जाये। अल्लाह् की ओर से 'तौबा' का अर्थ यह है कि वह अपने उस बन्दे पर जो अपने गुनाहों पर लज्जित है फिर दया दृष्टि डाले। और उसकी खताओं को क्षमा कर दे।

तकबीर—अल्लाह् की महानता और बड़ाई का वर्णन।

तज़किया—मन और आत्मा का शुद्धिकरण एवं विकास।

तयम्मुम्—किसी कारण से यदि नमाज के लिए 'वजू' न कर सकें तो 'तयम्मुम' से काम चलाया जा सकता है। तयम्मुम का तरीका यह है कि पाक मिट्टी पर अपने दोनो हाथ मारे और सारे मुँह पर अच्छी तरह मले। इसी प्रकार दोबारा पाक मिट्टी पर हाथ मारे और दोनों हाथों को कुहनियों तक मले। तयम्मुम नमाज का आदर और पवित्रता की भावना को बाकी रखने की एक उत्तम उपाय है।

तस्बीह् (*Glorification*) अल्लाह् की महानता का वर्णन। तस्बीह् का मूल अर्थ है चेहरे के बल बिछ जाना। यही से यह शब्द तैरने के अर्थ में प्रयोग हुआ है। नमाज़ मे बन्दा अपने खुदा के आगे सजदे में गिर जाता है और उस की महानता का वर्णन करता है। इस लिए नमाज़ को भी तस्बीह् कहा गया है।

ससार की प्रत्येक वस्तु अल्लाह् की तस्बीह् करती है। हर वस्तु उस की महानता के आगे बिछी हुई है। हर चीज ईश्वर की महानता की साक्षी है।

तहज्जुद—मौलिक अर्थ है नीद तोड कर उठना। तहज्जुद उस नमाज को कहते हैं जो रात के एक भाग तक सोने के पश्चात् उठ कर पढी जाती है। इस नमाज का चरित्र-निर्माण और आत्मा के विकास में बहुत अधिक महत्व है।

तहमीद—गुणगान, अल्लाह् की प्रशंसा करना। इस प्रशसा में मन के प्रेम और कृतज्ञता की भावना भी सम्मिलित होती है।

दरायत—प्रज्ञा एव मीमासा। 'हदीसों' की जाँच-पडताल में जहाँ 'रावियों' (हदीस के उल्लेखकर्ता) के चरित्र और बुद्धिमता आदि को देखते हैं वहीउन के परखने मे 'दरायत' से भी काम लेते है। विस्तृत जानकारी के लिए दे० पृष्ट ५३ का शीर्षक 'दरायत' का प्रयोग।

दरूद (*Blessing*)—रहमत और बरकत की दुआ, दुलार-प्यार। कुरआन में इस के लिए 'सलात' शब्द प्रयुक्त हुआ है जिस के अर्थों में वडी व्यापकता पाई जाती है। कुरआन में कहा गया है. निश्चय ही अल्लाह और उसके फिरिश्ते नबी (सल्ल०) पर 'सलात' भेजते हैं, हे ईमान वालो! तुम भी उन पर सलात भेजो और खूब सलाम भेजो। अल्लाह के 'सलात' भेजने का अर्थ यह है कि वह अपने नबी पर दयालुता (*Blessing*) दरशाता है, उन की प्रशंसा करता, उन का नाम ऊँचा करता और उन पर बरकतें उतारता है। फरिश्तों के 'सलात' भेजने का अर्थ यह है कि उन को भी नबी से अत्यन्त प्रेम है। वे भी उन की प्रशसा करते और उन के लिए अल्लाह से प्रार्थनाएँ करते हैं कि वह उन को अत्यन्त ऊँचा पद प्रदान करे और उन के अपने 'दीन' और मेशन को सफल वनाये अल्लाह की रहमतें उन के साथ रहे। ईमान वालो के दरूद भेजने का अर्थ भी यही होता है। वे इस प्रकार अपने नबी के प्रति अपना प्रेम और श्रद्धा दिखाते और उनके लिए हर प्रकार की शुभ कामना करते है।

दियत—कत्ल और खून के बदले में वधित व्यक्ति के वारिसो को दिया जाने वाला धन।

दीन—१ धर्म। २ जीवन प्रणाली। ३. जीवन व्यवस्था। ४ वह विधान जिस पर मनुष्य की विचार धारा और कार्य-प्रणाली आदि सब-कुछ आधारित हो।

'दीन' शब्द के मौलिक अर्थ मे अधीनता और विनीति का भाव पाया जाता है। 'दीन' का मौलिक अर्थ है, अधीन होना, अधीन करना'। फिर इसमे चार अर्थ का समावेश हुआ है १ प्रभुत्व (उस सत्ता की ओर से जिसे सब पर प्रभुत्वपूर्ण अधिकार प्राप्त हो)। २ आज्ञापालन एव अधीनता (उस की ओर से जो सत्ता के आगे झुके)। ३. विधि, विधान, प्रणाली, नियम (जिस का पालन किया जाए)। ४ जॉच-पडताल, निर्णय, अच्छे-बुरे कर्मों का बदला।

करआन में 'दीन' शब्द इन सभी अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। कही-कही तो यह शब्द एक या दो अर्थों में नही बल्कि समस्त अर्थों में अत्यन्त व्यापक ढग से प्रयुक्त हुआ है। हदीसों मे भी यह शब्द अपने व्यापक अर्थों मे प्रयुक्त मिलता है।

नज्र.—भेंट, मन्नत, प्रण। नज्र केवल अल्लाह के आगे पेश की जाती है किसी और की नज्र जायज नही। हम किसी मनुष्य को यदि प्रेम-भाव से कोई चीज़ पेश करना चाहे तो पेश कर सकते हैं। इसे 'हदया' या उपहार कहेंगे। आजकल उपहार को 'नज्र' कहने लगे हैं परन्तु कुरआन में जिस चीज को नज्र कहा गया है वह अल्लाह ही के लिए खास है। नज्र कुरबानी के रूप मे भी गुजारी जा सकती है और रोज़ा आदि की नज्र भी मानी जा सकती है।

नफ्ल—जो चीज़ हक से अधिक हो उसे अरबी में नफ्ल कहते हैं। इसी लिए वह इबादत जो अनिवार्य न हो, बन्दा जिसे अपनी खुशी से अदा करे नफ्ल कहलाती है।

नबी—पैगम्बर, ईश-दूत, वह व्यक्ति जो 'नुबूवत' के पद पर नियुक्त हो। जिस के पास अल्लाह की ओर से वह्य आती हो। जो अल्लाह की ओर से इस के लिए नियुक्त हो कि लोगो तक उस का सन्देश पहुँचाए और लोगो को सीधा-सच्चा मार्ग दिखाये। विस्तार के लिए दे० पृष्ठ १८२ शीर्षक 'रिसालत की धारणा'।

नबूवत—पैगम्बरी, ईश दूतत्व। नबी होने का भाव। दे० 'नबी'

नबी सल्ल०—इस से अभिप्रेत हज़रत मुहम्मद सल्ल० हैं।

नमाज़—दे० पृष्ट ३५२।

नसारा—ईसाई। नसारा 'नसरान' का बहुवचन है। हजरत ईसा मसीह के अनुयायियो का यह नाम आरम्भ से ही था। हजरत मसीह अ० के मानने वाले दो समुदायो मे बँट गये थे। एक समुदाय ने तो शमऊन *Simon* का अनुसरण किया और अपने को नसारा कहा। दूसरा समुदाय पोलोस का अनुयायी हुआ। पहले समुदाय के लोग हजरत मुहम्मद पर ईमान ले आये परन्तु दूसरे समुदाय ने आप का इन्कार किया। और 'नसारा' की उपाधि को अपने लिए अपमान समझा। उन के विचार मे इस नाम का सम्बन्ध नसारा (*Nazareth*) से है और यह उन की दृष्टि मे साधारण सी बस्ती है। लेकिन यह उन की गलती है उन का यह नाम अत्यन्त आरम्भिक है। यह नाम उन्होने स्वय रक्खा था (दे० कुरआन सूरा ५ आयत १४)। अपने लिए कोई भी तिरस्कृत नाम कभी पसन्द नही कर सकता।

निसाब—वह निश्चित धन जिस पर 'जकात' अनिवार्य होती है।

फ़क़ीह—समझदार, दीन का गहरा ज्ञान रखने वाला, 'शरीअत' (धर्म-विधान) की बातों का पूर्ण ज्ञाता।

फ़िक़्ह—किसी चीज़ का जानना और समझना। शरीअत के आदेशों का ज्ञान।

फ़ज्र (*The dawn*)—तड़का, प्रातः काल उषा काल, अरुणोदय। १. वह समय जब पहले-पहल पूर्व दिशा में उषा या पौ फटने की लाली दीख पड़ती है। २. वह नमाज़ जो सवेरे पौ फटने के पश्चात् अदा की जाती है। इस नमाज़ का समय सूर्य उदय होने तक रहता है

फ़तवा—शरई फ़ैसला, किसी मामले में धार्मिक (शरई) आदेश।

फ़ासिक़—अवज्ञाकारी, सीमोल्लघन करने वाला। धार्मिक मान्यताओ और आदेशो के विरूद्ध आचरण करने वाला।

फ़िरिश्ता (*Angel*)—कुरआन में इस के लिए 'मलक' शब्द प्रयुक्त हुआ है। जिस का अर्थ होता है 'सन्देश' लाने वाला। फिरिश्ते नबियों के पास अल्लाह की ओर से सन्देश लाते रहे हैं। फिरिश्तों में इस की योग्यता होती है कि वे अल्लाह से 'वह्य' और सन्देश प्राप्त कर के मनुष्य तक पहुँचा सके। फिरिश्ते अल्लाह के पैदा किये हुए हैं वे वही कार्य करते हैं जिस का उन्हे आदेश मिलता है।

अल्लाह ने बहुत से फिरिश्तों को अपने इस बडे राज्य के प्रबन्ध-कार्य में लगा रक्खा है। फिरिश्तों से विभिन्न काम लिये जाते है। फिरिश्ते जरूरत पर मानवीय रूप भी धारण कर सकते हैं। गुमराह लोग इन्हे देवी-देवता बना कर इन को पूजने लगे। किसी ने इन को अल्लाह की औलाद समझ लिया। कुछ लोग इन्हें कष्टनिवारक और सिफारिशी समझ कर इन से ही प्रार्थनाएँ करने लगे। फिरिश्तों के बारे में तरह-तरह की कल्पनाएँ की गई जिस से 'शिर्क' (बहुदेव वाद) को फूलने-फलने का खूब अवसर मिला। कुरआन ने फिरिश्तों की हैसियत बता कर 'शिर्क' का द्वार बन्द किया है।

बद्र—वह स्थान जहाँ मुसलमानों और काफिरो के बीच सन् २ हि० में युद्ध हुआ था। इस लडाई में इस्लाम को असाधारण सफलता हुई थी। बद्र के संग्राम में मुसलमानों की सख्या वही थी जो तालूत की सेना की थी जब वे जालूत के मुकाबले मे निकले थे।

बैअत (*Taking oth of allegiance*)—वचन देना, आज्ञापालन

की प्रतिज्ञा करना, वचन वद्ध होना ।

बलागात—इस से अभिप्रेत 'मुअत्ता' (हदीस की विशेष किताब) की वे रिवायतें हैं जिनको "वलगहू" (वह पहुँची) शब्द से बयान किया गया है।

बनी इसराईल (*Israelities*)—इसराईल की सन्तान, यहूदी। 'इसराईल' इबरानी भाषा का एक शब्द है। इसका अर्थ है अल्लाह का बन्दा'। इसराईल हजरत याकूब का दूसरा नाम था। बनी इसराईल का वृत्तान्त क़ुरआन में जगह-जगह बयान हुआ है। बनी इसराईल को दीर्घ काल तक नेतृत्व का पद प्राप्त रहा है। इस वश में अल्लाह के बहुत से रसूल और नबी हुये। परन्तु जब बनी इसराईल अवनति की अन्तिम सीमा को पहुँच गये तो उन से अल्लाह ने उच्च पद छीन लिया और इबराहीम अ० के बेटे हजरत इस्माईल अ० की सन्तान में अपना अन्तिम रसूल पैदा किया और इमामत (नेतृत्व) का उच्च पद कियामत तक के लिए उस रसूल और उस के सच्चे अनुयायियों को प्रदान किया।

बिदअत—दीन (धर्म) मे कोई नई चीज़ निकालना जिसे धर्म में मान्यता प्राप्त न हो। 'दीन' तो पूर्ण हो चुका है अब दीन में कुछ बढाना-घटाना गुमराही है। इस से दीन का वास्तविक स्वरूप विकृत्त होता है।

बैतुल मक़दिस—पवित्र घर, मस्जिदे अकसा। अल्लाह का वह घर जो यूरुशलेम मे है। जिस के निर्माण का इरादा हजरत दाऊद अ० नें किया था। जिस का निर्माण हजरत सुलैमान के हाथों हुआ। एक समय तक बैतुल मक़दिस इस्लामी दुनिया का केन्द्र रहा है। जब तक बनी इसराईल नेतृत्व के पद से हटाये नही गए, बैतुल मकदिस ही सत्यवादियों का 'किबला' रहा है।

बैतुल हराम (*Inviolable place of worship*)—प्रतिष्ठित घर। इस से अभिप्रेत वह मस्जिद है जिस के बीच 'काबा' स्थित है।

मजूस—ईरान के अग्नि पूजक लोग जो प्रकाश और अन्धकार के दो खुदा मानते थे। ये लोग अपने को जरदुश्त का अनुयायी बताते थे। मुजदक की गुमराही ने इन के धर्म को बिगाड कर रख दिया यहाँ तक कि ये अपनी सगी बहिन तक से विवाह करने लगे।

मरफ़ूअ—दे० पारिभाषिक शब्दावली।

मसलक—मार्ग, तरीका, नियम।

मस्ह—हाथ फेरना, मलना, दे० तयम्मुम।

मुअ़ल्लल—दे० पारिभाषिक शब्दावली।

मुतवातिर—दे० पारिभाषिक शब्दावली।

मुनक़तेअ़—दे० पारिभाषिक शब्दावली।

मुनकर—दे० पारिभाषिक शब्दावली।

मुनाफ़िक़ (*Hypocrite*)—छली-कपटी, कपटाचारी। निफाक रखने वाला। जो व्यक्ति जाहिर में अपने को मुसलमान कहता हो लेकिन इस्लाम से उसका सच्चा सम्बन्ध न हो। मुनाफिकों की कई किस्में होती हैं,:

१. देखनेमे मुसलमान मन मे इस्लाम के प्रति शत्रुता लिये हुए हों।

२. भौतिक और सांसारिक लाभ के लिए मुसलमान बने हों। इस से अधिक इस्लाम से उन की कोई दिलचस्पी न हो।

३. हों तो मुसलमानों मे से लेकिन धर्म के ज्ञान से वंचित हों।

४. हों तो मुसलमानों में से लेकिन उन का ईमान इतना कमजोर हो कि जब अज़माइश पेश आये तो कमज़ोरी दिखाएँ जाएँ।

मुरसल—दे० पारिभाषिक शब्दावली।

मुलतज़म—काबा मे रुक्न यमानी के निकट वह स्थान जहाँ दुआएँ माँगते हैं।

मुहद्दिस—हदीस का ज्ञाता।

मुश्रिक—अनेकेश्वरवादी, बहुदेववादी, 'शिर्क' करने वाला।

मुश्रिक उसे कहते है जो अल्लाह के अस्तित्व, गुणों या उस के हक में दूसरों को शरीक ठहराये।

ईश्वर के अस्तित्व मे किसी को शरीक करने का अर्थ यह है कि किसी को उस से या उस को किसी से उत्पन्न होने का विश्वास रक्खा जाए। जैसे ईसाई हजरत मसीह को अल्लाह का बेटा समझते है अल्लाह के गुणों में शरीक करने का अर्थ यह है कि जिन गुणों का अधिकारी ईश्वर है उन गुणों से किसी और को भी युक्त माना जाये। जैसे जगत का सृष्टिकर्त्ता अल्लाह है परन्तु कोई दूसरो को इस का रचयता मानने लगे। या जैसे ईश्वर को पूर्ण अधिकार और प्रभुत्व प्राप्त है लेकिन कोई यह समझे कि कुछ

दूसरे भी हैं जो उस के कामों में हस्तक्षेप कर सकते हैं तो यह शिर्क होगा। अल्लाह के हक मे किसी को शरीक करने का अर्थ यह है कि जो हक अल्लाह के हैं वैसे हक दूसरों के भी मानने लगे जैसे यह अल्लाह ही का हक है कि उस को उपासना की जाए और जावन के मामले में उस के दिखाये मार्ग पर चला जाये। अब यदि कोई अल्लाह के अतिरिक्त या अल्लाह को छोड़कर दूसरो की पूजा करता या अल्लाह के दिये हुए नियमो और आदेशों के विरुद्ध दूसरों के घड़े हुये कानून को ही सही समझता और उनका पालन करता है तो इस का अर्थ यह होगा कि वह उस हक और अधिकार को जो केवल अल्लाह का है दूसरों को दे रहा है। इस से बढ कर अपराध क्या हो सकता है।

मुस्लिम—आज्ञाकारी, इस्लाम का अनुयायी।

जो व्यक्ति अल्लाह को अपना रब, शासक, स्वामी पूज्य और अपना सब-कुछ मानता और अपने को उस की सेवा में अर्पण करता है वह मुस्लिम है। संसार को समस्त वस्तुएँ मुस्लिम हैं इसलिए कि वे ईश्वरोय नियम का पालन कर रही हैं। उन का धर्म इस्लाम के अतिरिक्त कुछ और नही है। इस्लाम (ईश्वर के आज्ञापालन) का विरोध उस व्यापक सत्यता का विरोध है जिस के बल पर सारा ससार टिका हुआ है।

मुखाबरह—बँटाई पर खेत जोतने का मामला।

मोमिन—'ईमान' वाला व्यक्ति।

यहूद, यहूदी—उस समुदाय के लोग जो अपना सम्बन्ध हजरत मूसा अ० से जोडते है। यहूदी मत एक विशेष कबीले मे पैदा हुआ जिस का नाम 'यहूदाह' (*Judah*) था। यहूदाह शब्द 'हूद' से निकला है जिस का अर्थ है लौटना, पलटना, तौबा करना। यहूदी यदि अपने नाम ही की लाज रक्खे तो उन्हे अपने रब की ओर पलटना चाहिए और उस सच्चाई को ग्रहण करना चाहिए जिस की ओर अल्लाह का अन्तिम नबी बुला रहा है। यह वह सच्चाई है जिसे ले कर हजरत इबराहीम अ० आये थे। हजरत इबराहीम अ० यहूदी और ईसाई सभी के पितामह है।

रकअत—झुकना, नमाज का एक अग जिस में 'कियाम' (अल्लाह के आगे खडा होना), रकूअ (अल्लाह के आगे झुकना) और दो सजदे सम्मिलित होते है।

रब (*Preserver, Lord, Providence*)—रब का मौलिक अर्थ है

पालनें वाला। फिर स्वभावत : अनेक अर्थों का समावेश हुआ है। कुरआन में यह शब्द कई अर्थों में प्रयुक्त हुआ है :

१. पालन कर्ता, संरक्षक, देख-भाल करने वाला। २. मालिक, प्रभु, स्वामी। ३ हाकिम, शासक, व्यवस्थापक, विधाता और नियता। अल्लाह इन सभी अर्थो मे जगत का 'रब' है।

रमज़ान—एक अरबी महीनें का नाम जिस में कुरआन मजीद अवतरित होना आरम्भ हुआ। जिस में रोजा रखना अनिवार्य है।

रसूल—दूत, पैगम्बर, वह व्यक्ति जो रिसालत के पद पर नियुक्त हुआ हो। रसूल और नबी में थोडा अन्तर होता है। रसूल उस पैगम्बर को कहते है जिसे अल्लाह् की ओर से नई 'शरीअत' और किताब मिली हो। नबी हर पैगम्बर को कहते है चाहे उसे नई किताब और 'शरीअत' (आचार शास्त्र) दी गई हो या वह केवल पूर्वकालिक किताब और शरीअत पर लोगों को चलानें के लिए नियुक्त किया गया हो। विस्तृत वर्णन के लिए दे० पृष्ट १८२ शीर्षक, 'रिसालत की धारणा'।

रसूल सल्ल०—इस से अभिप्रेत हजरत मुहम्मद सल्ल० हैं।

रावी—रिवायत करनें वाला। उल्लेख कर्त्ता, हदीस का बयान करनें और पहुँचानें वाला।

रिवायत—उल्लेख, बयान, हदीस का बयान करना।

रिसालत—रसूल होनें का भाव। दे० पृष्ट १८२।

रुहबानियत (*Monkery*)—सन्यास, संसार-त्याग, सासारिक कार्यों शादी-विवाह आदि से विरक्त हो जाना। इस्लाम 'रुहबानियत' की शिक्षा नही देता। सासासिक कार्यों को करते हुए ईश-प्रसन्नता और आत्मिक विकास प्राप्त करना चाहिए। इस्लाम इसी बात की शिक्षा देता है।

रोज़ा—व्रत। हृदय और आत्मा की शुद्धता और नैतिक विकास के लिए रोजा अत्यन्त आवश्यक है। दे० पृष्ट ४२८।

वज़ू—नमाज अदा करने से पूर्व शुद्ध होने के लिए हाथ, मुँह और पाँव आदि धोना।

वसीका (*A written agreement, bond*)—दस्तावेज,

वह्य (*Revelation*)-दैवी प्रकाशन,ईश्वरीय सकेत, आकाश वाणी। 'वह्य'

शब्द् का अर्थ होता है तीव्र सकेत, अर्थात् वह इशारा जो तेज़ी के साथ इस प्रकार किया जाए कि बस इशारा करने वाला जाने या फिर वह व्यक्ति जिस की ओर इशारा किया गया हो। अल्लाह् सृष्टि के जीव आदि को जो शिक्षा देता है वह एक प्रकार की वह्य के द्वारा ही देता है। कुरआन में इस के लिए 'इलहाम' (गुप्त शिक्षा) और 'इलका' (मन में किसी बात का डाला जाना) शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं। यह वह्य ही है जिस के द्वारा मछलियों को तैरना और चिड़ियों को उड़ना आता है। और नवजात शिशु इसी से दूध पीना सीख जाता है। कभी बिना सोच-विचार किये आदमी के मन में बिजली की कौंध के सामान एक बात आ जाती है कभी आदमी स्वप्न मे कोई चीज देख लेता है, बाद मे उस का स्वप्न सत्य सिद्ध होता है। ये सब काम एक प्रकार 'वह्य' द्वारा ही होते है

'वह्य' की सब से महत्व पूर्ण किस्म वह है जिस के द्वारा अल्लाह नबियों को ज्ञान प्रदान करता और उन तक अपने सन्देश भेजता है। यह वह्य दूसरी समस्त 'वह्यों' से भिन्न होती है। यह 'वह्य' केवल नबियों और रसूलो पर ही उतरती है। नबी को इस का पूरा ज्ञान होता है कि उनकी ओर उतरी हुई वह्य अल्लाह् ही की ओर से है। वह्य द्वारा ही कुरआन और दूसरे ईश्वरीय ग्रन्थों का अवतरण हुआ है।

वह्य ख़फ़ी या वह्य ग़ैर मतलू—वह सूक्ष्म वह्य जिस का पाठ नही किया जाता। कुरआन के अतिरिक्त नबी सल्ल० पर उतरने वाली दूसरी की वह्य। दे० पृष्ठ १९।

शरीअत (*Revealed law*)—धर्म विधान, आचार शास्त्र। जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्धित ईश्वरीय आदेश और नियम।

शिर्क (*Polytheism*)—अनेकेश्वरवाद, बहुदेववाद। किसी को अल्लाह का शरीक और सहभागी समझना। अल्लाह की सत्ता, अस्तित्व, गुण और स्वत्व में किसी को शरीक जानना। कुरआन की दृष्टि में शिर्क घोर पाप और घृणित कर्म है। जिस प्रकार व्यभिचार और जिना एक घृणित कर्म है। विस्तृत वर्णन के लिए दे० 'मुशरिक'।

सजदा—१. झुकना। २ दंडवत, साष्टांग प्रणाम।

जमीन पर सिर रख देना। चेहरे के बल बिछ जाना। सजदा नमाज़ का एक आवश्यक अंग है। नमाज़ में मनुष्य अल्लाह् को महानता का ध्यान करते हुए अपना सिर भूमि पर उस के आगे रख देता है।

सदक़ा—दान, ख़ैरात, अल्लाह् के मार्ग मे खर्च करना । क़ुरआन में सदक़ा का प्रयोग ज़कात के लिए भी हुआ है और नफ़्ल ख़ैरात के लिए भी इस का प्रयोग हुआ है । 'सदका' शब्द 'सिद्क़' से निकला है जिस का अर्थ होता है सच्चाई, निष्ठा, सदका से मनुष्य का ईमान दृढ और मजबूत होता है । और उस मे सच्चाई आती है । मन और मस्तिष्क की पवित्रता भी प्राप्त होती है । दे० कुरआन सूरा अल-मुजादला आयत १२, अल-ह्दीद आयत ११, १२, अत-तौबा आयत १०३ ।

सदक़ए फ़ित्र—रमज़ान का रोज़ा पूरा करने के पश्चात् ईदुल फित्र के अवसर पर जो सदका और ख़ैरात देते हैं उसे सदकए फित्र कहते है ।

सहाबा, सहाबी—साथी । वे आदरणीय मुस्लिम लोग जिन्होंने नबी सल्ल० को देखा हो ।

सरीया—फौज का दस्ता ।

सहीफ़ा—लिखा हुआ पर्ण । बहुवचन के रूप मे किताब के लिए इस का प्रयोग होता है । किताब पन्नों का ही समूह होता है ।

सहीह् हदीस—दे० पारिभाषिक शब्दावली ।

सिहाह् सित्ता - हदीसो के छ . प्रमाणिक एवं मान्यताप्राप्त ग्रन्थो को सिहाह् सित्ता कहा जाता है । उन के नाम यह है मुस्लिम, अबूदाऊद, तिरमिजी, नसई, इब्नमाजा । कुछ विद्वान इब्न माजा के स्थान पर मुअत्ता इमाम मालिक को रखते है ।

सुनन हदीस की वह किताब जिस मे केवल वे हदीसे सगृहीत हो जो नबी सल्ल० की 'सुन्नतों' (तरीकों) और उन नियमो से सम्बन्ध रखती हो जो आपने विभिन्न इबादतों और मामलो के सम्बन्ध मे सिखाए है ।

सुन्नत—रीति, तरीका । नबी सल्ल० का तरीका । वे कार्य जिन्हे नबी सल्ल० ने सदैव किया हो और कभी-कभी जान-बूझ कर छोड़ा भी हो ।

सूरा—यह शब्द सूर से निकला है जिस का अर्थ है शहर पनाह (नगर कोट, प्राचीर) । सूरा का बहुवचन सुवर होता है ।

कुरआन ११४ भागो में विभक्त है जिन मे से प्रत्येक भाग सूरा कहलाता है । प्रत्येक सूरा अच्छी कविता या भाषण की तरह अपनी जगह

पूर्ण है यद्यपि उस का सम्बन्ध अपनी अगली और पिछली सूरा से भी होता है। प्रत्येक सूरा का एक मध्य बिन्दु या केन्द्रीय विषय होता है। हर सूरा अपने मध्यबिन्दु से प्रत्यक्षत या भावात्मक रूप से सम्बद्ध होती है।

हक़—मौजूद और कायम को कहते हैं। फिर यह कई अर्थों मे प्रयोग होने लगा :

१ जिस का होना सत्य हो। उदाहरणार्थ दे० सूरा सॉद० आयत ६४।

२ जो नैतिक दृष्टि से अनिवार्य हो। दे० अज-जारियात आयत १६।

३ जो बात बिल्कुल प्रत्यक्ष और खुली हुई हो, स्पष्ट और बुद्धिसगत हो। दे० अल-अनआम आयत ६२, अल-बकरा आयत ११।

अल्लाह और कियामत पहले और तीसरे अर्थों मे हक है। न्याय और इन्साफ को दूसरे अर्थ के अनुसार हक कहा जायेगा। हिकमत (*Wisdom*) तीसरे अर्थ के अनुसार हक है।

व्यापक अर्थ मे हक उस चीज को कहेगे जो बुद्धिसगत हो, जो हृदय को भी प्रिय हो। जिस का सम्पर्क ज्ञान और कर्म दोनो से हो। जो नैतिकता के अनुकूल हो।

हज्ज—'हज्ज' का अर्थ है इरादा करना, जियारत (तीर्थ-दर्शन) का इरादा करना। पारिभाषिक रूप मे हज्ज एक इबादत है जिसमे मनुष्य अल्लाह के घर 'काबा' के दर्शन का इरादा करता है। हज्ज के द्वारा अल्लाह की महानता और उसका प्रेम स्थायी रूप से मन मे बैठ जाता है। विस्तृत वर्णन के लिए दे० पृष्ठ ४४८ शीर्षक 'हज्ज'।

हबीब—मित्र, दोस्त। नबी सल्ल० की उपाधि। आपको अत्यन्त उच्च स्थान प्राप्त है। आप अल्लाह के हबीब है।

हदीस—दे० पारिभाषिक शब्दावली।

हम्द—प्रशसा, गुणगान, ईश-प्रशसा।

खूबियो, विशेषताओं और गुणो का प्रेमपूर्ण वर्णन। अल्लाह के गुणों और उसकी परिपूर्णता का प्रेम एव श्रद्धापूर्वक वर्णन। अल्लाह के हम पर असीम उपकार और कृपाएँ हैं अत जब हम इस पहलू से उसकी प्रशसा

करेंगे तो इस प्रशंसा में कृतज्ञता विज्ञाप्ति का भाव भी स्वतः सम्मिलित हो जायेगा। यही कारण है कि नबी सल्ल० ने 'हम्द' को कृतज्ञता प्रकाशन का 'सिरा कहा है। हम्द कृतज्ञता प्रकाशन का उत्तम उपाय है।

हराम (*Forbidden*)—वर्जित, अवैध, निषिद्ध। जो धर्मसंगत न हो। इस्लामी धर्मशास्त्र से जिसका निषेध होता हो। जिसे अल्लाह् या उस की ओर से उसके रसूल ने नाजायज़ ठहराया हो।

हलाल (*Lawful*) वैध, ग्राह्य, अवर्जित, धर्मसंगत, जायज। जो इस्लामी धर्मशास्त्र के अनुकूल हो। जिसे अल्लाह् या उसकी ओर से उसके रसूल ने जायज ठहराया हो।

हसन—दे० पारिभाषिक शब्दावली।

हिकमत (*Wisdom*)—तत्वज्ञान। हिकमत का मूल अर्थ है 'फैसला करना'। इसके अतिरिक्त सूझ-बूझ की शक्ति के लिए भी 'हिकमत' शब्द प्रयुक्त होता है। जिसके द्वारा मनुष्य फैसले करता है। उस शक्ति को भी हिकमत कहा जाता है जो शुद्ध और ठीक निर्णयो का स्रोत है। इसके अतिरिक्त पवित्रता की गणना भी 'हिकमत' के लक्षणो मे होती है। अरब के लोग बुद्धि और सम्मति की पूर्णता और सज्जनता की मिली-जुली शक्ति को 'हिकमत' और बुद्धिमान और शिष्ट व्यक्ति को 'हकीम' कहते थे। हिकमत वास्तव मे ईमान और कर्म की वह दृढता है जो गहरी सूझ-बूझ पर आधारित हो। ज्ञान और बुद्धि द्वारा उत्तम ढँग से सत्य की प्राप्त ही 'हिकमत' है।

साराश यह है कि हिकमत का स्रोत शुद्ध विवेक और सही सूझ-बूझ है जिसके द्वारा मनुष्य फैसले करता है। जब विवेक मे पूर्णता आ जाती है और वह प्रतिभा एव विचक्षणता का रूप धारण कर लेता है तो उसे हिकमत कहते है।

हिकमत का सम्बन्ध मानव के सम्पूर्ण जीवन से है। जिसे हिकमत मिल गई उसके जीवन का स्वरूप विशुद्ध और निर्मल हो गया।

हिकमत शब्द का प्रयोग जब अल्लाह् के लिए होता है तो इसका विशेष अर्थ यह होता है कि अल्लाह् तत्वज्ञानी है। उसे प्रत्येक वस्तु का पूर्णज्ञान है। जो निर्माण भी उसने किया उत्तम ढग से किया। उसके कार्य मे कोई त्रुटि और दोष नही। उसका कोई काम भी व्यर्थ और उद्देश्य-रहित नही।

हिजरत—स्वदेश त्याग। अल्लाह् के मार्ग में अपना घर-बार छोड़ देना। हज़रत मुहम्मद सल्ल० का मक्का छोडकर मदीना जाना। धर्म और सत्य की रक्षा के लिए कभी स्वदेश को छोडना पडता है यद्यपि स्वदेश प्रत्येक व्यक्ति को प्रिय है।

हिदायत (*Guidance*)—मार्ग-दर्शन, राह दिखाना। जीवन व्यतीत करने का वह तरीका बताना जिस पर मनुष्य अपने जीवन को सफल बना सके और अपने 'रब' की प्रसन्नता प्राप्त कर सके। कुरआन में इसके लिए 'हुदा' शब्द प्रयुक्त हुआ है जिसके कई अर्थ होते हैं :

१. अन्तदृष्टि, हृदय ज्योति। दे० सूरा मुहम्मद आयत १७, अस-सजदा आयत १३।

२ प्रमाण, निशानी, खुली दलील और वह चीज जिसके द्वारा राह मिल सके। दे०ता०हा० आयत १०, अल-बकरा आयत १८५, अल-हज्ज आयत ८।

३ स्पष्ट मार्ग, मज़िल (अभीष्ट स्थान) तक पहुँचाने वाला मार्ग। दे० अल-हज्ज आयत ६७। यही से यह शब्द शरीअत (आचार शास्त्र एव धर्म-विधान), प्रथा एवं प्रणाली के लिए भी प्रयुक्त होने लगा। दे० अल-अनआम आयत ६०, आले इमरान आयत ७३)।

४. 'हिदायत' क्रिया की सज्ञा का रूप (दे० अन-नह्ल आयत ३७)। अरब लोग कभी-कभी किसी चीज़ के स्पष्ट गुण ही को उसका नाम दे देते हैं। इसी नियम के अनुसार कुरआन को 'अल-हुदा' कहा गया है (दे० अल-जिन्न आयत १३)।

हुक्म—निर्णय शक्ति, दीन में सूझ-बूझ, मामलों मे सही राय क़ायम करने की क्षमता। बुद्धिमत्ता। अल्लाह् की ओर से मामलों मे फैसला देने का अधिकार। 'हुक्म' में प्रभुत्व एव अधिकार का अर्थ भी सम्मिलित है। कुरआन में साधारणतया 'हुक्म' और 'इल्म' (ज्ञान) से अभिप्रेत 'नुबूवत' है।

'हुक्म' वास्तव मे शुद्ध विवेक और सही सूझ-बूझ का नाम है। यह निर्णय शक्ति है। इसी के द्वारा फैसला होता है। 'हुक्म' ही 'हिकमत' (*Wisdom*) का उद्गम है। जब विवेक में पूर्णता आ जाती है और वह प्रतिभा एव विचक्षणता का रूप धारण कर लेता है तो उसे 'हिकमत' कहते हैं।

संकेताक्षरों का विवरण

अ०—'अलैहिस्सलाम' अर्थात् उन पर सलामती हो। नबियो और फिरिश्तो के नाम के साथ यह आदर एवं प्रेमसूचक शब्द बढा देते हैं।

रजि०—'रजि अल्लाहु अन्हु' अर्थात् उन से अल्लाह राज़ी रहे। 'सहाबा' के नाम के साथ ये आदर और प्रेमसूचक दुआ बढा देते हैं।

सल्ल०—सल-लल-लाहु अलैहि व सल्लम अर्थात् उन पर अल्लाह की रहमत और सलामती (*Blessing*) हो। हजरत मुहम्मद (सल्ल०) का नाम लेते या सुनते है तो आदर और प्रेम के लिए दुआ के ये शब्द बढा देते है।

हि०—अर्थात् सन् हिजरी।

समाप्त